सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

३५

(सितम्बर १९२७-जनवरी १९२८)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भूमिका

इस खण्डमें १६ सितम्बर १९२७ से ३१ जनवरी १९२८ तक पूरे ४½ महीनोंके घटनाक्रमका समावेश होता है। इस अवधिमें गांधीजी, वाइसराय महोदयकी मुलाकातके कारण थोड़े व्यवधानको छोड़कर अपनी दक्षिणकी यात्रामें रहे। वे लंका गये और वहाँसे लौटकर उन्होंने उड़ीसाका दौरा किया। दिसम्बरमें अ० भा० कांग्रेसके मद्रासमें होनेवाले वार्षिक अधिवेशनमें भाग लेनेके बाद गांधीजी अहमदाबाद लौट आये। यह लम्बी यात्रा उन्होंने मुख्य रूपसे खादीकार्यके लिए धन-संग्रहके हेतुसे की थी और इसमें उन्हें तमिलनाडु और त्रावणकोरसे १६३,९०५ रुपये तथा लंकासे १०५,००० रुपये प्राप्त हुए। इस धन-राशिका उन्होंने बड़ी सावधानीपूर्वक हिसाब रखा और उसे प्रकाशित करवाया (देखिए परिशिष्ट २)। गांधीजी जब लंकामें थे, तो उनकी अनुपस्थितिमें ब्रिटिश सरकार द्वारा एक शाही आयोग नियुक्त करनेकी घोषणा की गई थी। साइमन कमीशनके नामसे प्रसिद्ध इस आयोगके विरोधमें भारतमें एक देशव्यापी तूफानकी सुगबुगाहटका संकेत देते हुए यह खण्ड समाप्त होता है।

अपनी दक्षिण-यात्राके दौरान गांधीजीने ब्राह्मण-अब्राह्मण समस्या और वर्णाश्रमके सम्बन्धमें अपने विचारोंको स्पष्ट किया। वर्णाश्रम धर्मके सम्बन्धमें गांधीजीकी जो दृष्टि थी उसको लेकर सुधारकोंके मनमें बड़ी शंकाएँ थी और इसलिए उनके लिए यह स्पष्टीकरण आवश्यक हो गया था। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा, "वर्णाश्रमकी मेरी जो कल्पना है, उसमें अस्पृश्यता और जात-पाँतके वर्तमान भेद-जैसी कोई चीज नहीं है। वर्णोंका श्रेष्ठता या हीनतासे कुछ लेना-देना नही है। वर्ण तो उसी एक निश्चित नियमकी स्वीकृति है जो मानवके सच्चे सुखका स्रोत है और उसका सीधा-सादा मतलब यह है कि हमें अपने पूर्वजोसे प्राप्त होनेवाले सभी अच्छे गुणोंको मूल्यवान मानकर उनका परिरक्षण करना चाहिए" (पृष्ठ ८५)। एक पत्रलेखककी आलोचनाके उत्तरमें उन्होंने १७-११-१९२७ को अपना दृष्टिकोण अधिक विस्तारपूर्वक स्पष्ट करते हुए लिखा: "यह योजना कल्पनादेशकी लग सकती है, तथापि लड़खड़ाते हुए कदमोंसे विशृंखलताकी तरफ बढ़ते हुए समाजकी निर्बाध स्वच्छन्दताका जीवन जीनेकी अपेक्षा मैं अपनी कल्पनाके इस लोकमें रहना ज्यादा पसन्द करता हूँ।" (पृष्ठ २७१)। गांधीजीने श्री राजगोपालाचारीकी आलोचना करनेवाले नवयुवकोंकी जो कड़ी भर्त्सना की उससे पता चलता है कि दक्षिणमें व्याप्त कटुताका वातावरण कितना तीव्र था। उन्होंने तमिलनाडुमें ब्राह्मणेतर समाजके नेताओंसे जो चर्चाएँ की — जिनकी नोंद महादेव देसाईने ली है (देखिए परिशिष्ट १) — और श्री नाडकर्णीकी आलोचनाके जवाबमें 'यंग इंडिया' में जो लेख प्रकाशित किया (पृष्ठ २६७-७१) उनसे यह साफ जाहिर होता है कि गांधीजीका प्रयत्न इस दिशामें था कि हमें भूत और भविष्यमें

सामंजस्य करना चाहिए और उसके आधारपर अपने जीवन्त वर्तमानको समृद्ध बनाना चाहिए। जो आलोचक उनके विचारोंको निरी स्वप्नलोककी कल्पना मानते थे उनसे उन्होंने कहा, "व्यक्ति भले ही अपनी कल्पनाके संसारको समाज द्वारा स्वीकृत होते न देख सके लेकिन उस कल्पनामें रहनेकी छूट उसे अवश्य है" (पृष्ठ २७१)।

खादीकार्यमें सहायता देनेकी अपील तो गांधीजी हर सभामें करते ही थे, लेकिन अपनी बात कहनेका उनका कुछ ऐसा विशेष ढंग था कि अपने श्रोताओंके साथ उनका आत्मीयताका सम्बन्ध बन जाता था। कनडुकातनमें दक्षिणके एक धनिक समाज — चेट्टियार लोगों — को सलाह देते हुए उन्होंने कहा कि वे अपनी समृद्धिका ऐसा तड़क-भड़क भरा प्रदर्शन न करें और अपनी दानवृत्तिका विवेकपूर्वक विनियोग करें (पृष्ठ १९)। कराइकुडीमें (खादी वस्त्रका) जो नीलाम किया गया उस अवसरपर श्रोताओंने उनपर अपने स्नेहकी जैसी-कुछ वर्षा की उससे वे गद्‌गद् हो गये (पृष्ठ ४१)। तूतीकोरिनमें गांधीजीने तमिल सीखनेके अपने प्रयत्नोंका जिक्र करते हुए बतलाया कि वे 'तिरुकुरल' को मूल तमिलमें ही पढ़नेके लिए वैसा कर रहे हैं (पृष्ठ ९४)। इस प्रकार २७ अक्टूबरको एक स्नेह-भीने सन्देशके साथ उन्होंने दक्षिणसे विदा ली।

अपनी दक्षिण-यात्राके बीच ही गांधीजीको वाइसराय लॉर्ड इर्विनका निमंत्रण मिला कि वे २ नवम्बरको उनसे दिल्लीमें मिलें। इस सम्बन्धमें उन्हें विट्ठलभाई पटेलका सन्देश भी मिला था। उत्तर देते हुए गांधीजीने श्री विट्ठलभाईको लिखा कि इस चर्चासे उन्हें अलहदा ही रहने दिया जाये क्योंकि जैसी-कुछ स्थिति है उसमें उनका सहयोग कोई विशेष उपयोगी साबित नहीं होगा। और वाइसराय महोदयसे उनकी भेंटका जैसा-कुछ परिणाम हुआ उससे गांधीजीको लगा कि इस सम्बन्धमें उनकी जो निराशा-भावना थी वह ठीक ही थी। श्री प्रभाशंकर पट्टणीको ८ नवम्बरके अपने पत्रमें उन्होंने लिखा: "मुझे तो ऐसा लगा कि मेरे-जैसे व्यक्तिको दिल्ली बुलानेकी कोई जरूरत ही नहीं थी। . . . क्योंकि वाइसराय दूसरोंका मत नहीं जानना चाहते थे बल्कि अपना मत ही जताना चाहते थे।" इस मुलाकातमें जो-कुछ हुआ उसके विविध विवरण परिशिष्ट ५ में दिये गये हैं।

१३ नवम्बरसे २९ नवम्बरतक गांधीजी लंकामें दौरा करते रहे। लंका और भारतके बीच जो पारस्परिक घनिष्ठ सम्बन्ध है, अपने भाषणोंमें उनका वे बार-बार उल्लेख करते रहे। वहाँ बौद्धोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा: "गहरे विचारके बाद मेरी यह धारणा बनी है कि बुद्धकी शिक्षाओंके प्रधान अंग आज हिन्दूधर्मके अभिन्न अंग हो गये हैं। गौतमने हिन्दूधर्ममें जो सुधार किये, उनसे पीछे हटना आज हिन्दू भारतके लिए असंभव है। . . . गौतम स्वयं हिन्दुओंमें श्रेष्ठ हिन्दू थे। उनकी नस-नसमें हिन्दूधर्मकी सभी खूबियाँ भरी पड़ी थी। वेदोंमें दबी हुई कुछ शिक्षाओंमें, जिनके सारको भुलाकर लोगोंने छायाको ही ग्रहण कर रखा था, उन्होंने जान डाल

दी" (पृष्ठ २५२-३)। एक अमरीकी मित्रकी प्रार्थनापर लंका जानेसे पूर्व उन्होंने 'यंग इंडिया' में एक लेख लिखा था, जिसमें उन्होंने हिन्दूधर्मके प्रति अपने दृष्टि-कोणको स्पष्ट करते हुए इस प्रकार लिखा था: "अध्ययन करनेपर जिन धर्मोंको मै जानता हूँ उनमें मैंने इसे [हिन्दू धर्मको] सबसे अधिक सहिष्णु पाया है। इसमें सैद्धांतिक कट्टरता नही है, यह बात मुझे बहुत आकर्षित करती है क्योंकि इस कारण इसके अनुयायीको आत्माभिव्यक्तिका अधिकसे-अधिक अवसर मिलता है। हिन्दूधर्म वर्जनशील नही है, अत: इसके अनुयायी न सिर्फ दूसरे धर्मोका आदर कर सकते है बल्कि वे सभी धर्मोंकी अच्छी बातोंको पसन्द कर सकते है और अपना सकते हैं" (पृष्ठ १७१)। कोलम्बोमें यंग मेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशनके समक्ष अपने भाषणमें उन्होने कहा: "ईसाका सन्देश, जैसा कि मैं उसे समझता हूँ, उनके 'सरमन ऑन द माउंट' में विशुद्ध और सर्वांग रूपमें निहित है।... अत: यदि मेरे सामने केवल 'सरमन ऑन द माउंट' और उसकी मेरी अपनी व्याख्या ही होती तो मै यह कहनेमें नहीं हिचकता कि 'हाँ, मैं ईसाई हूँ।' ... लेकिन ... ईसाई धर्मके नामसे जो बहुत-कुछ चीजें मिलती है वे 'सरमन ऑन द माउंट' के विरुद्ध है" (पृष्ठ २५५-५६)। अपने नवयुवक बौद्ध श्रोताओंको सम्बोधित करते हुए उन्होने कहा: "पश्चिमसे जो तड़क-भडकवाली चीजें आपके पास आती है उनसे आप चकाचौंध मत हो जाइए। इस अस्थायी दिखावेके कारण आपके पैर लड़खड़ा न जायें।... अपने पूर्वजोंकी सादगी-से आप दूर मत हटिए। एक ऐसा समय आ रहा है कि जब वे लोग, जो आजकी अन्धी दौड़में पडकर अपनी आवश्यकताएँ बढाते जा रहे है... अपने कदम वापस लौटायेंगे।... करुणामय और दयालु, सहिष्णुताकी साक्षात् मूर्ति ईश्वर, अर्थ-पिशाच-को केवल चार दिन का चमत्कार दिखाने देता है" (पृष्ठ २५८-५९)। लेकिन अगले ही दिन हमारे अन्तरमें अवस्थित दशानन रावणका हमारे अन्तरमें प्रतिष्ठित राम द्वारा विनाश होना अवश्यम्भावी है। यों कहकर लंकाके श्रमिकोंको उन्होंने राम-रावण युद्धका सांकेतिक अर्थ समझाया (पृष्ठ २६४)। उन्होंने बतलाया कि धर्मोके सच्चे भाई चारेके आधारपर ही एक विश्वसंघकी स्थापना हो सकती है, जिसमें सबकी ओरसे यही हार्दिक प्रार्थना होनी चाहिए कि "जो हिन्दू है वह और अच्छा और सच्चा हिन्दू बने, जो मुसलमान है वह और अच्छा मुसलमान बने और जो ईसाई है, वह और सच्चा ईसाई बने" (पृष्ठ ४७९)।

लंकासे लौटकर गांधीजी शीघ्र ही उड़ीसा गये लेकिन अपने रक्तचाप (ब्लड-प्रेशर) में वृद्धिकी शिकायतके कारण उन्हें अपना उड़ीसाका अधिकतर दौरा मनसूख कर देना पड़ा। उड़ीसाकी स्थितिकी जो कुछ थोड़ी-सी झाँकी उन्हें देखनेको मिली उससे उनका हृदय एक तीव्र मनोव्यथासे द्रवित हो उठा और उन्होंने लिखा: "उड़ीसाका दौरा बहुत दिनोंसे मुलतवी चला आता था और जब उसका अवसर आया भी तो मेरे सन्ताप और मेरी जिल्लतको बढ़ानेके लिए ही" (पृष्ठ ४२२)। उन्होने वहाँ

जैसा 'मृत्युका-सा सन्नाटा' देखा वैसा चम्पारनके बाद इससे पहले कभी नहीं देखा था (पृष्ठ ४२३)। उन्होंने स्थानीय कार्यकर्त्ताओंका उद्बोधन करते हुए कहा कि वे जनताको "इस भीरुताको, जो करीब-करीब कायरता ही है" छोड़ देनेका पाठ पढ़ायें (पृष्ठ ४२४)।

मद्रासके कांग्रेस अधिवेशनमें दो प्रधान प्रश्नोंको लेकर गांधीजी और अन्य नेताओंके बीच एक साफ मतभेद सामने आया, जिनमें एक तो हिन्दू-मुस्लिम समस्याका प्रश्न था और दूसरा था देशके राजनीतिक ध्येयकी व्याख्या। इनमें पहले प्रश्नके सम्बन्धमें तो वे बहुत पहले ही यह बात कबूल कर चुके थे कि "आजकल जैसा वातावरण है, उससे मेरे मनका मेल नहीं बैठता" (पृष्ठ १७) और इसीलिए गांधीजीको हिन्दू-मुस्लिम एकता-सम्बन्धी प्रस्तावके बारेमें, जिस रूपमें वह अधिवेशनमें पास किया गया, कोई विशेष उत्साह नहीं था, (देखिए परिशिष्ट ९) यद्यपि उसका मसविदा बनानेमें उनका भी हाथ था। 'यंग इंडिया' में इसकी चर्चा करते हुए उन्होंने लिखा कि "इस प्रस्तावका मूल रूप तो बहुत ही बुरा था और अन्तमें विषय निर्धारिणी समितिसे स्वीकृत होकर वह जिस रूपमें निकला उसके बारेमें सिर्फ इतना ही कहा जा सकता है कि वह निर्दोष है और हमारे राष्ट्रीय विकासकी वर्तमान स्थितिमें उसका सबसे अच्छा वही रूप स्वीकृत हो सकता था। पर कमसे-कम मैं तो उसपर खुशियाँ नहीं मना सकता! मैं तो उसे सिर्फ एक कामचलाऊ प्रस्ताव ही मान सकता हूँ" (पृष्ठ ४५२)।

अन्य नेताओंके साथ — खास तौरसे पं० जवाहरलाल नेहरूके साथ — गांधीजीके जो मतभेद थे वे तो देशके राजनीतिक ध्येयकी व्याख्याको लेकर थे। स्वाधीनताके प्रस्तावकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि वह तो "उतावलीमें सोचा और बिना विचारे स्वीकार किया गया" प्रस्ताव है (पृष्ठ ४५३)। उनकी इस आलोचनासे पं० जवाहरलाल उत्तेजित हो उठे और उन्होंने बहुत रोषपूर्वक अपने एक पत्रमें उसका प्रतिवाद किया (देखिए परिशिष्ट १०)। गांधीजीने इसके उत्तरमें लिखा: "मुझे तुम्हारे-मेरे बीचका दृष्टिभेद कुछ-कुछ दिखाई देने लगा था, फिर भी मुझे तनिक भी कल्पना नहीं थी कि ये मतभेद इतने गम्भीर हो जायेंगे। . . . मुझे बिलकुल साफ दिखाई देता है कि तुम्हें मेरे और मेरे विचारोंके विरुद्ध खुली लड़ाई करनी चाहिए। . . . मैं तुमसे अपना यह दुख नहीं छिपा सकता कि मैं तुम्हारे जैसा बहादुर, वफादार, योग्य और ईमानदार साथी खो रहा हूँ; परन्तु ध्येयकी सिद्धिके लिए राजनीतिक सहचरताको भी कुर्बान करना पड़ता है" (पृष्ठ ४८८)। पर इसी बीच साइमन कमीशनके आगमनको लेकर देश-भरमें एक गहरा रोष छा गया और उसके प्रति विरोध-प्रदर्शनोंकी आयोजनाएँ करनेकी आवश्यकताओंके आगे उनके ये सैद्धान्तिक मतभेद फीके पड़ गये।

इस खण्डमें गांधीजीके अनेक ऐसे पत्रोंका समावेश है जो उन्होंने मीराबहनको 'सख्त ऑपरेशनके बाद ... ठण्डक पैदा करनेवाले मरहम' के रूपमें लिखे हैं (पृष्ठ ५९)। अन्य अनेक पत्रोंमें एक पत्र श्री किशोरलाल मशरूवालाको है (पृष्ठ १६४-६६) जिसमें उन्होंने इस बातका विवेचन किया है कि एक चोरके विरुद्ध गवाही देनेका प्रसंग खड़ा होनेपर किसी अहिंसाके पुजारीका क्या कर्त्तव्य हो जाता है। उन्होंने कहा कि संवेदना यदि सहज और खरी नही होती तो उसका कोई परिणाम नही होता। कांचीपीठके स्वामी शंकराचार्यके साथ अपनी भेंटके दो दिन बाद उन्होने अपने ही सम्बन्धमें यह स्वीकारोक्ति की कि "हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ोंसे मैंने जो अपना हाथ खींच लिया है, इसका कारण यही है कि मुझे अपनी दया अधूरी या कृत्रिम मालूम होती है। कृत्रिमसे मेरा मतलब यह नहीं है कि वह झूठी है। मतलब सिर्फ इतना ही है कि वह बुद्धिके ही क्षेत्रमें है, उससे ज्यादा गहरी नही जाती" (पृष्ठ १६५)। गंगाबहन वैद्यको तथा आश्रमकी बहनोको लिखे अपने पत्रोमें उन्होने आश्रमकी बहनोंके आपसी झगड़ोंको लेकर जो टीका की थी और जिसके कारण उनमे बड़ा क्षोभ पैदा हो गया था, उसकी चर्चा की और उन्हें समझाया कि वे सब अपनेको एक ही परिवारका सदस्य मानें और इस प्रकार अपने झगडोका निबटारा स्वयं कर लिया करें। श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखे एक पत्रमें अपने डाक्टरोसे मीठी चुटकी लेनेका लोभ-संवरण वे नहीं कर पाये। उन्होने लिखा: "तीन डाक्टरोंने तथा तीन यंत्रोने कल (ब्लड प्रेशरके) विभिन्न अंक सूचित किये — २००, १८०, १६०" (पृष्ठ ४१२)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) तथा नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली; उड़ीसा सरकार; श्री डाह्याभाई एम० पटेल, अहमदाबाद; श्री गजानन कानिटकर, पूना; श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासन; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री महेश पट्टणी, भावनगर; श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया; श्री नाराणदास गांधी, राजकोट; श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली; श्रीमती राधाबहन चौधरी, कलकत्ता; श्री रमणीकलाल मोदी, अहमदाबाद; श्रीमती शारदाबहन शाह, वढ़वान; श्रीमती तहमीना खम्बाता, बम्बई; श्री सी० एम० डोक और श्री हरिभाऊ उपाध्याय, बम्बई एवं 'बापुना पत्रो: मणिबहेन पटेलने', 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', 'द हिस्ट्री ऑफ इंडियन नेशनल कांग्रेस', 'हैलिफैक्स: द लाइफ ऑफ लॉर्ड हैलिफैक्स', 'पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'विट्ठलभाई पटेल: लाइफ ऐंड टाइम्स', खण्ड २ 'विद गांधीजी इन सीलोन', 'रिपोर्ट ऑफ द फोर्टी सेकेंड इंडियन नेशनल कांग्रेस ऐट मद्रास १९२७' के प्रकाशको तथा निम्नलिखित समाचारपत्रों और पत्रिकाओंके आभारी हैं: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आज', 'ट्रिब्यून', 'नवजीवन', 'प्रजाबंधु', 'यंग इंडिया', 'समाज', 'सर्चलाइट', 'साबरमती', 'सीलोन आब्जर्वर', 'सीलोन डेली न्यूज', 'हिन्दी नवजीवन', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मंत्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरोंके द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय भाषाको यथासम्भव मूलके निकट रखनेका प्रयत्न किया गया है। जो अनुवाद हमें प्राप्त हो सके है, हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद किया है। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणके बारेमें संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा कि गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय हैं। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणो और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजीके नहीं हैं, कहीं-कही कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमें ऊपर दी गई है। जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख जहाँ उनकी लेखनतिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी निश्चित आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' गांधी स्मारक संग्रहालयकी मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिट द्वारा माइक्रोफिल्म की गई प्रतियोंका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स आफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

'सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा' के अनेक संस्करण होनेसे उनकी पृष्ठ संख्याएँ भिन्न हैं; इसलिए हवाला देनेमें केवल उनके भाग और अध्यायका ही उल्लेख किया गया है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये है। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. भाषण : तंजौरमें

१६ सितम्बर, १९२७

आज तंजौर आनेपर मैंने यहाँ ब्राह्मण-अब्राह्मण प्रश्नपर[1] चर्चा करनेकी उम्मीद की थी और तदनुसार दोपहरके बाद कुछ भाइयोंसे उसके सम्बन्धमें थोड़ी देर बातचीत करनेका भी मुझे सौभाग्य मिला। उस बातचीतके मजमूनपर चर्चा करने और उसे आपके सामने पेश करनेकी मुझे छूट नही है और न यह मेरे लिए जरूरी ही है। हाँ, इतना बता दूँ कि इस बातचीतसे मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। बातचीतके बाद मैं इस आन्दोलनको पहलेकी अपेक्षा शायद कुछ ज्यादा समझने लगा हूँ। मैंने अपना तुच्छ विचार उन मित्रोंके सामने रख दिया है और अब वे उसका चाहे जो उपयोग करें। लेकिन पूरी बातचीतमें मुझे एक चीजकी ध्वनि बराबर मिलती रही और उस चीजसे वे बहुत परेशान मालूम पड़े। उनका खयाल ऐसा जान पड़ता था कि मैं जन्मगत श्रेष्ठता और हीनताके सिद्धान्तका पक्ष-पोषक हूँ। मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि यह बात तो मेरे मनमें कभी आयीतक नही है। मैंने उनसे कहा कि इस श्रेष्ठताके प्रश्नके सम्बन्धमें यदि उनके मनमें कही कोई गलतफहमी हो तो उसे दूर करनेके लिए मैं, वर्णाश्रम धर्मसे मेरा क्या मतलब है, इस बातको अबतक जितने विस्तारसे समझा चुका हूँ, उससे अधिक विस्तारसे समझानेको तैयार हूँ। मेरे मतसे जन्मसे अथवा स्वप्रयत्नसे प्राप्त श्रेष्ठता-जैसी कोई चीज नही है। मैं तो अद्वैतके महान बुनियादी सिद्धान्तको माननेवाला हूँ और अद्वैतकी मेरी व्याख्यामें ऊँच-नीचके फर्कके लिए कतई कोई स्थान नही है। इस सिद्धान्तमें मेरा अखण्ड विश्वास है कि सभी मनुष्य जन्मसे समान हैं। सबमें उसी एक आत्माका निवास है — चाहे वह भारतमें जन्मा हो या इंग्लैंड अथवा अमेरिकामें या जैसे भी परिवेश-परिस्थितिमें उत्पन्न हुआ हो, और चूँकि मैं मानव-मात्रकी सहज समानतामें विश्वास करता हूँ इसीलिए उस श्रेष्ठताके सिद्धान्तके खिलाफ लड़ रहा हूँ जिस श्रेष्ठताका दावा हमपर शासन करनेवाली जातिके बहुत-से लोग करते हैं। श्रेष्ठताके इस सिद्धान्तके खिलाफ मैं दक्षिण आफ्रिकामें पग-पगपर लड़ा हूँ, और अपने उसी सहज विश्वासके कारण मैं अपनेको भंगी, कतैया, बुनकर, किसान और मजदूर कहनेमें हर्षका अनुभव करता हूँ। और जहाँ-कही ब्राह्मणोंने अपने जन्मके कारण या बादमें ज्ञान प्राप्त कर लेनेके आधारपर श्रेष्ठताका दावा किया है, वहाँ मैं खुद इन ब्राह्मणोंके खिलाफ भी लड़ा हूँ। मुझे तो यह बात इन्सानियतके खिलाफ मालूम होती है कि आदमी आदमीको अपनेसे नीचा समझे। 'भगवद्गीता' में मेरे विचारका यथेष्ट समर्थन मिलता है। और इसीलिए मैं ऐसे हर अब्राह्मणके साथ हूँ, जो श्रेष्ठताके इस दानवसे लड़ता है, चाहे उस श्रेष्ठताका

[1] १. इस विषयपर महादेव देसाईके प्रश्नोत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट १।

दावा ब्राह्मण करें या कोई और। मेरा यह मत है कि जो श्रेष्ठताका दावा करता है, वह मनुष्य ही नहीं रह जाता।

लेकिन मेरी इन तमाम मान्यताओंके बावजूद वर्णाश्रम धर्ममें मेरा विश्वास कायम है। मेरे लेखे वर्णाश्रम धर्म एक ऐसा सिद्धान्त है जिसे आप और मैं चाहे जितनी कोशिश करके भी समाप्त नहीं कर सकते। इस सिद्धान्तको स्वीकार करनेका मतलब अपने-आपको उस एकमात्र सिद्धिकी साधनाके लिए मुक्त कर लेना है जिसके लिए हमें जन्म मिला है। वर्णाश्रम धर्मका मतलब विनय है। मैंने यह तो जरूर कहा है कि सभी मानव जन्मसे समान हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि मैं कहता हूँ कि गुण वंश-परम्परासे नहीं आते। इसके विपरीत मैं मानता हूँ कि जिस प्रकार हर व्यक्ति वंश-परम्पराके अनुसार विशेष रूपाकृतिको प्राप्त करता है उसी प्रकार वह अपने जन्मदाताओंकी कुछ विशेषताएँ एवं गुण भी प्राप्त करता है और इस चीजको स्वीकार कर लेनेका मतलब बहुत सारी शक्ति बचा लेना है। यदि हम स्पष्ट रूपसे ऐसा स्वीकार करके उसके अनुसार चलना भी चाहें तो इससे हमारी भौतिक महत्वाकांक्षाओंपर सहज ही एक अंकुश लग जायेगा और तब हम सब ओरसे निश्चिन्त होकर अपनी शक्तिको आध्यात्मिक चिन्तन और आध्यात्मिक विकासमें लगा सकेंगे। मैंने वर्णाश्रम धर्मके सिद्धान्तको उसके इस अर्थमें बराबर स्वीकार किया है। आप यह कह सकते हैं कि वर्णाश्रम धर्मका यह अर्थ आज नहीं समझा जाता है। मैंने स्वयं अनेक बार कहा है कि आज वर्णाश्रम धर्मको जिस रूपमें समझा और आचारमें उतारा जाता है वह मूल वर्णाश्रमकी अत्यन्त बुरी नकल है, तोड़-मरोड़ है, लेकिन इस तोड़-मरोड़को दूर करनेमें हमें मूलको ही नष्ट नहीं कर देना चाहिए। अगर आप मेरे बताये हुए आदर्श वर्णाश्रमको मान लेते हैं तो फिर आप मेरी सभी बातें मान लेते हैं। मैं आपसे यह विश्वास करनेके लिए भी कहूँगा कि कोई राष्ट्र, कोई व्यक्ति उचित आदर्शोंके बिना जी ही नहीं सकता। और अगर आप आदर्श वर्णाश्रममें मेरी तरह विश्वास रखते हों, तो फिर आप उसे जहाँतक हो सके प्राप्त करनेके लिए भी मेरी तरह प्रयत्न अवश्य करेंगे। सच पूछा जाये तो दुनिया इस सिद्धान्तसे कहीं लड़ नहीं सकी है। इस सिद्धान्तसे लड़नेका परिणाम यही हुआ है और हमेशा यही होगा कि इस तरह हम अपना ही नुकसान करते हैं और एक ऐसी चीजके लिए प्रयत्न करते हैं जिसे हम कभी पा ही नहीं सकते। इसलिए मेरा कहना यह है कि यदि आप, हमारे पूर्वजोंने विरासतमें हमें जो-कुछ दिया है उसे समझकर इस महान विरासतमें जो दोष पैदा हो गये हैं उनके विरुद्ध संघर्ष करेंगे तो आपका संघर्ष और अधिक सफल होगा। और मैंने आपसे जो-कुछ कहा है उसे यदि आप स्वीकार कर लें तो ब्राह्मण और अब्राह्मण समस्याका समाधान भी, जहाँतक उस समस्याके धार्मिक पहलूका सम्बन्ध है, बहुत आसान हो जाता है। एक अब्राह्मणकी हैसियतसे मैं ब्राह्मण धर्मको, जहाँतक एक अब्राह्मणसे बन सकता है, शुद्ध बनानेकी कोशिश करूँगा, लेकिन कभी भी उसे नष्ट करनेका प्रयत्न नहीं करूँगा। मैं ब्राह्मणों-को दम्भपूर्वक अपनेको श्रेष्ठ माननेकी स्थितिसे या ऐसे स्थानोंसे जहाँ उन्हें भौतिक

लाभ होते हों, च्युत करना चाहूँगा। जिस क्षण कोई ब्राह्मण भौतिक लाभके पीछे पड़ जाता है, उसी क्षणसे वह ब्राह्मण नहीं रह जाता। लेकिन, जहाँ कही उसमें विद्वत्ता देखूँगा, वहाँ मैं उसके खिलाफ कुछ नही करना चाहूँगा। यह ठीक है कि उसे अपनी विद्वत्ताके कारण श्रेष्ठताका दावा नही करना चाहिए, किन्तु साथही-साथ मुझे भी विद्वत्ताको वह सम्मान देनेसे नही चूकना चाहिए जिस सम्मानका अधिकार उसे सर्वत्र है। लेकिन, इतने बड़े श्रोता-समुदायके सामने मुझे इस विषयपर इससे ज्यादा गहरी चर्चामें नही उतरना चाहिए।

आखिरकार मुझे तो उसी एक रामबाण उपायका सहारा लेना है जिसे मैं जीवनकी सभी बुराइयोंका उपचार मानता हूँ। और वह यह है कि हम जो भी लड़ाई लड़ें, हमारी लड़ाई शुद्ध होनी चाहिए; हमें सत्य और अहिंसासे तनिक भी विचलित नही होना चाहिए। और अगर हम अपनी गाड़ीको इन दो पटरियोंपर चलाते रहेंगे तो आप पायेंगे कि हमारी लड़ाईमें चाहे हम हजार गलतियाँ ही क्यों न करे—शुद्धताकी सुगन्ध होगी और उसे लड़ना हमारे लिए सुगम होगा। और जिस प्रकार कोई रेलगाड़ी पटरियोसे उतर जानेपर नष्ट हो जाती है उसी प्रकार यदि हम इन दो पटरियोंपर से हट जाते हैं तो नाशको प्राप्त होगे। जो व्यक्ति सत्यवादी है और अपने प्रतिरोधीका भी बुरा नही चाहता, वह अपने शत्रुओके खिलाफ लगाये आरोपोंको भी आसानीसे नही मानेगा। लेकिन, वह अपने शत्रुके दृष्टिकोणको समझनेकी कोशिश करेगा और सदा अपना दिमाग खुला रखेगा तथा बराबर अपने शत्रुओंकी सेवा करनेके अवसरकी ताकमें रहेगा। मैंने इस नियमको दक्षिण आफ्रिकामें और यहाँ भी अंग्रेजों और आम तौरपर यूरोपीयोपर आजमाकर देखा है और उसमें मुझे सफलता भी मिली है। फिर आप ही सोचिए कि अपने घरो, अपने सम्बन्धियों, अपने घरेलू मामलो और अपने आत्मीय जनोंपर इस नियमको लागू करना हमारे लिए कितना ज्यादा जरूरी है?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-९-१९२७

२. भाषण : त्रिचनापल्ली नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें[1]

१७ सितम्बर, १९२७

मित्रो,

लगता है कि मुझमें अब और शक्ति नही रह गई है। त्रिचनापल्लीका कार्यक्रम मैं सुविधापूर्वक जितना निपटा सकता हूँ उससे कही भारी है। लेकिन मैं उन लोगोंको निराश नही कर सकता जिन्होंने इतने सारे समारोहोंका आयोजन किया है। इसीलिए मेरे स्वास्थ्य-सम्बन्धी सलाहकारके नाते डा० राजन्‌ने एक ऐसी योजना बनाई है जिससे मुझपर कमसे-कम बोझ पड़े, और मैं इन्हें पूरा भी कर सकूँ। योजना यह है कि मैं इन आयोजनोंमें आप लोगोंसे बोलनेमें असमर्थता प्रकट करके पूर्ण मौन रखूँ, हालाँकि यदि मेरा स्वास्थ्य ठीक होता तो मैं जरूर बोलता। बाजारका शिलान्यास करके मुझे काफी हर्ष हुआ है। अभिनन्दनपत्रके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और अपने मायावरम्‌के भाषणकी[2] ओर आप लोगोंका ध्यान दिलाता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-९-१९२७

३. क्या समाचार देंगे?

२५-७-१९२७ सोमवारको सवेरे भाई कान्तिलाल हरिवल्लभदास पारेख सत्याग्रह आश्रमसे निकले और उसके बाद उसी दिन अहमदाबादमें कुछ-एक स्थानोंमें दिखाई पड़े, किन्तु उसके बाद वे २६, २७ तारीखको कहाँ थे, इसकी खबर नही मिलती। किन्तु २८ तारीखको गुरुवारके दिन कुछ आश्रमवासियोंने उन्हें साबरमतीमें तैरते हुए देखा था। उन्हें तैरना अच्छा आता है। यदि वे किसी गुप्त स्थानमें रह गये हों तो वे स्वयं अथवा कोई जान-पहचानवाला स्नेही-सम्बन्धी खबर देगा तो उपकार होगा और उनके वियोगमें दुःखी उनके पिता और वृद्धा दादीको इस शुभ समाचारसे आनन्द होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-९-१९२७

१. गांधीजीने, जो बहुत थके हुए प्रतीत होते थे, भाषण लिखकर दिया था जिसे सभामें चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने पढ़ा था। दक्षिण भारत तथा लंकाके अपने दौरेमें गांधीजीको खादी कोषके लिए थैलियाँ प्राप्त हुई थीं। उन्होंने सभास्थलोंपर भी धन-संग्रह किया और भेंट स्वरूप मिली वस्तुओंकी नीलामी की। इन संग्रहोंके विस्तृत विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२. देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ ५७१-७६।

४. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१८ सितम्बर, १९२७

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र मिला। प्रफुल्ल बाबूको मैंने लिखा अवश्य था। प्रफुल्ल बाबूका पत्र इसके साथ है। मुझे याद नहीं कि मैंने उनपर प्रतिष्ठानमें दुबारा प्रवेश करनेके लिए जोर दिया हो। यही बात मैं उनको भी लिख चुका हूँ। उन्हें न्यास-मण्डलमें रहना है या नहीं, इसका निर्णय अब उन्हें करने दीजिए।

जैसा आपने लिखा है, मैं आपसे सुरेश बाबू और अन्य लोगोंका मन जीतनेकी अपेक्षा करता हूँ। जब लोग हमारे साथ अच्छी तरह निभा न सकें तो हमारे लिए अपनेको ही दोषी ठहराना सर्वोत्तम है। असीम उदारतामें तो सब-कुछ आ जाता है, वरना वह असीम नहीं रह जाती। हमें चाहिए कि हम अपने प्रति कठोर तथा अपने पड़ोसियोंके प्रति नरम बनें। क्योंकि हमें इसका ज्ञान नहीं होता कि उनकी कठिनाइयाँ क्या हैं और उनपर वे किस प्रकार विजय पाते हैं।

सप्रेम,

आपका,
बापू

[पुनश्च :]

आशा है आपने वह रकम अभय आश्रमको भेज दी होगी।

अंग्रेजी (जी० एन० १५७६) की फोटो-नकलसे।

५. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

त्रिचनापल्ली
मौनवार [१९ सितम्बर, १९२७][1]

बहनो,

तुम्हारी चिट्ठियाँ मिलती रहती हैं। तुम्हारे कामका दर्शन यहाँ बैठे-बैठे किया करता हूँ। जो अपनी शक्तिके अनुसार काम करता है, वह सब-कुछ करता है। किन्तु काम करनेमें हमें अपनेमें उस 'गीता'-दृष्टिका विकास करना चाहिए जो कि हमारा लक्ष्य है। 'गीता'-दृष्टि यह है कि सब काम सेवाभावसे करें। सेवाभावसे करे, यानी ईश्वरार्पण करके करें। और जो ईश्वरार्पण करके करता है, उसमें यह भाव नहीं

१. गांधीजी इस तारीखको त्रिचनापल्लीमें थे।

होता कि "मैं करता हूँ"। उसमें द्वेषभाव नहीं होता। उसमें दूसरोंके प्रति उदारता होती है। अपने मनसे बार-बार यह पूछती रहो कि तुम्हारे छोटेसे-छोटे हरएक काममें यह सब होता है या नहीं।

मैंने अपने बारेमें जो लिखा था, उसपर रमणीकलालभाईने प्रश्न उठाया था। मैंने उसका जो जवाब दिया, वह तुम सबकी समझमें आया या नहीं, इसके बारेमें तुमने कुछ नहीं लिखा। मैं चाहता हूँ कि मैं जो-कुछ लिखता हूँ उसकी चर्चा करो, और उसके सम्बन्धमें जो सवाल खड़े हों वे मुझसे पूछो।

मेरा स्वास्थ्य अभी तो काम दे रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६६५) की फोटो-नकलसे।

६. पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको

मौनवार [१९ सितम्बर, १९२७][१]

भाई हरिभाऊ,

आपका पत्र मिला है। यदि स्वामी और जमनालालजी सम्मत है तो मैं भी हुं। समयपर कैसे हिंदी न. जी[२]. तैयार हो सकता हैं, मैं नही समजता। परन्तु इसकी फिकर मुझे न होनी चाहीये।

मार्तण्डका स्वास्थ्य कैसा रहता है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आपका खत पढ़नेसे देखता हूं—दो बात रह गई है। खादी लेखके बारे में पीछेसे लीखुंगा।

मेरा आश्रममें आना जानेवारी मासमें होगा। अजमेरके नजदीक आश्रम खोलनेका ख्याल अच्छा है।

बापू

भाई हरिभाऊ उपाध्याय
खादी कार्यालय
अजमेर

सी० डब्ल्यू० ६०५८ की प्रतिसे।
सौजन्य : हरिभाऊ उपाध्याय

१. डाककी मुहरसे।
२. हिन्दी नवजीवन।

७. तार: जमनालाल बजाजको

त्रिचनापल्ली
२० [सितम्बर, १९२७][1]

जमनालाल सेठ
मार्फत रामनारायण
मंगलदास रोड, पूना

अगर मीराबहन वहीं हो तो उससे कहें कि वह जल्दबाजी न करे। मैं बिलकुल ठीक हूँ। प्रायः ईश्वरकी वाणी और हमारे भयकी प्रतिध्वनियाँ एक जैसी प्रतीत होती हैं। गर्मीमें इस पैदल यात्राके दौरान उसके नाजुक स्वास्थ्यको देखते उसका यहाँ होना बाधक होगा। मेरी चेतावनीके बावजूद यदि वह आना चाहे तो उसका स्वागत है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद

८. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे

त्रिचनापल्ली
[२० सितम्बर, १९२७][2]

मैंने देखा है कि त्रिचनापल्लीमें दिये गये मेरे पहले भाषणको[3] बाहर गलत समझा गया है और मित्रोंमें चिन्ता पैदा हो गई है। मैं अपने मित्रोंको यकीन दिलाना चाहता हूँ कि इसमें घबरानेकी कोई बात नहीं है। मेरे इस कथनका कि मुझमें अब और शक्ति नहीं रह गई है सन्दर्भ स्थानीय था और इसीलिए त्रिचनापल्लीमें इसको भली प्रकार समझ लिया गया था। मेरे कहनेका तात्पर्य यह था कि अबतक मैं अपनी शक्तिकी सीमातक कार्यक्रमोंमें भाग लेता रहा हूँ तथा त्रिचनापल्लीके अधिक व्यस्त कार्यक्रमको निपटाना मेरे लिए सुविधाजनक न होगा। त्रिचनापल्लीमें मित्रोंको तथा उन स्थानोंकी कमेटियोंको जहाँ मुझे अभी पहुँचना था यह एक चेतावनी थी कि वे एक ही प्रकारके बहुतसे कार्यक्रम न रखें। अपने हृदयकी क्षमताका खयाल रखते हुए मैं एक दिनमें अधिकसे-अधिक एक सभामें ही भाग ले

१. इस दिन गांधीजी त्रिचनापल्लीमें थे।
२. भेंटकी रिपोर्ट प्रेसको इसी दिन भेजी गई थी।
३. देखिए "भाषण: त्रिचनापल्ली नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें", १७-९-१९२७।

सकता था। डा० राजन्‌ने मेरा भली प्रकार निरीक्षण भी कर लिया है और उन्हें या मुझे अब कोई फिक्र नही है। रक्तचाप उतना ही है जितना कि बंगलोरमें था। वैसे तो मैं बिलकुल ठीक हूँ और यदि मैंने जरूरतसे ज्यादा काम नही किया तो निश्चित कार्यक्रमको पूरा करनेकी अपनी क्षमतामें मुझे कोई सन्देह नहीं। मेरे पास रहनेवाले मित्र मेरी सुरक्षाके लिए असाधारण सावधानी बरत रहे हैं, और मैं स्वयं भी काफी जागरूक हूँ। आशा है कि मेरी यात्राके सम्बन्धमें किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं होगी; पत्र-प्रतिनिधियों तथा सम्पादकोंसे मेरी प्रार्थना है कि वे मेरे स्वास्थ्यसे सम्बन्धित कोई भी खबर मुझे अथवा मेरी देखभाल करनेवालोंको दिखाये बिना न भेजें और न छापें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-९-१९२७

९. भाषण: नेशनल कालेज, त्रिचनापल्लीमें

२० सितम्बर, १९२७

मैंने जिसे अभिनन्दनपत्र समझा है उसके लिए और थैलीके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं जानना चाहूँगा कि जो चीज पहले संस्कृतमें पढ़ी गई और जिसे मैं अभिनन्दनपत्र समझा हूँ, उसे यहाँ कितने लोग समझ सके। जो लोग उसे समझे हों, वे कृपया अपने हाथ ऊपर उठायें[1]। जिनकी समझमें यह नही आया, वे हाथ उठायें[2]। छात्रोंकी सभामें ऐसी चीजके लिए मैं तैयार नही था। दुर्भाग्यवश हमारे देशमें ढोंगका नाटकीय प्रभाव उत्पन्न करनेवाली चीजोंका बाहुल्य है। जिन लोगोंने यह आयोजन किया है उन्हें इस प्रकारकी चीजोंको, जो उपस्थित लोगोंमें से अधिकांशकी समझमें न आये, अपनी कार्यवाहीसे हटा देना चाहिए था। (ताली)। यह करतल-ध्वनि भी मुझे बिलकुल बेमौजूँ लगती है। यह तो मेरे लिए इस बातकी सूचना है कि मैं बोलना बन्द कर दूँ; अगर यहाँ दूसरी बार ताली बजायी गई तो आप देखेंगे कि मैं उसे यहाँसे चले जानेकी सूचना समझूँगा। छात्र-जीवनको सचमुच बड़ी गम्भीर चीज माना जाना चाहिए, और चूँकि सभी छात्रोंको खिलाड़ी होना चाहिए, इसलिए लाजिम है कि वे जीवनके गम्भीर पक्षको खिलाड़ीकी भावनासे ग्रहण करें। चूँकि आपमें से अधिकांश लोग हिन्दू हैं, इसलिए मैं सुझाव दूँगा कि आप संस्कृतका ज्ञान प्राप्त करें ताकि अगर किसी संस्कृत श्लोकका पाठ किया जाये तो आप सब उसे समझ सकें; इससे आपमें और मुझमें भी, क्योंकि मैं अपनेको अभीतक एक छात्र ही गिनता हूँ, खिलाड़ी जैसी गम्भीरता पैदा होगी।

मुझे डर है कि अगर मैं एक अन्य चीजमें आपकी परीक्षा लूँ तो आप वैसे ही अज्ञानका परिचय देंगे जैसा कि एक क्षण पहले दिया था। उदाहरणके लिए,

१. बहुत कम लोगोंने हाथ ऊपर उठाये।

२. बहुत-से लोगोंने हाथ उठाये।

राष्ट्रीय कालेजके छात्रोंसे हिन्दीके ज्ञानकी अपेक्षाकी जाती है; लेकिन अगर मैं पूछूँ कि आपमें से कितने लोगोंको हिन्दी आती है, तो मुश्किलसे एक प्रतिशत लोग अपने हाथ उठायेंगे।

आप पिछली फरवरीकी बात करते हैं और कहते हैं कि उस अवसरपर श्री राजगोपालाचारी और शंकरलाल बैंकरने खद्दरके आर्थिक पक्षपर बोलते हुए आपसे हृदयस्पर्शी अपील की थी। जो हमारे दिलकी गहराइयोंको छू ले वह हृदयस्पर्शी अपील है। लेकिन अगर मैं आपसे हाथ उठानेको कहूँ तो आप फिर एक दयनीय दृश्य प्रस्तुत करेंगे और यह जाहिर होगा कि आपमें से बहुत थोड़े लोग ही खद्दर पहनते हैं। अगर मेरा अनुमान सही है तो आपके लिए यह कहना गलत है कि फरवरीमें आपसे की गई अपील हृदयस्पर्शी अपील थी। दूसरी जगहसे मिली थैलियोंके मुकाबले में आपकी थैलीको कम नहीं मानता, लेकिन मैं आपके इस विनम्र कथनसे सहमत हूँ कि आप जितना चाहिए था उतना रुपया जमा नहीं कर पाये हैं। अगर आपका दिल सचमुच उस अपीलसे हिल गया होता तो आप उससे कहीं ज्यादा रुपया इकट्ठा करते, जितना किया है। उचित तो यह था कि रुपया जमा करनेके अपने काममें मेरी बीमारीको बाधा समझनेके बजाय आपको जितना वक्त और मिल गया था, उस वक्तको आप और अधिक धन जमा करनेमें लगाते। मेरी बीमारीसे इस अपील-की मार्मिकता और बढ़ जानी चाहिए थी, और आपको अपने मनमें कहना चाहिए था: "यह बूढ़ा आदमी बीमार पड़ गया है, और इसमें शक नहीं कि वह खादी कार्यको खूबीसे चला रहा था, तो अब चलो हम सब चरखेके काममें हाथ बँटायें और दूने जोरसे उसमें जुट जायें। इसके लिए हम जितना देनेवाले थे उससे दूना चन्दा दें; अपने विदेशी वस्त्र उतार फेंकें और सभी लोग खादी पहनने लगें।" उस अपीलका यही नतीजा होना चाहिए था, लेकिन इसके बदले आप मुझे बताते हैं कि मेरी बीमारी सुनकर आप सब तानकर सो गये। लेकिन बिगड़ी सुधरने, और शिक्षा ग्रहण करनेका हमेशा वक्त है। कालेज हमेशाके लिए बन्द नहीं हो गये हैं। आप अब भी छात्र हैं। मैं तो कुछ समयमें त्रिचनापल्लीसे चला जाऊँगा, लेकिन खादी तो त्रिचनापल्ली या भारतसे विदा नहीं हो जायेगी। दरिद्रनारायण अब भी आपके दरवाजे खटखटा रहे हैं। खादी अब भी आपके हाथों विकसित होनेकी राह देख रही है। खादीके लिए दी गई थैली आपने मेरी खुशीके लिए नहीं दी है। वह आपने दरिद्रनारा-यणके नामपर और उन्हींकी खातिर दी है। इसलिए आपकी जेबपर उसका दावा बराबर बना हुआ है। तो मैं आशा करता हूँ कि आप खादीके काममें पीछे नहीं रहेंगे, आप अपना हिन्दीका ज्ञान ठीक करेंगे, क्योंकि आपके यहाँ एक हिन्दी-प्रचारक है; और आप संस्कृत भी सीखेंगे। मैं आपसे कहना चाहूँगा कि दूसरी जगहोंपर मैंने छात्रोंके सम्मुख जो-कुछ कहा है उसपर ध्यान दें, और उन भाषणोंमें जो सन्देश निहित है, उसे आप समझें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-९-१९२७

१०. भाषण: वाई० एम० सी० ए०[1] पुत्तूरमें

२० सितम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

आप लोगोंकी तरह मुझे भी श्री हेवर्डकी अनुपस्थितिका दुःख है। उनसे मिलने तथा थोड़ी बातचीत करनेका सौभाग्य मुझे उनके जानेसे पूर्व मिला था। मुझे दुःख है कि मैं आपको भाषण जैसी कोई चीज नही दे सकूँगा, लेकिन आज सुबह सभामें आते समय मैं सोच रहा था कि मैं भारतमें वाई० एम० सी० ए० को क्या चीज बनते देखना चाहूँगा। आपको मालूम ही है, ईसाई भारतीयोंके साथ मेरा सम्बन्ध दिन-ब-दिन बढ़ रहा है। दस साल पहले मुझे ईसाई भारतीयोंके इतने घनिष्ठ सम्पर्कमें आनेका अवसर नही मिला था जितना कि आज है। बहुतसे ईसाई भारतीयों तथा देशके बहुतसे ईसाई संघोंके सम्पर्कमें आनेपर मैंने देखा है कि अकसर ईसाई शब्दका अर्थ यूरोपीय समझा जाता है। आज सुबह जब मैं यहाँ आ रहा था तब मैंने मनमें सोचा कि क्या ही अच्छा हो अगर वाई० एम० सी० ए० को यंग मैन्स यूरोपीयन एसोसिएशनका बिलकुल पर्याय न समझा जाये। यद्यपि लाखों लोग ऐसा ही समझते हैं किन्तु मेरी दृष्टिमें "यूरोपीय" शब्दका वही अर्थ या भाव नहीं है जो कि ईसाई शब्दका है और मैं समझता हूँ कि ईसाई-धर्म यूरोपीय धर्मके साथ मिलाये जानेपर प्रायः संकुचित बन जाता है। मेरी विनम्र रायमें तो कोई भी भारतीय केवल ईसाई हो जानेके कारण भारतीय ही न रहे, यह जरूरी नहीं है। ईसाई-धर्मको अपनाना या धर्म-परिवर्तन करना एक नये जीवनको स्वीकार करना है इसलिए जो सच्चे दिलसे धर्म-परिवर्तन करता है उससे मैं अपेक्षा करता हूँ कि वह अपनी राष्ट्रीयताको व्यापक बनाये। यदि वह अपने पड़ोसियोंकी चिन्ता नहीं करता तो फिर पड़ोसियोंकी परिधिके बाहरके लोगोंके बारेमें तो वह क्या चिन्ता करेगा? मैं यह बात उन सभी ईसाई और मुसलमान मित्रोंसे करता हूँ जिनसे मैं भारतमें मिलता रहता हूँ और जिन्होंने भारतको अपना देश बना लिया है या जिनकी जन्मभूमि भारत है। ऐसे संघोंको तोड़-फोड़के साधन न बनकर इस धरतीपर जो उत्तम है और सात्विक है उसका संरक्षण-केन्द्र बनना चाहिए। शेष बातोंके लिए मैं आप लोगोंका ध्यान मद्रासमें वाई० एम० सी० ए० के सम्बन्धमें कहे गये अपने विचारोंकी[2] ओर दिलाता हूँ। आप लोगोंने मुझे अपनेसे मिलनेका अवसर दिया इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-९-१९२७

१. ईसाई युवक संघ।
२. ४ सितम्बर, १९२७ को; देखिए खण्ड ३४।

११. भाषण : स्त्रियोंकी सभा, त्रिचनापल्लीमें

२० सितम्बर, १९२७

प्रिय बहनो,

मुझे आपकी इस सभामें शामिल हो सकनेकी बहुत खुशी है। मैं आपका बहुत समय नहीं लेना चाहता। मैं आपसे केवल यही कहना चाहता हूँ कि भारतमें इस समय जो राष्ट्रीय आन्दोलन चल रहा है, आप उसमें प्रमुख हिस्सा लें। मेरा अभिप्राय खादी कार्य और चरखेके सन्देशसे है। इस कार्यका उद्देश्य भारतको उस भयंकर गरीबीसे मुक्त करना है जिससे वह इस समय ग्रस्त है। हमारी लाखों बहनें इस संकटमें पड़ी हुई हैं। मैं और आप अगर अपना कर्त्तव्य करें तो उन्हें इस दुःखमें पड़े रहनेकी जरूरत नहीं है। वे भूखों मरती हैं, क्योंकि उनके अपने गाँवोंमें उनके लिए काम नहीं है। एक समय था जब उन्हें भूखों मरनेकी कोई जरूरत नहीं थी क्योंकि सौ बरस पहले हमारे गाँवोंकी हर झोंपड़ीमें चरखा चलता था। अवकाश मिलनेपर गाँवमें रहनेवाली हमारी बहनें सूत कातती थीं। इस सूतसे बुनी गई खादी को गरीब-अमीर, सभी पहनते थे। चरखेके चलनके धीरे-धीरे बन्द हो जानेका एक कारण यह था कि आपने और मैंने खादी पहनना छोड़ दिया। अब चरखेको उसका पुराना स्थान फिरसे दिलानेका आन्दोलन शुरू किया गया है, और आपकी सहायताके बिना यह आन्दोलन आगे नहीं बढ़ सकता। आप जो मदद कर सकती हैं सो यह है कि विदेशोंमें बनी अपनी साड़ियोंका त्याग कर दें और खादी पहनें। इन गरीब लोगोंका विचार करना मेरा और आपका कर्त्तव्य है, लेकिन यह काम बिना धनके नहीं हो सकता। आपसे अपेक्षा है कि आप अपनी सामर्थ्य-भर चन्दा देंगी। सारे भारतमें आपकी बहनोंने रुपया और अपने जेवर दिये हैं। आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें कहा है कि आपके जेवर आपकी मितव्ययिताका परिणाम हैं। मैं तो यह बात नहीं मानता, क्योंकि ये जेवर आपको दिये गये हैं; इन्हें आपने खुद अपनी मेहनतसे नहीं बनवाया है। लेकिन निस्सन्देह जेवर स्त्रीधन है, और मैं चाहता हूँ कि आप अपनी गरीबसे-गरीब बहनको इसमें भागीदार बनायें। यदि आप भारतको धर्मभूमि बनाना चाहती हैं तो आप सबको सीताकी तरह बनना चाहिए। सीताका सौन्दर्य उनके बाहरी सौन्दर्य या उनके जेवरोंमें नहीं, बल्कि उनके हृदयमें था। स्त्री अपने जेवरोंके कारण नहीं, बल्कि अपने हृदयकी पवित्रताके कारण पूजनीय होती है। इसलिए यदि आपको विश्वास हो कि खादीसे भारतका सारा संकट कुछ हदतक दूर हो जायेगा, तो आप इस अनुष्ठानके लिए अपने साथ जो पैसा लाई हैं वह पैसा और अपने जेवर भी दे डालें। अगर एक कदम और आगे जायें, तो मैं आपसे कहूँगा कि अपने खाली वक्तमें आप चरखा चलायें। खाली वक्तमें करनेकी दृष्टिसे औरतोंके लिए यह एक अच्छा काम है; आपका फिजूलकी गपशपके बजाय इस प्रकार उपयोगी

काममें समय व्यतीत करना कहीं बेहतर है। अब आपके बीचमें स्वयंसेवक लोग जायेंगे; आप जो-कुछ दे सकें, उन्हें दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-९-१९२७

१२. भाषण: सार्वजनिक सभा, त्रिचनापल्लीमें

२१ सितम्बर, १९२७

महात्माजीने अपने भाषणके दौरान सत्याग्रहके उन दिनोंकी चर्चा की जब वे त्रिचनापल्ली आये थे। उन्होंने कहा कि उस यात्रामें मुझे कुछ बहुत ही अच्छे साथी कार्यकर्त्ता प्राप्त हुए थे। उस समय जो एकता सब जगह दिखाई देती थी, अब उसकी जगह मतभेदोंने ले ली है, फिर भी खादीका काम देशमें कितने ही उतार-चढ़ावोंके बावजूद सुस्थिर गतिसे चल रहा है। खादीमें मतभेदोंकी गुंजाइश नहीं है, क्योंकि खादीका सम्बन्ध तो जन-साधारणसे है और जन-साधारणमें कोई मतभेद नहीं है। त्रिचनापल्ली चन्देमें कितना ही धन दे, लेकिन यदि गाँववालोंके पवित्र हाथोंसे तैयार होनेवाली खादी आप लोग नहीं पहनते तो यह सारा धन कोई मूल्य नहीं रखता। एक बार सर्व-प्रचलित हो जानेपर खादीको आर्थिक सहायता देनेकी जरूरत नहीं रह जायेगी। खादीको आज आर्थिक सहायताकी जरूरत है, यह इस बातका द्योतक है कि जिन लाखों भूखसे पीड़ित लोगोंके बलपर हम जिन्दा हैं, उनके प्रति हम अपना कर्त्तव्य नहीं कर रहे हैं।

नदीके जलको गन्दा किये जानेकी चर्चा करते हुए महात्माजीने कहा कि पवित्र कावेरी नदीके एक तटपर त्रिचनापल्ली है और दूसरे तटपर श्रीरंगम्। मैं जो बात कहने जा रहा हूँ वह अकेले त्रिचनापल्लीकी ही बात नहीं है। यह तो सारे भारतमें एक आम बात है। मैं आपका ध्यान इस ओर इसलिए खींच रहा हूँ कि यहाँ कार्यकर्त्ताओंकी एक बड़ी फौज है और वे यदि चाहें तो इस कठिन समस्यासे निपट सकते हैं। उन्होंने कहा:

कल मुझे श्रीरंगम् नगरपालिकाके अध्यक्षसे और आज सुबह श्रीरंगम्में विवेकानन्द आश्रमके नवयुवकोंसे बात करनेका सौभाग्य मिला। सभी स्वीकार करते हैं कि श्रीरंगम् की दशा कतई अच्छी नहीं है। मेरी नम्र रायमें अस्वच्छताका कारण पैसेकी कमी नहीं है और न नदीके जलकी अस्वच्छता ही धनकी कमीका कारण है। इसका कारण तो सिर्फ हमारी घोर उदासीनता है। हमारे सामने धूल और गन्दगीका जो ढेर इकट्ठा होता चला जाता है हम उसे देखते ही नहीं हैं। हमें सफाई और स्वच्छताका आरम्भिक ज्ञान रखनेवाले ऐसे स्वयंसेवकोंकी फौजकी जरूरत है जो जन-साधारणको सफाई और स्वच्छताके बुनियादी सिद्धान्तोंकी शिक्षा दे। जिस नदीसे हम

पीनेका पानी लेते हैं, उसमें अपनी गन्दगी धोना ठीक नहीं है।' हमारे नदी-तट युवक और वृद्ध सभीके लिए मनोरंजनके स्थान होने चाहिए; उन्हें ऐसी जगह होना चाहिए जहाँ हम पूरी बेफिक्रीसे और आरामके साथ लेट सकें। लेकिन होता यह है कि नदीके तटोंको ही हम नंगे पैर चलनेके भी अयोग्य बना देते हैं। इस समयतक यह बात बिलकुल स्पष्ट हो चुकी है कि गन्दी आदतोंके कारण ही हैजा पैदा होता है। आप गन्दा पानी पीना बन्द कर दें और आवश्यक सावधानी बरतें तो हैजेका कोई भय नहीं रह जाता। मुझे बताया गया है कि जब दक्षिणमें बाढ़का प्रकोप हुआ था, जैसा कि इस समय उड़ीसामें है, उस समय त्रिचनापल्ली और श्रीरगमम्में हैजा फूट पड़ा था, और यह ईश्वरका दण्ड ही था, क्योंकि हम लोग उसी नदीका पानी पीते थे जिसे हमने स्वयं गन्दा कर रखा था। मेरा विश्वास है कि धरती माता और अपनी नदीके जलको स्वच्छ न रखकर हमने ईश्वर और मनुष्यके प्रति पाप किया था। 'धरती माता' को जिस तरह हम गन्दा करते हैं, उस तरह गन्दा करना और जिन नदियोंकी हम पूजा करते हैं उन्हें गन्दा करना कितना घोर पाप है। त्रिचनापल्ली और श्रीरंगम्के नवयुवकोंके लिए वास्तवमें यह काम बहुत आसान है कि वे लोगोंको इस मामलेमें शिक्षित करनेका और जबतक यह बुराई दूर न हो जाये तबतक रोज सुबह नदीके तटपर जाकर लोगोंको समझाने-बुझानेका निश्चय कर लें। इस कामको करनेके लिए नगरपालिकाका सदस्य बनना अथवा किसी सार्वजनिक सस्था या सरकार द्वारा नियुक्त किया जाना जरूरी नहीं है; न ही इसमें बहुत समयकी जरूरत है। इसके लिए केवल इतना ही जरूरी है कि आपमें स्वच्छता और सफाईका मामूली ज्ञान और आबादीके स्वस्थ्यको हानि पहुँचानेवाली इस बुराईको दूर करनेका संकल्प हो। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि जो सामान्य-सा सन्देश मैंने दिया है उसे आप सब समझेंगे और त्रिचनापल्ली तथा श्रीरंगम्के सम्मानको पुनः प्रतिष्ठित करने तथा कावेरीको पवित्र बनानेका प्रयत्न करेंगे।'

इसके बाद महात्माजीने कहा कि यहाँ मजदूरोंकी आबादी बहुत बड़ी है, और नौजवानोंके सामने शराब पीनेकी बुराईको दूर करनेके लिए मजदूरोंके बीच सेवाकार्य करनेका बड़ा मौका है। जिस प्रकार अस्वच्छतासे आपका स्वास्थ्य नष्ट हो रहा है उसी प्रकार शराबका अभिशाप मजदूरोंके स्वास्थ्य और चरित्रको नष्ट कर रहा है। [अन्तमें गांधीजीने कहा :]

हमारे बीच वास्तविक राष्ट्रीय चेतना जाग्रत हो रही है। यह जागृति आवश्यक कार्योंके रूपमें व्यक्त होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-९-१९२७

१३. भाषण : पुदुकोट्टामें[1]

२१ सितम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

अभिनन्दनपत्र तथा थैलीके लिए म आपको धन्यवाद देता हूँ और इससे भी अधिक अभिनन्दनपत्रको पढ़कर न सुनानेके लिए देता हूँ। मुझे आपको यह यकीन दिलानेकी जरूरत नही है कि मैंने आपका अभिनन्दनपत्र पढ़ लिया है। आपने कहा कि आप काफी दिनोंसे मेरे यहाँ आनेकी प्रतीक्षामें थे। यह प्रतीक्षा दोनों तरफसे थी। अपने अभिनन्दनपत्रमें आपने बताया है कि आप चरखा और खादीके सन्देशमें विश्वास करते हैं और यह भी बताया है कि यहाँ कृषक वर्गकी गरीबीके कारण आपको चरखेके सन्देशकी खास तौरपर जरूरत है। देशके अन्य भागोंमें प्राप्त अनुभवके आधारपर मे यह समझता हूँ कि आपने जो-कुछ कहा वह अक्षरशः ठीक है। आपने यह भी बताया कि आपकी विधान-परिपदने शालाओंमें हाथ-कताई अनिवार्य करनेका एक प्रस्ताव पास कर दिया है। मे परिषदको इस बुद्धिमत्तापूर्ण तथा बहुत जरूरी प्रस्तावको पास करनेके लिए बधाई देता हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप और मे तथा अन्य सब लोग अपने इन विश्वासों तथा प्रस्तावोंको व्यवहारमें लायें। प्रस्ताव पास करना और विश्वास रखना तो दुनियाके सबसे आसान काम हे क्योंकि इनमें प्रस्तावोंको माननेवालों तथा उनके पेश करनेवालोंका कुछ जाता नहीं। लेकिन उन्हें व्यवहारमें लानेका अर्थ है संगठन, काम कैसे किया जाये यह सीखना, लोगोंके बीचमें जाना और इस सिलसिलेमें अन्य बहुत-कुछ करना। इस समय सुहावनी वर्षा आने लगी है, और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मे अपना भाषण लम्बा नही करना चाहता। मे भाषणका अन्त इस प्रार्थनासे करना चाहूँगा कि ईश्वर आपके विश्वासको कार्यरूपमें परिणत करनेके लिए आपको अपेक्षित बल तथा बुद्धि प्रदान करे। यदि आपने मेरी तमिल-नाडुकी यात्राके दौरान दिये गये मेरे भाषणोंको पढ़ा हो तो यकीनन आप जान गये होंगे कि अगर वर्षाका डर नही होता तो मैं क्या कहता। क्योंकि जो बातें मे मद्रास तथा अन्य स्थानोंमें कहता रहा हूँ वे आपके लिए भी हैं। अब क्योंकि वर्षा कुछ क्षणके लिए थम गई लगती है, मे उनमें से कुछेक बातोंको संक्षेपमें बताऊँगा . . .।[2]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २३-९-१९२७

१. नागरिकों द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें।

२. इसके बाद गांधीजीने मद्यनिषेध, अस्पृश्यता, सफाई, ब्राह्मण-अब्राह्मण प्रश्न तथा चरखा-कोषके सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त किये।

१४. पत्र : प्रागजी देसाईको

[२२ सितम्बर, १९२७ से पूर्व][1]

भाईश्री प्रागजी,

तुम्हारा पत्र मिला। शास्त्रीजीको तुमसे ठीक मदद मिल रही है। तुम्हारे मामलेका जो भी निर्णय हो तुम्हे चिन्ता करनेका कोई कारण नही है। शास्त्रीजी अपनी ओर से भी [तुम्हारी सहायताके लिए] प्रयत्न कर ही रहे होगे। तुम 'इंडियन ओपिनियन' में आ गये हो इसका यह अर्थ तो लगाया जा सकता है न कि वहाँ धनोपार्जन करनेका तुम्हारा जो इरादा था उसे अब तुमने छोड़ दिया है? मेढका क्या हाल है? तुम्हारी तबीयत कैसी रहती है? जो भी हो वहाँके किसी शौकमें मत पड़ना और असत्य तथा दुराव-छिपाव आदिसे बचना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५०४२) की फोटो-नकलसे।

१५. 'रंगीला रसूल'

समझदार और जो समझदारोंकी श्रेणीमें नही आते है, ऐसे तमाम पत्रलेखकोंको कोंचते रहनेपर भी मै इस पुस्तिकाको लेकर छिड़े विवादमें पड़नेके लोभका अबतक सवरण करता आया हूँ। मै धैर्यपूर्वक निजी पत्रों द्वारा ही इनका समाधान करनेकी कोशिश करता रहा हूँ। लेकिन इधर हालमें इतने ज्यादा पत्र आये है कि निजी तौरपर उनका उत्तर दे सकना मेरी सामर्थ्यके बाहर है। सबसे ताजा पत्र बिहारके एक मुसलमान प्रोफेसरसे मिला है। उन्होंने मुझे अखबारकी एक कतरन भेजी है जिसमें एक पत्र छपा है। पत्रलेखकने मुझे इस बातके लिए फटकारा है कि मैंने भी चुप्पीकी उस साजिशमें शामिल होना ही पसन्द किया है, जिस साजिशमें आम तौरपर सभी प्रमुख हिन्दू शामिल है। प्रोफेसर साहब चाहते है कि मै इसका उत्तर तत्काल दूँ। इस आशासे कि पत्रलेखक लोग मेरी सदाशयतासे संतुष्ट हो जायेंगे और मेरी चुप्पीका कारण समझेंगे, मै प्रोफेसर साहीकी इच्छानुसार तत्काल उत्तर दे रहा हूँ। चूँकि मै एक स्थानीय पत्रके अलावा और कोई अखबार नही पढ़ता, इसलिए हिन्दू नेताओकी "चुप्पीकी साजिश" का मुझे तो कोई ज्ञान नही है। अभी मै सबसे ज्यादा 'हिन्दू' को पढ़ता हूँ और मुझे याद है कि उसमें 'रंगीला रसूल' के खिलाफ

१. पत्रके पाठसे जान पड़ता है कि यह "पत्र : प्रागजी देसाईको", २३-९-१९२७ तथा "पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २२-९-१९२७ से पहले लिखा गया होगा।

एक बहुत बड़ा लेख छपा था। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, जब बहुत-से मुसलमानोंको इस पुस्तिकाके अस्तित्वका भी पता नहीं था तभी वह मेरे हाथमें आई थी। मुझे जानकारी देनेवालेकी सचाईकी परख करनेके लिए मैंने पुस्तिकाको पढ़ा और १९ जून, १९२४ के 'यंग इंडिया' में निम्न टिप्पणी भी लिखी[1]।

इस पर आर्यसमाजियोंकी ओरसे विरोध और आपत्तिका सिलसिला चला। मुझे आर्यसमाजियों और महान संस्थापक ऋषि दयानन्दके खिलाफ लिखे गये लेखादिकी कतरनें भेजी; जो 'रंगीला रसूल' से भी गन्दे थे और मुझे बताया गया कि 'रंगीला रसूल' और इस तरहकी दूसरी चीजें मुसलमानों द्वारा लिखी उपर्युक्त चीजोंके उत्तरमें ही लिखी गई हैं। इसपर मैंने १० जुलाई, १९२४ के 'यंग इंडिया' में एक और टिप्पणी लिखी, जो निम्न प्रकार थी।[2]

इस प्रकार मुसलमानोंके क्षोभका अनुमान मैंने पहले ही लगा लिया था और तदनुसार कार्रवाई भी की थी। लेकिन मौजूदा आन्दोलनमें मेरा और उनका साथ बस यहींतक है। इस आन्दोलनने जो मोड़ लिया वह मुझे पसन्द नहीं आया। मैंने इसे अतिवादितापूर्ण और जनताको भड़कानेवाला माना। न्यायमूर्ति दलीपसिंहपर[3] किया गया प्रहार अकारण, अनुचित और पागलपनभरा था। न्यायपालिकाके बारेमें भी ऐसा नहीं कहा जा सकता कि उसे सरकार प्रभावित नहीं कर सकती, लेकिन यदि उसे जनताके प्रहारों, धमकियों और अपमानोंको सहना पड़े तो वह न्याय करनेके लायक बिलकुल नहीं रह जायेगी। जहाँतक न्यायाधीशकी ईमानदारीका सम्बन्ध था, इतनेसे किसी भी मुसलमानको सन्तुष्ट हो जाना चाहिए था कि उन्होंने बिना किसी लाग लपेटके पुस्तिकाकी भर्त्सना की। न्यायाधीशके द्वारा की गई सम्बन्धित धाराकी व्याख्याको उनके विरुद्ध इतना तीव्र दोषारोपण करनेका कारण नहीं बनाना चाहिए था। अन्य न्यायाधीशोंने न्यायमूर्ति दलीपसिंहसे भिन्न मत जाहिर किया, इससे यहाँ कोई फर्क नहीं पड़ता। न्यायाधीशगण तो पहले भी अकसर एक ही कानूनकी एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न, फिर भी ईमानदारी-भरी व्याख्या करते देखे गये हैं। इस धाराको सख्त बनवानेके लिए आन्दोलन करना ठीक हो सकता है, हालाँकि खुद मेरी रायमें तो यह भी ठीक नहीं होगा। कारण यह है कि धारामें किसी प्रकारकी सख्ती लानेकी प्रतिक्रिया खुद हमारे खलाफ होगी, और उसका उपयोग अंग्रेजी हुकूमतके शिकंजेको हमपर और भी कसनेके लिए किया जायेगा। इस तरहकी बहुत-सी धाराओंका ऐसा उपयोग पहले भी किया जा चुका है। लेकिन अगर मुसलमान या हिन्दू ऐसे लेखोंको स्पष्ट रूपसे दण्ड-विधानकी सीमामें लानेके लिए आन्दोलन करना चाहें तो उन्हें वैसा करनेका अधिकार है।

१. टिप्पणी यहाँ नहीं दी जा रही है; देखिए खण्ड २४, पृष्ठ २६८-६९।

२. यहाँ नहीं दी जा रही है; देखिए खण्ड २४, पृष्ठ ३७४-७६।

३. पंजाब उच्च न्यायालयके न्यायाधीश, जिन्होंने अपील करनेपर पुस्तिकाके लेखकको रिहा कर दिया था।

सरकारी संरक्षणके विरुद्ध मेरे विचार बहुत दृढ़ हैं। एक समय ऐसा भी था जब हम आजकी अपेक्षा अधिक समझदार थे और ऐसे मामलोंमें अदालतोंके सरक्षणसे दूर ही रहते थे। 'रंगीला रसूल' जैसे मुसलमान-विरोधी लेखनको रोकना हिन्दुओंका काम है, उसी प्रकार जिस प्रकार हिन्दू-विरोधी लेखनको रोकना मुसलमानोंका काम है। नेताओंका या तो इन कीचड़ उछालनेवालोंपर कोई बस नही रह गया है या फिर वे खुद इनसे हमदर्दी रखते हैं। जो भी हो, सरकारी संरक्षणसे हम एक-दूसरेके प्रति सहिष्णु तो नही बन जायेंगे। कानून सख्त बना दिये जानेपर दूसरेके धर्मसे घृणा करनेवाला हर व्यक्ति अपने विरोधीके धर्मकी निन्दा करनेके लिए गुप्त तरीके अपनायेगा, या ऐसी गंदी चीजें लिखेगा जो विरोधीको क्षुब्ध तो कर देंगी, लेकिन जो ऐसे प्रच्छन्न ढंगकी होंगी कि लेखक कानूनकी दण्डात्मक धाराओंसे बच निकलेगा। लेकिन, साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि इस समय हम समझदार राष्ट्रवादियों या धर्मप्राण व्यक्तियोंकी तरह व्यवहार नही कर रहे हैं। हम धर्मकी आड़ लेकर एक-दूसरेको नष्ट कर देनेपर तुले हुए हैं।

मुझको पत्र लिखनेवाले हिन्दुओं और मुसलमानोंको भी यह समझ लेना चाहिए कि आजकल जैसा वातावरण है, उससे मेरे मनका मेल नही बैठता। मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि झगड़ा करनेवाले इन हिन्दुओं या मुसलमानोंपर मेरा कोई बस नही है। मैं स्वीकार करता हूँ कि इस तनावको दूर करनेका जो उपाय मेरे पास है, वह समयकी हवाके अनुकूल नही है। इसलिए मैं अपने मनकी शांति बनाये रखकर ही अभी सबसे अच्छी तरह देशकी सेवा करता हूँ। लेकिन, अपने इस उपायमें मेरा उतना ही दृढ़ विश्वास है जितना कि सच्ची हिन्दू-मुस्लिम एकताकी आवश्यकता और सम्भावनामें है। इसलिए यद्यपि मेरी लाचारी बहुत साफ है, फिर भी उसमें निराशा-जैसी कोई चीज नही है। और चूँकि मैं यह मानता हूँ कि मूक प्रार्थनामें अकसर किसी भी सक्रिय प्रयत्नसे अधिक शक्ति रहती है, इसलिए अपनी इस लाचारी-की अवस्थामें मैं बराबर इस विश्वासके साथ प्रार्थनारत रहता हूँ कि शुद्ध हृदयसे की गई प्रार्थना कभी अनसुनी नहीं रहती। और मैं अपनी समस्त शक्ति लगाकर ऐसी प्रार्थनाका शुद्ध साधन बननेकी कोशिश कर रहा हूँ, जो ईश्वरको स्वीकार हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-९-१९२७

१६. पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

साबरमती[1]
२२ सितम्बर, १९२७

प्रिय भाई,

मुझे आपके दो पत्रोंकी प्राप्ति स्वीकार करनी है। मुझे दुख है कि आपको अभीतक ट्रान्सवालके मित्रोंकी तरफसे परेशानी हो रही है। तथापि मैं आशा करता हूँ कि आपको छोड़कर उनके विरोधियोंके साथ हो जानेके कारण आप उद्विग्न नही होंगे। मैं यहाँ स्थितिको बराबर देख रहा हूँ और मैं आपसे कहूँगा कि यदि अय्यर[2] और उनके गुटको अपनी गतिविधियोंके बारेमें यहाँके अखबारोंमें कभी-कभार कुछ छपवानेमें सफलता मिल जाती है तो उसके बारेमें आप चिन्ता न करें। मेरी समझमें यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि जबतक मैं हलचल न करूँ, तबतक दक्षिण आफ्रिकाके सवालपर भारतमें कोई खास हलचल नही होगी। किसी न किसी तरह इतनी साख तो मेरी अब भी बनी हुई है, और आपकी पदावधिके[3] समाप्त होने तक उसके बने रहनेकी सम्भावना है; किन्तु जबतक [दक्षिण आफ्रिकी] संघ सरकार आपके साथ सहयोग कर रही है और आपके दोस्तीके हाथको अस्वीकार नहीं करती तबतक, मैं नही समझता, यहाँ हलचल पैदा करनेसे क्या फायदा होगा।

प्रागजी[4] और मेढके[5] मामलोंका परिणाम निराशाजनक है। मेरी रायमें उन्होंने अस्थायी प्रमाणपत्र दिये जानेका प्रस्ताव अस्वीकार करके ठीक ही किया। मैं मेढके बारेमें खुफिया पुलिसकी रिपोर्टोंको कोई महत्त्व नहीं देता। अगर उन्होंने कोई अपराध किया है तो सरकारको उनपर मुकदमा चलाना चाहिए, लेकिन खुफिया पुलिसकी रिपोर्टोंका उनके विरुद्ध प्रयोग नहीं करना चाहिए। वे कोई पूर्ण पुरुष भले न हों, लेकिन मैं नही समझता कि वे वहाँके, या यहाँके औसत भारतीयकी अपेक्षा ज्यादा खराब हैं। मैं मामलेको जिस ढंगसे देखता हूँ, वह इस प्रकार है। १९१४का समझौता[6] यह था कि कमसे-कम सिद्धान्त रूपमें रंगके कारण कोई प्रतिबन्ध नही लगने चाहिए। इसलिए प्रवासी कानूनकी भाषामें कोई रंग-भेद नही दिखाई पड़ता। व्यवहारमें

१. पत्रोत्तरकी सुविधाके लिहाजसे गांधीजीका स्थायी पता।

२. पी० एस० अय्यर; डर्बनसे प्रकाशित आफ्रिका क्रॉनिकलके मालिक और सम्पादक; १९११ में गिरमिटिया भारतीयोंपर ३ पौंडी कर लगानेके विरुद्ध सक्रिय आन्दोलन चलाया और '३ पौंडी कर विरोधी लीग' की स्थापनामें विशेष योग दिया और उसके अवैतनिक मन्त्री बने। देखिए खण्ड ११।

३. शास्त्री उस समय दक्षिण आफ्रिकामें भारत सरकारके एजेंटके पदपर नियुक्त थे।

४ व ५. जोहानिसबर्गके दो प्रमुख भारतीय, जिन्हें भारतमें कुछ समयतक रहनेके बाद वापस लौटनेपर अपने निवासके प्रमाणपत्रोंका नवीकरण करानेमें कठिनाई हुई थी।

६. गांधी-स्मट्स समझौता, देखिए खण्ड १२।

प्रतिवर्ष छः व्यक्तियोंको शिक्षाके आधारपर दक्षिण आफ्रिकामें प्रवेश दिया जाता था, और जहाँतक मुझे याद पड़ता है, निवासके प्रश्नका उनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। क्योंकि उनकी योग्यताएँ उनके व्यक्तित्वमें निहित थी। चूँकि मैं याददाश्तसे लिख रहा हूँ, इसलिए उसमें गलती होनेकी सम्भावना है। तथापि आप स्थितिको जाँच लेंगे और देख लेंगे कि उससे उन्हें कोई मदद मिल सकती है या नहीं। मैं आशा करता हूँ कि उनके हकमें कोई रास्ता निकल आयेगा।

मुझे खुशी है कि आपको फीनिक्स पसन्द है, और अगर वह समय-समयपर आपकी आरामगाह बन सके तो मुझे हर्ष होगा। एन्ड्रचूजने मुझे तुम्हारे साथ हुई उस घटनाका वर्णन भेजा था। कैसे कैलनबेक आपको अपनी मोटरमें तेज रफ्तारसे प्रिटोरियासे जोहानिसबर्ग ले जा रहे थे और फिर किस प्रकार उनकी फैशनेबिल गाड़ीका टायर फट गया और एक बड़ी दुर्घटना होते-होते बच गई। मैं चाहता हूँ कि आप हो सके तो कैलनबेकको सिर्फ मुझसे मिलनेके लिए ही सही, भारत आनेको राजी करें। मुझसे मिलकर वे फिर वापस जा सकते हैं और अपना धन्धा कर सकते हैं। कुमारी श्लेसिनने आपके साथ अपनी भेंटका रोचक विवरण मुझे लिख भेजा है। जब मैं मद्रासमें था तो मैंने श्रीमती शास्त्रीसे मिलनेकी कोशिश की थी, लेकिन मुझे पता चला कि वह लखनऊमें थी।

सप्रेम,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री

१७. भाषण: सार्वजनिक सभा, कनडुकातनमें[1]

२२ सितम्बर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको थैलीके लिए धन्यवाद देता हूँ। आपके बीच आकर मुझे सुख भी हुआ है और दुःख भी। आज शाम मैं आपसे दिली तौरपर बात करना चाहता हूँ। वैश्य परिवारमें जन्मा होनेके कारण मैं मानता हूँ कि मैं आपमें से ही एक हूँ और स्वयं चेट्टी होनेका दावा कर सकता हूँ। जब मैं डा० मेहताके साथ रंगूनमें था तब मुझे आप लोगोंके पारिवारिक जीवनको निकटसे देखनेका अवसर प्राप्त हुआ था। उस समय मैं नौजवान ही था। मुगल स्ट्रीटसे गुजरते हुए डा० मेहताने मुझे बरामदों और काउंटरोंकी कतारें दिखाई और मेरा ध्यान उन लोगोंकी ओर दिलाया जो करीब-करीब

१. कनडुकातन, कराइकुडी, अमरावतीपुर और देवकोट्टामें दिये गये गांधीजीके भाषणोंके अंशोंको मिलाकर महादेव देसाईने ६-१०-१९२७के यंग इंडियामें "मैसेज टू चेट्टिनाड (चेट्टिनाडको सन्देश)" शीर्षकसे प्रस्तुत किया था।

दिनभर अपनी-अपनी कठौतियोंमें रुपये गिना करते थे। उन्होंने बताया कि ये सब चेट्टी लोग हैं; इन्हे और इनके बरामदोंको देखकर तुम गलतीसे यह सोच बैठोगे कि ये सब मामूली साहूकार लोग हैं। उन्होंने कहा कि ये लोग छोटे नही, बल्कि बड़े साहूकार हैं और इनमें से कुछ तो बहुत ही पैसेवाले हैं। रंगून और दक्षिण आफ्रिकामें चेट्टियोसे परिचय होनेसे पहले भी मैं कुछ चेट्टियोंको जानता था। मैं केवल कुछ लोगोंको परिचितोंके रूपमें जानता था, लेकिन उस समय मैं नही जानता था कि रंगूनमें रुपयेके लेन-देनका लगभग पूरा कारोबार आप लोगोंके हाथमें है। यह बात मुझे रंगून आनेके बाद ही मालूम हुई। तब मुझे १९२० में[1] आप लोगोंसे हुए उस निकट परिचयकी याद आई, जो मुझे तब हुआ था जब मैं चेट्टिनाडसे गुजरा था और तिलक स्वराज्य कोषके लिए धन इकट्ठा कर रहा था। मुझे अच्छी तरह याद है कि जैसी सहृदयता आप आज दिखला रहे हैं वैसी ही सहृदयता आपने उस वक्त भी दिखाई थी। लेकिन उस समयका मेरा दौरा तूफानी दौरा था और उस समय मुझे और कुछ सोचने या जाननेका वक्त ही नही था। मैं स्वराज्यका दीवाना था। वैसे स्वराज्यका दीवाना तो मैं अभी भी हूँ, लेकिन ईश्वरने मुझे काफी सबक सिखा दिया है। मेरी अल्प और तुच्छ स्वराज्य-योजना वास्तवमें ईश्वरकी योजना नही थी। और अब उसकी ऐसी कृपा हुई है कि मैं शारीरिक रोगसे भी पीड़ित हो गया हूँ जिसके कारण तूफानी ढंगपर काम करना मेरे लिए असम्भव हो गया है। अतः मेरे लिए आपके जीवनका अध्ययन करना और १९२० में जितना कर सका था उससे कही बेहतर ढंगसे आपको समझना सम्भव है। आपकी अतिशय कृपाका सबसे अच्छा और एकमात्र प्रतिदान जो मैं दे सकता हूँ वह यही है कि मैं आपको अपने इस सरसरी तौरपर किये गये अध्ययनका नतीजा बताऊँ। इस अध्ययनमें मुझे चेट्टिनाडके अज्ञात मित्रोंसे प्राप्त उन दो पत्रोसे भी सहायता मिली है जिनमें आपके जीवनके बारेमें विवरण दिये गये हैं।

लेकिन इसकी चर्चा करनेसे पहले मैं आपसे आग्रह करूँगा कि खादीको आपने अभीतक जिस हदतक अपनाया है, उससे और अधिक अपनायें। आप चाहे तो आपके पास इतनी शक्ति है कि आप तमिलनाडु ही नही, सारे भारतके सम्पूर्ण खादी आन्दोलनका आर्थिक दायित्व सँभाल सकते हैं। जैसा कि मैंने उत्तर भारतके चेट्टियों अर्थात् मारवाड़ी मित्रोंसे कहा है, वैसा ही मैं आपसे भी कह सकता हूँ कि यदि आप चाहें तो खादी आन्दोलनका आर्थिक दायित्व केवल अपने फाजिल पैसेसे ही सम्भाल सकते हैं। अपनी अद्भुत कुशाग्रतासे आप खादी कार्यका संगठन भी कर सकते हैं। अतः आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करेंगे कि इस स्थानपर आते हुए आज सुबहसे मुझे जितनी भी थैलियाँ मिली हैं उनसे मुझे किसी प्रकारका कोई सच्चा सन्तोष नही हुआ है। मैंने गिना नही है, फिर भी अगर कुल राशि कुछ हजार रुपये भी हो तो वास्तवमें वह आपके धनके समुद्रकी एक बूंद जितनी भी नही है। यदि खादीमें आपका सचमुच विश्वास है, यदि आपने चरखेका सन्देश समझ लिया है,

१. वास्तवमें यह १९२१ है; देखिए खण्ड २१, पृष्ठ १८९-९०।

तब, और केवल तभी, मैं आपसे चाहूँगा कि आप अपने विशाल धनकोषसे थोड़ा नहीं, बल्कि काफी अंश निकाल कर मुझे दें।

और आखिरकार खादी है क्या? खादी लाखों क्षुधाग्रस्त लोगोंका प्रतिनिधित्व करती है, और जिन लोगोंके पास धन या सत्ता है, वे अपने धन या शक्तिके मदमें इन लाखों उदार लोगोंको भूल न जायें। इसलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप क्षुधा-पीड़ित लाखों लोगोंके इस जबरदस्त हितको अपना समर्थन दें और उसे अपना ही हित मान लें। अगर आपने ऐसा किया तो आप स्वतः ही अपने सभी उत्तमोत्तम विदेशी वस्त्रोंका त्याग कर देंगे और तब यदि आप चाहेंगे तो आपकी रुचिके अनुसार आपको बढ़ियासे-बढ़िया और बारीकसे-बारीक खादी मिल सकेगी।

जब मैंने देखा कि आपके घर विदेशी फर्नीचरसे ठसाठस भरे हुए हैं, सभी प्रकारकी खूबसूरत विदेशी साज-सज्जाकी वस्तुओंसे सजे हुए है, जब मैंने देखा कि आपके घरोंमें अनेक ऐसी चीजें हैं जिनका हमारी इस पावन भूमिमें कोई स्थान नही होना चाहिए, तो मैंने आरम्भमें ही आपसे कह दिया था कि मुझे [आपके बीच आकर] खुशी भी हुई है और दुःख भी। मैं आपसे कहता हूँ कि इतने अधिक फर्नीचरके बीच मुझे घुटनका-सा अनभव हुआ है। मुश्किलसे इस फर्नीचरके बीच बैठने या खुलकर साँस लेनेकी जगह है। आपके यहाँकी कुछ तस्वीरें तो बीभत्स हैं, और देखने लायक नहीं है। मुझे महाभारत कालके समृद्ध लोगोंके पापों और उनमें से कुछकी सादगीके वर्णन याद आते हैं। हमें चाहिए कि हम अपने धनका जैसा दिखावा यहाँ करते प्रतीत होते है वैसा न करें। हमारे देशके समशीतोष्ण वातावरण और जलवायुमें इन चीजोंके प्रदर्शनकी वास्तवमें आवश्यकता नही है। इनसे शुद्ध वायुके मुक्त प्रवाहमें बाधा पड़ती है और इनमें धूल और हवामें तैरनेवाले करोड़ों कीटाणु रहते है। यदि आप मुझे चेट्टिनाडके इन तमाम स्थानोंकी सजावटका ठेका दे दें तो मै दसगुना कम पैसोंमें सजावट कर दूँगा और आजकी अपेक्षा कहीं ज्यादा गुंजाइश और ज्यादा आराम प्रदान कर दूँगा, और साथ ही भारतके कलाकारोंसे यह प्रमाणपत्र भी हासिल कर लूँगा कि आपने जितना किया है उससे कही ज्यादा कलात्मक ढंगसे मैंने आपके घरोको सजा दिया है।

मैं यह भी कहूँगा कि आपके ये जो सारे महल बने हैं इनके पीछे आपके बीच सहयोगकी तथा सामाजिक प्रभाव या समाज-कल्याणकी कोई भावना नही रही है। यदि आप पारस्परिक कल्याणके लिए और अपने बीच रहनेवाली खेतिहर जनताके कल्याणके लिए चेट्टियोका एक सघ बना लें तो आप वास्तवमें चेट्टिनाडको एक मनोहर माया-नगरी बना सकते है जो भारतके सभी लोगोको आकृष्ट करेगी और तब वे आपके जीवनकी सादगीको देखकर सन्तुष्ट होगे। यह तो मैंने आपके जीवनके बाह्य पक्षके बारेमें कहा।

मैं आन्तरिक शुद्धताके पक्षमें भी कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। मुझे सामान्य लोगो और अमीर मित्रोंका विश्वासभाजन होनेका सौभाग्य प्राप्त है और मुझे जानकारी है और मेरा यह अनुमान भी है कि आप धनवान चेट्टी लोग उन कमजोरियोंसे मुक्त नहीं है जो ससार भरके सभी धनवानोंमें आम है। लेकिन ऐसा होना जरूरी

नहीं है। हमारे सामने जनकका प्रसिद्ध उदाहरण है। उनके पास अपार धन था, फिर भी वह पवित्रताके साक्षात् अवतार थे। इसलिए मैं जीवनकी व्यक्तिगत पवित्रता-पर जोर देता हूँ। वास्तवमें यही मनुष्योचित जीवनका सार है। मनुष्यका मनुष्यत्व इसीमें है कि वह अपनी पत्नीको छोड़कर अन्य प्रत्येक स्त्रीको उसकी आयुके मानसे बहन, माँ या बेटी समझे। इसलिए मैं चाहता हूँ कि मेरे चेट्टी भाई मनुष्यके लिए अपने प्रति जितनी सख्ती बरतना सम्भव है उतनी सख्ती बरतें और कड़ाईसे आत्म-निरीक्षण करें।

आपका दान भी बुद्धिमत्तापूर्ण होना चाहिए। मैंने सुना है कि आप मन्दिरोंके निर्माणपर खूब धन खर्च करते हैं। थोड़े-बहुत मन्दिर बनवाना तो अच्छी चीज है, लेकिन सम्भव है इस तरह जरूरतसे ज्यादा मन्दिर बन जायें। ऐसा सोचना एक भयंकर अन्धविश्वास है कि हमारे एक ऐसा भवन बनवा देनेसे जिसे मन्दिर कहा जाता है, भगवान उसमें निवास करने ही लगते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि मैं भारतमें ऐसे बहुतसे मन्दिरोंको जानता हूँ जहाँ उसी प्रकार ईश्वरका निवास नहीं है जैसे वेश्यालयमें नहीं होता। आप जैसे कुछ अच्छे मित्रोंने मुझे तथाकथित अस्पृश्योंके लिए मन्दिर बनवानेको कुछ धन दिया है। मैंने कह दिया है कि अगर मुझे मन्दिरके लिए कोई साधु-पुरुष नहीं मिलता और उसके प्रबन्धके लिए ईमानदार न्यासी नहीं मिलते तो मैं वह राशि मन्दिर बनवानेपर खर्च नहीं करूँगा।

मेरी समझमें इस समय खादीके इस कार्यको आगे बढ़ानेके लिए धन देना ही किसी भी भारतीयके लिए सर्वोत्तम दान देना है।

हमारे धनवान मित्र तथाकथित गरीबोंको भोजन करानेका बड़ा शौक रखते हैं। इस प्रकार भोजन देनेके लाभपर मैंने अकसर शंका व्यक्तकी है। 'भगवद्गीता' कहती है कि अच्छा दान वही है जो सुपात्रको दिया जाये।[1] इसलिए अन्धोंको, लँगड़े-लूलोंको और उन लोगोंको भोजन कराना ठीक होगा जो किसी-न-किसी कारणसे आजीविका कमानेके लिए काम नहीं कर सकते। लेकिन मैं साहसपूर्वक कहता हूँ कि यदि आप सब लोग आपसमें तय करके भारतके गाँवोंमें ५०,००० लोगोंको मुफ्त भोजन देनेके लिए एक निश्चित धनराशि अलग नियत कर दें तो यह एक बहुत बड़ा पाप होगा। जिस आदमीके हाथ-पाँव ठीक हैं और जिसके सामने करनेको कुछ काम है, वह मनुष्य मुफ्त भोजन करानेके योग्य नहीं है। भारतकी सबसे बड़ी जरूरत है क्षुधार्त्त ग्रामवासियोंके लिए उनके घरोंमें काम मुहैया करनेकी। और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप खादीकी प्रगतिके लिए जो एक रुपया भी देते हैं उसका अर्थ है १६ स्त्रियोंका एक जूनका भोजन जिसे कि उन्होंने मेहनत करके कमाया है।

इसी प्रकार भारतमें मवेशियोंका जैसा पापपूर्ण ह्रास हो रहा है, उसके लिए दिया जानेवाला दान भी उतना ही बड़ा दान है। जो व्यक्ति एक अच्छी गोशाला और एक चमड़ा कमानेका कारखाना चलाता है वह कई सौ मवेशियोंकी रक्षा करता है। अतः यदि आप चेट्टिनाडको अपने रहने और मेरे जैसे हर अभ्यागतके लिए थोड़ा आराम

१. १७, २०।

पाने योग्य एक आदर्श स्थान बनाना चाहते हैं तो मैं अपेक्षा करूँगा कि आप उसे न केवल सफाई और स्वच्छतामें आदर्श ही बना देंगे बल्कि आपके यहाँ अच्छे मवेशीखाने होंगे, जहाँ सभी प्रकारके पशु रखे जायेंगे, और यह भी अपेक्षा करूँगा कि आपके यहाँ एक आदर्श डेरी भी होगी जो आपको और आसपास के गरीब लोगोंको सस्ते भावपर अच्छा और शुद्ध दूध वितरित करेगी। मैं यह भी अपेक्षा करूँगा कि आप यहाँ चमडा कमानेके कारखाने बनायेंगे और वहाँ मरे हुए पशुओंका चमड़ा प्राप्त करके उससे अमीरो और गरीबोंके लिए जूते बनाये जायेंगे। इसी प्रकार आपकी दानशीलताका लाभ मुक्त रूपसे उन तथाकथित अस्पृश्योको भी प्राप्त होना चाहिए जिन्हें आपने अभीतक अपने पैरों तले रौंदा है।

मैं और भी सुझाव दे सकता हूँ, लेकिन मुझे आशा है कि आपको विचार करने-के लिए मैंने पर्याप्त सामग्री दे दी है। आपके सच्चे मित्रके नाते मैं आपसे कहूँगा कि जिन महत्त्वपूर्ण बातोंपर मैंने आपसे चर्चा की है उन्हें आप अपने मनसे निकाल न दें, बल्कि उनपर विचार करे, और मुझे यह देखकर खुशी होगी कि आपमें से कमसे-कम कुछ लोगोने मेरे सन्देशको समझा और उसकी कद्र की है। मैं भारतके अमीरों और गरीबोंके बीचकी खाई पाटनेको बहुत उत्सुक हूँ। जबतक इन दोनोंके बीच जीवन्त सम्बन्ध नही स्थापित हो जाता तबतक मुझे इस देशके लिए स्थायी सुखका कोई रास्ता नजर नही आता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-९-१९२७

१८. पत्र : प्रागजी देसाईको

भाद्रपद बदी १३ [२३ सितम्बर, १९२७][1]

भाईश्री प्रागजी,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तुम दोनोंके बारेमें शास्त्रीजीको लिखा है।[2] वे प्रयत्न तो कर ही रहे हैं। वे जो करें और कहें उससे सन्तोष मानना। मैंने उन्हें एक दलील सुझायी है जो शायद उपयोगी सिद्ध हो। दलील यह है कि जो व्यक्ति शैक्षणिक योग्यताके आधारपर प्रवेश चाहता है उसके लिए मुद्दतकी रोक नही लगनी चाहिए। जो भी करो, निवासका अधिकार पानेके लिए ऐसा कुछ मत करना जो शरमाने-जैसा हो और न कोई अपमानजनक शर्त ही स्वीकार करना। अपने सम्मानकी रक्षा करते हुए जो पा सको उसीसे सन्तोष करना। नेटालमें रहनेका अधिकार तो तुम दोनोंको मिल ही गया मालूम होता है। अतः अब तुम्हें ज्यादा कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

१. इस पत्रमें प्रागजीके मामलेका उल्लेख है। उसीके आधारपर वर्षका निश्चय किया गया है।
२. देखिए "पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २२-९-१९२७।

तुमने एन्ड्र्यूजकी जो आलोचना की है वह उचित नहीं है। मैं उसमें जल्दबाजी और अधीरता देखता हूँ। एन्ड्र्यूज तुमसे झूठ बोलेंगे, यह नही हो सकता। . . .को[1] विस्मरण हो गया हो या एन्ड्र्यूजको गलतफहमी हो गयी हो, ऐसा हो तो हो। एन्ड्र्यूज जैसा सज्जन व्यक्ति जब हमारे लिए निःस्वार्थ भावसे खट रहा है तब हमें यह शोभा नहीं देता कि हम उनपर नाराज हों या दोषारोपण करें।

आशा है तुम्हारी और मेढकी तबीयत ठीक होगी। मैं तो आजकल यात्रा कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५०४१) की फोटो-नकलसे।

१९. पत्र : मणिलाल गांधीको

[२३ सितम्बर, १९२७][2]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

इसके साथ प्रागजीके लिए भी एक पत्र रख रहा हूँ। उसे पढ़कर उन्हें पहुँचा देना जिससे उनके सम्बन्धमें मुझे तुम्हें दुबारा न लिखना पड़े।

एन्ड्र्यूजके विषयमें तुमने जिन शब्दोंका प्रयोग किया है उन्हें मैं अनुचित मानता हूँ उनके जैसे सेवापरायण व्यक्तिके सम्बन्धमें ऐसे शब्दोंका व्यवहार शोभन नही है। प्रागजी और मेढके मामलोंके बारेमें उन्हें इतनी चिन्ता रही है कि उनके सम्बन्धमें उन्होंने मुझे तार तक भेजा है। उन्हें जैसा लगा वैसा उन्होंने कहा; उसके कारण हम उनपर दोषारोपण कैसे कर सकते है? डेलागोआ-बेमें उन्होंने जो कहा, उसके लिए भी हम उनकी आलोचना कैसे कर सकते हैं? जो सेवा करता है उसे [आवश्यकता होने पर] टीका करनेका भी अधिकार है, बशर्ते कि वह अपनी की हुई टीकाका दुरुपयोग न होने दे। अपनोंकी टीका करनेमें भला मेरी बराबरी कौन कर सकता है? किन्तु इस कारण यदि कोई मेरे ऊपर दोषारोपण करने लगे तो मेरा क्या हाल हो?

मेरा दौरा चल रहा है। यह सारा वर्ष इसी तरह बीतेगा। हाँ, जनवरीमें रामदासके विवाहके लिए मुझे आश्रम जाना होगा। ज्यादा लिखनेका समय नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७२३) की फोटो-नकलसे।

१. अस्पष्ट है।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

२०. भाषण : अमरावतीपुरमें

२३ सितम्बर, १९२७

मित्रो,

आपने अभी मुझे जो थैली दी है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और मैं आशा करता हूँ कि इस जगह या यहाँके रहनेवालोंके बारेमें मेरी अनभिज्ञताको आप क्षमा करेंगे। अभी-अभी पूछनेपर मुझे पता लगा कि यही वह जगह है जिसने देशके इस हिस्सेको राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता दिये हैं।

मैं भारतके धनी लोगोंसे कहता रहा हूँ कि यदि उन्हें अपने लाखों क्षुधार्त्त भाइयों-से जीवन्त सम्बन्ध कायम करना है तो इससे अच्छा कोई तरीका नहीं है कि वे खादी और चरखेके सन्देशको अपनायें।[1] इसलिए आप लोगोंने खादी कार्यके लिए यह थैली देकर निस्सन्देह अच्छा काम किया है। और मैं चाहूँगा कि आप कमसे-कम जो दे सकते हों, वह नहीं, बल्कि ज्यादासे-ज्यादा जो दे सकते हो, दें। और यदि आपने अधिकसे-अधिक न दिया हो तो मैं इस स्थानके सभी धनवान लोगोंसे कहूँगा कि वे अपनी जेबोंमें और गहरे हाथ डालें और फिर जो धनराशि देना उचित लगे सो दें। लेकिन धनके रूपमें आप अधिकाधिक कुछ भी क्यों न दें, मैं ऐसा नहीं मानूंगा कि आपने खादीके लिए यह अधिकसे-अधिक काम कर दिया या आप इससे अधिक नहीं कर सकते।

यदि आपको चरखेके सन्देशमें विश्वास है तो मैं आपको आसानीसे इस बातका यकीन करा दे सकता हूँ कि यदि आप खादी पहननेको तैयार न हों तो खादीके लिए आप अपना सारा धन देकर भी कुछ नहीं कर पायेंगे। क्योंकि जबतक हम खादी नहीं पहनते तबतक गरीबोंसे खादी तैयार कराना बेकार है। इसलिए मैं आपसे कहूँगा कि जो लोग अभीतक आदतन् खादी नहीं पहनते हैं वे विदेशी वस्त्रोंका सर्वथा त्याग कर दें और केवल खादीका ही उपयोग करें। जो बात मैंने पुरुषोंसे कही है वही बात मेरे चारों ओर बैठी हुई बहनोंपर भी लागू होती है।

मैं समझता हूँ कि कराइकुडीकी तरह यहाँ भी आप लोगोंने गरीब लोगोंको भोजन कराया है। यदि कराया हो तो मैं यह तो स्वीकार करूँगा कि इससे आपके हृदयकी उदारता व्यक्त होती है, लेकिन इससे आपका कोई वास्तविक गुणोत्कर्ष हुआ हो सो मैं नहीं मानता। मुझे विश्वास है कि भारतके ज्यादातर लोग गरीबोंको भिखारी और कंगाल नहीं बनाना चाहते। इसलिए जो बात मैंने कल रात कही, वही यहाँ दुहराता हूँ कि धनवान लोग सबसे अच्छा जो दान आज दे सकते हैं वह है खादी संगठनकी सहायता करना। खादी कार्यके लिए दिये गये एक रुपयेका अर्थ प्रतिदिन १६ औरतोंको काम और प्रत्येकको १ आना देना है। और यदि आप आत्म-

१. देखिए "भाषण : सार्वजनिक सभा, कनडुकातनमें", २२-९-१९२७।

सम्मानी व्यक्ति बनना चाहते हैं तो यह देखना आपका कर्त्तव्य है कि प्रत्येक व्यक्ति-को ईमानदारीका काम मिले और हर स्त्री या पुरुष जो काम करे उसका उसको ईमानदारीसे पारिश्रमिक प्राप्त हो।

और मैं पिछली रात कही गई अपनी यह बात भी दुहराना चाहूँगा कि धन-वान लोगोंको बराबर यह याद दिलाते रहना जरूरी है कि आखिरकार वैयक्तिक जीवनमें पवित्रता संसारका सबसे बड़ा धन है। मैं मानता हूँ कि लगातार गलत काम करनेवालोंके लिए धन कितना बड़ा प्रलोभन प्रस्तुत करता है। इसलिए मैं चाहूँगा स्वयं अपना आत्मनिरीक्षण करनेके खयालसे आपमें से हरएक व्यक्तिगत तौर पर अपना निरीक्षण करे और आपके अन्दर जो भी बुराइयाँ है, उनको नष्ट कर डाले। अमरावतीके शाब्दिक अर्थ हैं देवताओंकी नगरी। मैं कितना चाहता हूँ कि आप अपने शहरको सचमुच देवोंका आवास बना डालें। यदि अन्दर और बाहरकी सफाई कर डालें तो आप आसानीसे ऐसा कर सकते हैं। यदि हम अपने मनमें ईमानदारीसे सोचें तो हममें से हर एक देख सकेगा कि स्वराज्यकी भाँति ही स्वच्छता भी हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है। स्वराज्यकी ओर जानेवाला पथ आत्मसंयमका पथ है। और आत्म-संयमका अर्थ है व्यक्तिगत स्वच्छता।

लेकिन चेट्टिनाडमें रहते हुए मैंने देखा है कि जहाँतक बाह्य सामूहिक स्वच्छता-का सवाल है, उसका यहाँ वास्तवमें अभाव है। अगर आप सब मिलजुलकर प्रयत्न करें तो आप अपनी सड़कें, अपने तालाब और अपने आसपासके स्थान बिलकुल स्वच्छ बना सकते हैं और मेरे पास चेट्टिनाडके मित्रोंके पत्र हैं जिनमें मुझे बताया गया है कि यहाँ कोई खास आन्तरिक स्वच्छता भी नहीं है। यह आन्तरिक अस्वच्छता तो उस अस्वच्छतासे भी खराब है जो मैं यहाँ सड़कों और तालाबोंमें देखता हूँ। अगर आप अपनेको संगठित कर लें, स्वयंसेवकों और कार्यकर्त्ताओंका एक दल आपके पास हो और आप अपनी सड़कों और अपने तालाबोंको खूब स्वच्छ कर डालें तो यह बाह्य गन्दगी और अस्वच्छता तो दूर की ही जा सकती है। सामूहिक या शहरी जिन्दगी-की पहली शर्त है कि नगरके लोगोंको बिलकुल स्वच्छ पानी मिलनेकी गारंटी हो और जहाँ पानी जमा किया जाता है वह जगह बिलकुल साफ और सुन्दर हो। नन्दी हिलपर मैंने देखा कि उन पहाड़ियोंपर रहनेवाले लोग जिस तालाबसे पीने का पानी लेते थे उसे गन्दगीसे बचानेके लिए उसकी दिनभर ठीक निगरानी रखी जाती थी। जिन तालाबोंसे पीनेका पानी लिया जाता है, कपड़े धोने, नहानेके तालाब उनसे अलग होने चाहिए। मैं जानता हूँ कि मैंने जिस आन्तरिक स्वच्छताकी बात अभी की वह कहीं ज्यादा कठिन और जटिल समस्या है, और बाह्य स्वच्छतासे उसका कोई मुकाबला नहीं है। लेकिन एक जमाना था जब खुद मेरे पास कुछ धन हुआ करता था, और इसलिए मैं आपको अपना निजी नुस्खा दे सकता हूँ कि किस प्रकार आप धनी होनेपर भी आन्तरिक स्वच्छता प्राप्त कर सकते हैं। जो नुस्खा मैं आपको बताने जा रहा हूँ वह कोई मौलिक नुस्खा नहीं है। यह तो वास्तवमें हमारे धर्मका एक अंग है। वह यह है कि चाहे हमने कितना भी धन अर्जित किया हो,

हमें अपनेको इस धनका न्यासी समझना चाहिए, जिन्हें उसका उपयोग अपने पड़ोसियोंके कल्याणके लिए करना है। एक श्लोक है जिसमें कहा गया है कि जो व्यक्ति बिना यज्ञ किये, अर्थात् बिना दिये भोजन करता है, वह चोर है।[1] यदि ईश्वर हमें शक्ति और धन देता है तो इसलिए देता है कि हम उसका अपने स्वार्थपूर्ण भोगके लिए नहीं, बल्कि मानवताके कल्याणके लिए उपयोग करें।

मैं आपका ध्यान अस्पृश्यताके सवालकी तरफ भी दिलाना चाहूँगा। आप अमरावतीपुरके निवासियोंके मनमें तथाकथित अस्पृश्योंके लिए सहृदयताकी भावना है। कोई व्यक्ति किसी परिस्थिति विशेषमें पैदा हुआ है इसलिए उसे अस्पृश्य कहा जाये, यह तो पाप है। इसलिए आप अपना धन उन्हें इस प्रकार दें मानो वे आपके नाते-रिश्तेदार हों, वे वास्तवमें हैं भी — और अपने धनको उनके कल्याण हेतु खर्च करें।

मैं आपसे निवेदन करूँगा कि आज इस शाम मैंने आपसे जो-कुछ कहा है उसे आप भुला न दें, बल्कि अपने मनमें संजोकर रखें और अपनी सामर्थ्य भर उसे कार्यका रूप दें। ईश्वर आपकी सहायता करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-९-१९२७

२१. सन्देश : शिक्षा सम्मेलन, त्रिचनापल्लीको

[२४ सितम्बर, १९२७ से पूर्व][2]

मैं चाहूँगा कि देशके नौजवानोंके ऊपर अध्यापकोंका जो जबर्दस्त प्रभाव है, उसका उपयोग वे उन्हें कमसे-कम केवल खद्दर पहननेके लिए राजी करके उन्हें लाखों क्षुधा-पीड़ित लोगोंके साथ जोड़नेके लिए करें; लेकिन जबतक वे स्वयं उदाहरण न प्रस्तुत करेंगे तबतक इसमें सफल नहीं होंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-९-१९२७

१. गीता, ३, १२।

२. त्रिचनापल्ली जिला शिक्षा सम्मेलन और जिला शिक्षक संघका ३७ वाँ वार्षिक सम्मेलन २४-९-१९२७ को हुआ था।

२२. भाषण: स्त्रियोंकी सभा, कराइकुडीमें

२४ सितम्बर, १९२७

प्रिय बहनो,

आज सुबह आपसे भेंट कर सकनेकी मुझे बहुत खुशी है, और दरिद्रनारायणके लिए जो थैली आपने मुझे दी है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन मुझे निश्चय नही है कि आप सब लोग वास्तवमें जानती हैं कि आपने यह थैली मुझे क्यों दी है। मुझे डर है कि आपमें से कुछ सोचती हैं कि यह धन एक सुपात्र महात्माको उसके अपने खजानेमें डालनेके लिए दिया जा रहा है। लेकिन आपमें से एकका भी ऐसा विश्वास हो तो मैं आपका यह भ्रम मिटा दूँ। आपने यह धन अपनी लाखों भूखसे पीड़ित बहनोंके लिए दिया है, और मैं आपकी इस भेंटको उन गरीब बहनों तक पहुँचानेका एक तुच्छ माध्यम-भर हूँ, लेकिन उस ढंगसे नही जैसे कि आप गरीबोंके आगे पैसा फेंक देती है। यह धन उन गरीब बहनोंको भिक्षाके रूपमें नहीं दिया जायेगा, बल्कि वे जो काम करेंगी उसके बदले दिया जायेगा। वे इसलिए भूखी नही मर रही है कि उनके गाँवमें खानेको नहीं है; वे इसलिए भूखी है कि उनके पास कोई काम नही है जिससे वे पैसा कमा सकें; यदि पैसा कमा सकें तो वे खाना पा सकती है। आपकी और मेरी ये बहनें वर्षमें छः महीने बेकार रहती है — आपके और मेरे पापोंके कारण बेकार रहती है। यदि आप और मैं वह अरिसी[1] न खायें जो हमारे खेतिहर देशके इस भागमें पैदा करते हैं तो आप जानती है उन खेतिहरोंका क्या हाल होगा? यदि जो अरिसी वे पैदा करते हैं, उसे खानेके बजाय हम आस्ट्रेलियामें पैदा हुआ और आस्ट्रेलियासे मँगाया गया गेहूँ खाने लगें, तो इन खेतिहरोंका क्या होगा? वे अरिसी उगाना बन्द कर देंगे और भूखों मरेंगे, क्योंकि उनके श्रमसे पैदा वस्तुका उन्हें कोई पैसा नहीं मिलेगा। अब हमारी ये लाखों बहनें किसी समय इसी प्रकार सूत कातती थीं जिसका बुना कपड़ा हम पहनते थे, और जिसे अब हम खद्दर कहते हैं। वह ऐसा समय था जब हम खादी पहनते थे। फिर हमारे अभागे देशके इतिहासमें एक ऐसा समय आया जब आप और मैं और हमारे पूर्वज पागल हो गये और पाप करने लगे। हम इंग्लैंड, पेरिस और दुनियाके दूसरे हिस्सोंसे आनेवाले बढ़िया बारीक कपड़ेके भुलावेमें पड़ गये। और इस प्रकार हमारी इन बहनोंको अपने मालके लिए कोई बाजार न रह जानेपर उन्होंने अपने चरखे फेंक दिये; और चरखेके अलावा करनेके लिए उनके गाँवोंमें कोई दूसरा काम था ही नही। कोई दूसरा काम न मिलनेपर वे भूखों मरने लगीं। उनमें कुछ थोड़ी-सी स्त्रियोंने अपने गाँव छोड़ दिये और अपना तन बेचकर लज्जाजनक जीवन बिताने लगी। और आप याद रखें कि ये आपकी और मेरी बहनें थीं। कुछ अन्य स्त्रियाँ शहरोंमें चली गईं और कारखानोंमें

१. चावलका तामिल पर्यायवाची शब्द।

मजदूरीके ऐसे कामको स्वीकार कर लिया जिसे आप स्वीकार नही करेंगी। अब आपने यह धन हमारे अपने पापोके प्रायश्चित्त-स्वरूप दिया है। लेकिन यदि आप स्वयं खद्दर नही पहनेंगी तो यह धन बिलकुल बेकार है। इसलिए मै आपसे अपने धर्मका विचार करनेको कहता हूँ, और कहता हूँ कि आप एक पवित्र सकल्प करें कि इन गरीब बहनोकी खातिर अब आगेसे खादीके सिवा आप और कुछ नही पहनेंगी। लेकिन इन ग्रामवासियोके पवित्र हाथो द्वारा काता और बुना कपड़ा पहनना ही काफी नहीं है। खादीको इससे अधिककी जरूरत है। यदि आप इस खादीके जरिये सच्चे हृदयसे इन गरीब बहनोका विचार करेंगी, तो खादी केवल आपके बाह्य परिवर्तनका प्रतीक ही नही होगी, आपका सम्पूर्ण हृदय बदल जायेगा। यदि आप वैसा करेंगी तो आप सती और सीताके युगको पुनरुज्जीवित कर देंगी। मै ईश्वरसे निरन्तर प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको उन जैसा ही बना दे। लेकिन हमारी मर्जीके खिलाफ ईश्वर भी हमें वह नही बना सकता जो हमें होना चाहिए। ईश्वर केवल उन्हीको सहायता करता है जो स्वयं अपनी सहायता करनेको तैयार हो। आपके सीता जैसी बननेकी इच्छा करनेकी देर है; वह आपको वैसा बना देगा। लेकिन आप वैसा चाहती नही हैं क्योकि आप सचमुच मानती है कि कुछ ऐसे लोग है जो आप तकके लिए अस्पृश्य है। सीता ऐसा नही करती थी। इसके विपरीत, वह उन्हें निषाद मानती थी जिन्हें आज हम अज्ञानवश अस्पृश्य समझते है। किन्तु यदि आप खादी पहनेंगी और खादीकी भावना रखेंगी तो केवल इस कारण आप किसीको अस्पृश्य नही मानेंगी कि उसका जन्म किसी वातावरण विशेषमें हुआ है।

अब शायद आप यह भी समझ सकेंगी कि मै ऐसा क्यो मानता हूँ कि चेट्टिनाडकी धनी महिलाओने दरिद्रनारायणके लिए पर्याप्त धन नही दिया है। मुझे आप जैसी बहनोसे न केवल वह धन माँगनेमें कोई हिचक नही है जो वास्तवमें आपको अपने माता-पितासे और पतिसे प्राप्त हुआ है, बल्कि मैं आपसे स्त्रीधन भी, अर्थात् आपके गहने भी देनेको कहता हूँ। और मै यह इस शर्तपर माँगता हूँ कि बहने अपने गहने देनेके बाद उनकी जगह दूसरे गहने बनवानेको नही कहेंगी। स्त्रीका सच्चा सौन्दर्य उसकी साड़ी, उसके हीरे-मोती या उसके स्वर्णाभूषणोमें नही है। स्त्रीका सच्चा सौन्दर्य शुद्ध हृदय रखनेमें है। ईश्वर आपको वैसा हृदय दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-९-१९२७

२३. भाषण : देवकोट्टामें[1]

२४ सितम्बर, १९२७

मित्रो,

मैं इन सभी अभिनन्दनपत्रोंके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं निपुण कतैया, श्रीयुत चोकलिंगम् चेट्टियार, को भी धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने मुझे रुईके विविध नमूने दिये है, जिनसे पता चलता है कि कताईसे पहले रुईको किन-किन प्रक्रियाओंमें से गुजरना पड़ता है। मै उन्हें अपने कते हुए सूतसे यहीके एक बुनकर द्वारा बुनी खादी भेंट करनेके लिए भी धन्यवाद देता हूँ। मैंने इसे लोगोंके देखनेके लिए रख दिया है। आप खुद यह बारीक खादी देखें; मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि इस कपड़ेके पारसे आप मेरा चेहरा देख सकते है। मै इस सभाका आरम्भ आपके सामने एक प्रस्ताव रखते हुए करना चाहता हूँ। इस खादीके कपड़ेको मैं पहन नहीं सकता क्योंकि ऐसा करना मेरी इस घोषणाके विरुद्ध होगा कि मैं अपने लिए उतना ही चाहता हूँ जो हमारे लाखो क्षुधार्त्त भाइयोंके मुकाबले ज्यादा न हो। ईश्वर ही जानता है कि सेवा करनेकी तीव्र अभिलाषाकी आड़में मैं किस-किस तरहकी छूट ले लेता हूँ। लेकिन अभी मै इतना उद्दण्ड नही हुआ हूँ जो कहूँ कि इस खादीका इस्तेमाल करके मैं आपकी ज्यादा सेवा कर सकूँगा। इसलिए जो उदार प्रस्ताव मै करने जा रहा हूँ, उसे यदि आप स्वीकार करेंगे तो यह खादीका टुकड़ा उस प्रदर्शनीय संग्रहमें चला जायेगा जिसे अखिल भारतीय चरखा संघने इकट्ठा किया है। और यह निश्चय ही संघके संग्रहकी एक अनूठी वस्तु होगा। लेकिन मैं सचमुच चाहूँगा कि आप हस्तकलाके इस सुन्दर नमूनेको एक प्रदर्शनीय वस्तुके रूपमें, अथवा आपमें से कुछ धनी लोगों द्वारा संग्राह्य शोभाकी वस्तुके रूपमें अपने ही बीच रखें। लेकिन यदि आप इसे कीर्तिपदकके रूपमें अपने बीच रखना चाहते है तो आपको इसके लिए खिलाड़ियों जैसी उदारताके साथ उपयुक्त कीमत चुकानी पड़ेगी। और ढाकाकी 'शबनम' से थोड़ा ही कम पड़नेवाले इस खादीके टुकड़ेको मैं कितना कीमती मानता हूँ, यह दिखानेके लिए मैं आपको १,००० रुपयेसे कममें यह टुकड़ा नही लेने दूँगा। 'शबनम' ढाकाकी उस खादीका कवित्वपूर्ण नाम है जो हमारे पूर्वज वहाँ तैयार किया करते थे। शबनमके अर्थ है ओस, और इस मल-मलको 'शबनम' इसलिए कहा जाता था कि इसे फैला देनेपर देखनेवालेको ओस-का धोखा हो जाता था। यह कपड़ा इतना बारीक और इतना सुन्दर होता था। कुछ महीने पहले बंगालमें एक चटर्जी महोदयकी मृत्यु हो गई जिन्होंने करीब-करीब शबनम

१. देवकोट्टाकी इस सभामें गांधीजीको नागरिकों, देवकोट्टा यूनियन बोर्ड और नगरथार श्री मीनाक्षी विद्यालय हाई स्कूलके छात्रों तथा अध्यापकोंको ओरसे अभिनन्दनपत्र दिये गये थे। गांधीजी इन्हींका उत्तर दे रहे थे।

जैसी ढाकाकी मलमल या खादी तैयार की थी। हमारे दुर्भाग्यसे उनकी मृत्यु हो गई, किन्तु उनके हस्तकौशलका नमूना अभी भी बंगालके खादी प्रतिष्ठानमें प्रदर्शनार्थ मौजूद है, और प्रतिष्ठानके प्रबन्धक ५००० रुपयेमें भी इस खादीको नही वेचेंगे। मै मानता हूँ कि इतना मूल्य कुछ ज्यादा है या कुछ ज्यादा कहा जा सकता है, लेकिन कलाके प्रेमी, स्वदेशके प्रेमी, देशभक्तिके प्रेमी अपने प्रेमके वास्ते ज्यादा मूल्य चुकानेमें नही हिचकते। और इसके साथ ही जिस 'उदार प्रस्ताव' की कहानीके साथ मैंने यहाँकी कारंवाई आरम्भ की थी, वह खतम होती है। और मेरे भाषणके अन्तमें देखा जायेगा कि जो मूल्य मैने बताया है, उस मूल्यपर इस खूबसूरत कलाके टुकड़ेको खरीदनेवाला कोई प्रेमी है या नही।

हस्तकलाका एक दूसरा नमूना भी है; इसे मेरे मित्र श्रीयुत श्रीनिवास अय्यंगारने भेंट किया है। यह खादीका टुकड़ा पहलेवाले खादीके टुकड़े जैसा बढिया और वारीक तो नही है, फिर भी मेरे पहनने लायक नही है। अगर आप इसके लिए भी अधिक मूल्य देनेको तैयार हो तो मुझसे सौदा कर सकते है, लेकिन मै अपनी ओरसे इसकी कोई कीमत निर्धारित नही करूँगा क्योकि ऐसा करना आपके प्रेमपर बहुत ज्यादा दबाव डालना होगा। यह एक उत्तरीय (स्कार्फ) है, और पेरिसके किसी भी रेशमी कपड़ेसे निश्चय ही कही ज्यादा अच्छा है। इन दो कलात्मक वस्तुओंकी तारीफ करनेमें आपका इतना वक्त लेनेके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। लेकिन इससे आप यह भी देख सकते है कि मै किस तरह खादीका दीवाना हूँ। जब मै खादीकी चर्चा करने लगता हूँ, उस समय अगर मेरे सामने धैर्यसे सुननेवाले श्रोता हों तो मै लगातार वोलता रह सकता हूँ। कारण मै जनता हूँ कि हमारे सात लाख गाँवोमें रहनेवाले क्षुधापीड़ित भाई-बहनोकी आर्थिक मुक्ति खादीमें ही निहित है। मै चाहता हूँ कि आप भी मेरी तरह ही ऐसा सोचें कि जबतक भारतमें एक भी स्त्री या पुरुष ऐसा है जो काम न होनेके कारण भूखा रहता है तबतक मेरी ही तरह आपके लिए भी यह जिन्दगी बोझ-स्वरूप है। मै चेट्टिनाडमें ये बहुमूल्य दिन इस बड़ी उम्मीदमे गुजार रहा हूँ कि मै दरिद्रनारायणके प्रति आपकी उच्चतम उदार भावनाको जाग्रत कर सकूँगा। इसलिए आप मुझे कमसे-कम नही बल्कि आपके पास ज्यादासे-ज्यादा जो है, वह दीजिए।

और अधिकसे-अधिक आर्थिक सहायता देकर भी आप अपने और लाखों भूखग्रस्त लोगोंके बीच एक जीवन्त सम्बन्ध तबतक स्थापित नही कर सकते जबतक कि आप खादीको अपना न लें। आपने अपनी आँखोसे देखा है कि इसी स्थानपर आपको अपनी रुचिकी बढ़िया वारीक खादी मिल सकती है। इन दो सज्जनोने जैसा माल तैयार किया है, वैसा ही कोशिश करनेपर और लोग भी तैयार कर सकते है, और इसलिए मै आप जवान और बूढे, स्त्री और पुरुष, लड़के और लड़कियाँ, सभीसे आशा करता हूँ कि आप एक पवित्र सकल्प करेंगे कि आप आजसे कोई विदेशी वस्त्र नही खरीदेंगे और आप केवल हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी ही खरीदेंगे। इतनी वात तो हुई खद्दरके बारेमें।

लेकिन कई और बातें हैं जिनकी ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहूँगा। मैं आपसे यह कहनेका साहस करता हूँ कि हालाँकि आप अपने धनका प्रचुर उपयोग करते प्रतीत होते हैं, लेकिन उसका बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग नहीं कर रहे हैं। आपने विशाल अट्टालिकाएँ खड़ी कर ली है, लेकिन आपने अपने आसपासकी चीजोंकी ओर ध्यान नही दिया है। इसलिए मै चाहूँगा कि आप न केवल अपने लिए बल्कि अपने बीच रहनेवाले लोगोके पीनेके लिए शुद्धतम पानीकी व्यवस्था करें। आपकी सड़कें बिलकुल दुरुस्त और अच्छी होनी चाहिए। आपके तालाब स्वच्छ और मीठी सुवास-वाले होने चाहिए और उनमें स्वच्छ और निर्मल जल भरा होना चाहिए। आपके यहाँ गन्दे पानीकी निकास-व्यवस्था बिलकुल चुस्त और दुरुस्त होनी चाहिए। आप विश्वास ही नही करेंगे कि ये सब चीजें इतनी सरल है, और आप इनकी ओर यदि पूरे मनसे ध्यान देंगे तो देखेंगे कि इनपर बहुत थोड़ा पैसा खर्च होगा जो आपको खलेगा नही। अगर आपको यह सब करना हो तो आपको इसके लिए विशेषज्ञोंकी सलाह लेनी चाहिए। लेकिन इसमें निजी रुचियो और निजी सुविधाओंका थोड़ा-बहुत त्याग जरूरी है। इसके लिए सामुदायिक जीवन — केवल अपने ही लिए नही, बल्कि देशके लिए, बितानेकी इच्छाका होना जरूरी है। इसके लिए यह भी जरूरी है कि आपके मनमें अपने गरीबसे-गरीब पड़ोसीके लिए भी बन्धुत्वकी भावना हो। अपने मनके रुझानको इस दिशामें मोड़नेके साथ ही आप देखेंगे कि उक्त कार्योंको सम्पन्न करनेमें बहुत ही कम प्रयत्न, और उससे भी कम पैसेको जरूरत पड़ेगी, और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अपनी कोशिशोंका आपको पर्याप्त फल मिलेगा।

लेकिन आज दिनमें मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि आप अपने बच्चोको समुचित और ढंगकी शिक्षा भी नही देते। मुझे बताया गया कि जीवनमें आपकी एकमात्र महत्त्वाकांक्षा होती है उन्हें कच्ची आयुमें ही धन पैदा करनेवाली मशीन बना देना। यह बात ठीक नहीं है। उन्हे अपने व्यापारका योग्य उत्तराधिकारी आप शौकसे बनाइए, लेकिन इससे पहले कि वे जिन्दगीकी तूफानी राहमें प्रवेश करें, उन्हें आप अपने संस्कृति रूपी ज्ञानका कुछ परिचय पाने दीजिए, उनके चरित्रका निर्माण हो जाने दीजिए और उन्हें हमारे इतिहास तथा देशका कुछ ज्ञान हो जाने दीजिए। मुझे बताया गया कि इस समय हालत यह है कि शास्त्रोंका ज्ञान होनेका झूठा दम्भ करने-वाले कुछ लोग आपको पवित्र शास्त्रोके नामपर हर तरहके ग्रन्थोंके चक्करमें डालते है। लेकिन मैं आपको बता दूँ कि चाहे संस्कृतमें हो या तमिलमें, हर श्लोक आवश्यक रूपसे शास्त्र-वचन नहीं है। सच्चे शास्त्रकी मेरी परिभाषा है, चुने हुए शब्दोंमें ऐसी उक्ति जो हमें जीवन प्रदान करे। इसलिए कोई भी धर्मग्रन्थ, भले वह कितना ही पुराना क्यों न बताया जाता हो, यदि हमें विनाशके पथपर ले जानेवाला, और इस कारण सत्य और जीवनके शाश्वत नियमके विपरीत हो, तो वह शास्त्र नही हो सकता। इसी-लिए हमें सिखाया गया है कि शास्त्र सचमुच चरित्रवान व्यक्तिके मुँहसे निकलता है, जिसे हम सन्त पुरुष कहते है। और याद रखिए, गेरुआ वस्त्र पहननेवाला, मस्तक और सारे शरीरपर टीका-तिलक लगा लेनेवाला, और शास्त्रवचन कहकर [तोतेकी तरह]

श्लोकपर श्लोक बोलनेवाला हर व्यक्ति संत पुरुष नही होता। सन्त पुरुष वह है जो अपनेको ससारके किसी भी प्राणीसे श्रेष्ठ नही समझता और जिसने संसारके सभी सुखोका त्याग कर दिया है। वास्तवमें आज कलियुगमें हमें सन्त पुरुष कठिनाईसे मिलते है। इसलिए हमारी यह दोहरी जिम्मेदारी हो जाती है कि अपने बच्चोको समुचित शिक्षा दें ताकि वे भले और बुरेमें भेद कर सकें। और आप लोगोसे जो इतने अमीर हैं और शिक्षाकी उम्र पार कर चुके है, मै वही कहना चाहूँगा जो मै पिछले तीन दिनोसे और जगहोपर कहता रहा हूँ। वह यह है कि आप चाहे जो भी करें, लेकिन अपने जीवनकी पवित्रतापर आँच न आने दें। मैने तरह-तरहकी कहानियाँ सुनी है लेकिन मै आशा करता हूँ कि उनमें काफी अत्युक्ति है। तथापि ससारके अनुभवके आधारपर आम तौरसे यह कहा जा सकता है कि सोनेका सद्गुणोसे वैर होता है। लेकिन ससारका ऐसा दुखद अनुभव होनेके बावजूद यह नियम अटल है, ऐसा नही कहा जा सकता। हमारे सामने महाराजा जनकका प्रसिद्ध उदाहरण है जिनके पास एक महान राजाके नाते यद्यपि अपार धन-सम्पत्ति और असीम शक्ति थी, तथापि वे अपने समयके शुद्धतम व्यक्तियोमें से थे। और हमारे ही युगमें मै अपने व्यक्तिगत अनुभवके आधारपर उदाहरण दे सकता हूँ और आपको बता सकता हूँ कि मै ऐसे कई धनी लोगोको जानता हूँ जिन्हें सीधा-सादा और शुद्ध जीवन व्यतीत करनेमें तनिक भी कठिनाई नही है। उन थोड़ेसे लोगोंके लिए जो सम्भव है वह आपमें से प्रत्येकके लिए सम्भव है। मै चाहता हूँ कि मेरे शब्दोको आपके हृदयमें स्थायी जगह मिले। मै जानता हूँ कि इससे आपको, और जिस समाजमें आप रहते है उसको, कितना लाभ होगा।

अब मुझे वही करना है जो मै हर सभामें करता हूँ। सभा विसर्जित होनेसे पहले स्वयंसेवक आप लोगोके पास जाते है और जिन लोगोने कोषमें पैसा नही दिया है, या जो मेरा भाषण सुननेके बाद इस निष्कर्षपर पहुँचते है कि उन्होने काफी चन्दा नही दिया है, उनसे चन्दा जमा करते है। यदि सभामें ऐसे स्त्री-पुरुष हों जिनका खादीमें विश्वास है तो मै उन्हे वैसा करनेका मौका देना चाहता हूँ।

जब स्वयंसेवक लोग चन्दा जमा कर रहे थे उस समय महात्माजीने सभाके आरम्भमें रखा अपना प्रस्ताव दोहराया और पूछा कि क्या कोई मित्र है जो खादीके कपड़ेका नीलाम करनेपर उसे निर्धारित मूल्यपर खरीदना चाहेंगे। इसका कोई उत्तर न मिलनेपर महात्माजीने कहा कि खादीके उस टुकड़ेको प्रदर्शनार्थ अखिल भारतीय चरखा संघके पास भेज दिया जायेगा।[1] अन्तमें महात्माजीने कहा:

अब एक-दो शब्द मै छात्रोसे कहूँगा। मुझे उन्हें नही भूलना चाहिए। उन्होने अपने अभिनन्दनपत्रमें मुझे बताया है कि वे आगेसे कताईकी ओर ज्यादा ध्यान देंगे, और जिन्होने खादीको नही अपनाया है वे आगेसे खादीको अपनायेंगे। मैं उनके इस निश्चयके लिए उन्हें बधाई देता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह उन्हें अपने संकल्पपर अमल करनेकी शक्ति दे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-९-१९२७

१. अगले दिन कराइकुडीमें षण्मुखम् चेट्टियारने १००१ रुपयेमें इस कपड़ेको खरीद लिया।

२४. युवकोंसे चर्चा

[२५ सितम्बर, १९२७ या उससे पूर्व][1]

आप मुझे नितान्त झूठी बातें बता रहे हैं। आप उस व्यक्तिको नही जानते हैं।

यदि राजगोपालाचारी झूठ बोल सकते है तो आपको कहना चाहिए कि मैं भी झूठ बोल सकता हूँ। बेशक, मै कहता हूँ कि वे ही एकमात्र सम्भावित उत्तराधिकारी हैं, और इस बातको आज मैं फिर दोहराता हूँ। आप युवाजन उन्हें मारनेकी कोशिश में स्वयं अपने-आपको मार डालेंगे। पुस्तिकासे यह बात प्रकट होती है कि आप लोगोंको किस प्रकार झूठीं बातें बताई जाती है—आप अपने आन्दोलनको झूठी बातोंके आधारपर खड़ा कर रहे हैं, और इसके अर्थ है हिंसा।

आप बेशक संकल्पपूर्वक संघर्ष करें। लेकिन अपनी नीव सत्यपर जमायें। मैं आपको जो समय दे रहा हूँ वह केवल इसलिए कि मुझे देशके नौजवानोंके साथ हमदर्दी है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२५. एक पत्र

[२५ सितम्बर, १९२७][2]

प्रिय मित्र,

आपके बताये हुए तथ्योंके आधारपर, और यदि परिस्थियाँ उन तथ्योंके प्रभाव-को कम नही करती हैं तो, इस विवाह संस्कारको निश्चय ही विधि-विरुद्ध मानना चाहिए और लड़कीको अपनी पसन्दके व्यक्तिसे विवाह करनेकी छूट होनी चाहिए। लेकिन मेरे विचारसे जबतक लड़की २१ वर्षकी नही हो जाती, तबतक वह अपने माता-पितासे परामर्श किये बगैर कोई चुनाव नहीं कर सकती।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

१. साधन-सूत्रमें यह वार्ता इसी तिथिके अन्तगत प्रकाशित की गई है।
२. साधन-सूत्रमें यह पत्र इसी तारीखके अन्तर्गत दिया गया है।

२६. पत्र : सुरेन्द्रको

[२५ सितम्बर, १९२७][1]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। वहाँ जो विचित्र अनुभव हों उनकी खबर देते रहना। तुम्हारी सुस्तीके बारेमें वसुमती बहनने लिखा था। मैं उससे चिन्तित नही हुआ यद्यपि यह सुनकर आश्चर्य तो हुआ था।

गाँवोंमें किस तरह जाते हो? प्रत्येक अकेला ही जाता है या किसी साथीके साथ? लोगोंके मनपर बाढ़का[2] असर अब भी बाकी है या निःशेष हो गया? बाढ़के दिनोमें सब लोग हिल-मिलकर रह रहे थे। क्या ऐसा मालूम होता है कि यह स्थिति तो स्वप्नकी तरह आयी और चली गई? लोग स्वयं अपनी भी कुछ मदद करते हैं या नही? मदद लेनेवाले सामान्यत. ईमानदार तो होते हैं न?

बालकृष्णका क्या हाल है? छोटेलालने फिर मौन धारण कर लिया है।

मै सानन्द हूँ, यद्यपि आजकल ऐसा तो बहुत-कुछ हो रहा है जिससे मनको दुःख होता है और इनमें से कुछ घटनाएँ तो ऐसी भी है जिनका आघात काफी गहरा है। किन्तु प्रस्तुत युद्ध ऐसा है जिसमें मुमुक्षु सिपाहीकी परीक्षा भी हो रही है, और वह निखर भी रहा है; इसलिए मुझे विश्वास है कि ये सब घाव भर जायेंगे। किन्तु न भी भरे तो क्या? 'गीता' यह आश्वासन देती है न कि इस रणक्षेत्रमें काम आनेवालेका तो कल्याण ही होता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९४१६) की फोटो-नकलसे।

२७. भाषण : सार्वजनिक सभा, कराइकुडीमें

२५ सितम्बर, १९२७

मित्रो,

आपने जो अभिनन्दनपत्र और विभिन्न थैलियाँ भेंट की है, उनके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। मुख्य थैलीमें ४,००० से अधिक रुपये हैं। यह अच्छी रकम है, लेकिन चेट्टिनाडके लोगोंके लिहाजसे बहुत अच्छी नही है, और इसकी तुलना आदिद्रविड़ बालकको द्वारा दी गई १७ रुपयेकी थैलीसे करनेपर तो यह निश्चय ही बहुत अच्छी रकम नही है। आप लोग आसानीसे इसकी चौगुनी रकम दे सकते हैं, जबकि आदिद्रविड़

१. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीके अनुसार।
२. गुजरातमें।

बालकोंके लिए सत्रह रुपया देना भी सरल नहीं था। फिर भी आप अपनी खुशीसे दरिद्रनारायणके लिए जो-कुछ दे सके हैं, मैं उसके लिए आपका आभारी हूँ। मैं अपनी बातकी शुरुआत उस प्रस्तावको दुहराते हुए करना चाहता हूँ, जो मैंने कल रात रखा था। मैं आपको हस्तकलाका यह सुन्दर नमूना, जो आपके ही यहाँ तैयार किया गया है, दिखाना चाहता हूँ। जिस सूतसे यह मलमल, जिसे मैं खादी कहता हूँ, बनी हुई है वह इसी स्थानके श्री चोकलिंगम द्वारा काता गया है। जैसे बारीक सूतसे यह खादी बुनी गई है, वैसा सूत कातनेके लिए उन्होंने रुईको किन विभिन्न विधियोंसे तैयार किया, यह मैंने अपनी आँखों देखा है और अगर आपने उनकी हस्तकला देखी होती तो आपको भी मेरी तरह उनसे ईर्ष्या होती और मेरी ही तरह उनकी कलापर आपको गर्व भी होता। इतनी बारीक मलमलका मैं निजी तौरपर कोई उपयोग नही कर सकता। अतः यदि मैं आपके मनमें स्थानीय कला और देशके प्रति प्रेम जगानेमें विफल हुआ तो मैं इसे ले जाऊँगा और अखिल भारतीय चरखा संघके संग्रहालयमें प्रदर्शनार्थ रख दूँगा। लेकिन मैं सचमुच चाहता हूँ कि यह कपड़ा आप लोगोंके पास ही रहे। अगर आप इसे रखना चाहेंगे तो आपको इसका बहुत ऊँचा दाम देना पड़ेगा। दुनियामें सभी जगह कला-वस्तुओंकी कीमत ज्यादा होती है, और मैंने इस कपड़ेका मूल्य १,००० रुपये निर्धारित किया है। लेकिन आप पूछ सकते हैं कि इस कपड़ेमें कलात्मक मूल्य-जैसा क्या है, अथवा दूसरे शब्दोंमें अगर आप चाहें तो पूछ सकते हैं कि खादीको मैं इतना मूल्यवान क्यों मानता हूँ। एक सज्जनने, जो आपके बीच वर्षो रह चुके हैं, मुझे बताया था कि चेट्टिनाडमें ऐसे बहुत-से लोग हैं जो चरखेका सन्देश नहीं समझते और न वे यही समझते है कि इन तमाम थैलियोंकी रकमोंका इस्तेमाल किस प्रकार किया जायेगा। मैं कुछ शब्द चरखेके सन्देशको स्पष्ट करनेके लिए कहूँगा। चरखेका उद्देश्य उन लाखों क्षुधा-पीड़ित स्त्री-पुरुषोंके लिए काम जुटाना है जो इस देशके सात लाख गाँवोंमें रहते हैं। भारतके बारेमें कुछ भी जानकारी रखनेवाले हर व्यक्तिने कहा है कि इन लोगोंके पास सालमें करीब छः महीने कोई काम नही होता, और सिवा चरखेके इन करोड़ों आदमियोंके लिए कोई काम मुहैया करना असम्भव है। चरखेके जरिये हम सारे भारतका तन ढँकने लायक कपड़ा तैयार कर सकते हैं। और मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि इन करोड़ो क्षुधार्त्त मानवोंके हाथोंसे तैयार की गई प्रत्येक वस्तु निश्चित तौरपर इस मलमल-जैसी ही एक कला-कृति है। सच्ची और जीवन्त कला वही है जिसका हमारे जीवनके साथ सम्बन्ध हो। सच्ची कला जीवनको पतित नही करती, बल्कि जीवनका सम्बल होती है, उसे उत्कृष्ट बनाती है। अब आप समझ गये होंगे कि मैं खादीको इतना मूल्यवान क्यों मानता हूँ। लेकिन यदि आप और मैं खादी नहीं पहनते तो इसका कोई मूल्य नही होगा।

अब मैं आपको उस संस्थाके बारेमें कुछ बताऊँगा जो खादी तैयार करती और बेचती है। देशमें कमसे-कम १,५०० गाँव हैं, जिनकी यह संस्था सहायता कर रही है। इन १,५०० गाँवोंमें ५० हजारसे भी अधिक बहनें चरखेका लाभ उठा रही हैं,

और चरखेकी ही महिमा है कि इन ५० हजार बहनों द्वारा काते गये सूतसे करीब पाँच हजार बुनकर कपड़ा तैयार करते हैं। इन कतैयों और बुनकरोंके अलावा खादीके लिए आवश्यक विशेष धुलाई करनेवालों, रँगनेवालों और छपाई करनेवालोंका एक वर्ग और तैयार हुआ है। छपाई और रँगाईकी सुन्दर कला, जो मसूलीपट्टममें और अन्यत्र समाप्त हो गई थी, फिरसे जीवित कर दी गई है और उसे एक सम्मानजनक दर्जा प्रदान किया गया है। यही वह संस्था है जिसके जरिये इन सभी काम करनेवालोंमें सात लाखसे अधिक रुपये वितरित किये गये। और अगर आपके लिए इसका कुछ महत्त्व हो तो मैं आपको यह भी बता दूँ कि इन कारीगरोंमें से अधिकांश अब्राह्मण है। इस संस्थाका संचालन और नियन्त्रण ९ व्यक्तियोंकी एक परिषद करती है, और अगर आप जानना चाहते हो तो यह भी जान लीजिए कि इन व्यक्तियोंमें से भी अधिकांश अब्राह्मण हैं। इस संस्थाका अध्यक्ष एक अब्राह्मण है, जिसे गलतीसे महात्मा कहा जाता है। (हँसी) इसका कोषाध्यक्ष भी एक अब्राह्मण है, और कोषाध्यक्षकी हैसियतसे उसके जैसा गुणी व्यक्ति संसारमें कहीं नहीं है। इसका मन्त्री भी अब्राह्मण है और वह बम्बईके एक प्रतिष्ठित बैंक-मालिकका पुत्र है। यह संस्था करीब १००० मध्यमवर्गीय लोगोंको काम देती है, जिनमें से अधिकांश अब्राह्मण हैं। इस संस्थाके पास कुछ ऐसे कार्यकर्त्ता हैं, जो न केवल अवैतनिक कार्यकर्त्ता हैं, बल्कि सचमुच इस संस्थाका पोषण करते हैं। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय संगठनोंके सभी हिसाबकी जाँच समय-समयपर लेखा-परीक्षक द्वारा कराई जाती है, और इस हिसावको दोस्त-दुश्मन, चन्दा देनेवाले और न देनेवाले, सभी देख सकते हैं। इस संस्थाका कोई भी अधिकारी १७५ रुपये प्रतिमाहसे अधिक वेतन नहीं पाता। और न ही कोई स्त्री या पुरुष इस संस्थाका तबतक सदस्य बन सकता है, जबतक कि वह आत्मत्यागकी भावनासे अभिभूत न हो। मैंने स्त्रियोंका उल्लेख किया, इसपर से मुझे आपको यह सूचित करते खुशी होती है कि भारतकी कई प्रतिष्ठित पुत्रियाँ हैं जो विना कुछ लिये खादीके लिए कार्य कर रही हैं। उदाहरणके लिए मैं भारतके पितामह्की[1] तीन पौत्रियों और महान पेटिट परिवार-की बहनोंका उल्लेख करना चाहूँगा। यह संस्था करीब २० लाख रुपयेकी पूँजीसे काम कर रही है। लेकिन भले ही ये आँकड़े संख्यामें आपको बहुत बड़े प्रतीत होते हों, किन्तु आपको और मुझे इन आँकडोंके जिस सीमातक पहुँचनेकी कामना करनी चाहिए, उसकी तुलनामें ये कुछ नहीं हैं। यदि सारे भारतमें खादीकी भावना फैल जाये तो हम १५०० नहीं, बल्कि ७ लाख गाँवोंकी, और ५० हजार कतैयोंकी नहीं, बल्कि दस करोड़ कतैयोंकी सेवा करेंगे। यही वह काम है, जिसके लिए मैं चेट्टिनाडके लोगोंसे उनके धनका कुछ थोड़ा-सा भाग नहीं, बल्कि काफी बड़ा भाग माँगता हूँ। अब आप यह भी समझ गये होंगे कि इस सुन्दर खादीके कपड़ेका मूल्य १००० रुपये निर्धारित करते समय मैंने इसका मूल्य कम ही आँका है, ज्यादा नहीं।

आपके बीच चार दिनके अपने सुखद निवासमें मैं जिन कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थानीय विषयोंपर चर्चा करता रहा हूँ, अब मैं सरसरी तौरपर उन्हें फिर दोहराऊँगा।

१. दादाभाई नौरोजी।

मैं आपसे कहूँगा कि आप अपने यहाँ स्वच्छता और सफाई तथा जल-सम्भरण व्यवस्थाकी ओर ध्यान दें। आपके तालावोंमें शुद्ध चमकता हुआ जल नहीं, वल्कि गन्दा पानी है और सड़कें गन्दी हैं। इनके वीच आपकी अट्टालिकाओंकी शोभा मन्द पड़ जाती है। मैं आपको दिखा सकता हूँ कि आप वहुत कम ख़र्चसे, अपनी पूँजीसे कोई रकम निकालकर नहीं, वल्कि अपनी बचतसे ही कुछ रकम लगाकर किस प्रकार ये कार्य कर सकते हैं।

मुझे मालूम हुआ है कि आपके यहाँ विवाहकी कुछ रीतियाँ वहुत खराव हैं। अकसर एक वधूकी कीमत ३०,००० रुपये तक वसूल की जाती है। मुझे वताया गया है कि आप एक विवाहपर ५०,००० रुपयेतक खर्च करनेमें नहीं हिचकते। लेकिन इन प्रथाओंको मैं अनैतिक मानता हूँ। विवाह-जैसे पवित्र अनुवन्धपर किसी भी ओरसे कोई कीमत नहीं लगाई जा सकती। किसी गरीव व्यक्तिके लिए भी एक गुणवती स्त्री पाना उतना ही सरल होना चाहिए जितना कि किसी धनी व्यक्तिके लिए। वैवाहिक अनुवन्धकी एकमात्र कसौटी गुण-शील और पारस्परिक प्रेम है। विवाह संस्कारपर होनेवाले खर्चोंको मैं अनैतिक तो नहीं मानता किन्तु धनकी अक्षम्य वर्वादी अवश्य मानता हूँ। कोई धनी व्यक्ति जिस तरह अपने धनका प्रदर्शन लोगोंके सामने करता है वह उसके लिए शोभनीय नहीं है। धनको उपयोगी ढंगसे खर्च करनेकी उत्तम कलाके अभावमें धन जमा करनेकी कला पतनकारी और निंद्य वन जाती है। अतः विवाह सम्वन्धी इस सुधारके जरिये, और इन समारोहोंपर व्यर्थ धन वहानेकी रीतिपर वुद्धिमानी पूर्वक अंकुश लगाने मात्रसे आप चेट्टिनाडको एक नंदनवन वना सकते हैं। अगर आप चाहें तो विना वहुत प्रयासके ही अपने यहाँ सार्वजनिक पार्क, खेलकूदके मैदान, जल-सम्भरण आदिकी व्यवस्था कर सकते हैं। लाभदायक डेरियाँ स्थापित कर सकते हैं, जिनसे आपके वीच रहनेवाले गरीव लोगोंको सस्ता और शुद्ध दूध प्राप्त हो सकता है। शुद्ध जलके सम्भरणकी व्यवस्था करके, स्वच्छता और सफाई रखकर, तथा अमीर और गरीव, सभीको शुद्ध दूध सुलभ करानेका पक्का प्रवन्ध करके यदि आप अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करेंगे तो मैं एक अनुभवी व्यक्तिके नाते और एक चेट्टि-वंधुके नाते आपसे कहता हूँ कि आप अपने खुदके साधनोंमें तीन गुनी वृद्धि कर लेंगे।

एक महिला डाक्टरने मुझे पत्र लिखा है कि चेट्टिनाडमें प्रचलित उस वुरी प्रथाकी ओर आपका ध्यान दिलाऊँ जो आपको सार्वजनिक उपयोगिताकी इन चीजों पर विचार करनेसे रोकती है। वे मुझे वताती हैं कि धर्मके नामपर कच्ची उम्रकी वालिकाओंको शर्मनाक जीवन वितानेके लिए अर्पित कर देनेकी वीभत्स और अनैतिक प्रथाको स्थायी वनानेमें चेट्टिनाडके धनी लोगोंका काफी हाथ है। वे मुझे वताती हैं कि आपके वीच वहुत-सी देवदासियाँ हैं। अगर यह सच है तो हमारे लिए शर्मसे गर्दन झुका लेनेकी वात है। धनवान होना पतन, वुराई और व्यभिचारिताका प्रतीक नहीं होना चाहिए। और क्या यह एक दुखद विडम्वना नहीं है कि वुराइयोंके वावजूद आप लोग ऐसे भवनोंका निर्माण करनेमें खुले हाथों पैसा खर्च करते हैं जिन्हें आप मन्दिर

कहकर खुश होते हैं और समझते हैं कि इसमें देवता निवास करेंगे। यह जरूरी नहीं कि मन्दिर कहलानेवाली ईंट-गारेसे बनी हर इमारत मन्दिर हो, देवताका निवास-स्थान हो। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि आज हमारे देशमें बहुत-से ऐसे मन्दिर हैं जो किसी भी हालतमें वेश्यालयोंसे बेहतर नहीं है। क्या आप जानते हैं कि हमारे धर्ममें किसी भी स्थानको तबतक मन्दिर कहना सम्भव नहीं है जबतक कि उस भवनको पूरे विधि-विधानोंके साथ शुद्ध और पवित्र न कर लिया जाये और जबतक शुद्ध और पवित्र व्यक्तियो द्वारा उपासना और आराधना करके वहाँ ईश्वरकी प्राण-प्रतिष्ठा न कर दी गई हो। इसलिए मैं आपसे आग्रह करूँगा कि आप अपनेको रोकें और मन्दिरोंके निर्माणपर धन न बहायें। सबसे पहले आप अपने शरीरको ही ईश्वरकी सेवामें अर्पित करें, और इसके लिए आप पहले उन बुराइयोंसे छुटकारा पाकर अपने-आपको शुद्ध और पवित्र बनायें जिनकी ओर मैंने ध्यान दिलाया है। लेकिन मुझे आपको यह बताते हुए खुशी हो रही है कि आज ही मुझे एक सुखद पत्र मिला है, जिसमें पत्रलेखकने यद्यपि यह स्वीकार किया है कि अभी मेरे द्वारा बताई अधिकांश बुराइयाँ आपके बीच मौजूद है, किन्तु साथ ही उसने मुझे यह भी सूचित किया है कि यहाँ अनेक चेट्टी ऐसे है जिनके पास न केवल स्वर्ण-धन ही है बल्कि जो गुण-धनकी भी खान है। इस पत्रके लेखकने लिखा है कि आपके बीच ऐसे अनेक ब्रह्मचारी है जो चुपचाप पवित्र धार्मिक जीवन व्यतीत कर रहे है। उसने बड़ी आशा और गर्वके साथ यह भी बताया है कि कई नवयुवक जबर्दस्त कठिनाइयोंके बावजूद एक सुधार अभियान चला रहे है। मैं इन नवयुवकोंको विश्वास दिलाता हूँ कि सुधारके पथपर हालाँकि फूल नहीं बिछे है, बल्कि वह अनगिनत काँटोंसे भरा पडा है, फिर भी यदि वे शुद्ध और प्रार्थनामय मनसे इस कार्यमें बराबर लगे रहेंगे तो उनकी सफलता सुनिश्चित है। मुझे पता चला कि वे एक ऐसी कठिन समस्याको धीरे-धीरे हल करनेकी कोशिश कर रहे है जो आप सबके सामने मौजूद है। मुझे मालूम हुआ है कि आपके बीच एक कठोर प्रथा बन गई है, जिसके अनुसार बर्मा, सिंगापुर या लंका जानेवाला कोई भी चेट्टियार अपने साथ अपनी पत्नीको नहीं ले जाता। आपकी महिलाओंके विरुद्ध लगे इस कलंकपूर्ण निषेधको मैं दोहरा नुकसानदेह और बहुत बड़ा पाप मानता हूँ। जब आप अपने घरसे दूर होते है तब इस नियमके कारण एक तरफ तो आप ऐसे अनेक प्रलोभनोंके शिकार हो सकते है जिन्हें टाला जा सकता है और दूसरी ओर आपकी जीवन-संगिनी कई वर्षोंके लिए न केवल आपके संगसे वंचित हो जाती है, बल्कि सुदूर देशोंमें आपके साथ यात्रा करके अपने मानसिक क्षितिजके विस्तारके अवसरसे वंचित भी हो जाती है। अतः मैं इन नवयुवकोंके इस निस्स्वार्थ संघर्षमें शीघ्र सफल होनेकी कामना करता हूँ, और जिन वयोवृद्ध लोगोंतक मेरी आवाज पहुँच सके उनसे भी मैं आग्रह करता हूँ कि आपके बीच आवश्यक सुधार लानेकी उनकी कोशिशोंमें आप उनकी सहायता करें।

और अब चूँकि सभामें शान्ति छाई हुई है, और चूँकि चेट्टिनाडमें मेरी यह शायद अन्तिम सभा है, जिसमें मैं बोलूँगा, इसलिए मैं अपने सामने बैठी बहनोंसे भी कुछ शब्द कहना चाहूँगा। आप इतनी सारी बहनोंको इस सभामें देखकर मुझे खुशी

है। मुझे ऐसी आशंका है कि आपको शायद इस बातका भान नहीं है कि खादीका यह सन्देश मुख्यतः उन लाखों क्षुधार्त्त बहनोंकी दशा सुधारनेका प्रयत्न है जो भारतके हजारो गाँवोमें रहती है। स्त्री-पुरुषके जीवनमें समान रूपसे जबर्दस्त महत्त्व रखनेवाली अनेक बातोंकी तरफसे आपको — भारतकी महिलाओको — अन्धेरेमें रखनेके लिए भारतके पुरुषोंको कितनी कीमत चुकानी पड़ेगी, मै नही कह सकता। लेकिन ईश्वरको धन्यवाद है कि चरखेका पुनरुद्धार करनेका आन्दोलन शुरू होनेके बादसे हजारों स्त्रियाँ अपने घरकी चहारदीवारियोसे बाहर निकलकर चरखेका संगीत सुनने लगी है। और मुझे यह सोचकर खुशी होगी कि आप चेट्टिनाडकी स्त्रियोंने अपने मकानों और महलोंकी देहरीसे बाहरकी चीजोंकी चिन्ता करना शुरू कर दिया है। मै चाहता हूँ कि आप अपनी लाखों बहनोंकी गहरी और कष्टकर गरीबीको समझें, और अपने आदमियोसे अलहदा अपनी चीजें, अपने रुपये और अपने गहने इन बहनोंके वास्ते दें। मुझे आपको यह बता सकनेमें खुशी होती है कि जहाँतक इस सन्देशका सवाल है, भारतकी स्त्रियोंमें स्वतःस्फूर्त अनुकूल प्रतिक्रिया हुई है और उन्होने खुशी-खुशी अपने रुपये और गहने दे डाले हैं, और कुछने तो मुक्तहस्तसे दिया है। लेकिन अपना रुपया या गहना मुझे देना ही आपके लिए काफी नही है। यदि आप अपने और अपनी क्षुधार्त्त बहनोंके बीच जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करना चाहती है तो यह अत्यन्त जरूरी है कि आप विदेशी कपड़ेका त्याग कर दें और हमेशा खादीकी पोशाक ही पहनें। कारण, यदि आप इन बहनोंके परिश्रमसे तैयार हुई खादी नही पहनेंगी तो आप जो भी धन दें, वह व्यर्थ होगा।

एक शील-गुण-सम्पन्न स्त्रीका सौन्दर्य उसके सुन्दर वस्त्रोंमें नही, बल्कि उसके शुद्ध हृदय और पवित्र जीवनमें है। भारत-भरमें लाखों स्त्री-पुरुष प्रातःकाल सीताका पवित्र और अमर नाम-स्मरण करते है ताकि वह नाम कवचकी तरह अपनी रक्षा-शक्तिसे दिन-भर उन लोगोंकी रक्षा करे। सीताका नाम वे इसलिए स्मरण नही करते कि सीता बहुमूल्य रत्न पहनती थीं, बल्कि इसलिए कि उनका हृदय शुद्ध स्वर्ण और शुद्ध हीरेकी तरह था। रामको वनवास मिलनेपर सीता महलोंमें नही रही, बल्कि उन्होने वनवासके तमाम घटनापूर्ण वर्षोमें रामके साथ रहनेका आग्रह किया। जिन निषादोको आज हम अपने अज्ञानवश अस्पृश्य समझते हैं, उन्हें सीताने गले लगाया था और भक्ति-भावसे अर्पित उनकी सेवाओंको कृतज्ञ मनसे स्वीकार किया था।

और मैं चाहता हूँ कि आप सीताके गुणोंको, सीताकी विनम्रताको, सीताकी सादगीको और सीताकी वीरताको अपनायें। आपको समझना चाहिए कि अपने शीलकी रक्षाके लिए सीताको अपने स्वामी और प्रभु रामकी सहायताकी आवश्यकता नही पड़ी थी। सीता और रामके जीवनका इतिहास लिखनेवाला हमें बताता है कि सीताकी पवित्रता ही उनका रक्षा-कवच, उनकी सुरक्षा थी। और अगर आप अपने हृदयमें छिपी शक्तिको पहचान लें तो आप अपनी पवित्रता, प्रेम और आत्म-त्यागकी भावनासे अपने पुरुषोंके दर्पीले स्वभावपर काबू पा सकती हैं, और वे लज्जित होकर बुराई और व्यभिचारकी जिन्दगीको छोड़ सकते हैं। मैं चाहता हूँ कि आप अपने अन्दर अपने

पतियोंके साथ जहाँ वे जायें, वहाँ जानेका आग्रह करनेका साहस उत्पन्न करे। ईश्वर आपको वैसी शक्ति और सद्भाव प्रदान करे।

मैं अपनी बात पूरी कर चुका हूँ और जैसा कि सभी सभाओंमें सामान्य रूपसे होता है मैं यहाँ भी अपनी रीतिके अनुसार उन लोगोंसे, जिन्होंने इस थैलीके लिए कुछ नहीं दिया है, कहूँगा कि यदि उन्हें खादीमें विश्वास हो और यदि वे चाहें तो अब चन्दा दें। मैं यहाँ उपस्थित भाइयों और बहनोंसे भी कहता हूँ कि यदि वे चाहें तो जितना दे सकें दें, और इसीलिए यदि यहाँ ऐसे लोग हैं जिन्होंने सचमुच काफी नहीं दिया है, तो मैं उनसे भी कहता हूँ कि मैंने जो आँकड़े दिये हैं, उनमें और खादीके महत्त्वमें यदि उनको विश्वास हो तो वे कृपणताके साथ नहीं, बल्कि उदारताके साथ चन्दा दें।

[इसके बाद] महात्माजीको भेंट किये गये गहनों, चाँदीके प्यालों और अँगूठियोंका नीलाम शुरू हुआ। . . .श्री षण्मुखम् चेट्टियारने देवकोट्टामें गांधीजीको जो बारीक मलमल भेंट की गई थी, उसे महात्माजी द्वारा निर्धारित १,००० रुपयेकी कीमतपर खरीदनेकी इच्छा घोषित की। . . .महात्माजीको एक अँगूठी दूसरी बार उपहारमें दी गई थी, और मुश्किलसे १० रुपयेकी यह अँगूठी दूसरी बार नीलाम की जाने-पर १३५ रुपयेमें खरीद ली गई।

उपस्थित जनताने नीलाममें जैसा उत्साह दिखाया और महात्माजीके प्रति जैसा अगाध प्रेम प्रकट किया उसने गांधीजीके मनको छू लिया और उन्होंने सामान्य नियमके विपरीत, नीलाम खत्म होनेके बाद उपस्थित लोगोंके सामने कुछ शब्द और कहे। उन्होंने कहा :

यह दृश्य मैं कभी नहीं भूलूँगा। यह मेरे जीवनकी एक सुखदतम स्मृतिकी तरह मेरे मनमें रहेगा। मुझे अपने जीवनमें बहुत-से सुखद और दुखद अनुभव हुए हैं, और आजके दिनकी स्मृति मेरे जीवनकी चन्द चुनी हुई सुखद स्मृतियोंके बीच कायम रहेगी — विशेष रूपसे इसलिए कि जबसे मैंने चेट्टिनाडमें पैर रखा है, तबसे मैं आप लोगोंसे अनेक कड़वी बातें कहता रहा हूँ। आप मेरे शब्दों और मेरे मन्शाको चाहते तो आसानीसे गलत समझ सकते थे। लेकिन मैंने देखा है कि जितनी ही कड़ी बातें मैंने आपको कही हैं, आपने मुझपर उतना ही स्नेह बरसाया है। आपने मेरा सगे भाईकी तरह अपने बीच स्वागत किया है, और मेरी बातोंको ठीक उसी भावसे ग्रहण किया है जिस भावसे मैंने उन्हें कहा है। वास्तवमें यह मेरा सौभाग्य है। लेकिन मैं चाहूँगा कि जो बातें मैंने आपसे कही हैं, उन्हें भूल न जायें। मैं चाहता हूँ कि जो-कुछ मैंने कहा है, उसका एक-एक शब्द आपके हृदयमें पैठ जाये, और अगर मैं सुनूँ कि आपके हृदयमें रोपित ये शब्द कभी अंकुरित और पल्लवित हुए हैं तो मुझे जैसी खुशी होगी, वैसी खुशी आप मुझे लाखों रुपये देकर भी नहीं दे सकते। मेरे लिए आपके द्वारा दिये गये धनसे आपकी सेवा करनेके अलावा उसका कोई और उपयोग नहीं है, और यह एक अजीब किन्तु सत्य बात है कि यदि आप मुझे अपना दिल नहीं देंगे तो मैं स्वयं आपके पैसेसे भी आपकी सेवा नहीं कर सकता। मेरे हाथोंमें आपका जो पैसा है, वह खूब फलदायी सिद्ध हो, इसलिए मैं आपसे वह सब

करनेका अनुरोध करता हूँ जो मैंने कहा है। आप जानते हैं कि यदि आप वैसा करेंगे तो उससे आपका भला होगा, मेरा भला होगा और सारे भारतका भला होगा। आपपर ईश्वर अपनी कृपा रखे और आपको शक्ति दे कि आप मेरा सन्देश समझ सकें और उसके अनुसार कार्य कर सकें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २७-९-१९२७

२८. सन्देश: 'न्यू इंडिया' को

कराइकुडी
२६ सितम्बर, १९२७

डा० एनी बेसेंटको जन्म दिवसकी शुभकामनाएँ देते हुए मैं कह सकता हूँ कि मैं १८८९-९० में पहली बार उनका ऋणी हुआ था।[1] तबसे अबतक वह ऋण कई गुना बढ़ गया है। उस ऋणसे मुक्त होनेकी शक्ति देनेकी मेरी प्रार्थना निर्दय ईश्वरने अभीतक नहीं सुनी है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-९-१९२७

२९. पत्र: सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२६ सितम्बर, १९२७

प्रिय सतीशबाबू,

आपका पत्र मिला। एक स्थानीय विशेषज्ञके[2] लिए प्रतिष्ठानवाले सफरी चरखेके बारेमें महादेवने आपको अवश्य लिखा होगा। वह [विशेषज्ञ] बहुत बारीक कातते हैं। उन्होंने मुझे स्वयं तैयार किया हुआ बारीक मलमलका एक टुकड़ा भेंट किया। यह मलमल लगभग वैसा ही था जैसा कि जोगेश बाबूका। मैंने उसे एक स्थानीय चेट्टीको[3] १००० रुपयेमें बेच दिया। आपको चरखा इसी विशेषज्ञको भेजना है। कृपया भाड़ा खर्च भुगतान कर दीजिएगा और सारी कीमत मेरी सूचनाके अनुसार अ० भा० च० सं० के[4] जिम्मे डाल दीजिएगा।

१. गांधीजीका श्रीमती बेसेंटसे पहला परिचय उनकी पुस्तक हाऊ आई बिकेम ए थियोसॉफिस्ट पढ़ कर हुआ था। देखिए आत्मकथा, भाग १, अध्याय २०।
२. चोकलिंगम् चेट्टियार; देखिए "भाषण: देवकोट्टामें", २४-९-१९२७।
३. षण्मुखम् चेट्टियार; देखिए "भाषण: सार्वजनिक सभा, कराइकुडीमें", २५-९-१९२७।
४. अखिल भारतीय चरखा संघ।

जैसे ही मुझे आपका सुधरा हुआ चरखा मिलेगा, मै उसे इस्तेमाल करके अपनी राय लिखूंगा। अभय आश्रमके बारेमें मुझे दु:ख है। उन लोगोने मुझे कुछ नही लिखा है।

मै देखता हूँ कि निखिल अभी भी खतरेसे बाहर नही है। मुझे पूरी आशा है कि वह ठीक हो जायेगा।

क्या आपने मीठूबहनके ढगपर अपना स्टाक तैयार करने और उसपर कढ़ाई वगैरहके बाद बेचनेके सवालपर विचार किया है? खादीपर कढाई वगैरह करनेकी अपनी निपुणतासे मीठूबहनने अच्छा बाजार तैयार कर लिया है। मुझे आशा है कि मै लका और शायद त्रावणकोरमें भी काफी बिक्री कर लूँगा। कही ले जाने लायक आपके पास कुछ हो तो एक बक्स-भर बतौर प्रयोगके भेजिए।

सप्रेम,

आपका,
बापू

[पुनश्च :]

आप २० रु० प्रतिमाहपर गुजारा कर रहे हैं। अगर आप स्वास्थ्य ठीक रखें तो मुझे कोई एतराज नही है।

अंग्रेजी (जी० एन० १५७७) की फोटो-नकलसे।

३०. पत्र : हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

कराइकुडी
आश्विन शुक्ल १ [२६ सितम्बर, १९२७][1]

प्रिय भगिनी,

आपका खत मील गया है। कहा तक अनिलका वियोग दु:ख रहनेका है? उसके गुणोंका स्मरण करके दु:ख माननेसे कोनसा लाभ उस आत्माको और हमको हो सकता है? हम क्यों न माने कि अनिलका आत्मा तो अमर है। हमारा संबंध तो उसीके साथ था। देहके साथ न था। देहके साथ होता तो हम उस मृत देहमें मसाला डालकर वर्षो तक वैसे ही रख सकते थे। परंतु हमने तो आत्मा जानेसे देहको अग्नि संस्कार कीया — इतना समझनेमें अनुभवमें लानेके लीये न हमें योगी चाहिये और न कोई। हां, हमें ईश्वर पर विश्वास चाहीये और आत्माके अमरत्व पर भी विश्वास चाहीये। अब अनिलके देहको भूल जाय और उन [के] गुणोका अनुकरण करनेकी चेष्टा करें।

१. इस तारीखको गांधीजी कराइकुडीमें थे।

निखिल भी भव्य बालक प्रतीत होता है। उसको बहोत शारीरिक परिश्रम उठाने मत दीजीये।

ईश्वर आपको ज्ञान और शांति दे।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० १६५० की फोटो-नकलसे।

३१. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

आश्विन सुदी १ [२६ सितम्बर १९२७][1]

बहनो,

आजका पत्र तुम्हें रूखा नहीं लगेगा। मेरे मनमें जो बातें घूम रही थीं उन्हें लिखनेकी मैं हिम्मत नहीं करता था और सयानपनकी बातें लिखता रहता था। और जैसे मेरे पत्र थे वैसे ही तुम्हारे। वे जवाब ऐसे थे जो सयाने और व्यवहार-नीतिमें कुशल व्यक्तियोंको शोभा दे सकते हैं किन्तु जो हम साधारण स्त्री-पुरुषोंको शोभा नहीं देते। वे जवाब नहीं, बल्कि सरकारी पावतीकी तरह कोरी पावती-मात्र थे।

आज तो मैं तुम्हें वहाँ होनेवाले लड़ाई-झगड़ेके बारेमें लिखना चाहता हूँ। तुम्हारा एक-दूसरेमें विश्वास नहीं रहा, एक-दूसरेके प्रति आदर नहीं रहा और छोटी-छोटी खटपटें होती रहती हैं। यह हम दोनों जानते हैं। फिर भी उसके बारेमें लिखनेकी किसीकी हिम्मत नहीं होती थी। मुझे लगा कि इस नासूरको मुझे फोड़ना ही चाहिए। तुममें लड़ाई-झगड़े क्यों होते हैं? इस द्वेषभावका कारण कहाँ है? दोष किसका है? इन सब बातोंकी तुम जाँच करना।

धर्म तो यह कहता है कि जबतक मनुष्य अपने मैलको जमा करता है तबतक वह अपवित्र है; ईश्वरके पास खड़ा होने लायक नहीं है। इसलिए तुम्हारा पहला काम तो यह है कि जिसमें मैल हो, वह उसे प्रकट करके धो डाले। इस पत्रका कारण मणिबहन (पटेल) का अनायास लिखा हुआ पुर्जा है। उसके हिस्सेमें संकट-निवारणका काम आ गया, इसलिए वह भाग निकली। मगर उसने एक पुर्जेमें अपना सारा संताप उँड़ेल दिया। आश्रममें जो फूट फैली हुई है, उसे वह सह न सकी। देखो, चेतो और आश्रमको सुशोभित करो।

इस पत्रको पढ़कर जिस बहनको मुझे अलग पत्र लिखनेकी इच्छा हो वह अलगसे लिखे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६६८) की फोटो-नकलसे।

१. वर्षका निश्चय पत्रमें संकट-निवारण कार्य तथा आश्रमकी बहनोंके आपसी लड़ाई-झगड़ोंके उल्लेखके आधारपर किया गया है।

३२. भाषण : सिरुवयलमें

२७ सितम्बर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको ताड़पत्रोंपर अंकित यह अभिनन्दनपत्र भेंट करनेके लिए तथा प्रचुर मात्रामें सूत और यह थैली देनेके लिए धन्यवाद देता हूँ। मुझे यह कहनेकी जरूरत ही नही कि ताड़पत्रोंपर अभिनन्दनपत्र भेंट करनेका यह रिवाज बेहद अच्छा है। आप मुझसे लम्बे भाषणकी आशा न करे लेकिन मैं आपसे यह आशा करता हूँ कि चेट्टिनाडमें जो भाषण मै देता रहा हूँ उन्हे आप पढ़ें। इस आश्रमके लिए जरूर मै आपको बधाई देना चाहता हूँ। मै जानता हूँ कि आश्रमके कार्यकर्त्ता यदि पवित्र, स्वार्थहीन तथा आत्म-त्यागी हो तो ऐसा आश्रम कई तरहसे जन-कल्याणको प्रोत्साहन देगा। इसलिए मै आपसे आश्रमकी गतिविधियोमें रुचि लेनेको कहूँगा और यदि ये गतिविधियाँ स्वयं आपको अच्छी लगें तो आश्रमको आप हर तरहसे सहायता दें। मुझे मालूम है कि आश्रमका एक गुरुकुल है जहाँ बालक प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे है। आश्रम अन्त्यज बालकोंके लिए एक शाला भी चला रहा है, आसपासके गाँवोमें सफाई-कार्य कर रहा है तथा बालकोको कताई सिखा रहा है। ये सारी प्रवृत्तियाँ बहुत अच्छी है। इन सबमें अन्त्यजोके बीच कार्य करनेको मै सबसे महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। किसी विशेष परिस्थितिमें जन्म लेनेके कारण ही किसीको अन्त्यज मान लेना गलत है और अधर्म है। शिक्षा और हर प्रकारकी सुविधा प्राप्त करनेका अन्त्यज बालकोको भी उतना ही अधिकार है जितना दूसरे बच्चोको। इसलिए मैं चाहूँगा कि इस अस्पृश्यता-निवारण कार्यमें आपसे जितना सहयोग सम्भव हो उतना दें। मुझे अपने सामने ऐसे बच्चे दिखाई पड़ रहे है जो ठीक स्वस्थ प्रतीत नही होते। उन्हे अपने भोजनमें बढ़िया शुद्ध दूध मिलना चाहिए, और उन्हे खुली हवामें व्यायाम करना चाहिए तथा समय-समयपर उनका वजन भी लिया जाना चाहिए। मै यह भी देख रहा हूँ कि उनके बाल बढ़े हुए है, जो उचित नही है। व्यक्तिगत तौरपर तो मै इस बातसे सहमत हूँ कि सब लड़कोकी खोपडी घुटी हुई होनी चाहिए। ब्रह्मचारियोका बाल बढ़ाये रखना अपेक्षित नही है। मै लड़कोको खादी पहने हुए देख रहा हूँ, यह एक बहुत अच्छी बात है। लेकिन लड़कोसे सम्बन्धित हर बातका खयाल उनकी देखभाल करनेवालो को रखना चाहिए। लड़कोंके अभिभावकोका स्थान उनके शिक्षक लेते है इसलिए लड़कोके अच्छे स्वास्थ्य, उनके चरित्र तथा उनके मानसिक विकासका उत्तरदायित्व शिक्षकोपर ही है। मुझे अपने सामने कुछ लड़कियाँ भी दिखाई दे रही है जो बहुत ज्यादा और अरुचिकर ढगसे जेवर पहने हुई है। उनके कानोके ये भारी झुमके केवल भद्दे ही नही दिखाई दे रहे हैं बल्कि वे चेहरेके सारे रंग-रूपके समुचित विकासमें भी बाधा उपस्थित करते है। मै चाहता हूँ कि आपकी माताएँ ऐसे भद्दे और दिखावटी

जेवरोंका बहिष्कार करें। याद रखिए कि आपका सौन्दर्य आपके चरित्रमें निहित है, आपके जेवरों या आपकी पोशाकमें नही। आपके ये भद्दे और महँगे जेवर वास्तवमें आपके किसी कामके नहीं हैं। या तो इन्हें गला दीजिए या इन्हें बेचकर रुपया बचाइए या फिर इन्हें दरिद्रनारायणकी सेवाके लिए मुझ-जैसे किसी व्यक्तिको सौंप दीजिए। आपने खादी भी नही पहन रखी है। आप सबको चाहिए कि आप बिलकुल निर्मल हृदया सीताकी तरह बनें और सादी खादी तथा सादे जेवर पहनें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २९-९-१९२७

३३. भाषण: पागानेरीकी सार्वजनिक सभामें

२७ सितम्बर, १९२७

मुझे इस सभामें इतनी सारी बहनोंको, लगभग जितने पुरुष हैं, उतनी ही संख्यामें उपस्थित देखकर बहुत खुशी है। जैसा कि मैंने कराइकुडीकी महिलाओंकी सभामें या अन्यत्र बहनोंसे कहा है, आपने जिस आन्दोलनके लिए ये थैलियाँ दी है वह बुनियादी तौरपर भारतीय स्त्रियोंकी स्वतन्त्रताका आन्दोलन है। भारतकी स्वतन्त्रता तबतक एक असम्भव चीज रहेगी जबतक आपकी बेटियाँ आपके बेटोंके साथ स्वतन्त्रताकी लड़ाईमें कन्धेसे-कन्धा मिलाकर नहीं खड़ी होंगी, और भारतकी करोड़ों बेटियोंके लिए इस तरहके बराबरीके दर्जेपर पुरुषोंके साथ सहयोग करना तबतक सम्भव नही है जबतक उन्हें अपनी शक्तिका ठीक-ठीक भान नही होगा। भारतकी करोड़ों झोंपड़ियोंमें चरखा जिस दिन अपने गरिमामय स्थानपर अपने फलितार्थों सहित पुनः प्रतिष्ठित हो जायेगा उसी दिन स्त्रियोंको भारतके पुनरुद्धारमें अपने महत्त्वपूर्ण स्थान और अपनी शक्तिका ज्ञान हो जायेगा। क्योंकि तब वे पुरुषोंसे कह सकेंगी: "आप लोग अपने भोजन और वस्त्रके लिए जितना स्वयं अपने ऊपर निर्भर करते है उतना ही हमपर भी निर्भर करते है। हम आपका भोजन पकाती है, और हम वह सूत कातती है जिससे खादी तैयार होती है", तब नारीको वह गौरवमय स्थिति प्राप्त हो जायेगी जो उसका जन्मसिद्ध अधिकार है, और जिससे हम पुरुषोंने — अपनी नारी-जातिके प्रति गद्दारी करनेवाले हम पुरुषोंने — उसे वंचित कर दिया है। कारण, हमने अपनी मूढ़ता और अज्ञानवश अपनी हर कुटियासे चरखेको हटा दिया, और पश्चिमसे आनेवाले महीन सुन्दर कपड़ोंके मोहमें पड़ गये। हमें स्वर्णमुद्राओं और रुपयोंका जो लालच दिखाया गया उससे हम लोभमें पड़ गये, और चाहे या अनचाहे, जो भी हो, हमने अपनी बेटियों और बहनों और पत्नियोंको घोर अज्ञानके अन्धकारमें रखनेका षड्यंत्र किया और जिस शिक्षाकी वे अधिकारिणी थी उससे उन्हें वंचित किया। अपनी अज्ञानताके वश होकर हमने अपनी बेटियोंको उस अवस्थामें ही ब्याह दिया जब उनकी उम्र अभी हमारे साथ बहन और भाईकी तरह खेलनेकी थी। यह प्रथा बहुत दिनोंसे लगातार चलती आयी है; इसलिए आप स्वयं ऐसा मानने लगी कि तथाकथित ब्याह करके अपनी

बेटियोंको छोटी उम्रमें दूसरेके हवाले कर देना, और उन्हें घोर अज्ञानमें रखना अत्यन्त स्वाभाविक चीज है। चरखा इन घोर अन्यायोको दूर करनेके लिए है। चरखा स्त्रीको वह स्थान प्रदान करता है जिसकी वह अधिकारिणी है। वह स्त्री और पुरुष दोनोकी विवेक-बुद्धिको जगाता है, और भारतकी स्त्रियोंके प्रति अपने कर्त्तव्यको समझनेमें पुरुषोकी मदद करता है। यदि मेरे शब्द मेरे चारों ओर एकत्र आप भाई-बहनोके हृदयमें उतरे हों तो आप तुरन्त समझ जायेंगे कि जिस उद्देश्यकी खातिर मुझे ये थैलियाँ मिली है उस उद्देश्यके लिए मैं इन्हें पर्याप्त क्यों नही मानता। मै चाहता हूँ कि आप अपने दिमागसे यह खयाल निकाल दें कि मै कोई ऐसा महात्मा हूँ जिसे ईश्वरने शापके रूपमें आपके ऊपर थोप दिया है। लेकिन मै चाहता हूँ कि आप इस तथ्यको उसके पूरे अर्थके साथ समझ लें कि मै दरिद्रनारायणके एक आत्मनियुक्त विनम्र सेवक और प्रतिनिधिके रूपमें आपके सामने आया हूँ। मै चाहता हूँ कि आप समझ लें कि आपने मुझे जो-कुछ दिया है वह मेरे अहं और मेरी महत्वाकाक्षाकी तुष्टिके लिए नही दिया है, बल्कि उस दरिद्रनारायणका तन ढँकने और पेट भरनेके लिए दिया है जो प्रतिदिन, सुबह-शाम, वक्त-बेवक्त आपके दरवाजेको खटखटाता रहता है। मैं आपको उन भूख-पीड़ित करोड़ो लोगोके प्रति आपके कर्त्तव्यका ज्ञान कराने आया हूँ जिनके शोषणपर और जिनकी मेहनतपर मैं और आप रह रहे हैं। जबतक आप स्त्री और पुरुष दोनो खद्दर और केवल खद्दर ही नही पहनते तबतक मेरे निकट आपके रुपयों, आपके आभूषणो, आपकी अँगूठियो और आपके कण्ठहारोका भी कोई उपयोग नही है। चरखेके लिए थैलियाँ इकट्ठा करनेका काम तो एक स्वल्पकालिक और सक्रमणकालीन योजना है। जब भारतमें हर स्त्री और पुरुष खादीका उसी सहज रूपसे इस्तेमाल करने लगेगा जिस प्रकार वह भारतके मैदानोमें उत्पन्न होनेवाले अनाजका उपयोग करता है तब इन चन्दोकी उसी प्रकार कोई जरूरत नही रह जायेगी जिस प्रकार भारतमें चावल और गेहूँकी खेतीके प्रचारकार्यके लिए चंदेकी कोई जरूरत नही है। यह आपके हाथकी बात है कि आप इस सक्रमणकालकी अवधि खादीको अपनाकर जितनी चाहे उतनी कम कर दें; और हमारे वातावरणको चरखेकी भावनासे आप्लावित कर देनके लिए मेरे सामने बैठी आप सभी बहनोंके लिए जरूरी है कि आप चरखेको अपना लें, और यदि आप अपना लें तो चरखा आपकी पवित्रता और स्वतन्त्रताका प्रतीक बन सकता है। साथ ही चरखेको एक यज्ञके रूपमें अपनाना पुरुषोंके लिए भी उतना ही जरूरी है। मै खादीको तबतक सस्ता नही बना सकता और तबतक लोकप्रिय नही बना सकता जबतक मेरे पास कताई-कुशल लोगोकी एक ऐसी फौज नही हो जो गाँव-गाँवमें पहुँच सके और आवश्यक प्रशिक्षण देकर तथा सगठन कार्य करके चरखेको पुनः प्रतिष्ठित कर सके।

और अब मैं उन सामाजिक सुधारोंके बारेमें फिर वही बात दोहराऊँगा जो मैंने तमिलनाडुमें अन्य स्थानोंपर बार-बार कही है। ये सुधार हमारे हाथो होनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। पुरुषोंका जीवन शुद्ध बनना चाहिए। पुरुषका अपनी पत्नीके प्रति निष्ठावान होना उतना ही पवित्र कर्त्तव्य है जितना कि पत्नीका पतिके प्रति निष्ठावान

होना। तथाकथित शास्त्रोंमें से भले ही कुछ भी प्रमाण दिये जायें, लेकिन किसी पुरुषका एकसे अधिक पत्नीका रखना गलत है। बेटियोंको विवाहकी आड़में बेचना गलत है। किसी घरमें बाल-विधवा होना एक पाप है। बाल-विवाह कोई विवाह नहीं होता और यदि आप यह बात माननेके लिए तैयार नहीं हैं तो किसी बालिकाका विवाह करना भी उतना ही बड़ा पाप है। हमारे लड़कों और लड़कियोंको अशिक्षित रखना भी गलत है और मैं इसे एक जघन्य अपराध मानता हूँ कि किसी एक भी व्यक्तिको केवल इस कारण अस्पृश्य माना जाये कि वह एक समुदाय-विशेष या परिवार-विशेषमें पैदा हुआ है। यदि हमारे अन्दर सच्चा जागरण हुआ होता तो हम इन सामाजिक बुराइयों तथा गन्दगी और अस्वच्छताकी समस्याओंसे जो हमारे चारों ओर — हमारे इतने पास — विद्यमान हैं और हमारा मुँह देख रही हैं, अवश्य निपटते।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २९-९-१९२७

३४. तार : मीराबहनको

मदुरै
२८ [सितम्बर, १९२७][1]

मीराबाई
द्वारा हिन्दी प्रचार
मद्रास

तुम कैसी हो। ईश्वर तुम्हें शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक रूपमे स्वस्थ बनाये। सस्नेह।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२७७) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. इस दिन गांधीजी मदुरैमें थे। देखिए अगला शीर्षक भी।

३५. पत्र : मीराबहनको

२८ सितम्बर, १९२७

चि० मीरा,

यहाँ पहुँचनेपर मैं तुम्हें प्रेम-सन्देश[१] भेजे बिना नहीं रह सका। तुम्हें चला जाने देनेके बाद मुझे बहुत दुख हुआ। मैं तुम्हारे प्रति बहुत कठोर रहा हूँ लेकिन इसके अलावा मैं कुछ कर ही नहीं सकता था। मुझे मानो एक ऑपरेशन करना था और इसके लिए मैंने अपने-आपको दृढ़ बना लिया था।[२] अब हमें आशा करनी चाहिए कि सब ठीक-ठाक हो जायेगा तथा सारी कमजोरी दूर हो जायेगी।

तुम्हारे खोये हुए दो पत्र मुझे अभी-अभी मिले है लेकिन उनके बारेमें फिर लिखूँगा। मैं यह पत्र डाकका समय होते-होते लिख रहा हूँ। तुम्हें मेरे बारेमें किसी प्रकारकी भी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२७८) से।
सौजन्य : मीराबहन

३६. भाषण : मदुरैकी सार्वजनिक सभामें

२८ सितम्बर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको अभिनन्दनपत्रों तथा थैलियोंके लिए धन्यवाद देता हूँ। मैं इन हाथकते सूतकी लच्छियोंके देनेवालोंको भी धन्यवाद देता हूँ तथा आपको हाथकते और हाथ-बुने कपड़ेके उन तीन टुकड़ोंके[३] लिए भी धन्यवाद देता हूँ जिन्हें यहाँ प्रदर्शित नहीं किया गया है। ये मुझे आज सुबह भेंट किये गये थे, और मैं उनका इस समय उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता। यदि समय रहा, और आप धीरज रखेंगे तो ये खादीके टुकड़े आपके सामने रखे जायेंगे और एक विशेष मूल्यपर उन्हें खरीदके लिए भी प्रस्तुत

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. मीराबहनने इस घटनाका वर्णन इस प्रकार किया है: "अपने कामपर वापस जानेसे पहले मैं बापूको एक बार देखे बिना नहीं रह सकी। लेकिन इस समय मैंने बड़ी भारी गलती की। मुझपर काफी फटकार पड़ी और मुझे एकदम साबरमतीके लिए रवाना कर दिया गया।" देखिए द स्पिरिट्स पिल्ग्रिमेज।

३. इन्हें टी० सी० चेल्लम् अय्यंगारने भेंट किया था।

किया जायेगा। मैं तो अपने ही मनसे अपने-आपको दरिद्रनारायणका प्रतिनिधि मान बैठा हूँ, इसलिए ये खादीके टुकड़े, जो बहुत ही कलात्मक, बहुत बारीक तथा बहुत लम्बे हैं मेरे निजी इस्तेमालके योग्य नहीं हैं। मैं उन्हें कलाके बहुत सुन्दर नमूने मानता हूँ, और अगर मैं आपको लुभा सकूँ तो इस बातके लिए लुभाना चाहूँगा कि आप इन्हें मुझसे लेकर अपने सुन्दर नगरमें बहुमूल्य संग्रहके रूपमें रखें। कराइकुडीमें मुझे घरके बुने और घरके कते खादीके दो टुकड़े मिले थे और मैंने उनमें से एक टुकड़ेको १००१ रुपये और दूसरेको १०१ रुपयेमें बेचा था।[1] मैं इन बातोंका जिक्र आपको यह बतानेके लिए कर रहा हूँ कि मदुरैने अबतक जितना-कुछ किया है, उससे कहीं ज्यादाकी उम्मीद मैंने मदुरैसे की थी। इससे पता चलता है कि आप लोग, जो इससे कहीं ज्यादा कर सकते थे, चरखेके पूरे महत्त्वको नहीं समझ पाये हैं।

मैं आपको उस दृश्यकी याद दिलाऊँगा जो आजसे लगभग सात वर्ष पूर्व अपने मित्र, सहकर्मी और साथी, मौलाना मुहम्मद अलीको वाल्टेयरमें छोड़कर मेरे मदुरै आनेपर मेरे सामने उपस्थित हुआ था। लेकिन अब समय बदल गया है। वह समय था कि जब मैं वाल्टेयरसे मदुरैकी यात्रा कर रहा था, तब आपने और हजारों अन्य लोगोंने उनकी अनुपस्थितिको लक्षित किया था, और इसके कारण बहुत लोगोंकी आँखोंमें आँसूतक आ गये थे। आज लोग न केवल इस बातको लक्षित नहीं करते कि मेरे साथ वे या अन्य कोई मुसलमान साथी नहीं है, बल्कि यदि मैं अपने साथ किसी मुसलमान साथीको लेकर चलूँ तो आप मेरे साहस और मेरी धृष्टतापर आश्चर्य करेंगे। आज हिन्दूका हाथ मुसलमानके गलेपर है और मुसलमानका हाथ हिन्दूके गलेपर। लेकिन हमारे सरपर उमड़ते इन भयंकर काले बादलोंके बावजूद यदि आपकी इस प्राचीन नगरीमें मैं हिन्दू-मुस्लिम एकताकी सम्भावना और आवश्यकता-में अपना दृढ़ अपरिवर्तनीय विश्वास नहीं दुहराऊँगा तो मैं अपने ईश्वर और अपने देशके सामने बेईमानी करूँगा। जितने निश्चित रूपसे मैं जानता हूँ कि मैं यहाँ बैठा हुआ हूँ उतने ही निश्चित रूपसे मैं यह भी जानता हूँ कि हमारी समस्त योजनाओंको ईश्वरकी कृपा प्राप्त होगी और वह इसी भयंकर फूटमें से एकता पैदा करने जा रहा है। इसलिए आपमें से जिन लोगोंके मनमें वैसी ही आस्था प्रज्वलित है जैसी कि मेरे मनमें है, उनसे मैं कहूँगा कि वे भी मेरे साथ हृदयसे ईश्वरसे प्रार्थना करें कि वह हमारे हृदयोंको साफ करे और इस संतप्त देशको शान्ति प्रदान करे।

इसके अलावा उस अवसरकी एक घटना और है जिसकी याद मैं चाहूँगा कि हम ताजा करें। आपको याद होगा कि ईश्वरसे विनय पूर्वक प्रार्थना करके वह स्मरणीय रात्रि आपके बीच गुजारनेके पश्चात् मैंने अपने करोड़ों भूखे भाइयोंके साथ और घनिष्टता स्थापित करनेके उद्देश्यसे एक परिवर्तन किया था। यह परिपवर्तन मैं मानता हूँ कि बहुत नगण्य था लेकिन इसके बावजूद मेरे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण था। वाल्टेयरमें प्रस्तुत होनेवाले सजीव दृश्योंको मनमें लिये हुए जब मैं मदुरै आ रहा था और रास्तेमें अनेक स्टेशनोंपर मिलनेवाले हजारों लोगोंसे जब मैं कमसे-कम विदेशी वस्त्रोंका त्याग करके खादी पहनने-

१. गांधीजीको खादीके ये टुकड़े देवकोट्टामें मिले थे, जिन्हें उन्होंने कराइकुडीमें बेचा था।

को कह रहा था तो एक या एकाधिक गरीब लोगोंने मुझसे रोष व्यक्त किया और मुझे बताया कि उनके पास खादी खरीदनेको पैसा नहीं है। हालाँकि जहाँतक मुझे अब याद है, मैं ऐसा नहीं मानता कि हर व्यक्तिने जो उत्तर मुझे दिये, वे ईमानदारीसे दिये थे, लेकिन मैंने उन कुछ गरीब लोगोंकी बातकी सचाईको स्वीकार किया जिनके तन चिथड़ोंसे ढँके हुए थे। तब मैंने अपने साथ यात्रा करनेवाले साथियोंसे उस परिवर्तनके औचित्यपर चर्चा की, जिसके बारेमें मैं आपको बताने जा रहा हूँ। वह रात मैंने, क्या करना चाहिए, इसीका निश्चय करते और ईश्वरसे मार्गदर्शनकी प्रार्थना करते हुए बेचैनीसे गुजार दी। और अगली सुबहसे मैंने मनमें निश्चय कर लिया कि कमसे-कम एक वर्षके लिए मैं साधारण कुरता और धोतीका त्याग कर दूंगा, जिसे मैं उस समय पहना करता था, और जितनी छोटी लँगोटीसे अपना काम चला सकूँगा उतनी छोटी लँगोटीसे सन्तोष करूँगा।[1] वह वर्ष तो खत्म हो गया, लेकिन परिवर्तनकी आवश्यकता देखते हुए वह परिवर्तन बना ही हुआ है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि उस परिवर्तनका तबतक कोई महत्त्व नहीं है जबतक वह अन्दर होनेवाले परिवर्तनका प्रतीक न हो। लेकिन मैं भारतमें जितना ही घूमा हूँ और जितना ही मैंने इस प्राचीन देशके सात लाख गाँवोंमें फैले करोड़ों ग्रामवासियोंकी गरीबी और कंगालीपर विचार किया है, अपने अन्दर इस प्रकारके परिवर्तनको अपनानेकी आवश्यकताको मैंने उतना ही अधिक महसूस किया है, क्योंकि मैं जन-साधारणका प्रतिनिधि होनेका दावा करता हूँ। और यदि आप मेरे साथ इन गाँवोंमें चलें, जहाँ कंगालीका नंगा रूप आप देखेंगे तो आप मेरी तरह स्वीकार करेंगे कि आपके वस्त्रोंमें बहुत-कुछ ऐसा फाजिल है, जिसे त्याग देनेकी आवश्यकता है।

नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रमें[2] मुझे बताया गया है कि आपके स्कूलोंमें काफी हदतक कताई सफल रही है। नगरपालिकाको मैं इस सफलताके लिए बधाई देता हूँ, लेकिन मैं आपके प्रति ईमानदारी बरतनेके खयालसे आपको बता दूँ कि इससे मुझे कोई सन्तोष नहीं है। यदि भारतके चन्द नगरों और कस्बोंमें रहनेवाले लोग यह अनुभव कर लें कि उनका जीवन, उनकी सुख-सुविधाएँ, बल्कि उनका सारा अस्तित्व इन करोड़ों अर्द्ध-क्षुधित लोगोंपर निर्भर है तो वे खादी और चरखेको महज वक्त गुजारनेका एक शगल नहीं समझेंगे, ऐसी चीज नहीं मानेंगे जिसके लिए यदि वे कुछ करते हैं तो किसीपर मेहरबानी करते हैं। याद रखिए कि भारतका शहरी जीवन अन्य देशोंसे प्राप्त धनके भरोसे नहीं चलता। भारत चूँकि एक कृषि-प्रधान देश है, इसलिए अपने शहरोंको बनाये रखनेके लिए उसे गाँवोंसे ही प्राप्त होनेवाली चीजोंपर पूरी तरह निर्भर रहना पड़ता है। और भारतकी गरीबीकी समस्याका तथा इस गरीबीकी समस्याको आंशिक रूपसे भी हल करनेके लिए सुझाये गये विविध उपायोंका ध्यानपूर्वक अध्ययन करनेके बाद मैं इस नतीजेपर आया हूँ कि कोई भी तरीका उपयोगिताकी दृष्टिसे चरखेके पासतक नहीं पहुँचता। और मेरी विनम्र रायमें शहरोंमें रहने-

१. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ २३४-३६।

२. इससे पूर्व गांधीजीको मदुरैकी नगरपालिकाकी ओरसे एक अभिनन्दनपत्र दिया गया था और उसका उत्तर उन्होंने सार्वजनिक सभामें दिया।

वालोंका यह पवित्र कर्त्तव्य है कि गाँववाले शहरोंके लिए जो-कुछ करते हैं, उसके बदलेमें वे कुछ थोड़ा-सा प्रतिदान दें। मेरी विनम्र रायमें भारतकी दिनोंदिन गहरी होती गरीबीकी समस्या, हिन्दू-मुस्लिम एकताकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समस्या या इन भागोंमें ब्राह्मण और अब्राह्मणकी कठिन समस्यासे भी कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। ये प्रश्न तो अन्ततः भारत-रूपी समुद्रकी सतहपर मामूली-सी लहरोंकी भाँति ही हैं। गाँव इन प्रश्नोंसे अछूते और अप्रभावित रहते हैं। इसलिए आप मुझे रात-दिन केवल खादीके बारेमें बात करते, केवल चरखेका स्वप्न देखते, और देशमें होनेवाले इन उथल-पुथलोंके बावजूद अपने उद्देश्यपर अटल और दृढ़ देखते हैं। काश मैं हर ब्राह्मण, हर अब्राह्मण, हर मुसलमानको इस बातपर कायल कर सकता कि जिन प्रश्नोंका मैंने उल्लेख किया है, उनके बारेमें उसके विचार कुछ भी क्यों न हों, लेकिन आपमें से हरेकका प्रथम कर्त्तव्य मेहनतकश जन-साधारणके प्रति है।

मेरे नाडार[1] मित्रोंने अपने अभिनन्दनपत्रमें बताया है कि हालाँकि उन्हें चरखेके सन्देशमें विश्वास है, लेकिन मुझे जो धन दिया जा रहा है उसके समुचित वितरण और उपयोगके बारेमें उन्हें गम्भीर शंकाएँ हैं। वे मुझे बताते हैं कि उन्होंने एक तमिल अखबारमें पढ़ा है कि कुप्रबन्धके कारण या भगवान जाने किन कारणोंसे, करीब एक लाखसे ऊपर रुपये बरबाद हो गये। अपने मानपत्रमें इस बातका उल्लेख करनेके लिए मैं उनको सचमुच धन्यवाद देता हूँ। और जिस संगठनके जरिये मैं खादीका प्रचार-कार्य कर रहा हूँ और जिसके जरिये इन रुपयोंका उपयोग किया जा रहा है, यदि वह संगठन रुपयोंके उपयोगके बारेमें असावधान या अक्षम पाया जाता है तो मैं स्वीकार करता हूँ कि इस कार्यके लिए एक पाई भी देना व्यर्थ है और हानिकारक भी; और मुझे खुशी है कि इन रुपयोंके उचित वितरणमें शंका व्यक्त करते हुए उन्होंने थैलीके लिए चन्दा देनेसे इनकार कर दिया है। लेकिन मुझे इन मित्रोंको और आप सब उपस्थित लोगोंको यह सूचित कर सकनेमें खुशी है कि रुपयोंका कोई अपव्यय नहीं हुआ है। यह भी याद रखिए कि अखिल भारतीय चरखा संघ केवल तीन वर्ष पहले ही स्थापित हुआ है। इससे पूर्व खादीका काम अन्य कामोंके साथ-साथ कांग्रेसके संगठनों द्वारा किया जाता था। लेकिन इसके बावजूद एक लाख रुपयेकी कोई गड़बड़ी नहीं हुई है। निःसन्देह अन्य संगठनोंकी तरह इस संगठनमें भी बहियोंपर ऐसी बहुतसी लेनदारियाँ चढ़ी हुई हैं, जिनके वसूल होनेकी उम्मीद कम ही है। हमें सभी प्रकारके आदमियोंसे पाला पड़ता है। सभी प्रकारकी सावधानियाँ बरतने और मुचलके लेनेके बावजूद, कुछ लोग बेईमान सिद्ध होते हैं। और यदि आप एक भी पाई देनेसे पहले यह अपेक्षा करें कि खादी संगठन शत-प्रतिशत सफल बनकर दिखाये तो मुझे भय है कि संगठनको बन्द कर देना पड़ेगा। मुझे अपने ३५ वर्षके सार्वजनिक जीवनमें कई संगठनोंका नियन्त्रण और संचालन करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। लेकिन मैं आपसे कह दूँ कि बिना कोई हानि उठाये एक भी संगठनका संचालन करना मेरे लिए सम्भव नहीं हुआ है। लगभग बीस वर्षकी वकालतके दौरान मैं हजारों

१. तमिलनाडुकी एक जाति।

व्यापारी मुवक्किलोंके सम्पर्कमें आया और मैं ऐसे एक भी व्यापारीसे नही मिला जिसकी बहियोमे वसूल न हो सकने लायक कुछ-न-कुछ लेनदारियाँ दर्ज नहीं रही हों। और यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि जहाँतक प्रबन्धका प्रश्न है, यह खादी संगठन दुनियाकी अच्छीसे-अच्छी और बड़ीसे-बड़ी व्यापारिक फर्मकी तुलनामें बराबर बैठेगी। यह संगठन करीब दो लाख रुपयेकी पूँजीसे चल रहा है। यह सारे भारतमें पन्द्रह सौ गाँवोंकी सेवा कर रहा है, और करीब ५० हजार कतैयोंको भोजन मुहैया कर रहा है। यह कतैयोंको औसतन एकसे डेढ़ रुपये प्रतिमाह उपलब्ध कराता है। और यह संगठन इन कतैयोंके केवल उस फालतू समयका ही इस्तेमाल करता है जब उनके पास कोई और काम नही होता। खादीके कामके विकासके लिए आवश्यक पाँच हजार बुनकरो, रंगरेजों और धोबियोंको यह काम देता है। प्रान्तीय तथा केन्द्रीय हिसाबका लेखा-जोखा समय-समयपर एक सार्वजनिक लेखा-परीक्षक करता है। और इन हिसाबोंकी जाँच चन्दा देनेवाले या न देनेवाले, दोस्त या दुश्मन सभी कर सकते है। और यदि अब आपको यह भरोसा हो गया हो कि यह अनुष्ठान अच्छा है और जो लोग इस अनुष्ठानका संचालन कर रहे है वे विश्वसनीय और भरोसेके योग्य है तो मै आपसे कहता हूँ कि आप थैलियोंके मुँह खोलिए और कमसे-कम नहीं, बल्कि ज्यादासे-ज्यादा जो दे सकते हैं, वह दीजिए। और कृपया याद रखिए कि आपके चन्दे ही सब-कुछ नही है। आपके चन्दे कितने ही उदार क्यों न हों, लेकिन जबतक आप खादी नही पहनते, वे चन्दे बेकार हैं। मै खादी पहननेका आपसे आग्रह करता हूँ, क्योकि वह इन कतैयों और बुनकरोंकी मेहनतसे बनी चीज है।

अब मै विद्यार्थियोंके अभिनन्दनपत्रका संक्षेपमें उत्तर दूंगा। छात्र मुझे बताते है कि वे हिन्दी नही सीख सकते, क्योकि उनके पास समय नही है और क्योंकि वे शिक्षाको केवल व्यवसायकी दृष्टिसे ही देखते है अतः उन्होंने हिन्दी न जाननेके लिए तथा अपना अभिनन्दनपत्र अंग्रेजीमें ही देनेके लिए क्षमा माँगी है। जिस तरह खादीकी सकल्पना करोड़ो लोगोंके हितको ध्यानमें रखकर की गई है, उसी तरह हिन्दीकी संकल्पना भी करोड़ों लोगोंकी सुविधाको ध्यानमें रखकर की गई है। अतः मुझे छात्रोंके अभिनन्दनपत्रमें यह निराशावादी भावना देखकर दुःख हुआ है। जिस देशके नौजवान आशा छोड़ बैठें, उस देशका भविष्य खराब ही समझिए। छात्रोंको समझ लेना चाहिए कि सच्ची शिक्षा कालेजकी पढाई या हाई स्कूलके अहातेमें नही मिलती, बल्कि बाहर मिलती है। संसारमें जितने भी सफल व्यक्ति हुए है, यदि आप उनका इतिहास जाँचें तो पायेंगे कि उन्होने जीवनकी जरूरी बातें वास्तवमें स्कूलके बाहर सीखी थी। और यद्यपि भारत एक गरीब देश है, फिर भी मैं यह बात स्वीकार करनेसे इनकार करता हूँ कि शिक्षाको व्यवसायकी दृष्टिसे देखना चाहिए। छात्र यह याद रखें कि वे इस मानव-रूपी समुद्रमें एक बूँदके समान हैं। वे यह भी याद रखें कि करोड़ों ऐसे लोग है, जिन्होंने कभी स्कूल या कालेजमें कदम नहीं रखा है, फिर भी वे ईमानदारीसे सम्मानपूर्वक जीविका कमा रहे है। उन्हें यह भी समझ लेना चाहिए कि लोग छात्रोंके लिए यह एक कलंककी बात मानते है कि स्कूलों या कालेजोंसे निकलकर

अधिकांश छात्र किसी सरकारी विभाग या व्यावसायिक फर्ममें क्लर्की करनेका ही स्वप्न देखते हैं। मैं इसे शिक्षाका दुरुपयोग मानता हूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि शिक्षा-प्रणाली बिलकुल सड़ी हुई है। लेकिन स्थितिको यथावत् स्वीकार करते हुए मैं छात्रोंको यह समझानेका प्रयत्न करता रहा हूँ कि यदि वे समय रहते विचार करें तो उनके लिए इन विपरीत परिस्थितियोंमें भी अपनी सहायता आप कर सकना सम्भव है। इसीलिए मैं उनसे कहता हूँ कि करोड़ों लोगोंसे प्राप्त करें, बल्कि वास्तवमें राजस्वके उस अनैतिक साधन — आबकारी-कर — के बलपर चलनेवाले इन स्कूलोंमें जाते हुए भी वे लोग खादी और चरखेको अपनाकर ग्रामवासियोंको थोड़ा प्रतिदान दे सकते हैं। इसी प्रकार मैं कहता हूँ कि यदि वे अपनेको विंध्य-पर्वतमालाके दक्षिणमें पड़नेवाले भू-भागका ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारतका नागरिक समझते हैं और यदि वे विंध्यपर्वतके उत्तरमें रहनेवालोंके साथ जीवन्त सम्बन्ध रखना चाहते हैं तो उन्हें हिन्दी सीखनी चाहिए। इसपर वे जवाब देते हैं कि मद्रास विश्वविद्यालयकी सिनेटको सभी स्कूलों और कालेजोंमें हिन्दीकी शिक्षा अनिवार्य कर देनी चाहिए। मैं इस जवाबकी सचाईको स्वीकार करता हूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि सभी पाठ्यक्रमोंमें हिन्दीको एक दूसरी भाषाके रूपमें लागू करना सिनेटका कर्त्तव्य है। लेकिन मैं इस कथनका समर्थन करनेसे कतई इनकार करता हूँ कि छात्र बिलकुल साधनहीन और लाचार महसूस करें और जबतक सिनेट यह आवश्यक सुधार लागू न कर दे तबतक हाथपर-हाथ धरे बैठे रहें। यहाँ मदुरैमें आपके यहाँ एक हिन्दी प्रचार कार्यालय है। आपमें से किसीके लिए भी हिन्दी सीखनेकी पूरी छूट है, और यदि आप दिनमें एक घंटा भी देंगे तो देखेंगे कि आपके लिए हिन्दी सीखना आश्चर्यजनक रूपसे सरल है। और यदि आपको अपनी शिक्षाका व्यावसायिक उपयोग ही करना है तो आपमेंसे कुछ लोग देखेंगे कि जिस प्रकार अंग्रेजीका व्यावसायिक उपयोग है उसी प्रकार इस देशमें हिन्दीका भी व्यावसायिक उपयोग है। लेकिन मुझे मालूम हुआ है कि हिन्दी कार्यालयको भी आप स्वावलम्बी नहीं बना सके हैं। मैं इस कमीकी ओर मदुरै नगरपालिका और यहाँके नागरिकोंका ध्यान आकृष्ट करता हूँ। निश्चय ही यह एक ऐसा कार्य है जिसके लिए प्रतिवर्ष कुछ सौ रुपयेका प्रबन्ध कर पाना आपके लिए कठिन नहीं होना चाहिए।

अब मुझे उन अन्य समस्याओंकी चर्चा करनी चाहिए, जो इस देशके सामने खड़ी हैं। मैं नगरपालिकाको यह कह सकनेके लिए बधाई देता हूँ कि जहाँतक उसके स्कूलों और कार्यालयोंका सम्बन्ध है, अस्पृश्यता नामकी कोई चीज उनमें नहीं है। और मुझे यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि आपके स्कूलोंमें कुछ हजार आदिद्रविड़ लड़के और कुछ सौ आदिद्रविड़ लड़कियाँ भी पढ़ती हैं। लेकिन क्या मैं यह भी कह सकता हूँ कि नगरपालिकाके लिए उनके हितार्थ और भी बहुत-कुछ कर सकना सम्भव है। क्या आपने उनके लिए अच्छे आवासोंकी व्यवस्था की है? क्या आप उनके घर-बार की देख-रेख करते हैं, क्या आप उनकी उन बुरी आदतोंकी फिक्र करते हैं जो उन्हें इसीलिए लग गई हैं कि हम उन लोगोंकी घोर उपेक्षा करते रहे? क्या आप उन्हें शराब पीनेकी लतसे मुक्त करनेकी कोशिश कर रहे हैं? और जो एक बात मैं तमिल-

नाडुके सारे दौरेमें कहता रहा हूँ, उसे मै यहाँ फिर दोहराना चाहूँगा अर्थात् यह कि हम चाहे ब्राह्मण हो या अब्राह्मण हो, अथवा कुछ भी हों, बाल-पत्नी और बाल-विधवाके सवालपर विचार करना हमारे लिए नितान्त आवश्यक है। मुझे कुछ पत्र मिले है, जिनमें मुझसे कहा गया है कि जहाँतक दक्षिण भारतका सम्बन्ध है, मैं बाल-विधवाओंके प्रश्नपर अपने विचारोंपर फिरसे गौर करूँ। लेकिन मुझे अपनी रायपर पुनर्विचार करनेका कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता। मै समझता हूँ कि हममें जो विचारवान स्त्री और पुरुष है, वे तबतक चैनसे नही बैठ सकते जबतक समाजमें हमारे लिए कलंक-स्वरूप एक भी बाल-विधवा मौजूद है। लोकमतका नेतृत्व करनेवालोंके लिए यह भी अत्यन्त जरूरी है कि वे देवदासी-जैसी घृणित और अनैतिक प्रथाको समाप्त करायें। हमें इस पापको धर्मकी आड़ देकर अपनी धार्मिक भावनाका अपमान नही करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-९-१९२७

३७. नीलकी प्रतिमा और अहिंसा

एक गुजराती भाईने अपने मित्रको, जो मेरे भी मित्र हैं, लिखे पत्रमें निम्न प्रकारकी शंका उठाई है:

> बापूकी अहिंसा तो कभी-कभी मुझे हैरानीमें डाल देती है। जिस प्रकार उन्होंने लॉरेंसकी प्रतिमा हटवानेके आन्दोलनको प्रोत्साहन दिया था उसी प्रकार अब नीलकी प्रतिमा हटवानेके लिए चलाये जा रहे आन्दोलनको वह प्रोत्साहन दे रहे हैं। मुझे तो यह बात बहुत-कुछ हिंसा-जैसी दीखती है, क्योंकि आन्दोलनसे अंग्रेजोंके प्रति घृणा उत्पन्न होगी और बापू इसी चीजसे बचना चाहते है। और जहाँ मुझे कोई हिंसा दिखाई नही देती, वहाँ वह हिंसा देखते हैं — उदाहरणके लिए, शस्त्रास्त्र अधिनियमको हटवानेके लिए लोगोंका शस्त्रास्त्र लेकर चलना। मुझे तो लगता है कि पहले उदाहरणमें ऊपरसे अहिंसात्मक दिखनेवाले उपायसे हिंसाकी भावना भड़क उठनेकी पूरी आशंका है; और बापूके अनुसार इससे बचना चाहिए। दूसरे उदाहरणमें एक सदुद्देश्यको प्राप्त करनेके लिए हिंसाकी बहुत कम आशंका या सम्भावना है — और मै तो मानना चाहूँगा कि यही वह चीज है, जिसका खतरा उठाना बापूको पसन्द होना चाहिए।

इन भाईके तर्कके साथ न्याय किया जा सके और पाठक उसे आसानीसे समझ सकें, इसलिए मूल गुजरातीमें स्पष्ट रूपसे पेश की गई दलीलको मैंने कुछ बढ़ाकर साफ कर दिया है।

अहिंसा किंचित् दृढ़तर तत्त्वसे बनी हुई चीज है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि नीलकी प्रतिमा हटवानेके आन्दोलनसे और ऐसे ही दूसरे कार्योंसे अंग्रेजोंके प्रति

घृणाकी भावना बढ़नेकी सम्भावना है। अहिंसाका प्रचार करनेकी कोशिश करनेवाले सुधारकको इस बातकी ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए और घृणासे बचनेकी कोशिश करनी चाहिए, लेकिन उसे किसी भी हालतमें घृणाके कारणोंको छिपानेकी हिमाकत नहीं करनी चाहिए। प्रेमके रूपमें अहिंसा संसारकी सबसे सक्रिय शक्ति है। जैसा कि गुजराती कवि शामलने कहा है: "भलाईके बदले भलाई करनेमें क्या बड़प्पन है? वैसा तो बहुतेरे करते हैं। बड़प्पन तो बुराईके बदले भलाई करनेमें है।" स्पष्ट ही यहाँ बड़प्पन अहिंसाका पर्याय है। घृणाके कारण तो हमें सर्वत्र दिखाई देते हैं। प्राचीन ऋषि-मुनियोंने देखा कि इस परिस्थितिका एकमात्र उपाय प्रेमके बलपर घृणाको निष्प्रभाव बना देना है। इसलिए, प्रेमकी यह शक्ति तो वास्तवमें तभी निखरती है जब उसका साबका घृणाके कारणोंसे पड़ता है। सच्ची अहिंसा घृणाके कारणोंकी उपेक्षा नहीं करती, उनकी ओरसे आँखें बन्द नहीं करती, बल्कि उन कारणोंके अस्तित्वकी जानकारी होनेके बावजूद उन कारणोंको प्रस्तुत करनेवालोंपर अपना असर दिखाती है। यदि बात ऐसी नहीं होती तो स्वराज्यके लिए अहिंसात्मक तरीकोंसे संघर्ष करना असम्भव ही होता। कारण, स्वराज्यके लिए लड़नेवालोंको तो हर कदम-पर विदेशी शासन और विदेशी शासकोंके दोष दुनियाके सामने प्रकट करने ही हैं। तो अहिंसाके नियममें अर्थात् बुराईके बदले भलाई करने, अपने शत्रुसे भी प्रेम करनेके इस नियममें 'शत्रु' के दोषोंका ज्ञान होना जरूरी है। इसीलिए शास्त्रोंमें कहा है: "क्षमा वीरस्य भूषणम्।"

अब शायद यह स्पष्ट हो गया होगा कि अहिंसावादीको नीलकी प्रतिमा और ऐसी ही दूसरी प्रतिमाओंको हटवानेके आन्दोलनका समर्थन क्यों करना चाहिए। लेकिन, शस्त्र लेकर चलना किसी अहिंसावादीके लिए वांछनीय नहीं है, क्योंकि उससे शस्त्रोंका उपयोग करनेकी अपेक्षा नहीं की जाती। और मेरे विचारसे शस्त्रास्त्र अधिनियमको बिलकुल खत्म करवा देनेके उद्देश्यको कभी भी एक उचित उद्देश्य नहीं माना जायेगा। इसलिए शस्त्रास्त्र अधिनियमको समाप्त करवानेके लिए शस्त्रास्त्र लेकर चलनेके आन्दोलनका अहिंसाकी किसी भी योजनामें कोई स्थान नहीं हो सकता।

अब शायद नीलकी प्रतिमा हटवानेके आन्दोलनपर जरा बारीकीसे विचार करना जरूरी है। उस प्रतिमाके पाद-पीठके मुख-भागपर खुदा हुआ अभिलेख इस प्रकार है:

जेम्स जॉर्ज स्मिथ नील
महारानीके ए० डी० सी०
मद्रास फ्यूज़िलियर्सके लेफ्टिनेंट कर्नल
भारतमें ब्रिगेडियर जनरल
प्रथम प्रतापी पुरुषके रूपमें सर्वमान्य,
एक बहादुर, दृढ़निश्चयी, आत्मविश्वासी सेनानी
जिन्होंने बंगालमें विद्रोहकी आगको शान्त किया।
२५ सितम्बर, १८५७ को ४७ वर्षकी अवस्थामें
लखनऊकी रक्षा करते हुए वीरगतिको प्राप्त हुए।

पाद-पीठके पृष्ठभागपर खुदा हुआ अभिलेख इस प्रकार है:

१८६० में सार्वजनिक चन्देसे स्थापित।

मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि ये बातें झूठी हैं। इन अभिलेखोंमें झूठा इतिहास अंकित है। इस समय मेरे पास [इतिहासकार] के या मैलेसनकी जिल्दें नहीं हैं, लेकिन एक भाईने मेरे लिए कहींसे टॉमसनका ज्ञानवर्धक प्रबन्ध 'द अदर साइड ऑफ द मेडल' ला देनेकी कृपा की है। इस पुस्तकसे प्रकट होता है कि हमें स्कूलों और कॉलेजोंमें किस तरह गलत इतिहास पढाया जाता है। पुस्तकसे मैं निम्न अंश उद्धृत कर रहा हूँ।

> जब मेजर रेनॉड कानपुरके छुटकारेके लिए एक अग्रिम रक्षक-दलको लेकर तेजीसे आगे बढ़े, उस समय उन्हें जनरल नीलकी ओरसे निम्नलिखित निर्देश मिले:
>
> "कुछ दोषी गाँवोंको नष्ट कर देनेके लिए चुन लिया गया है, और उन गाँवोंमें रहनेवाले तमाम पुरुषोंको कत्ल कर देना है। विद्रोही रेजीमेंटोंके जो सिपाही अपनी ठीक सफाई पेश न कर पायें, उन्हें फाँसीपर लटका देना है। फतेहपुर शहरपर, जिसने विद्रोह किया था, आक्रमण करना है और पठानोंके घरोंको उनके निवासियों सहित नेस्तनाबूद कर देना है। सभी विद्रोहियोंके सिर, विशेषकर फतेहपुरके विद्रोहियोंके, काटकर ऊँचे स्थानोंपर लटका देना है। यदि डिप्टी कलक्टर पकड़ लिया जाये तो उसे फाँसी दे दो और उसके सिरको काटकर शहरकी किसी मुख्य (मुसलमानकी) इमारतपर लटका दो।"
>
> के के अनुसार:
>
> नीलके कारनामोंको छोड़ भी दें तो जब नीलने एक मेजरको कानपुरकी ओर भेजा, उस समय निस्सन्देह लोगोंको बड़ी ही बेरहमीसे मौतके घाट उतारा गया। और बादमें नीलने जो-कुछ किया, वह कत्लेआमसे भी भयानक था। उसने लोगोंको जानबूझकर ऐसी यातनाएँ देकर मारा जैसी यातनाएँ देकर मारनेका अपराध वतनियोंके खिलाफ कभी साबित नहीं हुआ।
>
> सर जॉर्ज केम्बेल कहते हैं: नील उन व्यक्तियोंमें से है, जिसे औरताना किस्मकी बहादुरी दिखानेके बूतेपर ही वीरपद प्राप्त हो गया है और जिसकी मृत्यु हो जानेके कारण उस समय उसके आलोचकोंका मुँह बन्द हो गया। लेकिन अब चूँकि वह विगत इतिहासका विषय बन चुका है, इसलिए मैं कह सकता हूँ कि जहाँतक मैं अत्यन्त निष्पक्ष सूत्रोंसे जान पाया हूँ, उसमें कोई खास खूबी नहीं थी। . . . नीलने जो नृशंसतापूर्ण कृत्य किये उसके लिए मैं उसे कभी माफ नहीं कर सकता हूँ और विशेषकर जिस गड़बड़ीके कारण हम लुधियानाकी रेजीमेंट खो बैठे, उस गड़बड़ीमें उसका जो हाथ था, उसके लिए। इलाहाबादमें अपनी नृशंसता और अविश्वासी प्रकृतिके कारण उसने फिरोजपुर रेजीमेंटको (जिसके वफादार सिपाहियोंके लिए मेरे हृदयमें लगभग

इतना ही स्थान है जितना कि लुधियाना रेजीमेंटके सिपाहियोंके लिए है) लगभग हमारे खिलाफ ही कर दिया था, यद्यपि बादमें उसी रेजीमेंटने बड़ी अद्‌भुत सेवा की।

जिस 'वीर' के सम्मानमें 'सार्वजनिक चन्दे' से यह स्मारक खड़ा किया गया है, उसके असली चरित्रको प्रकट करनेके लिए उद्धरणोंके अलावा और भी बहुतसी चीजें हैं, लेकिन यहाँ उन सबका हवाला दे पाना सम्भव नहीं है। ऐसी प्रतिमाएँ अपशकुनकी सूचक हैं। वे इसके स्पष्ट प्रमाण हैं कि अंग्रेजी सरकारका दारोमदार अन्तत: किस चीजपर है। अर्थात् उसका दारोमदार आखिरकार आतंक और झूठपर ही है। ये शब्द कठोर जरूर हैं, लेकिन साथ ही उतने ही सत्य भी हैं। इसलिए प्रत्येक भारतीय, प्रत्येक सच्चे अंग्रेजका यह कर्त्तव्य है कि वह अपनी समस्त शक्तिसे इस आतंक और झूठका विरोध करे। लेकिन अपनी समस्त शक्तिसे विरोध करनेका तरीका प्रतिशोधकी भावनासे काम लेना नहीं है, आतंक और झूठका जवाब आतंक और झूठसे देना नहीं है। उसका तरीका तो इन दोनोंका उत्तर इन दोनोंके ठीक विपरीत आचरण करके, अर्थात् आतंकका उत्तर अहिंसासे और झूठका सत्यसे देना है। यह रास्ता कठिन हो सकता है, लेकिन यदि भारत और दुनियाको कायम रहना है तो यही एक मात्र रास्ता है। इसलिए जिन नौजवानोंने संघर्ष छेड़ा है, वे यदि ईमानदारीके साथ उसपर अहिंसापूर्वक आरूढ़ रहेंगे तो वे सम्पूर्ण सहानुभूतिके पात्र हैं और यह बहुत प्रसन्नताकी बात है कि स्थानीय कांग्रेस कमेटीने इस मामलेको बड़े उत्साहसे अपने हाथमें लिया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-९-१९२७

३८. वेदोंमें गो-बलि

२ जूनके 'यंग इंडिया' में श्रीयुत सी० वी० वैद्यका एक लेख प्रकाशित हुआ था जिसमें गाय और गो-वंशकी रक्षाके बारेमें कुछ मूल्यवान सुझाव दिये गये थे। किन्तु उस लेखमें विद्वान लेखकने अपना यह मत व्यक्त किया था कि वैदिक कालमें गायकी बलि देने और गो-मांस खानेकी प्रथा प्रचलित थी। पण्डित सातवलेकरने वैदिक कालमें गो-बलि और गो-भक्षणके बारेमें श्रीयुत वैद्यके कथनका खण्डन करते हुए मुझे हिन्दीमें एक लेख भेजा है। चूंकि मेरा मंशा कोई अखबारी विवाद खड़ा करनेका नहीं बल्कि केवल सत्यको प्रकाशमें लानेका था, अत: मैंने उस लेखको श्रीयुत वैद्यके पास भेज दिया। उन्होंने सौजन्यतापूर्वक तत्काल अपना उत्तर मुझे भेजा। मैंने इस उत्तरको पण्डित सातवलेकरके पास भेज दिया, और उन्होंने अपना प्रत्युत्तर मुझे भेजा। अब मैं पण्डित सातवलेकरके लेखोंका महादेव देसाई द्वारा किया गया अनुवाद[1] और श्रीयुत वैद्यके उत्तरका मूल पाठ देता हूँ। पण्डित सातवलेकरने वैदिक धर्म शीर्षकसे अपने दो

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

लेखोंमें अपने मतके समर्थनमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत और व्यापक तर्क दिये है जिनके प्रमाणमें उन्होंने वेदोंमें से बहुतसे उद्धरण भी प्रस्तुत किये हैं। मैं जिज्ञासुओंको इन मूल्यवान लेखोंको पढ़नेकी सलाह देता हूँ। वेदोंका स्वयं मैंने अध्ययन नहीं किया है अतः मैं इस उत्तम नियमका पालन कर रहा हूँ कि जहाँ तनिक भी सन्देह हो वहाँ सही बातकी तरफ ही झुकना चाहिए, और इस मामलेमें यही विश्वास सही है कि जिन लोगोंने हमें 'वेद' दिये हैं वे गो-बलि देने या गो-भक्षण करनेके, जो कि हमारे युगमें अपराध प्रतीत होते है, दोषी नहीं थे। अन्यथा इस चर्चाका वर्तमान युगसे कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि हिन्दू हृदयमें गायके प्रति इतनी गहरी श्रद्धा है कि वैदिक युगमें गो-बलि या गो-भक्षण सिद्ध करनेवाले किसी भी मतका, भले ही वह कितना ही प्रामाणिक क्यों न हो, उस श्रद्धापर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। तथापि उन लोगोंके लिए, जो ऐसा मानते है कि प्राचीन कालमें जो-कुछ होता था उसे इस युगमें भी हर वैध तरीकेसे आरम्भ कराया जाना चाहिए, इस चर्चाका महत्त्व केवल बौद्धिक ही नहीं है। ऐसे लोग पण्डित सातवलेकरके जिन लेखोंका मैंने उल्लेख किया हैं उन्हें, तथा श्रीयुत वैद्यके प्रकाशित निबन्धोंको, जो अंग्रेजीके साथ ही मराठी और हिन्दी भाषामें भी उपलब्ध हैं, पढ़ लें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २९-९-१९२७

३९. पत्र : मीराबहनको

[२९ सितम्बर, १९२७][1]

चि० मीरा,

यह सिर्फ यही बतानेको लिख रहा हू कि तुम्हारा खयाल मेरे दिलसे हट नहीं सकता। सख्त ऑपरेशनके बाद हर डाक्टर ठण्डक पैदा करनेवाला मरहम लगाता है। यह मेरा मरहम है।

रामदासको बता देना कि उसका पत्र अभी-अभी मिला है। उसे जल्दी स्वस्थ हो जाना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२७९)से।
सौजन्य : मीराबहन

१. डाककी मुहरसे।

४०. भाषण: सौराष्ट्र क्लब, मदुरैमें[1]

२९ सितम्बर, १९२७

मैं आपके सुन्दर अभिनन्दनपत्र तथा आपकी थैलीके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। इस दौरेमें मुझे जो अभिनन्दनपत्र मिले है, मुझे याद नहीं आता कि मैंने उनमें से किसीके लिए "सुन्दर" विशेषणका इस्तेमाल किया हो। मैं आपके अभिनन्दनपत्रको जिस कारणसे सुन्दर कहता हूँ, वह शायद आप न समझ पाये हों। मैने उसे सुन्दर इसलिए कहा है कि आपने उसे मुझे मूल रूपमें दिया है और वह आपकी बोलीमें लिखा हुआ है जो कि मराठी और गुजरातीका मिश्रण है। इससे पता चलता है कि आप अपनी पुरानी विशेषताओंको भूले नहीं हैं। ऐसा नहीं कि मैं बिना किसी भेद-भावके अपनी सभी पुरानी चीजोंसे प्यार करता हूँ। जहाँ वे खराब हैं, अनैतिक हैं, हानिप्रद हैं, वहाँ हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम उन्हें नष्ट कर दें, भुला दें। लेकिन अपनी भाषा या बोलीको न छोड़ना कभी बुरी चीज नही है। और आखिरकार, महान मराठी भाषा और गुजराती भाषा आजकी जीवन्त भाषाएँ है, जिनका उपयोग ऐसे लोग करते हैं जो हमारे देशके इतिहासपर अपनी छाप छोड़ रहे है। और मुझे इस बातकी भी खुशी है कि आपने देवनागरी लिपिको बनाये रखा है।

और इसलिए मुझे आपके अभिनन्दनपत्रसे यह जानकर और अधिक खुशी हुई है कि आपके हाईस्कूलमें, जिसमें छात्रोंकी अच्छी संख्या है, हिन्दीको एक वैकल्पिक भाषा बना दिया गया है। चूँकि मैं उत्तर और दक्षिण तथा पूर्व और पश्चिमके बीच किसी किस्मकी दीवारको स्वीकार करनेको तैयार नहीं हूँ, इसलिए आप सब तमिल जानें, यह बात मुझे बहुत पसन्द आयेगी, लेकिन यह तो एक अतिरिक्त उपलब्धि, एक अतिरिक्त शोभा होनी चाहिए और इसका ज्ञान हिन्दीकी कीमतपर नही प्राप्त करना चाहिए। इसलिए मै चाहूँगा कि आपकी समिति आपके हाईस्कूलमें हिन्दीको अनिवार्य विषय बनानेका निश्चय करे। और चूँकि मैं आपसे हिन्दीके महत्त्वको अपने दक्षिणके भाइयोंकी अपेक्षा ज्यादा समझनेकी अपेक्षा करता हूँ, इसलिए मैं चाहूँगा कि आप हिन्दीमें विशेष योग्यता प्राप्त करें और आपके नगरमें जो हिन्दी आन्दोलन चल रहा है, आप उसकी आर्थिक सहायता करें। इस नगरमें आप एक सुगठित, ऐक्यबद्ध, कर्मठ और उद्यमशील समुदायके रूपमें रह रहे है। इसलिए आपके लिए इस जिम्मेदारीको ओढ़ लेना आसान है, और इस प्रकार आपको उत्तरके[2] लोगोंके सरसे हिन्दी प्रचारका वह बोझ हटा लेना चाहिए जो वे अभीतक वहन करते रहे है।

१. इस भाषणके कुछ अंश १३-१०-१९२७ के यंग इंडियामें "द फैलेसी ऑफ़ हैंडलूम वीविंग" शीर्षकसे प्रकाशित हुए थे।

२. मूलमें "साउथ" (दक्षिण) था।

आपने राजकोटके साथ अपने सम्बन्धका जो उल्लेख किया है उसने मुझे छू लिया है, क्योंकि मेरी तरुणावस्था वहीं बीती है। लेकिन कृपया याद रखें कि इस प्रकारके सम्बन्धका दावा करना कठिन चीज है, क्योंकि ऐसा करके आप अपने ऊपर मेरी उन सारी प्रवृत्तियोंके सम्बन्धमें ज्यादा जिम्मेदारी ले रहे हैं, जो आपके ध्यानमें लाई जायें। इतने अधिक नातेदारों और सम्बन्धियोका उपयोग ही क्या है यदि संकटके समय आदमी उनका सहारा न ले सके। लेकिन अगर आप चाहें तो आपके लिए मुझसे और घनिष्ठ नातेदारीका दावा कर सकना सम्भव है। कारण यद्यपि मुझे एक ऐसे पिताकी सन्तान होनेका गर्व है जो एक रियासतका दीवान था, लेकिन यदि सम्भव हो तो मुझे इस बातका ज्यादा गर्व है कि मैं आपका ही एक बुनकर भाई बन गया हूँ। क्योंकि जहाँ मेरे पिता अपने अधीन थोड़े समयके लिए रखी गई एक छोटी-सी रियासतकी तकदीरका ताना-बाना बुन रहे थे, आप और मैं यदि चाहें तो बुनाईके उस पेशेसे इस महान देशका भविष्य बुन सकते है जो आपका पुश्तैनी धन्धा है, लेकिन जिसे मैंने स्वेच्छासे अपना धन्धा बना लिया है। और आपके साथ अपनी इस अधिक गर्व कर सकने योग्य नातेदारीका स्मरण आपको दिलाकर मैं अपने पिताकी पुण्य स्मृतिका कोई अनादर नही कर रहा हूँ, क्योंकि ज्यादातर बड़ी संख्यामें लोगोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेका प्रयत्न करके मै उन्हीके चरण-चिह्नोपर चल रहा हूँ। और मेरे साथ इस घनिष्टतर नातेदारीकी दावेदारी मुझे आपके अभिनन्दनपत्रके एक महत्त्वपूर्ण अनुच्छेदपर ले आती है।

आप अपने अभिनन्दनपत्रमें कहते हैं कि मैं विदेशी सूत या मिलके सूतकी हाथ-बुनाईको प्रोत्साहन दूँ, क्योंकि आपको बुननेके लिए जिस मात्रामें और जैसे बारीक सूतकी आवश्यकता होती है, उस मात्रामें और उतना बारीक हाथ-कता सूत नही मिलता। अब मैं एक सह-बुनकर होनेके नाते आपको बताऊँगा कि मै आपकी सिफारिशका समर्थन क्यों नही कर सकता। मैं आपको यह समझा सकनेकी उम्मीद करता हूँ कि यदि मै आपकी सिफारिशका समर्थन करूँ तो वह आपके लिए और उस वर्गके लिए हानिप्रद होगा जिसका खयाल मेरे मनमें है और आपके मनमें भी होना चाहिए। आप लोग अच्छे और चतुर व्यवसायी हैं, इसलिए आपको समझ सकना चाहिए कि कोई भी ऐसा बुनकर, जो विदेशी मिलों या देशी मिलोंका सूत भी बुनता है, पूरी तरह मिलोकी दयापर आश्रित हो जाता है। बनकरोके नाते आपको समझ लेना चाहिए कि आप लोग आज जो हाथ-बुनाईको कुछ हदतक अपने नियन्त्रणमें रखते है, वह उस दिन आपके हाथसे निकल जायेगी जिस दिन दुनियाकी या भारतकी मिलें उस तरहके कपड़े बुनने लायक हो जायेंगी, जिस तरहके कपड़े अभीतक सिर्फ आप ही बुन रहे हैं। यदि आपको इस तथ्यका पहलेसे ही पता न हो तो मैं आपको सूचित कर दूँ कि ससार-के कई मिल-मालिक उस तरहके कपड़े बुननेके लिए प्रयोग कर रहे है, जिस तरहके कपड़ेकी बुनाईपर आज आपका एकाधिकार है। इसमें मिल-मालिकोका कोई दोष नही है कि मिल उद्योग दिनोंदिन आपके हाथोंसे यह एकाधिकार छीनकर इस उद्योगको पूरी तरह अपने हाथमें लेनेकी कोशिश कर रहा है। बराबर अपनी मशीनोंमें उन्नति करना

और दुनियाकी हस्तकलाओंके क्षेत्रमें अपना पैर फैलाते जाना ही इन बड़े उद्योगपतियोंका उद्देश्य और आदर्श है। बल्कि सच तो यह है कि इस उद्योगको भी आपके हाथोंसे ले लेनेकी कोशिश करना स्वयं उद्योगपतियोंके अस्तित्वके लिए आवश्यक है। यदि बुनकर मेरे अनुभवसे फायदा नहीं उठाते तो कताई-उद्योगका जो हाल हुआ है, वही हाल बुनाई-उद्योगका भी होना निश्चित है। आप नही जानते, और भारतमें बहुत कम लोग जानते हैं, इसलिए मैं आपको बता दूँ कि जो-कुछ आप आज कर रहे हैं, मैंने भी उसीसे शुरुआत की थी। मै १९१५ में पहली बार बुनकर बना। मैंने आपको बताया कि मै पहले बुनकर और बादमें कतैया हूँ। मैंने इन्ही हाथोंसे विदेशी सूत और अपनी मिलोंका सूत बुना है। लेकिन इस धन्धेका रहस्य आपसे ज्यादा जाननेका दावा करनेके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। जब मैं अपने करघेपर बैठा — मै बता सकता हूँ कि ठीक किस जगहपर बैठकर मै कपड़ा बुन रहा था — यह भी बता दूँ कि मै निश्चय ही उतना बढ़िया नही बुन रहा था जितना कि आपमेंसे कोई बुन सकता है — उस समय मैं सोच रहा था कि यदि मिलें इस प्रकारका कपड़ा स्वयं बुन सकने योग्य हो जायें तो मै, और हजारों और दसियों हजार बुनकर कहाँ जायेंगे, क्या करेंगे।' और जब मै यह बात सोच रहा था तो मेरा मन हमारे गाँवोंकी लाखों भूखी बहनोंकी ओर गया, और मै बुनाई करते-करते इन बहनोंकी दशाके बारेमें सोचने लगा। मै दुखी और खिन्न हो उठा और अपने साथियोंके साथ किसी ऐसे कतैयेकी खोजमें जुट गया जो हमें कातना सिखा दे; और मैंने यह जाननेकी भी कोशिश की कि क्या कोई ऐसा गाँव है, जहाँ कताई अब भी होती हो। मुझे उस समय इस बातका कोई पता नही था कि पंजाबमें कुछ बहनें हैं जो कताई करती हैं। लेकिन मेरे मनमें निराशा छाई जा रही थी। मैं गुजरातकी एक वीर विधवा महिलाकी[1] शरणमें गया। वह अस्पृश्योंकी सेवामें लगी थी। मैंने अपना यह गहरा दुख इन महान बहनको बताया। और मैंने उनपर यह काम सौंपा कि वे गुजरातमें जगह-जगह जायें और तबतक चैनसे न बैठें जबतक वे ऐसी बहनोंको न पा जायें, जिन्हें कताई-कला अभी भी आती हो। और यही बहन थी, जिन्होंने गुजरातमें बीजापुर नामक स्थान पर कुछ ऐसी मुसलमान बहनोंको ढूँढ़ निकाला जो इस शर्तपर कातनेको तैयार थीं कि गंगाबहन उनसे सूत खरीद लें। उसी क्षणसे महान पुनरुद्धारका वह कार्य आरम्भ हुआ जो आज भारतमें १५०० से अधिक गाँवोंमें चल रहा है। और इसी खोजके बाद मैंने निश्चय किया कि मैं अपने आश्रममें, जिसका कि में प्रधान था, विदेशी या मिलके बने सूतका एक धागा भी नहीं बुनूंगा।

मैं आपके विचारार्थ एक और महत्त्वपूर्ण बात सामने रखता हूँ। यदि आप भारतमें बुनाई आन्दोलनके इतिहासको पढ़ें तो आप देखेंगे कि इस समय कई हजार बुनकरोंको मजबूर होकर अपना धन्धा छोड़ना पड़ा है। ये सभी बुनकर, आप ही के हमपेशा ये सौराष्ट्री लोग, आज बम्बईमें भंगियोंका काम कर रहे हैं। पंजाबके बुनकरोंमें से कुछ किरायेके सैनिक बन गये हैं, और कुछने कसाईका पेशा अपना लिया है। और

१. गंगाबहन मजमूदार; देखिए **आत्मकथा**, भाग ५, अध्याय ३९ और ४०।

शायद अब आप समझ जायेंगे कि मैं आपकी सिफारिशकी ताईद क्यों नही कर सकता। इसके मतलब यह नही है कि आप आजसे बुनाईका काम छोड़ दें। आपको मेरे प्रोत्साहनकी जरूरत नही है। लेकिन मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि यह खुद आपके हितमें नही है कि जिस आन्दोलनको आज मैं विनम्रतापूर्वक संचालित कर रहा हूँ उस आन्दोलनके साथ मिलके सूतकी बुनाईको भी मिला देनेके लिए आप मुझसे कहें। और यह आपके हितमें भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है कि आप इस आन्दोलनका समर्थन करें ताकि जब यह समृद्ध, सुदृढ़ और स्थायी बन जाये तो आपमेंसे हरेकको सम्मानजनक जीविका मिल सके। इसलिए मैं आपसे कहूँगा कि यदि यह हाथ-कताईका आन्दोलन गति पकड़ता गया तो सम्भव है कि यह आपके लिए सहायक सिद्ध होगा।

लेकिन अब इस गड़बड़ीके[1] बीच मुझे अपना भाषण लम्बा नही करना चाहिए, लेकिन मैं आपका ध्यान मद्यपानकी बुराईकी तरफ खींचे बगैर नही रह सकता। जैसा कि मुझे मालूम हुआ है, इस बुराईके कारण आपके समाजकी शक्तिका दिन-दिन क्षय हो रहा है। आपको इस बुराईसे मुक्त होनेके लिए जबर्दस्त प्रयास करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-१०-१९२७

४१. पत्र : मीराबहनको

३० सितम्बर, १९२७

चि० मीरा,

डाक आने ही वाली है लेकिन डाक निकलनेका समय भी हो रहा है। आज मुझे तुम्हारा पत्र मिलनेकी पूरी आशा है। यह मत सोचो कि तुम्हें सप्ताहमें एक बारसे अधिक नही लिखना चाहिए।

सप्रेम,

तुम्हारा,
बापू

रामदासके लिए[2]

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८०) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. पानी बरसने लगा था।
२. देखिए अगला शीर्षक।

४२. पत्र : रामदास गांधीको

[३० सितम्बर, १९२७][1]

चि० रामदास,

तबीयत अब ठीक हो गयी होगी। वल्लभभाईकी अनुमति लेकर अमरेली अवश्य जाओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५२८०-२) से।
सौजन्य : मीराबहन

४३. भाषण : महिलाओंकी सभा, मदुरैमें

३० सितम्बर, १९२७

महात्माजीने भाषणका आरम्भ करते हुए महिलाओंको उनके अभिनन्दनपत्र तथा थैली, और अनेक लड़कियों तथा महिलाओं द्वारा दी गई सूत और अन्य चीजोंकी भटके लिए धन्यवाद दिया। इसके बाद उन्होंने उपस्थित महिलाओंसे कहा कि वे हिन्दी सीखें जो उत्तर भारतकी उनकी बहनोंकी बोलचालकी भाषा है।

महात्माजीने कहा, आप लोग याद रखें कि आपने यह थैली मुझे मेरे निजी इस्तेमालके लिए नहीं दी है, बल्कि अपनी करोड़ों भूखी बहनोंके लिए दी है। आप जिस आराममें रहती हैं, उसे देखते मुझे विश्वास है कि आपके लिए अपनी हजारों बहनोंकी कष्टकर गरीबीकी कल्पना करना कठिन होगा। इन बहनोंको एक वक्त खाना भी मुश्किलसे मिलता है। हमारी ऐसी बहनें हैं, जिनके पास अपना तन ढँकनेके लिए पर्याप्त कपड़ा भी नहीं है। मैंने ऐसी कुछ गरीब बहनोंसे बात की है, जिनके पास तनके कपड़ेको छोड़ दूसरा कपड़ा नहीं है और जिसके कारण वे बिना नहाये ही गुजारा करनेपर मजबूर हैं। यह तो कहनेकी जरूरत ही नहीं कि उनके पास कोई गहना-जेवर नहीं है। वे शायद घी, तेल या दूधका स्वाद भी नहीं जानती हैं। करोड़ों बहनोंके पास सालमें चार महीने कोई काम नहीं होता। मैंने जो-कुछ बताया है, उसपर शायद आपको विश्वास न हुआ हो, लेकिन मैं आपसे सच कहता हूँ कि कई विदेशियोंने भी ये चीजें देखी हैं और उनके बारेमें लिखा है। इन्हीं बहनोंके लिए आज मैंने आपसे थैली स्वीकार की है। यह रुपया उनके बीच दान

१. यह पत्र मीराबहनको लिखे इसी तारीखके पत्रकी पीठपर है।

या भीखके रूपमें नहीं बांटा जायेगा, बल्कि उनसे जो सूत कातनेको कहा जायेगा, उसके पारिश्रमिकके रूपमें उन्हें दिया जायेगा। उन बहनोंको चरखा और रुई दी जायेगी, और उनसे कता हुआ सूत खरीदा जायेगा। इसलिए मैं चरखेको हमारी गरीब बहनोंकी दशा सुधारनेका सबसे बड़ा साधन मानता हूँ। चरखा उन्हें आशाकी किरण दिखायेगा और उनमें आत्मसम्मानकी भावना उत्पन्न करेगा। चरखा भारतके करोड़ों लोगोंको एक सूत्रमें बांधनेका साधन बनेगा। आप लोग केवल चन्दा देकर ही सन्तुष्ट न हो जायें, क्योंकि अगर आप खद्दर नहीं पहनेंगी तो यह रुपया व्यर्थ होगा। अगर आपको अपनी गरीब बहनोंसे सहानुभूति है तो आप उनके हाथका कता और बुना खद्दर ही पहनें। पहली नजरमें ऐसा लग सकता है कि सभी विदेशी कपड़ोंका त्याग करना कठिन है, लेकिन अगर कोशिश करेंगी तो पायेंगी कि यह बहुत ही आसान चीज है। अगर आप सीताकी तरह बनना चाहती हैं तो मैं आपसे बहुमूल्य कपड़े और गहने छोड़ कर केवल खादी पहननेको कहूँगा। लेकिन आप अपने गहने दें, इससे पहले मैं एक शर्त लगाना चाहूँगा, और वह यह कि आप अपने माता-पिता या पतियोंसे नये गहनोंकी मांग नहीं करेंगी। महात्माजीने कहा कि तीन या चार साल पहले मुझे एक महिलाने पन्द्रह हजार रुपयेके गहने भेंट किये थे। मैं चाहता हूँ कि न केवल आप गहने न पहनें, बल्कि अपने बच्चोंको भी खतरेमें न डालें। क्योंकि मुझे पता चला है कि अभी कुछ ही दिन पहले मदुरैमें एक घटना हुई, जिसमें एक सम्भ्रान्त व्यक्तिकी लड़कीके गहनोंको कुछ लुटेरोंने लूट लिया। मैं आपसे यह भी याद रखनेको कहना चाहता हूँ कि नारीका सौन्दर्य गहनोंमें नहीं है, बल्कि हृदय शुद्ध रखनेमें है। आपको यह सचाई अपने बच्चोंको भी सिखानी चाहिए और उन्हें उचित शिक्षा देकर अपने चरित्रका निर्माण करना सिखाना चाहिए।

मैं यह भी कहूँगा कि किसी व्यक्तिको केवल इसलिए अस्पृश्य समझना कि वह किसी परिवेश-विशेषमें पैदा हुआ है, पाप है। यदि आप सीताका अनुकरण करना चाहें तो आप देखेंगी कि सीताने निषादराजको भी अस्पृश्य नहीं माना था, बल्कि उन्होंने निषादराजकी सेवाओंको खुशीसे और कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया था। इसलिए मुझे यह कहनेमें कोई हिचक नहीं है कि अस्पृश्यताकी बुरी प्रथा समाप्त होनी ही चाहिए।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात, जिसके विषयमें मैं आपसे बात करना चाहता हूँ, बाल-विवाहके सम्बन्धमें है। आपको समझना चाहिए कि लड़कियोंको नौ वर्ष, बारह वर्ष, यहाँतक कि तेरह वर्षकी आयुमें भी ब्याह देनेकी प्रथा बर्बरतापूर्ण है। ऐसी चीजको मैं अनैतिक भी समझता हूँ, और आपसे आग्रह करता हूँ कि जबतक लड़की सोलह वर्षकी न हो जाये तबतक उसका विवाह नहीं किया जाना चाहिए, और न उसके सामने ऐसी परिस्थितियाँ आने देनी चाहिए जिससे उसके मनमें विवाहका खयाल भी उठे। मगर हिन्दू शास्त्र कहते हैं कि लड़कियोंको वयस्क होनेसे पहले ब्याह देना चाहिए तो

में आपसे कहूँगा कि आप शास्त्रोंकी बातपर भी ध्यान न दें। महात्माजीने अपनी देखरेखमें रहनेवाली कुछ लड़कियोंका उदाहरण देते हुए बताया कि हालाँकि इनमें से कुछकी उम्र सत्रहसे बीस वर्षकी है, लेकिन अभीतक इन लड़कियोंके मनमें विवाहका खयाल भी नहीं आया है। इसके विपरीत कुछ लड़कियाँ अच्छी शिक्षा प्राप्त कर रही हैं और इस समय उनमें से कुछ-एक गुजरातमें बाढ़-पीड़ितोंकी सहायताका काम कर रही हैं। मैंने भी यह निश्चय कर लिया है कि जबतक ये लड़कियाँ मुझसे नहीं कहती कि वे शादी करना चाहती हैं तबतक मैं उनके विवाहके बारेमें नहीं सोचूंगा। लेकिन मैं आपसे कहूँगा कि यदि आप खादीको अपना लें तो ये सब बुराइयाँ खत्म हो जायेंगी। क्योंकि खादीकी भावना आपको शुद्ध और उदात्त बनायेगी। आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि आप जो थोड़ा-सा सूत कातेंगी, इससे क्या बनता है। आपको तो यह सोचना चाहिए कि थोड़े-से सूतसे भी देशके धनमें वृद्धि होगी। इस बातको ध्यानमें रखते हुए मैं चाहूँगा कि आप सब दरिद्रनारायणके लिए खादीको अपनायें और सूत कातें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-१०-१९२७

४४. भाषण : तिरुमंगलम्‌में

३० सितम्बर, १९२७

मित्रो,

मुझे अभिनन्दनपत्र और थैली भेंट करनेके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। अपने अभिनन्दनपत्रमें आपने बताया है कि यह स्थान कपासके केन्द्रोंमें से एक है। आप कहते हैं कि यहाँ बहुत-से गरीब कातनेवाले हैं और अगर पर्याप्त प्रोत्साहन मिल जाये तो करीब १००० चरखे चलाना सम्भव है। निस्सन्देह कताई आन्दोलन ऐसी प्रत्येक स्त्रीको काम देनेकी दृष्टिसे चलाया गया है जिसके पास खाली समय है और जो काम करके चंद पैसे कमाना चाहती है। आपने मुझसे कहा कि इस सारे सूतके लिए जो एक दर्जन व्यक्तियों द्वारा तैयार किया जा सकता है, बाजार ढूंढ़ना आपके लिए सम्भव नहीं है। इससे यह जाहिर होता है कि आपके यहाँ या आपके ताल्लुकेमें पर्याप्त कार्यकर्त्ता नहीं हैं। आपने मुझसे कहा है कि मैं इस स्थानको दूसरा तिरुपुर बनानेके लिए प्रयत्न करूँ। लेकिन मैं आपको यह बता दूं कि तिरुपुर जो-कुछ बना है वह अपने परिश्रमसे बना है। तिरुपुर जिस रूपमें आज है वह रूप उसे मैंने या अखिल भारतीय चरखा संघके किसी सदस्यने नहीं दिया है। बेशक यह सच है कि अ० भा० च० संघ यहाँके आरम्भिक कार्यकर्त्ताओंके कामके फलका लाभ उठानेके लिए आ पहुँचा है। यह एक जरूरी कार्य है जिसे यूनियन बोर्ड कर सकता है, और उसे करना भी चाहिए

और यदि आपके पास कार्यकर्त्ता है तो कोई वजह नही कि यहाँ काते गये सारे सूतको बाजारमें न बेचा जा सके। और यदि आप और आगे बढ़कर खादी कार्य करे तो मुझे यकीन है कि स्थानीय बाजार आपको पर्याप्त प्रतीत नही हो सकता। इन स्थानोपर उत्पादित कपड़ेकी कीमतें बुने गये कपड़ेकी किस्मके मुताबिक अ० भा० च० सघ द्वारा निर्धारित की जायेंगी। मै देशके इन सब भागोमें जो यात्रा कर रहा हूँ वह केवल थैलियाँ इकट्ठी करनेके लिए नही बल्कि खादीके प्रचार-कार्यके लिए कर रहा हूँ।

मै चाहूँगा कि जो बहनें यहाँ बैठी है वे मेरे भाषणके इस अंशको सुनें। इस गरीब देशमें लाखो ऐसे पुरुष और स्त्रियाँ है जो वर्षमें चार महीने खाली बैठे रहते है। रेलवे लाइनके नजदीक होनेके कारण आप उन गरीब लोगोंके मुकाबले आधे गरीब भी नही है जिनके लिए मै यह यात्रा कर रहा हूँ और जिनकी ओरसे आज रात मै आपके सामने बोल रहा हूँ। वे इतने गरीब है कि सरकार द्वारा प्रकाशित रिपोर्टोमें भी यह कहा गया है कि कुछ लोग ऐसे है जो भोजनके अभावमें भूखो मर रहे है। आशा है आप ऐसा सोचनेकी गलती नही करेंगे कि यदि रेलवे लाइनोको भारतके हरेक गाँवके निकट पहुँचा दिया जाये तो यह दुखद समस्या हल हो जायेगी। यदि आप रेलोके इतिहासका अध्ययन करे तो आपको यह मालूम होगा कि हमारी यह रेल प्रणाली केवल गाँवोंका शोषण कर रही है और उन्हें बिलकुल चूसे डाल रही है। संसारमें रेलोका होना जरूरी है और वे लोगोके लिए लाभकारी भी हो सकती है, लेकिन यह देश मुख्य रूपसे एक कृषि प्रधान देश है और इसलिए ग्रामीणोंके लिए रेलें भारस्वरूप है। यदि आप खादी पहनें — ऐसी खादी जिसे गरीब ग्रामवासियोंने तैयार किया हो — तो हमारे द्वारा उनका जो शोषण हो रहा है उसका यह प्रतिदान होगा। मै यहाँ एकत्रित सभी पुरुषों और स्त्रियोसे कहता हूँ कि वे विदेशी वस्त्र त्याग दें तथा हाथकती और हाथबुनी खादीके अतिरिक्त और कुछ न पहनें। मै इस थैलीको केवल एक शर्तपर स्वीकार करता हूँ और वह यह है कि आप सब लोग भविष्यमें केवल खादीका ही इस्तेमाल करेंगे। मै यहाँ बैठी हुई स्त्रियोसे चाहूँगा कि वे इस बातको समझें कि कताई आन्दोलन अनिवार्य रूपसे स्त्रियोंका आन्दोलन ही है। मेरे लिए तो चरखा भारतीय नारीकी मुक्तिका प्रतीक है और इसलिए मै चाहूँगा कि आप इस प्रयत्नमें मुझे केवल अपना रुपया या जेवर देकर ही नही बल्कि खादी पहन कर भी सहयोग दें। यदि अपने घरेलू काममें आप कताईकी जरूरत न समझती हो तो आप इसे यज्ञ समझकर कर सकती है। यदि आप ऐसा करेंगी तो इससे देशकी सम्पदामें वृद्धि होगी और खादीकी कीमत भी कम हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-१०-१९२७

४५. ए० वेदराम अय्यरके साथ बातचीत[1]

[३० सितम्बर, १९२७ के लगभग][2]

मैं अपना दोष स्वीकार करता हूँ।[3] लेकिन संघकी स्थापना किसी दूसरे उद्देश्यसे की गई है। यह मैं आपको विस्तारसे बताऊँगा। हम लाखों भूखे लोगोंपर, उन सबको कतैया बनानेके लिए, हजारों रुपये खर्च कर सकते हैं; लेकिन स्वैच्छिक कताईको बढ़ावा देनेके हेतु उपयुक्त एजेंसियोंपर हम एक पैसा भी खर्च नहीं कर सकते। जो लोग संघमें स्वैच्छिक कातनेवालोंकी हैसियतसे प्रवेश करते हैं वे त्यागकी भावनासे कातते हैं, और वह त्याग तो कोई त्याग ही नहीं है जिसे बाह्य प्रेरणाकी जरूरत हो। मैं जानता हूँ काममें ढिलाई करनेवाले लोग हैं, मुझे मालूम है कि अदायगी न करनेवालोंकी हमारी सूची लम्बी है लेकिन मैं ऐसे लोगोंको सचेत करनेके लिए कोई एजेंसी नियुक्त नहीं करूँगा। जो लोग अपने चारों ओर घोर उदासीनताके बीच भी अपना त्याग बराबर जारी रखेंगे और अपनी मातृभूमिको अपना अंश देते रहेंगे वे राष्ट्रीय आन्दोलनके कर्णधार माने जायेंगे और वे तो अपने इस व्रतका पालन मेरे या इस आन्दोलनके बाद भी करते रहेंगे। लेकिन मैं किसी स्वैच्छिक एजेंसीका बहिष्कार नहीं करता। उदाहरणार्थ, आप अपने मित्रोंको जितना चाहें उतना प्रोत्साहित कर सकते हैं, वास्तवमें चरखा संघके प्रत्येक सदस्यका यह कर्तव्य है कि वह सदस्योंकी संख्यामें वृद्धि करे और यह देखे कि प्रत्येक सदस्य अपना अंश नियमपूर्वक देता रहे। आप जैसे वकीलोंके लिए तो अर्थात् जो इसके औचित्यको मानते हैं, यह सबसे सरल बात है। आप अपने मुंशीको यह काम सौंप सकते हैं। आप उससे कहें कि वह समय-समयपर हरेक सदस्यके घर जाये, उनसे सूतका अंश प्राप्त करे और यदि पिछला कुछ बकाया हो तो उसकी याद दिलाये। दक्षिण आफ्रिकामें मैंने कांग्रेसका अधिकांश कार्य अपने मुंशियोंसे ही करवाया था। यह इसलिए नहीं कि मैं सनकी था। हरेक वकीलको, यदि वह सार्वजनिक कार्यमें रुचि लेता है तो, अपना योगदान करना होता है। उदाहरणके लिए, युद्धके दौरान वहाँ हरेक वकीलने मोर्चेपर जानेके लिए अपना पेशा छोड़ दिया था, और मुझे विलम्ब करता हुआ देखकर मजिस्ट्रेटकी आँखोंमें गुस्सा साफ नजर आ रहा था। मैं आपको यह बता दूँ कि महज शर्मकी वजहसे मेरे लिए वकालत जारी रखना मुश्किल हो गया। मुझे यह महसूस हुआ कि अगर मुझे वकीलका रुतबा कायम रखना है तो मुझे भी जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-१०-१९२७

१, २. महादेव देसाईके "साप्ताहिक पत्र" से।

३. ए० वेदराम अय्यरने यह शिकायत की थी कि सूतकी अदायगीकी ठीक देखरेखके लिए कोई एजेंसी न होनेके कारण ही चरखा संघके सदस्योंने अपना सूतका अंश नियमपूर्वक नहीं दिया है।

४६. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

मदुरै
१ अक्टूबर, १९२७

सी० एफ० एन्ड्रयूज
माद्रक

यह सर्वोत्तम उपलब्ध कताई निबन्ध[१] है। लेकिन तुम जबतक उसे पूरा पढ न लो तबतक मत भेजना।[२] तार दो कि हाथ पूरी तरह ठीक हुआ या नहीं।

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १२८३३) की फोटो-नकलसे।

४७. पत्र : मीराबहनको

१ अक्टूबर [१९२७][३]

चि० मीरा,

कल मुझे तुम्हारे पत्रकी आशा थी, लेकिन आया नहीं। उदास मत होना और न ही उद्वेगको दूर करनेकी कोशिशमें और ज्यादा उद्विग्न। हर समय यह मत सोचो कि मुझे क्या पसन्द है और क्या नहीं, बल्कि जो तुम ठीक समझो वही करो — चाहे वह जैसा मैं पसंद करता हूँ वैसा न भी निकले। मैं चाहता हूँ कि तुम शरीरसे, मनसे और आत्मासे स्वस्थ बनो।

अपना कार्यक्रम इतना व्यस्त मत बनाओ जिससे तुम्हें साँस लेनेका भी अवकाश न मिल सके।

तुम्हारा वजन जानना चाहूँगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९९) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. एस० वी० पुणताम्बेकर और एन० एस० वरदाचारी द्वारा लिखित हैंड स्पिनिंग ऐंड हैंड वीविंग — ऐन एसे; देखिए खण्ड ३०, पृष्ठ ३९८ तथा खण्ड ३२, पृष्ठ ५१४।

२. सम्भवतः वाइसरायको, देखिए "पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको", १-१०-१९२७ तथा ११-११-१९२७।

३. वर्षका निर्धारण मीराबहनके उद्वेगके उल्लेखसे किया गया है। देखिए "पत्र : मीराबहनको", २-१०-१९२७।

४८. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

यात्रामें
मदुरै
१ अक्टूबर, १९२७

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी इस मामूली चोटने मुझे इस सिद्धान्तका कि "दूसरोंके प्रति वैसा ही व्यवहार करो जिसकी तुम दूसरोसे अपने प्रति अपेक्षा करते हो" नया अर्थ प्रदान किया है। मैंने तुम्हारी चोटके सम्बन्धमें वही किया था जैसा कि मैं तुमसे अपने लिए चाहता। लेकिन मैं महसूस कर रहा हूँ कि इस सिद्धान्तको तुम्हारे ऊपर लागू करनेमें मैंने निहायत गलती की। मुझे तुम्हारे साथ सिर्फ वही नही करना चाहिए था जिसकी कि मैं तुमसे अपने लिए अपेक्षा करता, बल्कि मुझे वह करना चाहिए था जिसकी कि तुम्हें जरूरत थी। निर्णायक वस्तु तुम्हारी इच्छा नहीं बल्कि तुम्हारी आवश्यकता होनी चाहिए थी। अगर मुझे इसका ध्यान होता, जो कि मुझे रखना चाहिए था, कि तुम्हारी त्वचा काफी नाजुक है, उसमें रोग बहुत जल्दी फैलता है और चोट लगनेपर मुश्किलसे ठीक होनेमें आती है, तो मैं घावको अच्छी तरहसे साफ कर देता और ताजा खून निकालकर पट्टी बाँध देता। लेकिन हुआ यह कि मैंने अपने तथा उन दूसरे लोगोंके अनुभवका अनुसरण किया जिनकी त्वचा मामूली इलाजसे ही दुरुस्त हो जाती है और इस प्रकार मैंने बड़ी भारी गलती की। खुदाका शुक्र है कि तुम थोड़ी-बहुत तकलीफ उठाकर ही ठीक हो जाओगे। लेकिन मुझे नही मालूम कि अगर कहीं गम्भीर रूपसे खूनमें जहर फैल जाता, जैसा कि फैल सकता था, तब मैं अपने बारेमें क्या सोचता और क्या करता।

आशा है, आज मैंने जो तार[1] तुम्हें भेजा है उसके उत्तरसे मेरी सारी चिन्ता दूर हो जायेगी। इस तारमें मैंने कताई निबन्धके सम्बन्धमें अपनी राय भी दी है। इससे भी अच्छा कोई और निबन्ध उपलब्ध हो तो मुझे मालूम नही, लेकिन मैं किसी भी हालतमें ऐसा नहीं मानता कि इससे अच्छा निबन्ध लिखा नहीं जा सकता था। इसके लेखकद्वय योग्य व्यक्ति हैं लेकिन विषयके सम्बन्धमें उनकी साधना, जहाँतक मैं समझता हूँ, उच्चतम कोटिकी नही है। उनसे जितना भी अच्छा बन पड़ा, उन्होंने किया। लेकिन इस समय देशमें लोगोंकी मनःशक्तिके लिए नाशकारी अमौलिकताका जो अशुभ वातावरण है उसके कारण किसीमें भी ज्यादा सोचने-विचारनेकी क्षमता नही रही है। थोड़ा-सा प्रयत्न करने-मात्रसे ही हममें आलस्य छा जाता है और तब काम घटिया किस्मका होता है। इसलिए मुझे इसमें सन्देह है कि यह निबन्ध वाइसरायको पूरी

१. देखिए "तार: सी० एफ० एन्ड्रयूजको", १-१०-१९२७।

तरह सन्तुष्ट कर सकेगा। और दूसरे यह वास्तवमें भारतीय पाठकोंके लिए लिखा गया है, वाइसराय जैसे बहुत बढ़िया चीजकी माँग करनेवाले पाठकके लिए नही, जिसका मन प्राप्त और अर्जित पूर्वग्रहो तथा पूर्वधारणाओके भारसे दबा हुआ है। इसीलिए मैंने तुम्हें यह राय दी है कि तुम सबसे पहले इसे धैर्यपूर्वक पढ लेना — ऐसे व्यक्तिकी तरह नही जिसने अपनेको भारतीय बना डाला है बल्कि सहानुभूतिशून्य अंग्रेज आलोचककी दृष्टिसे जो किसी भी बातको यो ही नही स्वीकार कर लेगा, बल्कि हर बातके लिए प्रमाणकी अपेक्षा करेगा। और अगर तुम्हें इससे पूरा सन्तोष न हो तो इसे उन्हें कतई न भेजना। मैंने सर हेनरी लॉरेन्सके लिए भी कुछ सामग्री तैयार कराई थी। इसमें प्यारेलाल और महादेवके दिमाग का उपयोग हुआ है। लेकिन सहानुभूतिशून्य आलोचक होनेपर जैसा मैं चाहता वैसा यह भी नही है। मुझे तो जो-कुछ मिल सका उसीमें सन्तोष करना पड़ा। मुझे यह मालूम है कि यह ऐसा विषय है जिसके लिए किसी धैर्यवान व्यक्तिके अथक परिश्रमकी आवश्यकता है। किन्तु दुर्भाग्य-वश, मेरे पास ऐसा कोई व्यक्ति नही है जिसे मै यह काम सौंप सकूँ, इसीलिए यह अबतक पडा हुआ है। मै तुम्हें बता नही सकता कि ठोस अनुसन्धानका यह अभाव मुझे कितना परेशान करता है। अपना यह दुःख मै कभी पूरा नही प्रगट करता किन्तु आज तुम्हारे आगे मैंने अपना मन थोड़ा-बहुत खोलकर रखा है क्योकि तुमने मुझे अपनी लज्जा स्वीकार करनेके लिए बाध्य कर दिया है। मै जानता हूँ कि मुझे तुम्हें सन्तुष्ट करना चाहिए था और सीधा तुम्हारे पास उत्तम कोटिका एक दोषहीन, सुपाठ्य निबन्ध भेजना चाहिए था। अब मैंने निबन्धके विषयमें, जिसके निर्णायकोमें से एक मै भी था, तुम्हारी धारणाको उसके खिलाफ काफी मोड़ दे दिया है। इस पूर्व-धारणाके साथ इसे पढना और मुझे बताना कि तुमने क्या सार निकाला।

अभीतक तो मुझे कोई तकलीफ नही है। समाचारपत्रोमें जो तुमने पढ़ा वह सब झूठ था। ऐसी हरेक समाचार एजेंसीको बन्द कर देनेकी आवश्यकता है।

बेशक शिमलामें तुमने जो उजाला देखा था वह ठीक था। उड़ीसामें तुम्हारी जरूरत है। लेकिन मै चाहता हूँ कि तुम सख्त काम लेनेवाले बनो। यदि तुम राहत-कार्योंमें हिस्सा लो तो देखना कि हिसाब-किताब ठीक-ठीक रखा जाये। मैंने अभी तक प्रकाशित रूपमें कुछ नही देखा है। प्रत्येक कार्यकर्त्तासे आग्रह करना कि वह एक रोजनामचा रखे जिसमें उसके दैनिक कार्य-कलापका सही-सही विवरण हो। लेकिन मै तुमसे वहाँ केवल तात्कालिक राहत-कार्य ही नही करवाना चाहता; मै चाहता हूँ कि तुम इस वार्षिक संकटसे उबरनेका रास्ता भी ढूँढ़ो।

कांग्रेसकी राजनीतिके प्रति तुम जरा कठोर हो। राष्ट्रीय विकासमें उसका भी एक स्थान मानना पड़ेगा। यदि विधानसभा और कौंसिलोका महत्त्व है तो उससे भी अधिक काग्रेसका है। यद्यपि काग्रेसके वर्तमान कार्यक्रम या उसकी कार्य-प्रणालीके प्रति मेरी जरा-सी भी सहानुभूति नही है फिर भी मै कह सकता हूँ कि वह एक महान संस्था है — ४० सालका अटूट रिकार्ड रखनेवाली एकमात्र अखिल भारतीय संस्था। मै इसकी चर्चाओमें बहुत कम भाग लूँगा, लेकिन मै उनमें तबतक शामिल

होता ही रहूँगा जबतक मैं ऐसा नहीं मानता कि वह जो-कुछ कर रही है उस सबको देखते एक बुरी संस्था है। मेरा कार्यक्रम संलग्न है।

सप्रेम,

मोहन

अंग्रेजी (जी० एन० २६२१) की फोटो-नकलसे।

४९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१ अक्टूबर, १९२७

भाई घनश्यामदासजी,

आपका खत मिला है।

जमनालालजीके खतसे पता चलता है कि आप यूरोपसे स्वास्थ्य बिगाड़के आये हैं। अब कही आराम पाकर स्वास्थ्य दुरस्त करना आवश्यक समझता हूँ। भोजनकी पसन्दगी करनेमें मैं कुछ सहाय अवश्य दे सकता हूं। परन्तु उसके लिए तो कुछ दिनोंतक मेरे साथ रहना चाहिए।

आपने अपनी राय विपय विषयमें भेजी है वह ठीक किया।

असहयोगके कारण दो दल हो गये हैं ऐसा कुछ नहीं है। दो दल तो थे ही। जो-कुछ हुआ है वह प्रकारान्तर ही है। मेरा विश्वास कायम है कि असहयोगके सिवा हमारी शक्ति बढ़ ही नहीं सकती। लोग उसका चमत्कार समझ गये हैं, परन्तु उसको कुछ करनेकी शक्ति अबतक नहीं आई है। हिन्दू मुस्लिम झगड़ा उसमें और बाधा डाल रहा है। कौंसिलोंकी सहायकी चेष्टा मैं नहीं कर सकता हूँ। परन्तु मेम्बर चाहें तो खादी और मद्यपानके विषयमें मदद दे सकते है। परन्तु मेम्बर लोग स्वार्थ, अज्ञान और आलस्यके लिए कुछ कर नहीं सकते हैं। खादीका काम मन्द और तेज चल रहा है। मन्द इस कारण कि हम परिणाम नहीं दे पाते। तेज इस कारण कि जितना हो रहा है वह स्वच्छ है और स्वच्छ होनेसे उसका शुभ परिणाम अवश्य होनेवाला है।

धनकी भूख तो मुझे हमेशा रहती है। खादी, अछूत और शिक्षाका कार्य करनेमें ही मुझे कमसे कम दो लाख रुपये आवश्यक रहते हैं। दुग्धालयका जो प्रयोग चल रहा है उसको आज रु० ५०,००० दरकार है। आश्रमका खर्च तो है ही। कोई काम रुक नहीं जाता, परन्तु ईश्वर रोवा-रोवा कर धन देता है। मुझे उससे सन्तोष है। जिस काममें आपका विश्वास है और जितना उसके लिए दे सकें दें।

मेरा भ्रमण इस वर्षके अन्ततक तो चलता ही रहेगा। जनवरी मासमें आश्रम पहुंचनेकी आशा करता हूँ।

हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नके बारेमें पू० मालवीयजीको एक पत्र लिखा है। इस बारेमें कुछ-न-कुछ कार्य योग्य रास्तेसे बनाना चाहिए। आज जो चल रहा है उसमें मैं धर्म नहीं देखता हूँ।[1]

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ६१४९ से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

५०. पत्र : मीराबहनको

२ अक्टूबर [१९२७][2]

चि० मीरा,

तुम्हारा पोस्टकार्ड और रेलगाड़ीमें लिखा हुआ पत्र मिला। तुम्हारे पत्रके लिए जितना उत्सुक इस बार रहा हूँ, उतना कभी नहीं रहा था, क्योंकि उस गम्भीर ऑपरेशनके बाद मैंने तुम्हे बहुत ही जल्दी भेज दिया था। मगर तुम्हें भेज देना उस ऑपरेशनका ही एक भाग था। बेचारा अण्णा! वह भी मुझसे कहता है कि तुम उदास थी। वह चाहता है कि मैं तुम्हें तसल्ली दूं। जमनालालजी कहते हैं कि मुझे तुम्हें अपने साथ रखना चाहिए था। खैर, तुम्हें उन सबके डर झूठे साबित कर देने हैं और बिलकुल स्वस्थ और प्रसन्न रहना है। तुम कल रातको मुझे सपनेमें दिखती रही और जिन मित्रोंके पास तुम भेजी गई हो, उन्होंने मुझे खबर दी कि तुम्हे बेहोशीका दौरा पड़ गया था, मगर खतरेकी कोई बात नहीं थी। उन्होंने कहा, "आपको चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। जो-कुछ इन्सान कर सकता है, वह सब हम कर रहे हैं।" और इस सपनेसे जब मैं जागा तो मेरा मन अशान्त था और मैंने प्रार्थनाकी कि भगवान तुम्हें हर तरहकी हानिसे बचाये। इस परिस्थितिमें तुम्हारा पत्र पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

तुम्हारा कोई अपमान नहीं हुआ। तुमपर कोई पहरा नही है। छगनलाल और कृष्णदास तुम्हारी सेवा करने और तुम्हें आराम देनेके लिए तैनात किये गये हैं। मैं जानता हूँ कि तुम्हारी घबराहट दूर हो जायेगी। हिन्दीका भूत अब तुम्हें नही सतायेगा। यद्यपि अबतक तुमने बहुत-कुछ हिन्दी सीख ली है, परन्तु तुम हिन्दीका एक शब्द भी न बोलो तो मुझे परवाह नही। इस प्रकार इस मामलेमें भी निराशाका

१. जब यह पत्र लिखा गया उससे पहलेके छः महीनोंके भीतर २५ हिन्दू-मुस्लिम दंगोंकी वारदातोंका पता चला था जिनमें १०३ व्यक्ति मारे गये थे और १,०८४ व्यक्ति घायल हुए थे।

२. ऑपरेशनके बाद मीराबहनके भेज दिये जानेके उल्लेखके आधारपर वर्षका निर्णय किया गया है; देखिए "पत्र : मीराबहनको", २८-९-१९२७।

कोई कारण नही। तुम्हारी शारीरिक शक्तिमे बेशक, मेरा विश्वास हिल गया है, परन्तु प्रेम विचलित नही हुआ। चूँकि तुम सच्चा प्रयत्न करनेवाली हो, इसलिए शारीरिक शक्ति आ ही जायेगी।

सुरेन्द्रजीका सुझाव है कि तुम्हे अलग काम करना चाहिए। जरूरत हो तो वैसा करना। किसी भी बातको लेकर शरीर अथवा मनपर ज्यादा जोर मत डालना।

सप्रेम,

बापू

साथका कागज छगनलाल जोशीके लिए है।[1]

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८१) से।
सौजन्य : मीराबहन

५१. भाषण : विरुधुनगरकी सार्वजनिक सभामें

२ अक्टूबर, १९२७

नगरपालिकाके अध्यक्ष तथा मित्रो,

आपने ये जो अनेक अभिनन्दनपत्र और थैलियाँ भेंट की है, उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने अपने सभी अभिनन्दनपत्रोंको पढ़नेका अपना अधिकार छोड़ दिया, इसकी मै कद्र करता हूँ। यदि आपने पढनेपर आग्रह किया होता तो एक अभिनन्दनपत्रपर शायद आधा घंटा लगता। लेकिन आपने कृपापूर्वक मुझे इनके जो अनुवाद दिये है, मैंने उनको पढनेकी कोशिश की है। सबसे पहले मैं आपको यहाँ हिन्दू-मुसलमानोके सद्भावपूर्ण सम्बन्धोंके लिए बधाई देता हूँ। आपके यहाँ एक सुप्रबन्धित पुस्तकालयका होना, एक धर्मशालाकी स्थापना, रेलवे यात्रियोंकी शिकायतें दूर करानेके लिए एक संघका होना, यह सब इस महत्त्वपूर्ण केन्द्रमें चालू सद्प्रवृत्तियोंके परिचायक है। मुझे मालूम हुआ है कि यह स्थान नाडर मित्रोका सबसे महत्त्वपूर्ण केन्द्र है। मुझे यह भी ज्ञात हुआ है कि वे दिनोदिन आगे आ रहे है और देशमें चल रही सभी महत्त्वपूर्ण हलचलोंमें अपना उचित स्थान बना रहे है। आपने मुझे बताया है कि आपकी नगरपालिका अभी हाल ही में स्थापित हुई है। मैं नही समझता कि यह आवश्यक रूपसे एक नुकसानदेह स्थिति ही है, क्योंकि नई नगरपालिका होनेसे आपको सुस्त चाल या उपेक्षाभाव विरासतमें नही मिले है। आप अपने लिए नये और मौलिक पथका निर्माण कर सकते हैं और यदि आप चाहे तो सफाईके मामलेमें सबसे आगे बढ़ कर रास्ता दिखा सकते है। बम्बईकी तरफ हमारे यहाँ नगरपालिकाके लिए गुजरातीमें एक बहुत ही अर्थपूर्ण शब्द है।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

यह नाम मूलतः नगरपालिकाके कार्योकी हँसी उड़ानेके लिए दिया गया था। यह वास्तवमें एक ऐसा नाम है जो नगरपालिकाके कर्मचारियोंपर सटीक बैठता है। गुजराती-में हम नगरपालिकाओंको जिस नामसे जानते है उसका यदि अंग्रेजीमें शब्दानुवाद करें तो वह होगा "कस्टोडियन्स ऑफ कंजर्वेन्सी"। मेरी रायमें सारी नगरपालिका-सेवाका आदि, मध्य और अन्त सब-कुछ उसके अधीन आनेवाले सभी लोगोकी सफाईका संरक्षण-परिरक्षण करना ही है। और यदि मुझे एक निरंकुश राजाकी शक्ति प्राप्त होती और उस शक्तिका इस्तेमाल करनेकी कभी इच्छा होती तो मैं उस नगरपालिका-को तुरन्त भग कर देता जिसे सफाईके मामलेमें परीक्षामें शत-प्रतिशत नम्बर नही मिलते। यदि आप अपने यहाँकी टट्टियाँ बिलकुल साफ रख सकते हो, यदि आप स्वास्थ्यप्रद और शुद्ध जल और शुद्ध-साफ खुली हवा सुलभ करानेकी व्यवस्था कर सकते हो, और बच्चोके लिए शुद्ध दूधका इन्तजाम कर सकते हों तो समझिए कि आप अपने अधीन रहनेवाले लोगोंके स्वास्थ्यकी रक्षा करनेकी स्थितिमें हैं। मैं जानता हूँ कि प्राइमरी शिक्षाको प्रथम स्थान देना आजकल नगरपालिकाओंके लिए फैशनकी चीज बन गया है। मेरी रायमें यह घोड़ेके आगे गाड़ी रखनेके समान है। निःसन्देह अपने यहाँके बच्चोको प्राथमिक शिक्षा देना नगरपालिकाओंका एक महत्त्वपूर्ण काम होना चाहिए। लेकिन मुझे रंचमात्र भी सन्देह नही है कि सफाईको उसके कार्यक्रममें अव्वल स्थान मिलना चाहिए। लैटिनमें एक बहुत ही सुन्दर कहावत है कि स्वस्थ शरीरमें ही स्वस्थ मस्तिष्कका निवास हो सकता है। मैं अस्वस्थ बच्चोको स्वस्थ शिक्षा दे सकना एक असम्भव बात मानता हूँ। सच तो यह है कि सफाई रखना अपने-आपमें स्त्री-पुरुष और बच्चोके लिए एक प्रथम कोटिकी प्राथमिक शिक्षा है। मैंने नगर-पालिकाओंके सच्चे कार्यके बारेमें इतना-कुछ इस आशामें कहा है कि आप लोग, जिनके यहाँ एक नई नगरपालिकाकी स्थापना हुई है, इस दिशामें अपना काम सन्तोष-जनक ढंगसे कर सके। और मैं आपको निजी अनुभवके आधारपर यह आश्वासन देता हूँ कि सफाईके इन सब कार्योंमें पैसेकी जरूरत उतनी नही है जितनी कि सावधानी, मेहनत और ज्ञानकी है।

सफाईके प्रश्नसे बिलकुल जुड़ा हुआ प्रश्न रेलवे यात्रियोकी शिकायतोंका है। कोई समय था जब रेलवे-यात्रियोकी शिकायतोंको प्रकट करने और उन्हें दूर करवानेके मामलेमें मैंने लगभग विशेषज्ञता प्राप्त कर ली थी। और दुनियाके अनेक हिस्सोमें यात्रा करनेके बाद और यह जाननेके बाद कि तीसरे दर्जेका सफर क्या होता है, और लगभग सभी रेलवे-लाइनोंपर नियमित रूपसे तीसरे दर्जेमें ही सफर करनेवाले मुसाफिरकी हैसियतसे मुझे रेलवे यात्रियोकी परिस्थितियोंका अध्ययन करनेका अन्यतम अवसर प्राप्त हुआ है। और यद्यपि तब मैं मानता था और आज भी मानता हूँ कि तीसरे दर्जेके यात्रियोकी सुविधाओंके मामलेमें रेलवेके प्रबन्धक घोर स्वरूपसे दोषी हैं, लेकिन साथ ही मैं इस नतीजेपर भी आया — और इसपर मैं अब भी कायम हूँ — कि उतनी ही महत्त्वपूर्ण चीजोंके लिए खुद रेलवेयात्री भी जिम्मेदार थे। मैं इस बातको अच्छी तरह जानता हूँ कि रेलवेको सबसे ज्यादा आमदनी तीसरे दर्जेके

यात्रियोंसे होती है और प्रथम दर्जेके यात्रियोंमें रेलवेको घाटा उठाना पड़ता है। मैं जानता हूँ कि रेलवे बोर्ड तीसरे दर्जेके यात्रियोंके लिए पर्याप्त जगह मुहैया नहीं करता, न ही वह तीसरे दर्जेके यात्रियोंके लिए रेलवे स्टेशनों या डिब्बोंमें मामूली सफाईका इन्तजाम ही करता है। यदि मेरे पास समय होता तो मैं इन सब चीजोंका तथा अन्य भी कई चीजोंका जिक्र कर सकता था। निस्सन्देह ये बातें ऐसी हैं कि एक सुधारकके लिए इस मामलेकी ओर ध्यान देना लाजिमी हो जाता है। लेकिन आइए कुछ देरके लिए हम आलोचनाकी निगाह अपनी ओर डालें। रेलवे स्टेशनों और डिब्बोंमें सफाईके प्रति हमारी उपेक्षा रेलवे बोर्डकी उपेक्षासे किसी तरह कम नहीं है। और मैं जानता हूँ कि जब मैं तीसरे दर्जेके रेलवे-यात्रियोंके सम्बन्धमें सहायता-दस्ते संगठित कर रहा था उस समय तीसरे दर्जेके यात्रियोंको सफाईकी बुनियादी जरूरतोंकी शिक्षा देनेके लिए स्वयंसेवकोंको भरती करनेमें मुझे कितनी कठिनाई हुई थी। रेल-मार्गपर मुसाफिरोंकी यातायातकी स्थितिमें सुधार चाहनेवाले हर व्यक्तिको नगर-पालिकाके कार्योंको और बढ़ाना पड़ेगा। दान घरसे शुरू होता है, इस उदाहरणके अनुसार सुधारकको सबसे पहले यात्रियोंसे ही अपना काम शुरू करना चाहिए और धीरज और नरमीके साथ उनके अन्दर निजी सफाईकी आदतों तथा अपने सहयात्रियोंका खयाल रखनेकी आदतें डालनी चाहिए। मैं इस उपयोगी संघको यह सुझाव देता हूँ कि यह एक विशेष कार्य है, जिसके लिए हर सुधारक गर्व कर सकता है। . . .[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१०-१९२७

५२. पत्र : मीराबहनको

३ अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

आज सुबह मैं यह दूसरा पत्र लिख रहा हूँ। यहाँ डाक सवेरे ११ बजे निकलती है। पहला पत्र[2] देवदासको था जो बवासीरका ऑपरेशन करानेके बाद डा० राजन्के अस्पतालमें पड़ा है। वह अब पहलेसे बेहतर है। कल ऐसी ही खबर मिली थी।

संयुक्त रसोईका प्रयोग जैसा चल रहा है, उससे कुछ चिन्ता होती है। सुरेन्द्रने मुझे बताया है कि वह ठीक तरह नहीं चल रहा है। यदि तुममें इतनी शक्ति और सामर्थ्य हो तो तुम इसमें हाथ बँटाना। और यदि न हो तो रहने देना। अपने ऊपर किसी किस्मका बोझ मत डालना। वही करना जिससे तुम्हारे मनपर कमसे-कम बोझ पड़े।

१. इसके बाद गांधीजी खादीके बारेमें बोले।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

तुम अडयार जा सकी, इसकी मुझे खुशी है। तालाब और दूसरी चीजें जिनका तुमने उल्लेख किया है, मैंने नही देखी।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८२) से।
सौजन्य: मीराबहन

५३. पत्र: सुरेन्द्रको

मौनवार [३ अक्टूबर, १९२७][1]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। बड़ौदा या कही अन्यत्र जानेकी तुम्हें अन्त:प्रेरणा हो और छगनभाई अनुमति दें तो चले जाना। इतनी दूर बैठा हुआ मै इससे ज्यादा नहीं कह सकता।

अन्तमें तो मुझे दु:खी या सुखी करना आश्रमकी सामर्थ्यके वाहर है। आश्रमकी पूर्णता या अपूर्णताको मै अपना ही प्रतिविम्ब मानता हूँ। इसलिए अपने सुख या दु:ख-का कर्त्ता मै ही हूँ और यदि यह 'मै' न रहे तो न सुख होगा, न दु:ख। इस सम्बन्धमें मै जो भी लिखता हूँ उसे इन वाक्योके सन्दर्भमें पढ़कर ही उसका अर्थ समझना चाहिए।

आश्रमवासी वस्तुत: वे ही है जो अपनेको आश्रमवासी मानें। आश्रम-प्रार्थना इन्हींके लिए अनिवार्य है और दूसरे उन लोगोके लिए जो उसे अनिवार्य मानें। बाल-कृष्ण चला गया है, यह मैंने तुम्हारे पत्रसे ही जाना। वह कहाँ गया है?

तुम्हें भी सर्दी-जुकाम होता है, यह बात मुझे अच्छी नही लग सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९४०८) की फोटो-नकलसे।

1. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीके अनुसार।

५४. पत्र : सुरेन्द्रको

[३ अक्टूबर, १९२७ के पश्चात्][1]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम निरीक्षण जरूर करते रहो; मुझे जहाँ सन्देह होगा वहाँ मैं छोड़ूँगा नही। जब हम मिलेंगे तो मैं भी मामलेकी जाँच तो जरूर करूँगा मगर सही जाँच तो तुम खुद ही कर सकोगे। सहज सन्तोष करके न बैठ रहो, इतना ही काफी है। हमारी शुद्धि हमारे कार्योंमें उतरनी चाहिए। नाक न बहे इसका उपाय करो। इसके लिए नीलाथोथा काममें लाओ या कोई दूसरी चीज, सो महत्त्वपूर्ण नही है।

अब और अधिक नही लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९४१५) की फोटो-नकलसे।

५५. पत्र : मीराबहनको

४ अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे जानेके बाद कोई दिन ऐसा नही गया जिस दिन मैंने तुम्हें लिखा न हो। फिर भी मुमकिन है कि कल (सोमवार) वाले पत्रके पहुँचनेके एक दिन बाद भी यह चिट्ठी तुम्हें न मिल पाये। मैं अब और भी दक्षिणकी ओर जा रहा हूँ; इसलिए हमारे बीचका फासला बढ़ता जा रहा है। मगर एक सम्भावना तो है कि यह तुम्हें कलके पत्रके एक दिन बाद मिल जाये। गर्मी इतनी तेज है कि अधिक लिखना मुश्किल है; फिर मुझे अभी होनेवाली सभामें जानेके लिए तैयार भी होना है। गर्मीके बावजूद मैं बिलकुल ठीक हूँ। तुम भी ठीक हो?

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८३) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. तिथिका अनुमान सुरेन्द्रकी नाक बहनेके उल्लेखसे लगाया गया है। देखिए पिछला शीर्षक।

५६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, आश्विन सुदी ८ [४ अक्टूबर, १९२७][1]

बहनो,

तुम्हारी तरफसे इस बार जो उत्तर आया है, उसकी तो मानो मैंने अपने पिछले पत्रमें कल्पना ही कर ली थी। किसीके मनमें किसीके विरुद्ध जो-कुछ भी भरा हो, उसे वह बाहर निकाल फेंके, यह आत्मशुद्धिकी पहली सीढ़ी है। हमारे पड़ोसीके प्रति हमारे मनमें जो मैल हो, शका हो, उसे जबतक हम दूर न कर दें, तबतक उसके प्रति प्रेमका पहला पाठ भी हम अमलमें नही ला सकते। आश्रममें कमसे-कम इतना तो करनेकी हमारी शक्ति होनी ही चाहिए।

प्रार्थनाके बारेमें अभी खूब विचार करो। मैं भी इतना तो मानता ही हूँ कि आजकल सात बजेका जो विशेष समय है, उसे तो कभी छोड़ना ही नही चाहिए। अपने वर्गको जानदार बनानेका विशिष्ट धर्म तुमने स्वीकार किया है। अभी तो मैं इतनी ही बात कहता हूँ कि जिसकी शक्ति और इच्छा हो वह बहन दूसरे किसीकी चर्चा किये बिना चार बजेकी प्रार्थनामें जानेकी प्रतिज्ञा करे और फिर चाहे जो कष्ट हो, उसे सहन करके भी जबतक तन्दुरुस्त हो तबतक उसका पालन करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६६९) की फोटो-नकलसे।

५७. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

आश्विन सुदी ८ [४ अक्टूबर, १९२७][2]

भाईश्री विट्ठलदास,

तुम्हारी पत्रिका देखी। पत्रिका प्रकाशित करके तुमने ठीक किया। अब उसे आग्रहपूर्वक निभाना। पत्रिकामें खादीकी स्तुतिको एकसे ज्यादा कालम मत देना। उसे तो खादी-सम्बन्धी समाचारोंसे भरना। विभिन्न प्रान्तोंमें खादी कैसी और कितनी प्रगति कर रही है, इसके समाचार देना। इसके लिए लगकर परिश्रम करनेकी और

१. वर्षका निर्धारण आश्रमकी बहनोंके आपसी झगड़ों तथा प्रातःकालीन प्रार्थना-सभाओंमें उनकी उपस्थितिके उल्लेखसे किया गया है; देखिए "पत्र : आश्रमकी बहनोंको", २६-९-१९२७।

२. यह तारीख किसी अन्य व्यक्तिकी लिखावटमें साधन-सूत्रमें ही उपलब्ध है।

खादीसे सम्बन्धित ज्ञानकी जरूरत होगी। यदि तुम इन दो गुणोंको प्रगट कर सके तो पत्रिका अवश्य अमूल्य सिद्ध होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९७६३) की फोटो-नकलसे।

५८. भाषण: स्त्रियोंकी सभा, राजापालयम्‌में

४ अक्टूबर, १९२७

इसके बाद महात्माजीने सभामें हिन्दीमें भाषण दिया, जिसका अनुवाद तेलुगूमें किया गया। अभिनन्दनपत्र और थैलियोंके लिए उन सबको धन्यवाद देते हुए उन्होंने कहा कि आपने यह पैसा दरिद्रनारायणके लिए दिया है। लेकिन इस पैसेको स्वीकार करते हुए मुझे हर्ष और दुखके मिश्रित अनुभव हो रहे हैं — हर्ष इस बातपर कि आपने खादी कोषके लिए पैसा दिया, और दुख यह देखकर हो रहा है कि पिछले छः या सात सालसे आपमें खादीका प्रचार करनेके लिए अविरत कार्य करनेके बावजूद आपमें से बहुत कम स्त्रियाँ खादी पहने हैं। उन्होंने कहा कि मुझे ऐसा कोई भी कारण दिखाई नहीं दिया जिसकी वजहसे आप, आन्ध्रकी क्षत्रिय स्त्रियाँ परदेमें रहें। यदि आप घरमें ही पड़ी रहेंगी, लोगोंके बीच नहीं आयेंगी तो आप कभी भी यह नहीं जान पायेंगी कि दुनियामें क्या-क्या हो रहा है। मैं चाहता हूँ कि आप विदेशी वस्त्रको त्याग दें तथा केवल खादी ही पहनें। मुझे मालूम है कि आप काफी धनवान हैं, लेकिन मैं आपको यह बता दूँ कि ऐसी हजारों गरीब बहनें हैं, जिन्हें दिनमें एक जून खाना भी नसीब नहीं होता। ऐसी बहनोंको चरखा जीविका प्रदान कर सकता है। लेकिन अगर धनवान लोग खादी नहीं पहनते तो वे गरीब बहनें कुछ नहीं कमा सकेंगी। आप याद रखिए कि इस देशके प्रत्येक पुरुष, स्त्री और बच्चेको एक धर्म निभाना है, और वह धर्म है खादी पहनना। आपको सीतादेवीके समान अपने धर्मका पालन करना चाहिए और यदि आप सब सीताके समान आचरण करें तो आपको मैं यह बता दूँ कि रामराज्य अवश्य स्थापित हो जायेगा। यदि आप अपने गरीब भाई-बहनोंके प्रति सहानुभूति और प्रेम प्रकट नहीं कर सकतीं तो आपके जीनेका क्या लाभ? राजापालयम्‌की खादी काफी अच्छी होती है और सौ चरखे मुफ्त बाँट कर खादी कार्यके प्रचारका प्रयत्न किया जा रहा है। इसलिए मैं आपसे उनके द्वारा काता और बुना कपड़ा पहननेको कहूँगा। जो रुपये आपने मुझे दिये हैं, उनका उपयोग खादीके उत्पादनके लिए तथा जरूरतमन्द लोगोंको चरखे देनेके लिए किया जायेगा। अन्तमें महात्माजीने स्त्रियोंसे खादी कोषके लिए पैसा और जेवर देनेके लिए कहा। इसी सिलसिलेमें उन्होंने यह भी कहा कि जेवर नहीं बल्कि निर्मल हृदय नारीको

सौन्दर्य प्रदान करता है। गांधीजीने उनको सलाह दी कि वे अपने बच्चोंपर जेवर न लादें, बल्कि उन्हें अच्छी शिक्षा और प्रशिक्षण दें। उन्होंने उनसे अपनी लड़कियोंका विवाह १६ या १७ वर्षकी आयुसे पहले न करनेका भी अनुरोध किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-१०-१९२७

५९. भाषण : राजापालयम्‌के खादी वस्त्रालयमें

४ अक्टूबर, १९२७

इस शुभ कार्यके लिए धन प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी।[1] लेकिन आपको सदैव मुनाफेका ही ध्यान नहीं करना चाहिए। जब कोई व्यक्ति निजी मुनाफा कमाने और हिस्सेदारोंको बड़े-बड़े लाभांश देनेके लिए किसी मिल आदिमें पूंजी लगाता है तो वह भी, जैसा कि आपमें से कुछ लोग जानते हैं, कुछ वर्षोंतक कोई मुनाफा नहीं पाता। लेकिन मैं चाहता हूँ कि आप लोग मिल-मालिककी अपेक्षा ज्यादा ऊँचा उद्देश्य सामने रखें। अर्थात् आप पूंजीपर कुछ मुनाफा कमानेका आग्रह भले ही रखें, लेकिन आपको भारी मुनाफा कमानेकी इच्छा नहीं करनी चाहिए।[2] याद रखिए कि दुनियाकी बड़ी-बड़ी व्यापारिक संस्थाएँ मुनाफेके लिए अपनी चीजोंको ऊँची दरोंपर बेचनेपर नहीं, बल्कि अपने व्यवसायके विस्तारपर निर्भर करती है। बैंक ऑफ इंग्लैंड संसारका सबसे बड़ा वित्तीय निगम है, और सबसे ज्यादा प्रभावशाली है। उसकी जैसी साख है वैसी साख शायद ऐसे किसी निगमकी नहीं है, और वास्तवमें इस निगमका इतिहास परियोंकी कहानीकी तरह रोचक है। उस निगमको उसकी वर्तमान स्थिति प्रदान करनेमें कुछ सर्वोत्तम अंग्रेजोंने अपना खून-पसीना एक कर दिया। इस निगमने विलक्षण आत्मविश्वास प्राप्त कर लिया है, क्योंकि उसने छोटी लागतपर भारी मुनाफा न कमानेका सिद्धान्त बना लिया है। मुनाफा वह अवश्य कमाता है, लेकिन वह उसकी भारी लागतका फल होता है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप भारी मुनाफा कमानेको अपना लक्ष्य नहीं बनायेंगे, बल्कि कतैयोंके हितोंको सर्वोपरि स्थान देंगे। आप आपसमें झगड़ेंगे नहीं, और यदि आप वास्तविक एकता कायम कर लेंगे और अपनी निजी महत्वाकांक्षाओंको मर्यादित रखेंगे तो कोई कारण नहीं है कि आप बैंक ऑफ इंग्लैंडसे भी ज्यादा व्यापक साख स्थापित करनेकी आकांक्षा मनमें न रखें। आखिरकार बैंक ऑफ इंग्लैंडके ग्राहक धनाढ्य और बड़े-बड़े लोग हैं और उनके नाम तथा लेखे एक काफी बड़े रजिस्टरमें ही रखे जा सकते हैं, लेकिन आपके ग्राहक तो इतने ज्यादा हैं कि उनके नाम लिखने लायक बड़ा रजिस्टर हो ही नहीं

१. यहाँ तीन खादी उत्पादन केन्द्रोंके प्रस्तावित विलयनका जिक्र है।

२. इसके आगेका पाठ यंग इंडिया, १३-१०-१९२७ में प्रकाशित "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है।

सकता। मैंने जो बात कही है, उसके लिए दूरदर्शिताकी आवश्यकता है, और आपको लग सकता है कि मैं किसी स्वप्नद्रष्टा-जैसी बातें कर रहा हूँ। लेकिन मैं आपसे कहता हूँ कि मैं स्वप्नद्रष्टा नही हूँ। यदि मैं भारतके लोगोंका विश्वास प्राप्त कर सकूँ तो मैं अखिल भारतीय चरखा संघको संसारकी सबसे बड़ी सहकारी संस्था बना देनेकी आशा रखता हूँ। वह समय अभी दूर हो सकता है, लेकिन मैं आशा नही छोड़नेवाला हूँ। आपके लिए बस इतना ही — न कम, न ज्यादा — जरूरी है कि आप अपने ग्राहकों और अपने आसपासके लोगोंका विश्वास प्राप्त रखें। और यह आप तभी कर सकते हैं जब आप सोनेका अंडा देनेवाली बतखको ही मार न डालें। आपको कमसे-कम मुनाफा कमानेके बारेमें आसान और समझमें आने लायक नियम बनाने चाहिए और उन्हें अपने संघके लिए अपरिवर्तनीय और बन्धनकारी बना देना चाहिए। मुझे आशा है कि आप मेरी अपेक्षाओंको पूरा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१०-१९२७
यंग इंडिया, १३-१०-१९२७

६०. भाषण: राजापालयम्की सार्वजनिक सभामें

४ अक्टूबर, १९२७

मैं आपको अभिनन्दनपत्रों, थैलियों तथा विभिन्न स्थानोंसे प्राप्त सूतके लिए धन्यवाद देता हूँ। मैं इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण खादी केन्द्रमें आ पाया इसकी मुझे बहुत खुशी है। मुझे अनेक कार्यरत कतैयोंसे मिलनेका सौभाग्य और सुख प्राप्त हुआ। उनमें बहुत-सी बूढ़ी औरतें थी। उनमें से कुछ तो सत्तर बरसकी बूढ़ियाँ हैं। यदि इनमें से कुछकी उम्र वास्तवमें इससे ज्यादा हो तो मुझे आश्चर्य नही होगा, क्योंकि वे तो केवल अपनी उम्रका अनुमान ही कर सकती थी। मैंने उन सबसे पूछा कि उनकी प्रतिमास आमदनी क्या है, और मुझे यह जानकर खुशी और आश्चर्य हुआ कि उनमें से कुछकी आमदनी महीनेमें ४ रुपयेसे ऊपर है। भारतके अन्य भागोंमें कतैये जितना कमाते हैं, यह उससे बहुत ज्यादा है। लेकिन इस कारण आप यह निष्कर्ष नही निकालें कि आप यहाँ अन्य स्थानोंकी अपेक्षा ज्यादा मजदूरी दे रहे हैं। [उनके ज्यादा कमानेका] कारण यह है कि वे ज्यादा उद्यमी और ज्यादा निपुण हैं और कताईपर ज्यादा समय दे सकती हैं। भारतके अन्य स्थानोंके विपरीत, यहाँ ये महिलाएँ अपनी रुई खुद ही धुनती हैं या अपने रिश्तेदारोंसे धुनवा लेती हैं। इस प्रकार आप देख सकते हैं कि चरखेमें क्या-क्या सम्भावनाएँ छिपी हैं। और इसके बावजूद मैं आपको बताऊँ कि ये कतैये वास्तवमें देशके सबसे गरीब लोग नही हैं। इनमें से कुछ तो अच्छे परिवारोंकी हैं। मेरी आँखें तो उन लाखों भूखे लोगोंपर टिकी हुई हैं, जिनके पास अभीतक हम नही पहुँचे हैं। इन बहनोंसे मिलनेके बाद मुझे महिलाओंकी एक अन्य सभामें

ले जाया गया, जहाँ मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वे पर्दानशीन हैं। लेकिन ये बहनें कोई कताई नही करती है। मुझे मालूम हुआ है कि अपने जीवनमें पहली बार वे किसी सभामें इकट्ठी हुई थी। मैं चाहता हूँ कि आप इस पर्दा-प्रथाको समाप्त कर दें और इन औरतोके लिए यह सम्भव और सुविधाजनक बना दें कि वे सभीके लाभके लिए आपसमें समय-समयपर मिल सकें। भारी जेवरों और कपड़ोसे लदी इन महिलाओमें और कताई करनेवाली गरीब बहनोमें जो अन्तर्विरोध था, उसकी कल्पना भी भयंकर है। इन पर्दानशीन महिलाओने कुल मिलाकर बहुत सारे जेवर और कीमती साड़ियाँ पहन रखी थीं। मै इन धनी लोगोसे कहता हूँ कि वास्तविक अच्छाई और पवित्रता भारी गहनों और कीमती साड़ियोमें नही है। धनका इस प्रकार प्रदर्शन नही किया जाना चाहिए। किसीके पास धन होनेका मतलब यह है कि उसके पास एक धरोहर पड़ी हुई है, जिसका उपयोग ईश्वरके नामपर और सभी गरीब लोगोके वास्ते किया जाना चाहिए। समृद्ध परिवारमें जन्म लेने और पलनेका लक्षण बहुमूल्य कपड़ो और जेवरोसे लदे होना नही है, बल्कि दूसरोंकी भलाई करना और ऐसे काम करना है जो समाजके लिए उपयोगी है। मुझे इन महिलाओसे कुछ इसी ढंगसे बात कहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। लेकिन मै जानता हूँ कि बिना अपने मर्दोकी सहायताके उनके लिए पहल करना सम्भव नहीं है। इसलिए मै आपसे अपील करता हूँ कि आप स्त्रियोमें सादगीका सन्देश पहुँचायें और हमारे जीवनको सादा बना सके, इसके लिए खादीसे ज्यादा शक्तिशाली चीज मैं दूसरी नही जानता। हर ऐसे धनी घरमें, जहाँ खादीने प्रवेश किया है, उस घरके लोगोका जीवन ही एकदम बदल गया है। जाने क्या बात है कि खादीका बहुत आभूषणोकी बहुलतासे कुछ मेल नही बैठता। इसीलिए मैंने खादीको धनी और गरीबसे-गरीब लोगोके बीचका सेतु कहा है। और मैं पूरी आशा करता हूँ कि आप अपना और अपनी स्त्रियोंका जीवन ऐसा बनायेंगे कि उनके जीवनमें और उन कातनेवाली महिलाओंके जीवनमें कुछ समानता आ सके जिन्हें मैंने आज देखा है, तथा धनी और निर्धनोके बीच जो भयंकर असमानता आज मौजूद है वह मिट सके। इन दो सभाओसे निपटकर मैंने खादी संघके सदस्योंसे भेंट की। ये कोई २० व्यक्ति हैं जिन्होने एक साथ मिलकर खादीका विकास करनेके लिए अपने धनका कुछ हिस्सा लगानेका निश्चय किया है। और यदि इस संघके सदस्योंमें उचित खादी-भावना है तो मुझे सन्देह नही कि यह सही दिशामें उठाया गया कदम है। जो भी व्यक्ति खादीके धन्धेमें प्रवेश करे, वह एक न्यासीकी भावना लेकर आये। हमें लाखो कतैयोंके हितोंको सर्वोपरि स्थान प्रदान करना चाहिए। सामान्य व्यापारमें तो सिद्धान्त यह है कि हम अपनी चिन्ता करते हैं, और हम जिनके साथ व्यापार करते हैं वे अपनी चिन्ता आप करते हैं। खादीके व्यवसायमें स्थिति उलट जाती है। हम सबको — मैं, जो चन्दे इकट्ठा करता हूँ, व्यापारी, जो खादीका व्यापार करते हैं, संगठनकर्त्ता, जो गाँवोमें जाते है — उन कतैयोके कल्याणके लिए अपने आपको न्यासी समझना चाहिए जिनके और केवल जिनके लिए ही हमारा अस्तित्व है। खादीकी सफलताके लिए मैं इसे एक अपरिहार्य शर्त मानता हूँ। और जिस प्रकार एक ट्रस्टीको भी कमी-

शन पानेका हक है उसी प्रकार खादीके विकास-कार्यमें लगे हुए लोग अन्तमें पायेंगे कि निजी तौरपर उन्होंने कुछ खोया नहीं है, वल्कि उलटे कतैयोंको, और कतैयोंके कारण उन्हें भी लाभ हुआ है। इसी उद्देश्यके लिए आपने मुझे ये सब थैलियाँ दी हैं। इस दृष्टिसे देखनेपर इन थैलियोंको वहुत भारी नही माना जा सकता। आप दरिद्रनारायणको कितना भी दें, कम ही है। हम लोग, जो शहरोंमें रहते हैं, उन करोड़ों मेहनतकशोंके बूतेपर ही जीवित रहते हैं, और खादी-कार्यके जरिये हम उन लोगोंको कुछ प्रतिदान दे सकते हैं। इसलिए मैं उन सज्जनोंको वधाई देता हूँ जिन्होंने इन पर्दानशीन महिलाओंके लिए एकसौ से अधिक चरखे भेंट किये हैं। क्योंकि यह भी उसी दिशामें उठाया गया कदम है। यदि ये वहनें त्याग-भावसे इन चरखोंपर काम करेंगी तो वह उनके तथा गरीव कतैयों, दोनोंके लिए कल्याणकारी सिद्ध होगा। और मैं आशा करता हूँ कि यह स्थान, जिसने अच्छे खादी-कार्यकी सम्भावनाएँ पहले ही दिखा दी हैं, इस दिशामें वरावर प्रगति जारी रखेगा।

मैं कल विरुधुनगरमें कुछ नाडर मित्रोंके साथ जिस विषयपर वात कर रहा था,[1] उसके वारेमें वतानेके लिए आपका कुछ समय लूं तो शायद अनुचित न होगा। नाडर लोग उद्यमशील व्यापारी है। वे समृद्ध हैं, और जितने समृद्ध हैं उतने ही उदार भी है। उन्होने अपने अन्दर कुछ अत्यन्त अच्छी और साफ रुचियाँ पैदा की है। वे एक अत्यन्त सुप्रवन्वित हाई स्कूल चला रहे है, जहाँ सभी लड़कोंको मुफ्त शिक्षा दी जाती है, चाहे वह नाडर हो या किसी अन्य समुदायका। उनके मन्दिर भी उनके स्कूलकी तरह सवके लिए खुले हुए हैं। उन्होंने जनताके उपयोगके लिए उद्यान वनाये है। यह सभीके लिए अनुकरणीय है। इसलिए जव मुझे यह पता चला कि ये स्वच्छ जीवन व्यतीत करनेवाले लोग मदुरै और तिन्नेवेल्लीके बीच मन्दिरोंमें प्रवेश नही कर सकते तो मुझे कितना दुःख और आश्चर्य हुआ होगा, यह आप समझ सकते हैं। मुझे जव इस दुखद तथ्यका पता चला तो मुझे अपने हिन्दू धर्मपर लज्जा आई। मदुरैकी तीन वार यात्रा करनेके वावजूद मैं वहाँके महान मन्दिरमें प्रवेश नही कर सका। इस दुखद कथाको सुननेके वाद मुझे लगा कि यह एक वरदान ही है कि मैंने उस मन्दिरमें पैर नहीं रखे हैं। यों भी, जव मैं किसी मन्दिरमें उत्सुकतावश भी जाता हूँ तो मुझे एक गहरी लज्जाका अनुभव होता है, क्योकि मैं जानता हूँ कि वह मन्दिर तथाकथित अस्पृश्योंके लिए खुला नही है। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं किसी नायडीमें[2] और अपने आपमें तनिक भी अन्तर नही देखता। मैं ऐसे किसी भी अधिकारका उपयोग नहीं करना चाहूँगा जो एक नायडीको प्राप्त नही है। और इसलिए जव मैं दक्षिणमें जाता हूँ तो मुझे अपने-आपको नायडी वतानेमें वहुत सुख मिलता है। लेकिन फिर भी मैं आदतकी मजबूरीके कारण यह मानने लगा हूँ कि ये तथाकथित अस्पृश्य और वे लोग जिनको देखनेमें भी छूत मानी जाती है और फिर वे लोग जिनके निकट आ जानेसे भी दूसरी जातियोंके लोग अपनेको अपवित्र हो गया मानते हैं, तथाकथित मन्दिरों

१. देखिए "भाषण: विरुधुनगरकी सार्वजनिक सभामें", २-१०-१९२७।

२. एक जाति, जिसके पास आनेमें भी छूत मानी जाती है।

में प्रवेश नहीं कर सकते, हालाँकि इनका ईश्वरके घरमें प्रवेश निषिद्ध करनेका कोई औचित्य नही है। इसके बावजूद मेरे लिए नाडरोंके विरुद्ध लगाये गये इस प्रकारके बेतुके प्रतिबन्धको समझ सकना असम्भव था। मैं नही जानता कि आप लोग, जो इस सभामें मौजूद है, इस दिशामें कुछ कर सकते है या नही। लेकिन एक तरीका है जिस तरीकेसे आप चाहें तो आपमें से हरएक मदद कर सकता है। क्योकि यह बेतुका प्रतिबन्ध भी अन्ततः उसी अन्दर-अन्दर खोखली करनेवाली बीमारीका लक्षण है। यह अस्पृश्यता और जात-पाँतके अभिशापका परिणाम है। मै वर्णाश्रम और जात-पाँतमें बहुत स्पष्ट अन्तर करता हूँ। अस्पृश्यताको मै एक अक्षम्य पाप और हिन्दू-धर्मका बहुत बड़ा कलंक मानता हूँ। जात-पाँतको मैं हमारी प्रगतिके मार्गमें रोड़ा और एक वर्ग द्वारा अहंकारवश दूसरे वर्गपर जमाया गया श्रेष्ठताका दावा मानता हूँ। अस्पृश्यता इसका सबसे खराब नमूना है। यही समय है कि हम अस्पृश्यता और जात-पाँतके कलंकसे मुक्त हो जायें। हमें वर्णाश्रमको अस्पृश्यता और जात-पाँतके साथ जोड़कर उसका महत्त्व गिराना नही चाहिए। वर्णाश्रमकी मेरी जो कल्पना है, उसमें अस्पृश्यता और जात-पाँतके वर्तमान भेद-जैसी कोई चीज नहीं है। वर्णोंका श्रेष्ठता या हीनतासे कुछ लेना-देना नहीं है। वर्ण तो उस एक निश्चित नियमकी स्वीकृति है जो मानवके सच्चे सुखका स्रोत है। और इसका सीधा-सादा मतलब यह है कि हमें अपने पूर्वजोंसे प्राप्त होनेवाले सभी अच्छे गुणोंको मूल्यवान मानकर उनका परिरक्षण करना चाहिए, और इसीलिए जबतक कोई पेशा अनैतिक न हो तबतक हमें अपने बाप-दादोंके धन्धेको करना चाहिए। और कोई ऐसा भी व्यक्ति, जो मानता है कि मनुष्य अपने स्रष्टाकी आराधना करनेके लिए जन्मा है, यह स्वीकार किये बिना नहीं रह सकता कि यदि वह अपना समय नये धन्धोंकी खोजमें व्यर्थ न गँवाये तभी वह अपने जीवनके उद्देश्यको पूरा करनेमें समर्थ होगा। अतः आप देखेंगे कि वर्णकी इस कल्पनामें और जात-पाँतमें कोई समानता नही है। इसलिए मैं आपसे कहूँगा कि आप अस्पृश्यता और जात-पाँतके अभिशापसे लड़नेके लिए अपनी कमर कस लें, और आपका जितना भी प्रभाव है उस प्रभावका उपयोग इस ध्येयके लिए कीजिए कि प्रत्येक मन्दिर, बिना जात-पाँतका भेद किये, सभीके लिए खुल जाये। किसीके भी लिए अपने मन्दिरोंके द्वार बन्द करते हुए हम भूल जाते हैं कि हम स्वयं ईश्वरको ही 'अस्पृश्य' बनाये दे रहे हैं।

मैंने इस यात्राके दौरान अन्य सभाओंमें जिन सवालोंपर चर्चा की है, उनकी चर्चा करके मै आपका समय नही लूँगा। मैं आपके साथ कुछ व्यापार करना चाहता हूँ। उन सब सभाओंमें बहनों द्वारा दिये गये कुछ आभूषण मेरे पास है। जैसा कि आप जानते है, मैं ऐसी सभाओंमें ऐसे आभूषणोंको बेचता रहा हूँ, क्योंकि मै इनमें से किसी चीजका कोई निजी उपयोग नहीं कर सकता। और न मैं उन बड़े-बड़े चौखटोको ही अपने साथ लिये हुए चल सकता हूँ, जिनमें अभिनन्दनपत्र मढ़े हुए है। मेरे पास वास्तवमें कोई जगह भी नहीं है जहाँ उन्हें टाँग सकूँ। और दिन-प्रतिदिन एक स्थानसे दूसरे स्थानकी यात्रा करते समय इन चीजोंको साथ लिये चलना तो बहुत असुविधाजनक है। इसलिए मैं आपसे अपील करूँगा कि आप इनके लिए बोली लगाकर मुझे इन चीजोंके

भारसे मुक्त कर दें। मुझे कोई सन्देह नहीं है कि इस सभामें ऐसे बहुतसे लोग हैं जिन्होंने थैलियोंके लिए कोई चन्दा नहीं दिया है। और इसमें भी मुझे सन्देह नहीं है कि आपमें से कुछने पर्याप्त चन्दा नहीं दिया है। यदि मेरी बात सुननेके बाद आपके मनमें खादीके महत्वके सम्बन्धमें; वह देशकी जो बहुमूल्य सेवा करती है उसके सम्बन्धमें, कोई सन्देह न रह गया हो, और यदि आप सन्तुष्ट हों कि आपको कमसे-कम नहीं बल्कि ज्यादासे-ज्यादा चन्दा देना चाहिए, तो आप लोग कृपया अपनी थैलियोंको खोल देंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-१०-१९२७

६१. पत्र : सुरेन्द्रको

[४ अक्टूबर, १९२७ के लगभग][1]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। शारदा बहनके बारेमें तो मेरी स्मृतिकी भूल हो गयी। मगनलाल लिखते हैं कि उसकी तबीयत तो कबकी ठीक हो गयी है। मैं उसे कल पत्र लिखनेवाला हूँ।

प्रातः उठनेके बारेमें सब लोग मिलकर जो परिवर्तन करना ठीक जान पड़े, जरूर करें। मेरा इस सम्बन्धमें कोई आग्रह नहीं है। सबकी तबीयत ठीक रहे, यह निःसन्देह पहली आवश्यकता है। जिन्हें ४ बजे उठना सहज हो वे भले चार बजे उठें और बाकी सब घंटी बजनेपर ही उठें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९४१३) की फोटो-नकलसे।

६२. पत्र : सुरेन्द्रको

[४ अक्टूबर, १९२७ के पश्चात्][2]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तुम्हें संक्षेपमें लिखा क्योंकि मुझमें अभी पहले जितनी शक्ति नहीं आयी है और जहाँ थोड़ा-सा ही लिखनेसे काम चल जाता है वहाँ मैं वैसा ही करता हूँ। अपनी सहमति प्रकट करते हुए मेरे मनमें न तो निराशा थी, न क्रोध। तुम्हारे और बालकृष्ण आदि जैसे परिपक्व आश्रमवासियोंने जब प्रार्थनाके समयमें परिवर्तन करनेकी इच्छा प्रकट की तो विरोध न करनेको ही कर्त्तव्य समझकर

१. 'प्रातः उठने' की बातके उल्लेखसे; देखिए "पत्र : आश्रमकी बहनोंको", ४-१०-१९२७।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

मैंने इस प्रस्तावके प्रति अपनी सहमति दे दी। इस प्रस्तावपर इसलिए भी मैंने अपनी सहमति दी क्योंकि फिलहाल मैं असमर्थ हूँ और इसका भी कुछ ठीक नही कि मै आश्रम कबतक पहुँचूंगा; ऐसी स्थितिमें ४ बजे उठनेके अपने आग्रहपर डटे रहनेको दुराग्रह ही माना जाता।

मैं खुद भला-चँगा होऊँ और आश्रममें उपस्थित रहूँ तो सम्भवतः कुछ दूसरा ही निर्णय कर सकता हूँ किन्तु अपने स्वास्थ्यको जोखिममें डालकर ४ बजे उठनेके निर्णयपर अटल नही रहा जा सकता। प्रार्थना ४ बजे ही होनी चाहिए यह तो कोई अटल सिद्धान्त नही है। यह साध्य नही बल्कि साधन-मात्र है।

मैं तुम्हारा भाव भली-भाँति समझ गया हूँ और मेरी सहमतिका कारण तुम भी समझ लेना। इससे न तो मैं निराश हुआ हूँ और न उकताया ही हूँ। केवल सार्वजनिक हितकी बातको ध्यानमें रखते हुए ही मैंने ४ बजेका बन्धन हटा लिया है। इस बारेमें मैं मगनलालको विस्तारपूर्वक समझा चुका हूँ। इसके बावजूद यदि कोई शंका हो तो लिखना।

बालकृष्णका पत्र मिला है। उसका पत्र पाकर मुझे प्रसन्नता हुई है। समय मिलनेपर उसे लिखूँगा। छोटेलालसे कहना कि शायद आज मैं उसे न लिख सकूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९४१७) की फोटो-नकलसे।

६३. पत्र : मीराबहनको

बुधवार [५ अक्टूबर, १९२७][1]

चि० मीरा,

मेरा खयाल है, चूँकि मैं बहुत तेजीसे मद्रासले दूर चला जा रहा हूँ, इसीलिए तुम्हारा कोई पत्र मुझे नही मिल पाया। कल मैं ढेर-सारे पत्र पानेकी आशा करता हूँ। यह पत्र तुम्हें सिर्फ यह बतानेके लिए लिखा है कि तुम्हारी याद बराबर बनी रहती है।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९८) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. मीराबहनने अपने संग्रहमें इस पत्रको १९२७ के अन्तमें रखा है। अक्टूबर, १९२७ के पहले सप्ताहमें गांधीजी उन्हें हर रोज पत्र लिखते रहे। बुधवार ५ तारीखको कोई पत्र नहीं मिला। प्रस्तुत पत्रका विषय ४ और ६ अक्टूबर, १९२७ के पत्रोंसे सम्बद्ध जान पड़ता है।

६४. भाषण: कोइलपट्टीकी सार्वजनिक सभामें

५ अक्टूबर, १९२७

महात्माजीने सभी अभिनन्दनपत्रों और थैलियोंको स्वीकार करते हुए धन्यवाद दिया और कहा कि जो-कुछ भी मुझे यहाँ प्राप्त हुआ है, उसे सभाके अन्तमें मैं यहीं नीलाम कर दूंगा, जैसा कि मैंने अन्य स्थानोंपर भी किया है, क्योंकि मैं ऐसी वस्तुओंको अपने पास नहीं रखना चाहता; फिर मेरे लिए इन्हें एक स्थानसे दूसरे स्थानतक उठाये फिरना भी मुश्किल है। इस क्षेत्रके लोग आसानीसे इन वस्तुओंको नीलामीमें खरीदकर प्राप्त कर सकते हैं और इस प्रकार वे जो रकम देंगे उसका उपयोग गरीबोंको राहत देनेके लिए तथा दरिद्रनारायणकी सेवाके लिए किया जायेगा।

एक अभिनन्दनपत्रमें कहा गया था कि दक्षिण भारतमें ब्राह्मण और अब्राह्मणोंके सम्बन्ध उतने ही अधिक कटु हो गये हैं, जितने कि उत्तर भारतमें हिन्दुओं और मुसलमानोंके हैं। इसके सम्बन्धमें महात्माजीने कहा कि मैं इस समस्याको समझनेकी कोशिश कर रहा हूँ और मैं अब्राह्मण आन्दोलनके नेताओंको इस मामलेपर अपने साथ विचार-विमर्श करनेके लिए जितना समय दे सकता हूँ, उतना देता हूँ। मेरा खयाल है कि अब मैं इस समस्याको समझ गया हूँ और मैं 'यंग इंडिया' में इस प्रश्नके सम्बन्धमें लिखकर[1] इन दोनों सम्प्रदायोंके बीचके मनमुटावको दूर करनेकी तथा उनमें सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करनेकी कोशिश करूँगा। इससे ज्यादा मैं और कुछ नहीं करूँगा। क्योंकि मुझे भरोसा नहीं है कि इनमें से किसी भी सम्प्रदायके नेतागण मेरी रायपर अमल करेंगे। दोनों सम्प्रदायोंके नेताओंको चाहिए कि वे अपने मतभेदोंपर विचार करनेके लिए मिलें और सच्चे दिलसे परस्पर समझौता करनेका प्रयत्न करें। ब्राह्मणोंके विरुद्ध लगाये गये अब्राह्मणोंके आरोप कभी-कभी उचित भी होते हैं। लेकिन कभी-कभी वे बातको बहुत बढ़ा-चढ़ाकर पेश करते हैं। मैं उनकी सारी युक्तिसंगत बातोंको स्वीकार कर लूँगा। लेकिन अब्राह्मणोंमें ब्राह्मणोंके प्रति बिना वजहकी घृणा मुझे पसन्द नहीं। मैं अब्राह्मणोंके इस कथनसे सहमत हूँ कि ब्राह्मण अपने कर्तव्यका ठीक तरह पालन नहीं कर रहे हैं। लेकिन मैं अब्राह्मण नेताओंके इस कथनको स्वीकार नहीं कर सकता कि सारी बुराइयाँ ब्राह्मणोंने ही पैदा की हैं। मुझे यह भी भरोसा नहीं है कि मेरी सलाहपर ब्राह्मण अपने प्राचीन अधिकारोंको छोड़नेके लिए तैयार हो जायेंगे। लेकिन मैं उनसे कहूँगा कि यह लड़ाई उचित नहीं है और देश-हितके विरुद्ध है। इन सबसे ज्यादा, मैं दोनों सम्प्रदायोंके नेताओंसे

१. देखिए "वर्णाश्रम और उसका विरूपीकरण", १७-११-१९२७।

आपसमें कोई न्यायोचित और ईमानदाराना समझौता करनेका आग्रह करूँगा। मैं अपने विचार 'यंग इंडिया' में प्रकाशित करूँगा। दूसरे उन्हें स्वीकार करें या अस्वीकार करें, मुझे इसकी परवाह नहीं है।. . .[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू ८-१०-१९२७

६५. रोषभरा विरोध

एक बंगाली स्कूलके प्रधानाध्यापक लिखते हैं:[2]

> आपने मद्रासके विद्यार्थियोंको विधवा लड़कियोंसे ही शादी करनेकी सलाह देते हुए जो भाषण[3] किया है, उससे हम भयभीत हो रहे हैं. . .
>
> विधवाओंके जिस आजीवन ब्रह्मचर्यके पालनके कारण भारतकी स्त्रियोंको संसारमें सबसे बड़ा, बल्कि ऊँचा स्थान प्राप्त हुआ है, उसके पालन करनेकी वृत्तिको ऐसी सलाहें नष्ट कर देंगी और. . .आज उन्हें ब्रह्मचर्यके द्वारा एक ही जन्ममें मोक्ष प्राप्त करनेका जो अवसर सुलभ है, उसे समाप्त कर देंगी। इस प्रकार विधवाओंके प्रति ऐसी सहानुभूति दिखाना उनकी कुसेवा होगी और कुमारियोंके प्रति, जिनके विवाहका प्रश्न आज बड़ा पेचीदा और मुश्किल हो गया है, यह एक बड़ा अन्याय होगा। विवाह-सम्बन्धी आपके इन विचारोंसे हिन्दुओंके आत्माके देहान्तरण, पुनर्जन्म और मुक्तिके सिद्धान्तकी इमारत ढह जायेगी और हिन्दू-समाज भी पतित होकर उसी स्तरपर आ जायेगा जिस स्तरपर वे दूसरे समाज हैं, जिन्हें हम पसन्द नहीं करते।. . .हिन्दू-समाजको अहल्याबाई, रानी भवानी, बेहुला, सीता, सावित्री, दमयन्तीके उदाहरणोंसे मार्ग-दर्शन लेना चाहिए और हमें उसको उन्हींके आदर्शोंपर चलाना चाहिए।. . .

इस रोषभरे विरोधसे न मेरे विचार बदले हैं और न मुझे कोई पश्चात्ताप ही हुआ है। कोई भी विधवा, जिसमें इच्छा-शक्ति है और जो ब्रह्मचर्यको समझती है तथा उसका पालन करनेको कटिबद्ध है, मेरी इस सलाहसे अपना इरादा नहीं छोड़ देगी। परन्तु यदि मेरी सलाहपर अमल किया जायेगा तो उससे उन छोटी उम्रकी लड़कियोंको जरूर राहत मिलेगी जो शादीके समय शादी किसे कहते हैं, यह भी नहीं समझती थी। उनके सम्बन्धमें "विधवा" शब्दका प्रयोग इस पवित्र शब्दका दुरुपयोग है। मुझे पत्र लिखनेवाले इन महाशयके मनमें जो खयाल है, उसी खयालसे तो मैं देशके युवकोंको या तो इन तथाकथित विधवाओंसे शादी करनेकी या बिलकुल ही

१. इसके बाद गांधीजी खादी तथा अस्पृश्यतापर बोले।
२. इसके कुछ अंशोंका ही अनुवाद दिया जा रहा है।
३. देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ ५२०-२६।

शादी न करनेकी सलाह देता हूँ। इस प्रथाकी पवित्रताकी रक्षा तभी हो सकेगी जब बाल-विधवाओंका अभिशाप उससे दूर कर दिया जाये।

ब्रह्मचर्यके पालनसे विधवाओंको मोक्ष मिलता है, इसका तो अनुभवमें कोई प्रमाण नही मिलता है। मोक्ष प्राप्त करनेके लिए ब्रह्मचर्यके अतिरिक्त और भी बहुत-सी बातोंकी आवश्यकता होती है। और जो ब्रह्मचर्य जबरदस्ती लादा गया है, उसका कुछ भी मूल्य नही है। उससे तो अकसर गुप्त पाप होते है, जिससे उन समाजकी नैतिक शक्तिका ह्रास होता है, जिसमें ऐसे पाप होते है। पत्रलेखक महाशयको यह जान लेना चाहिए कि मै यह अपनी जानकारीके आधारपर लिख रहा हूँ।

यदि मेरी इस सलाहके परिणामस्वरूप बाल-विधवाओंसे न्याय हो सके और फलतः कुमारियोंको पुरुषकी विषय-लालसाके लिए बेच देनेके बदले उन्हे विवाहसे पूर्व वय और बुद्धिकी दृष्टिसे पूरा विकास प्राप्त करनेकी सुविधा दी जा सके तो मुझे बड़ी खुशी होगी।

विवाहके बारेमें मेरी ऐसी कोई मान्यता नहीं है जो आत्माके देहान्तरण, पुनर्जन्म और मुक्तिसे असंगत हो। पाठकोंको यह मालूम होना चाहिए कि उन करोड़ों हिन्दुओंके बीच, जिन्हें हम दम्भपूर्वक निम्न श्रेणीके कहते है, विधवाओके पुनर्विवाह पर कोई प्रतिबन्ध नही है। और मै यह नही समझ पाता हूँ कि जब वृद्ध विधुरोंके पुनर्विवाहसे उस मान्यतामें कोई बाधा नही पहुँचती, तो जिन लड़कियोंको गलत तौर पर विधवा कहा जाता है, उनके वास्तविक विवाहसे उस भव्य सिद्धान्तमें कैसे बाधा पहुँचती है। पत्रलेखककी जानकारीके लिए मैं यह बता दूं कि आत्माका देहान्तरण और पुनर्जन्म मेरे लिए कोरे सिद्धान्त ही नहीं, बल्कि ऐसी वास्तविकताएँ हैं, जैसी कि प्रतिदिन सूर्यका उदय होना है। मुक्ति एक ऐसा सत्य है जिसे प्राप्त करनेके लिए मैं भरसक प्रयत्न कर रहा हूँ। इसी मुक्ति-चिन्तनने मुझे बाल-विधवाओंके प्रति किये जानेवाले अन्यायका स्पष्ट भान कराया है। अपनी पुरुषत्वहीनताके कारण हमें सीता तथा उन अन्य अमर देवियोंके साथ, जिनके नामोंका उल्लेख पत्रलेखकने किया है, आजकी इन पीडित-प्रताड़ित बाल-विधवाओंका नाम नही लेना चाहिए।

अन्तमें, यद्यपि हिन्दू-धर्ममें सच्चे वैधव्यका गौरव गाया गया है और यह ठीक ही किया गया है, फिर भी जहाँतक मैं जानता हूँ, इस विश्वासके लिए कोई प्रमाण नहीं है कि वैदिक कालमें विधवाओंके पुनर्लग्नपर सम्पूर्ण प्रतिबन्ध था। परन्तु सच्चे वैधव्यके विरुद्ध मेरी यह लड़ाई नही है। मेरी लड़ाई तो उसकी उस भद्दी नकलके खिलाफ है जो अत्याचारका एक साधन बनी हुई है। बेहतर रास्ता तो यह है कि जैसी लड़कियाँ मेरे खयालमें है, वैसी लड़कियोंको विधवा माना ही नही जाये और जिस हिन्दूमें असहायोंके पक्षसे खड़े होनेका कुछ भी साहस होगा वह इन्हें इस असह्य स्थितिसे छुटकारा दिलाना अपना कर्त्तव्य मानेगा। इसलिए मैं विनम्रतापूर्वक किन्तु जोर देकर प्रत्येक हिन्दू युवकको फिरसे यही सलाह देता हूँ कि वह सिवाय इन कुमारियोंके, जिन्हें गलतीसे विधवा कहा जाता है, और किसीसे शादी न करे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६-१०-१९२७

६६. टिप्पणियाँ

एक खादी-प्रेमी

डॉ० कैलाशनाथ काटजू[1] प्रयाग उच्च-न्यायालयके नामी वकील हैं। कुछ दिन पहले उन्होंने मेरे पास कई बातोंके सम्बन्धमें एक पत्र लिखा था। उस पत्रमें उन्होंने खादीके प्रति अपना प्रेम प्रकट किया था और उसके साथ अ० भा० चरखा संघको अपने चन्देकी पहली किश्त भी भेजी थी। मैंने सोचा कि दूसरे धनी लोगो और खासकर वकीलोंके प्रोत्साहनके लिए उस पत्रका खादी-सम्बन्धी अंश प्रकाशित करना चाहिए। इसके लिए उनकी इजाजत लेनेके लिए मैंने उन्हें एक पत्र लिखा। उसमें प्रसंगवश मैंने विदेशी काले अलपाका कपड़ेका भी विरोध किया था और यज्ञार्थ कातनेका महत्त्व समझानेकी कोशिशकी थी। अब मैं उनके दो पत्र, जहाँतक वे खादीसे सम्बद्ध है, नीचे दे रहा हूँ:[2]

वकील और दूसरे पेशेवर लोग और कुछ भले ही न कर सकें, मगर खादीको अपनाकर और अ० भा० च० संघ को सहायता देकर डॉ० काटजूके सुन्दर उदाहरण का अनुकरण तो सभी कर सकते हैं। और अ० भा० चरखा संघ तंगीमें है, क्योंकि अभी संघके हाथमें जितने गाँव है, उनसे अधिक गाँवोंका संगठन करनेकी माँग बराबर बढ़ती जा रही है। पूंजी बढ़ाये बिना अधिकाधिक खादी तैयार की नही जा सकती और जबतक खादीका हिन्दुस्तानमें घर-घर प्रचार नही हो जाता, चरखा-संघको तो हर साल यह खर्च उठना ही पड़ेगा।

दोहरा पाप

कुछ दिन पहले "इसे भी विवाह कहेंगे?"[3] शीर्षकसे मेरा एक लेख छपा था। उसके सम्बन्धमें एक भाईने एक लम्बा-सा पत्र लिखा है। वैसे तो उन्होंने मेरी जानकारीके लिए अपना नाम भी भेजा है, लेकिन इस चर्चामें उपयोग करनेके लिए एक छद्मनाम दिया है "एक कुवाँरा"। पत्रका सार मैं नीचे दे रहा हूँ:[4]

१. (१८८७-१९६८); प्रमुख कांग्रेसी नेता, कुछ समयतक केन्द्रीय मन्त्रिमडलमें गृहमन्त्री थे और बादमें मध्यप्रदेशके मुख्यमन्त्री हुए।

२. पत्र यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं। डॉ० काटजूने खादी-कोषके लिए मासिक चन्दा भेजने, नियमित रूपसे कातने और विदेशी अलपाकाके बजाय बेहतरीन काली खादी इस्तेमाल करनेका वादा किया था।

३. १-९-१९२७ को; देखिए खण्ड ३४।

४. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसने लिखा था कि मैंने आपका "इसे भी विवाह कहेंगे?" शीर्षक लेख पढ़ा। यद्यपि उसमें सम्बन्धित पक्षोंके नाम नहीं बताये गये हैं फिर भी कारवारके हम गौड़ सारस्वत ब्राह्मणोंको सब-कुछ भली-भाँति मालूम है। उसने आगे लिखा था कि यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि लड़की खरीदना बड़े अपवादकी बात है, लेकिन एक दूसरी भी प्रथा है, जो उतनी ही बुरी है। इसमें लड़कीके पिताको अपनी कन्याके लिए वर खरीदना पड़ता है और खरीदकी रकमको दहेज की संज्ञा दी जाती है। यह रकम लड़कीके पिताकी औकातपर नहीं, बल्कि लड़केकी शिक्षा-दीक्षा और आर्थिक स्थितिपर निर्भर

इसी जातिके एक अन्य व्यक्तिका लिखा एक और भी पत्र अभी मेरे सामने है। ऐसा जान पड़ता है कि जो लोग पत्नियाँ खरीदना चाहते हैं, वे गोआ जाते हैं, क्योंकि वहाँ ऐसे गरीब सारस्वत ब्राह्मण मिल जाते हैं जो पैसेके लोभमें अपनी लड़कियोंको ऐसे बूढ़े लोगोंके हाथों बेच देनेमें शर्म नहीं खाते जो उन लड़कियोंके पिता या पितामहकी उम्रके होते हैं। इस प्रकार यह जाति दोहरा पाप करती है। कोई भी व्यक्ति सबसे ऊँचा दाम देकर अपनी लड़कीके लिए किसी शिक्षित नौजवानको खरीद सकता है और जरूरतमन्द माता-पितासे बूढ़ेसे-बूढ़ा व्यक्ति भी (जो कभी-कभी शिक्षित भी होते हैं) अधिकसे-अधिक पैसा देकर उनकी लड़की खरीद सकता है। यदि सारस्वत ब्राह्मण लोग अपने मनको सन्तोष देना चाहें और यदि वे इस सुधारको टालना चाहें तो एक चीज है जिससे वे अपने मनको सन्तोष भी दे सकते हैं और जिसकी आड़में वे इस सुधारके प्रयत्नको टाल भी सकते हैं। वह यह है कि दूसरी बहुत-सी जातियाँ भी इस बुराईसे मुक्त नहीं हैं। फर्क होगा तो सिर्फ मात्राका। लेकिन यदि सारस्वत ब्राह्मण लोग इस सुधारमें आगे बढ़कर रास्ता दिखाना चाहते हैं तो "आप भी तो मेरे ही जैसे हैं" के झूठे बहानेकी आड़ नहीं लेंगे और अब चूँकि इस बुराईका पर्दाफाश हो चुका है, इसलिए वे इस दोहरे पापसे अपनेको मुक्त करनेका प्रयत्न शुरू कर देंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ६-१०-१९२७

६७. पत्र : मीराबहनको

६ अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

यह तूतीकोरिनसे लिख रहा हूँ। मैं उम्मीद कर रहा था कि यहाँ तुम्हारा कोई पत्र जरूर आयेगा। मुझे आश्रमसे खबर मिली है कि तुम वहाँ सकुशल पहुँच गई हो। परमात्मा तुम्हारा कल्याण करे।

सप्रेम,

बापू

मीराबहन
सत्याग्रहाश्रम
साबरमती

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८४) से।
सौजन्य : मीराबहन

करती हैं। कुछ महीने पहले बम्बईके एक सज्जनने, जो एक उच्च सरकारी अधिकारी हैं, दहेजमें २०,००० रुपये लिये। यह सचमुच बड़े दुःखकी बात है कि ऊँची शिक्षा पानेवाले लोग इतने गिरते जा रहे हैं।

६८. भाषण : तूतीकोरिनकी सार्वजनिक सभामें

६ अक्टूबर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

इन सब अभिनन्दनपत्रों और थैलियोंके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं शरतम्बल और सरस्वती देवीको भी उनकी चूड़ियोंके लिए धन्यवाद देता हूँ। इन बहनोंने मेरे उस अनुरोधको अनकहे ही पूरा कर दिया है जो मैं बहनोंसे जहाँ-कहीं मिलता हूँ, अवश्य करता हूँ। मैं इस नई और सुन्दर अँगूठीके दाताको तथा चाँदीके प्याले देनेवालोंको भी धन्यवाद देता हूँ। ये सब चीजें तथा मढ़े हुए अभिनन्दनपत्र कुछ देरमें आपके सामने बिक्रीके लिए रखे जायेंगे। क्योंकि इस समयतक आप सब जान गये हैं कि मैं इन सब चीजोंका इस्तेमाल नहीं करता, क्योंकि अपने-आपको दरिद्रनारायणका प्रतिनिधि कहनेवालेके लिए इन चीजोंका व्यक्तिगत उपयोग करना ठीक नहीं होगा। मैं इनका कोई निजी इस्तेमाल नहीं करता लेकिन आपसे प्राप्त इन चीजोंका स्वागत करता हूँ। मुझे ऐसा करनेका अधिकार है।

आपके बीच एक हिन्दी शिक्षक है, इस बातके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ और यह जानकर मुझे खुशी हुई है कि न केवल लड़के और लड़कियाँ, बल्कि प्रौढ़ स्त्री-पुरुष भी हिन्दी सीख रहे हैं। लेकिन मुझे बताया गया है कि हिन्दी-शिक्षाका पूरा खर्च आप नहीं उठाते। यदि ऐसा है तो मैं समझता हूँ कि यह आपकी राष्ट्र-भावनापर धब्बा है। जैसा कि आप जानते हैं, पिछले कई वर्षोंसे उत्तर [भारत] के लोग इस हिन्दी प्रचार कार्यका खर्च उठाते रहे हैं। लेकिन अब समय आ गया है कि यह कार्य आत्म-निर्भर हो जाये। निश्चय ही एक हिन्दी शिक्षक या दो शिक्षकोंका खर्च उठानेमें आपका बहुत पैसा नहीं लगेगा। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप हिन्दी शिक्षकका सारा वेतन स्वयं देनेके लिए हर प्रयत्न करेंगे।

आपके यहाँ एक राष्ट्रीय पाठशाला है, इसके लिए भी मैं आपको बधाई देता हूँ और इसके लिए भी कि आपने उसका नाम लोकमान्य बाल गंगाधर तिलकके नामपर रखा है। मुझे आपके अभिनन्दनपत्रसे यह जानकर दुख हुआ कि आप इस स्कूलका खर्च उठानेमें असमर्थ हैं। यह एक बड़ी बात है कि आपके स्कूलमें अस्पृश्यताको कोई स्थान नहीं है और आप उस स्कूलमें हिन्दी भी पढ़ा रहे हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि राष्ट्र-प्रेमी नागरिक इस स्कूलकी हालतकी जाँच करेंगे और उसे आत्म-निर्भर बनायेंगे। अपने अभिनन्दनपत्रमें आपने मुझसे कहा है कि मैं यहाँ इस नगरमें जो चन्दा इकट्ठा करूँ, उसका एक हिस्सा स्कूलके निमित्त दे दूँ। मुझे आपको यह दुखके साथ बताना पड़ रहा है कि मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं कितना ही चाहूँ, किन्तु यह उचित और ईमानदारीका काम नहीं होगा कि एक निश्चित उद्देश्यके लिए निर्धारित धनका एक छोटा-सा अंश भी मैं अन्य काममें लगाऊँ। यदि किसी नागरिकने मुझे इस स्पष्ट

अनुरोधके साथ थैली दी होती कि उसका एक अंश आपके स्कूलको दे दिया जाये तो मैं खुशीसे वैसा कर सकता था। अब भी यदि कोई नागरिक उस इरादेसे मुझे धन देना चाहता हो तो मैं वैसा खुशीसे करूँगा। लेकिन इस संस्थाको चलानेका यह कोई तरीका नहीं है, हालाँकि इससे थोड़ी मदद जरूर मिलेगी मगर तूतीकोरिनके नागरिकोंके लिए शोभनीय यही है कि वे इस शिक्षण-संस्थाकी मौजूदा हालतकी जाँच करें और उसे सर्वथा स्वावलम्बी बना दें।

मैं कई राष्ट्रीय पाठशालाओंके अपने निजी अनुभवसे जानता हूँ कि ये किस प्रकार चलाये जाते हैं और राष्ट्रीय उद्देश्योंकी वे कितनी अच्छी तरहसे सेवा कर रहे हैं। यदि आपने उत्तर भारतके अपने भाइयोंके ऊपर पड़े संकटमें कोई दिलचस्पी ली है तो आप देखेंगे कि उन गाँवोंकी राष्ट्रीय शालाओंके छात्रोंने उजड़े इलाकोंको फिरसे बसाने और अपनी शक्ति और साधन-भर गाँववालोंके संकटको हल्का करनेमें जबर्दस्त सहायता पहुँचाई है। गुजरातकी राष्ट्रीय शालाओंके छात्रोंने सहज उत्साह और स्वेच्छासे जो ठोस सहायताकार्य किया, उसके बिना श्री वल्लभभाई पटेल बाढ़-पीड़ित लोगोंको वह राहत नहीं दे पाते जो उन्होंने दी। अतः मैं तूतीकोरिनके नागरिकोंसे अपील करता हूँ कि वे इस संस्थाको जिन्दा रखें।

आपके लिए खादी-कोषसे सहायता प्राप्त करनेका एक तरीका है। आप जानते हैं कि अखिल भारतीय चरखा संघ नामक एक संस्था है। यदि आप अपने छात्रोंको हाथ-कताई और सूत तैयार करनेके लिए राजी कर सकें, तो आप वह सूत संघ को भेज सकते हैं, और बदलेमें संघ आपको खासी कीमत देगा और एक तरहसे आपकी सहायता करनेकी भी कोशिश करेगा।

मैंने लोगोंको कहते सुना है कि इस प्रान्तकी यात्राके दौरान मैंने तमिल भाषा-का कोई जिक्र नहीं किया है और न सीखनेकी आवश्यकताका ही जिक्र किया है। बल्कि उसके लिए मुझपर दोषारोपण भी किया गया है। मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि मैं इस मीठी फटकारको स्वीकार नहीं कर सकता। जो लोग मुझे अच्छी तरह जानते हैं वे मानेंगे कि यह फटकार देना मेरे साथ अनुदारता बरतना है। मैंने अंग्रेजी भाषा सीखनेसे पहले तमिल भाषा सीखनेकी आवश्यकताके बारेमें कई बार कहा है, और बहुत पहले, १९१५ से ही मैं लोगोंसे कहता रहा हूँ कि वे अंग्रेजीकी अपेक्षा तमिलके अध्ययनको प्राथमिकता दें। आजसे दस वर्ष पूर्व, १९१७ से पहले मैंने सारे भारतमें एक अनवरत आन्दोलन चलाया कि स्कूलोंमें छात्रोंको प्रान्तीय भाषाओंके माध्यमसे शिक्षा दी जाये और लोगोंसे बराबर कहा कि वे अपनी-अपनी प्रान्तीय भाषाओंमें बातचीत करें और उनके साहित्यका अध्ययन करके उन्हें समृद्ध बनायें।

'तिरुकुरल'[1] में जो बहुमूल्य निधियाँ संचित हैं, उनकी ओर आपने मेरा ध्यान ठीक ही आकृष्ट किया है। मैं आपको बता दूँ कि आजसे बीस वर्ष पहले मैंने 'तिरु-कुरल' को मूल तमिलमें पढ़नेके उद्देश्यसे सीखना शुरू किया। मेरे लिए यह गहरे दुःख-का विषय रहा है कि ईश्वरने मुझे तमिल भाषा सीखनेका पूरा समय ही नहीं दिया।

१. एक प्राचीन तमिल ग्रन्थ।

क्षेत्रीय भाषाओको शिक्षाका माध्यम बनानेके आन्दोलनके मै पूरी तरह पक्षमें हूँ। हमें तमिल सीखनी चाहिए, उसे अंग्रेजीके सामने प्राथमिकता देनी चाहिए और अन्य सभी भाषाओसे ऊपर रखना चाहिए।

जैसा कि आप जानते है, मैंने एक स्थानकी स्वागत समितिको हल्की फटकार भी बताई है कि उन्होंने अपनी प्रान्तीय भाषा तमिलके बजाय अपना अभिनन्दनपत्र अंग्रेजीमें क्यो पढ़ा। इसलिए मै आशा करता हूँ कि आप इस सिलसिलेमें मुझपर आरोप नही लगायेंगे, क्योकि आप जानते है कि मै स्कूलो और सभी शिक्षा-केन्द्रोमें अंग्रेजीके स्थानपर तमिलको लागू करनेके पक्षमें हूँ।

एक अभिनन्दनपत्र तूतीकोरिनके मछुओकी तरफसे भी है। उन्होने मुझसे अपनी एक कठिनाईसे निकलनेका रास्ता बतानेको कहा है। मुझे दुःख है कि उन्होने अपने अभिनन्दनपत्रमें जिस विधेयकका जिक्र किया है, उसे मैंने पढा नही है। इस मामलेमें तो स्थानीय राष्ट्र-भक्तोंको ही उन्हें मार्गदर्शन देना है। अभिनन्दनपत्रमें कही गई सारी बातोंका जवाब देनेके बाद अब मै अपने उस प्रिय विषयपर आता हूँ, जो मुझे यहाँ लाया है। . . .[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-१०-१९२७

६९. भाषण : तिन्नेवेल्लीकी सार्वजनिक सभामें

७ अक्टूबर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

इन बहुत सारे अभिनन्दनपत्रों और आपकी थैलियो तथा उपहारोके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने अपने सभी अभिनन्दनपत्र नही पढ़े, इसके लिए मै आपको और अधिक धन्यवाद देता हूँ। आज मै दिन-भर बहुत व्यस्त रहा, और उससे भी ज्यादा थकान मुझे जबर्दस्त शोर-शराबेके बीच तिन्नेवेल्लीकी सड़कोसे गाड़ीमें यात्रा करनेमें हुई है। और फिर अब मुझे बहुत देर भी हो चुकी है। इसलिए अब आप शायद समझ सकते है कि आपने अभिनन्दनपत्रोको पढनेका अपना अधिकार जो छोड़ दिया, उसकी मै कितनी कद्र करता हूँ। आपने मुझे इतने सारे छोटे-बड़े उपहार दिये है कि जब मै अपनी रीतिके अनुसार सभाके अन्तमें इन उपहारोको नीलाममें बेचने लगूँगा तो उसमें भी कुछ समय लगेगा। यह बतानेकी शायद ही जरूरत हो कि मैंने आपके सारे अभिनन्दनपत्रोको पढ लिया है, जिनके अनुवाद मुझे दे दिये गये थे। भारतीय ईसाई संघके अभिनन्दनपत्रमें ईसाई समुदायकी ओरसे दिये गये इस आश्वासनकी मै कद्र करता हूँ कि भले ही उन्होने पहले अपनेको राष्ट्रीय आन्दोलनोंसे दूर रखा हो, लेकिन अब वे उसमें भाग ले रहे है। वस्तुतः मै बड़ी दिलचस्पी और

१. इसके बाद गांधीजी खादी और अस्पृश्यताके बारेमें बोले।

खुशीके साथ सारे दक्षिण भारतमें ईसाई मित्रोंके इस आश्वासनको मूर्तरूप ग्रहण करते देखता रहा हूँ। मेरे मनमें इस बारेमें कोई सन्देह नहीं है कि ऐसा ही होना भी चाहिए। ईसाईधर्म या अन्य कोई धर्म स्वीकार करनेका नतीजा राष्ट्रीयताकी भावनासे रहित हो जाना नहीं होना चाहिए। जरूरी नहीं कि राष्ट्रीयता संकीर्ण हो या अंतर्राष्ट्रीयतासे उसका तालमेल न बैठे। ऐसा राष्ट्रवाद जो शुद्ध स्वार्थ और अन्य देशोंके शोषणपर आधारित है, अवश्य ही एक बुराई है। लेकिन मैं अन्तर्राष्ट्रीयतावादकी कल्पना एक स्वस्थ और वांछनीय राष्ट्रीय भावनाके बिना कर ही नहीं सकता।

उस अभिनन्दनपत्रमें खादीके प्रति जो पूर्ण सहानुभूति व्यक्त की गई है, उससे मुझे खुशी हुई। मुझे खादी जैसी अत्यन्त सीधी-सादी चीजके प्रति तनिक भी विरोध बहुत विचित्र-सा लगता है; क्योंकि आखिरकार खादी तो करोड़ों भूखे लोगोंसे अपना सम्बन्ध स्थापित करनेकी इच्छा-मात्र है। कोई स्त्री या पुरुष जो लाखों मेहनतकश लोगोंकी सेवा करना चाहता है, इस सेवाकार्यकी शुरुआत खादीसे ही कर सकता है। अभी हालमें ही सर एम० विश्वेश्वरैयाने इस तथ्यपर दुःख प्रकट किया है कि गाँवोंके करोड़ो आदमी, जिनके पास इतना समय और फुरसत है, अपना उत्पन्न किया हुआ कच्चा माल भारतसे बाहर भेज रहे हैं और स्वयं अपने ही प्रयत्नोंसे अपनी सहायता करनेके अवसरसे अपनेको वंचित कर रहे हैं। अवश्य ही, देशके इस हिस्सेमें आपको अपनी उत्पन्न की हुई कपासका लाभदायक ढंगसे इस्तेमाल कर सकनेका अनोखा अवसर प्राप्त है। आप यहाँ मेजपर खादीके ये जो टुकड़े पड़े देख रहे हैं, इनका इतिहास मैं आपको बताऊँगा। आपके बीचमें एक सज्जन हैं जिनका नाम है श्री आरंबलरथनाथम् पिल्लई। उन्होंने और मेरे कृपालु मेजबान श्री विश्वनाथ पिल्लईने दो स्कूलोंमें लड़के और लड़कियोंको मामूली कताई सिखानेकी मन्त्रणा कर रखी है। और तकलियोंपर कताई करनेवाले इन लड़के-लड़कियोंकी मेहनत एक महीनेमें सत्रह गज खादी तैयार करनेके लिए काफी है। और मुझे उम्मीद है कि इन लड़के और लड़कियों द्वारा तैयार की गई खादीकी छोटी मात्राको इस सभामें उपस्थित कोई व्यक्ति उपेक्षाकी दृष्टिसे नहीं देखेगा, क्योंकि इन बालक-बालिकाओंको तो अभीतक यह भी नहीं मालूम था कि एक गज खादी भी तैयार करनेके क्या मतलब हैं। हमारा यह देश उन देशोंमें से है, जहाँ संसारकी सबसे ज्यादा मानव-शक्ति मौजूद है। और सर एम० विश्वेश्वरैयाके अनुसार, इस मानव-शक्तिका कोई उपयोग नहीं किया जाता। यदि भारत-भरमें सभी स्कूल प्रति-दिन थोड़ा समय भी कताईपर लगायें तो आप कल्पना कर सकते हैं कि बिना किसी खास तकनीकी कुशलताके और बिना किसी पूंजीके देशकी उत्पादन-क्षमता कितनी अधिक बढ़ जायेगी। मेरे पास यहाँ करीब ८५ गज खादी है जिसे आपकी ही रुईसे आपके ही यहाँके लड़के-लड़कियोंने यहीं काता-बुना है। आपके लिए यहाँ वह कपड़ा रखा हुआ है जिसका अपना एक इतिहास है और जिसमें एक कविता छिपी हुई है। उक्त सज्जनने मुझे एक टुकड़ा भेंट करते हुए मुझसे इसे नीलाम करनेके बजाय खुद ही इस्तेमाल करनेको कहा है। मुझसे यह वचन लेनेके लिए उन्हें वास्तवमें कुछ कहनेकी जरूरत नहीं थी। तथ्य तो यह

है कि इस कपड़ेकी तरह ही, मैं जितनी भी खादी इस्तेमाल कर रहा हूँ, उस सबका ऐसा ही अपना एक इतिहास है। मुझे यह याद रखनेमें बहुत खुशी होती है कि जो कपड़े मैं पहन रहा हूँ उसे किस बहन या बेटीने काता या किसके हाथोंने बुना है। भारतका यह एक अत्यन्त व्यापक और सार्वत्रिक उद्योग है जिसे न केवल हमारे करोड़ो भूखे देशवासी अपना सकते हैं, बल्कि जिसकी बुनियादपर आप महान प्रवृत्तियोका भवन खड़ा कर सकते हैं और इस देशकी सभी जातियो और समुदायोको एक सूत्रमें बाँध सकते हैं।

लेकिन जहाँ इन दोनो मित्रोंको खादीके भविष्यमें और जनसाधारणकी गहरी और दुःखद गरीबीको काफी हदतक हल कर सकनेकी उसकी क्षमतामें विश्वास है, वही उन्हें इस देशमें ब्राह्मण और अब्राह्मण समस्याके हल होनेमें अभी कोई विश्वास नही है। उन्हें भय है, कमसे-कम उनमेंसे एकको यह भय है कि तमिलनाडुमें खादी-कार्यपर ब्राह्मणोकी छाप अधिक है। इसलिए मुझपर यह बन्धन लगा दिया गया है कि मैं यह खादी तो आपको बेच सकता हूँ लेकिन इस धनका उपयोग मैं तमिलनाडुमें खादी-कार्यपर न करूँगा। मैंने यह वचन उन्हें दे दिया है, क्योकि आप जितना दे सकें उतने धनकी मुझे देशके अन्य भागोंमें खादी-कार्यके लिए आवश्यकता है। लेकिन मैं आपको सूचित कर दूँ कि हालाँकि तमिलनाडुके खादी संगठनपर ब्राह्मणोंका प्रभाव है, लेकिन इस आन्दोलनसे लाभ उठानेवाले कतैयो और बुनकरोंकी बहुत बड़ी संख्या अब्राह्मणोंकी है। और अखिल भारतीय चरखा संघके अध्यक्ष और प्रधानके नाते मैं आपको यह आश्वासन भी देना चाहता हूँ कि यदि मुझे अपनी शर्तोंपर उतनी ही संख्यामें प्रवीण कार्यकर्त्ता अब्राह्मणोमें से मिल जायें तो मैं अखिल भारतीय चरखा संघके सभी ब्राह्मण कार्यकर्त्ताओको आज बर्खास्त ही कर दूँगा। मैं आपको यह भी बता दूँ कि तमिलनाडुमें जो थोड़े-से ब्राह्मण अखिल भारतीय चरखा संघमें काम कर रहे हैं, उनमे से हर व्यक्ति उस वेतनसे कही ज्यादा कमा सकनेमें समर्थ है जितना कि संघ उन्हें कभी दे सकता है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अखिल भारतीय चरखा संघ ऐसी सस्था नही है जिसमें पैसा कमा कर अमीर बननेकी इच्छा रखनेवाला कोई भी व्यक्ति शामिल हो सके। इसके लिए निःस्वार्थ भाव, आत्मत्याग और जीवनकी शुद्धता परमावश्यक गुण हैं। सरकारी नौकरियोंमें जैसे वेतन-मान हैं, वैसे वेतनोंपर अखिल भारतीय चरखा संघको चलाना मेरे लिए असम्भव होगा। अखिल भारतीय चरखा संघमें ऐसे लोग हैं जो किसी समय १००० से १५०० रुपये महीना कमा रहे थे और जो अब संघसे मुश्किलसे १०० रुपये पाते हैं। यदि मैं चरखा संघके अधिकारियोंको वैसे वेतन देना शुरू कर दूँ तो मुझे दिवाला-अदालतमें अर्जी दाखिल करनी पड़ जायेगी (हँसी)। इसलिए आप विश्वास करें कि यदि चरखा संघमें अपनेको खपा देनेवाले कुछ ब्राह्मण हैं तो वे सच्चे ब्राह्मण धर्मसे ही उसमें कार्य कर रहे हैं। और मैं आपसे साफ कहूँगा कि यद्यपि मैं ब्राह्मण नही हूँ, फिर भी वास्तविक और सच्चे ब्राह्मण-धर्मके प्रति मेरे मनमें असीम आदरका भाव है। यदि मुझे उस धर्मका पालन करनेवाले लोग काफी संख्यामें मिल जायें तो इस समय देशके सामने जो भी सम-

स्याएँ है, उनमें से हरएक को विश्वासपूर्वक हल करनेका बीड़ा मैं उठा सकता हूँ। ब्राह्मणका मूल अर्थ है ऐसा व्यक्ति जिसे ब्रह्मका ज्ञान हो, और ऐसे व्यक्तिका गुण यह है कि वह विद्वत्ता, आत्म-त्याग और सेवाकी प्रतिमूर्ति हो। मैं स्वीकार करता हूँ कि ऐसे ब्राह्मण भारतमें सभी जगह नहीं मिलते। लेकिन मैं व्यक्तिगत अनुभवसे इस बातकी साक्षी भरता हूँ कि ऐसे ब्राह्मण अब भी है; और भारतमें मेरा एक कार्य यह है कि मैं ऐसे हर ब्राह्मणको पकड़ूँ। यह मेरा विश्वास है कि चरखा संघमे कुछ ब्राह्मण है, जिनमें लगभग सभी ब्राह्मणोचित गुण मौजूद है। व्यक्तिगत रूपसे मैं नहीं मानता कि ऐसे लोगोंके ज्ञान और आत्म-त्यागके बिना इस बड़े आन्दोलनको इतने व्यापक पैमानेपर चलाया जा सकता। यदि मेरे पास समय और शक्ति होती तो मैं ब्राह्मण-अब्राह्मणके इस जटिल प्रश्नपर और अधिक विस्तारसे चर्चा करता। मैं यह सोचनेका साहस करता हूँ कि मुझे अब इस बातका खासा अन्दाज हो गया है कि यह समस्या है क्या। मैं आशा रखता हूँ कि समय मिलते ही मैं अपने विचारोंको लिखित रूपमें प्रस्तुत करूँगा। लेकिन ब्राह्मण-अब्राह्मण विवादपर बहस करते हुए हमें भारतके जनसाधारणको नही भूल जाना चाहिए।

अगर मैं संक्षेपमें कहूँ तो ब्राह्मण-अब्राह्मणका सवाल भी कुल मिलाकर अस्पृश्यताका ही सवाल है। जो आदमी अस्पृश्यताके नागको मार देगा, समझ लीजिए कि उसने ब्राह्मण-अब्राह्मण समस्याकी जड़पर कुठाराघात कर दिया है। कारण, यह मेरा निश्चित विश्वास है कि यह अस्पृश्यताका अभिशाप ही है जिसने हिन्दू-धर्ममें प्रवेश करके उसे विषाक्त कर दिया है। सो इस तरह कि यह अस्पृश्यता, जिसका उग्रतम और संतापकारी रूप यह है कि हम कुछ लोगोंको स्पर्श न करने लायक और कुछको न देखने लायक मानते हैं, हिन्दू-धर्मके मर्ममें बिंध गई है। एक वर्गके ऊपर दूसरे वर्ग द्वारा अपनी श्रेष्ठताका अहंकारपूर्ण दावा ही अस्पृश्यताका आधार है; और एक बार हम इस श्रेष्ठता रूपी सहस्रमुखी नागसे सफलता पूर्वक निपट लें तो मेरे विचारमें हमें और किसी चीजके बारेमें लड़नेकी जरूरत नहीं रहेगी। इसलिए हर प्रकारकी अस्पृश्यताके विरुद्ध इस जिहादमें मैं आप सबको मेरा साथ देनेको निमंत्रित करता हूँ। मुझे आपके अभिनन्दनपत्रोंसे और आज तीसरे पहर हुई बातचीतमें यह जानकर खुशी हुई कि आपके नगरपालिका-संचालित स्कूल अस्पृश्योंके लिए खुले हुए है। लेकिन मैं आपसे कहूँगा कि इतनेसे ही सन्तोष मत मानिए। जब हमारे बीचसे अस्पृश्यता सचमुच खत्म हो जायेगी तो आपको अस्पृश्योंकी बस्ती नहीं मिलेगी। तब किसी मन्दिरके भीतर पूजा-कक्षतकमें जानेका अधिकार किसी अस्पृश्यको भी उतना ही होगा जितना किसी बड़ेसे-बड़े ब्राह्मणको है। वे सार्वजनिक कुओं और सार्वजनिक स्थानोंके उपयोगके उतने ही अधिकारी होंगे जितने कि अन्य लोग है। तब हमारे यहाँ ब्राह्मण तालाब, अब्राह्मण तालाब और अस्पृश्य तालाब नहीं होंगे। 'भगवद्गीता' की भाषामें, ब्राह्मण और भंगी ईश्वरके समक्ष एक-जैसे होंगे। और आप अपने मनमें ऐसा कोई भ्रम पैदा न होने दें — जैसा कि पण्डित लोग अकसर पैदा कर देते हैं — कि 'गीता' का यह वचन असाधारण यशस्वी या आध्यात्मिक गुणोंवाले व्यक्तियोंपर ही लागू

होता है। जब अस्पृश्यताका सचमुच अन्त हो जायेगा और वह अतीतकी चीज बन जायेगी तब आप अपने बीच वह नही पायेंगे जो मैं आगे बताने जा रहा हूँ।

मैं अपने साथ जो कागज लाया हूँ उनमें एक दुखद पत्र है, जो मुझे इस स्थानके एक निवासीने लिखा है। वह मुझे बताता है कि आपकी नदी ताम्रपर्णीके पानीको यहाँके नागरिक गन्दा कर देते हैं। वह मुझे बताता है कि जहाँ स्वास्थ्य अधिकारी हैजा रोकनेके लिए आपके शरीरमें इंजेक्शन लगाते है, वही आप खुद नदीके पानीको तरह-तरहसे गन्दा करके उसमें हैजेके कीटाणु छोड़ते रहते हैं। यहाँकी नगरपालिकाने मुझे इस बातपर धन्यवाद दिया है कि मैने कई स्थानोपर नगरपालिकाके काम-काजकी कुछ बुराइयोके बारेमें खुले तौरपर बातें कही हैं। नगरपालिकाके सदस्योने मुझे बताया है कि वे इन भाषणोसे लाभ उठानेकी आशा करते हैं। मै पूरी आशा करता हूँ कि उनकी यह आशा निकट भविष्यमें पूरी हो जायेगी। मै यह सुझाव देना चाहूँगा कि आप अपने इस कार्यकी शुरुआत यो कीजिए कि नदीके तटपर जो गन्दगी सुबहसे शामतक जमा हो जाती है उसे प्रतिदिन सुबह साफ कीजिए। आपने ध्यान दिया होगा कि मै इस बुराईका सम्बन्ध भी अस्पृश्यतासे जोड़ता हूँ। मै केवल निजी अनुभवसे ही नहीं, बल्कि भारतके हजारो आदमियोके अनुभवसे यह बात कहता हूँ। दुर्भाग्यवश, अस्पृश्यताके कारण हमने अपनी सफाईकी ओर स्वयं ध्यान न देनेकी आदत डाल ली है। हम तथाकथित उच्च जातिवाले लोग अपनी सफाईकी ओर स्वयं ध्यान नही देते। इसे हम अपने अहंकार और पूर्वग्रहके कारण खास तौरपर अस्पृश्योका काम समझते है। और अपने इन देशवासियोके प्रति एक प्रकारकी तिरस्कार-भावना आ जानेके कारण हम यह भी नही देखते कि वे क्या काम करते है और कैसे करते है। इन बेचारोको सफाई और स्वच्छताके बुनियादी नियम भी कभी नही बताये गये है। और इसी कारण नदीका तट हो या अन्य कोई जगह हो, वह इन लोगो द्वारा सफाई करनेके बाद भी ज्योकी-त्यो गन्दी रहती है। आप शायद न जानते हों कि इस गम्भीर त्रुटिको दूर करनेके लिए ही मुझे अहमदाबादमें कांग्रेसके कामके लिए भंगियोंका एक दस्ता खड़ा करना पड़ा था जिसमें अस्पृश्य नहीं, बल्कि ब्राह्मण और अब्राह्मण स्वयंसेवक थे। यदि आप अच्छी तरह और बिना खर्च उठाये सफाई आदि करना चाहते है तो आपमें से हरएकको स्वयं अपने भंगीका काम करना चाहिए। जो माँ अपने बच्चेके लिए भंगीका काम नही करती, वह माँ नही रह जाती। तनिक-सा विचार करनेसे आप देख सकेंगे कि आपमें से जिनको भी अपने नगरके कल्याणका ध्यान है, उन सबको ऐसी माँ की स्थिति अपनानी पड़ेगी। मेरे मनको अपनी यात्रामें यह जानकर बड़ा आनन्द होगा कि आपने भंगीका काम भी स्वयं करनेका निश्चय किया है।

मैं कई ऐसे सामाजिक प्रश्नोकी चर्चा छोड़ रहा हूँ, जिनके बारेमें मैं कुछ कहना चाहता था। विरुधुनगरके अपने नाडर मित्रोको दिया गया अपना वचन मुझे नही भूलना चाहिए। आपने शायद अखबारोंमें इस क्षेत्रीय अस्पृश्यताके बारेमें पढ़ा होगा। तिन्नेवेल्ली और मदुरै जिलेके हिन्दुओंके लिए यह बड़ी लज्जाकी बात है कि वहाँके

नाडरों-जैसे स्वच्छ और कुशल व्यापारी-समुदायको मन्दिरोंमें प्रवेशकी अनुमति न हो। मैं चाहता हूँ कि आप किसी प्रकार इस बुराईसे यथाशीघ्र मुक्ति पा लें। अब मैं ये चीजें नीलाममें बेचूंगा और स्वयंसेवक लोग आपके बीच जाकर चन्दा इकट्ठा करेंगे। मैं आशा करता हूँ कि जो लोग कपड़ेके इन टुकड़ोंको खरीदेंगे वे उन्हें पहननेमें गर्वका अनुभव करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १०-१०-१९२७

७०. पत्र : प्रागजी देसाईको

८ अक्टूबर, १९२७

भाईश्री प्रागजी,

तुम्हारा पत्र मिला। उसके पहले ही मैं शास्त्रीजी और एन्ड्रयूजको लिख चुका था। तुम्हारा पत्र मैंने दीनबन्धुको[1] अपनी सिफारिशके साथ भेज दिया है। मैं तो ऐसा नहीं मानता कि उन्होंने भूल की होगी। जो भी हुआ हो इतना तो निश्चित है कि वे जानबूझकर झूठ नहीं बोल सकते। और फिर, वे जो भी सेवा करें, उसके लिए तो हमें उनका कृतज्ञ होना ही चाहिए। जल्दीमें कुछ मत करना। तुम नेटालमें रह चुके हो इसलिए सावधिक अनुमति-पत्र लेनेकी कोई जरूरत नहीं। किन्तु यदि शास्त्री आग्रह करें और एक वर्षसे ज्यादाकी अवधिवाले कुछ अनुमति-पत्र दिलानेका बीड़ा उठायें और तुम ट्रांसवालमें रहना चाहते हो तो सावधिक अनुमति-पत्र ले लेना। अगर मणिलालको देवदासने ही भेजा है तब तो यह बहुत अच्छी बात हुई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ५०३०) की फोटो-नकलसे।

1. सी० एफ० एन्ड्रयूज।

७१. पत्र : मीराबहनको

८ अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

मैं तुम्हें हररोज पत्र नहीं लिखूँगा, क्योंकि मेरा खयाल है कि तुम्हें किसी ठण्डक पहुँचानेवाले मरहमकी जरूरत नहीं है। इस वक्ततक घाव[1] जरूर अच्छा हो गया होगा। आश्रमसे आये हुए तुम्हारे पत्रसे मुझे तसल्ली हो गई है।

हाँ, तुम गोशालाका या दूसरा जो भी काम पसन्द हो, कर सकती हो। तुम्हारी खुराकका क्या हाल है? छोटेलालकी ओरसे जो सन्देश भेजा है, उसे मैं स्वीकार नहीं कर रहा हूँ। उसे खुद लिखना चाहिए और विस्तारसे।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८५) से।
सौजन्य : मीराबहन

७२. भाषण : नागरकोइलमें[2]

८ अक्टूबर, १९२७

हिन्दुस्तानके इस स्वर्ग-सुन्दर हिस्सेमें दुबारा आनेसे मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है, मगर इस बातसे कि इस सुन्दर प्रदेशमें अस्पृश्यताका जितना बोलबाला है उतना हिन्दुस्तानमें और कहीं नहीं है, मुझे जो दुःख होता है, उसे भी मैं आपसे नहीं छिपा सकता। हिन्दू होनेके नाते यह देखकर मुझे बड़ी जलालत मालूम होती है कि इस प्रगतिशील हिन्दू राज्यमें अस्पृश्यता अपने सबसे बीभत्स रूपमें व्याप्त है। कुछ लोगोंको देखने और कुछको पास फटकने देनेतकमें छूत मानी जाती है। मैं अपनी जिम्मेवारीको अच्छी तरह समझते हुए कहता हूँ कि यह अस्पृश्यता हिन्दू धर्मके लिए एक ऐसा अभिशाप है, जो उसके जीवन तत्त्वको खाये जा रहा है और मुझे कभी-कभी लगता है कि अगर हम चेत न गये और हमने अस्पृश्यताको मिटा न दिया तो हिन्दू-धर्मका अस्तित्व ही खतरेमें पड़ जायेगा। यह तो मेरी समझके बाहरकी बात है कि तर्कके इस युगमें, संसार परिभ्रमणके इस युगमें, भिन्न-भिन्न धर्मोका तुलनात्मक अध्ययन करनेके इस जमानेमें ऐसे लोग, और कभी-कभी तो ऐसे पढ़े-लिखे लोग भी मिलें

१. मूलमें यहाँ "वर्ल्ड" (संसार) शब्द है।
२. "मैसेज टू त्रावणकोर" (त्रावणकोरको सन्देश) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित।

जो उस बीभत्स सिद्धान्तका समर्थन करें और जो एक भी मनुष्यको अमुक परिवारमें उसके जन्म लेनेके कारण, न छूने लायक या न देखने लायक अथवा पास न फटकने देनेके लायक समझें। हिन्दूधर्मके एक सामान्य और विनम्र अध्येताके नाते और भावना तथा शब्द दोनों ही दृष्टियोसे उसका पालन करनेकी अभिलाषा रखनेका दावा करनेवाले व्यक्तिकी हैसियतसे मैं कहता हूँ कि इस भयंकर सिद्धान्तके समर्थनमें मुझे कही भी कोई प्रमाण या औचित्य नहीं मिला है। हम इस भूलमें न पड़े कि संस्कृतमें लिखी और शास्त्रोंमें छपी एक-एक बात हमारे लिए बन्धनकारी है। जो नैतिकताके मूलभूत सिद्धान्तोके विरुद्ध हो, जो सही दिशामें काम करनेवाली बुद्धिके विरुद्ध हो, वह चाहे कितना ही पुराना क्यों न हो, मगर शास्त्र नही हो सकता। मैंने अभी जो-कुछ कहा है, उसका यथेष्ट समर्थन वेदोंसे, 'महाभारत' से और 'भगवद्गीता' से होता है। इसलिए मै आशा करता हूँ कि त्रावणकोरकी जागरूक महारानी साहिबा अपने राजत्वकालमें इस अभिशापको इस प्रदेशसे दूर कर सकेंगी; और कोई स्त्री यदि अपने-आपसे और अपनी प्रजासे यह कह सके कि मेरे राजत्वकालमें युगोंसे गुलामीमें पिसनेवाले इन लोगोंको मुक्ति मिल सकी है, तो इससे बड़ी बात उसके लिए और क्या होगी?

मगर मैं उनकी और उनके मन्त्रियोंकी कठिनाइयोंको भी जानता हूँ। चाहे कोई सरकार कितनी भी निरंकुश क्यों न हो, ऐसे सुधार करनेमें डरती ही है, वह फूंक-फूंककर ही पाँव रखती है। ऐसे सुधारोंके सम्बन्धमें कोई भी चतुर सरकार आन्दोलनका स्वागत करेगी। मूर्ख सरकार लोकमतसे अधीर होकर ऐसी हलचलको जोर-जबरदस्तीसे रोकनेकी कोशिश करेगी। मगर वाइकोम सत्याग्रहके अपने जाती अनुभवोंसे मैं जानता हूँ कि आपकी सरकार न सिर्फ ऐसे आन्दोलनोंको चलने देगी, बल्कि वह उनका स्वागत भी करेगी, ताकि इस सुधारको सम्पन्न करनेकी दृष्टिसे उसके हाथ मजबूत हो सकें। इसलिए पहल करनेका काम तो त्रावणकोरकी जनताके हाथमें ही है — लेकिन तथाकथित अस्पृश्योंके, जिन्हें "अवर्ण" हिन्दूका गलत नाम दिया गया है, हाथोंमें नहीं। मेरे लिए तो "अवर्ण" हिन्दू शब्द ही असंगत है और हिन्दू धर्मपर कलंक है। कई मामलोंमें पहल उनके हाथमें नही, बल्कि उन तथा-कथित सवर्ण हिन्दुओंके हाथोंमें है, जिन्हें अस्पृश्यताके पापसे अपनेको मुक्त करना है। मै साफ कह दूँ कि यदि आप हाथपर-हाथ धरे बैठे रहते है और सिर्फ मनसे ऐसा मानते रहते है कि अस्पृश्यता पाप है तो यह काफी नही है। जो कोई गुनाह होते देखता रहता है, वह भी उसमें हिस्सेदार है और कानून उसे भी गुनाहमें सक्रिय रूपसे शामिल मानता है। इसलिए आपको सभी वैध और उचित उपायोंसे आन्दोलन शुरू करना और जारी रखना है। यह सुधार तो कबका सम्पन्न हो चुकना चाहिए था, किन्तु ब्राह्मणोंका पुरोहितवर्ग आज भी इसकी राह रोक रहा है। यदि मेरी आवाज उनतक पहुँच सकती हो तो वे इसे सुनें। यह दुखद बात है, मगर ऐतिहासिक सत्य है कि जिन पुरोहितोंको धर्मका सच्चा संरक्षक होना चाहिए था वे ही अपने धर्मके विनाशके साधन सिद्ध हुए है। मै साफ देख रहा हूँ कि त्रावणकोरमें

और अन्यत्र भी ब्राह्मण पुरोहित-पंडे अपने अज्ञान या उससे भी वदतर दोषोके कारण उसी धर्मकी जड़ें खोद रहे हैं, जिसके वे संरक्षक माने जाते है। उनके पाण्डित्यका उपयोग जब एक जघन्य अन्ध-विश्वास, एक भयंकर अन्यायका समर्थन करनेके लिए किया जाता है तो वह पाण्डित्य धूलके समान है। इसलिए मै कामना करता हूँ कि समय रहते वे कालके संकेतोको पहचानेंगे और उस घटनाचक्रके साथ कदम मिलाकर चलेंगे जो उन्हें और हमें, हमारे चाहते या न चाहते हुए भी, सत्यके मार्गपर लिये जा रहा है। संसारके सभी धर्म अपनी तमाम विभिन्नताओंके वावजूद इस वातको एक स्वरसे स्वीकार करते हैं कि संसारमें अन्ततः सत्य ही टिकता है।

अधीर सुधारकको भी मै आगाह कर देता हूँ कि यदि वह सदा सही रास्तेपर, जो सीधा किन्तु सँकरा है, आरूढ़ नहीं रहेगा तो वह अपना भी नुकसान करेगा और उस सुधारके मार्गमें भी वाधक वनेगा जिसको सम्पन्न करानेके लिए उसका अधीर होना विलकुल उचित है। मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि सुधारकके हाथोंमें मैंने सत्याग्रह का अमोघ और अमूल्य अस्त्र दे दिया है। लेकिन, सफल सत्याग्रहकी शर्तें जरा कड़ी हैं। यदि सुधारकको ईश्वरमें, अपने-आपमें और अपने उद्देश्यमें विश्वास होगा तो वह कभी भी हिंसाका सहारा नहीं लेगा — अपने उन घोरतम विरोधियोके खिलाफ भी नहीं जिन्हें यदि वह अन्यायी, अज्ञान और हिंसक कहे तो वह भी उचित होगा। मेरा कहना है कि सत्यका प्रतिष्ठापन कभी भी हिंसाके जरिये नही हुआ है और मुझे यह विश्वास है कि मेरे इस कथनको कोई भी गलत साबित नही कर सकता। इसलिए सत्याग्रही अपने विरोधीको या तथाकथित शत्रुको जोर-जबरस्तीसे नही, बल्कि प्यारसे, उसे धीरे-धीरे अपने पक्षकी सचाईका कायल करके जीतता है। उसके तरीके वरावर नम्र और भद्रतापूर्ण होते है। वह कभी भी किसी चीजको वढा-चढ़ाकर नही देखता। और चूंकि अहिंसाका दूसरा नाम प्रेम है, इसलिए, उसके पास स्वयं कष्ट-सहनके अलावा और कोई अस्त्र नही होता। और सबसे बड़ी वात तो यह है कि अस्पृश्यता निवारण आन्दोलन ऐसे आन्दोलनोंकी कोटिमें आता है जो मेरे विचारसे तत्त्वतः धार्मिक और आत्म-शुद्धिके आन्दोलन होते हैं। इसलिए इस आन्दोलनमें घृणा, जल्दवाजी, विचारहीनता और अतिरंजनाके लिए कोई गुंजाइश नही है। चूंकि सत्याग्रह सीधी कार्रवाईका एक सबसे शक्तिशाली तरीका है, इसलिए सत्याग्रह करनेसे पहले सत्याग्रही दूसरे सभी तरीकोंको आजमाकर देख लेता है। लेकिन जब वह एक वार अपनी अन्तरात्माके आकुल निर्देशको सुन लेता है और सत्याग्रह प्रारम्भ कर देता है तो उसे समझ लेना चाहिए कि उसने पीछे लौटनेका अपना सारा रास्ता वन्द कर दिया है और अब लौटनेकी कोई वात ही नही रह गई है। लेकिन, मैं आशा करता हूँ कि इस प्रदेशमें लोगोको एक ऐसी बुराईको दूर करानेके लिए इतने सारे कष्ट नही सहने पड़ेंगे जो दिनके उजालेके समान स्पष्ट है।

आपको यह जानकर खुशी होगी कि मेरे यहाँ आते ही पुलिस कमिश्नरने आकर मुझसे मिलनेका सौजन्य दिखाया। हमने इस वड़े मसलेपर वातचीत की। जहाँतक मैं जानता हूँ, अभी दो सवाल विचाराधीन हैं। एक तो तिरुवरप्पुके आसपासकी

सड़कोंके बारेमें है और दूसरा सुचिन्द्रम्के सम्बन्धमें। मेरे जानते इन दोनों स्थानोंपर न्याय सुधारकोंके पक्षमें है। मुझे मालूम हुआ है कि पहले स्थानमें तो सत्याग्रहियोंने अपना संघर्ष शुरू भी कर दिया है। मेरा खयाल है, यह कदम जल्दीमें उठाया गया है। इसलिए मैंने उन्हें एक तार भेजकर फिलहाल रुके रहनेको और कल त्रिवेन्द्रम्में मुझसे मिलनेको कहा है। यदि मुझे मौका मिला, और उम्मीद है मिलेगा, तो मैं इन दोनों सवालोंपर अधिकारियोंसे बातचीत करना चाहता हूँ। यद्यपि मेरी इस त्रावणकोर यात्राका मुख्य उद्देश्य खादीका काम या खादीके लिए चन्दा उगाहना था, किन्तु भाग्यने मुझे यहाँ आते ही इस अस्पृश्यताके झंझटमें डाल दिया। मेरे पास जो थोड़ा-सा समय है, उसमें मैं पूरी नम्रताके साथ राज्य और जनताको एक सम्मानजनक निबटारा करनेमें सहायता देनेकी यथाशक्ति कोशिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २०-१०-१९२७

७३. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

त्रावणकोर
[९ अक्टूबर, १९२७][1]

चि० मणिलाल और चि० सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिलते रहते हैं। तुमने शास्त्रीजीके जिस दोषका उल्लेख किया है उसका विचार हम नहीं कर सकते। सरकारी नौकरीमें यह दोष लगभग अनिवार्य है। मुझे जब सरकारकी पद्धति बहुत गलत मालूम हुई तभी तो मैंने असहयोगको अपनाया। यह उचित ही है कि तुम जिस विशेष वातावरणमें बड़े हुए हो उसके कारण तुम्हें ऐसी स्तुति असह्य मालूम होती है। किन्तु अपनेसे बड़ोंका सम्मान करना चाहिए, इस नियमके अनुसार हमें जहाँतक सम्भव हो उनकी टीका नहीं करना चाहिए। यह दोष तुमने मुझे बताया सो तो ठीक किया। किन्तु शास्त्रीजीके प्रति अपने व्यवहारमें अथवा उनके लिए तुम्हारे मनमें जो हार्दिक सम्मान है उसमें कोई फर्क मत पड़ने देना। उनके जैसे नीतिमान् और कुशल देशसेवक हमारे पास बहुत ही कम हैं।

देवदासका बवासीरका ऑपरेशन हुआ है। वह डा० राजन्के अस्पतालमें है। ऑपरेशन हुए आज छः दिन हुए हैं। उसकी प्रगति ठीक है। आश्रमके लगभग सभी व्यक्ति बाढ़-संकट-निवारणके काममें लग गये हैं। हम लोग आज त्रावणकोर आये हैं। बा कन्याकुमारी देखने गई है। मैं और महादेव तो देख चुके हैं। काकासाहब भी साथ हैं। वे भी गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७२९) की फोटो-नकलसे।

१. देवदासके बवासीरके ऑपरेशनके उल्लेखसे; देखिए "पत्र : मीराबहनको", ३-१०-१९२७।

७४. भाषण : त्रिवेन्द्रम्‌में[1]

[१० अक्टूबर, १९२७ या उससे पूर्व][2]

नागरकोइलकी तरह ही यहाँ भी मेरा अधिकांश समय इसी समस्यापर बातचीत करते बीता है। वैसे तो दीवान साहबसे मैं अंशत: सामाजिक शिष्टाचारके नाते मिला था, लेकिन स्वभावत: हमने इस जटिल समस्याकी चर्चा की। और सभामें मैं कुछ मिनट देरसे इसलिए आया कि मै रीजेंट महारानी साहिबासे मिलने चला गया था और उनसे भी मैंने इस विषयपर बातचीत की। एक बार त्रावणकोरको देख लेनेके बाद इस मनोहारी प्रदेशको फिर देखनेकी लालसा मेरे मनमें बराबर बनी रही है। इसकी अत्यन्त सुन्दर दृश्यावली, कन्याकुमारीका इस राज्यमें होना और यहाँकी स्त्रियोकी सादगी और स्वतन्त्रता, इन चीजोंने जब मैं पहले-पहल यहाँ आया था तो मेरा मन मोह लिया था। किन्तु इन तमाम विचारों और याददाश्तोंसे मुझे बराबर जो आनन्द प्राप्त हुआ, उसमें इस विचारके कारण एक गम्भीर व्याघात पड़ता रहा है कि अस्पृश्यता त्रावणकोरमें सबसे भयंकर रूपमें प्रकट हुई है, और यह सोचकर मेरा मन बहुत व्यथित रहा है कि यह बुराई इस भयंकर रूपमें एक ऐसे प्राचीनतम हिन्दू-राज्यमें बनी हुई है, जिसका स्थान शैक्षणिक प्रगतिकी दृष्टिसे सारे भारतमें सर्वोच्च है। और इस उग्रतम रूपमें अस्पृश्यताके अस्तित्वसे मुझे बराबर इतना दु:ख इसलिए हुआ है कि मैं अपने-आपको हिन्दूधर्मकी भावनासे ओत-प्रोत एक सच्चा हिन्दू मानता हूँ। आज हम जैसी अस्पृश्यतामें विश्वास करते है और जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं, वैसी अस्पृश्यताके लिए उन ग्रन्थोमें, जिन्हें हम हिन्दू शास्त्र कहते हैं, मुझे कहीं कोई आधार नही मिला है। लेकिन जैसा कि मैंने अन्यत्र बार-बार कहा है, यदि मुझे यह लगेगा कि हिन्दू-धर्म सचमुच अस्पृश्यताका समर्थन करता है तो मुझे हिन्दू-धर्मको त्याग देनेमे भी कोई हिचकिचाहट नही होगी। कारण, मैं मानता हूँ कि सच्चे धर्मको कभी भी नीति-शास्त्र और नैतिकताके सिद्धान्तोंसे असंगत नही होना चाहिए। लेकिन, चूँकि मै मानता हूँ कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मका अंग नही है, इसलिए इस धर्मसे मैं चिपटा हुआ हूँ, किन्तु साथ ही दिन-दिन इस घोर बुराईके प्रति मै अधिकाधिक असहिष्णु होता जा रहा हूँ। इसलिए जब मैंने देखा कि यह प्रश्न त्रावणकोरको आन्दोलित कर रहा है तो इसमें पड़नेमें मुझे कोई हिचकिचाहट नही हुई। लेकिन, इस प्रश्नको मैंने राज्यको कोई परेशान करनेके खयालसे अपने हाथमें नही लिया है। कारण, मैं मानता हूँ कि महाविभवा रीजेंट महारानीको अपनी प्रजाके कल्याणकी बड़ी चिन्ता

१. "मैसेज टू त्रावणकोर" (त्रावणकोरको सन्देश) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित।

२. महादेव देसाईके "साप्ताहिक पत्र" के अनुसार गांधीजी ९ और १० अक्टूबर, १९२७ को त्रिवेन्द्रम्‌में थे और उन्होंने त्रावणकोरके महाराजा और महारानीसे मिलनेके बाद यह भाषण दिया था; देखिए "भाषण: नागरकोइलमें", ८-१०-१९२७ भी।

है। ऐसे मामलोंमें वे अपनेको एक सुधारक भी बताती है, और मेरा खयाल है कि आपको यह बताकर कि वे इस बुराईको जल्दीसे-जल्दी दूर करानेके लिए उत्सुक है, मैं उनका विश्वास भंग नही कर रहा हूँ।

लेकिन तब यह भी सच है कि सुधारके मामलोंमें सरकार नेतृत्व नही कर सकती। सरकार तो स्वभावतः वह जिन लोगोंपर शासन करती है, उनकी स्पष्ट इच्छाकी व्याख्या करनेवाली और उसे अंजाम देनेवाली संस्था होती है। और जिस सुधारको जनता ग्रहण न कर सके उसे जबरन थोपना तो अत्यन्त निरंकुश सरकार भी बहुत कठिन पायेगी। इसलिए यदि मैं त्रावणकोर राज्यकी प्रजा होता तो इतना जानकर ही पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाता कि हमारी सरकार इस सुधारको जनता जितनी तेजीसे ग्रहण कर सकती है उतनी तेजीसे लागू करनेको इच्छुक है। लेकिन, इस सम्बन्धमें सन्तुष्ट होकर मैं तबतक एक क्षणको भी विश्राम नही करता जबतक कि मै इस सुधारके सन्देशको गाँव-गाँव और व्यक्ति-व्यक्तितक नहीं पहुँचा देता। एक सुव्यवस्थित और सतत आन्दोलन स्वस्थ प्रगतिका स्रोत है, और इसलिए यदि आपकी जगह मैं होता तो मैं सरकारको तबतक चैन नही लेने देता जबतक कि यह सुधार पूरी तरह लागू न कर दिया जाता। लेकिन, सरकारको चैन न लेने देनेका मतलब उसे परेशान करना नहीं है। समझदार सरकार तो ऐसे आन्दोलनोंका स्वागत करती है। जिस सुधारको वह स्वयं चाहती है, उसे लागू करनेके लिए ऐसे आन्दोलनोंसे प्राप्त होनेवाले समर्थन और प्रोत्साहनकी अपेक्षा रखती है। मै जानता हूँ कि जब पिछली बार मैं यहाँ आया था तब मुझे बताया गया था कि सभी सवर्ण हिन्दू अस्पृश्यताको हर रूपमें समाप्त कर देनेवाले इस सुधारके लिए अत्यन्त उत्सुक हैं। लेकिन, मुझे लगता है कि सवर्ण हिन्दू बस इच्छा करके ही रह गये हैं। उन्होंने अपनी इच्छाको कोई ठोस रूप नही दिया है और मेरा विश्वास है कि इस राज्यके प्रत्येक हिन्दूका यह कर्त्तव्य है कि वह स्वयं अपने कर्त्तव्यके प्रति सजग हो जाये और अपने आलसी भाइयोको भी सजग कर दे। और यदि सवर्ण हिन्दू एक स्वरसे अपनी इच्छा व्यक्त करें तो अस्पृश्यताकी इस बुराईके दूर हो जानेमें मुझे तनिक भी सन्देह नही है। इसलिए अपने आलस्य और ढिलाईके लिए सरकारको दोषी ठहराना गलत होगा।

लेकिन सुधारक तो हर समाज और हर देशमें उँगलियोंपर गिने जाने लायक ही होते हैं, और मै जानता हूँ कि ऐसे सभी सुधारोंका भार अन्ततः उन चन्द निष्ठावान लोगोके ही सिर पड़ता है। तब फिर इस दीर्घकालसे चली आ रही बुराईके सम्बन्धमें सुधारकोंको क्या करना चाहिए? इस सवालका जवाब ढूंढ़ना जरूरी है। दुनियाके सुधारकोंने, अब मैं जो दो तरीके बताने जा रहा हूँ, उनमें से एक या दूसरेका सहारा लिया है। उनमें से अधिकांशने अव्यवस्थित आन्दोलन करके और हिंसाके द्वारा बुराइयोंकी ओर लोगोंका ध्यान आकृष्ट किया है। उन्होंने सरकारको परेशानी में डालनेवाले, जनताको परेशान करनेवाले और नागरिकोंके जीवनको उलट-पलट देनेवाले आन्दोलनका सहारा लिया है। दूसरे किस्मके सुधारक, जिन्हें मैं अहिंसावादी सुधारक कहूँगा, विनम्र ढंगके आन्दोलनका सहारा लेते है। ये मनसा अथवा कर्मणा हिंसा

करके बुराईकी ओर ध्यान आकृष्ट करनेसे बचते हैं, इसके लिए वे स्वयं कष्ट सहनेका तरीका अपनाते हैं। वे कभी अतिरंजनाका सहारा नही लेते। वे कभी भी सत्यसे रंचमात्र विचलित नही होते और यद्यपि बुराई उन्हें असह्य होती है फिर भी बुराई करनेवाले तकके प्रति दुर्भावना नही रखते। इस तरीकेको मैंने एक छोटा-सा नाम देकर जिस प्रकार पहले दक्षिण आफ्रिकामें अपने लोगोंके सामने रखा था उसी प्रकार अपने देशके सामने रखा है। वह नाम है सत्याग्रह। सत्याग्रहको कभी भी सविनय अवज्ञा समझनेकी भूल न करे। इसमें सन्देह नहीं कि सविनय अवज्ञा सत्याग्रहकी ही एक शाखा है। लेकिन इसका प्रसंग शुरूमें नही, बल्कि बिलकुल अन्तमें आता है। यह कठोरतम अनुशासनकी अपेक्षा रखती है, बहुत अधिक आत्मसंयम चाहती है। यह उदारतापर आधारित होती है, और यह विरोधीकी मंशापर भी कभी सन्देह नही करती और न उसका कोई अनुचित अर्थ लगाती है। कारण यह है कि इसका उद्देश्य विरोधीसे जबरदस्ती अपनी बात मनवाना नही, बल्कि उसे अपनी बातका कायल करना होता है। इसलिए, जब मुझसे विरुधुनगरमें मिलने आनेवाले एक भाईके[1] द्वारा अपने पूरे सिद्धान्त और अपनी सारी कही बातोको मैंने बिलकुल गलत ढंगसे पेश किया गया पाया तो मुझे कितना दुख और आश्चर्य हुआ होगा, इसकी कल्पना आप कर सकते हैं। 'त्रिवेन्द्रम् एक्सप्रेस' में मैंने उनके और मेरे बीच हुई बातचीतकी उनके द्वारा दी गई एक रिपोर्ट पढ़ी। इस रिपोर्टमें आरम्भसे अन्ततक उस बातचीतको सिर्फ तोड़ा-मरोडा गया है ("शेम" की आवाज)।

लेकिन इसपर "शर्म, शर्म" की आवाज लगानेकी जरूरत नही है। जिन सज्जनने "शर्म" की आवाज लगाई, वे उदारताकी खूबी या अर्थको नही जानते। कारण यह है कि मैं क्षण-भरको भी ऐसा नही सोचता कि जिन भाईने मुझसे मुलाकात की थी उन्होंने जान-बूझकर मेरी कही बातोंके अर्थको गलत रूपमें पेश किया। आज सुबह उन्होंने मुझे जो स्पष्टीकरण दिया, उसे स्वीकार करनेको मै तैयार हूँ। लेकिन, मैंने इस प्रसगकी ओर आपका ध्यान विशेष रूपसे यह समझानेके लिए आकृष्ट किया है कि सत्याग्रहसे मेरा मतलब क्या है और साथ ही इसके जरिये मैं आपको यह भी दिखाना चाहता हूँ कि जो लोग इस सुन्दर अस्त्रको अच्छी तरह नही समझते, उनके द्वारा इसका प्रयोग करना कितना खतरनाक है। यह उदाहरण मैं सिर्फ इसलिए दे रहा हूँ कि भावी सुधारक सावधान हो जायें और जबतक उन्हें अपनी स्थितिका पूरा भान नही हो और उनमें असाधारण आत्म-संयम न हो तबतक वे इस तरीकेको न अपनायें। यह दृष्टान्त देनेका एक कारण यह भी है कि चूँकि मैं सत्याग्रहके इस तरीकेपर, जिसे मैं बेजोड़ मानता हूँ, मुग्ध हूँ, इसलिए मैं नही चाहता कि जहाँतक मुझसे बन पड़े, किसीको इसका दुरुपयोग करने दूँ। इसलिए मैंने इन भाईसे कहा कि जबतक आप यह नही समझ जाते कि सत्याग्रह सचमुच क्या चीज है और जबतक आप उसकी सच्ची भावनाको ग्रहण नही कर लेते तबतक इस समस्यासे अलग ही रहें।

१. इस मुलाकातकी हिन्दूमें छपी रिपोर्टके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

लेकिन, यह सब कहनेमें मेरा उद्देश्य किसीके उत्साहको मन्द करना नहीं है। इस समस्यापर मैं इतने विस्तारसे सिर्फ इसलिए बोल रहा हूँ कि मैं चाहता हूँ कि आप ऐसे ढंगसे काम करें कि जिससे जल्दीसे-जल्दी इसका हल निकल सके। इसलिए मेरा विनम्र सुझाव है कि आपमें से जिन लोगोंको सार्वजनिक जीवनका अनुभव है, वे इस आन्दोलनको अपने हाथमें लेकर इसे अपना काम बना लें और उन नौजवानोंकी शक्ति और इच्छाको सही दिशा दें जो इस समस्यामें दिलचस्पी तो रखते हैं, किन्तु यह नहीं जानते कि इसे कैसे हल किया जाये। और मेरा यह सुझाव भी है कि आप अधिकारियोंसे सम्पर्क स्थापित करें और जबतक यह सुधार सम्पन्न नहीं हो जाता तबतक उन्हें चैन न लेने दें, क्योंकि मैं आपको इतना बता सकता हूँ कि केवल महारानी साहिबा ही नहीं, दीवान साहब भी इस सुधारके लिए बहुत उत्सुक हैं। लेकिन, चूँकि दीवान साहब अन्य धर्मावलम्बी हैं, इसलिए मैं और आप उनकी कठिनाई समझ सकते हैं। मेरे विचारसे तो जहाँतक सरकारका सम्बन्ध है, वह सुधार के पक्षमें है। लेकिन पहल सरकारको नहीं, आपको ही करनी होगी। इस महत्त्वपूर्ण सवालकी चर्चा बहुत विस्तारसे करनेके लिए आप मुझे माफ करेंगे। मेरे सामने कोई दूसरा रास्ता भी नहीं था, क्योंकि मेरे पास इतना समय नहीं है कि कुछ-एक नेताओंको बुलाकर उनसे इस समस्याके सभी नुक्तोंपर बातचीत कर लूँ। इसलिए, मैंने सोचा कि इतने बड़े श्रोता-समुदायके सामने अस्पृश्यताके सम्बन्धमें दिये गये भाषणके बोझिल हो जानेका आप बुरा न मानेंगे।

आज सुबह इस प्रश्नसे उठनेवाला एक सहज प्रश्न मुझसे पूछा गया। वह यह था कि वर्णाश्रम धर्मका अस्पृश्यतापर क्या प्रभाव पड़ता है। इसका मतलब यह हुआ कि वर्णाश्रम धर्मके बारेमें मेरा क्या विचार है, इसपर दो शब्द कहूँ। जहाँतक मुझे हिन्दू-धर्मकी कोई जानकारी है, मैं तो समझता हूँ कि वर्ण शब्दका अर्थ अत्यन्त सीधा-सादा है। इसका अर्थ केवल इतना ही है कि हम सब अपने पूर्वजोंके पैतृक और पारम्परिक पेशेको, बशर्ते कि वह नीति-धर्मके मौलिक सिद्धान्तोंके विरुद्ध नहीं है, अपनायें, और वह भी सिर्फ जीविकोपार्जनके लिए। यदि हम प्रत्येक धर्ममें की गई मनुष्यकी परिभाषाको स्वीकार करें तो मैं वर्णधर्मको हमारे अस्तित्वका अनिवार्य नियम मानता हूँ। ईश्वरकी समस्त चेतना सृष्टिमें केवल मनुष्य ही ऐसा है जिसका सृजन इसलिए किया गया है कि वह अपने स्रष्टाको जाने। इसलिए मनुष्यके जीवनका उद्देश्य प्रतिदिन अपनी भौतिक उपलब्धिकी वृद्धि करना और धन-सम्पत्ति अर्जित करना नहीं है, बल्कि उसका प्रमुख कर्त्तव्य दिन-प्रतिदिन अपने स्रष्टाके निकट पहुँचना है; और प्राचीन ऋषि-मुनियोंने इसी परिभाषामें से हमारे अस्तित्वके इस नियमका अन्वेषण किया। आप समझ सकते हैं कि यदि हम सभी वर्ण-धर्मका पालन करें तो स्वभावतः अपनी भौतिक महत्वाकांक्षाको सीमित रखेंगे, और इस तरह शक्तिकी जो बचत होगी, उसका उपयोग हम उस विस्तृत क्षेत्रका अन्वेषण करनेमें लगा सकते हैं जिसमें और जिसके द्वारा हम ईश्वरको जान सकते हैं। यदि हम इस नियमको मान लें तो आप सहज ही देखेंगे कि आज दुनियामें जितना कार्य-व्यापार चल रहा है और जिसमें

हम डूबे हुए हैं, उसमें से ९० प्रतिशतकी कोई जरूरत नही रह जायेगी। तब आप यह कह सकेंगे कि आज हम जिस वर्ण-धर्मका पालन कर रहे हैं, वह उस वर्ण-धर्मका उपहास-मात्र है जिसकी चर्चा मैंने आपसे की है। और वह सचमुच इस सच्चे वर्ण-धर्मका उपहास ही है, लेकिन जिस प्रकार हम सिर्फ इस कारणसे कि असत्य सत्यका जामा पहन कर हमें छलता रहता है, सत्यसे घृणा नही करते हैं, बल्कि बुद्धिपूर्वक छान-बीन करके असत्यको सत्यसे अलग कर देते है और सत्यपर आरूढ़ रहते है, उसी प्रकार हम वर्ण-धर्मकी विकृतियोंको नष्ट करके हिन्दू-समाजको उसकी आजकी अधोगतिकी स्थितिसे उबार सकते हैं।

आश्रम तो अभी मैंने आपको जो कुछ बताया है, उसका एक सहज अंग है, और आज यदि वर्ण-धर्म विकृत हो गया है तो आश्रम-धर्म तो बिलकुल लुप्त ही हो गया है। आश्रमका मतलब मनुष्यके जीवनकी चार अवस्थाएँ हैं; और मुझे कितनी खुशी हो, यदि आप विद्यार्थी, आर्ट्स, साइंस और लॉ कालेजोके विद्यार्थी लोग, जिन्होंने मुझे आज ये थैलियाँ भेंट की है, मुझको आश्वस्त कर सकें कि आप लोग इस प्रथम आश्रमके नियमोंके अनुसार रह रहे हैं और आप लोग मनसा, वाचा, कर्मणा ब्रह्मचारी हैं। ब्रह्मचर्याश्रमका निर्देश है कि जो लोग कमसे-कम २५ वर्षतक ब्रह्मचारीका जीवन व्यतीत कर चुके हो, वे ही दूसरे आश्रम, अर्थात् गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेके अधिकारी है। और चूंकि हिन्दू-धर्मके पूरे दर्शनका उद्देश्य मनुष्यको, जैसा वह है उससे अच्छा बनाना और उसे स्रष्टाके निकटतर लाना है, इसलिए ऋषियोने गृहस्थाश्रमकी भी एक सीमा बाँध दी और हमारे लिए वानप्रस्थी और संन्यस्त जीवन जीनेका विधान किया। लेकिन आज यदि ढूंढ़ने निकलें तो सारे भारतमें आपको कही भी कोई सच्चा ब्रह्मचारी, सच्चा गृहस्थ, सच्चा वानप्रस्थी और सच्चा सन्यासी नही मिलेगा। हम चाहें तो अपनी बुद्धिके अहंकारमें जीवनकी इस योजनापर हँस सकते हैं, लेकिन मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नही कि हिन्दू-धर्मकी महान सफलताका रहस्य इसीमें है। मिस्र, असीरिया और बैबिलोनकी सभ्यताएँ मिट गई, लेकिन हिन्दू संस्कृति आज भी जीवित है। ईसाई धर्म तो मात्र दो हजार वर्ष पुराना है। इस्लाम अभी कलकी चीज है। ये दोनों धर्म यद्यपि महान हैं, किन्तु मेरी तुच्छ सम्मतिमें अभी ये विकसित ही हो रहे है। ईसाई यूरोप सच्चे अर्थोंमें ईसाई है ही नही, बल्कि वह तो अभी भी ईसाइयतके महान सत्यको पानेके लिए अँधेरेमें टटोल रहा है और यही हाल इस्लामका भी है। आज इन तीन महान धर्मोके बीच एक स्पर्धा चल रही है, जो कल्याणकर भी है और एक तरहसे अत्यन्त अकल्याणकर तथा विकृत भी। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, मेरी यह प्रतीति बढ़ती ही जाती है कि वर्ण-धर्म मनुष्यके अस्तित्वका धर्म है और इसलिए यह ईसाई-धर्म और इस्लामके लिए भी उतना ही जरूरी है, जितना हिन्दू-धर्मके लिए रहा है और जिसके कारण ही हिन्दू धर्म बच सका है। इसलिए दक्षिणके कुछ हिन्दू जो यह कहने लगे है कि वर्णाश्रम हिन्दूधर्मका अभिशाप है, उसे मैं नही मानता। लेकिन, इसका मतलब यह नही कि आपको या मुझे क्षण-भरको भी वर्णाश्रमकी उस घोर विकृतिको, जिसे आज

हम अपने चारों ओर देख रहे हैं, सहन [करना चाहिए] या उसके प्रति नरम रुख रखना चाहिए। वर्णाश्रम और जाति-प्रथामें कहीं भी कोई समानता नहीं है। आप चाहें तो कह सकते हैं कि जातियाँ हिन्दू-धर्मपर एक बोझके समान हैं और अस्पृश्यता, जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, वर्णाश्रम धर्मकी विकृति है। यह वर्णाश्रम धर्मके पौधेकी वृद्धिको रोकनेवाले घास-पातके समान है, जिसे जड़मूलसे उखाड़ फेंकना चाहिए — उसी तरह जिस तरह हम गेहूँके खेतमें उगे मोथोंको उखाड़ फेंकते हैं। वर्णकी इस कल्पनामें ऊँच-नीचके भेदभावके लिए कोई स्थान नहीं है। यदि हिन्दू-धर्मकी मेरी यह व्याख्या सही हो तो मैं कहूँगा कि उसमें प्राणि-मात्र एक समान हैं। इसलिए जब कोई ब्राह्मण कहता है कि 'मैं अन्य तीन वर्णोंसे श्रेष्ठ हूँ' तो उसके अन्दरसे उसका झूठा अहंकार बोलता है। प्राचीन कालके ब्राह्मण ऐसा नहीं कहते थे। लोग उनपर श्रद्धा इसलिए नहीं रखते थे कि वे अपने-आपको श्रेष्ठ मानते थे, बल्कि इसलिए रखते थे कि वे बिना किसी प्रतिदानकी अपेक्षाके सेवा करना अपना अधिकार मानते थे। जो पुरोहित आज खामखाह ब्राह्मणोंके कामके अधिकारको अपनाये हुए हैं और धर्मके स्वरूपको विकृत कर रहे हैं वे हिन्दू-धर्म या ब्राह्मणवादके संरक्षक नहीं हैं। जाने-अनजाने वे उसी पेड़की जड़पर कुठाराघात कर रहे हैं जिसपर वे बैठे हुए हैं और जब वे आपसे कहते हैं कि शास्त्रोंमें अस्पृश्यताका विधान है और यदि अमुक व्यक्ति आपसे अमुक दूरीसे अधिक निकट आ जायेगा तो आप अपवित्र हो जायेंगे तो मैं निःसंकोच कहूँगा कि वे अपने धर्मको झुठला रहे हैं और हिन्दू-धर्मकी गलत व्याख्या कर रहे हैं। अब आप शायद समझ जायेंगे कि यहाँ मेरी बातोंको सुन रहे आप हिन्दुओंके लिए यह बात क्यों नितान्त आवश्यक है कि आप आलस्य त्याग कर जागें और इस अभिशापसे अपने-आपको मुक्त करें। आपको इस सुधारमें सबसे आगे रहकर गर्वका अनुभव करना चाहिए, क्योंकि आप एक प्राचीन हिन्दू राज्यकी प्रजा हैं। आपके आस-पासके वातावरणको जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, उसे देखते यदि आप ईमान-दारीके साथ और पूरी शक्तिसे इस सुधारको सम्पन्न करानेका काम अपने हाथमें लेना चाहते हैं तो यह अवसर बहुत उपयुक्त है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-१०-१९२७

७५. पत्र : मीराबहनको

१० अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। हाँ, तुमसे सप्ताहमें दो पत्र पाकर संतुष्ट रहूँगा। लेकिन जब तुम्हारी ओरसे मेरी चिन्ता खत्म हो जायेगी तो हफ्तेमें एक पत्र भी काफी होगा। वह चिन्ता अब समाप्तप्राय है। इसलिए मैंने तुम्हें रोज पत्र लिखना छोड़ दिया है।

कृष्णदास, सुरेन्द्र, छोटेलाल तथा दूसरोंके साथ अपनी योजनाओंपर विचार-विमर्श करना जारी रखो। उनकी जो राय हो, उनसे बतानेको कहो। तुम अतिरिक्त वार्डर नियुक्त कर सकती हो। मणसालीके पास जाना मत भूलना। उसने सात दिनका उपवास शुरू किया है। इसकी स्वीकृति मैं बहुत पहले दे चुका था। मुझे पता है कि तुम्हारी उपस्थितिसे उसे शान्ति मिलती है।

हाँ, यदि यहाँ और वहाँ सब-कुछ ठीक रहा तो तुम उड़ीसा आ सकती हो। तुम्हें स्वस्थ रहना है।

मैं श्री स्मिथको तुम्हें कुछ पुस्तकें भेजनेके लिए लिख रहा हूँ।

मैं कल यहाँ रेजीडेन्टसे मिला था। पहला प्रश्न जो उन्होंने मुझसे पूछा वह यह था कि क्या तुम मेरे साथ हो; और इसके बाद उन्होने मुझे बताया कि जब वे छुट्टीपर थे तब उनके स्थानपर तुम्हारे बहनोईने काम किया है। मैंने उन्हे बताया कि तुम मेरे साथ चेट्टिनाडमें कुछ दिन रही थी।

बालोका प्रश्न मुझे खुद भी जरा मुश्किल लग रहा है। यह चीज अपनेमें अच्छी है, इसमें मुझे कोई सन्देह नही। लेकिन वैसा करना ठीक होगा या नहीं, इस विषयमें मेरा मन निश्चित नही है। बहरहाल, इसके बारेमें मैं और नही सोचूंगा। वहाँकी स्त्रियोंको स्वयं फैसला करने दो। मणि बाल कटवानेका विरोध क्यों करती है? इस सम्बन्धमें जल्दबाजी नही होनी चाहिए। मुझे नही मालूम कि इसके विषयमें लेडी स्लेडके क्या विचार होंगे? मैं चाहूँगा कि इसकी चर्चा तुम उनके साथ भी कर लो। मैं जानता हूँ कि तुमसे सम्बन्धित हर बातमें वह काफी रुचि लेती है।

तुम्हें मालूम है कि मगनलालके पास गोशालासे सम्बन्धित पुस्तकोंका अच्छा संग्रह है। तुम्हें उनमें से कुछको देख लेना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८६) से।
सौजन्य : मीराबहन

७६. पत्र : होरेस जी० अलेक्जेंडरको

यात्रामें
१० अक्टूबर, १९२७

प्रिय मित्र,

इन दिनों मैं आपका पत्र अपने सामने रखे हुए हूँ। चूँकि आपके पत्रके मुताबिक आपके साबरमती आश्रम जानेका समय नजदीक आ रहा है, इसलिए यह पत्र मैं आपको यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि आपका वहाँ जाना आश्रमके लोगोंके लिए कितनी खुशीकी बात होगी। लेकिन मुझे आपको यह सूचित करते हुए दुःख होता है कि आपके स्वागतके लिए मैं वहाँ व्यक्तिगतरूपसे उपस्थित नहीं होऊँगा। इस समय मैं चरखेके सन्देशके सम्बन्धमें दक्षिणमें यात्रा कर रहा हूँ और यह यात्रा नवम्बरके मध्यतक जारी रहेगी। इसके बाद मैं उड़ीसा जाऊँगा। जनवरीके शुरू होनेसे पहले आश्रममें लौट जानेकी उम्मीद करता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री होरेस जी० अलेक्जेंडर
मार्फत श्री जे० एस० हॉयलैंड
होली रोड
नागपुर

अंग्रेजी (जी० एन० १४०४) की फोटो-नकलसे।

७७. पत्र : छगनलाल जोशीको

त्रिवेन्द्रम्
१० अक्टूबर, १९२७

तुम्हें घबरानेका कोई कारण नहीं है। मैं जानता हूँ कि तुम प्रयत्नशील हो। अपनी पत्नीके सम्बन्धमें निर्विकार रहना अत्यन्त कठिन है, यह मैं तो स्वयं अपने अनुभवसे जानता हूँ इसलिए तुम्हारे प्रति सहानुभूति ही महसूस करता हूँ। किन्तु जबतक तुम दोनों एकान्तमें रहना बन्द नहीं करोगे, अलग-अलग नहीं सोओगे और यदि जरूरी जान पड़े तो कुछ समयके लिए एक-दूसरेसे दूर नहीं रहोगे तबतक एक दूसरेके प्रति विकारकी भावना नहीं जीत सकोगे। तुमने मुझे यह तो बताया ही नहीं कि इस विषयमें तुम्हारी पत्नी तुम्हारी कितनी मदद करती है। यदि तुम्हें उसकी मदद मिलती हो तो तुम्हारा रास्ता आसान है, न मिलती हो तो अवश्य कठिन

है। इस प्रयत्नमें विजय तो तुम्हें पानी ही चाहिए। यह याद रखना कि ज्यों-ज्यों तुम्हारा हृदय कोमल होता जायेगा त्यों-त्यों तुम विकारको जीतनेमें सफलता प्राप्त करोगे। विकारविहीन होनेमें कठोरताकी जरूरत होती है। जिसके हृदयमें केवल करुणा ही है, उसे विकारवश होनेके लिए एक क्षणका भी अवकाश नहीं मिलता। इसीलिए मैंने कई बार कहा है कि शुद्ध ब्रह्मचारी कभी क्रोधके वश नहीं होता। शास्त्रोंमें इसके जो उदाहरण मिलते हैं, मैं मानता हूँ उनके पीछे अनुभव नहीं है। ये उदाहरण स्थूल ब्रह्मचर्यके ही हैं। इस विषयमें गहरे उतरोगे तो मेरे कथनकी सचाई तुम स्वयं ही अनुभव कर लोगे।

तुम सब लोगोंको यह भय तो छोड़ ही देना चाहिए कि मैं उपवास करूँगा। देवदासके लिए मैंने कहाँ उपवास किये? इस भयमें केवल मोह और अज्ञान है। मैं कभी एकाएक उपवास नहीं करता। और करता हूँ तो अपनी शुद्धि और शान्तिके लिए ही करता हूँ। उपवास भय और चिन्ताका कारण नहीं होना चाहिए, उचित तो यह होगा कि उसे लोगोंकी चौकसी करनेका साधन समझा जाये और उस रूपमें उसका स्वागत किया जाये। जो व्यक्ति ईमानदारीसे प्रयत्न करता है वह माता-पिता या मित्रोंकी चौकसीसे डरता नहीं बल्कि उसका स्वागत करता है। मेरा उपवास भी इसी दृष्टिसे देखा जाना चाहिए। उपवासका दुरुपयोग होता है, यह बात सही है। किन्तु मुझे निश्चय है कि विचारपूर्वक किया जानेवाला उपवास सत्यके पुजारीके लिए आवश्यक है। क्या हम यह नहीं जानते कि अच्छीसे-अच्छी चीजका भी बुरासे-बुरा उपयोग हो सकता है? जो आदमी अच्छे माने जाते हैं वे लोगोंको जितना ज्यादा ठग सके हैं उतना बुरा माने जानेवाले आदमी कभी नहीं ठग सकते।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

७८. पत्र : मगनलाल गांधीको

[१० अक्टूबर, १९२७ के लगभग][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारे दोनों पत्र मिले। . . . के[2] सम्बन्धमें आश्रममें ही जबरदस्त मतभेद देखता हूँ। अब इस मामलेमें मैं तुम्हें तकलीफ नहीं दूँगा। छगनलाल जोशीके साथ कुछ पत्र-व्यवहार चला रहा हूँ। उसका निपटारा करके फिलहाल तो मौन धारण करूँगा और जनवरीमें जब मैं वहाँ आऊँगा तब इस अध्यायको दुबारा खोलूँगा। मेरे मनमें सन्देह अब भी रह गया है। निर्दोष मनुष्य आत्मघात नहीं करता। . . . ने[3]

१. दुग्धालयके आँकड़ोंमें भूलके उल्लेखसे।
२ और ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

मुझे जो पत्र लिखे थे उनसे सन्देहको बल मिलता है। जगन्नाथन्से सम्बन्धित घटनामें वह था, यह तो तुम जानते ही हो। उसके इस विद्रोहको मैं कभी पूरी तरह शान्त नही कर सका। इसलिए मेरे मनमें सन्देह कायम रहा है। रामदासने भी मुझे एक पत्र लिखा है जिसमें उसने अपने सन्देहके कारण दिये है। कारण बहुत सबल नही कहे जा सकते लेकिन यह बात तो है ही कि रामदासको भी स्वतन्त्र रूपसे सन्देह रहा है। किसीको कोई सूचना दिये बिना चला गया, यह बात मुझे भयानक मालूम होती है। मुझे ऐसा नही लगता कि वह कही छिपा हुआ है। यदि ऐसा हो तो मैं एक बड़े दुःखसे बच जाऊँ। कारण, आजकी परिस्थितिमें मुझे कान्तिलालपर जो मेरे पुत्र-जैसा है और काशी-कुसुमपर, जो मेरी पुत्रियाँ-जैसी है, सन्देह करना पड़ रहा है।

दुग्धालयके आँकड़ोंमें सुधार करके भेजनेकी जरूरत नही है। मैं तो तुम दोनो भाइयो द्वारा मिलकर तैयार की हुई रिपोर्ट चाहता हूँ। तुमने मुझे बंगलोरमे जो आश्वासन दिया था वह मेरे लिए काफी है। किन्तु नारणदासने मुझे लिखा कि आँकड़ोमें २१ भूलें थी और वे भूलें ऐसी थी जिनसे सूचित होता था कि दुग्धालयके काममे घाटा हो रहा है। तुम्हारे सुधारोके अनुसार मैं देख रहा हूँ कि ऐसी बात नही है। मुझे तो चिन्ता इस बातकी थी कि यदि हमारी आँकड़ोकी भूलके कारण परिणाम जैसा सचमुच है उससे उलटा दिखता हो तो हमें इसका स्पष्टीकरण करना चाहिए। इसलिए तुम नारणदासके साथ मिलकर आँकड़ोकी चर्चा करके मुझे लिखो कि क्या परिणाम आया।

तुम्हारा तीसरा पत्र मिला है। उसमें तुम मुझसे वहाँ आनेके लिए कहते हो। मेरी तबीयतके बारेमें तो महादेवने कल लिखा ही है। तबीयतमें कोई गड़बड़ नही है। समाचारपत्र वालोंको क्या कहें? तुम्हें याद रखना चाहिए यदि मुझे कुछ हुआ तो यह तो हो ही नही सकता कि यहाँसे कोई तुम्हें तार न करे।

मैं तो वहाँ आनेके लिए अधीर हूँ। वहाँ हवा शुद्ध हो या अशुद्ध, मेरा स्थान तो वही है। अशुद्ध है इसलिए और भी ज्यादा। वहाँकी अशुद्ध हवासे भागकर भला मैं कहाँ जाऊँगा? वहाँकी अशुद्ध हवाके लिए मैं तो सबसे ज्यादा दोषी हूँ; क्योकि मैं स्थिर होकर वहाँ कभी रहा ही नहीं। इसलिए मुझसे वहाँ आनेका आग्रह करना पड़े, इसकी जरूरत नहीं है। यहाँ तो सिर्फ इसलिए पड़ा हूँ कि यहाँका काम अधूरा नही छोड़ा जा सकता और दूसरे, मेरी मान्यता है कि शरीरसे जबतक सम्भव हो तबतक काम लिया जाना चाहिए। इसलिए मेरा अनुमान है कि मैं वहाँ जनवरीके आरंभमे ही पहुँच सकूँगा।

"किन्तु तुम कभी हार मत स्वीकार करना।"[1]

"कभी नही हारना भावे साडी जान जावे।"[2]

अथवा

"हरिका मार्ग शूरोका है, उसमें कायरका काम नही है।"

१. यह और इसके बादकी उक्तियाँ सम्भवतः मगनलाल गांधीको साहस बँधानेके लिए कही गई थीं।

२. अर्थात् कभी हारना नहीं, चाहे जान ही क्यों न चली जाये।

अथवा

मुखदु:खे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैव पापमवाप्स्यसि ॥[1]

"न्यायका नियम यह है कि अपने प्रति कठोरता और प्रतिपक्षीके प्रति उदारता बरती जाये।"

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६८) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

७९. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

आश्विन वदी १ [११ अक्टूबर, १९२७][2]

प्यारी बहनो,

मालूम होता है कि मेरे पिछले पत्रसे तुममें काफी खलबली मची हुई है। इसीलिए तुम्हारा पत्र मुझे अभीतक नहीं मिला। यह खलबली मुझे पसन्द है। नम्रताके नाते तुम एक-दूसरेके साथ मिलो-जुलो, इतनेसे मुझे सन्तोष नहीं होगा, तुम भी सन्तोष न मानना। हमें एक-दूसरेको जैसे-तैसे नहीं निभा लेना है, बल्कि हार्दिक मेल सिद्ध करना है। हमें अपने आपको, दूसरेको या जगत्को धोखा नहीं देना है। इसलिए जो-कुछ मनमें भरा हुआ हो उसे प्रकट करना चाहिए। एक बार मनमें भरा हुआ मैल निकल जायेगा तो फिर नया भरनेमें देर लगेगी। लेकिन यदि जरा भी मैल रहा तो जैसे मैले बरतनमें डाला हुआ साफ पानी भी मैला हो जाता है, वैसे ही मैले मनमें अच्छे विचार भी मैले बन जाते हैं। जिसके बारेमें हमें एक बार शक हो जाता है, उसकी तमाम बातोंपर हमें शक रहने लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७०) की फोटो-नकलसे।

१. गीता, २, ३८।

२. वर्षका निश्चय आश्रमकी बहनोंकी आपसी अनबनके उल्लेखसे किया गया है; देखिए "पत्र : आश्रमकी बहनोंको", २६-९-१९२७।

८०. पत्र : देवचन्द पारेखको

[११ अक्टूबर, १९२७][1]

भाईश्री देवचन्दभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। भाई अमृतलाल ठक्कर तो ऐसा मानते हैं कि अब परिषदका[2] अधिवेशन नहीं होगा। तुम्हें खबर है कि इस वर्षका नहीं ही हुआ है। मुझे लगता है कि अब परिषदको नया मोड़ दिया जाना चाहिए। अपनी आजकी मानसिक स्थितिमें मेरा उसके साथ मिलकर काम करना सम्भव नही रह गया है, बल्कि मुझे भय है कि मैं उसके लिए कड़वा घूँट सिद्ध हो सकता हूँ। इसलिए क्या यही बेहतर नही होगा कि नई बुनियादपर नया निर्माण किया जाये?

बापूके आशीर्वाद

यात्राका कार्यक्रम :

१६-१७ कोयम्बटूर
१८ पोलाची
१९ तिरुपुर
२० गोबीचेट्टिपलायम्
२१ एरोड
२२ सेलम
२३-२४ तिरुचेङ्गोड
२५ कालीकट
२६-३१ मंगलोर
१९ नवम्बरतक लंका

भाईश्री देवचन्दभाई पारेख, बैरिस्टर
जैतपुर

गुजराती (जी० एन० ५६९२) की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।
२. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद।

८१. भाषण: क्विलनमें[1]

११ अक्टूबर, १९२७

जिस प्रकार संखियाकी एक बूंद मटका-भर दूधको विषाक्त कर देती है, उसी प्रकार अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मको विषाक्त कर रही है। दूधके गुण और उपयोगको तथा संखियाके प्रभावको जानते हुए हम उस आदमीकी कार्रवाईसे अधीर हो उठेंगे जो दूधके मटकेके पास बैठे-बैठे उसमें से थोड़ा-थोड़ा करके संखियाको हटानेकी कोशिश कर रहा हो। हम तो सीधे उस मटकेको ही उठाकर फेंक देंगे। इसी प्रकार एक हिन्दूके नाते मुझे लगता है कि अस्पृश्यताका अभिशाप हिन्दू-धर्मको बिलकुल विषाक्त और अशुद्ध किये डाल रहा है। इसलिए मेरे खयालसे ऐसे मामलोंमें धीरज धरनेमें कोई बड़ाई नहीं है। बुराईके प्रति धैर्य दिखाना वास्तवमें बुराईके साथ और खुद अपने साथ खिलवाड़ करना है। इसलिए मुझे यह कहनेमें कोई झिझक नहीं होती कि त्रावणकोर राज्यको इस सुधारके मामलेमें आगे बढ़कर काम करना चाहिए और एक ही प्रहारमें इस बुराईको समाप्त कर देना चाहिए। लेकिन मैं जानता हूँ कि एक हिन्दू राज्यमें भी जबतक हिन्दू जनताका समर्थन और सक्रिय समर्थन प्राप्त न हो तबतक इस बुराईको दूर करना उसके लिए असम्भव है। इसलिए मेरी अपील मुख्यतः राज्यके प्रधानसे नहीं, बल्कि आप लोगोंसे ही होगी, अतः इस सभामें उपस्थित प्रत्येक हिन्दूसे मैं व्यक्तिगत तौरपर यह अपील करता हूँ। मैं और आप बहुत दिनोंसे तथा-कथित अस्पृश्यों और अनुपगम्योंके प्रति अपने कर्त्तव्यकी उपेक्षा करते आ रहे हैं और इस हदतक मैं और आप हिन्दूधर्मके सच्चे अनुयायी नहीं हैं। मैं आपसे बेहिचक कहता हूँ कि जो कोई अस्पृश्यताके पक्षमें आपके सामने कोई दलील देनेको आये, उसकी दलीलपर आप तनिक भी ध्यान दिये बिना उसे अस्वीकार कर दें। याद रखिए कि इस युगमें कोई भी व्यक्ति या पुरुषों तथा स्त्रियोंका कोई भी समुदाय जो-कुछ करता है वह ज्यादा दिनोंतक छिपा नहीं रहता, और जबतक हम अस्पृश्यता-को गलेसे लगाये हुए हैं तबतक रोज-रोज हमारी परीक्षा हो रही है और रोज ही हम उसमें अनुत्तीर्ण हो रहे हैं। आपको याद रखना चाहिए कि संसारके सभी महान धर्म अभी विकास और निर्माणके क्रममें हैं। इसलिए हमें शुतुरमुर्गकी तरह अपना मुँह छिपाकर अपने सर मंडराते हुए खतरेसे आँख नहीं चुरानी चाहिए। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आज जो उथल-पुथल मची हुई है उसमें या तो अस्पृश्यताको मिट जाना है या फिर हिन्दू-धर्मको। लेकिन, मैं जानता हूँ कि हिन्दू-धर्म

१. "मैसेज टु त्रावणकोर" (त्रावणकोरको सन्देश) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित।

नही मिट रहा है, न मिटनेवाला है, क्योंकि मैं साफ देख रहा हूँ कि अस्पृश्यता अब एक दम तोड़ती लाश-भर रह गई, जो जैसे-तैसे कुछ साँसें ले सकेगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २०-१०-१९२७

८२. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

यात्रामें
१२ अक्टूबर, १९२७

प्रिय चार्ली,

मुझे तुम्हारे वे दो पत्र, जिनका तुमने वादा किया था मिल गये है, और वह भी जिसमें तुमने नाडकर्णीको जवाब दिया है। जवाब यथासमय प्रकाशित किया जायेगा।[1]

मैं कताई-निबन्धके सम्बन्धमें तुम्हारे विचार तथा वाइसरायसे तुमने जो कहा, वह जाननेको उत्सुक हूँ।[2]

मुझे पूरी आशा है कि तुमने जो सर विश्वेश्वरैयाका नाम भेजा है, उसे बहुत विलम्बसे भेजा गया नही माना जायेगा।

उम्मीद है, प्रागजी और मेढके विषयमें लिखा गया मेरा पत्र तुम्हें मिल गया होगा। उड़ीसाके सम्बन्धमें तुम्हारा तार मुझे मिल गया।

जब तुम्हारा हाथ बिलकुल ठीक हो जाये तो यह सब बतानेके लिए तुम्हारे बारह आनेके व्ययका मैं बुरा नही मानूँगा।

सप्रेम,

मोहन

अंग्रेजी (जी० एन० २६२२) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "यूज ऑफ ट्रैक्टर्स" (ट्रैक्टरोंका उपयोग), यंग इंडिया, ३-११-१९२७।

२. इस सम्बन्धमें गांधीजी द्वारा लिखे पिछले पत्रके लिए देखिए "पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको", १-१०-१९२७।

८३. भाषण: अलेप्पीकी सार्वजनिक सभामें

१२ अक्टूबर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

दरिद्रनारायणके प्रतिनिधिके रूपमें मुझे भेंट किये गये आपके अभिनन्दनपत्रों तथा अनेक थैलियोंके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। जैसा कि मैंने नागरकोइलमें कहा था, त्रावणकोरकी सीमामें प्रवेश करनेके साथ ही मैंने अपने-आपको अस्पृश्यताकी समस्याका अध्ययन करते और उसके समाधानमें सहायता करते हुए पाया। इस उद्देश्य-को देखते हुए मेरी त्रावणकोरकी यह यात्रा बहुत संक्षिप्त ही है, और आज उसके अन्तिम दिनमें अपने भाषणका ज्यादातर भाग उसी समस्याको देना चाहता हूँ। सचमुच मेरी इच्छा थी कि मेरे पास और अधिक समय होता ताकि मैं यहाँ ज्यादा समय तक रुककर इस समस्याका ज्यादा अच्छी तरह अध्ययन कर सकता और जो सहायता यहींकी-यहीं दे सकता, देता।

इस समस्याका छोटा-मोटा विशेषज्ञ होनेके नाते मुझे लगता है कि मैं इस राज्यके शासनको और यहाँके लोगोंको इस समस्याका एक न्यायसम्मत हल निकालनेमें कुछ सहायता दे सकता था, भले ही वह अत्यन्त तुच्छ ही क्यों न होती। मुझे इस बातकी खुशी है, और मैं इसके लिए कृतज्ञ हूँ कि मैं कह सकता हूँ कि मैंने जिस भावनासे अपने विचार यहाँ व्यक्त किये हैं, उसी भावनासे राजमातासे लेकर राज्यके प्रत्येक अधिकारीने मेरी बातोंको ग्रहण किया है। मैं अपने अवर्ण मित्रोंके सम्बन्धमें मनमें कोई सन्देह नहीं रख सकता था, क्योंकि मैं तो अपनेको अस्पृश्योंमें भी अस्पृश्य मानता हूँ और मैं कई सभाओंमें अपनेको नायडी कहनेमें नहीं हिचका हूँ। शायद आपमें से कुछ लोग जानते भी न हों कि नायडी क्या चीज होती है। नायडी वह प्राणी है, जिसका स्थान तथाकथित अस्पृश्योंमें भी सबसे हीन है। आधुनिक हिन्दू-के लिए यह अत्यन्त कलंककी बात है। उसको देखनेसे भी सवर्ण-हिन्दू अपवित्र हो जाता है, ऐसा माना जाता है। इसलिए उसे न केवल नालीका कीड़ा बना दिया गया है, बल्कि उसे सवर्ण हिन्दूकी नजरोंके सामने जानेतक की अनुमति नहीं है। जब मैं बाजारसे गुजर रहा था — मुझे ठीक याद नहीं कि कोचीनमें या त्रिचूरमें — तो मुझे नायडी जातिके कुछ लोगोंको देखनेका दुखद अनुभव हुआ। और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि मेरे पास समय होता, यदि मैंने अपने ऊपर एकाधिक कामोंका दायित्व न ले रखा होता, और यदि मुझमें साहस होता, तो मैं सवर्णों की बस्ती छोड़कर इन नायडी लोगोंके बीच रहनेका सुख प्राप्त करता, जिन्हें देखना भी पाप माना जाता है। हम हिन्दुओंने मानवताके एक अंशके साथ जो महान अन्याय किया है और आज भी कर रहे हैं, उसका यह एक बहुत ही मामूली प्रायश्चित्त है। लेकिन मैं अपनेको इस विश्वाससे आश्वस्त करता हूँ, अथवा कहिए कि मैं अपनेको धोखा देकर

ऐसा मानता हूँ कि नायडी लोगोंके बीच न रहकर मैं ज्यादा बड़ा प्रायश्चित्त कर रहा हूँ, क्योंकि आज हिन्दूधर्म और हिन्दुओंके ऊपर जो महापाप चढ़ा हुआ है, उसकी अनुभूतिके कारण मैं बहुत बड़ी मानसिक यन्त्रणा भोग रहा हूँ। एक होशहवाससे दुरुस्त और सनातनी हिन्दूके नाते — मैं अपनेको सनातनी हिन्दू ही मानता हूँ — अपनी पूरी जिम्मेदारीके एहसासके साथ मैं कहता हूँ कि यदि हम समय रहते नहीं जागे और इस कलंकको हमने अपने बीचसे मिटा न दिया तो हम हिन्दुओंको ईश्वर और मनुष्य-मात्रके सामने इस भयंकर पापकी जवाबदेही करनी पड़ेगी।[1]

आज तीसरे पहर एजवाहा जातिके कई नेताओंसे काफी देरतक मेरी बातचीत हुई, और मैं आपसे सच कहता हूँ कि अगर मुझे यह बता न दिया गया होता कि वे लोग एजवाहा जातिके हैं, तो मैं नहीं जान सकता था कि वे एजवाहा हैं। न ही मैंने उनमें और तथाकथित सवर्णोंमें कोई अन्तर देखा। उनकी आर्थिक स्थिति तो निस्सन्देह बहुत-से सवर्णोंसे बेहतर है। उनकी शैक्षणिक योग्यतामें किसी प्रकारकी कमी नहीं थी और वे साफ-सुथरे तो इतने थे जितना साफ-सुथरा मैंने देशके एक छोरसे दूसरे छोर तककी यात्रा करते हुए बहुत-से ब्राह्मणों और अन्य लोगोंको भी नहीं पाया है। अतः जब मैं इन मित्रोंके सामने बैठा और मैंने उनका अभिनन्दनपत्र पढ़ा तो एक हिन्दूके नाते यह सोचकर मेरा सर शर्मसे झुक गया कि ये ही मित्र अस्पृश्य समझे जाते हैं, इन्हें त्रावणकोरकी कुछ सार्वजनिक सड़कोंपर चलनेके योग्य नहीं माना जाता, और ये ही मित्र हैं जिनकी मन्दिरमें उपस्थितिसे मन्दिरका अहाता अपवित्र हो जायेगा, और ये ही वे लोग हैं जो अपने बेटों और बेटियोंको कमसे-कम कुछ सरकारी स्कूलों तकमें नहीं भेज सकते यद्यपि वे इस सभामें उपस्थित बड़ेसे-बड़े व्यक्तिके बराबर ही राज्यको कर देते हैं। यह बात याद रखिए कि इनपर ये अमानुषिक निर्योग्यताएँ तो लगी हुई हैं, लेकिन सवर्णोंके मुकाबले उन्हें कर देनेके मामलेमें कोई छूट नहीं है। तब, मेरी रायमें यह एक ऐसा अनुष्ठान है जिसके लिए अपने धर्मकी चिन्ता करनेवाले सभी हिन्दुओंका कर्त्तव्य है कि वे अपने जीवनको समर्पित कर दें, और मुझे पूरा विश्वास है कि उदार राजमाता तबतक चैनसे नहीं बैठेंगी जबतक यह कलंक त्रावणकोरसे दूर नहीं हो जाता। मैंने राजमाता, दीवान बहादुर, पुलिस कमिश्नर तथा अन्तमें देवस्वम् कमिश्नरसे जितनी भी बातचीत की है, उसके बलपर मैं त्रावणकोर इस आशाके साथ छोड़ रहा हूँ कि कमसे-कम सड़कोंकी समस्या सभी सम्बन्धित लोगोंकी दृष्टिसे सन्तोषकारक रूपसे हल हो जायेगी। इसी हार्दिक आशाके बलपर मैंने आज शिष्टमण्डलको बेहिचक सलाह दी है कि सत्याग्रह स्थगित कर दिया जाये। मुझे इस सभाको यह बता सकनेकी खुशी है कि इस शिष्टमण्डलने मेरी सलाह मान ली है और अभी, जबकि इस समस्याको संतोषप्रद ढंगसे सुलझानेके प्रयत्न किये जा रहे हैं, सत्याग्रह स्थगित कर दिया है। ईश्वर न करे कि मैं जो आशा लेकर जा रहा हूँ, वह किसी प्रकारसे निष्फल हो। लेकिन मैंने मित्रोंसे कह दिया है कि जिस राहतके वे हकदार हैं,

१. आगेका अंश "मैसेज टू त्रावणकोर" (त्रावणकोरको सन्देश) में से लिया गया है, जो यंग इंडियाके, २०-१०-१९२७ के अंकमें छपा था।

वह राहत यदि उन्हें समयके अन्दर नहीं मिलती, और यदि सभी प्रारम्भिक उपायों के बाद भी वे राहत पानेमें विफल होते हैं तो जो उनका उचित अधिकार है, उसे प्राप्त करनेके लिए वे न केवल फिरसे सत्याग्रह शुरू करनेको स्वतन्त्र होंगे, बल्कि वैसा करना उनका कर्त्तव्य होगा।

मैं यहाँसे जो आशा लेकर जा रहा हूँ, उसके फलितार्थोंको मैं आपके सामने दोहरा दूँ। हालाँकि मैं वाइकोम समाधानको एक अर्थमें सतही समाधान मानता हूँ, लेकिन अन्य पहलुओंसे और अन्य दृष्टिकोणोंसे यह समाधान राज्य तथा अवर्णों, दोनोंके लिए सम्मानजनक है। यह एक ऐसा समाधान है, जिसे मैं स्वतन्त्रताका बुनियादी पत्थर मानता हूँ। मैं इसे स्वतन्त्रताका बुनियादी पत्थर इसलिए मानता हूँ कि यह जनता और राज्यके बीच समझौतेका एक ऐसा दस्तावेज है जो कमसे-कम एक अर्थमें स्वतन्त्रताकी दिशामें एक बड़ा कदम है। लेकिन जहाँतक अवर्णोंका प्रश्न है, यह किसी भी अर्थमें अन्तिम समाधान नहीं है। यह तो ऐसा समाधान है जिसमें उन्होंने फिलहाल अपनी कमसे-कम माँगें पूरी होनेमें सन्तोष माना है और इस समाधानसे सरकार पीछे नहीं हट सकती। इस समाधानके द्वारा सरकारने अवर्णोंके लिए एक मंच खड़ा कर दिया है, जहाँसे वे और आगे बढ़ सकते हैं। अतएव इस समाधानकी व्याख्या सदा अवर्णोंके हितमें होनी है। इसी प्रकार इसका प्रयोग गैर-हिन्दुओंकी स्वतंत्रता-पर अंकुश लगानेके लिए भी नहीं किया जा सकता। तिरुवरप्पुके वर्तमान विवाद इस समाधानके सिद्धान्तको लागू करके सरकारके लिए उन ईसाइयों तथा अन्य गैर-हिन्दुओंके अधिकारोंमें कोई कटौती करना सम्भव नहीं है जो वहाँ सड़कोंका इस्तेमाल करते रहे हैं। इसलिए सरकारका यह कर्त्तव्य है कि वह इन सड़कोंको अवर्ण हिन्दुओंके लिए खोल दे, और इन सड़कोंको अवर्ण हिन्दुओंके लिए खोलनेमें जो भी कठिनाई हो उसे दूर करना सरकारका काम है। अवर्ण हिन्दुओंको इस मामलेमें सरकारकी कठिनाईका लिहाज करनेकी जरूरत नहीं है। बिलकुल ऐसा तो नहीं, लेकिन इससे मिलता-जुलता मामला सुचिन्द्रम् मन्दिरके इर्दगिर्दकी सड़कोंका भी है, और मैं आशा कर रहा हूँ कि निकट भविष्यमें सरकार मेरे द्वारा सुझाई गई राहत देनेके मार्गमें जो भी कठिनाई हो उसे पार कर लेगी।

इन शर्तोंके साथ मैंने एजवाहा मित्रोंको अपनी कार्रवाई स्थगित करनेकी सलाह दी है और मैं यह सोचनेका साहस करता हूँ कि इन नई परिस्थितियोंमें सरकारने श्रीयुत माधवन्के ऊपर जो आदेश जारी करना आवश्यक माना है, उसे वह अविलम्ब वापस ले लेगी। मैं इस आदेशको कमसे-कम अब कतई अनावश्यक मानता हूँ, और आम आदेशको भी अनावश्यक समझता हूँ जिसके द्वारा तिरुवरप्पुके आसपास एक खास दायरेमें सभाओं आदिपर रोक लगाई गई है।[1]

श्री टी० के० माधवन् : महात्माजी, मुझसे सारे कोट्टायम जिलेमें कोई भाषण आदि न देनेको कहा गया है।

१. इसके आगेका अंश १५-१०-१९२७के हिन्दूसे लिया गया है।

मुझसे गलती हुई। आदेश द्वारा सारे कोट्टायम जिलेमें उनके भाषण आदि देनेपर निषेध लगा दिया गया है। मेरी रायमें जिन परिस्थितियोंका मैंने जिक्र किया है उनमें यह आदेश कतई अनावश्यक है। उतना ही अनावश्यक वह आम आदेश है, जिसके जरिये उस हलकेमें सभाओंपर रोक लगाई गई है।

दो शब्द मैं इन अवर्ण मित्रोंसे कहूँगा। मैं उनके दुःखसे उन्हींके समान दुखी हूँ। यदि मुझे इत्मीनान हो जाता या अन्य कोई मुझे कायल कर सकता कि अपनी जान देकर मैं उनके लिए पूर्ण स्वतन्त्रताका पट्टा प्राप्त कर सकता हूँ तो मैं इसी क्षण अपनी जान दे दूँगा। लेकिन जबतक मुझे इस बातका यकीन नहीं हो जाता तबतक मैं इसीमें सन्तुष्ट हूँ कि जीवित रहूँ और इस स्वतन्त्रताको प्राप्त करनेके लिए प्रयत्न करूँ। अतः मैं उनसे याद रखनेको कहूँगा कि जब हम किसी घोर अन्यायको दूर करना चाहते हैं तो हम अधीर हो जा सकते हैं, लेकिन हमारे लिए धीरज रखना जरूरी है। सचाई, आत्मत्याग और अटल संकल्प हो तो सफलता निश्चित समझिए। इतिहासके पन्ने खुले हुए हैं और जो कोई चाहे उनमें पढ़ सकता है कि सुधारके लिए काम करनेवालोंने परिणामोंकी बिना कोई परवाह किये अपना काम किया है और इस विश्वासके साथ काम किया है कि उनका काम ही उनका पुरस्कार है, और काम करनेसे वह सुधार निश्चित रूपसे सम्पन्न होगा, जिसको सम्पन्न करानेकी आशासे काम किया जाता है। इसलिए मैं उनसे कहूँगा कि वे 'भगवद्गीता'के उपदेशको ध्यानमें रखकर उसी भावनासे काम करें। वह हमें सिखाती है कि मनुष्यके लिए कर्म करना ही उचित है, फलपर उसका कोई वश नहीं है। उस दिव्य पुस्तकमें यह अडिग वचन दे दिये जानेके बाद हमारे लिए निराश होने या अधीरतासे पागल हो जानेका कोई कारण नहीं है। वे यह भी समझ ले कि आज सारे भारतमें एक अकेला मैं ही नहीं, मेरी तरह बहुत-से हिन्दू, जो प्रखर बुद्धिवाले, भारतके तपे हुए सेवक, और देशके जाने-माने कार्यकर्त्ता हैं, अपनी सामर्थ्यभर इसी उद्देश्यके लिए कार्य कर रहे हैं। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अत्यन्त निकट भविष्यमें हम सब देखेंगे कि यह भयानक दुःस्वप्न-जैसी अस्पृश्यता अतीतकी चीज बन जायेगी।

अब दो शब्द सवर्ण हिन्दुओंसे। मैंने अभीतक बताया है कि राज्यका क्या कर्त्तव्य है और अवर्ण हिन्दुओंका क्या कर्त्तव्य है। लेकिन सवर्णोंका कर्त्तव्य कुछ कम बड़ा नहीं है, बल्कि ज्यादा बड़ा है। कोई भी राज्य आखिरकार अपनी प्रजाके विचारोंको ही प्रतिबिम्बित करता है। अस्पृश्यताका अपराध सवर्ण हिन्दू करते हैं। इसलिए उन्हें प्रायश्चित्त करनेकी जरूरत है। और सवर्ण हिन्दुओंका कर्त्तव्य है कि वे हर सम्भव तरीकेसे अवर्ण हिन्दुओंकी सहायता करे। यदि वे इस उद्देश्यके लिए अपनी सक्रिय सहानुभूति प्रदान करेंगे और सरकारपर दबाव डालेंगे तो वे पायेंगे कि अवर्ण हिन्दुओंके लिए सत्याग्रह-रूपी भयंकर आत्मत्यागका सहारा लेना बिलकुल अनावश्यक सिद्ध होगा। यदि वे त्रावणकोरमें इस सुधारका श्रेय लेना चाहें तो उन्हें कटुताका प्याला लबालब भर जाने और अवर्ण हिन्दुओं द्वारा ऐसी स्थिति अपनानेपर विवश हो जानेसे पहले ही कार्रवाई करनी चाहिए जिस स्थितिमें उन्हें डालना हमारे लिए कलंककी बात होगी।

जिस खादीके सिलसिलेमें मैं वास्तवमें इस बार त्रावणकोर आया हूँ, उसकी चर्चा करनेसे पहले मैं एक अन्य महत्त्वपूर्ण विषयकी चर्चा करूँगा। मैं शराबखोरीकी बुरी लतका जिक्र करना चाहता हूँ। जो लोग इस भयंकर लतके शिकार हैं, वे समझ ले कि यह एक ऐसी आदत है जो मनुष्यको मनुष्य नही रहने देती। जो आदमी शराबके नशेमें होता है, वह पत्नी और बहनमें भेद नही करता। इतिहासमें अंकित कुछ बहुत बडे अपराध नशेकी हालतमें किये गये है। मैंने खुद अपनी आँखोंसे दक्षिण आफ्रिकामें कुछ ऐसे लोगोको नशेकी हालतमें नालीमें लोटते देखा है जो अन्यथा बहुत सम्भ्रान्त माने जाते थे। त्रावणकोरके शराब न पीनेवाले लोगोंका कर्त्तव्य है कि वे सरकारको आबकारी राजस्व समाप्त करनेके लिए विवश कर दें। मैं इसे आमदनीका एक अनैतिक जरिया मानता हूँ। यह वास्तवमें आपका कर्त्तव्य है कि जबतक इस राज्यसे शराबकी बुराई दूर नही हो जाती, तबतक आन्दोलन करते रहे। इस भूमिको, जिसे प्रकृतिने सौन्दर्यसे मंडित किया है, शराबके अभिशापसे दुर्गन्धित मत रहने दीजिए। और यदि आप हिन्दू, ईसाई और मुसलमानकी हैसियतसे मानवकी बुनियादी एकताको समझते है और अपने पड़ोसियोको अपने ही भाई-बहन समझते है, तो यह आपका कर्त्तव्य है कि जिन लोगोको शराबकी लत है, उनके बीच जायें और नम्रतासे समझा-बुझाकर उन्हें इस लतसे मुक्त करे। मैं पूर्ण मद्यनिषेधको कतई आवश्यक मानता हूँ, क्योकि जबतक किसी शराबीके रास्तेमें प्रलोभन रखा जायेगा तबतक कितना ही समझाया-बुझाया जाये, वह इस चीजसे दूर नही रह सकता। इसलिए शराबी लोगोके बीच और राज्यके विरुद्ध आन्दोलन एक साथ चलने चाहिए।

अब मेरे लिए चरखेके सन्देशको लेकर आपका बहुत समय लेना जरूरी नही होना चाहिए। आपकी थैलियाँ खादीमें आपके विश्वासकी द्योतक है। लेकिन अगर आप मानते हो कि मेरे मुँहपर कुछ रुपये मारकर आपने लाखो गरीब लोगोंके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया है तो आप भ्रममें है। जिस खादीके उत्पादनके लिए मैं करोडो मेहनतकश लोगोंके पवित्र हाथोके जरिये काम करना चाहता हूँ, यदि आप उसी खादीको पहननेसे इनकार कर दें तो अपने दौरेमें मुझे जो थैलियाँ मिलती रही है, मैं उनका कोई उपयोग नही कर पाऊँगा और वे मेरे लिए असह्य बोझ बन जायेंगी। इसलिए मैं आपके इन उपहारोंको आपका दिया यह वचन मानता हूँ कि अबसे आप अपने पहनने तथा अन्य घरेलू कामोके लिए खादी और केवल खादीका ही उपयोग करेंगे। आपको चरखेके जरिये त्रावणकोरके गाँवोंको भी संगठित करनेका प्रयत्न करना चाहिए। सारे देशमें कताईका वातावरण तैयार करनेके लिए यह जरूरी है कि हम सब यज्ञके भावसे और उदाहरण प्रस्तुत करनेके लिए कताई करे। और यदि हमें चरखेके जरिये गाँवोको संगठित करना है तो यह भी जरूरी है कि होशियार लोग कताईमें निपुणता प्राप्त करें। त्रिवेन्द्रम्में मुझे यह जानकर बडी खुशी हुई थी कि राज्यके स्कूलोंमें चरखा शुरू करानेके लिए राज्य सरकारने अमुक राशि पहले ही स्वीकार कर दी है। यह देखते हुए कि त्रावणकोरकी महिलाएँ शुद्ध धवल वस्त्र ही पहनती है, त्रावणकोरमें खादीको लोकप्रिय बनाना भारतके किसी भी स्थानकी

अपेक्षा सबसे आसान है। मैं एक कारण और बताना चाहता हूँ कि आपको त्रावण-कोरमें बनी खादी क्यों पहननी चाहिए। जब आप पूर्ण मद्यनिषेधके लिए आन्दोलन करेंगे तो आपके सामने यह तर्क रखा जायेगा कि यदि त्रावणकोरके बच्चोंको शिक्षा देनी है तो आबकारीसे प्राप्त होनेवाला राजस्व, जो मैं समझता हूँ कि बीस लाख रुपयेसे ऊपर है, किसी अन्य साधनसे प्राप्त करना होगा। यदि त्रावणकोरके ४० लाख लोग त्रावणकोरमें बनी खादी ही पहनें तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप खादीसे सालाना १ करोड़ ६० लाख रुपयेकी बचत करेंगे। आप खादीके अर्थ-शास्त्रका ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए तो देखेंगे कि आबकारी राजस्वको हटाने और आमदनीका दूसरा जरिया ढूँढ़नेकी समस्या सबसे आसान बन जायेगी। आप इस महान उद्देश्यको अपने उस समयका उपयोग करके नहीं जो आप किसी आवश्यक कार्यमें लगाते हैं, बल्कि व्यर्थ जानेवाले समयका उपयोग करके पूरा कर सकते हैं। इस खादी उद्योगका उद्देश्य किसी एक भी मौजूदा उद्योगका स्थान लेना नहीं है। इसका उद्देश्य राष्ट्रके खाली समयका उपयोग करना है। मुझे कई त्रावणकोरवासियोंसे मालूम हुआ है कि यहाँके लोगोंके पास इतना फालतू वक्त है कि यह कहना गलत नहीं होगा कि वे कुछ हदतक आलस्यका जीवन व्यतीत करते हैं।

मैं आशा करता हूँ कि ये तीनों बातें, जो मैंने आपको सुझाई हैं और जिनके बारेमें मैंने आपसे चर्चा की है, मेरे जानेके बाद भी आपके दिमागमें बनी रहेंगी। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको मेरे शब्दोंको समझनेकी बुद्धि और उनपर अमल करनेकी शक्ति प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १५-१०-१९२७
यंग इंडिया, २०-१०-१९२७

८४. टिप्पणियाँ

सच्ची शिक्षा

प्रोफेसर मलकानीने अहमदाबादसे नीचे लिखा तार भेजा है:

> सर पुरुषोत्तमदाससे मिलने बम्बई जा रहा हूँ। केन्द्रीय कोषसे तत्काल सहायताकी आवश्यकता। वल्लभभाईने सहायताका वचन दिया है। कृपलानी और विद्यापीठके स्वयंसेवक सिंध जा रहे हैं।

सर मोक्षगुण्डम विश्वेश्वरैयाने ३ अक्टूबरको पूनामें अखिल भारत स्वदेशी बाजार और औद्योगिक प्रदर्शनीको खोलते समय नीचे लिखी बातें कही बताते हैं:

> यदि मेरे कहनेका विश्वविद्यालयोंपर कोई असर पड़ सके, तो मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि जबतक हमारी वर्तमान आर्थिक कमजोरी बनी हुई है, तबतक साहित्य और सैद्धान्तिकी पाठ्यक्रमोंमें छात्रोंकी भर्ती मर्यादित कर दी

जायें तथा विद्यार्थियोंको खेती, इंजीनियरिंग, तकनीकी विज्ञान और व्यापारकी डिग्रियोंकी तरफ आकर्षित किया जाये।

हमारी आजकलकी शिक्षा किताबी ज्ञानको जो एकांगी महत्त्व देती है, वह इसका एक बड़ा दोष है। इसीकी तरफ सर विश्वेश्वरैयाने हम सबका ध्यान खींचा है। मैं इससे भी ज्यादा गम्भीर एक और दोष बताना चाहता हूँ। विद्यार्थियोके मनमें ऐसा खयाल पैदा किया जाता है कि जबतक वे स्कूल-कालेजमें किताबी ज्ञान अर्जित करनेमें लगे हुए हों, तबतक उन्हें पढ़ाईको नुकसान पहुँचाकर सेवाके काम नही करने चाहिए, भले ही वे काम कितने ही छोटे या थोड़े समयके हों। विद्यार्थी यदि राहत-कार्य करनेके लिए अपनी साहित्य या उद्योगकी शिक्षा मुल्तवी रखें, तो इससे वे कुछ खोयेंगे नही, बल्कि उन्हें बहुत लाभ होगा। गुजरातमें कुछ विद्यार्थी आज ऐसा काम कर रहे हैं। हर प्रकारकी शिक्षाका ध्येय सेवा ही होना चाहिए। और यदि शिक्षा-कालमें ही विद्यार्थीको सेवा करनेका दुर्लभ अवसर मिले, तो उसे अपना बड़ा सौभाग्य समझना चाहिए और इसे अपनी शिक्षामें बाधाके बजाय उसका पूरक मानना चाहिए। इसलिए गुजरात राष्ट्रीय कालेजके विद्यार्थियो द्वारा सेवाका काम करनेके लिए गुजरातकी हदके बाहर जानेके विचारका मैं हृदयसे स्वागत करता हूँ। थोड़े ही दिन पहले मैंने कहा था कि हममें प्रान्तीयताकी सकीर्ण भावना न आनी चाहिए। राहत देनेका काम करनेवालोंका दल खड़ा कर सकनेकी दृष्टिसे जितना संगठन गुजरातमें है, उतना सिन्धमें नही है। इसलिए गुजरातसे यह आशा रखी जाती है कि वह अपने स्वयंसेवकोंको सिन्धमें या दूसरे किसी प्रान्तमें, जहाँ-कही उनकी सेवाकी जरूरत हो, वहाँ भेजेगा। और फिर सामान्य रूपसे गुजरात, और विशेष रूपसे गुजरात राष्ट्रीय शालाके छात्रोंके ऊपर सिन्धका ऋण है, जिसने असहयोग आन्दोलनके दौरान तीन प्रतिष्ठित शिक्षा-शास्त्री भेजे थे — आचार्य गिडवानी, आचार्य कृपलानी और अध्यापक मलकानी। अतः गुजरातके छात्र सिन्ध जाकर अपने साधारण कर्त्तव्यका ही निर्वाह करेगे।

गुरुकुल कांगड़ीसे सहायता

गुजरातने संकट-निवारणके लिए जो अपील की थी, उसका जो जवाब मिला है वह बहुत ही सन्तोषकारक है। जिन्होंने शुरूमें ही मदद भेजी, उनमें दो संस्थाएँ भी थीं: गुरुकुल कांगड़ी और शान्तिनिकेतन। यह समझकर कि उनके दानसे मुझे कितनी खुशी होगी, उन्होने दानकी खबर मुझे तारसे दी और दान सीधा श्री वल्लभभाईके पास भेजा। गुरुकुलकी तरफसे दानकी जो चार किस्तें आईं, उनका ब्यौरा आचार्य रामदेवजीने मुझे लिखा है। वे कहते हैं कि अभी और मिलनेकी आशा है। वे लिखते हैं:

> शिक्षकोंने अपनी तनख्वाहमें से अमुक फीसदी रकम दी है। ब्रह्मचारियोंने हमेशाकी तरह अपने कपड़े धोबीसे न धुलवाकर स्वयं अपने कपड़े धोये और रुपया बचाया है। कन्या गुरुकुलकी ब्रह्मचारिणियोंने अमुक समयतक दूध-घी छोड़कर बचत की है।

गुजरातमें मदद लेनेवाले और बाँटनेवाले याद रखें कि जो दान मिला है, उसमें से कुछके पीछे कितना त्याग रहा है। जब स्वामी श्रद्धानन्दजी गुरुकुलके कुलपति थे, तब दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहकी लड़ाईके समय गुरुकुलमें उन्होंने त्यागकी जो प्रथा सर्वप्रथम डाली थी, उसकी याद मुझे गुरुकुलके लड़के-लड़कियोंके आजके त्यागमें आती है। इसलिए गुरुकुलकी परम्परामें पले हुए लड़के-लड़कियोंसे खास मौकोंपर इस तरहकी कुरबानीकी आशा तो हमेशा रखी ही जायेगी।

गोरक्षा-सम्बन्धी पुरस्कार-निबन्ध

पाठकोंको याद होगा कि २९ अक्टूबर, १९२५ के 'यंग इंडिया' में मैंने सूचना निकाली थी कि श्रीयुत रेवाशंकर जगजीवन झवेरीकी ओरसे गोरक्षापर हिन्दी, संस्कृत या अंग्रेजीमें सबसे अच्छे लेखके लिए १००० रुपयेका पुरस्कार दिया जायेगा। इसी प्रकार १३ दिसम्बर, १९२५ के 'नवजीवन' में भी श्रीयुत तुलसीदास खीमजीकी ओरसे इसी विषयपर गुजरातीमें सर्वोत्तम लेखके लिए २५१ रुपयोंके पुरस्कारकी विज्ञप्ति निकली थी। शर्तें निम्नलिखित थी :

> निबन्ध ३१ मार्च, १९२६ (बादमें समय ३१ मईतक बढ़ा दिया गया था) तक मन्त्री, अ० भा० गोरक्षा मंडलके पास सत्याग्रहाश्रम, साबरमतीमें पहुँच जाना चाहिए।. . .इसमें गोरक्षाकी प्रवृत्तिके उद्भव, गो-रक्षाके अर्थ और फलितार्थपर विचार होना चाहिए और समर्थनमें प्रमाण उद्धृत करने चाहिए। इसमें शास्त्रोंकी विवेचना होनी चाहिए और इसका पता लगाया जाना चाहिए कि क्या शास्त्रोंमें गोरक्षक संस्थाओंके लिए दुग्धालय और चर्मालय चलानेकी मुमानियत है। इसमें हिन्दुस्तानमें गो-रक्षाका इतिहास और समय-समयपर उसके लिए अपनाये गये तरीके दिये जाने चाहिए, हिन्दुस्तानकी पशु-संख्या देनी चाहिए और चरागाहोंके मसलेपर और हिन्दुस्तानमें चरागाहोंके प्रश्नपर सरकारकी नीतिका क्या परिणाम होता है उसपर विचार होना चाहिए और गो-रक्षाके उपाय सुझाये जाने चाहिए।

आचार्य आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव, श्रीयुत चिन्तामणि विनायक वैद्य और श्रीयुत वालजी गोविन्दजी देसाई परीक्षक नियत हुए थे। मुझे यह प्रकाशित करते हुए खेद होता है कि सभी परीक्षकोंका स्वतन्त्र रूपसे अलग-अलग मत है कि कोई निबन्ध शर्तोंके मुताबिक पुरस्कारके योग्य नही है। परीक्षाफल प्रकाशित करनेमें कई कारणोंसे देर होनेका मुझे खेद है, मगर उन कारणोंको बतानेकी कोई जरूरत नहीं है। मगर जिन लोगोंने इस विषयका अध्ययन किया है, और इस महत्त्वपूर्ण सवालमें जिन्हें दिलचस्पी हो, उनसे मैं पुनः ऐसे लेख लिखनेका प्रयत्न करनेको कहूँगा जो इस विषय-के महत्त्वके अनुरूप हों। जिन्होंने पुरस्कारके लिए लेख लिखे थे, वे फिर कोशिश करें। परीक्षक मुझे बतलाते है कि कुछ लेखकोंके कामसे परिश्रम झलकता है मगर उन्होंने भी विषयके अनुरूप परिश्रमपूर्वक खोज नहीं की है, और पुरस्कारकी शर्तोंका पालन तो शायद ही किसीने किया हो।

अगर्चे यह पुरस्कार अब मंसूख मान लिया जाना चाहिए, मगर कोई योग्य निबन्ध तैयार हो और वे मन्त्रीके पास भेजे जायें तो परीक्षकोको उनकी जाँच करनेके लिए तैयार करनेमें या उनके योग्य साबित होनेपर फिरसे पुरस्कार देनेके लिए दाताओंको राजी करनेमें मैं कठिनाईकी आशंका नही करता। अगर यथेष्ट लेखक लेख लिखने या फिरसे नया लेख लिखनेका इरादा जाहिर करते हुए पहलेसे ही अपनी योग्यता और नाम लिख भेजें तो मैं उम्मीद करता हूँ कि मैं पुरस्कारोके लिए फिरसे सूचना निकाल सकूँगा और शर्तें तो फिर भी वे ही रहेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-१०-१९२७

८५. हिन्दू कानून और मैसूर

बगलोरके श्रीयुत भाष्यम् अय्यंगार लिखते हैं :

आजके प्रचलित हिन्दू कानूनके सिद्धान्त दकियानूस और न्याय तथा समताकी हमारी भावनाके विरुद्ध हैं। मैं नीचे थोड़े-से उदाहरण देता हूँ :[1]

ऐसे कई उदाहरण है मगर मैंने कुछ थोड़े-से ही चुने है।

सोचने-समझनेवाले लोगोंको ये तमाम विधान बहुत अखरते है, और वे सुधार चाहते हैं। कानूनको बदलनेका एकमात्र रास्ता है विधान बनाना। लोकमतको जाने बिना विधानसभा कोई कानून बना नहीं सकती। और इसका एकमात्र रास्ता यह है कि इस उद्देश्यके लिए एक समिति नियुक्त की जाये जो लोकमतका पता लगाये। इसलिए मैंने, हमारी विधानसभाके पिछले बजट अधिवेशनमें, इस प्रश्नपर विचार करने, गवाहियाँ लेने और उनके आधारपर कानून बनानेके लिए सुझाव देनेवाली एक समिति नियत करनेका प्रस्ताव किया था। उसे सभाने एकमत होकर स्वीकार किया था।

हालाँकि राज्य-भरमें लोग इसे चाहते है, मगर वह समिति अभी बनी नहीं है। इसमें डर यह मालूम पड़ता है कि अभीतक ब्रिटिश सरकारने अपने शासित प्रदेशोंमें इस मामलेमें कुछ नहीं किया है, इसलिए मैसूरके किसी काम पर शायद लोग हँसें। जैसा कि आपने कहा था, यह खयाल बेहूदा है। मैसूर यह काम करनेके लिए विशेष रूपसे उपयुक्त है, जबकि ब्रिटिश भारतके सामने सचमुच कठिनाइयाँ हैं। मैसूरको खास सुविधाएँ हैं, जिनकी उपेक्षा करना हमारे लिए बुद्धिमानीकी बात नहीं होगी। हमें सौभाग्यसे अत्यन्त ऊँचे खयालातके

१. पत्रलेखकने उत्तराधिकार, पुनर्विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, दत्तक पुत्र लेने आदिके बारेमें दस विधानोंका उल्लेख करते हुए सुझाव दिया था कि मैसूर राज्यको कानून बनाकर वांछनीय सुधार करने चाहिए।

महाराजा मिले हैं और वैसे ही ईमानदार और प्रगतिशील विचारोंवाले दीवान भी। अतः अगर आज हम ये इष्ट सुधार नहीं कर सकते तो फिर कभी नहीं कर सकेंगे।

क्या आप इस बातकी चर्चा 'यंग इंडिया' में कर सकते हैं?

इस पत्रको ऐसा महत्त्वपूर्ण स्थान देनेका यह मतलब नही लगाना चाहिए कि मैं लेखकके सुझाये हरएक सुधारका समर्थन ही करता हूँ। बेशक इनमें से कुछपर तो तुरन्त ही ध्यान देनेकी जरूरत है। इसमें भी मुझे कोई शक नही है कि जो लोग हिन्दू-समाजको उसकी असंगतियोंसे मुक्त करना चाहते हैं, उन्हें इन सबपर गौर करना चाहिए।

अंग्रेजोंके जमानेसे पहले यहाँ करोड़ों लोगोंके जीवनका नियमन करनेवाले एक निश्चित हिन्दू कानून-जैसी कोई चीज नही थी। स्मृतियोंके नामसे प्रसिद्ध नियमावलि आचरण-सम्बन्धी कठोर नियमोंकी संहिता नही थी, बल्कि पथप्रदर्शक मात्र थी। इन नियमोको कानूनकी वह वैधता नही प्राप्त थी, जिससे आजके वकील परिचित हैं। स्मृतियोके निषेधोंका पालन कानूनकी अपेक्षा सामाजिक दण्डोंके भयसे अधिक होता था। जैसा कि स्मृतियोमें मिलनेवाले परस्पर विरोधी श्लोकोंसे पता चलता है, वे भी हमारी तरह ही लगातार क्रमिक विकासकी प्रक्रियाओसे गुजर रही थी और जैसे-जैसे समाजविज्ञानके नये सिद्धान्त सामने आते जाते थे, उनमें भी अनुकूल परिवर्तन होते रहते थे। बुद्धिमान राजाओंको नई परिस्थितिके अनुसार उनकी नई व्याख्या करानेकी स्वतन्त्रता थी। हिन्दू-धर्म या हिन्दू-शास्त्र कभी अटल और अपरिवर्तनीय नही थे, जैसा कि आज उन्हें बतलाया जा रहा है। बेशक उस समय ऐसे राजा और मन्त्री होते थे, जिनमें समाजकी श्रद्धा और निष्ठा पाने योग्य बुद्धिमत्ता और सत्ता होती थी। मगर अब तो यह सोचनेका चलन हो गया है कि स्मृतियों और शास्त्रोंके नामसे चलनेवाली सभी चीजें सर्वथा अपरिवर्तनीय हैं। जिन श्लोकों पर अमल करना हमारे लिए असम्भव होता है या जो हमारी नैतिक प्रवृत्तिके विरुद्ध मालूम होते हैं, उनकी हम मजेमें उपेक्षा कर देते हैं। अगर हिन्दू-समाजको सारे संसारके साथ-साथ उन्नति करनी है तो यह अत्यन्त असन्तोषजनक स्थिति एक-न-एक दिन और किसी-न-किसी प्रकार बदलनी ही होगी। अंग्रेज शासकोंका अपना दूसरा धर्म और दूसरा आदर्श है, जिसके कारण वे ये परिवर्तन नही कर सकते। उनका आदर्श है अपनी व्यापारिक प्रभुताको बनाये रखना और इस आदर्शकी प्राप्ति के लिए सभी नैतिक या अन्य आवश्यकताओंको तिलांजलि दे देना। इसलिए जबतक हिन्दू लोकमत स्पष्ट रूपसे इसकी माँग नहीं करता — यह माँग उनके आदर्शको बिना कोई हानि पहुँचाये की जा सकती है — तबतक वे हमारे रीति-रिवाजों और तथाकथित कानूनोंमें कोई बड़ा परिवर्तन नहीं करेंगे, और न उसका समर्थन करेंगे। और ब्रिटिश-भारत-जैसे विशाल क्षेत्रमें, जहाँ भिन्न-भिन्न विचारधाराएँ और कानून प्रचलित हैं, हिन्दू लोकमतको मिलते-जुलते मुद्दोंपर एकमत करना कठिन है। और जैसा-कुछ लोकमत यहाँ है, उसका ध्यान स्वभावतः और आवश्यक रूपसे राजनीतिक

स्वतन्त्रताके संग्राममें लगा हुआ है। मैसूर-जैसी रियासतमें न तो ये कठिनाइयाँ हैं और न यहाँ ऐसा कोई संग्राम ही है। मेरी नम्र सम्मतिमें, हिन्दू कानूनकी असंगतियोंको दूर करने आदिके काममें मैसूरको आगे बढ़कर ब्रिटिश भारतको रास्ता दिखाना चाहिए। ऐसे परिवर्तन करनेके लिहाजसे मैसूर राज्य काफी बड़ा और काफी महत्त्वपूर्ण है। यहाँ उत्तरोत्तर एक सवैधानिक राजतन्त्र स्थापित हो गया है। इसकी अपनी एक विधान-सभा है, जो सामाजिक परिवर्तनोका आरम्भ कर सके, इस लिहाजसे काफी प्रातिनिधिक है। हिन्दू कानूनमें जो परिवर्तन जरूरी हो, उनपर विचार करनेके लिए एक समिति नियुक्त करनेका प्रस्ताव विधान-सभाने पहले ही पास कर दिया है। और यदि एक ऐसी शक्तिशाली समिति नियुक्त कर दी जाये, जिसमें रूढ़िवादी और प्रगतिशील दोनो हिन्दू विचारधाराओंके यथेष्ट प्रतिनिधि हो, तो उसकी सलाहे निश्चय ही उपयोगी सिद्ध होगी, और उनसे परिवर्तन करनेके लिए रास्ता तैयार होगा। ऐसी समितियोके गठनके सम्बन्धमें मैसूर विधान-सभाके क्या नियम हैं, यह मैं नही जानता, मगर इसमें सन्देह नही है कि वे इतने लचीले हैं कि उनके अन्तर्गत ऐसी समितिमें मैसूरके बाहरके लोग भी शामिल किये जा सकते हैं। खैर कुछ भी हो, श्रीयुत भाष्यम अय्यंगारने यह दिखला दिया है कि कई बातोमें हिन्दू कानूनको बदलना परमावश्यक है। इस सुधारको, जिसमें पहले ही काफी देर हो चुकी है, शुरू करनेमें मैसूरसे अधिक उपयुक्त दूसरा कोई राज्य नही है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १३-१०-१९२७

८६. नीलकी प्रतिमा-सम्बन्धी सत्याग्रह[1]

इस आन्दोलनसे सम्बन्धित स्वयसेवकोने मुझको जो वचन दिया था, उसके मुताबिक मैंने जो बातें जाननी चाही थी, उनसे सम्बद्ध कागज-पत्र उन्होंने मुझे भेज दिये हैं। उनसे यह मालूम होता है कि जब मुझे ये कागज-पत्र भेजे गये तब उस आन्दोलनको चलते हुए कोई डेढ महीना हुआ था, और इस अवधिमें ३० स्वयंसेवकोने अपनेको गिरफ्तार कराया है। इनमें से २९ हिन्दू, एक मुसलमान, एक पैंतीस वर्षीया महिला और एक उनकी ९ सालकी लड़की है। इन ३० जनोमें से दो ने माफी माँग ली, और वे छूट गये। यह माफी माँगना यदि छूतके रोग-सा साबित न हो तो कुछके माफी माँग लेनेसे कोई फर्क नही पड़ता। हरएक संघर्षमें कुछ ऐसे लोग होते ही हैं। जो लोग जेल गये हैं, वे कोई प्रसिद्धि-प्राप्त व्यक्ति नही हैं। सत्याग्रहके संग्राममें यह बात हानिकर नही, बल्कि लाभदायक ही है। सत्याग्रहमें सत्यसे मिलनेवाली प्रतिष्ठाके सिवा दूसरी किसी प्रतिष्ठाकी आवश्यकता नही है और स्वेच्छासे कष्ट सहनेके बलके सिवा दूसरे किसी बलकी आवश्यकता नही है। यह बल अपने उद्देश्यके प्रति अटल विश्वाससे और पूर्ण अहिंसावृत्तिसे मिलता है।

१. देखिए "नीलकी प्रतिमा और अहिंसा", २९-९-१९२७ भी।

स्वयंसेवकोंको अधीर नही होना चाहिए। अधीरता हिंसाकी एक स्थिति है। सत्याग्रहीका विजयसे कोई वास्ता नही होता। उसका उसे निश्चय होता है, परन्तु वह यह भी जानता है कि विजय देनेवाला तो एक ईश्वर ही है। उसका अपना काम तो सिर्फ कष्ट-सहन करना है।

मुझे जो कागज-पत्र भेजे गये है, उनमें आमदनी और खर्चका हिसाव दिया गया है। आमदनीका हिसाव ब्यौरेवार है और कुल जमा रु० २२८-२-६ बताये गये है। कुल खर्च भी उतना ही दिखाया गया है। वह इस प्रकार है — भोजन खर्च रु० ७१-७-९; गाड़ी-भाड़ा : रु० ५३-२-६; सभाके विज्ञापनोंकी छपाई आदि : रु० ३९-४-०; व्यवस्था और डाकखर्च : रु० २१-८-९; सभामे वत्ती आदिका खर्च : रु० २२-८-०। मै इस व्ययसे सन्तुष्ट नही हूँ। मैंने और ब्यौरेवार हिसाव माँगा है। मै सत्याग्रहियोसे कहूँगा कि वे भोजन, गाड़ी और वत्ती इत्यादिपर ज्यादा खर्च न करे। इसमें यदि मेरी कोई भूल होती हो तो वे सुधारें। मै यह जानता हूँ, मेरी अपनी सभाओमें भी इन चीजोपर अपव्यय होता है। कांग्रेसके कार्यपर भी जरूरतसे ज्यादा खर्चका आरोप लगाया जा सकता है। परन्तु दरिद्रनारायणके प्रतिनिधिके नामसे अपनी पहचान देनेवाले मेरे-जैसोंके सम्बन्धमें भी क्या होता है, इसका दृष्टान्त देकर मैं अपना अभिप्राय बताना चाहता हूँ। जहाँ ६ सन्तरे काफी होंगे वहाँ ६० लाये जाते है, जहाँ एक मोटरसे काम चलता है वहाँ ६ तैयार रखी जाती है, और जहाँ एक हरिकेन लालटेनसे काम चल सकता है वहाँ कई-एक वड़ी गैस वत्तियाँ रखी जाती है। सत्याग्रहियोको यह समझना चाहिए कि उनको जो धन मिलता है, उसमें से एक-एक पैसेको एक कंजूस आदमीकी तरह खर्च करना उनका फर्ज है। मेरा सुझाव है कि वे किसी प्रतिष्ठित स्थानीय व्यक्तिको अपने तमाम रुपये सौंप दें और किसी परोपकारी लेखा-परीक्षकसे अपने हिसावकी निःशुल्क जाँच कराया करे। सार्वजनिक धन खर्च करनेमें वड़ी प्रामाणिकता और सावधानीकी आवश्यकता है। स्वस्थ सार्वजनिक जीवनके विकासकी यह अपरिहार्य शर्त है।

तीसरे कागजमें सत्याग्रहियों द्वारा लोगोंसे की गई अपील है। सत्याग्रहीकी अपीलमें भाषा विनययुक्त होनी चाहिए। इस अपीलमें यों कोई अनुचित वात नही लिखी गई है, परन्तु उसे और अच्छा वनाया जा सकता था। "नीलको ही नही, उसकी अधम जातिके सभी लोगोंको यहांसे हटना चाहिए" — यह वाक्य उस अपीलकी शोभा विगाड़ देता है। जनरल नील तो इस संसारमें नही है। हमें तो उसकी प्रतिमासे निपटना है; और कहें तो प्रतिमासे भी नहीं निपटना है। हमें तो जिस सिद्धान्तकी प्रतीक यह प्रतिमा है, उसका नाश करना है। हम किसी भी मनुष्यको नुकसान नही पहुँचाना चाहते। और हम कष्ट-सहन द्वारा लोकमतको, जिसमें अंग्रेजोंका लोकमत भी शामिल है, अपने पक्षमें करके अपने लक्ष्यको प्राप्त करना चाहते है। ऐसे कार्यमें क्रोध और घृणाकी भाषाके लिए स्थान नही हो सकता।

इतनी वात तो स्वयंसेवकोसे रही।

जनताका भी इन स्वयंसेवकोंके प्रति एक कर्त्तव्य है। लोग भले ही जेल न जायें, परन्तु वे इस आन्दोलनकी अनेक प्रकारसे निगरानी कर सकते है, उसपर अंकुश

रख सकते हैं, रास्ता दिखा सकते हैं और मदद कर सकते हैं। इस प्रतिमाको हटानेका आन्दोलन एक भयंकर रोगके एक लक्षण-मात्रका नाश करनेका आन्दोलन है। और इस प्रतिमाको हटानेसे हालाँकि रोग ठीक नही होगा, तथापि इससे पीड़ामें कुछ कमी होगी और रोगके निदानका रास्ता मिलेगा। अकसर किसी गहरे रोगके वाह्य चिह्नोपर प्रहार करनेसे मूल रोगकी जड़तक पहुँचा जा सकता है। इसलिए सत्याग्रही स्वयसेवक जवतक शुद्ध ढंगसे और सत्याग्रहकी शर्तोका पालन करते हुए युद्ध करते जायेंगे, तवतक वे लोगोकी मदद और सहानुभूतिके अधिकारी वने रहेगे।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १३-१०-१९२७

८७. खादीके नमूने

अ० भा० चरखा सघके तकनीकी विभागकी ओरसे मुझे खवर मिली है कि सभी खादी भण्डारोने अपने-अपने नमूनोंके साथ आवश्यक विवरण नही भेजे है, और कुछने तो अपने नमूने भी नही भेजे है। जिन लगभग ४० जगहोसे नमूने आये है, उनमें लगभग २० ने आवश्यक सभी विवरण नही दिये हैं। इसलिए वे विवरण क्या हो, यह मै नीचे देता हूँ:

हरएक टुकड़ा चार वर्गगजका होना चाहिए, जिसके साथ एक पुर्जा इन विवरणोंके साथ होना चाहिए:

१. (इंचोमें) अरज;

२. थानकी लम्बाई (गजोमें);

३. तानेमें प्रति इंच सूतोंकी संख्या, तानेके सूतका अंक और भरनीमें फी इंच सूतोंकी सख्या;

४. फी वर्गगजका तौल (तोलोमें);

५. फी गज लागत; और

६. फी गज विक्रीकी कीमत।

खादी भण्डारोंको समझना चाहिए कि ये विवरण देना उनके लिए भी उतना ही लाभकर है जितना कि साधारण खादी-आन्दोलनके लिए। यदि तकनीकी विभागको उसके अनुसन्धान-कार्यमें विभिन्न खादी भण्डारों और अन्य कार्यकर्त्ताओकी सहायता नही मिलती तो उसके लिए सामान्य अनुमान लगाना, निष्कर्ष निकालना और खादी उत्पादकोंका मार्गनिर्देशन करना असम्भव है। और जवतक प्रधान कार्यालयके आदेशका उसके नीचेकी सव संस्थाएँ तुरन्त पालन न करें तवतक अनुशासनका विकास करना असम्भव होगा, और जवतक सभी जगह स्वेच्छया अनुशासनका पालन न किया जायेगा तवतक अ० भा० चरखा संघके लिए अपना उद्देश्य पूरा कर पाना असम्भव होगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १३-१०-१९२७

८८. भाषण: एर्नाकुलम्‌में

१३ अक्टूबर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको अभिनन्दनपत्र तथा थैलियोंके लिए धन्यवाद देता हूँ। आपको यह जानकारी दिलचस्प लगेगी कि ये थैलियाँ कैसी हैं; करीब ५०० रुपये छात्रोंसे मिले हैं और ४०० रुपयेसे कुछ अधिक जनताकी ओरसे। मैं आशा करता हूँ कि यहाँ एकत्र जनता इस अन्तरके अर्थको समझेगी और सभा छोड़नेसे पहले इस कमीको पूरा कर देगी। मुझे आपको यह सूचित करते हुए भी खुशी है कि दरबारकी ओरसे मुझे ५०० रुपयेका एक चैक दीवान साहबसे प्राप्त हुआ है और ३०० रुपये मुझे महाराजाकी बेटी श्रीमती विलासिनीकी ओरसे, जो इस समय इंग्लैंडमें हैं, महारानीजीके जरिये प्राप्त हुए हैं। इससे भी बड़ी बात यह है कि महारानीकी बहन श्रीमती रत्नम् द्वारा काते गये काफी बारीक सूतका एक पार्सल भी प्राप्त हुआ है, जिसमें से कुछ सूत स्वयं महारानीजीने काता है। स्पष्टतः मैं एर्नाकुलम्‌में जो खादीके अनुकूल वातावरण देख रहा हूँ, उसका कारण यही है कि महाराजाके परिवारके लोग खादीको पसन्द करते हैं। और मुझे यह जानकर भी बड़ी प्रसन्नता हुई कि ईसाई, हिन्दू, यहूदी — हमारे बीच कुछ यहूदी मित्र भी हैं — यहाँतक कि कुछ मुसलमान भी खादीको पसन्द करते हैं। लेकिन साथ ही मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि आजसे दो वर्ष पूर्व यहाँ खादीके प्रति जो उत्साह था, वह अब नहीं है। मेरी रायमें यह चीज गलत है। हमपर अकसर यह आरोप लगाया जाता है कि हम बहुत जल्दी उत्साहित हो उठते हैं और यह उत्साह एकाएक गायब भी हो जाता है। मैं चाहूँगा कि आप इस आरोपको झूठा प्रमाणित कर दें। और मेरी नम्र रायमें खादीका कार्य एक ऐसा कार्य है जिसमें सतत प्रयत्न और लगातार उत्साह बनाये रखना जरूरी है।

और यदि मैं आपको यह बात समझा सकूं कि भारतके ७,००,००० गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों भूखे प्राणियोंके लिए खादीका क्या महत्त्व है तो आप समझ सकेंगे कि यह उत्साह और प्रयत्न न केवल आवश्यक है, बल्कि अपरिहार्य है। यह तथ्य याद रखिए कि खादीका उद्देश्य शहरोंमें रहनेवालोंकी नहीं, बल्कि गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों भूखे लोगोंकी सेवा करना है।

गांधीजीने कहा कि मैं इसे एक शुभ लक्षण मानता हूँ कि हम उस स्थानपर एकत्र नहीं हुए हैं जो दक्षिण भारतका एक उत्तम बन्दरगाह बननेवाला है, बल्कि कालेजके मैदानमें एकत्र हुए हैं।

मैं इस चीजको भी इस बातका द्योतक मानना चाहूँगा कि इस शिक्षण-संस्थामें पढ़नेवाले लड़के और लड़कियाँ अपने क्षुधा-पीड़ित भाई-बहनोंकी उपेक्षा नहीं करेंगे।

मै जानता हूँ कि यदि मै केवल छात्र-जगतकी भी शक्तिका उपयोग कर सकूँ तो खादीको भारतमें घर-घर फैला देनेमें और जनसाधारणकी कष्टकर गरीबीको दूर करनेमें कोई कठिनाई नही होगी। इस सुन्दर राज्यके लडके-लडकियाँ, स्त्री-पुरुष याद रखें कि बड़े शहरोंमें लड़के और लड़कियाँ जो शिक्षा प्राप्त करते हैं, वह देशके मेहनतकश जनसाधारणके बलपर ही प्राप्त करते है। और मै आपको बता दूँ कि आप कुछ देख-सीख सके, इसके लिए मैंने अपने सामने एक छोटी-सी, बहुत छोटी-सी खादी प्रदर्शनी लगा दी है।

यहाँ महात्माजीने कुछ बारीक हाथ-कती और हाथ-बुनी साड़ियाँ और कुछ बटुए सामने रखे, जिनमें से कुछमें बारीक कढ़ाईका काम किया हुआ था। उन्होंने बताया कि साड़ियाँ आन्ध्र देशमें तैयार की गई थीं और ऐसी थीं जिन्हें शौकीनसे-शौकीन-मिजाज औरत पहन सकती है। उन्होंने कहा, इन प्रदर्शित वस्तुओंसे केवल उन्हीं कतैया लोगोंको रोजी नहीं मिलती जो एक आनेसे दो आनेतक रोज कमाते है, बल्कि उनको भी मिलती है जो एकसे दो रुपयेतक रोज कमाते हैं। उन्होंने बताया कि कढ़ाईका काम बम्बईमें किया गया है, जहाँ बम्बईकी कुछ बनी हिन्दू और पारसी महिलाएँ बिना कुछ वेतन लिये अपनी देख-रेखमें लगभग १५० लड़कियोंकी एक कक्षा चलाती हैं। महात्माजीने कहा कि ये प्रदर्शित चीजें उन मिलके बने कपड़ोंसे कहीं अच्छी हैं, जिन्हें आपमें से बहुत-से लोगोंने पहन रखा है और जिन्हें पहननेमें त्रावणकोर और कोचीनकी महिलाओंको हमेशा बहुत खुशी होती है। उन्होंने कहा कि मेरे सामने रखी ये खादीकी चीजें राष्ट्र-भावना और धार्मिक भावनासे भरी हुई हैं। मैंने जिस खादीका जिक्र किया है, उसे पहननेवाला स्त्री या पुरुष अपने देशके गरीबसे-गरीब व्यक्तिके साथ सीधा नाता स्थापित कर लेता है।

इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप इस खादी-कार्यको वक्त गुजारनेका एक साधन नही, बल्कि एक सौभाग्यकी बात ही समझें। मै चाहता हूँ कि इस संस्थाके लड़के-लड़कियाँ इसे प्रेमका सन्देश मानकर अपनायें और गाँवोंमें काम करें।

महाराजा साहबने मुझे जो आतिथ्य प्रदान किया और मुझे जो उपहार भेजा है, उसके लिए मै उन्हें धन्यवाद देना चाहता हूँ। प्रतिदानमें मै केवल इतना ही कर सकता हूँ कि इस राज्यमें जो कई बातें मौजूद है, उनमें से कुछके बारेमें अपने विचार स्पष्ट रूपसे व्यक्त करूँ। मुझ-जैसा आदमी अन्य किसी प्रकारसे कोई सेवा नहीं कर सकता। इसलिए मै उसी समस्याकी चर्चा करूँगा, जिसने मेरा ध्यान त्रावणकोरमें अपनी ओर आकृष्ट किया था, क्योकि मै देखता हूँ कि यह समस्या आप कोचीनके लोगोंके लिए भी उतनी ही चिन्ताका विषय है जितनी कि त्रावणकोरके लोगोंके लिए है। आपके यहाँ अस्पृश्यता है। यहाँ कुछ जातिके लोगोंको दूसरे लोग अपने निकट-तक नही आने देते, और कुछ ऐसे हैं जिन्हें देखना भी पाप माना जाता है। और यह सब मुझे एक ऐसे राज्यमें देखकर दुःख होता है जिसपर एक हिन्दू राजाका शासन है। अस्पृश्यता इन हिन्दू राज्योंमें हो, यह अत्यन्त खेदकी बात है।

(एक आवाज: यहाँ तो यह त्रावणकोरसे भी ज्यादा उग्र रूपमें वर्तमान है) जब अन्धकारका साम्राज्य हो, तब कम और ज्यादा अन्तर करनेसे क्या फायदा? मैं स्वीकार करता हूँ कि हालके वर्षोंमें काफी सुधार हुआ है। मैं मानता हूँ कि महाराजा साहब और उनके अमलोंमें प्रगतिकी रफ्तार तेज करनेकी इच्छा है। मुझे यह देखकर बहुत खुशी हुई कि राजघरानेके एक सदस्य पुलाया भाइयोंके लिए एक संस्था चला रहे हैं। लेकिन मेरे लिए इतनी प्रगतिसे संतुष्ट होना सम्भव नहीं है। और मैं चाहता हूँ कि महाराजा साहब और उनके अमले भी अब मेरी ही तरह इन युगों पुराने अन्यायोंके प्रति अधीर हो उठें। राज्यके शासककी हैसियतसे महाराजा साहब प्रगतिको एक छोटे फुटसे नापकर संतुष्ट होनेका दावा कर सकते हैं। लेकिन पवित्र हिन्दू-धर्मके संरक्षककी हैसियतसे उन्हें इन अन्यायोंको चिरस्थायी नहीं बनने देना चाहिए, जो हिन्दू-धर्मको खोखला किये दे रहे हैं। अच्छे मौसममें किसी जहाजके कप्तानके लिए मामूली रफ्तारसे यात्रा करते हुए भी ठीक समयपर अपने गन्तव्य बन्दरगाहपर पहुँच जानेकी आशा करना उचित हो सकता है लेकिन हिन्दू-धर्मकी यह नौका तो बिलकुल बदलीवाले और तूफानी मौसममें यात्रा कर रही है। अन्य धर्मोंकी भाँति हिन्दू-धर्म भी आन्तरिक उथल-पुथलके दौरसे गुजर रहा है। दुनियाकी निगाहें भारतके करोड़ों लोगोंपर लगी हुई हैं। वे उत्सुकतासे इस बातकी प्रतीक्षा कर रहे हैं कि हम हिन्दू इस समस्याको कैसे सुलझाते हैं। और ऐसे तूफानी मौसममें प्रगतिकी धीमी रफ्तारसे सन्तुष्ट होना आत्मघातक है। अगर हम उस तूफानसे आगे निकल जाना चाहते हैं जो फटने-फटनेको है तो हमें बहादुरीके साथ पूरी रफ्तारसे नौका चलानी पड़ेगी। सदियोंसे इन चीजोंके संरक्षक जो पुजारी लोग रहे हैं, उनकी भावनाओं और उनके अन्धविश्वासोंको सोनेकी तुलामें रखकर तौलनेके लिए बैठे रहना असम्भव है। जिस बुराईको हर आदमी स्वीकार करता प्रतीत होता है, उसे देखते हुए इन सब पूर्वग्रहों और अन्धविश्वासोंके समाप्त होनेकी प्रतीक्षा करते बैठना सम्भव नहीं है।

इसके बाद महात्मा गांधीने कोचीनमें प्रचलित उस प्रथाका उल्लेख किया जिसके अनुसार जब देवताओंको मन्दिरोंसे निकालकर सार्वजनिक भागोंसे जुलूसमें ले जाया जाता है, उस समय अस्पृश्योंको मार्गमें नहीं पड़ने दिया जाता, मानो उन्होंने सड़कोंके रख-रखावके लिए कर दिया ही नहीं हो। उन्होंने कहा:

आपकी विधान परिषदकी कार्यवाहियोंकी रिपोर्टें पलटते समय मैंने इस प्रथाका एक बचाव जब यह पाया कि वह अति प्राचीन रिवाजके ऊपर आधारित है, तब मुझे हँसी भी आई, दुःख भी हुआ। चूँकि मैं एक वकील रहा हूँ जिसकी वकालत किसी समय काफी अच्छी चलती थी, इसलिए मैंने अपनी याददाश्तमें यह बात ताजा करनेकी कोशिश की कि अति प्राचीन रिवाज किसे कहते हैं। और मुझे एक मामले-के बारेमें यह पढ़नेकी धुंधली याद है, जिसमें न्यायाधीशने यह तीखी बात कही थी कि मानवताके विरुद्ध अपराध करनेके पक्षमें किसी रिवाजकी अति प्राचीनताकी दलील नहीं दी जानी चाहिए। ये अति प्राचीन रिवाज समयके साथ जन्मे हैं। पाप तो

आदमके समयसे ही होता आ रहा है, लेकिन मैंने एक भी ऐसी किताब नहीं पढ़ी है, जिसमें कहा गया हो कि चूँकि पाप हमें पीढ़ी-दर-पीढ़ीसे विरासतमें मिला है, अतः उसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। मुझे उसी रिपोर्टमें सार्वजनिक मार्गोंके उपयोगके बारेमें और भी छोटी-मोटी दिलचस्प बातें मिली हैं। मैंने उसमें देखा कि किला अवर्णोंके लिए खुला हुआ नहीं है, क्योंकि उसमें एक मन्दिर है, और मन्दिरोंके निकट स्थित स्कूल सभी वर्णोंके बच्चोंके लिए खुले नहीं हैं।

आज ही तीसरे पहर मुझे दो एजवाहा मित्रोंसे मिलनेका सुख प्राप्त हुआ और मैंने उनके साथ इस प्रश्नपर लम्बी चर्चा की। इस प्रश्नके बारेमें उन्होंने जिस गहरी भावनाके साथ मुझसे बात की, उसे मैं समझ सकता था। उन्होंने जो तर्क दिये वे वैसे ही हैं जैसे तर्क ब्रिटिश भारतमें और दक्षिण आफ्रिकामें दिये जाते हैं। वर्तमान स्थितिके प्रति उनका मन एक सात्विक क्रोधसे भरा हुआ है। सवर्णोंका यह कर्त्तव्य है कि वे अस्पृश्योंको बुनियादी न्याय दिलानेके लिए राज्यपर दबाव डालें।

इसके बाद महात्माजीने देवदासियोंकी प्रथाकी चर्चा करते हुए कहा कि यह प्रथा आपका यश नहीं बढ़ाती। मुझे नहीं पता कि इस घृणित प्रथाका भी कोई धार्मिक महत्त्व माना जाता है या नहीं।

एक आवाज: कोई देवदासी इस राज्यकी नहीं है। वे सब बाहरसे बुलाई गई हैं।

महात्माजी: बाहरसे मँगाई गई शराब भी निषिद्ध होती है। (हँसी)

महात्माजीने कहा कि सारे राज्यमें यदि एक भी देवदासी हो तो यह प्रत्येक युवकके लिए लज्जाकी बात है।

आगे बोलते हुए महात्माजीने शराबके व्यापारकी चर्चा की और कहा कि शराब आयका एक अनैतिक जरिया है। अगर आपमें सच्ची राष्ट्रीय या सामाजिक भावना हो तो यह आपका ही कसूर है कि आपके बीच एक भी शराब पीनेवाला व्यक्ति हो। शराबखोरी खत्म करनेके दो तरीके हैं: (१) राज्यमें पूर्ण नशाबन्दीके लिए अनवरत आन्दोलन चलाना और (२) जो लोग शराबकी लतके शिकार हो चुके हैं, उनके बीच सुधार आन्दोलन चलाना। केवल पूर्ण शराबबन्दी काफी नहीं है और न केवल सुधार आन्दोलन ही बिना पूर्ण शराबबन्दीके सफल होगा। इन दोनों आन्दोलनोंको साथ-साथ चलना चाहिए और राजस्वकी कोई हानि बड़ी नहीं मानी जानी चाहिए। जहाँतक राजस्वका सवाल है, इस राज्यमें जितनी जरूरत है, यदि उतनी खादी आप स्वयं तैयार कर सकें तो आप लोगोंकी कमाईमें चार गुना वृद्धि कर सकते हैं।

महात्माजीने अपने भाषणको समाप्त करते हुए उपस्थित लोगोंसे अपना सन्देश याद रखनेका अनुरोध किया और कहा कि मैं चाहता हूँ, आपमें से कुछ लोग खादीके काममें, अथवा मेरे बताये कामोंमें से किसी एक काममें लग जायें, क्योंकि ये बहुत जरूरी हैं। उन्होंने उपस्थित लोगोंसे खादी कोषके लिए अपनी सामर्थ्य-भर चन्दा

देनेकी अपील की। चन्दा एकत्र करनेवाले स्वयंसेवकोंको लोगोंने उदारतापूर्वक चन्दा दिया। महात्माजीने कहा कि त्रावणकोर और कोचीनकी महिलाओंके तनपर बहुत जेवर नहीं होते; लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि आपने जो थोड़े-बहुत जेवर पहन रखे हैं, इनसे भी मुझे ईर्ष्या होती है (इसपर बहुत जोरकी हँसी हुई।) देशमें बहुत-से लोग हैं, जो सचमुच भूखों मर रहे हैं अतः आपके लिए जेवरोंसे सजनेका कोई औचित्य नहीं है। सच्चा सौन्दर्य चरित्रकी शुद्धितामें है, जेवर पहननेमें नहीं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १५-१०-१९२७

८९. पत्र : डब्ल्यू० एच० पिटको

ट्रेनमें
त्रिचूर
१४ अक्टूबर, १९२७

प्रिय श्री पिट,[1]

मुझे आपकी चिट्ठी पाकर तथा यह जानकर कि आप काफी देरतक सोये, खुशी हुई। सबेरे मिलना तो एक फिजूलका तकल्लुफ होता। कृपया श्रीमती पिटको बता दीजिए कि मैं उनसे हाथ मिला पाया इसकी मुझे काफी खुशी हुई।

अलेप्पीमें दिया गया मेरा भाषण तो आपने देखा ही होगा। श्री माधवन् और अन्य मित्रोंने अपना कार्य स्थगित कर दिया है, और मुझसे सलाह लिये बिना वे आगे कोई कदम नही उठायेंगे। और यह कहनेकी भी जरूरत नही कि मै आपसे पहले सम्पर्क स्थापित किये बिना कुछ नहीं करूँगा। क्या मैं आपसे तिरुवरप्पु और सुचिन्द्रम्के मामलोंको ठीक-ठाक करनेकी आशा रखूँ? यदि आप चाहते है कि मैं देवस्वमके आयुक्तको लिखूँ तो मैं खुशीसे ऐसा करूँगा।

अब यदि निषेधादेश वापस ले लिये जायें तो यह एक शोभनीय कार्य होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १४६२३) की माइक्रोफिलमसे।

१. त्रिवेन्द्रम्में पुलिस आयुक्त।

१०. भाषण : त्रिचूरमें

१४ अक्टूबर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मैं आपको अभिनन्दनपत्र तथा भेंट की गई इन अनेक थैलियोंके लिए धन्यवाद देता हूँ। त्रिचूरकी इस दूसरी यात्राका आनन्द पानेकी मेरी काफी इच्छा थी। मैं यह तो नहीं कह सकता कि त्रिचूरसे मुझे जो अपेक्षाएँ थी, वे सब पूरी हुई है, तथापि आज दिन-भर अनेक मित्रोसे हुई बातचीतसे और कई संस्थाओंको देखनेपर मैंने जितना-कुछ जाना-समझा है, उससे मेरा मन आशासे भर गया है। मुझे यह देख कर बहुत हर्ष और सुख हुआ कि त्रिचूरके इन स्कूलोंमें कताई बहुत लोकप्रिय हो गई है। मैंने सैंकड़ो लड़के-लड़कियोंको चरखेपर या तकलीपर कताई करते हुए देखा। लेकिन जैसा कि मैंने कहा और लिखा है, कताईका काम धार्मिक श्रद्धाके साथ और सेवा तथा वैज्ञानिक भावसे करना चाहिए। मुझे श्रीमती स्वान्स द्वारा संचालित संस्थामें लड़कियोंको कताई करते देखनेका सुख प्राप्त हुआ। संस्थाके लिए श्रीमती स्वान्सके उत्साहने मुझे बहुत प्रभावित किया। लेकिन यहाँ भी मैंने देखा कि कताई वैज्ञानिक ढंगसे नहीं की जाती। जबतक कच्ची रुई न उपलब्ध हो, तबतक यदि कताईको बिलकुल दाखिल न किया जाये तो तनिक भी हर्ज नहीं होगा। लेकिन कताईके प्रति अत्यधिक उत्साह रखनेवाले उन लोगोंके हाथो भी कताईके बहुत लोकप्रिय हो जानेका खतरा है जो कताईकी तकनीक न जाननेके कारण उसके प्रयोगमें गड़बड़ी कर सकते है। मुझे अपने स्कूलके दिन याद हैं। वहाँ लड़कोंको रेखागणित पढ़ना अच्छा नहीं लगता था। उसका कारण लड़कोंमें नहीं, बल्कि स्वयं शिक्षकमें था। विषयकी ठीक पकड़ न होनेके कारण वह लड़कोंके सामने तख्तेपर कोई सवाल लिखकर उसके बारेमें बोलने लगता था, जिसे लड़के कभी समझ ही नहीं पाते थे। अब व्यक्तिगत तौरपर मैं मानता हूँ कि रेखागणित एक अत्यन्त दिलचस्प विषय है और उसकी रोचकताको समझ लेनेके बाद मुझे लड़को द्वारा इस विषयके विरुद्ध अकसर उठाई जानेवाली आपत्तियाँ कभी समझमें नहीं आईं। लेकिन यदि ऐसी चीजोंकी गहराईमें जायें तो आप देखेंगे कि जहाँ कहीं भी कोई विषय-विशेष नीरस लगता है या लड़के-लड़कियोंके बीच लोकप्रिय नहीं होता, वहाँ गलती लड़के-लड़कियोंकी नहीं होती, बल्कि मुख्य रूपसे शिक्षकोंकी होती है। लेकिन रेखागणितको, जो एक महान विज्ञान है और जिसके संसार-भरमें हजारों प्रेमी हैं, कुछ मूढ़ शिक्षकोंके कारण किसी भी प्रकारका खतरा न तो मेरे समयमें था और न अब है। मगर भारतके करोड़ों मेहनतकश लोगोंके दुर्भाग्यसे हाथ-कताई आज भी अपने अस्तित्वके लिए संघर्ष कर रही है। यूरोपीय विचारधाराके बहुतसे अर्थशास्त्री उस समय मुझपर हँसते हैं जब मैं

कताईको एक वैज्ञानिक चीज और सौन्दर्य तथा कलाका चिह्न बताता हूँ। और चूंकि वे प्रतियोगिताकी प्रणालीको, जो संसारमें सर्वव्यापी और सर्वोपरि बनी हुई है, अर्थ-शास्त्रके क्षेत्रमें अन्तिम वस्तु मानते है, अतः उनका विश्वास है कि कताई तो मेरा एक खिलौना-मात्र है, जो मेरे मरनेके बाद ही खत्म हो जायेगी। इसलिए आप इस शिशुके लिए, जो अपने अस्तित्वके लिए संघर्ष कर रहा है, मेरी चिन्ताको समझेंगे, और अगर मै आपको सावधान करूँ कि आप कताईके सिलसिलेमें गलत ढंगसे काम न करें तो इसके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। मै यह बात १९०८ से इस विषयका ध्यानपूर्वक अध्ययन करनेके बाद कह रहा हूँ। कताई उन बहुतसे हस्तकौशलोंमें से नही है, जिन्हें लड़के-लड़कियाँ सीख सकते है या हमारे देशके लोग अपना सकते है, बल्कि मेरी रायमें यह भारतके क्षुधा-पीड़ित जन-साधारणके जीवनका मूलभूत तथ्य है। मै इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि किसी भी योजनामें हाथ-कताईको केन्द्रीय स्थान प्रदान किये बिना जन-साधारणकी उस गहरी गरीबीका कोई हल सम्भव नही है जो दिनोंदिन और गहरी होती जा रही है। इसलिए मैंने राज्यको जिस ढंगसे हाथ-कताईका समर्थन करते देखा है, उसके लिए मैं उसे बधाई देता हूँ और जिन लड़के-लड़कियोंको आज मैंने देखा, उन्हें तथा शिक्षकोंको भी कताईको अपनानेके लिए बधाई देता हूँ। लेकिन साथ ही मै राज्यके अधिकारियोंसे और शिक्षकोंसे, लड़के-लड़कियोंसे और उन सबसे जिनके हाथमें राज्यके कल्याणका भार है, यह अनुरोध करता हूँ कि वे इस विषयकी ओर गम्भीरतापूर्वक ध्यान दें।

हम अहमदाबादमें तथाकथित 'अस्पृश्य' जातिके लगभग १,००० लड़कोंके साथ एक प्रयोग कर रहे है और मै दावा कर सकता हूँ कि हमने काफी हदतक सफलता प्राप्त की है। यह प्रयोग श्रीमती अनसूयाबाईकी व्यक्तिगत देख-भालमें किया जा रहा है, जो स्वयं एक करोड़पति परिवारमें पली है। लेकिन मैंने आपको बताया कि इस प्रयोगके सिलसिलेमें जो सफलता प्राप्त हुई है उसके लिए कई विशेषज्ञोंको अपने कई बहुमूल्य घंटे उसके विकासपर खर्च करने पड़ते है, और वही हम इस अन्तिम नतीजेपर पहुँचे कि स्कूलोंमें चरखा लागू करना गलत होगा, और कताईको तकलीतक ही सीमित रखना जरूरी होगा। मैं उन विभिन्न प्रक्रियाओंकी यहाँ चर्चा नही करूँगा जिन्हें हमने वहाँ आजमाया, बल्कि मै आपको केवल उस प्रयोगके परि-णाम बताऊँगा। हर लड़केकी तकलीकी सावधानीसे जाँच की जाती है; हर लड़केके पास अच्छी तरह धुनी हुई रुईकी पूनियाँ होती है। तकली चलाते समय लड़कोंकी हथेलियाँ अकसर पसीनेसे नम हो जाती हैं, इसलिए उन्हें बताया जाता है कि वे ध्यान रखें कि हथेलियोंमें पसीना न आने पाये। हर लड़केका सूत सावधानीके साथ रखा जाता है और उसके बट, नम्बर और मजबूतीकी जाँच की जाती है। और हमने देखा कि अविश्वसनीय रूपसे कम समयके भीतर परिणाम ५० प्रतिशत अधिक बढ़ गया। यह भी देखा गया कि इस जाँचके फलस्वरूप औसत गतिमें भी वृद्धि हुई। इस कलाको सीखनेके लिए प्रत्येक शिक्षकको वेतनमें थोड़ी-सी वृद्धि प्रदान करके प्रोत्साहित किया गया। फल यह है कि अब हर शिक्षक अच्छा धुनिया और

अच्छा कतैया है। जाँचका काम अब भी जारी है, और यह प्रयोग जितने समयसे किया जा रहा है, उसमें मिली सफलता कुल मिलाकर उत्साह-वर्धक है। और हमने वास्तविक अनुभवसे यह भी पाया है कि इस प्रकार लड़कोंसे हमें जितना सूत प्राप्त हुआ है, वह मात्रामें उस सूतसे चार या पाँच गुना ज्यादा है जो हमें चरखेसे मिलता था। ऐसा नही है कि चरखेपर काम करनेवाला लड़का तकलीके मुकाबले कम सूत निकालेगा, बल्कि इसका कारण यह देखा गया कि सभी लड़को द्वारा एक साथ चरखेपर काम कर सकना कतई असम्भव है। चरखेकी खूबी है कि वह इन नटखट लड़कोंके हाथमें पड़कर बार-बार खराब हो जाता है, और मैं आपको रहस्यकी यह बात बता दूँ कि हमने यह भी पाया कि लडके और लड़कियाँ आखिर लड़के और लडकियाँ ही रहेंगे और नटखट भी होगे। और उनके बीच ऐसा कोई कठोर अनुशासन तो था नही कि थोडी-बहुत निर्दोष शरारत भी वे न करे। लेकिन हमने पाया कि उनके अन्दर न समा पानेवाली शक्ति ही नटखटपनके रूपमें प्रकट होती है। इसलिए हम उस नटखटपनका उपयोग इस कामके लिए करते है और अब हम यदि वहाँ जायें, तो उन्हें मुस्कराते और गाते हुए खुशीके साथ और निष्ठा-पूर्वक प्रतिदिन आधा घंटा कताई करते हुए पायेंगे और हमारा लक्ष्य यह है कि हर लडका साल-भरमें इतना सूत कात ले जिससे उसकी जरूरत पूरी हो सके और थोड़ा-बहुत उसके परिवारकी जरूरतके लिए भी बच रहे। हिसाब लगाकर देखा गया है कि यदि भारतकी आबादीका आधा हिस्सा भी अपने दैनिक अवकाशके घटोका कुछ अंश कताईके लिए दे तो सारे भारतको अपनी आवश्यकतासे भी अधिक सूत प्राप्त हो सकता है।

लेकिन मुझे इस महती सभाका समय हाथ-कताईकी तफसीले बतानेमें नही बर्बाद करना चाहिए। यह देखते हुए कि आप यह महान प्रयोग कर रहे है, मैं आपसे सिर्फ यह कहूँगा कि आप इस कामको बडी गम्भीरतापूर्वक, वैज्ञानिक तरीकेसे और कुशलतापूर्वक चलाइए। लेकिन यदि आप सचमुच गम्भीर है और महज इसके साथ खिलवाड नही कर रहे है और यदि आपको भी मेरी तरह हाथकताईमें रुचि है, या मेरी रुचिका कुछ अश भी आपमें है तो मैं आपसे कहूँगा कि आपके लिए यह कतई जरूरी है कि आप लड़कों और उनके माता-पिताओंमें खादी पहननेकी रुचि जगायें। मुझे आशा है, आप मेरी इस बातको समझेंगे कि जिस क्षण आप यह स्वीकार करते है कि लड़के खादी नही पहनते, उसी क्षण इस प्रयोगका कोई मतलब नही रह जाता है। इसलिए जब बड़ी सावधानीके साथ देखनेके बावजूद मैंने पाया कि इन संस्थाओंमें मैंने जिन लड़के-लड़कियोको देखा, उनमें से बहुत कम लोग खादी पहने हुए थे, तब मुझे बहुत दुःख हुआ। लेकिन जबतक शिक्षक लोग स्वयं उदाहरण प्रस्तुत नही करते तबतक इसकी सम्भावना नही है कि लड़के और लड़कियाँ खादी पहनेंगे और न इसीकी सम्भावना है कि वैसा करनेके लिए उनके माता-पिता उन्हे प्रोत्साहित करेगे। मैं कुछ बहुत अच्छे माता-पिताओको जानता हूँ जो स्वयं खूब धूम्र-पान करते है, लेकिन जो अपने बच्चोको धूम्रपान न करनेकी शिक्षा देनेका प्रयत्न

करते हैं। माता-पिताओं द्वारा दी जानेवाली इस शिक्षाके भयंकर परिणामोंकी आप आसानीसे कल्पना कर सकते हैं। बच्चे इन उपदेशोंपर हँस देते हैं और छिपकर धूम्रपान करते हैं। अतः यदि आप सचमुच सोचते हैं—और आपकी तमाम बातचीतसे, और मुझे जो तमाम अभिनन्दनपत्र मिले हैं, उनसे तो लगता है कि आप सचमुच ऐसा सोचते हैं—कि जन-साधारणकी गरीबीकी समस्याको काफी हदतक हल करनेमें हाथ-कताईकी प्रभावकारितामें आपको विश्वास है, तो आपके लिए शोभाकी बात यही है कि आप खादीको गम्भीरतापूर्वक स्वयं अपनायें और वातावरणको खादीकी भावना और चरखेसे भर दें।

इस राज्यमें, जहाँ ईसाई, हिन्दू और अन्य जातियोंके लड़के और लड़कियाँ इतनी अधिक शिक्षा प्राप्त कर रही हैं, आपके लिए यह एक बड़ी आसान बात है कि जहाँतक कपड़ेकी जरूरतका सवाल है, आप इस सुन्दर राज्यको आत्म-निर्भर बना दें। हम सर दिनशा वाछाके कथनको प्रमाण मानकर कह सकते हैं कि भारतकी कपड़ेकी आवश्यकता औसतन प्रति व्यक्ति करीब १३ गज है। इसलिए मैं प्रति व्यक्ति उतने कपड़ेकी लागत ४ रुपये लगाता हूँ। आप इस संख्याको राज्यकी जनसंख्यासे गुणा करके स्वयं पता चला सकते हैं कि आप कुल मिलाकर हर साल कितनी बड़ी रकम बचा सकते हैं; और अब मैं मद्यपानकी घृणित समस्यापर आता हूँ।

मेरे लिए यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि उस राज्यमें, जहाँ शिक्षाका इतना अधिक प्रसार है, जहाँ इतनी सारी शिक्षण-संस्थाएँ हैं, इतने सारे हिन्दू और ईसाई हैं, यह भयंकर बुराई बर्दाश्त की जाती है। जैसा कि हमारे लिए उचित है, यदि हम इस देशके सभी लोगोंको अपने सगे भाई-बहन समझते होते तो इस बुराईको एक दिन भी न टिकने दिया जाना चाहिए था। क्या हम निश्चिन्त मनसे इस भयंकर तथ्यको स्वीकार कर सकते हैं कि हमारे बच्चे अपनी शिक्षाके लिए काफी बड़ी हदतक राजस्वके इस अनैतिक साधनपर निर्भर करते हैं? मैंने बहुतसे लोगोंके मुँहसे पूर्ण मद्य-निषेधके इस आवश्यक सुधारको लागू करनेमें आर्थिक कठिनाइयोंकी चर्चा सुनी है। मैंने चरखेके रूपमें आपको इस कठिनाईका एक तैयार हल प्रदान कर दिया है। यह वास्तवमें आप सबका परम कर्त्तव्य है कि प्रत्येक उचित उपायसे आप इस बुराईका उन्मूलन कर डालें, और यदि मैं शराबखोरीकी बुराईके बारेमें इस अन्दाजमें बोल रहा हूँ तो सोचिए कि मैं अस्पृश्यताकी बुराईके बारेमें किस ढंगसे बोलूँगा, जो इस सुन्दर राज्यमें अस्पृश्यता और अदर्शनीयता-जैसे घोर और भयंकर रूपमें प्रकट होती है।

मैं जानता हूँ कि तथाकथित अस्पृश्योंकी सहायताके लिए राज्यने बहुत-कुछ किया है। मुझे यह देखकर अतीव हर्ष हुआ कि राजपरिवारके एक सदस्य पुलाया बस्तीकी देखभाल कर रहे हैं, और इस बस्तीको राजकीय कोषसे काफी आर्थिक सहायता प्राप्त होती है। मुझे एक निकटवर्ती स्थानके यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशनके मन्त्रीसे मिलकर बहुत खुशी हुई, जिनपर ऐसी ही एक बस्तीकी देखभालका भार है। इस बस्तीको राज्यसे ३०० या ४०० रुपये सालानाकी सहायता प्राप्त होती है। और

लोकशिक्षा निदेशकसे, जिनके साथ मुझे दिल खोलकर बातें करनेका सुख प्राप्त हुआ, यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई कि इस राज्यके स्कूलोमें पढनेवाले ५० प्रतिशत लड़के इसी अस्पृश्य वर्गके है।[1] मै आपको इस सुधारके लिए धन्यवाद देता हूँ। अब मुझे मालूम हुआ है कि स्कूलोमें पढनेवाले लड़कोका ५० प्रतिशत नही, बल्कि दलित या अस्पृश्य वर्गके स्कूली उम्रके लड़कोका ५० प्रतिशत पढ़ने जाता है। मैने पहले जो बात कही थी वह जितनी सन्तोषजनक थी, यह बात उतनी तो नही, फिर भी सन्तोषजनक ही है। और मै प्रकारान्तरसे कहना चाहूँगा कि यह देखते हुए कि इन लडको, और मै आशा करता हूँ कि लड़कियोके साथ भी, जिनकी इतने लम्बे समयतक उपेक्षा होती रही, विशेष व्यवहार किये जानेकी आवश्यकता है, और चूँकि वे राज्यके साधारण स्कूलोमें पढते है, जो कि ठीक ही है, इसलिए मेरी नम्र रायमें शिक्षाके पाठ्यक्रममें परिवर्तनकी आवश्यकता है, और तथ्य तो यह है कि शिक्षामें आमूल परिवर्तनकी आवश्यकता वैसे भी है। इस दिशामें की गई प्रगतिके लिए मै राज्यको और राज्यके लोगोको भी बधाई देता हूँ, लेकिन मै आपके सामने यह भी स्वीकार करूँगा कि वैसे यह प्रगति कितनी भी बडी क्यो न दिखाई पड़ती हो, लेकिन हिन्दू-धर्ममें जो बुराई फैल गई है, उसकी व्यापकताको देखते हुए यह प्रगति भी बहुत मामूली है। एक वर्ग-विशेषके मनुष्योके प्रति, जो उतने ही अच्छे है जितने हम है, अस्पृश्यो-जैसा व्यवहार करके मनुष्य और ईश्वरके प्रति हमने जो पाप किये है, यदि उनके लिए हमें पर्याप्त प्रायश्चित्त करना है तो प्रगतिकी रफ्तारको अबतककी अपेक्षा और तेज करना पड़ेगा। यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशनके मन्त्रीने मुझे नायडी लोगोकी दशाका एक सजीव किन्तु दुखद विवरण सुनाया। उस कष्टदायी बातचीतको विस्तारसे बतानेमें मै आपका समय नही लूँगा। अपने ही बन्धु-बान्धवोपर हम हिन्दुओने जो अन्यायपर-अन्याय थोपे है, उन्हें शायद आप मुझसे बेहतर जानते है, इस अन्यायका थोड़ा-बहुत निराकरण तभी हो सकता है जब हम स्वयं अपनेको धिक्कारते हुए उठ खड़े हो और इस बुराईका नाम-निशान मिटा डाले। धीरज रखनेके पक्षमें और पूर्व-ग्रहोके पक्षमें, भले ही वे पूर्वग्रह कितने ही पापपूर्ण क्यों न हों, हमेशा जो तर्क दिये जाते है, मै उन्हें जानता हूँ; लेकिन भारतके एक छोरसे लेकर दूसरे छोरतक इन वर्गोकी दशा देखनेके बाद मै आपसे इतना ही कह सकता हूँ कि प्रगतिकी और प्रगतिकी शर्तोके बारेमें दार्शनिकोकी तरह बातें सुन-सुनकर हम थक चुके है। मेरे लिए तो अस्पृश्यताको समूल मिटा देनेका प्रश्न हिन्दू-धर्मकी सबसे बडी कसौटी है। इस समस्याके अच्छे-बुरे राजनीतिक और आर्थिक बड़े परिणाम हो सकते है, लेकिन मेरे लिए तो यह प्रमुख रूपसे एक धार्मिक प्रश्न है। यह सवर्ण हिन्दुओके लिए आत्मशुद्धि करनेका प्रश्न है। इसलिए जब हम इन चीजोको धीरे-धीरे करनेकी बात करते है तो मुझे लगता है कि हम इन लोगोके प्रति अपना कर्त्तव्य नही कर रहे है। जबतक हममें से हरएक व्यक्ति इन लोगोके निराशासे भरे घरोमें आशा और सान्त्वनाकी किरण पहुँचाने वाला मिशनरी नही बन जाता तबतक मै सन्तुष्ट नही होऊँगा। अतः आप समझ सकेंगे

१. निदेशक राव साहब मथाईने यहाँ महात्माजी द्वारा दिये गये आँकड़ोंमें कुछ सशोधन किया।

कि मुझे यह देखकर गहरा दुख क्यों होता है कि कुछ विशेष अवसरोंपर जब ये लोग सार्वजनिक मार्गोंपर से गुजरते हैं तो इन्हें धक्का देकर हटा दिया जाता है, और जो स्कूल मन्दिरोंके अहातोंमें स्थित हैं उनमें इस वर्गके बच्चे नहीं जा सकते। हमारे मन्दिरोंमें इन स्त्री-पुरुषोंके प्रवेशपर लगी निषेधाज्ञाको स्वीकार कर सकना मेरे लिए असम्भव है। मेरे लिए ऐसी जगह रहनेके योग्य नहीं है जहाँ मनुष्य यह सोचनेकी धृष्टता करता हो कि अपने ही रचे हुए प्राणियोंके निकट आनेसे स्वयं ईश्वर अपवित्र हो जाता है। वह मन्दिर जहाँ किसी भी मनुष्यको किसी जाति विशेषमें जन्म लेनेके कारण न जाने दिया जाता हो, मेरे लिए मन्दिर नहीं रह जाता। इसलिए मैं पूरे दिलसे और पूरे जोरके साथ आपमें से प्रत्येक व्यक्तिसे अपील करता हूँ कि हम जनताके प्रति अपने कर्त्तव्यको साहसके साथ निभायें।

एक बुराई और है जो समाजको भ्रष्ट कर रही है। मेरे पास देवदासी-प्रथाके सम्बन्धमें एक छपा हुआ खुला पत्र है, जिसपर हस्ताक्षर करनेवाले मित्रोंके नाम मैं जानता नहीं और कुछके नाम तो मुझसे पढ़े भी नहीं जा सके। इस पत्रके साथ संलग्न एक प्रतिवेदन है, जो महाराजा साहबके नाम है। इस प्रतिवेदनको पढ़कर कष्ट होता है। इसमें बताया गया है कि किस प्रकार आरम्भमें कुछ देवदासियाँ राज्यमें लाई गई थीं और किस प्रकार अब यहाँ भी देवदासियोंकी प्रथा हो गई है, जो दिन-दिन फैलती ही चली जा रही है। मैं नहीं जानता कि प्रतिवेदनमें कही गई बातें किस हदतक सिद्धकी जा सकती हैं, लेकिन मैं इतना जानता हूँ कि यह एक सुविचारित और युक्तियुक्त प्रतिवेदन है, जिसे जिम्मेदार लोगोंने लिखा है, पढ़नेपर इसमें लिखी बातें विश्वसनीय प्रतीत होती हैं। प्रतिवेदनमें कहा गया है कि देवदासियोंसे पैदा होनेवाली लड़कियाँ, और जिन्हें देवदासियाँ अन्य वर्गोंसे गोद ले लेती हैं, वे लड़कियाँ वास्तवमें ईश्वरके नामपर ऐसे भयंकर कार्यके लिए प्रयुक्त होती हैं, जिनकी कल्पना नहीं की जा सकती। प्रतिवेदनमें लोगोंके एक पूरे वर्गका उल्लेख किया गया है, जो इन कच्ची उम्रकी लड़कियोंका अवैध उद्देश्योंके लिए उपयोग करके स्वयं अपने-आपको और भारतको कलंकित करते हैं। मैं नहीं जानता कि प्रतिवेदनमें कही गई बातोंका खण्डन करना आपके लिए किस हदतक सम्भव है। लेकिन यह आप लोगोंको, जो इस राज्यमें लोकमतके नेता हैं और जो इस राज्यमें लोकमतको प्रभावित कर सकनेमें सक्षम हैं, चाहिए कि इस प्रतिवेदनको ध्यानसे पढ़ें। आप देखेंगे कि इस प्रतिवेदनमें की गई शिकायतोंके लिए काफी ठोस आधार है। आपको इस समस्यासे गम्भीरतापूर्वक निपटनेका प्रयत्न करना चाहिए। मैसूर सरकारने १९०९ में अपने राज्यमें मौजूद इस बहुत बड़ी बुराईसे निपटनेके लिए जो संकल्प किया था, उसका इस प्रतिवेदनमें कृतज्ञ-भावसे उल्लेख किया गया है, जो कि उचित ही है। मैं यह सोचनेका साहस करता हूँ कि यह संकल्प ऐसा है जिसकी इस राज्यको नकल करनी चाहिए। यह हमारी इन अभागी बहनोंको कुछ बुनियादी न्याय प्रदान करता है। आपको शायद पता हो कि इस समय मद्रास विधान परिषदमें उसकी एक महिला सदस्या द्वारा एक विधेयक पेश करनेकी कोशिश की जा रही है, जो काफी-कुछ मैसूर राज्यके संकल्प-जैसा ही है। प्रतिवेदनमें दिये

गये कारण मनको वैसा संकल्प लेनेके लिए कायल करनेवाले हैं। मैं आप सबसे इस नाजुक प्रश्नका गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करनेकी सिफारिश करता हूँ।

और अब मैं छात्र-छात्राओंके सम्बन्धमें कुछ कहूँगा। आज तीसरे पहर उनसे मुझे अभिनन्दनपत्र प्राप्त हुआ था और उनसे मिलनेका भी अवसर प्राप्त हुआ था। मेरे लिए यह अत्यन्त हर्ष और सन्तोषकी बात रही है कि मुझे इस देशमें सर्वत्र हजारों छात्रोंका विश्वास प्राप्त है और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं हम सबके रचयिता प्रभुसे प्रतिदिन हृदयसे प्रार्थना करता रहता हूँ कि वह मुझे इस विश्वासके योग्य बनाये। मेरी कामना थी कि मेरे पास इतना काफी समय होता कि मैं इस सभामें उपस्थित लड़के-लड़कियोंके समक्ष अपना हृदय खोलकर रख सकता। मैं जानता हूँ कि शायद मैं आपको इस जीवनमें फिर कभी न देखूँ, लेकिन मेरा हृदय सदा आपके साथ है।

मुझे हमेशा लगा है कि हमारी शिक्षा कई अर्थोंमें दोषपूर्ण और अधूरी है। आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें खुद भी यही राय व्यक्तकी है और आपने यह आदर्श आशा भी प्रकट की है कि आपके बीच मेरे आ जानेसे शिक्षाके मामलेमें सब-कुछ ठीक-ठाक हो जायेगा। कितना अच्छा होता कि ऐसी आशाका कोई ठोस आधार होता। शिक्षाकी योजनामें परिवर्तन बहुत महत्त्वपूर्ण और जरूरी है और समस्त देशमें यह एक बहुत बड़ी समस्या है। मैंने अकसर इस बारेमें लिखा है और परिपक्व आयुके कुछ छात्र शायद मेरे विचारोंसे अवगत भी हों। मैं मानता हूँ कि मेरे विचारोंमें तनिक भी परिवर्तन नहीं हुआ है और समयके साथ मेरे विश्वासकी तीव्रता बढ़ी है। लेकिन वह उपाय तो ऐसा है जिसकी इस समय मैं आपसे चर्चा करनेका साहस भी नहीं कर सकता। यह देशके शिक्षा-शास्त्रियोंपर निर्भर करता है और, उससे भी ज्यादा, वास्तवमें बहुत सारी परिस्थितियोंपर निर्भर करता है जिनपर शिक्षा-शास्त्रियोंका भी वश नहीं है। अतः लडकों और लड़कियोंसे बोलनेके लिए मैंने एक ऐसा तरीका अपनाया है जिससे वर्तमान पाठ्यक्रममें तनिक भी हेरफेर किये बिना वे आसानीसे अपना सकते हैं। सही या गलत, सभी शिक्षा-शास्त्रियोंका यह दावा है कि शिक्षाको धर्मनिरपेक्ष होना चाहिये।

व्यक्तिगत रूपसे मैं इस विचारसे सदा और सर्वथा असहमत रहा हूँ, लेकिन जैसी कि स्थिति है, उसमें भी छात्रोंके लिए किसी-न-किसी अवस्थामें कुछ धार्मिक शिक्षा प्राप्त करना कुछ धार्मिक सांत्वना प्राप्त करना जरूरी है। दुर्भाग्यवश जो माता-पिता अपने लड़कोंको इन स्कूलोंमें भेजते हैं, उनके घर लगभग उखड़ चुके हैं। उनमें अपने लड़के और लडकियोंको यह आवश्यक शिक्षा देनेकी न तो योग्यता है और न इच्छा ही रही है। वह धार्मिक और नैतिक वातावरण जो हम मानते हैं कि एक समय भारतके प्रत्येक घर और प्रत्येक पुरवेमें मौजूद था, आज बिलकुल ही नहीं रहा, लेकिन ईश्वरका धन्यवाद है कि छात्रोंको निराशा महसूस करनेकी जरूरत नहीं रहा है। अगर आपके अन्दर धार्मिक और नैतिक प्रवृत्ति है, जैसा कि हममेंसे हरएकके अन्दर होनी चाहिए, तो हमारे लिए अपने-आपको आवश्यक प्रशिक्षण दे सकना सम्भव है।

हमें समझ लेना चाहिए कि धार्मिक और नैतिक शिक्षासे क्या अभिप्राय है। दूसरे शब्दोंमें कहें तो इसका हेतु चरित्र-निर्माणके सिवा कुछ नही है, और प्रत्येक लड़का और प्रत्येक लड़की सहज ही जानते है कि चरित्र किसे कहते है। ईश्वर है, यह बात आपको माता-पिता या किसी धार्मिक पुरुषसे जाननेकी जरूरत नही है। इस अपरिहार्य आस्थाके बिना मेरी रायमें चरित्रका निर्माण कर सकना असम्भव है। यह आस्था चरित्रका आधार है। इसलिए मै लड़कों और लड़कियोसे कहता हूँ: "ईश्वर-में आस्था, और इस प्रकार स्वयं अपने आपमें आस्थाको कभी मत छोड़ो, और याद रखो कि यदि तुम अपने मनमें एक भी बुरे विचारको, एक भी पापपूर्ण विचारको जगह देते हो तो इसका मतलब है कि तुम वह विश्वास खो बैठे हो।" असत्य, अनुदा-रता और हिंसाका उस विश्वाससे कतई कोई सम्बन्ध नही है। याद रखें कि इस संसारमें हमारा सबसे बड़ा शत्रु हम स्वयं है। 'भगवद्गीता' के लगभग प्रत्येक श्लोकमें यह बात कही गई है। यदि मुझे 'सरमन ऑन द माउंट' की शिक्षाका सार बताना हो तो मै यही उत्तर पाता हूँ। 'कुरान' के अपने अध्ययनसे भी मै इसी अनिवार्य निष्कर्षपर पहुँचा हूँ। हम अपने आपको जितनी हानि पहुँचा सकते है उतनी और कोई नही पहुँचा सकता। इसलिए यदि आप बहादुर लड़के और बहादुर लड़कियाँ है तो आप इन सभी बुरे विचारोके विरुद्ध कृतसंकल्प होकर वीरतापूर्वक संघर्ष करेंगे। बिना बुरे विचारकी प्रेरणा हुए संसारमें कोई बुरा काम कभी नही हुआ है। इसलिए आपको अपने मनमें पैदा होनेवाले प्रत्येक विचारपर निगरानी रखनी है। कई छात्रोने, लड़के और लड़कियाँ, दोनोंने, मुझसे अकसर पूछा है या मुझे बताया है कि हालाँकि उनकी बुद्धि मेरी इन बातोंको, जो मैंने अभी आपके सामने कही है, समझती है, लेकिन वे व्यवहारमे अपने विचारोंपर नियन्त्रण रखना या उन्हें दिमागसे निकाल फेंकना असम्भव पाते है। इस प्रकार वे संघर्ष बन्द कर देते है और निराशाके शिकार हो जाते है। पूर्ण व्यक्तियोंको छोड़कर कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसके मनमें कभी-न-कभी बुरे विचार न आते हों। इसलिए ईश्वरसे अनवरत यह प्रार्थना करनेकी जरूरत है कि वह हमें पापसे बचाये। यह एक प्रक्रिया है, जिससे किसीको कोई नुकसान नही पहुँचता। दूसरी प्रक्रिया बुरे विचार आनेपर उनका वास्तवमें स्वागत करनेकी है। यह सबसे ज्यादा खतरनाक और नुकसानदेह प्रक्रिया है, और यही वह प्रक्रिया है, जिसके विरुद्ध अपनी पूरी ताकतसे लड़नेके लिए मै आपको निमन्त्रित करता हूँ, और अगर आप सोचें कि मैं क्या कह रहा हूँ तो आप फौरन देखेंगे कि यह चीज करना सबसे ज्यादा आसान है। हम अपने मनमें किस प्रकारके मेहमानोंको आने दें या न आने दें, इसका चुनाव हममें से प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। शत्रुके आक्रमणको हम रोक भले न सकें, लेकिन इस आक्रमणका प्रतिरोध करनेकी कोशिशमें मर जाना अच्छा है। मै आपसे यह विचार अपने साथ ले जानेको कहता हूँ। फिर आप देखिए कि आप इस संघर्षमें दिनोंदिन सफल होते हैं या नही। और इसी सिलसिलेमें मैं एक और बात भी आपसे कहना चाहता हूँ, जो यह है।

यदि हम अपने बारेमें न सोचकर उन लोगोंके बारेमें सोचेंगे जो हमारी तुलनामें कम भाग्यशाली है तो हम देखेंगे कि हमारे पास बुरे विचारोंको रखनेकी फुर्सत ही नही

होगी। इसीलिए मैंने हर लडके और हर लडकीसे कहा है कि वह करोड़ों गरीब लोगोंके बारेमें सोचनेके लिए कमसे-कम आधे घंटेका समय अलग निकाल कर रख ले। मैंने आपसे कहा है कि आप अपने-आपको इन करोड़ो लोगोका न्यासी समझें। मैंने आपसे कहा है कि आप एक जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करे जो आपको इन लोगोके साथ बांध दे, और यदि आप ऐसा करेंगे तो आप देखेंगे कि आप हमेशा कार्यमें व्यस्त होंगे और बुरे विचारो-रूपी मेहमानोका स्वागत करनेके लिए आप कभी उपलब्ध ही नही होंगे। मैं आपको अपने अनुभवसे और अपने साथियोके अनुभवसे बताता हूँ कि भारतके करोडो गरीब लोगोके लिए अनवरत काम करनेका विचार-मात्र मुझे और उन्हे सभी प्रकारके नुकसानसे बचाता है। चरखेका यही आध्यात्मिक रहस्य है, लेकिन यदि चरखा आपके मनको नही जमता तो मुझे उसकी परवाह नही है। मैं तो आपसे इतना ही कहता हूँ कि आप अपने तथा इन दरिद्र लोगोंके बीच एक जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करे और आप फौरन देखेंगे कि आपने अपने चरित्रके निर्माणके लिए एक सुदृढ़ बुनियाद डाल दी है। मैंने आपसे जो कुछ कहा है, ईश्वर आपको उसे समझनेमें मदद करे और उसके अनुरूप कार्य करनेकी शक्ति दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-१०-१९२७

९१. बातचीत : दलितवर्गोंके शिष्टमण्डलोंके साथ

१५ अक्टूबर, १९२७

महात्माजीने दोनों शिष्टमण्डलोंसे[1] एक साथ ही भेंट करनेपर जोर दिया ताकि चेरूमा और एजवाहा लोगोंको एक ही हॉलमें इकट्ठे बिठाया जाये।

श्री पी० सी० गोपालनने, एजवाहोंको अग्रहारम्की गलियोंमें से गुजरनेकी इजाजत न होनेके कारण जो तकलीफें होती है, उनका वर्णन किया।

महात्माजीने पूछा कि यह रोक क्या केवल धार्मिक उत्सवोंके दिनोंमें ही रहती है या सालके सभी दिन। श्री गोपालनने उत्तर दिया कि अग्रहारम्की सड़कोंपर यह रोक सारे साल लागू रहती है।

महात्माजीके पूछनेपर श्री सी० शेषय्याने उन्हें बताया कि सामान्य स्कूलोंमें दलितवर्गोंके प्रवेशकी बात आशा-मात्र है, जिसका अस्तित्व केवल कागजपर ही अंकित है।

श्री राघव मेननने महात्माजीको सूचित किया कि बहुत-सी सामाजिक कुरीतियोंके कारण, जिनको ऊँची जातिके लोगोंने एजवाहोपर थोप रखा है, कुछेक एजवाहोंने

१. सी० शेषय्याके नेतृत्वमें दलितवर्गोंका शिष्टमण्डल तथा टी० एम० चमियप्पन, सुकुमारन और पी० सी० गोपालनके नेतृत्वमें एजवाहा लोगोंका शिष्टमण्डल।

ईसाई और इस्लाम-धर्म स्वीकार कर लिया है। लेकिन हिन्दू-धर्मसे इस प्रकारके धर्म-परिवर्तनपर आर्य-समाजके प्रयत्नोंसे एक रोक लग गई है। आर्य-समाजने मद्रास उच्च न्यायालयसे यह आदेश प्राप्त कर लिया है कि म्युनिसिपैलिटीके अधिकारक्षेत्रमें आनेवाली सार्वजनिक सड़कोंपर जनताके हर व्यक्तिका समान अधिकार है और एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदायको सार्वजनिक सड़कोंका वैध उपयोग करनेसे रोक नहीं सकता।

महात्माजीने कहा कि यह समस्या केरलमें सब जगह मौजूद है और इसके लिए जन-जागृति जरूरी है।

श्री सी० पी० गोपालनने महात्माजीसे यह जाननेकी इच्छा व्यक्त की कि जब सभी धर्म एक समान हैं तो क्या एजवाहा लोग अपने प्रति होनेवाले अन्यायोंका निराकरण करनेके लिए दूसरे धर्मोको अंगीकार कर सकते हैं।

महात्माजीने कहा कि उन्हें हिन्दू-धर्म नहीं छोड़ना चाहिए बल्कि समुचित शक्तिके साथ अपने उद्देश्यके लिए लड़ना चाहिए। यदि वे केवल हिन्दू-धर्मकी उपयोगिताको समझ लें तो उसके मुकाबले तथाकथित ऊँची जाति द्वारा किये जानेवाले अत्याचार कुछ भी नहीं ठहरते।

श्री चमियप्पनने महात्माजीको बताया कि कुछेकको छोड़कर अधिकांश एजवाहा दूसरे धर्मोंको स्वीकार नहीं करना चाहते। लेकिन उनकी जमीनोंपर ऊँची जातिके लोगोंका स्वामित्व है, इसी वजहसे वे उनके साथ लड़नेसे डरते हैं।

महात्माजीने कहा कि यदि वे सब एक हो जायें तथा अनुशासन और साहस रखें तो वे सामाजिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं।

श्री चमियप्पनने महात्माजीको इस बातका ध्यान दिलाया कि इस लड़ाईमें स्वयं कांग्रेसी लोग ही उनका साथ नहीं दे रहे हैं, आम जनताकी तो बात ही क्या है. . .।

महात्माजीने कहा कि इस सम्बन्धमें मैं कांग्रेसियोंसे जरूर बात करूँगा, लेकिन वे मेरी सलाह मानेंगे या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता। उन्होंने यह भी कहा कि कुछ लोग तो नाम-मात्रके कांग्रेसी हैं।

श्री शेषय्याने बताया कि. . .चेरूमाओंका ध्येय मन्दिर-प्रवेश नहीं है बल्कि सार्वजनिक सड़कोंका उपयोग करना-भर है।

महात्माजी: मन्दिर-प्रवेश भी क्यों न हो? सारे मलाबार-भरमें यह एक पेचीदा समस्या है।

श्री पी० सी० गोपालनने पूछा कि क्या एजवाहा लोग हिंसाका प्रयोग करके — जिसके अर्थ हैं मारपीटके बदले मारपीट — जबरदस्त लड़ाई लड़ सकते हैं।

महात्माजीने हिंसाका विरोध किया। उन्होंने कहा, जहाँतक मेरा सवाल है, मैं न्यायालयमें शिकायत भी दायर नहीं करूँगा, लेकिन यदि एजवाहा चाहें तो वे

कर सकते हैं। हिन्दू-महासभा भी है जिससे वे इसकी अपील कर सकते हैं। हिंसासे उनका मामला बिगड़ जायेगा। सत्याग्रह हिंसाका सही स्थान ले सकता है।

श्री गोपालनने गांधीजीको बताया कि मेरे समुदायकी मुक्ति या तो दूसरे धर्मोंको अंगीकार करनेमें है या फिर स्वराज्यकी लड़ाईका त्याग करनेमें है। श्री गोपालनने यह जानना चाहा कि क्या विशुद्ध हिन्दू-धर्म स्थापित होनेकी कोई आशा है।

महात्माजी : हाँ, है। यदि ऐसा न हो तो मैं हिन्दू नहीं रहूँ और न मैं जीवित ही रह सकूँ।

एक दूसरे प्रश्नके उत्तरमें, कि क्या एजवाहा आर्य-समाज या ब्रह्मसमाजमें प्रवेश कर सकते हैं, महात्माजीने कहा कि यदि वे चाहें तो ऐसा कर सकते हैं।

इसके बाद महात्माजीने पूछा कि यहाँ उपस्थित ज्यादातर लोग खादी क्यों नहीं पहने हैं? श्री चमियप्पनने बताया कि इस सामाजिक लड़ाईमें इस समय सरकार ही हमारा एकमात्र सहारा है तथा उन्होंने खादी कोषमें चन्दा देनेके विरुद्ध हालके सरकारी आदेशकी भी याद दिलाई और कहा कि हम इस एकमात्र सहयोग और सहानुभूतिसे वंचित नहीं होना चाहते। उन्होंने महात्माजीसे इस लड़ाईमें एजवाहोंकी मदद करनेकी अपील की।

महात्माजीने अपनी ओरसे भरसक मदद करनेका वादा किया। उन्होंने अपने श्रोताओंसे कहा कि मैं जल्दी ही खादी-कार्यको छोड़कर अस्पृश्यताके प्रश्नको हाथमें लेनेवाला हूँ। गांधीजीने उन्हें शिष्टमण्डलोंके रूपमें आकर मिलनेके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा कि अब मैं शबरी आश्रम जा रहा हूँ, जहाँ कि अस्पृश्यता-निवारणका कार्य चल रहा है; और इसके बाद मैं कुम्भकोणम मठके परमपावन श्री शंकराचार्यसे भेंट करनेके लिए जाऊँगा, जिससे कि मैं, अगर हो सका तो, अस्पृश्यता-निवारणके मामलेमें स्वामीजीको अपने मतसे सहमत कर सकूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-१०-१९२७

१. हिन्दूकी रिपोर्टमें आगे यह था - "महात्माजी और उनका दल मोटरमें नेल्लीचरी गाँव गया। वहाँ उनकी भेंट कुम्भकोणम मठमें कामकोटि पीठके श्री शंकराचार्यसे हुई। इन दो महानुभावोंके बीच मुक्त रूपसे बातचीत हुई। भेंट कोई ३० मिनटतक चली और नितान्त गोपनीय रही।" भेंटकी रिपोर्टके लिए देखिए परिशिष्ट ४।

९२. भाषण : पालघाटकी सार्वजनिक सभामें

१५ अक्टूबर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको आपके अभिनन्दनपत्रों तथा अनेक थैलियोंके लिए धन्यवाद देता हूँ। जैसा कि आप जानते है, पालघाटकी यह मेरी पहली यात्रा नही है। पिछली बार मेरे यहाँ आनेपर जो स्नेह आपने दिखाया था, वह मुझे अच्छी तरह याद है। मुझे खुशी है कि तालुका बोर्ड अपना कुछ ध्यान चरखेकी तरफ लगा रहा है। मुझे उम्मीद है कि आप अपने सभी स्कूलोंमें वैज्ञानिक रीतिसे कताई-कार्यका सगठन करेंगे। मुझे कल त्रिचूरमें करीब चार या पाँच सौ लड़के-लड़कियोंको कताई करते देखनेका मौका मिला था। वे दो हाई स्कूलोंके विद्यार्थी है। मैं यह तो नही कह सकता कि उनकी कताई बहुत उच्च कोटिकी थी, लेकिन फिर भी उन्हें कताई करते देखकर भला लगता था। लेकिन वह खुशी यह असंगत चीज देखकर नष्ट हो गई कि कताई करते हुए बालक-बालिकाएँ खद्दर नही, विदेशी कपड़े पहने हुए थे। मै आशा करता हूँ कि यह असगति आपके स्कूलोंमें मौजूद नही है। चरखेके फलितार्थको समझना आवश्यक है। हमारे लड़के-लड़कियाँ, या कि हमारे वे करोड़ो ग्रामीण भाई-बहन ही, जो लगभग भुख-मरीकी अवस्थामें जीते है, कितनी ही कताई करे, लेकिन आप आसानीसे समझ सकते है कि जबतक हम इस प्रकार काते गये सूतकी खादीका उपयोग नही करते, वह सब व्यर्थ होगा। इसलिए यदि आप सब चरखेके सन्देशका वास्तवमें समर्थन करते है — और लगता तो यही है कि आप करते है — तो मैं आपसे आदरपूर्वक अनुरोध करूँगा कि आप सब उसके प्रति सच्चे रहें और स्वयं खादीको अपनायें। इस दौरेमें मैं जहाँ-कही भी गया हूँ, मैंने इस सन्देशका हार्दिक समर्थन पाया है। लेकिन केवल मौखिक घोषणा, भले ही उसके साथ ठोस थैलियाँ भी हो, हमारे ७,००,००० गाँवोंके भूखसे पीड़ित करोड़ों लोगोंकी तकलीफ तबतक दूर नही कर सकती जबतक कि हम खद्दर पहननेको तैयार न हो।

यहाँ आपके बीच 'शबरी आश्रम'के नामसे एक आश्रम है। इसी शबरी आश्रमसे मुझे खादीका यह सुन्दर टुकड़ा प्राप्त हुआ है। मैंने देखा कि इस आश्रममें नन्हे-नन्हे बच्चे सूत कातते है, उनके नन्हे-नन्हे हाथ ही इसे बुनते भी है। मैं इसे सुन्दर इसलिए नही कह रहा हूँ कि यह उतना ही बारीक या मुलायम है, जितना कि आपने जो मिलका कपड़ा पहन रखा है, वह है। इसके पीछे जो एक इतिहास है, एक भावना है, उसके कारण मैं इसे सुन्दर कहता हूँ। यह खादीका टुकड़ा आपको तुरन्त उन बच्चों और करोड़ो गाँववासियोंके सम्पर्कमें रख देता है। इसका जो महत्त्व है, उसके कारण भी यह सुन्दर है। यदि कोई महान चित्रकार एक लाशको रंग कर उसे हमें एक सुन्दर कलाकृतिके नमूनेके तौरपर भेंट कर

दे तो हम उसे छुयेंगे भी नहीं, बल्कि घृणा और भयसे पीछे हट जायेंगे। हमारी माँ सुन्दर मानी जाये या न मानी जाये, हम उसके पैरोंपर गिरते हैं। मैं समझता हूँ कि हममें से प्रत्येकके लिए उसकी माँसे सुन्दर कोई स्त्री नहीं होगी। सौन्दर्य तो उस वस्तुके साथ जुड़ी भावना और स्मृतियोंका होता है। सभाके अन्तमें मैं इस कपड़ेको आपके सामने बिक्रीके लिए रखकर आपके सौन्दर्य-बोधकी परीक्षा लूँगा। आपमें से कुछ लोगोंने अखबारोंमें देखा होगा कि चेट्टिनाडमें मुझे खादीके एक छोटे-से टुकड़ेके लिए, जो वास्तवमें इस मोटी खादीसे बहुत अधिक बारीक था, १००० रुपये मिले थे, क्योंकि वह खादी वहींके एक आत्म-त्यागी कलाकारने तैयार की थी और उसे बुना भी गया था वहीं देवकोट्टामें।

पालघाटमें चलाये जा रहे विश्वभारती वाचनालयसे मुझे एक थैली मिली है और मुझसे प्रस्ताव किया गया है कि मैं एक खद्दर भंडारका भी औपचारिक रूपसे उद्घाटन करूँ, जिसे वाचनालयसे सम्बन्धित लोग मुझसे खुलवाना चाहते हैं। मैं इसका उद्घाटन सहर्ष करता हूँ और आशा करता हूँ कि इसे आपसे हर तरहका योग्य प्रोत्साहन प्राप्त होगा। मुझे इस खादी भंडारसे भी कुछ खादी प्राप्त हुई है, यदि आप सभाके अन्तमें भी इसी प्रकार शान्ति बनाये रखेंगे, तो आप उसे खरीद सकेंगे। खादीके बारेमें कुछ भी कहना मुझे प्रिय लगता है, लेकिन मुझे अब उस विषयपर आना चाहिए, जो केरलके दौरेमें मेरे दिमागमें बराबर रहा है।

मेरा अभिप्राय अस्पृश्यतासे है जो यहाँ अपने उग्रतम रूपमें प्रचलित है। यहाँ कुछ लोगोंको पासतक नहीं फकटने दिया जाता, कुछकी छाया लगनेमें भी छूत मानी जाती है। जब भी मैं केरल आया हूँ, मेरे लिए सदैव यह दुखकी बात रही है कि एक इतने सुन्दर प्रदेशमें, जो सौन्दर्यकी दृष्टिसे भारतमें लगभग बेजोड़ है, यह अस्पृश्यता अपने जघन्यतम रूपमें मौजूद है। एजवाहा और चेरूमा जातियोंके मित्रोंके शिष्ट-मंडलोंके साथ मेरी एक लम्बी और गम्भीर बातचीत हुई थी। इन जटिल जाति-भेदोंके बारेमें न जाननेका मुझे कोई दु:ख नहीं है। मेरे लिए इतना ही जानना काफी है कि यह हजार सिरवाला दैत्य है। यहाँ अस्पृश्यतामें जो अनेक वर्ग-भेद प्रचलित हैं, उनके बारेमें समझना मुझे तनिक भी सुखकर नहीं लगता, इसका मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ। जब मैं विभिन्न प्रकारकी अस्पृश्यताके बारेमें सुनता हूँ तो मैं अत्यन्त अपमानित और लज्जित हो जाता हूँ। और मेरे इस दुखको बढ़ानेवाली एक ऐसी चीज आज मैंने अपनी आँखों देखी है, जिसे मैं आसानीसे नहीं भूल सकूँगा।

जैसे ही मैं पालघाट पहुँचा, मुझे उस मकानके पड़ोसमें एक चीखकी आवाज सुनाई पड़ी, जहाँ मुझे ठहराया गया है। अपने अज्ञानमें मैंने सोचा कि चूँकि यह एक उद्योग-व्यवसायका केन्द्र है, इसलिए ये किसी कारखानेके मजदूर होंगे, जो भारी बोझ-को ढोते समय जोर लगानेके लिए चिल्ला रहे हैं। अहमदाबाद और बम्बईमें मुझे बराबर ऐसा देखनेको मिलता है। मेरे पालघाट पहुँचनेके एक घंटेके अन्दर ही श्री च० राजगोपालाचारी मेरे पास आये और पूछा कि क्या मैं कुछ अजीब तरहकी आवाजें सुन रहा हूँ। मैंने कहा कि हाँ सुन रहा हूँ। और उन्होंने सीधे पूछा कि

क्या मैं जानता हूँ कि वे आवाजें कैसी है? उन्होंने मुझे बताया कि वह एक नायडीकी आवाज है, और इसके साथ ही उन्होने बताया कि यह इस बातका सूचक है कि एक नायडी कुछ दूरीपर भीख माँग रहा है। मैंने पूछा कि वह कितनी दूर होगा। यह सुनकर कि वह कुछ ही दूरीपर है, मैं जल्दीसे यह देखनेके लिए निकला कि यह कौन आदमी है जो ऐसी आवाजें कर रहा है। खैर, आप सभी जानते है कि मैंने उसे कहाँ पाया होगा। वह सड़कपर नहीं चल रहा था, बल्कि सड़कके किनारे लगी बाड़से कुछ दूर हटकर चल रहा था। मैंने उससे निकट आनेको कहा। वह निकट तो आया, किन्तु बाड़के किनारे सडकपर नही आया। उसने मुझसे कहा कि वह सड़कके किनारे आनेकी हिम्मत नही कर सकता। उसने यह भी कहा कि वह पाल-घाटकी सड़कोंपरसे कभी नहीं चलता। इस दुखद मामलेकी बाकी कहानी मुझे आपको सुनानेकी जरूरत नही है।

वह आदमी निश्चय ही क्षुधाग्रस्त नहीं लगता था। लेकिन मेरे लिए हिन्दुओंको बधाई देनेका यह कोई कारण नहीं था। मेरे लिए तो उस आदमीके सामने — उस व्यक्तिके सामने जिसे हम मानव या अपना भाई माननेसे इनकार करते है — मुट्ठी-भर चावल फेंक देना तिरस्कार और पतित अन्तःकरणका सूचक था। प्रति सप्ताह शनिवार और बुधवारको इन व्यक्तियोंके सामने जिस प्रकार हम चावल फेंकते हैं, उस तरह चावल फेंककर, मेरी नम्र रायमें, हम न केवल मानवको पतित बनाते है, बल्कि भीख माँगनेको बढ़ावा देते है। मैं नहीं समझता कि इस व्यक्तिकी तरह दो सशक्त भुजाओं और पैरोंवाले लोगोंको भोजन या पैसा देनेमें कोई दानशीलता है। जब मैंने इस आदमीसे पूछा कि क्या वह भीख माँगनेका पेशा छोड़कर नियमित मजदूरीका कोई काम करेगा तो उसने मुझसे कहा कि अपने भाई-बन्धुओंसे पूछे बिना वह वैसा नहीं कर सकता। अब यह बात मै आपपर, आपमें जो बुद्धिमान हैं, उन्हींपर छोड़ता हूँ कि आप देखें कि इस अन्यायके क्या भयंकर परिणाम है। अपने इस गरीब देशमें इस प्रकारकी दानशीलताके कुछ परिणाम हम अभी भी भोग रहे हैं। इस लज्जाजनक दृश्यको देखनेके दो घंटे बाद मुझे उन मित्रोंका स्वागत करनेका सुख प्राप्त हुआ, जिनकी चर्चा मै पहले कर चुका हूँ।

उनमें से कुछ लोगोंकी विद्वत्ता, आपमें से जो सबसे ज्यादा विद्वान होंगे, उन्हींकी-विद्वत्ताकी कोटिकी थी। इस सभामें उपस्थित श्रेष्ठतम व्यक्तियोंमें और उन लोगोंमें मुझे कोई अन्तर नहीं दिखाई पड़ा, और फिर भी उनके अभिनन्दनपत्रोंसे अन्यायोंका ऐसा ब्यौरा मेरे सामने प्रकट हुआ जो हममें से प्रत्येकको लज्जित कर देनेके लिए काफी है। सिर्फ इस कारणसे कि उन्हें अस्पृश्य माना जाता है, वे कुछ सड़कोंपर — सार्व-जनिक सड़कोंपर — नहीं चल सकते, यद्यपि वे भी उसी तरह कर देते है जिस तरह आपमें से कोई भी देता है। मन्दिर-प्रवेशकी बात तो सोची ही नहीं जा सकती। उनमें से कुछ लोग तो किसी भी सड़कपर नही चल सकते, और जो सवर्ण हिन्दुओंने किया है, उसीका अनुकरण करके खुद उनके बीच भी कई वर्ग बन गये है, अस्पृश्योंकी भी कई श्रेणियाँ बन गई है। उन्होंने मुझसे सहायताकी अपील की। काश कि मैं

सहायता देना चाहूँगा, वह देनेकी शक्ति मुझमें होती। एक हिन्दूके नाते मुझे लगता है कि हमने उनके विरुद्ध जो अपराध किया है, उसमें मैं भागीदार हूँ। मैं चाहता हूँ कि यहाँ उपस्थित प्रत्येक स्त्री और पुरुषको मैं कायल कर सकूँ कि हम उनके विरुद्ध स्वयं अपने विरुद्ध और अपने धर्मके विरुद्ध यह एक बहुत बड़ा अन्याय कर रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि मुझमें आपको — यहाँ उपस्थित सभी नर-नारियोंको — यह समझा सकनेकी शक्ति होती कि इस प्रकार हम उनके प्रति, स्वयं अपने प्रति और अपने धर्मके प्रति घोर अन्याय कर रहे हैं। मेरा मन इस बातके लिए आकुल है कि मैं आपको समझा सकूँ कि आज हम हिन्दू-धर्ममें जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं, उसका कहीं कोई आधार-औचित्य नहीं है। इस भयकर अन्यायके विरुद्ध मेरा सारा हिन्दुत्व विद्रोह कर उठता है। मैंने हमारे धर्म-ग्रन्थोंमें एजवाहा, पुलाया, नायडी आदिका उल्लेख पानेके लिए उन्हें छान डाला, लेकिन व्यर्थ। मैंने यहाँ, त्रावणकोरमें और अन्य स्थानोंपर विद्वान लोगोंसे पूरी विनम्रताके साथ मुझे यह बतानेको कहा है कि इन लोगोको किस प्रकार अस्पृश्योंकी श्रेणीमें रखा जा सकता है और किस प्रमाण पर। मैं आपसे कहता हूँ कि केवल प्रथाको छोड़कर इन भयंकर कृत्योंके लिए किसी प्रकारका कोई औचित्य या प्रमाण नहीं है। लेकिन अभीतक किसी व्यक्तिने मुझे यह बतानेका साहस नहीं किया है कि इस अनैतिक प्रथाके पीछे कोई धार्मिक प्रमाण या कारण है। अगर हम इतने आलसी न होते कि इन समस्याओंको खुद विचार करके सुलझा लें, यदि हमने अंधविश्वासके आगे अपने विवेकको गिरवी न रख दिया होता, तो हम पलक झपकते इस बुराईको दूर कर सकते थे। मैंने मनुष्योंके एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्गके मनुष्योंपर श्रेष्ठताका दावा जमानेका कोई औचित्य हिन्दू-धर्म या किसी भी धर्म अथवा किसी भी दार्शनिक विचारधारामें नहीं पाया है। यदि हम अपने अन्दर असमानताका यह सिद्धान्त पोसते हैं, तो हमें स्वराज्यकी बात सोचना शोभा नहीं देता। हम अपने मुँहसे बड़े विद्वत्तापूर्ण ढंगसे प्रजातान्त्रिक संस्थाओं-की बात करते हैं, किन्तु अपने हृदयमें अन्य लोगोंको उन्हीं बुनियादी अधिकारोंसे वंचित करनेकी इच्छा पालते हैं जिन अधिकारोंकी बात हम मुँहसे करते हैं। मैं सभी विद्वान लोगोंसे, उन सभी लोगोंसे, जिन्हें हिन्दुओं और हिन्दू-धर्मका कल्याण प्रिय है, अनुरोध करता हूँ कि वे समय रहते चेतें और [अस्पृश्यताके] इस राक्षसपर घातक प्रहार करें। यदि आप राष्ट्रवादी हैं और देशके लिए आपके हृदयमें दर्द और इसी कारण अपने देशके सबसे तुच्छ व्यक्तिके लिए भी आप सहानुभूति महसूस करते हैं तो आप उन स्थानोंमें जाइए जहाँ नायडी और पुलाया तथा भ्रमवश अस्पृश्य कहलाने-वाले अन्य लोग रहते हैं, और उनकी स्थितिको सुधारनेके काममें अपना जीवन लगा दीजिए।

जब मुझे इन दो शिष्टमण्डलोंके मित्रोंने बताया कि कुछ कांग्रेसी लोग भी ऐसे हैं जो अस्पृश्यतामें विश्वास करते हैं और उन लोगोंको अपनेसे दूर रखते हैं, तो मुझे बड़ी पीड़ा हुई। मुझे यह जानकर खुशी होगी कि इन मित्रोंको गलत सूचना मिली है और ये आरोप सही नहीं हैं। किन्तु यदि ऐसे कांग्रेसी हों जो अस्पृश्यतामें

विश्वास करते हों तो एक कांग्रेसीके नाते, जिससे कांग्रेसके सिद्धान्तों और कांग्रेसके संकल्पोंका थोड़ा-बहुत ज्ञान रखनेकी अपेक्षा की जाती है, मैं आपको सूचित करना हूँ कि इन कांग्रेसियोंको अपनी सदस्यतासे इस्तीफा दे देना चाहिए। उन्हें मालूम होना चाहिए कि नये संविधानके अन्तर्गत गठित पहली कांग्रेसने जो स्वराज्य प्रस्ताव स्वीकार किया है, अस्पृश्यता-निवारण उसका अभिन्न अंग है। मेरी रायमें वह प्रस्ताव उतना ही पवित्र है, जितने कि कांग्रेसके सिद्धान्त। यदि हम राष्ट्रके प्रति सच्चे हैं, कांग्रेसके प्रति सच्चे हैं और अपने प्रति सच्चे हैं तो वैसी दशामें यदि हम अस्पृश्यता-निवारणमें विश्वास नहीं करते तो हमारे लिए यह रास्ता खुला हुआ है कि हम कांग्रेसके सिद्धान्तोंको, उसके उस प्रस्तावको चुनौती दें या उस प्रस्तावको हटानेकी माँग करें। आप अस्पृश्यता-सम्बन्धी उस प्रस्तावकी स्वीकृतिमें सहभागी रहते हुए भी यदि अस्पृश्यतामें विश्वास करते हैं तो आप सच्चे नहीं हैं। लेकिन मैंने तो आपके सामने एक चीजका कष्टदायक और दुनियवी पहलू ही रखा है, जिसके साथ खिलवाड़ नहीं किया जा सकता। आप कांग्रेसी हैं या गैर-कांग्रेसी, उससे क्या फर्क पड़ता है? क्या यह आपका — आप हिन्दुओंका यह कर्तव्य नहीं है कि इस बड़े सवालपर उचित विचार करें और धार्मिक महत्त्वकी दृष्टिसे उसकी जाँच करें? मैं तो इस बुराईको दूर करनेको हिन्दू-धर्मकी अग्निपरीक्षा मानता हूँ। मेरी नम्र रायमें ब्राह्मण-अब्राह्मण प्रश्न, हिन्दू-मुसलमानका सवाल और हमारे सामने जो अन्य कई प्रश्न मौजूद हैं, और जिनसे हम आज ग्रस्त हैं, सब इसी अस्पृश्यताके सवालके विभिन्न पहलू हैं।

यदि हम लोग, जिन्हें ईश्वरने बुद्धि दी है और ऐसी सौभाग्यशाली स्थितिमें रखा है, केवल इतना समझ ले कि हम हीनसे-हीन और गरीबसे-गरीब देशवासीके सेवक-मात्र हैं तो ये जो प्रश्न उठ खड़े हुए हैं, सब एक क्षणमें समाप्त हो जायेंगे। इस देशमें और सारे संसारमें जन साधारणके बीच जो जागृति आ गई है उसके सामने अहंकार, दर्प और श्रेष्ठताके दावे एक क्षण भी नहीं ठहर सकते।

मैंने अपने अन्दर इस प्रश्नपर न जाने कितना तर्क-वितर्क किया है कि जिन अन्यायोंसे हमारे ये भाई पीड़ित हैं, क्या उनका कोई औचित्य है। और मैं आपसे सच कहता हूँ कि मुझे एक भी औचित्य ढूंढे नहीं मिला है। लेकिन अब मैं आपका और अधिक समय नहीं लूँगा। मैं ईश्वरसे यही प्रार्थना करूँगा कि वह आपकी समझकी आँखें खोले, आपके अन्तःकरणको जागृत करे और आपको शक्ति दे कि आप इन लोगोंके बीच जायें और समस्याके जिस समाधान और राहतके वे अधिकारी हैं वह उन्हें दे।

आपने जिस धीरजके साथ मेरी बातें सुनी हैं, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-१०-१९२७

९३. भाषण : स्त्रियोंकी सभा, कोयम्बटूरमें

१६ अक्टूबर, १९२७

बहनो,

अगर आपने यह शोर बन्द नही किया तो मै आपसे बातचीत नही कर सकता। आपने जो थैली मुझे दी उसके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। सिर्फ एक या दो बातें ही है, जिन्हे मै आपको बताना चाहता हूँ। हम सब भारतमें रामराज्य चाहते है। यदि आप सीताके समान जीवन व्यतीत नही कर सकती तो भारतमें रामराज्य स्थापित नही हो सकता। सीता शरीर और मनसे पवित्र थी। मै समझता हूँ और मेरी यह राय है कि आपमें से बहुत-सी बल्कि ज्यादातर स्त्रियाँ विदेशी वस्त्र पहनकर अपने शरीरको मलिन करती है। सीतादेवी ऐसा नही करती थी। एक क्षणके लिए भी ऐसा मत सोचिए कि सीतादेवीको नफीस विदेशी कपडोंकी कोई रुचि थी या वे अपने शरीरकी सजावटके लिए उन्हें विदेशसे मँगाती थी। इसके विपरीत हम जानते हैं कि सीतादेवीके समयमें स्वय वे और समस्त भारतीय स्त्रियाँ कताई किया करती थी और भारतीय पुरुषों द्वारा बुने हुए वस्त्र पहनती थी। और यह बहुत अच्छी बात थी। हमारी प्राचीन पुस्तकोमें इस बातके काफी प्रमाण हैं कि उस कालमें निरपवाद रूपसे सभी स्त्रियाँ अपने हाथसे सूत काता करती थी तथा हम अपनी जरूरतका सारा कपडा स्वय तैयार किया करते थे। ये पुस्तके हमें बताती है कि उन दिनो भारतके गाँवो तथा शहरोंके लाखों लोग अच्छा खाते और अच्छा पहनते थे। लेकिन हमारी लाखो बहनें गाँवोमें जब कि भूखो मर रही है, आप विदेशी साड़ियो-से अपने शरीर सँवारती है। मै मानता हूँ कि इसके लिए पुरुष स्त्रियोसे कुछ कम दोषी नही है। मुझे मालूम है कि विदेशी वस्त्र पहननेकी आदतकी शुरुआत भारतीय पुरुषोंने की। इसका फल यह हुआ है कि गाँवोमें रहनेवाले पुरुष और स्त्री दिन-ब-दिन गरीब होते जा रहे है तथा गहन दुखमें डूबते जा रहे है। सीतादेवीकी तरह आप भी रोज-ब-रोज भारतके गरीब भाई-बहनोके बारेमें सोचिए। जब आप उनके बारेमें सोचेगी तो मुझे यकीन है आपको यह लगेगा कि उनके पवित्र हाथोसे तैयार की हुई खादी पहनना आपका कर्त्तव्य है। मै आपको एक चीज और बताऊँगा जो सीतादेवी किया करती थी। उन्होने किसी भी मनुष्यको अस्पृश्य नही माना। उन्होने और महापुरुष रामने इच्छापूर्वक और कृतज्ञभावसे निषादराज, जो कि हमारी आजकी मिथ्या धारणाओके अनुसार अस्पृश्य समझा जायेगा, की सेवा स्वीकार की थी। भगवान रामके महान भाई भरतको जब यह ज्ञात हुआ कि निषादराजने श्रद्धाके साथ रामकी सेवा की थी तो उन्होने स्नेहपूर्वक उसका आलिंगन किया। ऋषियो और सन्यासियोंके राजा भरतको तो आप जानती ही है। लेकिन आज हम उन लोगोको, जो हमारी सेवा करते हैं, हमारे खेत जोतते है और हमारे शौचालय साफ

करते है, अपने हाथसे छूनेके भी काबिल नही मानते। मैं आपको बता दूं कि यह धर्म नही, बल्कि अधर्म है। मैं चाहता हूँ कि आप अस्पृश्यताके इस कलंकसे मुक्त हो जायें।

तीसरी बात जो मैं आपसे कहना चाहता हूँ, वह देवदासियोके बारेमें है। बहनो, मुझे पता है कि उनमें से कुछेक बहने यहाँ भी मौजूद हैं। मैं देवदासियोके पेशेको अनैतिक मानता हूँ। उन्हें ऐसे पेशेमें नही होना चाहिए था। मैं समझता हूँ कि आपके स्त्री-क्लब या स्त्री-संघ बने हुए हैं। इन अभागी बहनोंकी देख-माल करना आपका पहला कर्त्तव्य है। यदि आप एक होकर इस मामलेमें कोई आन्दोलन चलायें तो आप कोयम्बटूरके स्त्री-पुरुषोको इस सम्बन्धमें अपना कर्त्तव्य निबाहनेके लिए बाध्य कर सकती हैं।

इस तरहके सुधारोंको आपको अपने हाथमें ले लेना चाहिए। आपने मद्रासकी डा० मुत्तुलक्ष्मीका नाम तो सुन ही रखा है। वे मद्रास विधान परिषदमें आपकी प्रतिनिधि हैं। वे इसकी उपाध्यक्षा भी हैं। मेरी उनसे लम्बी बातचीत हुई थी। उनका खयाल है, और दूसरे भी यही मानते हैं कि हिन्दू-समाजकी इस खतरनाक बुराईसे जूझनेका यह उपयुक्त समय है। आप भी यहाँ वैसा ही करिए।

एक बुराई और है जिसके बारेमें मैं आपसे कहना चाहता हूँ। आप अपनी लड़कियोंका विवाह ऐसी अवस्थामें कर देती है जबकि उन्हें यह भी पता नही होता कि विवाह क्या चीज होती है। जबतक वे परिपक्व अवस्थाको न पहुँच जायें, जबतक वे कमसे-कम १६ वर्षकी न हो जायें तबतक उनकी शादी नही करिए। मैं आपको बता दूं कि ऐसा करना पाप है।

अहमदाबादमें मेरे साथ १६ वर्षसे अधिक उम्रकी अविवाहित लड़कियाँ रहती हैं। वे उतनी ही मासूम है जितने कि आपके घरके फूल। वे अपना समय समाजके लिए विभिन्न सेवाकार्य करते हुए बिताती हैं। वहाँ उन्हें समुचित शिक्षा प्राप्त होती है। उनकी शादी तबतक नहीं होनेवाली है जबतक वे स्वयं न चाहें। एक क्षणके लिए भी ऐसा मत सोचिए कि यह काम आपका नही, बल्कि मर्दोंका है। यह तो खास तौरपर आपका ही काम है, अतः जागो और लड़कियोंकी खुशीके लिए काम करो। यह पुरुष नही कर सकते और न करेंगे।

जो सत्य मैं आपको बता चुका हूँ, उसे जाननेके लिए आपको कालेजोंमें जानेकी या एक लाइन भी पढ़नेकी जरूरत नही है। आप इन सबको आसानीसे समझ सकती है। यह वह चीज है जिसे मैं मानवीय शिक्षा कहा करता हूँ और जिसे स्त्रियाँ वर्णमालाका एक अक्षरतक जाने बिना प्राप्त कर सकती है।

अब मैं आपको यह बता दूँ कि आपकी थैलीसे मुझे सन्तोष नही हुआ है। आपकी बहनोंने, दूसरे जिलोंकी स्त्रियोंने, इस आन्दोलनके सिलसिलेमे क्या-कुछ किया है, वह मैं आपको बता सकता हूँ। मलाबारकी लड़कियाँ आपकी ही तरह ज्यादा जेवर नही पहनती। जेवरोंका बाहुल्य मैंने तमिलनाडु और आन्ध्र देशमें ही देखा है। मलाबारकी स्त्रियोंने तो जो इक्के-दुक्के कंगन या अँगूठियाँ पहन रखी थी, उन्हे भी खादी आन्दोलनके लिए उतार दिया था। और मेरी उनसे यह प्रार्थना रहेगी कि

वे दानमें दिये गये जेवरोंके बदले नये जेवर प्राप्त करनेके लिए अपने पतियो या अपने माता-पिताओको परेशान न करें। यदि आप अपनी गरीब बहनोका दुख अनुभव करती है या करना चाहती है तो मै चाहूँगा कि आप उनकी भलाईके लिए अपने जेवरोका त्याग कर दें। उपहार स्वेच्छासे और बिना किसी दबावके दिये जाने चाहिए।

याद रखिए, स्त्रीका सौन्दर्य उसके कपडो या जेवरोमें नही बल्कि उसके हृदयकी निर्मलतामें होता है। आप मुझे अपने जेवर देती है या नही, यह तो छोटी बात है। लेकिन मै यह जरूर चाहता हूँ कि आप इन सचाइयोको, जिन्हें मैंने आपको अभी बताया है, अपने दिमागमें जरूर रखें। मैं अपने अनुभवके आधारपर आपसे कहता हूँ कि अधिक जेवर पहननेकी चाह करना कोई अच्छी बात नही है। पति लोग अकसर मुझसे कहा करते हैं कि मै आपको जेवर और नफीस कपड़े सम्बन्धी अपनी धारणाओको बदलनेकी सलाह दूं। मै आपको बता सकता हूँ कि कुछ ऐसे पति है जिन्होने मुझे यह विश्वास दिलाया है कि जो पत्नियाँ मेरे उपदेशसे प्रभावित हुई है, उन्हें स्वयं ऐसे प्रभावसे खुशी हुई है।

ईश्वर आपके द्वारा इस देशका कल्याण करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-१०-१९२७

९४. भाषण: कोयम्बटूरकी सार्वजनिक सभामें

१६ अक्टूबर, १९२७

आपने मुझे जो अभिनन्दनपत्र और उपहार दिये है, उनके लिए मै आप सबको धन्यवाद देता हूँ। मुझे विश्वास है कि आप यह नही चाहते कि जिन संस्थाओने मुझे अभिनन्दनपत्र दिये है उनके या दान देनेवालो और उनके उपहारोके नामोंका मैं जिक्र करूँ। जो चीज दरिद्रनारायणके निमित्त दी जाये, उसका कोई उल्लेख जरूरी नही है। मैं आपको सूचित कर दूं कि मुझे जितने भी अभिनन्दनपत्र दिये गये है उनके उपलब्ध अनुवादो या मूल अभिनन्दनपत्रोको मैंने बड़े ध्यानपूर्वक पढ लिया है।

सबसे पहले मै नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रको लूंगा। नगरपालिकाको मैं धन्यवाद देता हूँ कि उसने अपने विचारोको न केवल स्पष्ट रूपसे अत्यन्त सौजन्यताके साथ और दृढ़ताके साथ प्रकट किया है बल्कि उसने मुझे उस अभिनन्दनपत्रकी भी याद दिलाई है जो कोयम्बटूरकी मेरी पिछली यात्राके अवसरपर मुझे दिया गया था। अपने जीवनभर मुझे अपने प्रशसकोके मुकाबले अपने आलोचकोसे ज्यादा लाभ पहुँचा है, विशेष रूपसे तब, जब मेरी आलोचना सौजन्यतापूर्ण और मैत्रीपूर्ण भाषामें की गई हो, जैसी कि इस अभिनन्दनपत्रमें की गई है। मुझे इस नगरपालिकासे जो पहला अभिनन्दनपत्र प्राप्त करनेका सम्मान मिला था उसमें असहयोगकी उपयोगिता, विशेष रूपसे स्कूलों और सरकारी सेवाओमें असहयोगकी उपयोगितापर शका व्यक्त

की गई थी। असहयोगके जन्मके वादसे कई महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुई है, जिनमे से कुछ वहुत कष्टदायक हैं। १९२१ मे मैंने देशको जो सलाह दी उसके ऊपर मैंने दो वर्षतक प्रार्थनापूर्ण मनसे चिन्तन-मनन किया था। असहयोगके विरुद्ध जो-कुछ भी लिखा गया है, लगभग वह सभी-कुछ मैंने वहुत ध्यानपूर्वक और खुले दिमागसे पढ़ा है। और इस अध्ययनके परिणामस्वरूप मैं आपको आज सूचित करनेकी स्थितिमे हूँ कि १९२१ में मेरे जो विचार थे, और जिन्हें मैंने पिछली वार भेंट होनेपर आपके सामने व्यक्त किया था, न केवल मैंने उन विचारोंको नही वदला है, वल्कि उलटे मेरे वे विचार दृढसे-दृढ़तर हुए हैं। मेरी यह नम्र राय है कि पिछली दो पीढ़ियोंमें भी देशको उतना लाभ नही हुआ है जितना लाभ उसे अहिंसक असहयोगका उद्भव होनेके वादसे हुआ है। अहिंसक असहयोगके विषयमे इतिहास क्या निर्णय देगा, इसके वारेमें मेरे मनमें कोई शंका नही है। मेरा यह भी निश्चित मत है कि उस हर छात्रने, जिसने स्कूल या कालेज छोड़ दिया या उस हर सरकारी नौकरने, जिसने वह नौकरी छोड़ दी जिसे गलतीसे सार्वजनिक सेवा कहते है, इस प्रकारके त्यागसे वहुत लाभ उठाया है और वैसा करके कुछ खोया नही है। और यह वात कि असहयोग आन्दोलनके वावजूद सभी लोगोने सरकारी नौकरियाँ नही छोड़ दी, और हमारे सभी लड़कोंने सरकारी स्कूलोंको त्याग नही दिया, मेरे सिद्धान्तकी विफलताका द्योतक नही है। सभी स्त्री-पुरुष तो सत्यनिष्ठ नही होते; किन्तु क्या इसीसे सत्यकी प्रभावकारिता या अच्छाईपर सन्देह नहीं किया जा सकता? मै एक कदम और आगे वढ़कर आपसे कहता हूँ कि जो भी व्यक्ति वर्तमान घटनाओंका ध्यानपूर्वक और निष्पक्षभावसे अध्ययन करेगा उसे इस वातके पर्याप्त प्रमाण मिलेगे कि वहुत-से सरकारी नौकर, जिन्होंने अपनी नौकरियाँ छोड़ दी और वहुत-से छात्र जिन्होने स्कूल छोड़ दिया था, आज अपनी योग्यताका वहुत अच्छा परिचय दे रहे है।

यह क्या छोटी वात है कि असहयोगके प्रभावमें आकर एक दिन सहसा करोड़ो लोग मिलकर एक आदमीकी तरह उठ खड़े हुए, जैसे कोई जादू हो गया हो? यदि सहयोग कर्त्तव्य है तो मै मानता हूँ कि किन्ही परिस्थितियोमें असहयोग भी उसी प्रकार कर्त्तव्य है। मै और आगे जाकर कहता हूँ कि यदि हमारे इस देशको अहिंसात्मक साधनोंसे स्वराज्य प्राप्त करना है तो एक-न-एक दिन असहयोग करनेके सिवा दूसरा कोई रास्ता नही है। आप विश्वास करें कि यदि मैं आज अहिंसक असहयोगकी वात नहीं करता तो इसका कारण यह नही है कि उसमें मेरा विश्वास उतना ही प्रखर नहीं है जितना पहले था, वल्कि यह है कि एक व्यावहारिक मनुष्यके नाते आज मै उस सिद्धान्तको कार्यरूप देनेके लिए अनुकूल वातावरण नही देखता। मगर मुझे अपने विश्वासके वारेमें दलीलें देकर आपको उवाना नही चाहिए।

नगरपालिकाके मौजूदा अभिनन्दनपत्रमें मेरे वर्णाश्रम-धर्म सम्वन्धी उन विचारोंके विरुद्ध शिष्ट किन्तु दृढ़ शब्दोमें विरोध प्रकट किया गया है, जिन्हें मै इधर व्यक्त करता रहा हूँ। मुझे लगता है कि इस अभिनन्दनपत्रके रचयिताओ या हस्ताक्षरकर्त्ताओं-की दृष्टिमें वर्णाश्रम-धर्म एक भयंकर वुराई है। मै साहसपूर्वक अपना यह विश्वास

पुनः घोषित करता हूँ कि वर्णाश्रम-धर्म न केवल एक भयकर बुराई नही है, बल्कि यह उन आधारशिलाओंमेंसे एक है, जिसपर हिन्दूधर्म खड़ा हुआ है। मेरी नम्र रायमे अभिनन्दनपत्रके रचयिताओंने छायाको ही सत्य मान बैठनेकी गलती की है। यदि उन्होंने, जैसा कि मै नम्रतापूर्वक मानता हूँ, यह गम्भीर गलती करनेके बदले मुझे वर्णाश्रम-धर्मके नामपर चलनेवाली बुराईके विरुद्ध अभियान करनेके लिए अपने साथ निमन्त्रित किया होता तो वे मुझे अपने झडेके नीचे एक स्वयसेवकके रूपमे भर्ती करा पाते। मै वर्णाश्रमको हमारे अस्तित्वका एक नियम मानता हूँ, और हम अपने अस्तित्वके ऐसे नियमोंके बारेमें जानते हो या न जानते हो, हमें उन्हे मानना पडता है, उसी प्रकार जिस प्रकार गुरुत्वाकर्षणके सिद्धान्तका एक महान वैज्ञानिक द्वारा पता चलानेसे पहले भी हमारे पूर्वजोको उस नियमका पालन करना पड़ता था। प्रकृतिके नियम कठोर है। उनका उल्लघन करके हम दण्डसे नही बच सकते। मेरे मनमे यह विश्वास दिनोदिन जमता जा रहा है कि वर्णाश्रम धर्मके नियमके उल्लघनके कारण ही हमारा भारतदेश और शेप ससार दु ख भोग रहा है। यदि आज हिन्दू-धर्म गिरी हुई दशामे दिखाई पडता है तो इसका कारण वर्णाश्रम धर्म नही है, बल्कि उस धर्मका मनमाना उल्लंघन ही है। वर्णाश्रम-धर्म इस धरतीपर मनुष्यका उद्देश्य निर्धारित करता है। धन संग्रह करनेके नये-नये तरीकोको खोजनेके लिए, जीवन-यापनके विभिन्न साधनोकी खोज करनेके लिए मनुष्यका जन्म नही होता; इसके विपरीत मनुष्यका जन्म इसलिए होता है कि वह अपनी शक्तिका प्रत्येक अणु अपने रचयिताको जाननेमें लगा दे। इसलिए यह धर्म जीवन निर्वाहके लिए मनुष्यपर अपने पूर्वजोका धन्धा अपनानेकी बन्दिश लगाता है। यही वर्णाश्रम-धर्म है — इससे न कम, न ज्यादा — और मेरे लिए इस धर्मकी उपेक्षा करना केवल इस कारण ही सम्भव या वांछनीय या आवश्यक नही है कि अधिकाश हिन्दू अपने जीवनमें इस धर्मसे इनकार करते जान पडते है। इस तरह देखें तो वर्णाश्रम-धर्म और उस जाति-प्रथामें कोई समानता नही है जो आज प्रचलित है। इसलिए वर्णाश्रम धर्मका अर्थ अस्पृश्यता कभी नही हो सकता और न उसने अस्पृश्यताको कभी बर्दाश्त किया है। उस धर्ममें श्रेष्ठता या हीनताका कोई विचार नही है। चूँकि बहुत-से लोग — करोड़ों लोग — ईश्वरका नाम झूठ-मूठ ही लेते है और स्वय उसके नामपर उसका और मनुष्यका अपमान करते है, इसीलिए क्या हम अपने ईश्वरको त्याग देंगे और उसके लिए कोई दूसरा नाम रखेंगे? इसलिए मै इस अभिनन्दनपत्रके लेखकों तथा आप सबको आदरपूर्वक जातियोंके जजाल और अस्पृश्यताके अभिशापके विरुद्ध जिहाद करनेके लिए आमन्त्रित करता हूँ और आपसे वादा करता हूँ कि यदि आप मेरे साथ इस जिहादमें शामिल होंगे तो उस लड़ाईके अन्तमें आप पायेंगे कि हिन्दू-धर्ममे कोई ऐसी बुराई नही बची है जिसके विरुद्ध लड़ाई की जाये। मै प्रार्थनापूर्ण मनसे अब्राह्मण-ब्राह्मणके इस बडे सवालका अध्ययन करता रहा हूँ, जो दक्षिणके बहुत सारे सुयोग्य व्यक्तियोंको परेशान करता रहा है, और मै प्रतिदिन इसी निष्कर्षपर पहुँच रहा हूँ कि यह सवाल, जहाँतक यह अब्राह्मणोंका सवाल है, अस्पृश्यताके विरुद्ध लडाईका ही एक पहलू है।

अब मैं आदि-द्रविड़ोके अभिनन्दनपत्रको लेता हूँ। त्रावणकोरमें प्रवेश करनेके बादसे ही यह सवाल किसी-न-किसी रूपमें मेरा ध्यान आकृष्ट करता रहा है। आदि-द्रविड़ मित्रोंको मैं यह आश्वासन देना चाहता हूँ कि मेरा सारा ध्यान इस समस्याको हल करनेमें लगा हुआ है। इधर हालमें मैं अपना परिचय नायडी कहकर देनेमें सुख प्राप्त करता रहा हूँ और मुझे इस बातका खेद है कि मैं श्री षण्मुखम् चेट्टियारके महलनुमा मकानमें उनका आतिथ्य अस्वीकार करके सीधा नायडी लोगोंके पास जाने और उनका आतिथ्य स्वीकार करके उनके बीच रहनेका साहस नही कर सका। लेकिन मैं आदि-द्रविड़ मित्रोंको यह आश्वासन देना चाहता हूँ कि अस्पृश्यताका यह अभिशाप तेजीसे समाप्त हो रहा है। यह सच है कि मन्दिरोंके दरवाजे उनके प्रवेशके लिए अभी खोले नही गये है। यह भी सच है कि अभी भी कुछ मार्गोपर चलनेका उनको निषेध है। यह भी बिलकुल सच है कि अस्पृश्यता और अदर्शनीयता, ये दोनों ही अपने अत्यन्त घृणित रूपमें अभी मौजूद हैं। लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि लोकमत दिनोदिन इस असह्य बुराईके विरुद्ध जोर पकड़ता जा रहा है, और यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि यह बुराई हिन्दू-धर्मसे इतनी जल्दी समाप्त होनेवाली है जिसकी कि हममें से कोई कल्पना नही कर सकता।

तथापि आदि-द्रविड़ोंके इस अभिनन्दनपत्रमें एक मार्मिक अनुच्छेद है, और यह अनुच्छेद इतना महत्त्वपूर्ण है कि मैं उसे आपके सामने पढ़कर सुनाना चाहूँगा।

> सरकार हमारी जातिके निवास-क्षेत्रोंमें या उनके निकट शराबकी दुकानें स्थापित करके हमारे नौजवानोंको शराब पीनेका प्रलोभन देती है। यदि इस प्रकारकी दुकानोंकी जगह औद्योगिक संस्थान खोल दिये जायें और यदि आबकारीके ठेकेदारोंकी जगह सामाजिक कार्यकर्त्ता हमसे मैत्रीका हाथ बढ़ायें तो हमें कोई सन्देह नहीं है कि बहुत थोड़े ही समयमें हम प्रगतिके पथपर बढ़ चलेंगे। इसलिए हम आपसे पूरे दिलसे अपील करते हैं कि हमारी जातिको विनाशसे बचानेके लिए हमारे मुहल्लोंमें या उनके आसपास औद्योगिक स्कूलोंकी स्थापनामें आप हमारी मदद करें।

यह अनुच्छेद हमें सोचनेके लिए बहुत मसाला उपलब्ध कराता है। मैंने आज तीसरे पहर जो कहा उसे दुहराते हुए मैं कहूँगा कि कितने ही सदस्योंकी ठोस कोशिशोंके बावजूद सरकार नगरपालिकाका यह सुझाव अस्वीकार नही कर रही है कि नगरपालिकाकी सीमामें स्थित कुछ शराबकी दुकानोंको बन्द कर दिया जाये। मेरे लिए यह अत्यन्त दुखद बात है कि ऐसे सीधे-सादे प्रस्तावको सरकारने रद कर दिया। मैंने आदि द्रविड़ोंकी ओरसे जो अनुच्छेद अभी आपको पढ़कर सुनाया उसकी भावनाके साथ मैं पूरी तरह सहमत हूँ, और मैं चाहूँगा कि आप लोग, कोयम्बटूरके नागरिकगण, उन लोगोंकी तरफसे इस लड़ाईमें शरीक हों जो शराबके आदी हैं, और अपने नगरको शराबखोरीके अभिशापसे मुक्त करें। मैं यह भी चाहूँगा कि कुछ नौजवान पुरुष और स्त्रियाँ आदि-द्रविड़ मित्रोंकी चुनौती स्वीकार करके स्वयंसेवकके रूपमें निकलें और आदि-द्रविड़ोंके लिए औद्योगिक स्कूल खोलें ताकि उन्हें शराबकी ओर प्रवृत्त होनेसे बचाया जा सके।

अब मै कांग्रेसके अभिनन्दनपत्रको लेता हूँ। कांग्रेसके अभिनन्दनपत्रमें मुझसे फिरसे नेतृत्व सम्हालनेको कहा गया है। स्पष्ट ही उनको १९२०के कार्यक्रममें अभी भी कुछ विश्वास बना हुआ है। उन्हें समझ लेना चाहिए कि मैंने नेतृत्व कभी छोड़ा ही नही है। मै अब भी लोगोको रिझानेकी कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन मुझे अनुयायी ही न मिले तो भला मै क्या करूँ? लेकिन मैने जो उत्तर दिया, उससे एक बेहतर उत्तर है। मै आपको बताऊँ कि नेतृत्व करनेसे मेरा क्या अभिप्राय है। जेल जानेसे पहले भी मैंने इस आशयके वक्तव्य दिये थे कि अहिंसाके सिद्धान्तमें विश्वास करनेवाले एक व्यक्ति द्वारा देशको जो नेतृत्व दिया जा सकता है वह यही है कि रचनात्मक कार्यक्रमको कार्यरूप दिया जाये। कांग्रेसका सबसे कारगर कार्यक्रम चरखेका सन्देश है, और कांग्रेस द्वारा मुझे प्रदान की गई सहमति और अनुमतिसे मै अखिल भारतीय चरखा संघके अध्यक्षकी हैसियतसे उस रचनात्मक कार्यक्रमका नेतृत्व कर रहा हूँ। और चरखा संघ कांग्रेसकी ही रची हुई एक संस्था है, ऐसी संस्था जो पक्की लगन और सुनियोजित प्रयत्नो द्वारा अपने रचयिताको ही आत्मसात् करनेके लिए काम कर रही है। जिन लोगोको अपने देशकी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेमे अहिंसाकी क्षमता-पर भरोसा है, वे खद्दरमें भरोसा किये बिना और चरखेको इस देशमें सर्वप्रचलित करनेके लिए प्रयत्न किये बिना नही रह सकते। जबतक यह उद्देश्य पूर्ण रूपसे सफल न हो जाये तबतक उन्हें अन्य किसी सिद्धान्त या विश्वासकी बात नही करनी चाहिए। यदि कोई मुझे नेतृत्व करनेको कहे, और मै जो नेतृत्व वास्तवमें दे रहा हूँ, उसकी उपेक्षा करे तो फिर मेरे लिए यह बात शकास्पद हो जाती है कि प्रश्न-कर्त्ताने हमारे संघर्ष या अहिंसाके फलितार्थोको समझा भी है या नही। याद रखिए कि चरखा संघ, जिसका उद्देश्य ३० करोड़ लोगोकी, जिनमें गरीबसे-गरीब लोग शामिल हैं, सेवा करना है, सर्वोत्तम प्रशासकीय कौशलकी और व्यापकतम मंचकी माँग और अपेक्षा करता है। याद रखिए कि अपनी सफलताके लिए वह कार्यकर्त्ताओंसे अनवरत जागरूकता, अनवरत लगनकी अपेक्षा रखता है और उपहास, विरोध और दुष्टतापूर्ण गलत-बयानियोके मुकाबले अदम्य आस्थाकी भी। यह कार्यकर्त्ताओसे निरन्तर अतुलनीय त्याग करते जानेकी अपेक्षा रखता है — ऐसा त्याग, जिसमें कोई सनसनी या उत्तेजना भी नही है। और ईश्वरकी कृपासे यदि भारत ऐसा संगठन चला सके और इसे देशके कोने-कोनेमें बसे गाँवोतक फैला सके तो हम सोच सकते है कि यह एक काम पूरा कर देनेके बाद इस देशकी स्वतंत्रताके लिए हमें कितना थोड़ा करनेको शेष रह जायेगा। इस प्रयत्नके प्रति भारत अनुकूल प्रतिक्रिया कर सकता है, इस बातमें मेरा विश्वास बराबर बढ़ रहा है; और आप असहयोग, वर्णाश्रम धर्म और अन्य अनेक चीजोंके बारेमें, जिनमें मै दखल देता रहा हूँ, मेरे विचारोंसे सहमत हों या न हों, मै आप सबसे दरिद्रनारायणके लिए काम करनेको कहता हूँ।

और अन्तमें मै हमारी अभागी बहनो, देवदासियोंके सवालको लेता हूँ। लेकिन इसकी चर्चा अन्तमें कर रहा हूँ, इसलिए इस सवालके महत्त्वको किसी तरह कम नहीं समझना चाहिए। मै समझता हूँ कि वे आपके बीच भी होती है। उनमें से कुछ

आज तीसरे पहर महिलाओंकी सभामें उपस्थित थी। देवदासी-प्रथा हमारे धर्म या देशके लिए कोई श्रेयकी बात नहीं है। डा० मुत्तुलक्ष्मी अम्मल्ने विधान परिषदमें एक विधेयक पेश कर रखा है। इसे जहाँतक मैं देख सका हूँ, मैसूरवाले कानूनके आधारपर रचा गया है। उस प्रबुद्ध राज्यने उस समस्याको १९०९ मे ही निपटा दिया था। इसे यहाँ कानून द्वारा निपटानेसे पहले मैं दो बातोंका सुझाव देता हूँ। वे नौजवान या वृद्ध लोग, जो इन प्यारी बहनोंका गैरकानूनी उपयोग कर रहे हैं, इन बहनोंको अपनी कामुकताका शिकार बनानेसे बाज आयें। दूसरे, इस प्रथाके अस्तित्वके विरुद्ध जिहादमें हर व्यक्ति शामिल हो जाये, चाहे वह कानून बनाकर हो या इस बुराईके विरुद्ध एक सक्रिय प्रबुद्ध लोकमत तैयार करके हो।

अगर मैंने आपको थका डाला है तो आप मुझे क्षमा करेंगे। आपके सभी अभिनन्दनपत्र काफी महत्त्वपूर्ण थे और मुझे लगा कि सौजन्यताका तकाजा है कि मैं उनका ज्यादासे-ज्यादा विस्तारसे उत्तर दूँ। मेरा अनुरोध है कि मैंने जो-कुछ कहा है, उसपर आप विचार करें और जो आपको ठीक लगे उसके अनुसार कार्य करें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-१०-१९२७

९५. पत्र : मीराबहनको

१७ अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारे सभी पत्र मिल गये हैं। पिछले हफ्ते सोमवारवाले पत्रके बाद, जहाँतक मुझे याद पड़ता है, मैंने तुम्हें कुछ नहीं लिखा है। त्रावणकोर और मलाबारमें खूब व्यस्तता और परेशानी रही, जिसके लिए मैं ही जिम्मेदार हूँ और जो मेरी इच्छासे ही हुआ। इस कारण मुझे आरामकी जरूरत थी। जैसे ही मैंने यह बात राजगोपालाचारीसे कही, उन्होंने तीन जगहोंका और अपने आश्रमका भी, जहाँ-जहाँ मैं जाना चाहता था, कार्यक्रम रद कर दिया। लेकिन चूँकि मैं लंकाके लिए तरोताजा होना चाहता हूँ, और वहाँ मैंने खूब व्यस्त कार्यक्रम रखा है, इसलिए मैंने उक्त कार्यक्रमोंका रद होना स्वीकार कर लिया है। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि मैं बिलकुल ठीक हूँ। आराम तो एक सावधानीका कदम है। २१ तारीखको मैं तिरुपुर जाऊँगा और २४की रातको वहाँसे चलूँगा। बाकी कार्यक्रम ज्यों-का-त्यों है। मुझे अभीतक पता नहीं है कि मंगलोरके आसपास कहाँ-कहाँ मुझे जाना है। इसलिए, २६ और ३१ तारीखके बीच पहुँचनेवाले पत्र तुम मंगलोर ही भेजना।

बाल कटवानेके बारेमें कोई जल्दबाजी नहीं होनी चाहिए। मैं चाहता हूँ कि तुम स्त्रियोंको अपने साथ सहमत कर सको। मुझे बड़ी आशा है कि उन लोगोंमें तुम्हारा काफी प्रभाव बन जायेगा। इसलिए तुम्हें अनावश्यक रूपसे उनके लिए एक

अजनबी चीज नहीं बन जाना चाहिए। तुम पूरी तरह एक निजी मामलेमें उनकी भावनाओंके प्रति लिहाज दिखाओगी, उसकी वे कद्र करेंगी।

मेहमानघरके बारेमें तुम्हारे सुझाव प्रशंसनीय थे। यदि तुम उन्हें बिना विरोध पूरा कर सको तो ऐसे सभी मामलोंमें मेरी स्वीकृति तुम पहलेसे ही मान ले सकती हो। यदि असावधानी और गन्दगी हटानेके आग्रहका मतलब अनबन फैलना हो तो हमें हर प्रकारकी लापरवाही और प्रत्यक्ष गंदगीको भी सहन करना चाहिए। लेकिन जो अस्वच्छता स्वास्थ्यके लिए हानिकर हो, अनबन हो या न हो, उसे तो खत्म कर ही देना चाहिए। मेरा क्या आशय है, तुम समझ गई होगी।

आश्रममें रहनेवाले जितने ज्यादा लोगोंके निकट आ सको, आओ। और यदि तुम छोटेलालके दोषोंको अनदेखा कर सको तो यह बहुत शुभ होगा। तुम आश्रमकी भावना और वातावरणको आत्मसात् कर सको, इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम कोई कड़ी समय-सूची बनाकर काम मत करो। अपने कई घंटे अपने लिए रखो ताकि जो-कुछ सामने आये, उससे निपटनेके लिए तुम मुक्त रहो।

हाँ, दुग्धशालामें कठोर सफाईपर अवश्य आग्रह रखो। लेकिन यहाँ भी उच्च-तम स्तर प्राप्त करनेके लिए साथियोंको रुष्ट मत करो। जो चीज अभीतक कोई प्रत्यक्ष नुकसान किये बिना चलती रही है, उसे थोड़े समय और बर्दाश्त किया जा सकता है।

तुम अम्बालालके यहाँ गईं, यह अच्छा किया। अपने जिद्दी स्वभाव और अक्सर अपने नादानी-भरे और कटु निष्कर्षोंके बावजूद श्री अम्बालाल बहुत अच्छे आदमी हैं।

जबतक मैं तुम्हारे बीच हूँ तबतक बुनियादी सिद्धान्तोंकी रक्षाके लिए जो जरूरी है, उन्हें छोड़कर कोई अन्य कठोर व्रत लेनेकी अभी जरूरत नहीं है। जब मैं नहीं होऊँगा, उस समय स्वयं अपने विकासके लिए या जिस समाजमें तुम रह रही हो, उसके विकासके लिए क्या जरूरी है, इसका निर्धारण करनेके लिए तुम अपने विवेकका उपयोग करना।

श्री सॉन्डर्ससे कहना कि जो किताब वे कहते हैं, उसे लिखना मेरे लिए कठिन है। बौद्धिक ढंगकी कोई चीज लिखना मेरे स्वभावके विपरीत है। और जो मनुष्य क्षणसे क्षणतक जी रहा है, उसको समय कहाँ मिलेगा?

जबतक मैं और कुछ न लिखूँ तबतक लंकामें मेरा पता कोलम्बो होगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८७) से।
सौजन्य : मीराबहन

९६. पत्र : छगनलाल गांधीको

कोयम्बटूर
सोमवार, १७ अक्टूबर, १९२७

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। श्री लॉरेंसका पत्र पढ़ लिया है। उसे वापस भेज रहा हूँ। तुम ठीक काम कर रहे हो। आश्रमसे छुट्टी मिल जाये तो जरूर रुक जाना। तुम्हारा लेख मुझे मिला नही। शायद महादेवके पास पड़ा होगा। यह तो तुमने सुना ही होगा कि आश्रममें काफी खलबली मची हुई है। तुम्हें वहाँ बैठकर इसकी चिन्ता नही करनी है। मैं यहाँ बैठे-बैठे उसे हल कर रहा हूँ। किन्तु मैं निश्चिंत हूँ। अन्तमें सब शान्त हो जायेगा। जहाँ जल-प्रपात हो वहाँ पानीकी चक्की आसानीसे चल सकती है। किन्तु कृत्रिम जल-प्रपात तैयार करके उसे चलाना तो बहुत महँगा पड़ जायेगा। मेरी तबीयत ठीक चल रही है। यहाँसे पहली तारीखको निकलूंगा। और लंका १९ वीको छोड़ूँगा। अतः इस अवधिमें अपने पत्र कोलम्बोके पतेपर लिखना।

तीन दिन तो समुद्रमें बीतेंगे। प्रभुदास अपनी बीमारीकी अथवा कोई भी दूसरी चिन्ता न करे तो जल्दी अच्छा हो जायेगा। अच्छा होनेके लिए अपनी शक्तिसे ज्यादा चलना-फिरना भी न करे। अल्मोड़ामें जबतक उसकी इच्छा हो तबतक रहे। अपने स्वास्थ्यके विषयमें जबतक निर्भय न हो जाये तबतक वापस न आये, इसमें कोई दोष नही है। देवदाससे गलती हो गई है। इसलिए ऐसा नही लगता कि अब वह वहाँ या कहीं भी जायेगा। वर्धा जानेका विचार करता है। किन्तु अभी ऑपरेशन . . .[1] इसलिए खाटपर पड़ा है। खयाल है, उससे २८ वीको तिरुपुरमें भेंट होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१८८) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१. यहाँ वाक्य अधूरा है।

१७. पत्र : करीम मुहम्मद मास्टरको

१७ अक्टुबर, १९२७

भाईश्री क० मु०,

आपने जो किताब भेजी, उसे मैं ध्यानपूर्वक पूरी पढ़ गया हूँ। उसकी उपयोगिताके विषयमें मुझे शंका है। आपने गहराईमें उतरकर नही लिखा है। आपने उसमें कुछ ऐसी वातोको विश्वास-योग्य मानकर सम्मिलित कर लिया है जिन्हे सुप्रतिष्ठित उलेमाओने भी स्वीकार्य नही माना है। मै यहाँ उनके नाम नही गिनाऊँगा। आप उन वातोको स्वयं मानते हों तो मैं आपको भी समझानेकी कोशिश नही करूँगा; किन्तु इस्लामका मर्म समझनेके लिए किसीको ऐसी पुस्तक पढ़नेकी सलाह मैं नही दे सकता।

इसके सिवा, कुछ वातें तो ऐसी है जो मुझे इस कठिन समयमें खतरनाक मालूम होती है। पुस्तकका २६वाँ और २७वाँ पृष्ठ देखिये। उसमें आप कहते है कि जो लोग देवी-देवताओको पूजते है उनका पाप तो खुदा कभी माफ नही करेगा; ऐसे पापियोंके लिए तो नरक ही एकमात्र योग्य स्थान है; ऐसे लोगोंका इबादत करना या न करना एक-जैसा है। मुसलमानोंपर आपके इस कथनका क्या असर पडेगा? जो व्यक्ति इसे पढ़ेगा और मानेगा वह देवी-देवताओकी पूजा करनेवाले हिन्दुओंको एक क्षणके लिए भी कैसे सहन कर सकता है? वह उन लोगोंके साथ मिलकर कैसे रह सकेगा? और इन पृष्ठोंको पढ़नेवाले हिन्दुओपर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा?

मैंने उक्त आयतें पढ़ी है। मै उनका वह अर्थ नही करता जो आप करते हैं। यदि उनका वही अर्थ हो जो आप करते है तो मै उन्हें सहन तो कर लूंगा; किन्तु मुझे खेद जरूर होगा।

आजकी परिस्थितिमें तो मै यह चाहूँगा कि इस्लामके वारेमें केवल वे ही लोग लिखें जिनका ज्ञान विस्तृत हो और जो बहुत उदार हो।

मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१८. पत्र : किशोरलाल मशरूवालाको

कोयम्बटूर
१७ अक्टूबर, १९२७

तुम्हारे तीनों पत्र मिले। चोरीसे सम्बन्धित[1] पत्र देरसे मिला। लेकिन उसे भी तीन दिन हो गये हैं। तुम्हारे दूसरे पत्रमें जो पहले मिल गया था, जल्दी जवाब देनेका कोई आग्रह नहीं था। इसलिए मैंने तार नहीं दिया। फिर इसके पहले लिखनेका समय भी नहीं मिला। जिसमें तुमने शक्तिकी बातकी थी वह पत्र कल मिला। उसमें लगा कि तुम चोरीसे सम्बन्धित पत्रके जवाबकी राह देख रहे हो। इसलिए आज तार भेजा है।[2] वह मिल गया होगा। तारसे उत्तर पूरा-पूरा तो नहीं दिया जा सका है।

हम समाजमें रहते हैं किन्तु कुछ बातें ऐसी हैं जिनमें हम समाजके व्यवहारका अनुसरण नहीं कर सकते। समाज अहिंसाको नहीं मानता या यों कहो कि अहिंसाका पालन नहीं कर सकता, इसलिए वह चोरको दण्ड देता है। किन्तु जो अहिंसाका प्रयोग कर रहा हो, जिसमें अहिंसाका प्रयोग करनेकी हिम्मत हो, उसे ऐसी परिस्थितिमें तटस्थ रहना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह अहिंसा धर्मका पालन करना सीख नहीं सकता और इसलिए समाज उस दिशामें आगे नहीं बढ़ सकता। यदि मेरा यह विचार ठीक है तो फिर तुम गवाही देने नहीं जा सकते। हाँ, जबर्दस्ती बुलाया जाये तो जाना चाहिए। उस हालतमें तो तुम्हें न्यायाधीशको अपना धर्म समझाना चाहिए। यदि इसके बाद तुम्हारी गवाहीके बिना वह ठीक समझे तो चोरको दण्ड दें अथवा दूसरा कोई प्रमाण न मिलनेपर उसे छोड़ दें।

यहाँतक तो मुझे रास्ता स्पष्ट दिखता है, किन्तु चोरके प्रति दयाकी प्रार्थनाका अधिकार तुम्हें नहीं है। उसके प्रति दया तुम्हारे मनमें कब उत्पन्न हुई? वह जिस समय आया था उस समय आई होती तो तुम्हें या गोमतीको[3] डर न लगा होता और न चोरके पीछे दौड़नेकी ही जरूरत होती। वह माल ले जाता और तुम इस बातको सहन कर लेते। अभी हम इतने ऊँचे नहीं उठे, हमारा भय अभी गया नहीं है, मालिकीका मोह छूटा नहीं है, इसलिए दयाकी भावना मुझे उपयुक्त नहीं मालूम होती। कारण, वह कृत्रिम है। हम ऐसी दयाका विकास करनेका प्रयत्न अवश्य करें, हम कर भी रहे हैं। किन्तु जबतक वह भावना हमारे मनमें बद्धमूल नहीं हुई है

१. एक चोर किशोरलाल मशरूवालाके घरसे एक सन्दूक उठाते हुए पकड़ा गया था। निचली अदालतमें उन्होंने अभियुक्तके विरुद्ध गवाही दी लेकिन मजिस्ट्रेटसे चोरको क्षमा कर देनेका अनुरोध किया था। इसीबीच उन्होंने गांधीजीसे राय माँगी और राय मिलनेपर उन्होंने सेशन अदालतमें गवाही देनेसे इनकार कर दिया।

२. तार उपलब्ध नहीं है।

३. किशोरलाल मशरूवालाकी पत्नी।

तबतक हमारी दया हार्दिक नही कही जा सकती और इसलिए वह सच्ची भी नही मानी जा सकती; और इसके सिवा यदि दयाकी भावनाने हमारे हृदयमें घर कर लिया हो तो हमें चोरको अपने वशमें कर लेना चाहिए, उससे मिलना-जुलना चाहिए, उसे सुधारनेका प्रयत्न करना चाहिए। एक बात और है, न्यायालय हमारी इस माँगको कि चोरपर दया की जाये, स्वीकार भी नही कर सकता। चोर स्वयं ऐसी माँग करे और सुधरनेका वचन दे तो न्यायालय उसपर विचार कर सकता है। या न्यायालय हमारी बातपर उस हालतमें ध्यान दे सकता है जब हम चोरको अपने घरमें रखने और इस तरह उसे समाजमें बाहर उपद्रव करनेसे रोकनेके लिए अपनी तैयारी दिखायें। यहाँ तो हम ऐसा कुछ भी करनेके लिए तैयार नही। इसलिए दयाकी माँग करनेकी बात मेरे मनको नही जँचती। दण्ड और दयाके बीचका कोई मार्ग अभी तक मुझे सूझा नही है। दया जहाँ दण्ड जितना प्रभाव न दिखा सकती हो वहाँ ऐसा समझना चाहिए कि वह या तो सच्ची नही है या पर्याप्त नही है। हिन्दु-मुसलमानोंके झगडोंसे मैंने जो अपना हाथ लगभग खीच लिया है, इसका कारण यही है कि मुझे अपनी दया अधूरी अथवा कृत्रिम मालूम होती है। कृत्रिमसे मेरा मतलब यह नही है कि वह झूठी है। मतलब सिर्फ इतना ही है कि वह बुद्धिके ही क्षेत्रमें है, उससे ज्यादा गहरी नही जाती। यदि वह बुद्धिसे गहरी उतरी होती तो मुझे दण्डकी जगह ले सकने योग्य कोई नया उपाय सूझ जाता। अभीतक तो ऐसा नही हो सका है। अपने हृदयमें वैसी तीव्र अहिंसाके[1] संवर्धनके लिए मै बहुत प्रयत्न कर रहा हूँ। किन्तु मेरा प्रयत्न अभीतक सफल हुआ नही कहा जा सकता; हाँ, मैं हारा नही हूँ।

तुम्हारी एक भूल सुधार दूँ। मुझे लगता है कि यह भूल उतावलीमें हो गई है। तुम लिखते हो कि आजका कानून चोरीको अपराध नही मानता, चोरी करके पकड़े जानेको ही अपराध मानता है। बात ठीक ऐसी तो नही है। हाँ, यह अवश्य कहा जा सकता है कि चोरी करके आदमी यदि पकड़ा न जाये तो वह दण्ड-मुक्त रहता है। किन्तु यह परिस्थिति तो आदर्श युगमें भी रहेगी। चोरी करते ही सजा मिल जाये यह तो केवल ईश्वरके किये ही हो सकता है। और यदि मनुष्य आस्तिक हो तो वह यही मानता है कि दोष-मात्रका दण्ड मनुष्यको भोगना पड़ता है। मै मान लेता हूँ कि तुम्हारे कहनेका आशय इतना ही था।

अब आश्रममें जो खलबली मची हुई है उसके विषयमें मुझे आश्चर्य नहीं होता, चोट भी नही पहुँचती। यह हृदय स्वच्छ करने और विभिन्न व्यक्तियोंमें शुद्ध मेलकी भावना स्थापित करनेका प्रयत्न है और जहाँ ऐसा होता है वहाँ ऐसा विस्फोट अनिवार्य है। इन घटनाओंसे मेरी यह प्रतीति और दृढ़ होती है कि हमने मंडलका निर्माण करके ठीक ही किया। इसी अनुभवमें से हम अपना काम करना सीखेंगे और अहिंसाके अनुकूल कोई नये सामाजिक नियम यदि हो सकते है तो उन नियमोको ढूंढना सीखेंगे। यदि हम लोगोमें कोई सम्पूर्ण होता तो वह अभीतक एक नई स्मृति-

१. मूलमें यह शब्द रेखांकित है।

की रचना कर चुका होता। हम सब अपूर्ण है और अपूर्ण होनेके बावजूद सम्पूर्ण होनेका शुभ और शुद्ध प्रयत्न कर रहे हैं। जो मिलकर न रह सकते हो, उनके लिए नई संस्था खोली जाये, इसमें मैं दुःख नही मानूंगा — यदि उसका हेतु निर्मल हो तो। जबतक हम लोगोंमें सच्ची नम्रता यानी सच्ची अहिंसा प्रकट नही होती तबतक मतभेद रहेंगे ही। और ऐसे लोग भी रहेंगे जो शेष सबके साथ मिलकर नही रह सकते। ऐसा प्रसंग उपस्थित हो तो नई उपयोगी संस्थाका आरम्भ करनेमें संकोचका कोई कारण नही है। यदि सब अहिंसाकी दिशामें ही बढ़ रहे होंगे तो सम्भवतः किसी समय एक हो जायेंगे। एक नही होंगे तो भी भिन्न-भिन्न डालियोंपर झूलनेवाले, किन्तु किसी एक ही वृक्षका आश्रय लेनेवाले होंगे और इसलिए वे अपनी भिन्नतामें भी एकताका दर्शन कर सकेंगे। अतः हमें जिस वस्तुके लिए प्रयत्न करना है वह इतनी ही है कि किसीके हृदयमें पाप न हो, हम एक-दूसरेको झूठा या पापी न मानें और किसीके मनमें स्वार्थ या दम्भ न हो।

सत्यके विषयमें अभी यहाँ और अधिक चर्चा नही करूँगा। तुमने जो-कुछ कहा है उसे मैं समझता हूँ और उसे स्वीकार भी करता हूँ। किन्तु उनमें से कई प्रश्नोंका दूसरा सुन्दर पक्ष भी है और हमें उसका भी विचार करना चाहिए। किन्तु उस विषयपर मैं फिर कभी लिखूंगा। मुझे जल्दी नही है। मैं मानता हूँ कि हम एक ही वस्तुकी खोज कर रहे हैं। मैं यह नही चाहता कि तुम रातके सवा बजे पत्र लिखने बैठो। इसे मैं गलत समझता हूँ। गोमती वह उपचार तभी करायेगी जब उसे उसमें तुम्हारी सेवा मिले, यह बात उसे शोभा नही देती। जो भी शुद्ध भावसे सेवा करे उसीकी सेवा स्वीकार कर सकनेकी शक्ति उसमें होनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

९९. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

कोयम्बटूर
सोमवार [१७ अक्टूबर, १९२७][1]

चि० गंगाबहन,

तुम्हारे दोनों पत्र मिले। तुम बहनें अपने पत्रोंमें जो-कुछ लिखती हो उससे मुझे दुःख होता हो, ऐसा नहीं है। वहाँ जो-कुछ हो रहा है उसे जानना मेरा कर्त्तव्य है। और जब मैं आश्रममें न रहूँ तब अपने विचारोंके द्वारा जितनी मदद दी जा सकती उतनी तो मुझे देनी ही चाहिए।

१. बापुना पत्रो–६ : गं० स्व० गंगाबहेनने के अनुसार गांधीजी इस तारीखको कोयम्बटूरमें थे।

वहनोकी प्रार्थना तुमने ही आरम्भ कराई थी। अब यदि तुम्हे ही उसमें रस न आये तव तो यह समुद्रमें आग लगने जैसी बात होगी; प्रार्थनामें उपस्थित रहना औरोंकी अपेक्षा तुम्हारा तो विशेष धर्म है।

वहाँ आपसमें जो खटपट हुई है उसके सम्बन्धमें मैं यह निर्णय नही करना चाहता कि किसका कितना दोष है, बल्कि मैं सबको उचित सलाह देना चाहता हूँ। फिर भी जबतक सबसे मिल नही लूँगा तबतक मैं अपनी कोई राय नही बनाऊँगा। ऐसा तो मुझे लगा ही नही कि दोष रमणीकलालका है। मैंने चि० राधाका पत्र इसलिए नहीं भेजा था कि किसी तरहकी जाँच पड़ताल की जाये बल्कि इसलिए भेजा था ताकि सब वहनें समस्याको समझ ले और एक दूसरेसे मिलकर अपने सन्देह दूर कर ले। उस पत्रको पढ़कर किसीको दुखी होनेका कोई कारण नही था। हमारे बारेमें कोई बुरी धारणा बनाये और हमें उसका पता चल जाये तो इससे हम खिन्न क्यों हों? हमने सचमुच कुछ बुरा किया हो तो हमे खिन्न नहीं होना चाहिए; बल्कि ज्यों ही अपनी भूल मालूम पड़े त्यों ही उसे सुधारनेमें लग जाना चाहिए और भूल बतानेवाले व्यक्तिका अहसान मानना चाहिए। दोष न होते हुए भी यदि कोई दोषारोपण करे तो वह चाहे बूढ़ा हो या बालक, हम तो उसे ना-वाकिफकार ही मानें और माफ कर दें।

यदि अन्य वहनोको भी यह बताना चाहो तो बता देना।

और अब तुम्हारे प्रश्नोंके बारेमें :

सोनेकी उपमाके बारेमें मैं कुछ नहीं कहना चाहता।

वोरडी, वोरिवली और मातरमें तुम्हें शान्ति मिली थी क्योकि वहाँ तुम मेहमान थी और सावधान थी। वहाँका वातावरण तुम्हारी सृष्टि थी या फिर मेहमान होनेके कारण वहाँका वातावरण तुम्हारे अनुकूल बन जाता होगा। किन्तु आश्रमको तुम अपना घर मानती हो और उसे तुमने अपना घर बना भी लिया है। अतः वहाँ तुम मेहमान नही रही। आश्रममें तुम सब एक परिवारके रूपमें रह रही हो इसलिए तुम्हारी सच्ची परीक्षा यही होती है। वहाँ सभी तुम्हें डाँट-फटकार सकते हैं; तुम्हें यदि कोई कुछ न गिने तो भी तुम्हें निभा लेना चाहिए। यदि तुम निभा सको तो उससे तुम्हें शान्ति मिलेगी।

जहाँ अशान्तिका कोई कारण ही न हो वहाँ मिलनेवाली शान्ति, शान्ति नहीं है। भला अफीमचीकी शान्ति किस कामकी? जो अशान्तिमें से शान्ति प्राप्त कर सकेगी उसीकी जीत मानी जायेगी। जबतक तुम लोग आश्रममें शान्तिका उपभोग नही कर पाती तबतक तुम्हें आश्रमवासिनी नहीं कहा जा सकता।

आश्रमवासिनी तो उसीको कहा जा सकता है जो सबके आश्रम छोड़ देनेपर भी स्वयं वही रहते हुए प्राण त्यागे। ऐसा किये बिना तो आश्रम खड़ा ही नहीं हो सकता।

मैंने यह कभी नही माना कि आश्रम खड़ा हो चुका है। हाँ, उसे खड़ा करनेका प्रयत्न हम कर रहे है।

जिसे तुम जीवनका विकास मानती हो वह वास्तवमें विकास ही है, सो तुम या मैं कोई नही कह सकता। भगवानने कहा है, "जो अपने अन्तकालमे मुझे स्मरण करता है 'अथवा' जो अपने अन्तकालमें शान्त है वही मुझे प्राप्त करता है।" इसलिए हमारी परीक्षा उसी अवसरपर होगी। किन्तु यह परीक्षा करेगा कौन? सच बात तो यह है कि सच्ची शान्तिका वर्णन हम नही कर सकते, उसे अनुभव ही किया जा सकता है। असंख्य मूर्ख बात करनेपर ऐसे लगेंगे मानो वे शान्तिका उपभोग कर रहे है? परन्तु वह कोई ज्ञानमय शान्ति नही है। ज्ञानमय शान्ति एक अलौकिक वस्तु है। भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी आदिको सहन करनेकी सामर्थ्यको शान्ति नही माना जा सकता। ऐसी सहनशक्ति तो बहुत-से खूनियोंने भी दिखाई है, किन्तु यदि कोई उनसे एक भी उलटा-सीधा शब्द कहे तो वे तलवार खीच लेते है! सच्ची शान्ति तो उन्हीको मिलती है जिन्हें:

नहिं राग न लोभ न मान मदा।
तिन्हके सम वैभव वा विपदा।।[1]

यदि अब भी समझ न सकी हो तो लिखना और जबतक समझमें न आ जाये तबतक पूछते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८७०५) से।
सौजन्य: गंगाबहन वैद्य

१००. पत्र: आश्रमकी बहनोंको

मौनवार [१७ अक्टूबर, १९२७][2]

बहनो,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं समझता हूँ कि तुम बहुत बेचैन हो गई हो। इससे मै नही घबराता। जब मैंने यह विषय छेड़ा, तभी समझ गया था कि तुम बेचैन हो जाओगी। किन्तु इसके बिना मैल दूर करनेका मुझे कोई रास्ता नहीं दिखाई दिया। अब तुम धीरज रखो। सब ठीक हो जायेगा; और हम नई और सच्ची शान्ति महसूस करेंगे। हम सब मिलकर एक कुटुम्ब बन गए हैं। कुटुम्बमें खलबली मचती है, तो हम क्या करते है? अगर दोनों पक्ष सच्चे हों, तो एक-दूसरेका रोष सहन करते है और अपना रोष शान्त करनेकी कोशिश करते हैं। उसी तरह हमें यहाँ भी करना है। हम सब अपने-अपने धर्मका पालन करने लग जायें तो वे लोग भी जो अपना धर्म नहीं पालते हों, पालने लग जायेंगे या फिर कठोर मूँगकी तरह अलग दिखने

१. **रामचरितमानस**, उत्तरकाण्ड।
२. आश्रमकी बहनोंमें आपसी अनबनके उल्लेखसे।

लगेंगे। इस खलबलीसे एक-दूसरेके प्रति उदारता रखनेकी शिक्षा तो ले ही लेना। उदारताका पदार्थ-पाठ तभी सीखा जाता है, जब हम किसीको दोषी माननेपर भी उसके प्रति रोष न रखकर उससे प्रेम करें, उसकी सेवा करें। जबतक एक-दूसरेके बीच विचार और आचारकी एकता है, तबतक यदि सद्भाव रहता है तो वह उदारता या प्रेमका गुण नहीं; वह तो केवल मित्रता है। उसे पारस्परिक प्रेम अवश्य कहा जा सकता है।

मगर वहाँ प्रेम शब्दका उपयोग अनुचित मानना चाहिए। उसे स्नेह कहेंगे। दुश्मनके प्रति मित्रभावका नाम प्रेम है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७१) की फोटो-नकलसे।

१०१. तार: विट्ठलभाई झ० पटेलको[1]

[कोयम्बटूर,
१७ अक्टूबर, १९२७ या उसके पश्चात्]

विट्ठलभाई पटेल
नडियाद

नवम्बरमें लंकाकी यात्रा निश्चित। स्थगित करना कठिन। यहाँ इक्कीस तक हूँ। उसके बाद तिरुपुर।[2]

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२८६२) की फोटो-नकलसे।

१. यह तार १७ अक्टूबर, १९२७को विट्ठलभाई पटेल द्वारा भेजे गये इस तारके उत्तरमें था: "कृपया अपने कार्यक्रममें ऐसा फेरबदल कर लें कि २ से ८ नवम्बरतक मेरे साथ रह सकें। बहुत आवश्यक है। आपके नाम मेरे पत्रके साथ दयालजी रवाना हो रहे है।"

२. इस तारके उत्तरमें विट्ठलभाई पटेलने यह तार भेजा: "आपको सारी कठिनाइयोंपर विजय पानी होगी और २ नवम्बरको मेरे साथ चलना होगा। इसलिए कृपया अपना कार्यक्रम तदनुसार ठीक कर लीजिए। दयालभाई रवाना हो चुके हैं।" विट्ठलभाई स्पष्टतः वाइसरायकी ओरसे गांधीजीका मन ले रहे थे। देखिए वाइसरायका विट्ठलभाई पटेलको १३-१०-१९२७को भेजा गया पत्र। पत्रमें वाइसरायने कहा था: "अब मैं यह कहनेकी स्थितिमें हूँ कि मैं श्री गांधी और डा० अन्सारीको दिल्ली आकर मुझसे मिलनेके लिए आमन्त्रित करना चाहूँगा, और मैं आपका आभारी होऊँगा अगर आप उनसे यह पता लगा लें कि क्या वे ऐसा करनेके लिए मेरे निमन्त्रणको स्वीकार करनेके इच्छुक हैं।" (विट्ठलभाई पटेल, लाइफ ऐंड टाइम्स, खण्ड २)।

१०२. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

मुसाफरीमें
आश्विन कृष्ण ८ [१८ अक्टूबर, १९२७][1]

भाई रामेश्वरदास,

क्या लीखुं? क्यों मानते हो नरकमें रहते हो? क्यों रहते हो? समझो कि बगैर रामनाम हमारे पास और कोई चारा नहिं है। निश्चय कीया जाय की राम कृपासे हृदयके सब मल दूर हो जायंगे।

बापूके आशीर्वाद

जी० एन० १८५ की फोटो-नकलसे।

१०३. मैं हिन्दू क्यों हूँ?

एक अमेरिकी बहन जो अपनेको हिन्दुस्तानका यावज्जीवन मित्र कहती है, लिखती है:

> चूँकि हिन्दू-धर्म पूर्वके मुख्य धर्मोंमें से एक है, और चूँकि आपने ईसाई धर्म और हिन्दू-धर्मका अध्ययन किया है, और उस अध्ययनके आधारपर अपने आपको हिन्दू घोषित किया है, मैं आपसे अपनी इस पसन्दगीका कारण पूछनेकी अनुमति चाहती हूँ। हिन्दू और ईसाई दोनों ही मानते हैं कि मनुष्यकी प्रधान आवश्यकता है ईश्वरको जानना, और सच्चे मनसे उसकी पूजा करना। यह मानते हुए कि ईसा परमात्माके प्रतिनिधि थे, अमेरिकाके ईसाइयोंने अपने हजारों पुत्रों और पुत्रियोंको हिन्दुस्तानवालोंको ईसाके बारेमें बतलानेके लिए भेजा है। क्या आप कृपा करके बदलेमें ईसाकी शिक्षाओंके साथ-साथ हिन्दू-धर्मकी तुलना करेंगे और हिन्दू-धर्मकी अपनी व्याख्या देंगे? इस कृपाके लिए मैं आपका हार्दिक आभार मानूँगी।

कई मिशनरी सभाओंमें अंग्रेज और अमेरिकी मिशनरियोंसे मैंने यह कहनेका साहस किया है कि अगर वे ईसाके बारेमें हिन्दुस्तानको 'बताने' से बाज आते और 'सरमन ऑन द माउंट' में बताये गये ढंगसे अपना जीवन बिताते, तो भारत उनपर शक करनेके बदले अपनी सन्तानोंके बीच उनके रहनेकी क़द्र करता और उनकी

1. वर्षका निर्धारण पत्रके पाठके आधारपर किया गया है; देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ २३८।

उपस्थितिसे लाभ उठाता। अपने इस विचारके कारण मैं अमेरिकी मित्रोको हिन्दू-धर्मके बारेमें बतौर 'बदले' के कुछ 'बता' नही सकता। अपने धर्मके बारेमें, विशेष रूपसे धर्मपरिवर्तनके उद्देश्यसे लोग दूसरोंसे कुछ कहें, इसमें मेरा विश्वास नही है। विश्वासमें किसीको कुछ बतानेकी गुंजाइश नही है। विश्वासपर तो आचरण करना होता है और तब वह अपना प्रचार स्वयं करता है।

और सिवाय अपने जीवनके और किसी अन्य ढंगसे हिन्दू-धर्मकी व्याख्या करनेके योग्य मैं अपनेको नही मानता। और अगर मैं लिख कर हिन्दूधर्मको समझा नही सकता तो ईसाई-धर्मसे उसकी तुलना भी नही कर सकूँगा। इसलिए मैं तो सिर्फ इतना ही कर सकता हूँ कि यथासम्भव संक्षेपमें मैं बताऊँ कि मैं हिन्दू क्यो हूँ।

मैं वंशानुगत गुणोके प्रभावपर विश्वास रखता हूँ, और मेरा जन्म एक हिन्दू परिवारमें हुआ है इसलिए मैं हिन्दू हूँ। अगर मुझे यह अपने नैतिक बोध या आध्यात्मिक विकासके विरुद्ध लगे तो मैं इसे छोड दूँगा। अध्ययन करनेपर जिन धर्मोको मैं जानता हूँ उनमें मैंने इसे सबसे अधिक सहिष्णु पाया है। इसमें सैद्धान्तिक कट्टरता नही है, यह बात मुझे बहुत आकर्षित करती है क्योंकि इस कारण इसके अनुयायीको आत्माभिव्यक्तिका अधिकसे-अधिक अवसर मिलता है। हिन्दूधर्म वर्जनशील नही है, अतः इसके अनुयायी न सिर्फ दूसरे धर्मोंका आदर कर सकते है बल्कि वे सभी धर्मोकी अच्छी बातोको पसन्द कर सकते है और अपना सकते हैं। अहिंसा सभी धर्मोमें है मगर हिन्दूधर्ममें इसकी उच्चतम अभिव्यक्ति और प्रयोग हुआ है। (मैं जैन और बौद्ध धर्मोको हिन्दू-धर्मसे अलग नही गिनता।) हिन्दू-धर्म न सिर्फ सभी मनुष्योकी एकात्मतामें विश्वास करता है बल्कि सभी जीवधारियोकी एकात्मतामें विश्वास करता है। मेरी रायमें हिन्दूधर्ममें गायकी पूजा मानवीयताके विकासकी दिशामें उसका एक अनोखा योगदान है। सभी जीवोंकी एकात्मता और इसलिए सभी प्रकारके जीवनकी पवित्रता में इसके विश्वासका यह व्यावहारिक रूप है। भिन्न योनियोमें जन्म लेनेका महान विश्वास, इसी विश्वासका सीधा नतीजा है। अन्तमें, वर्णाश्रम धर्मके सिद्धान्तकी खोज सत्यकी निरन्तर खोजका अत्यन्त सुन्दर परिणाम है। ऊपर बतलाई बातोकी परिभाषा देकर मैं इस लेखको भारी नही बनाऊँगा। मैं तो यहाँ सिर्फ इतना ही कहूँगा कि गोभक्ति और वर्णाश्रमके आजके खयालात, मेरी समझमें, मूल गोभक्ति और वर्णाश्रमकी विकृतियाँ-भर हैं। जो चाहें, वे 'यंग इंडिया' के पिछले अंकोंमें वर्णाश्रम और गोभक्ति की परिभाषा देख सकते हैं। मैं निकट भविष्यमें ही वर्णाश्रमपर कुछ कहनेकी आशा रखता हूँ। इस अत्यन्त संक्षिप्त खाकेमें तो मैंने सिर्फ हिन्दू-धर्मकी वे विशेषताएँ बतलाई हैं जो मुझे हिन्दू बनाये हुए हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २०-१०-१९२७

१०४. तार: विट्ठलभाई झ० पटेलको

२० अक्टूबर, १९२७

दयालजी अभी पहुँचे, आपका तार भी। लंकाका कार्यक्रम बदलना कठिन है। उसके बाद बुलानेपर खुशीसे दिल्ली या अन्यत्र जाऊँगा। मेरी रायमें इस समय मैं कूटनीतिक तरीकोंसे उपयोगी सेवा कर सकूँ, ऐसी मुझे आशा नहीं है। यदि मेरी सीमाओंके बावजूद मेरा फौरन दिल्ली आना जरूरी लगे तो मैं लंकाकी यात्रा स्थगित करके दिल्ली आनेको तैयार हूँ बशर्ते निमन्त्रण घोषित किया जाये, और भेंटके सार-संक्षेपके बारेमें स्वीकृत वक्तव्य प्रकाशित करनेकी अनुमति हो। यदि आप इसे सन्तोषजनक मानें तो उचित जगह इस तारका पूरा पाठ भेज दें, लेकिन निजी तौरपर मैं आपसे कहूँगा कि मुझे इस मामलेसे अलग रखें। मैं कलतक यहाँ, चौबीसतक तिरुपुरमें और पच्चीसको कालीकटमें होऊँगा।

[अंग्रेजीसे]
विट्ठलभाई पटेल, लाइफ ऐंड टाइम्स, खण्ड २

१०५. तार: विट्ठलभाई झ० पटेलको[1]

२० अक्टूबर, १९२७

आपका तार मिला। मेरी रायमें शर्तें न अपमानकारी हैं न सख्त हैं बल्कि सार्वजनिक हितमें वांछनीय हैं। पूरा पाठ तारसे भेजिए।

अंग्रेजी (एस० एन० १२८६४) की फोटो-नकलसे।

१. यह तार विट्ठलभाई पटेलके २०-१०-१९२७के इस तारके उत्तरमें था: "आपके तारका पूरा पाठ मैं उपयुक्त जगहोंपर भेजूँ, इससे पहले फिरसे अनुरोध करूँगा कि आप बिना शर्त निमन्त्रण स्वीकार करें। यदि आपका यही रुख रहा तो मैं पूरा पाठ भेज दूँगा और आपको उत्तर सूचित करूँगा। कृपया तुरन्त तार दें।"

१०६. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

कोयम्बटूर
२० अक्टूबर, १९२७

प्रिय भाई,

आजकल दक्षिण आफ्रिकासे बहुत गर्मागर्म सामग्री आ रही है। यह एक कतरन संलग्न है। जो कुछ हो रहा है मैं उसे देख रहा हूँ लेकिन कुछ न कहनेमें बुद्धिमानी मानता हूँ। लेकिन आवश्यक होनेपर मैं हस्तक्षेप करनेमें हिचकूँगा नही। जो चीज मुझे उद्विग्न करती है वह मणिलालके पत्रका एक अनुच्छेद है जिसे मैं अनुवाद करके नीचे दे रहा हूँ :

> मैं उनके भाषणोसे कुछ सन्तुष्ट नही हूँ।[1] वह साम्राज्यकी तारीफ करने और उससे भारतको होनेवाले लाभ गिनानेमें सीमा पार कर जाते है। वह इस प्रकार यूरोपीयोको प्रसन्न करना जरूरी समझते है। वह ऐसा मानते प्रतीत होते है कि इसी प्रकार हम यहाँ कुछ प्राप्त कर सकेंगे। इन भाषणोका प्रभाव भारतमें अच्छा नही हो सकता। इसलिए उन्होने मुझसे कहा है कि उन्हें 'इंडियन ओपिनियन' में न छापूँ।

मुझे लगा कि मणिलालकी यह बात मुझे आपतक पहुँचा देनी चाहिए। क्योंकि वह एक भला लड़का है और वीर लड़का है। साम्राज्य सम्बन्धी मेरे बादके विचारों-को वह जानता है इसलिए मुझे उसके मानसिक रवैयेपर आश्चर्य नही है। उसमें यह समझ सकनेकी विवेकबुद्धि नही है कि हम और आप सगे भाइयोंके समान है, हालांकि साम्राज्यके सम्बन्धमें एक-जैसी राय नही रखते। मैंने उसके इस पत्रके बारेमें उससे ज्यादा कुछ नही कहा है सिवा इसके कि उसे निष्कर्ष निकालनेमें जल्दबाजीके खिलाफ चेतावनी दी है और यह बताया है कि आप ईमानदारीसे साम्राज्यकी गति-विधियोको कुल मिलाकर लाभजनक समझते है। लेकिन निश्चय ही आप उसे अपने सामने बुलाकर जरूरत हो तो बात करेंगे, उसी प्रकार जिस प्रकार आप अपने बेटेसे करेंगे। मैं पूरी आशा करता हूँ कि यहाँ कुछ अखबारोमें समय-समयपर जो-कुछ छपता रहता है या लोग वहाँ जो-कुछ कहते होंगे उसके बारेमें आप परेशान नही होंगे। जब आपको लगे कि मुझे कुछ कार्रवाई करनी चाहिए तो कृपया मुझे वैसा सूचित

१. श्रीनिवास शास्त्रीने ६ अक्टूबर, १९२७को प्रिटोरियासे अपने भाईको एक पत्रमें लिखा था: "साम्राज्य सम्बन्धी अपने विचारोंकी आलोचना होनेकी मुझे पूरी आशा थी। लोगोंको अक्षांश रेखा और देशान्तर रेखामें अन्तरकी गुंजाइश रखनी चाहिए। कोई भी सार्वजनिक वक्ता, जिसकी आत्मा मर नहीं गई है, उसे अक्सर सत्य छिपानेका अपराध करना ही पड़ेगा। यदि वह साफ झूठ नहीं भी बोलता तो भी यथासंभव उससे मिलती-जुलती बात तो करता ही है।"

करनेमें हिचकें नहीं। आप तो जानते ही हैं कि मैं अखबारोंको ध्यानसे नही पढ़ता, विशेष रूपसे जब मैं प्रतिदिन एक स्थानसे दूसरे स्थानकी यात्रा कर रहा हूँ।

भगवान आपको स्वस्थ रखे!

सस्नेह,

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री

१०७. पत्र : प्रभावतीको

आश्विन कृष्ण १० [२० अक्टूबर, १९२७][1]

चि० प्रभावती,

तुमारा पत्र मुझको मील गया था। परंतु अवकाश न होने कारण मैं इससे पहले न लीख सका।

तुमको आश्रम भेजनेके बारेमें मेरे सब प्रयत्न अबतक तो निष्फल गये। अब तो मैंने कुछ आशा छोड दी है। चि० मृत्युंजय क्या करेगा उसका भी कुछ पता नहि है। अब तो तुमारे ही बलसे आ सकती है तभी हो सकता है। पिताजीसे बातें करो और कोई उपायसे तुमको भेज सके तो अच्छा है। यदि आश्रम जानेका मौका नहि मीले तो भी अशांत हरगीज न बनो। आश्रममें हम जो श्लोक गाते हैं उसमें एक यह है।

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥[2]

अथवा तुलसीदासने कहा है:

जिनके सम वैभव वा विपदा[3]

तुम्हारे पतिका यदि और कुछ पता मीला है तो लीखो।

मेरा स्वास्थ्य ठीक रहता है। इस पत्र तुमारे हाथमें आनेके समय मैं मंगलोरके नजदीक हुंगा।

२६–३१ मंगलोर
नवेम्बर ४–१९ कोलम्बो
तीन दिन समुद्रमें जायगे।

बापूके आशीर्वाद

जी० एन० ३३३० की फोटो-नकलसे।

१. वर्षका निर्धारण यात्रा-कार्यक्रमके आधारपर किया गया है।
२. गीता, २, ५६।
३. रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड।

१०८. पत्र : मणिलाल व सुशीला गांधीको

गुरुवार, २० अक्टूबर, १९२७

चि० मणिलाल व सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले।

तुमने अपने पत्रमें शास्त्रीजीके बारेमें जो राय जाहिर की थी वह मैंने उन्हे बता दी है। मुझे लगा कि वे उसे जान लें यही ठीक होगा। किसीने उनके भाषणोंके छुटपुट उद्धरण उन्हे नीचा दिखानेके इरादेसे यहाँके अखबारोको भेजे है। वे साम्राज्यकी प्रशंसा करे इसमें मुझे कोई अजीब बात नजर नही आती क्योकि उनकी यही मान्यता है। वरना वे यह नौकरी स्वीकार न करते। फिर भी तुम्हारे मनमें जो बात आये उसे तुम विनयपूर्वक उनके सामने रख सकते हो ताकि वे तुमसे कुछ कहना या तुम्हें समझाना चाहे तो समझा सकें। किसी काममें उतावली मत करना।

देवदासने अर्शका ऑपरेशन कराया है। यह ऑपरेशन त्रिचनापल्लीमें डा० राजन्ने किया है। वह उन्हीके अस्पतालमें है और अब बहुत अच्छा है। थोड़ा-सा जख्म रह गया है जो जल्दी ही भर जायेगा। वह परसो मुझसे मिलेगा।

आश्रमसे तुम्हें जो माल भेजा गया था उसका पैसा तुम्हारी तरफ निकलता है। वह पैसा तुम तत्काल भिजवा दो। मैंने तुम्हें समझाया भी था कि इन पैसोकी अदायगी तो रोक कर रखी ही नही जा सकती क्योकि आश्रमको इस तरह उधार देनेका अधिकार ही नही है अतः जल्दीसे-जल्दी ये पैसे चुकता कर देना।

सुशीलाका कितना वजन बढा? अब वह कितने मील चल सकती है? उसका कान कैसा है? क्या वह अक्षर जोड़ [कम्पोज कर] लेती है? क्या गीता-पाठ करती है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

एन्ड्रयूजने तार द्वारा सूचना दी है कि उन्होने प्रागजीके बारेमें नेटाल तार दिया है।

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला। उसमें तुमने किसी डाकसे एक बार पत्र न मिलनेकी बात लिखी है। अबतक वह पत्र तुम्हें मिल गया होगा। बेशक मै एक डाकसे पत्र भेजना भूल ही गया था।

गुजराती (जी० एन० ४७२६) की फोटो-नकलसे।

१०९. पत्र : मीराबहनको

२१ अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारे पत्र नियमित रूपसे मिलते हैं। तुम जितने चाहो उतने पत्र लिखनेसे मै तुम्हें मना नही करता। मैंने सिर्फ यह कहा था कि तुम मुझे प्रति सप्ताह एक पत्र लिखोगी तो मै सन्तुष्ट हो जाऊँगा। एक भी पत्र न मिलनेसे मुझे चिन्ता होगी। अगर तुम्हारा मन हर रोज एक पत्र भेजनेका हो तो मै उसका स्वागत करूँगा।

मैं सोचता हूँ कि धूपमें घूमने-फिरनेमें तुम्हें कुछ तकलीफ तो होती होगी। क्या धूपसे बचावके लिए तुम सरपर कुछ पहनती हो? अगर जरूरत हो तो तुम हैट इस्तेमाल करनेमें झिझकना मत।

हालाँकि मै माँ का स्थान लेता हूँ, या कहें कि चूँकि मैं यह विशिष्ट स्थान लेता हूँ, इसलिए वास्तविक माँ का तुम्हारे लिए पहलेसे ज्यादा महत्त्व होना चाहिए। तुम्हारे साथ मेरे सम्बन्ध शुद्ध हों इसके लिए यह जरूरी है कि यह सम्बन्ध स्वाभाविक स्नेहके तुम्हारे सभी सम्बन्धोंको मजबूत बनाये। इतना जरूर है कि ये सम्बन्ध शुद्धतर हो जाने चाहिए और उनमें स्वार्थका लेशमात्र समाप्त हो जाना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८८) से।
सौजन्य : मीराबहन

११०. पत्र : सुरेन्द्रको

[२२ अक्टूबर, १९२७ के पश्चात्][1]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। पूज्य गंगाबहन[2] चाहती हैं कि तुम स्त्रियोंके वर्गको रोज थोड़ा समय दो। मैं उनसे सहमत हूँ। अगर तुम दे सको तो थोड़ा समय इसके लिए दो।

१. देवदासके वादके उल्लेखके आधारपर; गांधीजीको देवदाससे २२-१०-१९२७को मिलना था, देखिए "पत्र : मणिलाल व सुशीला गांधीको", २०-१०-१९२७।

२. गंगाबहन वैद्य।

मुझे यहाँ आज सुन्दरम्[1] एकाएक मिल गया। मैंने देवदाससे आश्रम जानेको कहा था; मगर उसने वर्धा जाना पसन्द किया। मुझे लगता है उसका घाव भरनेमें कुछ समय लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बालकृष्ण .....[2]

गुजराती (एस० एन० ९४१२) की फोटो-नकलसे।

१११. तार : विट्ठलभाई झ० पटेलको[3]

तिरुपुर
२३ अक्टूबर, १९२७

आपका तार अभी मिला। प्रकाशनकी कठिनाईको मैं अनुभव करता हूँ और मेरी उपस्थिति अत्यावश्यक है, यह देखते हुए यदि मुझे निमन्त्रण चौवीस तक तिरुपुरमें या पच्चीसको कालीकटमें या छब्बीस और उसके बाद मंगलोरमें मिल गया तो मैं खुशीसे स्वीकार कर लूँगा।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२८६५) की फोटो-नकलसे।

१. त्रिभुवनदास लुहार, एक कवि जिन्होंने अपना यह उपनाम रख लिया था।

२. साधन-सूत्रमें दो शब्द अस्पष्ट हैं।

३. यह तार विट्ठलभाई झ० पटेलके निम्न तारके उत्तरमें था : "वाइसरायसे यह तार मिला। शुरू : '२८ सी० आपके २० अक्टूबरके तारके लिए बहुत धन्यवाद। मैं गांधीकी कठिनाइयोंको अच्छी तरह महसूस करता हूँ और उनके स्वास्थ्यको देखते हुए यह सुझाव कि वह अपने कार्यक्रमको बदलें और लम्बी यात्रा करें तबतक नहीं देता जबतक कि मैं उनसे मिलना महत्त्वपूर्ण नहीं मानता होता। यदि मुलाकात होती है तो मैं निमन्त्रणका तथ्य घोषित करनेको बिलकुल राजी हूँ लेकिन मैं मुलाकातके सार-संक्षेपको प्रकाशित करनेकी बात नहीं मान सकता, क्योंकि इससे मुलाकातकी गोपनीयता खण्डित होगी। आपसे यह सुननेपर कि इन परिस्थितियोंमें वह दिल्ली आयेंगे, मैं उन्हें खुशीसे निमन्त्रण भेज दूँगा। कृपया पता लगा कर मुझे तारसे सूचित कीजिए। इस बीच अगर आपको कोई आपत्ति न हो तो मेरा विचार डा० अन्सारीको २ नवम्बरको मुझसे यहाँ आकर मिलनेके लिए अविलम्ब निमन्त्रित करनेका है।' समाप्त। देशकी खातिर जोरदार सलाह और आग्रह करता हूँ कि आप मुझे वाइसरायको यह आश्वासन देनेकी अनुमति देंगे कि आप उनका निमन्त्रण स्वीकार कर लेंगे। तुरन्त उत्तर दीजिए।"

११२. भाषण : छात्रोंके समक्ष, तिरुपुरमें

२३ अक्टूबर, १९२७

गीता-कक्षाका उद्घाटन करते हुए महात्माजीने छात्रोंको सुबह ४ बजे उठने और प्रतिदिन नियमित रूपसे 'भगवद्गीता' पढ़नेकी सलाह दी। उन्होंने कहा, मैं चाहता हूँ कि आप लोग पूरे मनसे 'गीता' का अध्ययन शुरू करें। यदि आप लोग संस्कृत नहीं पढ़ सकते तो आप 'गीता' का तमिल अनुवाद पढ़ सकते हैं, लेकिन अंग्रेजी अनुवाद नहीं क्योंकि अंग्रेजी अनुवाद 'गीता' का सच्चा महत्त्व प्रकट नहीं कर सकता। उन्होंने कहा कि 'गीता' का तीसरा अध्याय महत्त्वपूर्ण है।[1]

'गीता' में कर्मका सन्देश, भक्तिका सन्देश और ज्ञानका सन्देश दिया गया है। जीवन इन तीनोंका एक मिलाजुला समन्वित रूप होना चाहिए। सेवा इन सभीका आधार है और जो लोग देशकी सेवा करना चाहते हैं उनके लिए इससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण और क्या हो सकता है कि वे उस अध्यायके अध्ययनसे शुरुआत करें जिसमें कर्मका सन्देश दिया गया है? लेकिन आप 'गीता' को पाँच आवश्यक साधनोंसे सज्जित होकर पढ़ें। वे पाँच साधन हैं, अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह और अस्तेय। तभी और केवल तभी आप 'गीता' की सही व्याख्या कर सकेंगे। और तब आप उसमें हिंसा नहीं, जैसा कि अधिकांश लोग उसमें देखते हैं, बल्कि अहिंसा देखेंगे। आप उसका अध्ययन उपयुक्त उपकरणोंसे सज्जित होकर कीजिए और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपको ऐसी शान्ति प्राप्त होगी जिसका आपको पहले कभी भान भी नहीं था।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २५-१०-१९२७
यंग इंडिया, ३-११-१९२७

१. इसके आगेका अंश महादेव देसाई द्वारा लिखित "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है, जो कि यंग इंडियाके ३-११-१९२७ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

११३. वर्णधर्मपर बातचीत[1]

२३ अक्टूबर, १९२७

कुछ नवयुवकोंने[2] वर्णधर्मपर बातचीत करनेके लिए गांधीजीसे भेंटका समय माँगा। उन्हें इस बातसे परेशानी थी कि जबतक ब्राह्मण ब्राह्मण है, तबतक वह अपनी श्रेष्ठता कैसे छोड़ सकता है।

गांधीजीने अपनी बात समझानेके लिए एक उदाहरण देते हुए कहा:

सीता भी एक वेश्यासे श्रेष्ठ नही थी। क्या आप सन्तुष्ट है?

मित्रने कहा, "नहीं, मुझे तो इससे आघात पहुँचता है।" गांधीजीने कहा:

मै सन्तुष्ट हूँ, क्योकि सीतामें श्रेष्ठताकी कोई भावना नही थी। अगर उनमें अपनी पवित्रताका घमण्ड होता तो वे कहीकी न रहती। लेकिन उन्हे तो उसका भान तक नही था। वह पवित्र थी क्योंकि उनके लिए इसके सिवा कुछ होना असम्भव था। क्या हिमालयको अपनी ऊँचाईका भान है? तनिक भी नही। लेकिन यदि इसका भान हो तो वह टुकड़े-टुकड़े होकर गिर जाये। इसी प्रकार वर्ण भी, यदि वह श्रेष्ठताका समानार्थी और अहकी अभिव्यक्ति बन जाये तो गलेमें पड़ी जंजीरसे बेहतर नही रह जायेगा। मैक्समूलरने हिन्दू-धर्मकी संक्षेपमें यह व्याख्या की है: "भारतने जीवनको केवल एक चीज माना है — कर्त्तव्य — जब कि औरोंने आनन्दोपभोग और कर्त्तव्यकी बात सोची है।" वर्ण तो बस उस कर्त्तव्यका द्योतक भाग है जो प्रत्येकको अपने पूर्वजोंसे प्राप्त हुआ है। पश्चिममें जब लोग जन-साधारणकी दशा सुधारनेकी बात करते है तो वे उनका जीवन-स्तर उठानेकी ही बात करते है। भारतमें हमारे लिए जीवन-स्तर उठानेकी बात करना जरूरी नही है। जब वह स्तर हम सबके अन्दर ही है तो कोई बाहरी व्यक्ति उसे ऊपर कैसे उठा सकता है? मनुष्य अपने कर्त्तव्यको पहचाने और उसे पूरा करे तथा ईश्वरके निकट पहुँचे। हम तो इसके अवसर ही बढ़ा सकते है। लेकिन आज आप पेड़को समूल उखाड़नेका असम्भव कार्य कर रहे हैं। मै मानता हूँ कि कुछ शाखाएँ और पत्तियाँ सड़ी हुई है। आइए हम चाकू लें और इन रोगग्रस्त शाखाओंको काट डालें, लेकिन हमें जड़पर कुल्हाड़ा नही मारना चाहिए। जिस पेड़के नीचे आप रहे हैं और बड़े हुए है यदि उसे ही नष्ट कर देंगे तो आप खराब माली कहलाएँगे। पेड़में जो अनावश्यक बाढ़ है उसे आप काट फेंकें, भले ही अन्तमें जड़ों सहित बचा हुआ तना केवल ठूंठकी तरह दिखाई पड़ने

१. महादेव देसाईके "साप्ताहिक पत्र" से।

२. राव साहब विट्ठलदास आनन्दजी सेठ, एम० एन० चिक्कण्ण चेट्टियार, टी० एस० कन्दस्वामी चेट्टी, टी० एस० अविनाशलिंगम् चेट्टियार, के० एस० रामस्वामी कौण्डर, पी० डी० आशर और के० वी० वेंकटाचलम् पिल्ले।

लगे; लेकिन यदि आप जड़ोंको बचाकर रखेंगे और उसमें प्यारसे पानी देंगे तो वह किसी दिन बढ़कर एक सुन्दर वृक्ष बन जायेगा।

लेकिन जैसा कि मैंने कहा, वृक्षको नष्ट नहीं किया जा सकता क्योंकि सच्चा ब्राह्मण सभी वार सहकर भी अपनी त्यागमय गरिमामें सीधा तनकर खड़ा रहेगा। मैं स्वीकार करता हूँ कि आज बहुत कम ब्राह्मण, बहुत कम क्षत्रिय, बहुत कम वैश्य और बहुत ही कम शूद्र रह गये हैं। कारण, शूद्रका भी एक निजी व्यक्तित्व होता है। हम सभी आज गुलाम है। आज हम डायरकी उद्दण्ड शक्तिके सामने काँपते है। आइए, हम सब लोग, हममें से प्रत्येक व्यक्ति, अपने-अपने धन्धेको पूरा करे। हममें से अधिकाश लोगोंको वैश्य होना पड़ेगा क्योंकि ये वैश्य ही हैं जिन्होंने हमें अपनी एड़ीके नीचे दबा रखा है।

हम ब्राह्मणका आदर करेंगे, उसकी श्रेष्ठताके कारण नही, बल्कि वह जो अधिक श्रेष्ठ सेवा करता है, उसके कारण। आज हमारा पतन हो चुका है, यही कारण है कि हम श्रेष्ठता और हीनताकी बात ही सोच सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३-११-१९२७

११४. भाषण: तिरुपुरकी सार्वजनिक सभामें[1]

२३ अक्टूबर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको सारे अभिनन्दनपत्रों, इन थैलियों, खादीके विभिन्न उपहारों तथा हीरेके इन दो बुन्दोंके लिए, जिन्होंने मेरा और आपका अगला काम तय कर दिया है, धन्यवाद देता हूँ। अबतक तो आप जान ही चुके होंगे कि मेरे लिए इन मूल्यवान उपहारोंका महत्त्व केवल दरिद्रनारायणकी दृष्टिसे ही है, मेरे व्यक्तिगत उपयोगकी दृष्टिसे नही। जिस थोड़ी बहुत खादीकी जरूरत मुझे पड़ती है वह तो मेरे पास पहलेसे ही है। और इसलिए अगर आप भाषणके खत्म होनेपर धैर्य रखेंगे तो मैं सारी खादी और इन मूल्यवान बुन्दों तथा इन फ्रेमोंको बिक्रीके लिए आपके सामने पेश करूँगा। आपने मुझे याद दिलाई है कि कुछ समय पहले जब मैं तिरुपुर आया था तो आपने मुझे खादीके राजाकी तथा इसे [तिरुपुरको] खादीके राजाकी राजधानीकी उपाधि दी थी। इस उपाधिको मैंने आदरपूर्वक और नम्रताके साथ स्वीकार कर लिया था और इस स्थानको खादीके राजाकी राजधानी कहनेके आपके दावेको भी मैंने मान लिया था और चूँकि मैं अपनी प्रजासे बहुत अपेक्षाएँ रखनेवाला कोई कठोर राजा नहीं हूँ इसलिए मैं कह सकता हूँ कि आपने अपने-आपको जो उपाधि दी है वह बिलकुल ठीक दी है। उत्पादनकी दृष्टिसे आपका सारे भारतमें अब भी पहला स्थान है। आपने अपनी खादीकी किस्ममें भी

१. गांधीजीके अंग्रेजी भाषणको चक्रवर्ती राजगोपालाचारी तमिलमें अनुवाद करके सुनाते जाते थे।

काफी सुधार कर लिया है। लेकिन जब मैं अपने अभीष्ट लक्ष्यकी दृष्टिसे तथा आपसे और सम्पूर्ण भारतसे जो-कुछ अपेक्षित है उस दृष्टिसे सोचता हूँ तो मुझे यह मानना पडता है कि प्रगति अपेक्षाकृत अच्छी होते हुए भी सन्तोषजनक नहीं है। सम्पूर्ण भारतमें हम जो-कुछ करना चाहते हैं, उसे देखते हुए तो स्वाभाविक है कि इस राजधानीको अपने आसपासके क्षेत्रोंमें पैदा होनेवाली सारी रुईका उपयोग करना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी सेवाके बलपर कपासके उत्पादकोंको इस प्रकार अपने वशमें कर लें कि वे अपनी रुई केवल आपको ही बेचें, और मैं यह चाहता हूँ कि अपनी उसी सेवाके अधिकारके द्वारा आप गरीब ग्रामीणोंको इस प्रकार प्रभावित करें कि एक भी घर ऐसा न बचे जिसमें चरखा न चलता हो। और एक भी बुनकर ऐसा न बचे जो हाथ-कते सूतके अलावा और कुछ बुने। आप ऐसा न सोचें कि यह आपके बसके बाहरकी बात है। *यदि आप अपने शहरको खादीकी राजधानी कहनेका विशेषाधिकार* कायम रखना चाहते है तो आपको यह लक्ष्य तो रखना ही चाहिए। और यदि आपने गरीब ग्रामीणोंके शोषणके ध्येयसे नहीं बल्कि महज उनकी सेवा करनेके उद्देश्यसे कार्य किया तो बहुत कम समयमें ही ग्रामीणों और रुईके उत्पादकोंपर आपका जो प्रभाव होना चाहिए वह आप जमा लेंगे। लेकिन यह तभी सम्भव होगा जब खादीके विभिन्न व्यापारियोंके बीच हार्दिक सहयोग हो। आपको खादीके जरिये रुपया कमानेकी अपनी व्यक्तिगत इच्छापर भी अंकुश रखना होगा। इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि खादी एक ठोस आर्थिक योजना है। यह आपको जीविकाका बढ़िया साधन और उचित लाभ प्रदान कर सकती है। हाँ, उसमें ब्याजकी ऊँची दरें लेनेवाले व्यक्तियोंके लिए कोई स्थान नहीं है, और न होना ही चाहिए। मैं स्वयं ऐसे संगठनोंको सन्देहकी दृष्टिसे देखता हूँ जो अपनी पूंजीपर २५ प्रतिशत ब्याज देनेमें समर्थ हों या २० प्रतिशत देते हों। यह बात तो आसानीसे चुनौतीसे परे, एक सामान्य सिद्धान्तके रूपमें मानी जा सकती है कि जहाँ कहीं भी अधिक और अपरिमित लाभ प्राप्त हुआ है वह गरीबोंके बूतेपर ही हुआ है। लेकिन खादीकी सारी अवधारणा तो यह है कि हमें, जो खादीके प्रचारमें सक्रिय भाग ले रहे हैं, अपने-आपको इन क्षुधा-पीड़ित ग्रामीणोंका न्यासी समझना चाहिए। सम्मानजनक जीवन-यापन करनेके लिए जो काफी है, उसके सिवा जितनी भी आमदनी हो वह सब इन ग्रामीणोंको लौटा दी जानी चाहिए। आप देखेंगे कि जबतक यहाँ ऐसी हाथ-कताई जारी रहती है तबतक राजा अपनी इस छोटी-सी राजधानीके साथ रहेगा और इसकी जितनी तारीफ सम्भव है, उतनी तारीफ चारों ओर करेगा।

लेकिन दरिद्रनारायणकी इस पेढीके कुछ और भी साझेदार हैं और वे हैं कतैये और बुनकर। मुझे मालूम है कि इस सभामें कतैये नहीं है। लेकिन कुछ बुनकरोंके यहाँ उपस्थित होनेका मुझे पता है। जो बुनकर यहाँ मौजूद हैं उनसे मैं कहना चाहता हूँ कि मुझे यह सुनकर बहुत दुःख हुआ है कि इस शहरमें कुछ बुनकर शराब और जुएके शिकार हैं। मैं चाहता हूँ कि मेरा यह सन्देश आप उन बुनकरोंतक भी पहुँचा दें जो इस समय यहाँ मौजूद नहीं हैं। दरिद्रनारायणकी पेढीमें शराबियों और

जुआरियोंका वास्तवमें कोई काम नहीं है। मद्यपान एक ऐसी बुराई है जिसने संसारके हजारों घरोंको बरबाद कर दिया है; और खादीसे सम्बन्धित बुनकरोंसे यह अपेक्षा की जाती है कि कमसे-कम वे तो शराब पीकर अपने शरीर दूषित नहीं करेंगे। शराबके नशेमें चूर व्यक्तिको पत्नी और बहनमें कोई भेद नजर नहीं आता। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि तिरुपुरके नवयुवक जागेंगे और जो लोग शराबके आदी हैं उनके बीच जाकर काम करेंगे तथा विनम्रतापूर्वक समझा-बुझाकर उनकी शराबकी आदतको छुड़ायेंगे।

जुआ खेलना एक पाप है जो जुआरीको नीचे गिराता है और उससे असंख्य अपराध करवाता है। इसलिए इसे छोड़ देना चाहिए। आप जानते हैं कि दक्षिणका यह भाग हत्याके अपराधोंके लिए कुख्यात है। मुश्किलसे कोई सप्ताह ही ऐसा जाता हो जब हत्याके कुछ मामले न होते हों और यह सर्वविदित है कि जहाँ कहीं भी शराब और जुएका बोलबाला होता है वहाँ हत्याएँ भी जरूर होती हैं — यह इन बुराइयोंका एक अनिवार्य परिणाम है। यदि समाजमें कोई भी ऐसा व्यक्ति है जो जीवनको इतना सस्ता समझता है कि वह थोड़ेसे उत्तेजन या मामूली-सा बहाना मिलते ही किसीकी जान ले ले तो हमें अपने ऊपर शर्म आनी चाहिए। यदि आपके यहाँ समाज-सेवक हैं, जो कि निस्सन्देह हैं, तो मैं चाहता हूँ कि वे इस अपराधका अध्ययन करें, इसके ठीक-ठीक कारण जानें तथा इस अच्छे जिलेसे इस लज्जास्पद बुराईको दूर करनेका प्रयत्न करें।

आज सुबह म्युनिसिपल हाई स्कूलके हेडमास्टर तथा कुछ विद्यार्थियोंसे मिलनेपर मुझे बड़ा हर्ष और सुख हुआ। उन्होंने मुझसे गीता-कक्षाका उद्घाटन करनेके लिए कहा। और इस उत्सवको मनानेके लिए विद्यार्थी और शिक्षकगण काफी सवेरे लगभग पौने चार बजे ही आ गये। आशा है कि विद्यार्थी अपनेको इस पवित्र अध्ययनके योग्य बनायेंगे और एक बार इस महान कार्यको आरम्भ कर देनेके बाद इससे न तो पीछे हटेंगे और न इसे टालेंगे। यह सही दिशामें उठाया गया कदम है। इस समय देशमें साहित्यिक शिक्षाका भूत सवार है। लेकिन चरित्र-निर्माणकी ओर ध्यान कम दिया जाता है। मेरी नम्र रायमें तो जिस शिक्षाका निर्माण चरित्रकी ठोस बुनियादपर न हुआ हो वह निर्जीव शरीरके समान है। एक हिन्दू बालकको 'भगवद्-गीता'का श्रद्धापूर्वक अध्ययन करनेसे जो चारित्रिक दृढ़ता प्राप्त होती है, उतनी अन्य किसी चीजसे नहीं हो सकती। विद्यार्थी इस बातका ध्यान रखें कि 'भगवद्गीता'का अध्ययन उन्हें अपना संस्कृतका ज्ञान या स्वयं 'गीता'का ज्ञान प्रदर्शित करनेके लिए नहीं करना है। वे ध्यान रखें कि इसका अध्ययन उन्हें आध्यात्मिक सुख प्राप्त करनेके लिए और इसकी सहायतासे अपनी सारी मुसीबतोंपर विजय प्राप्त करनेके लिए करना चाहिए। जो भी व्यक्ति इस पुस्तकका श्रद्धापूर्वक अध्ययन करता है उसका देश-सेवक और जन-सेवक बनना लाजिमी है। लोकमान्य तिलकने हमें बताया है कि 'गीता' मुख्य रूपसे कर्मका सन्देश है — ऐसे कर्मका जो निःस्वार्थ है। निःस्वार्थ कर्मका तात्पर्य सेवा और त्यागके अलावा और कुछ नहीं है। मैं साहसपूर्वक यह कह सकता हूँ, चाहे इसके

विरोधमें कुछ भी कहा जाये कि इस युगमें सच्चा त्याग — 'भगवद्गीता' में जिस त्यागका उपदेश हुआ है वह त्याग — लाखो क्षुधा-पीड़ितोंके लिए तथा उनके नामपर हाथ-कताई करना है। यदि विद्यार्थियोंको अपने और लाखो क्षुधा-पीड़ितोंके बीच जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करना है, जो कि उन्हें करना भी चाहिए, तो वे यह देखेंगे कि चरखेके अलावा कोई और चीज इतनी ताकतवर नही है जो इस कार्यमें उन्हें मदद दे सके।

नगरपालिका द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रमें स्कूलोंके सम्बन्धमें चरखेका उल्लेख देखकर मुझे प्रसन्नता हुई और मुझे उम्मीद है कि नगरपालिका निकट भविष्यमें अपने इस निश्चयको कार्य रूप देगी। अब और कुछ कहकर मुझे आपको ज्यादा नहीं रोकना चाहिए क्योंकि अभी मुझे आपका कुछ समय इन वस्तुओंको बेचनेमें भी लेना है। इस बीच स्वयंसेवक जनताके बीच पहुँचेंगे और उन लोगोंसे जिन्हें खादीमें श्रद्धा है और जिन्होंने खादी कोषके लिए रुपया नही दिया है, रुपया इकट्ठा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २५-१०-१९२७

११५. पत्र : मीराबहनको

२४ अक्टूबर, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे सभी पत्र मुझे मिले है, और उन्हें पाकर प्रसन्न हुआ हूँ।

तुमने पूछा है कि जो पत्र भटक गया है वह कहाँ चला गया होगा। मेरे लिखनेमें कोई व्यतिक्रम नही हुआ है। इसलिए यथासमय वह तुम्हें मिल जायेगा।

मुझे तुमने अपना वजन अभीतक नही लिखा।

भणसालीके[1] मामलेका तुम्हारा विश्लेषण मैं स्वीकार करता हूँ। वह इतने अच्छे आदमी है कि मैत्रीपूर्ण आलोचनाका बुरा नहीं मान सकते। इसलिए तुम्हें चाहिए कि उनसे बात करो और देखो कि उनके साथ क्या कर सकती हो। यही बात छोटेलालके साथ भी है। उसे भी साधकर नियंत्रणमें लाना होगा। शायद वह तुम्हारी बात सुनेगा। मुझे बहुत खुशी है कि तुम इन सब बीमार लोगोंकी देखभाल कर रही हो और मुझे रोज सूचना दे रही हो। दुग्धशाला और पिंजरापोल देखकर वहाँसे जो विवरण भेजोगी उसकी मुझे प्रतीक्षा रहेगी।

मैंने जो थोड़ा आराम लिया है उसे निरोधक कदम भी नही कहा जा सकता। वह तो सावधानी-मात्र था। वस्तुतः तिरुपुर यात्राके दौरान जिन दो स्थानोंको मैंने छोड़ दिया था, वहाँ जाकर मैंने अपने इस आरामकी कीमत चुका दी। लेकिन इस निर्दोष विक्षेपने तुम्हारे धीरजकी अच्छी परीक्षा ले डाली। तुम्हें किसी खबरसे, बुरी खबरसे भी प्रभावित नही होना चाहिए। तुम्हें अपने मनमें यह नही सोचना चाहिए, "कितना अच्छा होता कि वह वहाँ गये ही न होते या ज्यादा आराम लिया होता।"

१. जे० पी० भणसाली, सत्याग्रह आश्रमके सुपरिचित सदस्य।

तुम्हारे लिए यह विश्वास करना काफी होना चाहिए कि मेरा स्वभाव जितनेकी अनुमति देता है मैं अपना उतना ध्यान रख रहा हूँ। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मैं आराम चाहता हूँ। लेकिन मुझे वह देगा कौन? क्या हम जो चाहते है वह सब मिल जाता है? यदि हमें मिल जाये तो हमारे विश्वासका क्या महत्त्व रह जायेगा? इतना जानना काफी है कि उसकी मर्जीके विना एक तिनका भी नहीं हिलता। यदि हम उसपर भरोसा रखेंगे, उन लोगोंकी तरहका भरोसा नही जो धन द्वारा सुलभ सभी प्रकारका इन्तजाम कर चुकनेके बाद ईश्वरपर भरोसा करते हैं, तो वह हमारी देख-रेख करेगा। यह सच है कि हमें कुछ सावधानी रखनी चाहिए, लेकिन विश्वास रखने-वाले लोग अपने स्वभावके प्रति हिंसा करके विशेष रूपसे सावधानी नही बरतेंगे और न ऐसे उपाय करेंगे जो साधारण आदमीके वशके बाहर है। इसलिए नुस्खा यही है कि जितनी कम सावधानी रखी जाये उतना ही अच्छा है और उचित प्रयत्न द्वारा हममें से छोटेसे-छोटा आदमी जो-कुछ प्राप्त कर सकता है उससे ज्यादाकी कोशिश न करें। इस मापदण्डसे जाँचनेपर तो मैं अपना जितना खयाल रखता हूँ और फिर दूसरे लोग मेरा जितना खयाल रखते हैं वह बहुत ज्यादा है और ईश्वरमें आस्थाके मेरे दावेके साथ असंगत है। इस प्रकार तुम देखोगी कि इस दिशामें मैं जो-कुछ करता हूँ वह मुझे बहुत ज्यादा लगता है और मैं अकसर सोचता हूँ कि यदि कुछ समयतक मेरी उपेक्षा की जा सके तो वह बहुत लाभकर होगा। फिलहाल तो यह स्थिति है कि मुझे बच्चोंकी तरह बहुत सँभालकर रखा जा रहा है।

यह बहुत सम्भव है कि एक अन्य व्याघात होगा और मुझे एक या दो दिनके लिए दिल्ली जाना पड़ेगा। आज शामतक मुझे शायद पता चल जायेगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२८९) से।
सौजन्य : मीराबहन

११६. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२४ अक्टूबर, १९२७

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र बहुत निराशाजनक है, लेकिन कोई बात नहीं। वातावरणको देखते जितना उचित है और हमारे पास जितने पैसे हों, उससे ज्यादा करनेकी हमें कोशिश नहीं करनी चाहिए। मुख्य चीज है कि आप अपना स्टाक कम कीजिए। आपका [चरखेका] बक्सा आनेपर देखूँगा कि मैं क्या कर सकता हूँ।

नया चरखा अब मिल गया है। हालाँकि देखनेमें लगता है कि उसे पैक करनेमें असाधारण सावधानी बरती गई थी, लेकिन वह यहाँ टूटी हालतमें प्राप्त हुआ है। बिचले हिस्सेके दो टुकड़े हो गये है और 'स्टॉपर' भी क्षतिग्रस्त है। लेकिन मुझे

यह चरखा जाँचनेमें कोई कठिनाई नही हुई। हालांकि यह मूल चरखेसे बेहतर है लेकिन केशू द्वारा बनाये गये चरखेकी तुलनामें कम उतरता है। मै आजकल उसीका इस्तेमाल कर रहा हूँ। यह आपके भेजे चरखेसे कही ज्यादा मजबूत है। उसकी घुरी बक्सेसे बाहर नही निकली रहती। हत्था और लपेटनी धातुके बने है। तीलियाँ कही ज्यादा मजबूत हैं। हब (चक्रकी नाभि) भी धातुकी बनी हुई है। उससे काफी काम लिया गया है और यद्यपि उसके उपयोगमें बहुत सावधानी भी नही बरती गई है किन्तु वह अभीतक एक बार भी बिगड़ा नही है। अपने चरखेमें और सुधार करने या प्रस्तुत नमूनेको अन्तिम रूपसे स्वीकार करनेसे पहले आपको केशूका चरखा देख लेना चाहिए। क्या बक्सेवाले चरखेकी आपके यहाँ बहुत माँग है।

आपका स्वास्थ्य कैसा रहता है? क्या हृदय अब भी तकलीफ देता है?

आपने सूचना दी, उससे पहले ही मैं श्यामबाबूके बारेमें सुन चुका था। मैं चाहता हूँ कि वह अपने इस नये काममें लगे रह सकें तो अच्छा हो। क्या शरत्बाबूको अपनी पत्नीकी सहमति मिली? उन्होने काषाय तो धारण कर लिया अब और क्या करेंगे? मुझे तो आपका संन्यास ज्यादा पसन्द है।

यह बहुत सम्भव है कि मुझे दिल्ली जाना पड़े और लका-यात्रा कुछ दिनोंके लिए स्थगित करनी पड़े। मुझे आज या कलतक निश्चित रूपसे पता चल जायेगा।

क्या तारिणी पहलेसे बेहतर है? और लड़का कैसा है?

मुझे अभय आश्रमके बारेमें पूरा विवरण मिल गया था। उससे लगता है कि उनकी तरफसे कोई हमला नही हुआ और नकाबपोश बल्लमधारियोकी कहानी बिलकुल मनगढन्त है। इस प्रकारकी मनगढन्त बातें आज आम चीज हो गई है, उसी प्रकार जैसे युद्धके दौरान दोनो पक्षोकी ओरसे मनगढन्त प्रचार आम था।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

यह कैप्टेन पेटावलका पत्र और संलग्न सामग्री है। यह अपने ढंगका पहला नही है बल्कि बहुतसे पत्रोमें से एक है। मुझे याद है कि आपने उनकी संस्थाके बारेमें एक बार प्रतिकूल रिपोर्ट दी थी। अब वे डा० रायका प्रमाणपत्र लेकर आये है। इस बार मैंने उनसे कहा है कि वे आपसे मिलकर बात कर लें। उन्हे कुछ समय दे दीजिए, और अगर वे ठीक राहपर चल रहे हो तब तो ठीक है अन्यथा उन्हें उनकी गलती बता दीजिए।

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५७८) की फोटो-नकलसे।

११७. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२४ अक्टूबर, १९२७

प्रिय चार्ली,

आखिरकार मुझे तुम्हारे हाथसे लिखा एक पत्र प्राप्त हो गया।

मैं तुम्हें यह बताना तो भूल गया कि सर पुरुषोत्तमदासने मुझे एक पत्रमें लिखा था कि वह पूर्व आफ्रिका जानेके लिए समय नहीं निकाल सकते। उन्होंने सरोजिनी देवीका नाम सुझाया है। वैसे उन्हें भेजना अच्छा ही है। फिर भी इसके बारेमें सोचना और मुझे बताना कि तुम्हारा क्या सुझाव है।

कैप्टेन पेटावल अपनी योजनामें मेरा.सहयोग चाहनेके लिए मुझे पत्रपर-पत्र भेज रहे हैं। पता नहीं क्यों मेरे मनमें उनके प्रति भरोसा नही पैदा होता। तुमने मुझे उनके प्रति सचेत कर दिया है। अब वह चाहते हैं कि उनकी योजना और कार्यके सम्बन्धमें मुझे जानकारी देनेके लिए मैं किसीको नियुक्त करूँ। मजबूरीमें मैंने उनसे कह दिया है कि यह मामला मैंने तुम्हें और सतीश बाबूको सौंप दिया है। क्या तुम ऐसा कुछ कहना चाहोगे जिसे मैं उन्हें बता सकूं? उन्होंने अब डा० रायसे एक उत्साहवर्द्धक प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया है। उन्हें जितने अधिक प्रमाणपत्र मिलते जाते हैं, मेरा असन्तोष उतना ही बढ़ता जाता है।

गुजरातको ३० लाख रुपये सार्वजनिक चन्देसे नही मिले हैं बल्कि उसे सरकारने भारी रकम दी है। कलकत्तामें गुजरातियों द्वारा सारी रकम उड़ीसाको दे देनेका विचार मुझे अच्छा लगा। प्रश्न यह है कि तुम्हारे पास इस रकमके उपयोगके लिए भले और सक्षम पुरुष हैं भी कि नहीं। गुजरातमें लगभग १००० कार्यकर्ता संग्रहके काममें लगे हुए हैं।

अँगुलीकी तकलीफकी बात सुनकर मुझे काफी परेशानी हुई है। अँगुली न मुड़नेकी शिकायत तो एक नई बात हो गई। जब तुम मुझे इसके ठीक-ठाक होनेकी सूचना दोगे तब मैं चैनकी साँस लूँगा।

इस बातकी काफी सम्भावना है कि मैं कुछ दिनके लिए लंकाकी यात्रा स्थगित कर दूं और दिल्ली चला जाऊँ। कलतक मुझे निश्चित रूपसे पता चल जाना चाहिए।

हम सब लोगोंका प्रेम स्वीकार करो।

मोहन

[पुनश्च :]

सोराब भारतके लिए रवाना हो गया है। स्मारकके सम्बन्धमें मैं निश्चित रूपसे उससे बातचीत करूँगा। मैं तुम्हारी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि यदि रुस्तमजी जीवित होते तो वे सारी रकम भेज देते।

मोहन

अंग्रेजी (जी० एन० २६२३) की फोटो-नकलसे।

११८. पत्र : आर० पार्थसारथीको

२४ अक्टूबर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मुझे याद नही कि मैंने कभी मिलके कपड़ेको, विशेषकर विदेशी कपड़ेको खादीके साथ-साथ ही प्रदर्शित करनेकी बातका समर्थन किया हो। मैंने तो, यह जानते हुए भी कि प्रदर्शनीमें कही भारतीय मिलके कपड़े भी प्रदर्शित किये जायेंगे, अनिच्छापूर्वक बस इतनी बात मानी थी कि खादीका प्रदर्शन किसी अलग स्थानपर किया जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत आर० पार्थसारथी
१२, अरुंडेल स्ट्रीट
माइलापुर
मद्रास

अंग्रेजी (जी० एन० १०८४७) से।

११९. तार : वाइसरायको[1]

[२४ अक्टूबर, १९२७ या उसके पश्चात्]

वाइसराय महोदय
वाइसराय शिविर

आपका तार अभी प्राप्त हुआ। उसे देखते नियत समयपर सेवामें उपस्थित होनेकी आशा करता हूँ।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२८६६) की फोटो-नकलसे।

१. यह वाइसराय महोदयके २४ अक्टूबर, १९२७ के निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था: "मैं कुछ महत्त्वपूर्ण और फौरी मामलोंपर आपसे बात करनेको उत्सुक हूँ, और यदि आपके लिए सुविधा-जनक हो, और आप दिल्ली आकर मुझसे मिल सकें तो मुझे बहुत खुशी होगी। मेरे लिए सबसे सुविधा-जनक दिन बुधवार २ नवम्बर, साढ़े ग्यारह बजे होगा। मैं जानता हूँ कि मैं आपको बहुत कम अग्रिम सूचना दे रहा हूँ लेकिन मुझे आशा है कि उससे आपके लिए आ सकना असम्भव नहीं होगा। कृपया तार दें कि क्या उस तारीखको आप आ सकते हैं।"

१२०. पत्र : चंद त्यागीको

दीपावली [२५ अक्टूबर, १९२७][1]

भाई चंद,

आपका पत्र मीला है। चांद्रायणका व्रतके लीये अब तो खामोश रहीयो। आश्रममें आ गये यह जानकर मुझे आनंद हुआ है। क्या काम करते हो?

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ३२६९ की फोटो-नकलसे।

१२१. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मंगलवार, आश्विन वदी अमावस्या, दीपावली
[२५ अक्टूबर, १९२७][2]

बहनो,

तुम्हारा पत्र मिल गया। तुम घबराओ मत। सब शुद्ध हों तभी एक भी शुद्ध होगा, यह उलटी नीति मत ग्रहण करना। नियम यह है: एक शुद्ध हो जाये तो दूसरे होंगे ही। इस सम्बन्धमें हमारे यहाँ दो कहावतें हैं: (१) आप भला तो जग भला, (२) यथा पिंडे तथा ब्रह्माण्डे। अगर ऐसा न हो तो दुनियाके कल्याणकी कभी कोई आशा ही नहीं रखी जा सकती।

राम जगतकी लाज रखता है। सीता स्त्री-मात्रके लिए आधार है। इसलिए निराश न होकर सब शुद्ध बननेके लिए मेहनत करोगी और अपने कर्तव्यमें परायण रहोगी तो तुम देखोगी कि सब ठीक हो जायेगा। 'हारना' शब्द हमारे शब्दकोशमें हो ही नही सकता।

देखना है, तुमने नये वर्षमें कैसे नये निश्चय किये हैं। जो न बोले उसे बुल-वाना; जो न आये उसके घर जाना; जो रूठे उसे मनाना और यह सब उसके भलेके लिए नही, परन्तु अपने भलेके लिए करना। जगत लेनदार है और हम उसके कर्जदार।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७२) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजीने पहले चंद त्यागीको आश्रम जानेको कहा था; देखिए खण्ड ३३, पृष्ठ १८५।

२. पत्रमें आश्रमकी बहनोंको अपने लड़ाई-झगड़े दूर करनेकी सलाह दी गई है, वर्षका निश्चय उसीके आधारपर किया गया है। देखिए "पत्र : आश्रमकी बहनोंको", १७-१०-१९२७।

१२२. भाषण: कालीकटकी सार्वजनिक सभामें

२५ अक्टूबर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको इन सब अभिनन्दनपत्रो, इन थैलियो, सूत और पुस्तकोके उपहारो तथा घडीके लिए धन्यवाद देता हूँ। मैं इन चीजोको आपकी स्वीकृतिके लिए पेश करूँगा और इन्हें नकदीमें बदल लूँगा। और यहाँ एक मित्रने मुझे अभी-अभी रवीन्द्रनाथ ठाकुर लिखित 'साधना'की एक प्रति भेजी है। यह मित्र एक छात्र है और वह कहता है: "इस पुस्तकको अर्थात् ठाकुरकी 'साधना'को भेंट करनेमें मेरा एकमात्र उद्देश्य यह है कि आप उसे नीलाम कर दें और उससे जो धन मिले उसे छात्रो द्वारा दी गई थैलीमें जोड़ ले।"

मुझे बहुत साल पहलेका वह समय याद आता है जब मुझे अपने मित्र और भाई मौलाना शौकत अलीके साथ इसी सुन्दर समुद्र तटपर इसी प्रकारकी एक सभामें बोलनेका सौभाग्य मिला था। तबसे आजतक देशमें कई परिवर्तन और गम्भीर घटनाएँ हो चुकी है। हम यह भी जानते है कि इस समय उत्तरमें क्षितिज बहुत काला दिखाई पड़ रहा है। लेकिन यदि मै क्षितिजके कालेपनके बावजूद अपना यह विश्वास घोषित न करूँ कि मेरी नजरमें इस देशमें हिन्दुओ और मुसलमानोंके लिए सगे भाइयोकी तरह रहना जरूरी है और सम्भव है, तो मैं स्वय अपने प्रति और देशके प्रति अपने कर्त्तव्यके पालनमें झूठा ठहरूँगा। यह तो केवल ईश्वर ही जानता है कि तब यह अत्यन्त वांछनीय एकता किस प्रकार आयेगी। लेकिन हम जानते हैं कि ईश्वर अकसर ही मनुष्यकी योजनाओको गड़बड़ करके कुछ ऐसा घटित कर देता है जिसके लिए मनुष्य बिलकुल तैयार नही होता। और जिन लोगोको अपने देशका कल्याण इष्ट है, उनसे मै कहूँगा कि वे भी मेरी तरह ऐसा ही जीवन्त विश्वास रखें। और इसपर से मुझे उस विलक्षण पत्रका स्मरण हो आया है जो आज तीसरे पहर मेरे हाथोमें दिया गया था। मै अभीतक नही जान सका हूँ कि उस पत्रका लेखक कौन है। मै स्वयं उस लम्बे पत्रको पूरा नही पढ सका, लेकिन मैंने एक मित्रसे कहा कि वे उसे पढ़ कर उसका सार मुझे बता दें। और उस पत्रका सार यह है है। पत्रलेखक कहता है, "मुसलमानो और ईसाइयोंसे आपकी खातिर गायकी रक्षा करनेके लिए जो आप कहते है, वह बड़ा अच्छा है।" लेकिन वह आगे कहता है, "आप हिन्दुओका क्या कर रहे हैं जो धर्मके पवित्र नामपर दिनो-दिन और सालों-साल निर्दोष पशुओ और पक्षियोको मारते जा रहे है?" यह फटकार बिलकुल ठीक है। मुझे पता नही कि भारतके इस भागमें ईश्वरके नामपर निर्दोष पशुओ और पक्षियोकी बलि देनेकी यह बुरी प्रथा कितनी प्रचलित है। पत्रलेखकको इन चीजोंके बारेमें मेरी भावनाओका कुछ पता नही है। जहाँ भी मैंने यह बुराई देखी है वही मैंने इसकी भर्त्सना करनेमें न अपनेको बख्शा है और न अपने सुननेवालोको बख्शा

है। मैं जानता हूँ कि सर्वशक्तिमानके नामपर पशुओं और पक्षियोंकी वलि देनेकी प्रथा एक पापपूर्ण अन्धविश्वास है। और अब समय आ गया है कि ऐसे हिन्दू, वे जहाँ भी हों, यह पापपूर्ण कर्म बन्द कर दें। मैं उस हर आन्दोलनके साथ हूँ जिसका उद्देश्य इस अमानुषिक प्रथाको बन्द कराना है। मुझे इस जानकारीसे सन्तोष मिलता है कि यह प्रथा इस देशमें बढ़ नहीं रही है, बल्कि दिनोंदिन बदनाम होती जाती है। अभी हाल ही में त्रावणकोरकी राजमाताने इस प्रकारकी सभी बलियोंको निषिद्ध कर दिया है, और जो चीज राजमाताने राजाज्ञा निकाल कर की है, वही चीज आप देशके इस भागमें इस प्रथाके विरुद्ध लोकमत तैयार करके कर सकते हैं।

लेकिन अब मैं अपने भाषणमें मुझे जिन अन्य विषयोंकी चर्चा करनी है उनपर आऊँ। मुझे खुशी है कि छात्रोंने एक अभिनन्दनपत्र दिया है। उनका मुझे अभिनन्दनपत्र देना कोई नई बात नही है। सारे भारत-भरमें छात्र-जगत्का विश्वास और मैत्री पानेका मेरा सौभाग्य रहा है। लेकिन मैं इस अभिनन्दनपत्रके ऊपर अपनी खुशी इसलिए जाहिर कर रहा हूँ क्योंकि इसमें खादीके बारेमें एक वादा किया गया है। छात्रोंने अपने अभिनन्दनपत्रमें पूरी गम्भीरतापूर्वक यह वचन दिया है कि वे अब आगेसे खादीको छोड़ और कुछ न पहनेंगे। मैं छात्रोंको इस बातकी याद दिलाना चाहता हूँ कि वचन एक बहुत पवित्र वस्तु है। हमारे देशमें और अन्य देशोंमें भी कसर विशेष रूपसे उत्साही छात्रों द्वारा तरह-तरहके वादे कर लेनेका चलन है। वचन देनेकी यह आदत, अगर उसके साथ ही उस वचनको हर कीमतपर निभानेका संकल्प भी न हो, तो वास्तवमें एक बुरी आदत है। यदि मेरी याददाश्त ठीक है तो शायद मुझे कालीकटके एक शिक्षकका करुण पत्र मिला था जिसमें मुझसे छात्र-जगत्के सामने बोलने और उनकी कुछ कमजोरियोंपर जोर देनेको कहा गया था। संसार-भरके शिक्षा-शास्त्री दिनोंदिन इस बातको महसूस कर रहे हैं कि कोरी किताबी शिक्षा, जबतक वह चरित्रकी ठोस बुनियादपर न टिकी हुई हो, सर्वथा व्यर्थ होती है; यही नही, बल्कि ऐसी शिक्षा एक हानिकारक उपलब्धि है। और चरित्र-निर्माणका आरम्भ सत्यका पूर्ण पालन करनेसे होता है। और जो वचन एक बार दे दिया गया, उसका पालन न करना सत्यसे दूर हटना है। बिना सोचे-विचारे और जल्दीमें वचन न देना कोई बुरी चीज नही है। लेकिन एक बार वचन दे देनेके बाद उस वचनको निभाना और उसे पूरा करना सर्वथा आवश्यक है, भले ही इसमें प्राण ही क्यों न चले जायें। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि वादा करनेके बाद छात्र लोग अब उसे निभायेंगे।

लेकिन और भी चीजें है जिनकी ओर इस पत्रमें मेरा ध्यान आकृष्ट किया गया था। उसमें कहा गया था कि छात्र लोग बिना सोचे-विचारे गलत दिशामें बह रहे है और ऐसी चीजें कर रहे है जिन्हें यदि उनपर गहरा विचार न किया जाये तो मामूली बुराइयाँ ही माना जायेगा। मेरा ध्यान छात्रोंमें बढ़ती हुई धूम्रपान करनेकी और बहुत ज्यादा चाय या कहवा पीनेकी आदतकी ओर खींचा गया था। ये चीजें तुच्छ प्रतीत हो सकती है, लेकिन मैं अनेक छात्रोंके अनुभवोंसे जानता हूँ कि ये

किसी भी सूरतमें तुच्छ नही हैं। यह आत्म-संयमकी कमीका लक्षण है। और आत्म-संयमका यह अभाव भारत-भरमें छात्रोंके शारीरिक स्वास्थ्यको नष्ट कर रहा है। इसलिए मैं छात्रोसे आग्रह करता हूँ कि मैंने जो-कुछ कहा है उसपर भली प्रकार सोचें और अपने जीवनको नये सिरेसे ढालें। हिन्दू धारणाके अनुसार विद्यार्थी जबतक विद्याध्ययन करता है तबतक उसे ब्रह्मचारी रहना चाहिए। यदि कोई विद्यार्थी शरीर और मन, दोनों ही मामलोमें आत्म-सयम बरतना चाहता है तो उसके लिए उन सभी चीजोका त्याग आवश्यक है जो अनावश्यक हैं।

अब दूसरे अभिनन्दनपत्रोकी बात करूँ। प्रत्येक अभिनन्दनपत्रमें चरखेके सन्देशका उत्साहपूर्ण समर्थन हुआ देखकर मुझे खुशी है। इसमें कोई सन्देह नही है कि हाथ-कते सूतके कपड़ोको छोड़कर हमने भारतकी मानवताके प्रति अपराध किया है, और ऐसा लगता है कि इस मामलेमें कालीकट सबसे पहला अपराधी था क्योकि मैं समझता हूँ कि इसका नाम कालीकट इसलिए पड़ा क्योकि यह पहला बन्दरगाह था जहाँ बाहरसे कैलिको (सूती वस्त्र) का आयात किया गया। लेकिन अब मैं खादीकी शक्तिमें आपका विश्वास देखता हूँ, और चूँकि आपने स्वय मुझे बताया है कि कालीकट खुद तो एक समृद्ध नगर है, लेकिन इसके चारों ओरका प्रदेश गरीबीसे कराह रहा है, इसलिए अब आपके लिए यही शोभनीय है कि जिस बुराईकी शुरूआत कालीकटने की थी, उस बुराईको आप दूर कर दें। और यदि आप अपने अभिनन्दनपत्रोमें कही गई बातोंके प्रति सच्चे हैं तो मैंने जो बात छात्रोसे कही है वही आपसे भी कहूँगा कि आप सब लोग विदेशी कपड़ेका त्याग कर दें और खादीको अपनायें। लेकिन यह भी काफी नहीं है। आपको इस स्थानपर खादीके संगठन और उत्पादन कार्यमें अपनी प्रतिभा लगानी है। छात्रो समेत आप नागरिकगण यह काम स्वयं यज्ञकी भावनासे सूत कातकर कर सकते हैं। और इस प्रकार कताईका वातावरण पैदा करनेके बाद आप कताईका सन्देश अपने चारो ओरके गाँवोंमें ले जाइए और गाँववालोसे यह अपेक्षा कीजिए कि वे समस्त मलाबारके लिए पर्याप्त सूत कातें। यदि आप ऐसा करेगे तो देखेंगे कि आप देशके धनमें प्रतिव्यक्ति ४ रुपये प्रतिवर्षकी वृद्धि कर सकते हैं, और यह आप बिना किसी लाभदायक धन्धेको हटाये या बिना अपने समयका ऐसा एक मिनट भी खोये कर सकेंगे जिसका उपयोग आप अन्यथा किसी उपयोगी काममें करते। कर्त्तव्यका तकाजा है कि हमारे पूर्वजोने जो पाप किया था, उसका हम यह प्रायश्चित्त करें।

फिर, अस्पृश्यताकी महान बुराई भी देशके इस भागमें गहरी जड़ें किये हुए है। अनुपगम्यता और अदर्शनीयताके रूपमें, यहाँ वह और अधिक तीव्र रूपमें दिखाई देती है। हम हिन्दू लोग जितनी जल्दी इस बुराईसे मुक्ति पा जायें उतना ही हमारे लिए और हिन्दू-धर्मके लिए अच्छा है।

मद्यपानकी बुराई देशके गरीब लोगोका पौरुष क्षीण कर रही है। यदि हम देशके गरीबसे-गरीब लोगोंके प्रति हमदर्दी रखते हैं तो हमारे लिए उचित है कि हम उनके बीच काम करें और उन्हे इस बुरी लतसे दूर करें। और आपको तबतक सन्तोष नही करना चाहिए जबतक आप देशमें पूर्ण मद्यनिषेध लागू न करा लें।

कुछ अन्य बातें भी है जिनके बारेमें मैं अन्य सभाओंमें बोलता रहा हूँ। वे बातें महत्त्वपूर्ण है लेकिन उनमें मैं आपका समय नष्ट नही करना चाहता। लेकिन मैं आपके साथ कुछ और सौदा करना चाहता हूँ। मुझे यहाँ स्त्रियोसे कुछ जेवर मिले है। मेरे पास हाथसे तैयार की गई खादीका एक टुकड़ा है जो मेरी रायमें सुन्दर है और जो मुझे शबरी-आश्रममें दिया गया था। इस आश्रमको आपमें से बहुतसे लोग जानते होंगे या उन्हें जानना चाहिए। यह आश्रम चुपचाप खादीका कार्य कर रहा है और अस्पृश्योके बीच काम कर रहा है। मै चाहूँगा कि आप उसके कार्यको देखें और यदि वह आपको पसन्द आये तो आप आश्रमकी सहायता करें। यह खादीका टुकड़ा जिस सूतसे बना है उसे एक ब्राह्मण, दो नायर, तीन पुलाया और चार थिया व्यक्तियोने काता है। इसे बुना भी आश्रमके बालकोंने ही है। इस तरह उसके पीछे एक रंजक इतिहास है।

मै आपका ध्यान इस पुस्तककी[1] ओर तो पहले ही दिला चुका हूँ और एक मित्रके द्वारा भेंट की गयी ये सारी पुस्तकें भी बहुत उपयोगी है। और यदि आपमें मेरे साथ यहाँ थोड़ी देर और रुकनेका धीरज है और यदि आप इन चीजोंके लिए बोली बोलेंगे तो स्वभावतः इसमें थोड़ा समय लगेगा। महिलाओंकी सभामें एक महिलाने मुझे एक बहुत सुन्दर अलार्म घड़ी दी थी। इसमें एक बार चाबी भरनेसे यह आठ दिन चलती है और यह बिलकुल दुरुस्त हालतमें है। और यह एक कलाई घड़ी और कुछ अँगूठियाँ हैं जिनमें से एक सुन्दर है। और फिर ये चौखटे है जिनके बारेमें सभी जानते हैं कि सभामें उनके खरीदे जानेकी उम्मीद है। मै इन्ही चौखटोंसे आरम्भ करता हूँ। मेरे पास इन सभी अभिनन्दनपत्रोंकी प्रतियाँ है जो मैंने पहले ही प्राप्त कर ली थीं। अब हम शुरू कर सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २७-१०-१९२७

१२३. तार: विट्ठलभाई झ० पटेलको

२६ अक्टूबर, १९२७

मंगलोरसे बोट द्वारा उन्तीसको बम्बई पहुँच रहा हूँ। तीसको बड़ौदासे आपको ले लूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]
विट्ठलभाई पटेल, लाइफ एँड टाइम्स, खण्ड २

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा लिखित साधना नामक पुस्तक।
२. वाइसरायसे भेंटके लिए दिल्ली जाते हुए।

१२४. भाषण : आदि-द्रविड़ोंके समक्ष, कालीकटमें

२६ अक्टूबर, १९२७

प्रिय मित्रो,

आपके बीच आकर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हुई है। मुझे इस बातकी भी खुशी है कि आप सब ठीक मेरे सामने बैठे है जिससे मैं आप सबको अच्छी तरह देख सकता हूँ।

मुझे यहाँ ये अलग-अलग विभाग देखकर कुछ दुख होता है। लेकिन शायद यह अनिवार्य था — मेरी सहूलियतके लिए अनिवार्य था। मैंने अन्य जगहोकी तरह यहाँ भी आपको और बड़ी संख्यामें देखनेकी आशा की थी।

मैंने आपका पूरा अभिनन्दनपत्र पढ़ लिया है क्योंकि मेरे पास उसका एक अनुवाद मौजूद है। आप यह नही चाहते कि मैं आपको आश्वासन दूँ कि मेरा दिल आपके साथ है। अगर कहने-भरसे मैं आपमें से एक बन सकूँ तो मैं तो अपनेको नायडी कह ही चुका हूँ। लेकिन मैं जानता हूँ कि इस समय इस तरहकी घोषणाएँ करना शायद धृष्टता है। अभीतक मैं एक भी नायडीके सम्पर्कमें नही आया हूँ। एक बार सिर्फ एक ही बार मैंने एक नायडीको देखा अवश्य था लेकिन उस समय भी उसके स्पर्शका लाभ मैं नही पा सका। क्योंकि हम दोनोके बीचमें एक खौफनाक बाड़ थी। मैं उसे बाड़का चक्कर लगाकर सड़कपर आनेके लिए राजी नही कर सका जहाँ मैं और मेरे मित्र खडे थे, और मैंने उस समय अपने-आपको यह कहकर आश्वस्त कर दिया कि मेरे पास बाड़का चक्कर लगाकर उस नायडी मित्रके पास तक जानेका समय नही है। इसलिए यदि उपस्थित श्रोता-समुदायमें से या और कही कोई मुझपर थोथी बातें करनेका आरोप लगायें तो मैं अपनेको अपराधी मान लूँगा। लेकिन अपना अपराध स्वीकार करनेके साथ ही साथ मै बेहिचक यह भी घोषित करूँगा कि नायडी लोगोंके लिए और आप लोगोंके लिए मेरा मन उतना ही व्यथित होता है जितना कि दुनियामें किसीका भी हो सकता है। मुझे भय है कि यह लम्बा अभिनन्दनपत्र आप नही समझ सके है, और न इसे आपको समझाया ही गया है। इसलिए मैं आपको बताऊँगा कि इस अभिनन्दनपत्रमें क्या कहा गया है। उसका सार यह है कि जिन लोगोंको अस्पृश्य, अनुपगम्य और अदर्शनीय कहा जाता है उनके साथ उनके जन्म-स्थानमें ही न केवल समाजसे बहिष्कृत लोगोंकी तरह बल्कि दासोकी तरह व्यवहार किया जाता है। वे निर्जीव सम्पत्तिकी तरह है जिसे बेचा और खरीदा जाता है। उसमें कहा गया है कि आप लोगोंको सड़कोको इस्तेमाल करनेका वह अधिकार भी नही है जो संसारके किसी भी भागमें मनुष्यको प्राप्त होना चाहिए, और कालीकटके एक म्युनिसिपल स्कूलमें एक लड़कीको दाखिला दिलानेमें आपको जो सफलता मिली उसके लिए आपको बहुत कठिनाइयाँ उठानी पड़ी। मैं नही जानता कि यह

अन्तिम आरोप, जिसमें एक विशिष्ट घटनाका उल्लेख है, कितना सच है। लेकिन मैं यह जानता हूँ कि आपके अभिनन्दनपत्रमें कही गई बातें मोटे तौरपर सच हैं। और ये बातें सच हैं क्योंकि हम लोग भी, जो यहाँ एकत्र हुए हैं और आपका मुझे अभिनन्दनपत्र देना तथा मेरा भाषण करना देख रहे हैं, आपके हितोंकी उपेक्षा करते रहे हैं और कर रहे हैं। यदि हम लोग, जो अपनेको गलत तौरपर स्पृश्य कहते हैं, आपके लिए सगे भाइयोंकी तरह हमदर्दी महसूस करते तो इस प्रकारकी चीजें एक दिन भी नही टिक सकती थीं। लेकिन निराशाके काले बादलोंमें भी आशाकी रजत-रेखा मौजूद है। हिन्दुओंकी आत्मा छटपटा उठी है और इस समय सारे भारत-भरमें आपके प्रति किये गये भयंकर अन्यायोंका थोड़ा प्रायश्चित्त करनेका एक जबर्दस्त आन्दोलन चल रहा है। बहुतसे भारतीय जिन्हें महान व्यक्तियोंके रूपमें जाना-माना जाता है, आज इस मामलेमें दिलचस्पी ले रहे हैं। इसलिए मेरे मनमें कोई सन्देह नही है कि वह समय शीघ्र आ रहा है जब ये सब निर्योग्यताएँ बिलकुल समाप्त हो जायेंगी। और मुझे इसमें भी सन्देह नही है कि यदि ये निर्योग्यताएँ हिन्दुओं द्वारा किये गये त्याग और प्रायश्चित्तके फलस्वरूप दूर नहीं हुई तो स्वयं हिन्दू-धर्म समाप्त हो जायेगा।

आपने अभिनन्दनपत्रमें सुझाव दिया है या आपकी तरफसे यह सुझाव दिया गया है कि सर्वत्र ऐसी संस्थाएँ स्थापित की जानी चाहिए जिनमें आपके बच्चोंको वहीं रहकर प्रशिक्षण प्राप्त करनेकी व्यवस्था हो। निःसन्देह यह विचार सराहनीय है। स्वयं आपने श्री केलप्पन नायरका नाम लिया है। वह ऐसी एक संस्था चला रहे हैं। यहाँसे कुछ ही दूर शबरी-आश्रम भी है। लेकिन मैं यह जानता हूँ कि आपकी आवश्यकताओंके लिहाजसे ये बिलकुल नाकाफी हैं। और मैं आपको तथा उपस्थित लोगोंमें से प्रत्येकको बताना चाहता हूँ कि यदि और संस्थाएँ स्थापित नही हुई हैं तो इसका कारण धनका अभाव नही है बल्कि कार्यकर्त्ताओंका अभाव है। आज भारतमें ऐसे बहुतसे हिन्दू हैं जिन्हें यदि यह विश्वास दिलाया जा सके कि इस कामको करनेके लिए ईमानदार, उद्यमशील, आत्मत्यागी और होशियार कार्यकर्त्ता मौजूद हैं तो वे जितने धनकी जरूरत हो उतना धन देनेको तैयार हैं। लेकिन सवर्ण हिन्दुओंके लिए यह लज्जाकी बात है कि इस कामके लिए ऊपर बताये गये ढंगके कार्यकर्त्ताओंकी संख्या ज्यादा नही है, और मैं यह भी जानता हूँ कि स्थानीय लोगोंके पास इस कामके लिए पर्याप्त पैसा भी नहीं है। इस कामके लिए भी आवश्यक धन-का सबसे बड़ा हिस्सा उत्तर भारतसे आता है। ऐसा नही होना चाहिए, और सुधारका यह आन्दोलन, जो हिन्दू-धर्ममें कबका हो जाना चाहिए था, भारत-भरमें वास्तवमें फैल जाये, इसके लिए यह जरूरी है कि हर जगह हिन्दू लोग आगे आयें और स्थानीय तौरपर धन और कार्यकर्त्ता जुटाकर इस सुधारको संगठित करें। और इसके लिए मैं एक ठोस सुझाव देना चाहता हूँ। मेरी अपेक्षाके विपरीत, यह सभा आदि-द्रविड़ोंकी कम, सवर्ण हिन्दुओं तथा अन्य लोगोंकी ज्यादा है। इसलिए सभाके अन्तमें मेरा विचार खादी-कोषके लिए नही, बल्कि इस प्रकारके कामके लिए

आप लोगोंसे धनकी अपील करनेका है। और मैं उसमें प्राप्त धनका उपयोग केरलमें किये जानेवाले कार्यके लिए एक और बड़ा कोष स्थापित करनेकी दृष्टिसे करूँगा। इस सभामें जो-कुछ प्राप्त होगा उसे मैं अपने पास रखूँगा ताकि उसे यहाँ स्थानीय तौरपर बनाई जानेवाली एक समितिको सौंपा जा सके, क्योंकि मुझे लगता है कि इस ढंगके कामके लिए हमेशा उत्तर भारतसे पैसा आये, यह ठीक नहीं है। उस प्रकार किये गये कामको वास्तवमें ठोस काम नहीं समझा जा सकता। जरूरत इस बातकी है कि हर हिन्दू इस अन्यायको मिटानेके लिए काम करे और कमसे-कम इस कामके लिए हर महीने या हर साल कुछ धन देकर जो हानि हुई है उसकी क्षति-पूर्ति करे। और मैं आपको यह विश्वास दिला सकता हूँ कि अभी आप जो धन चन्देमें देंगे उसे मैं तबतक अपने पास रखूँगा जबतक मैं यह नहीं देख लेता कि एक समुचित समितिकी स्थापना हो गई है, उसके पास कुछ अपना कोष हो गया है और वह कार्य करने लगी है।

यह तो रहा वह काम जो सवर्ण हिन्दुओंको करना है। लेकिन आपने बिलकुल उचित ही कहा है अथवा आपकी ओरसे इस अभिनन्दनपत्रमें बिलकुल उचित ही कहा गया है कि अन्ततः मुक्ति तो आपके अपने प्रयासोंसे ही आयेगी। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि आप अपनी शक्तिका अनुभव आज कर ले तो आप आज ही अपनेको स्वतन्त्र कर सकते हैं। लेकिन इस अभिनन्दनपत्रमें कहा गया है, और ठीक ही कहा गया है कि इस समय आपके लिए अपने अन्दर उस शक्तिका अनुभव कर सकना आपकी सामर्थ्यके बाहरकी बात है। लेकिन कुछ चीजें है जो आप फौरन कर सकते हैं। यदि आप शराब पीते है तो आपको शराब छोड देनी चाहिए। यदि आप सिगरेट पीते है तो आपको सिगरेट छोड़ देनी चाहिए। यदि आप मुर्दा जानवरोंका मांस खाते है तो आपको वह भी छोड़ देना चाहिए। कोई हिन्दू गायका वध करे या गोमांस खाये, इसे आप असह्य समझते है न? इसका निषेध प्रत्येक हिन्दूके लिए बहुत कड़ाईसे किया गया है। और मेरी अपनी नम्र रायमें गो-वध करने या गो-मास खानेके निषेधके पीछे एक बहुत गहरा अर्थ छिपा है जो ऊपरसे दिखाई नहीं पड़ता। इसलिए मैं चाहूँगा कि आप इस आदतका त्याग कर दें। मैंने अभी अपने मेजबानसे सुना है कि आपमें से बहुत-से लोग गो-मांस खाना छोड़ रहे है। मुझे यह सुनकर बहुत खुशी है। आप गो-मांस खाते रहे है, ऐसा सोचनेके लिए भी मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ। लेकिन आपको याद होगा कि मैंने 'यदि' लगाकर बात कही थी। मैं जानता हूँ कि दक्षिण भारतके अन्य हिस्सोंमें आदि-द्रविड़ लोग गो-मांस खाते हैं। और यदि आप थोड़ा-थोड़ा करके आत्म-शुद्धिका यह सिलसिला जारी रखेंगे, तो आप अपनेमें क्रमिक विकास होते देखेंगे, और आपमें आत्म-विश्वास भी उत्पन्न होगा।

अब मेरा इरादा आपसे कुछ और कहनेका नहीं है क्योंकि मैं वह काम करना चाहता हूँ जो मैंने अपने लिए निश्चित किया है। लेकिन मैं आशा करूँगा कि चूँकि आप यहाँ लाये गये है या स्वयं आये है, अतः जिन लोगोंने सभा आयोजित की है

वे मेरी बातोंको और विस्तारसे आपको समझायेंगे, और आप लोग खुद अपने सम्बन्धियों या परिचितोंके बीचमें जायेंगे और उनतक मेरा सन्देश पहुँचायेंगे।

अब मैं चन्दा एकत्र करनेवालोंको इस सभामें भेजूं, इससे पहले मैं चाहूँगा कि प्रमुख-प्रमुख लोग यदि उनकी जेबोंमें पर्याप्त धन न हो तो अपना-अपना चन्दा घोषित कर दें। जितना देनेकी वे घोषणा करेंगे, मैं आशा करूँगा कि वह रकम मुझे मंगलोर छोड़नेसे पहले दे दी जायेगी। मैं चन्दा जमा करने और चन्देका काम संगठित करनेका विशेषज्ञ हूँ, और मैं जानता हूँ कि चन्देके मामलेमें कुछ घंटेसे ज्यादा वक्तकी मोहलत देना बहुत ही खतरनाक चीज है। मैं प्रेमके दबावके अतिरिक्त अन्य किसी प्रकारका दबाव नहीं डालना चाहता। लेकिन मैंने आपके सामने जो भाषण दिया है यदि आप उसके महत्त्वको महसूस करते हैं तो मैं नहीं चाहता कि आप कंजूसीके साथ कुछ दें। मैं चाहता हूँ कि इसे आप अपना काम समझें। अब मैं चन्दा जमा करनेका काम आपके हाथोंमें छोड़ता हूँ।

इसके बाद लगभग ३८० रुपयेके चन्दे घोषित किये गये और वहींके वहीं दे दिये गये। चन्देका काम चल रहा था उसी समय महात्माजीको एक पत्र दिया गया जिसे उन्होंने पढ़कर सुनाया। पत्र इस प्रकार था:

> इस माहकी ५ तारीखको मुझे जिला स्काउट मास्टर और ब्वाय स्काउट्स एसोसिएशनके प्रान्तीय संगठन मन्त्रीके साथ एक वकीलके घर जानेका मौका आया। इन महाशयके मुख्तारने हमारा स्वागत किया और बरामदेमें बिठाया। बादमें वकीलको हमारा परिचय-पत्र भेजा गया। उनका मुख्तार बाहर आया और मुझसे कहा कि चूंकि नामसे मैं एक अनुपगम्य प्रतीत होता हूँ इसलिए मैं बाहर सहनमें खड़ा हो जाऊँ। आत्म-सम्मानवश मैं वहाँसे चला आया। मैं इस अवसरपर उन उच्च शिक्षा प्राप्त ब्राह्मण सज्जनकी आलोचना करके आपका मूल्यवान समय नष्ट नहीं करना चाहता। निश्चय ही आपको यह जानकर कष्ट होगा कि जिस वकीलकी चर्चा मैंने की है वह इस जिलेके सर्वोत्तम ब्राह्मणोंमें से भी एक हैं। इस दृष्टान्तसे आप देख सकेंगे कि भारतके इस भागमें अस्पृश्यताकी बुराई कितनी गहरी जमी हुई है।

महात्माजीने सावधानीपूर्वक पत्रमें उल्लिखित सभी नामोंको छोड़ दिया, और कहा:

अवश्य यह एक शर्मनाक चीज है। मेरा विश्वास है कि यह घटना जरूर हुई होगी क्योंकि मैं खुद जानता हूँ, और इस प्रकारकी घटनाएँ अन्यत्र भी हुई हैं। निश्चय ही यह सराहनीय बात नहीं है। लेकिन आइए, हम उन लोगोंके लिए कुछ प्रायश्चित्त करें जो अनुपगम्यताको अभी भी संरक्षण दे रहे हैं। कोई अन्धविश्वासी व्यक्ति ऐसा करे तो मैं समझ सकता हूँ; लेकिन यह बात मेरी समझमें नहीं आती कि एक ऐसा व्यक्ति, जिसने कालेजकी शिक्षा — वह जैसी भी हो — पाई है, वकील बन गया है, वकालत कर रहा है, और इसके बावजूद — मैं क्या कहूँ?

जो इतना दुस्साहसी या अज्ञानी है, अथवा आप जो शब्द चाहें इस्तेमाल करें — वह एक ऐसे व्यक्तिको अपने यहाँसे निकाल दे जो ऊपरसे नीचेतक एक सज्जन पुरुष है। ऐसी घटनाएँ होनी नही चाहिए। तथापि, मैंने अपनी अपीलको और ज्यादा प्रभावकारी बनानेके लिए आपके सामने इस घटनाका उल्लेख किया है।

मेरा सुझाव अब यह है कि इस सभाके संयोजक लोग अब निष्क्रिय नही बैठेंगे बल्कि आज ही से काममें जुट जायेंगे और नामके लिए ही नही, बल्कि काम करनेके लिए और ठोस काम करनेके लिए एक समिति बनायेंगे। समितिके सदस्योंके नाम मुझे भेजिए। मै आज मंगलोर जा रहा हूँ, और फिर मै लंका जानेकी आशा कर रहा था किन्तु मै अभी वहाँ नही जा सकूंगा और न जैसी कि मुझे उम्मीद थी, मगलोरको चार दिन दे सकूंगा। वाइसरायका एक फौरी निमन्त्रण पाकर मुझे लंकाकी यात्रा स्थगित करनी पड़ रही है और मै मंगलोरसे दिल्ली जाऊँगा। उन्होने जैसा कि अपने तारमें कहा है, वे चाहते है कि "फौरी और महत्त्वपूर्ण मामले" के सिलसिलेमें मैं दिल्ली जाऊँ। वहाँसे मै यथाशीघ्र लौटने और फिर लंका जानेकी आशा करता हूँ। लेकिन आप मुझसे दिल्लीमें पत्रव्यवहार कर सकते है जहाँ मै ३१ तारीखको पहुँचनेकी उम्मीद करता हूँ और मै वहाँ तीन दिन रहूँगा। मै यह सुझाव इसलिए दे रहा हूँ ताकि आप समय बिलकुल न खोयें। मै चाहता हूँ कि यह समिति एक ठोस समिति हो, और इस समितिको यह बात अपने सम्मानका विषय बना लेनी चाहिए कि वह इस कामके लिए आवश्यक धनकी एक-एक पाई मलाबारमें ही इकट्ठा करे। मै अब मलाबारके बारेमें काफी कुछ जानता हूँ। मै जानता हूँ कि मलाबारमें आपके इस शुद्धीकरण आन्दोलनका आर्थिक बोझ उठानेकी क्षमता है।

और इतना कहनेके बाद अब मैं एक दूसरी बात कहना चाहता हूँ। वह अस्पृश्यताके सम्बन्धमें नही है। लेकिन मेरे सामने बैठे इन मित्रोंको उसका ध्यान दिलाये बगैर शायद मै सभा छोड़ भी नही सकता। एक भी स्त्री या पुरुष जो यहाँ जन्म लेनेके कारण या यहाँ बस जानेके कारण भारतको अपना देश समझता है, खादीकी उपेक्षा करके देशके अत्यन्त गरीब लोगोकी उपेक्षा कर रहा है; मुझे यह देखकर अवश्य ही गहरी चोट पहुँचती है। हमारे देशमें करोड़ों लोग है जो अस्पृश्य नही कहलाते, लेकिन जो निरन्तर भूखसे पीडित रहनेके कारण अस्पृश्य बन गये है। वे अस्पृश्य बन गये है क्योकि उनके पास कोई नही जाता। उनकी बात कोई सोचता ही नही। किसीको चिन्ता नही कि वे जी रहे है या मर रहे हैं। जंगली तथा अन्य पशु किसी-न-किसी प्रकार कमसे-कम अपना भोजन प्राप्त कर लेते है लेकिन ये लोग भूख-पीडित होनेके कारण पशुओंसे भी गये-बीते हो गये है। मै चाहता हूँ कि आप उनकी बात सोचें और उनके नामपर तथा उनके वास्ते खादीको छोड़कर अन्य किसी कपड़ेको खरीदनेमें एक रुपया भी न खर्च करें क्योकि याद रखिए कि इस प्रकार खर्च किये गये प्रत्येक रुपयेका अर्थ है १६ स्त्रियोंके लिए एक दिनका भोजन।

और फिर मै आपसे प्रतिदिन थोड़ी कताई करनेके लिए कहना चाहता हूँ। यदि आप कताई नही जानते तो आपको सीख लेनी चाहिए। आप अपने ही काते सूतसे कपड़ा बुनवा सकते है। मै आपको सूचित करना चाहता हूँ कि सैकड़ों, शायद हजारों,

लेकिन हजारोंकी संख्याकी शायद मैं पुष्टि न कर पाऊँ, लेकिन सैकड़ों तथाकथित अस्पृश्योंका चरखेके जरिये उद्धार किया गया है। भारतके उत्तरी भागोंमे बहुत-से अस्पृश्य बुनकर थे। लेकिन वे कोई बारीक कपड़ा या डिजाइनदार कपड़ा नहीं, सादा और मोटा कपड़ा बुनते थे, और जब मैनचेस्टरका बना कपड़ा आया तो उन्होंने बुनाई-का काम बन्द कर दिया क्योंकि उन्हें बुननेके लिए कोई कुछ देता ही नही था। मै आश्रममें एक परिवारको जानता हूँ जिसने इस आन्दोलनके आरम्भ होनेके बाद अबतक कई हजार रुपये कमा लिये है, और वह परिवार जिसमें पति, पत्नी और एक लड़का भी काम करता है तथा एक बच्चा है, मैं सोचता हूँ कि इस समय ७५ रुपये महीने कमा रहा है और रहनेकी जगह मुफ्त है। मै आपको इस प्रकारके कई परिवारोंके दृष्टान्त दे सकता हूँ, जो हालाँकि इस परिवार जितना तो नही, लेकिन जो सम्मानजनक ढंगसे रहने योग्य कमा रहे है। मान लें कि यह आन्दोलन खत्म हो जाये तो ये सभी फिर बेकार हो जायेंगे। मान लें कि यह आन्दोलन आजके मुकाबले कहीं अधिक प्रगति करना जारी रखता है तो ऐसे सैकड़ों और हजारों परिवारोंको बसाया जा सकता है। क्योंकि मैं जानता हूँ कि खादीमें भी अच्छेसे-अच्छा कपड़ा तैयार कर सकनेकी हमारी क्षमताकी कोई सीमा नही है। लेकिन न जाने कैसे दुर्भाग्यवश ऐसा लगता है कि हमारे अन्दर अपने देशसे प्रेम करनेकी इच्छा समाप्त हो गई है। और इसीलिए आज भारतमें जितनी माँग है उससे ज्यादा खादी है। मैं चाहता हूँ आप, मेरे आदि-द्रविड़ भाई इस स्थितिको बदल दें, क्योंकि आपके बाद आप-जैसे गरीब लोग करोड़ोंकी संख्यामें हैं। जब खादी भारतमें सर्वप्रचलित हो जायेगी तब हमारी आर्थिक प्रगतिको संसारकी कोई शक्ति नहीं रोक सकेगी। अब मैं आप सबको मेरी अपीलपर ध्यान देनेके लिए धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-१०-१९२७

१२५. भाषण: मंगलोरकी सार्वजनिक सभामें[1]

२६ अक्टूबर, १९२७

दरिद्रनारायणके नामपर मुझे रुपया देनेके लिए तथा अभिनन्दनपत्र भेंट करनेके लिए मैं आपका आभारी हूँ। यहाँ आनेपर मुझे यह देखकर खुशी हुई कि कुछ लोगोंने मुझसे मेरी अपनी ही भाषामें बातचीत की। मुझे एक अभिनन्दनपत्र आर्य समाजकी ओरसे हिन्दीमें भी भेंट किया गया। यदि सारे अभिनन्दनपत्र हिन्दीमें या कमसे-कम आपकी अपनी भाषा कन्नड़में होते तो मुझे ज्यादा खुशी होती। इस धरतीपर परमेश्वर ही हमें दुख और सुख देता है। उस परमेश्वरने मुझे उस समय दुख दिया जब मैंने इन अभिनन्दनपत्रोंको विदेशी भाषामें पढ़े जाते सुना। मैं इस शहरमें आपके साथ मूलतः तो चार दिन बिताना चाहता था। मैं ऐसा कर सका होता तो मुझे अच्छा लगता। सामान्य रूपसे मुझे आजके दिन नीलेश्वरमें होना चाहिए था। जब हम आज दोपहर बाद नीलेश्वर रेलवे स्टेशनपर पहुँचे तो मैंने वहाँ हजारों लोगोंको हताश खडे हुए देखा। उनको निराश करके उस स्टेशनको पीछे छोड़ आते हुए मेरा दिल बहुत दुखी हुआ। थोड़ी-सी सान्त्वना मुझे यही सोचकर मिलती है कि ऐसी घटनाएँ इसलिए होती है कि देशकी सेवाके उद्देश्यसे की जा रही इन यात्राओंमें मुझे कभी-कभी अनिवार्यतया अपने कार्यक्रममें परिवर्तन करने पड़ते हैं।

जब मैं तिरुपुरमें था तो मुझे वाइसरायका एक तार मिला था। उस तारमें परमश्रेष्ठने मुझसे दिल्ली आकर कुछ महत्त्वपूर्ण मामलोंपर अपने साथ बातचीत करनेका अनुरोध किया था। मैं समझता हूँ कि उस अनुरोधको स्वीकार करके भी मैं देशकी सेवा कर सकता हूँ। यही कारण है कि निमन्त्रणको अस्वीकार करनेका मेरा मन नही हुआ। मैंने आपको बताया कि मुझे दिल्ली जाना है और इसलिए मैं आपके बीच ज्यादा देर नही रह सकता। इसलिए कृपया मुझे माफ करें। आप सब यह जाननेके लिए आतुर होंगे कि मैं दिल्ली वाइसरायसे मिलने किस उद्देश्यसे जा रहा हूँ, उन्होने मुझे क्यों बुलाया है और वह ऐसा कौन-सा महत्त्वपूर्ण मामला है जिसपर वह मुझसे बातचीत करना चाहते है। मुझे खेद है कि मैं स्वयं भी इसके बारेमें कुछ और नही जानता। उन्होंने तो मुझसे थोड़ी-बहुत असुविधा उठानी पडे तो वह उठाकर भी आनेका अनुरोध-भर किया है। मुझे पूरा विश्वास है कि मैं दिल्लीमें अपना काम दो दिनमें ही पूरा कर लूँगा। उसके बाद मैं लंका जाना चाहता हूँ। वहाँसे लौटनेपर अगर मुझे समय मिला और सुविधा हुई तो मैं आपके जिलेमें अपना सारा कार्यक्रम पूरा करूँगा।

लंका जाकर वहाँ मेरे लिए जो कार्यक्रम बनाये गये हैं मैं उन सबको पूरा करना चाहता हूँ। यहाँकी तरह मुझे लंकाके दरिद्रनारायणकी भी सेवा करनी है।

१. इस भाषणका गंगाधरराव देशपाण्डेने कन्नडमें अनुवाद किया था।

इसलिए इन सब कारणोंसे मैं कल मंगलोरसे समुद्रके रास्ते रवाना हो जाऊँगा। इस प्रकार सहसा जानेके लिए आप मुझे क्षमा करें।

छः या सात साल पहले मैं यहाँ अपने भाई मौलाना शौकत अलीके साथ आया था। उस यात्राको मैं कभी भूलूँगा नहीं। उस समय हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख तथा इस देशके अन्य लोग शान्तिपूर्वक रह रहे थे। उनमें परस्पर विश्वास था। उनमें आपसमें पूरा भरोसा था। लेकिन उत्तरी भारतमें आज हिन्दू और मुसलमान एक दूसरेके साथ लड़ रहे हैं और एक दूसरेका सिर फोड़ रहे हैं। ऐसी स्थिति खत्म होनी चाहिए। मुझे विश्वास है कि बहुत जल्दी ही उनके सम्बन्ध अच्छे हो जायेंगे।

अपने सभी अभिनन्दनपत्रोंमें आपने चरखे तथा खादीका उल्लेख किया है और आन्दोलनकी सफलतामें अपना पूरा विश्वास जताया है। आपने जो रुपया मुझे दिया है वह उसी कामके लिए है। आपका यह कहना ही काफी नहीं है कि आपकी इस आन्दोलनमें श्रद्धा है। इससे आन्दोलन सफल नहीं होगा। खादी आन्दोलन तो तभी सफल होगा जब आप सब खद्दर पहनेंगे। मैं अपने चारों ओर आपमें से बहुत-से लोगोंको विदेशी कपड़ा पहने हुए देख रहा हूँ। हमारे देशमें कपासका और खाद्य पदार्थोंका काफी उत्पादन होता है। यदि आपके सारे देश भाई केवल बाहरसे आनेवाले खाद्य पदार्थोंका ही उपयोग करते होते तो आज हमारी स्थिति क्या होती? वही बात विदेशी कपड़ा पहननेमें है। मेरी एक बहनने मुझे बताया कि जबतक उसे बढ़िया खादी नहीं मिलेगी तबतक वह खादीके कपड़े नहीं पहनेगी। अब मैं आपको एक उदाहरण देता हूँ। मान लीजिए आपकी माँने या आपकी बेटीने खाना बनाया है, तो चाहे वह बहुत बढिया न भी हो, तो भी आप उसे पसन्द करते हैं। उसी तरह आपको अपने भाई-बहनों द्वारा तैयार किया कपड़ा भी सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए, चाहे वह थोड़ा घटिया ही क्यों न हो। जहाँतक बढ़िया खादीका सम्बन्ध है, मैं आपको आपके मनके मुताबिक बढ़िया खादी दिला सकता हूँ। आप देख सकते हैं कि जिस कपड़ेपर अभिनन्दनपत्र छपे हैं वह, और खद्दरकी जो साड़ियाँ मेरी पत्नी पहनती है उनका कपड़ा कितना बढ़िया है। यदि आप थोड़ी भी तकलीफ उठायें और रुचि लें तो आप भी ऐसी बढ़िया खादी तैयार कर सकते हैं। मेरी आपसे यह प्रार्थना है: आप मुझसे यह प्रतिज्ञा करें कि आजके बाद आप सिर्फ खादी ही पहनेंगे।

आपकी नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रसे मुझे यह जानकर खुशी हुई कि नगरपालिकाके अधिकार-क्षेत्रमें आनेवाली शालाओंमें कताई शुरू कर दी गई है। इन शालाओंमें छोटे बच्चे तकलीकी सहायतासे सुन्दर धागा तैयार कर सकते हैं। शालाओंमें प्रयोगके लिए यह बेहतरीन औजार है। आपको उन्हें वैज्ञानिक तरीकेसे कातना सिखाना चाहिए। मैंने देखा है कि जो खादी कातनेमें लगे हैं वे बहुत खुश हैं और सन्तुष्ट हैं। लेकिन नगरपालिकाके सारे सदस्य खद्दर नहीं पहनते। मुझे मालूम है कि वे चरखा भी नहीं चलाते। इसलिए अगर वे शालाओंमें चरखा शुरू करते हैं और

विद्यार्थियोंसे कातनेको कहते है तो विद्यार्थी इसे सजाके तौरपर मानेंगे। अतः अपने विद्यार्थियोंको सन्तुष्ट करनेके लिए कमसे-कम उन्हे तो खादी पहननी ही चाहिए।

हिन्दू धर्ममें कुछ ऐसी बुराइयाँ हैं जैसे अस्पृश्यता, जिनकी ओर मै आपका ध्यान दिलाऊँगा। यदि भारत-माताको स्वतन्त्र होना है तो प्रत्येक हिन्दूका यह कर्त्तव्य है कि वह इस देशसे इन भयंकर बुराइयोंको बहुत जल्द दूर करनेकी कोशिश करे।

यहाँ एकत्रित विद्यार्थियोंसे मै केवल एक बात कहना चाहता हूँ। वह यह कि देशका भविष्य सिर्फ आपपर ही निर्भर है। क्योंकि आप अभी पढ़ रहे हैं इसलिए यह नही कहा जा सकता कि आप देशसेवा भी कर रहे हैं और न आपके ज्ञानकी मात्राका ऐसी सेवासे कोई सम्बन्ध ही है। मै आपको दो या तीन बातें और बताना चाहता था, लेकिन आपको मै और अधिक रोकना नही चाहता।

आपमें से बहुत-से लोग जानते होंगे कि स्व० आदरणीय स्वामी श्रद्धानन्दजीके एक शिष्यने यहाँ हिन्दी प्रचार कार्य शुरू किया है। जो लोग हिन्दी सीखना चाहते हैं उन्हें वह हिन्दी सिखायेंगे। मै आप सबसे, खासतौरपर विद्यार्थियोंसे, प्रार्थना करता हूँ कि आप यह भाषा सीखें। इस भाषाके अध्ययनके बारेमें मै और जगह दिये गये अपने भाषणोमें जिक्र कर चुका हूँ और कुछेक लेख भी लिख चुका हूँ। यदि अब भी आप कुछ और जाननेके लिए इच्छुक हों तो मैं आपसे कुछ शब्द और कहूँगा। यदि आप समूचे भारतकी सेवा करना चाहते है, यदि आप इस विशाल देशके उत्तर और दक्षिण भागोमें एकता स्थापित करना चाहते हैं तो आपके लिए हिन्दी सीखना अनिवार्य है।

अन्तमें, जिन लोगोने पर्याप्त पैसा नही दिया है वे अब भी दे सकते हैं। जो स्त्रियाँ दरिद्रनारायणको अपने जेवर भेंट करनेकी इच्छुक हो, वे ऐसा कर सकती हैं। अपनी बहनोंके लिए मै आपसे यह कहना चाहूँगा कि आपका आदर्श सीतादेवी है। जिस प्रकार वह अपने सहज-स्वाभाविक रूपमें सुन्दर लगती थी उसी प्रकार आपको भी अपने सौन्दर्यमें वृद्धि करनेके लिए जेवरोकी कामना नही करनी चाहिए। और फिर जब आपकी बहुत-सी बहनें भोजन और कामके अभावमें भूखो मर रही है तब आपको जेवर पहनना शोभा नही देता। १०० रुपयेकी कीमतका जेवर देनेका मतलब होगा एक दिनमें अपनी १६०० गरीब बहनोको भोजन देना। ये बहनें भीख नही माँगतीं। मै भी किसी भिखारीको पैसा नही देता। मै उनसे पूरा काम लेता हूँ। तमिलनाडु, त्रावणकोर और अन्य स्थानोपर बहुत-सी बहनो और छोटे बच्चोने मुझे विभिन्न प्रकारकी बहुमूल्य वस्तुएँ और जेवर दिये है। मै आप सबको धन्यवाद देता हूँ और भगवानसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको जो-कुछ मैंने कहा उसे समझनेकी शक्ति दे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-१०-१९२७

१२६. एक सच्ची सेविकाका प्रयाण

१९२१ की बात है। बेजवाड़ामें स्त्रियोंकी एक बहुत बड़ी सभामें मैंने एक खादी-धारिणी लड़कीको — और वहाँ यही एक लड़की ऐसी थी जो खादी पहने थी — सभाका प्रबन्ध करते हुए शान्ति और व्यवस्था रखते हुए, और फुर्ती तथा निश्चयके साथ इधर-उधर घूमते-फिरते देखा था। जहाँतक मुझे याद है, उसीने पहले-पहल अपने सभी कीमती गहने, चूड़ियाँ और सोनेकी एक भारी जंजीर दी थी। जब वह अपने सब गहने दे रही थी, मैंने पूछा, 'क्या तुमने अपने माँ-बापसे इजाजत ले ली है?' उसने कहा 'मेरे माँ-बाप मेरे किसी काममें दखल नहीं देते और मैं जो चाहती हूँ मुझे करने देते हैं।' अन्नपूर्णादेवी बढ़िया अंग्रेजी बोलती थी। उन्होंने कलकत्तेके बेथ्यून कालेजमें शिक्षा पाई थी। वह स्त्रियोंकी उस बड़ी भीड़में चन्देके लिए चली गई और गहने तथा रुपये लाई। तबसे बराबर इस आन्दोलनसे उन्होंने सम्बन्ध रखा और सच पूछो तो इसमें अपनेको उत्सर्ग कर दिया। कोकोनाडामें वह महिला स्वयं-सेविकाओंकी नायिका थी और उनके उस कामकी कितनोंने ही बडी तारीफ की है। दुर्भाग्यसे तब भी उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा न था। उनका विवाह श्रीयुत मगुन्टी बापी नीडु, बी० एस सी०से हुआ था। कोयम्बटूरमें मुझे उसकी मृत्युके कई दिनों बाद सहसा तार मिला कि वह अब नही है। और अब श्रीयुत नीडुका पत्र आया है जिसमें से कुछ उद्धरण मैं नीचे दे रहा हूँ:[1]

यह सच है कि अन्नपूर्णादेवीको खोकर मैंने एक निष्ठावान अनुयायी ही नही उससे कुछ अधिक खोया है। हिन्दुस्तान-भरमें मुझे जिन अनेक बेटियोंके होनेका सौभाग्य प्राप्त है, लगता है कि मैंने उनमें से एकको खो दिया है। और वह सबमें अच्छी बेटियोमें से थी। उसका विश्वास अटल रहा और इनाम या तारीफकी उम्मीद किये बिना उसने काम किया। कितना अच्छा हो कि अन्नपूर्णादेवीने अपने पतिपर अपनी पवित्रता और एकनिष्ठ भक्तिसे जो नम्र, किन्तु अधिकारपूर्ण प्रभाव प्राप्त किया था, वह प्रभाव एकाधिक पत्नियाँ प्राप्त करें। मैं उनकी इस मीठी फटकारमें जो सत्य है उसे स्वीकार करता हूँ कि अन्नपूर्णादेवीने मातृभूमिकी सेवामें अपना शरीर गला दिया। मुझे इसमें जरा भी शक नही है कि अगर भारतको एक बार फिरसे वैसा ही पवित्र और स्वतन्त्र बनना है, जैसा कि लाखो आदमी आज भी मानते है कि वह प्राचीनकालमें था, तो यह जरूरी है कि कितने ही नवयुवक और नवयुवतियोंको इस भली स्त्रीका अनुकरण करना पड़ेगा, और भारतके प्रति अपना फर्ज अदा करनेमें शहीद होना पड़ेगा।

१. इन्हें यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इन उद्धरणोंमें गांधीजीके तथा उनके खादी, असहयोग और आहार-सम्बन्धी प्रयोगों तकके बारेमें अन्नपूर्णादेवीकी कितनी दिलचस्पी थी इसका सजीव विवरण दिया गया था। पत्रलेखकने गांधीजीको अन्नापूर्णादेवीके स्मारकके लिए बनी समितिका सदस्य बनानेके लिए उनकी स्वीकृति माँगी थी।

ऊपरके उद्धरणोंमें उल्लिखित समितिका सदस्य होनेका अनुरोध मैं स्वीकार नहीं कर सका हूँ। कारण, मेरे पास कई काम हैं, और मैं सैंकडों समितियोंकी सदस्यताका बोझ उठा नही सकता। मेरा विश्वास इसमें कभी नही रहा है कि हम सिर्फ शोभाके लिए या नाम लिखानेके लिए समितियोंके सदस्य बनें। मुझे इसमें कोई शक नही है कि अन्नपूर्णादेवी-जैसी बहादुर और पवित्र देशभक्तकी स्मृतिको चिरस्थायी बनानेके लिए एक स्थानीय स्मारक अवश्य बनना चाहिए। मगर अन्नपूर्णादेवीका सबसे अच्छा स्मारक यह होगा कि उनके पति अपनी पत्नीके मार्गपर चले, और अपनी खोयी हुई सगिनीको देशकार्यमें ही पाकर उसकी यादको चिरस्थायी बनायें। कारण, उन्हींके कथनानुसार अन्नपूर्णादेवीने अपने-आपको इसी काममें खपा दिया था।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २७-१०-१९२७

१२७. अनुकरणीय

चाँदा (मध्यप्रान्त)की म्युनिसिपैलिटीके उप-सभापति लिखते हैं:

> मध्यप्रान्त और बरारमें हमारी ही म्युनिसिपैलिटीने सबसे पहले खादी परसे चुंगी उठा दी है। इसके अलावा १९२२ से यह म्युनिसिपैलिटी खादीके लिए हर साल ५०० रुपयेकी आर्थिक सहायता देती आई है जिससे यहाँ एक "शुद्ध खादी कार्यालय" चलता है। यह कार्यालय अब अ० भा० चरखा संघसे सम्बद्ध हो गया है। इसका सूत महाराष्ट्रमें समानता, मजबूती और अंकमें सबसे अच्छा पाया गया है। १९२२ से अबतक म्युनिसिपैलिटी अपने कामके लिए केवल चाँदा खादी कार्यालयमें बनी खादी ही खरीदती रही है। अब म्युनिसिपैलिटी अपने स्कूलोंमें खादी दाखिल करानेकी एक योजनापर विचार कर रही है।

ऊपर उल्लिखित प्रस्ताव यह है:

> निश्चय किया जाता है कि अ० भा० चरखा संघसे जिस कपड़ेपर यह प्रमाणपत्र मिला हो कि यह हाथकती, हाथबुनी खादी है, उसपर चुंगी नहीं ली जायेगी।

इस उदाहरणका अनुकरण सभी म्युनिसिपैलिटियाँ कर सकती है। खादीके लिए इस म्युनिसिपैलिटीका यह प्रेम कुछ नया नही है बल्कि उसके लिए यह बहुत काम कर चुकी है। दूसरी कई बड़ी-छोटी म्युनिसिपैलिटियोंकी तरह इसने अपना काम नही बन्द किया, वह बढ़ता ही गया है। इस म्युनिसिपैलिटीको इतनी सफलता इसलिए मिली है कि इसके कई सदस्य चरखेके सन्देशमें सिर्फ विश्वास ही नही करते बल्कि उसे अपने जीवनमें उतारते हैं। खादीका विकास इस म्युनिसिपैलिटीमें स्वाभाविक

रीतिसे ही हुआ है। पहले उसने रुपयोंकी मदद दी, उसके बाद उसने अपने नौकरोंके लिए खादीकी वर्दियाँ बनवाईं। उसके बाद खादीपरसे चुंगी उठाई गई, और अन्तमें अपने स्कूलोंमें वह कताईको दाखिल करनेका विचार कर रही है। मैं आशा करता हूँ कि स्कूलोंमें कताईका प्रचार शास्त्रीय रीतिसे किया जायेगा और कातनेके पहले लड़के-लड़कियोंको खादी पहननेके लिए राजी किया जायेगा और उन्हें बतलाया जायेगा कि और कोई दूसरा शारीरिक श्रम करनेके बजाय उन्हें कताई क्यों करनी चाहिए। मैं यह सलाह भी देता हूँ कि उन्हें चरखेके बदले तकलीपर कातना चाहिए। जो लड़के कताईमें विशेष उत्साह और लियाकत दिखलायें, उन्हें स्कूलमें नहीं, घरपर कातनेके लिए चरखा मँगनी दिया जाये और जो लड़के एक सालतक लगातार उन्नति करते जायें उन्हें वह चरखा [निःशुल्क] दे ही दिया जाये। लड़के और लड़कियों, दोनोंको कातनेके पहले धुनना सिखलाना चाहिए और उनके कामकी परीक्षा रोज-रोज करनी चाहिए और समय-समयपर उनके आँकड़े तैयार करने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-१०-१९२७

१२८. कपासकी लाभदायक खेती

एक सज्जनने मुझे लिखा है कि कपास पैदा करनेवाले किसानोंको अपनी कपासका कुछ हिस्सा जमा रखने और उसीका सूत कातकर अपने लिए खादी बुनवा लेनेपर तैयार करनेके लिए एक व्यापक आन्दोलन चलाना चाहिए। उनका यह भी कहना है कि जहाँपर कपास पैदा नहीं होती वहाँके किसानोंको शाकभाजीकी तरह अपने निजी इस्तेमालके लिए थोड़ी कपास भी पैदा करनेको उत्साहित करना चाहिए। उनका दावा है कि अगर यह प्रवृत्ति चल निकले तो किसानोंको खादी सस्ती पड़ेगी। वे कहते हैं कि खादी आन्दोलन शुरू होनेके पहले दक्षिणके कुछ हिस्सोंमें किसान ऐसा किया करते थे। पत्रलेखकका खयाल है कि देशी रियासतें इस तरह कपासकी खेतीको सबसे अधिक प्रोत्साहन दे सकती हैं।

पत्रलेखकके सुझावमें काफी बल है। बिजौलिया (राजपूताना), बारडोली और काठियावाड़में किसानोंको अपनी जरूरत-भरकी कपास रख छोड़नेको प्रोत्साहित करनेका काम चल रहा है। मगर काठियावाड़में जब भी रुईका दाम चढ़ा है, किसानोंके लिए जमा रुई को बेच देनेका लोभ जीतना मुश्किल पाया गया है। यह तबतक सम्भव नहीं है जबतक किसान खादीका अर्थशास्त्र नहीं समझ जाते और यह नहीं जानते कि बुनाईके पहले रुईपर जो मेहनत फुरसतमें वे करेंगे, उसमें भी वही लाभ होगा जो अधिक दामों रुई बेच देनेसे होता है और ऊपरसे वे सटोरियोंके पंजोंसे भी छूट जायेंगे। इसके अर्थ है कि अ० भा० चरखा संघको किसानोंको खादीका अर्थशास्त्र समझाना होगा। इसमें तो कोई शक ही नहीं है कि खादी-कार्यकी सभी शाखाओंमें सफलतापूर्वक काम कर पानेके लिए खादी कार्यकर्त्ताओंको कपास पैदा

करनेवालोके निकट सम्पर्कमें आना होगा, क्योंकि शहरकी जरूरत खादी तैयार करनेके लिए भी कपास पैदा करनेवाले किसानोंके साथ सम्बन्ध जोड़ना और, जैसा कि आज चलता है, बाजारमें खरीदनेके बदले सीधे उन्हीसे रुई खरीदना जरूरी है। अगर हमें सटोरियोसे और बाजार भावके उतार-चढ़ावसे स्वतन्त्र होना है और खादीका मूल्य स्थिर करना है तो हमें किसानसे सरोकार पैदा करना होगा और उसे इस बातके लिए राजी करना होगा कि वह हमारे साथ सीधा सौदा करे। खादीकी जितनी ही अधिक उन्नति होगी, हम देखेंगे कि व्यापार-जगतमें हमें अपने तरीकोको प्रचलित तरीकोसे भिन्न करना होगा। व्यापार-जगतका विश्वास है कि अधिकसे-अधिक दामपर माल बेचा जाये, और सस्तेसे-सस्ता खरीदा जाये। आज ससारका व्यापार न्यायके नियमपर नही चलता। उसका मूल मन्त्र है, "खरीदारो सावधान"। खादी अर्थशास्त्रका मूलमन्त्र है "सबके लिए एक-सा न्याय।" इसलिए खादीमें आत्माका हनन करनेवाली वर्तमान होड़ा-होडीके लिए कोई जगह नही है। खादीके अर्थशास्त्रका उद्देश्य गरीब और असहाय लोगोको सहायता देना है और खादी उसी हदतक सफल होगी, जिस हदतक उसके कार्यकर्त्ता जन-साधारणमें प्रवेश करके उसका विश्वास प्राप्त कर सकेंगे। उनका विश्वास पानेका एकमात्र रास्ता है स्वार्थ रहित होकर उनकी सेवा करना।

पत्रलेखककी यह बात बेशक सच्ची है कि कपासकी खेती करनेवाले किसानो द्वारा कपास जमा कर रखने, और दूसरे किसानो द्वारा अपनी जरूरत-भरकी कपास पैदा करनेके मामलेमें देशी रियासतोको ज्यादा सुविधाएँ हैं। मगर अन्ततः सवाल तो यह है कि बिल्लीके गलेमें घंटी कौन बाँधे? अधिकांश रियासतोको किसानोंके भले-बुरेकी चिन्ता ही नही है। अभी तो उनके जीवनका एक यही उद्देश्य मालूम पड़ता है कि चाहे जैसे हो, राज्यकी आमदनी किसी भी कीमतपर यथासम्भव बढ़ाई जाये, और उसका अधिकसे-अधिक भाग अपने मौज-मजेमें उड़ाया जाये। इसके सिवा, अन्य पूंजीपतियोकी भाँति ही खादीके अर्थशास्त्रमें उनको कोई विश्वास नही है। मैसूरमें ग्रामोद्योगके रूपमें खादीकी उपयोगिताकी जाँच करनेके लिए बहुत सतर्कतासे एक प्रयोग चल रहा है। हम आशा कर सकते हैं कि अगर यह प्रयोग शास्त्रीय रीतिसे धैर्यपूर्वक किया गया और सफल हुआ तो उसका अनुकरण सभी करने लगेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-१०-१९२७

१२९. अस्पृश्यता-निवारण

श्रीयुत एस० डी० नाडकर्णी कारवारसे १० सितम्बरके अपने पत्रमें लिखते हैं :

पिछले हफ्ते मैं और मेरे भाईने कुछ नवयुवकोंकी सहायतासे बहुत-सी अप्रत्याशित कठिनाइयोंके होते हुए भी खरा सार्वजनिक गणेशोत्सवका आयोजन किया था। इसके इस नामका मतलब यह है कि इसमें हमने अपने सभी कार्यक्रमोंमें — जुलूस, पूजा, भजन, आरती, कीर्तन, पुराणपाठ और इसी अवसरके लिए खास तौरपर लिखे गये उस नाटकमें जो इस समारोहके दौरान दो बार खेला गया — अन्य हिन्दुओंके अलावा अछूतोंको भी शामिल किया था। नाटकका आधार हमारे जिला स्कूल बोर्डके एक दलित वर्गीय सदस्यका सच्चा अनुभव है। एक बार वे एक दूसरे मुसलमान सदस्यके साथ पड़ोसके गाँवके मन्दिरमें पाठशालाका निरीक्षण करने गये थे। उन्हें तो भीतर नहीं जाने दिया गया, लेकिन उनका मुसलमान साथी भीतर जाकर स्कूलका निरीक्षण कर सका। क्या आप इसपर विश्वास कर सकेंगे? हमारे ही कुछ लोगोंने ('मुझे न छुओ' वाले हिन्दुओंने) नाटकका खेलना रोकनेके लिए स्थानीय मुसलमानोंसे झूठी दरख्वास्त दिला दी थी कि यह नाटक मुस्लिम-विरोधी है, अतः इसपर प्रतिबन्ध लगा दिया जाये। हमारे समाजमें परमावश्यक सुधार करनेके आन्दोलनके विरुद्ध क्या इससे भी अधिक आत्मघाती रास्ता कोई हो सकता था? मगर न्याय और बुद्धिकी विजय हुई और उनकी कोशिश बेकार गई।

पूनाके चित्रे शास्त्री (महाराष्ट्र हिन्दू महासभाके सभापति) की सहायतासे हमने हिन्दू महासभाकी एक स्थानिक शाखा खोली। उन्हें खास तौरसे इसी उद्देश्यसे निमन्त्रित किया गया था। इस शाखाका प्रधान उद्देश्य है अस्पृश्यताके विरुद्ध संघर्ष करना और हमारे सार्वजनिक मन्दिरोंमें अछूतोंको प्रवेशका अधिकार दिलाना।

सुधारकों द्वारा आयोजित एक निर्दोष नाटकमें तथाकथित अस्पृश्योंकी उपस्थितिका अपने ही मनसे अपनेको सनातनी हिन्दू कहनेवाले और श्रीयुत नाडकर्णीके शब्दोंमें 'मुझे न छुओ' की प्रवृत्तिवाले उन महानुभावों द्वारा किया गया विरोध और उस विरोधका तरीका उनके लिए या हिन्दू धर्मके लिए कोई श्रेयकी बात नहीं है। उससे यह भी जाहिर होता है कि धर्मके पवित्र नामपर अन्धी रूढ़िवादिता किस हदतक जा सकती है। मैं श्रीयुत नाडकर्णी और उनके मित्रोंको सफलतापूर्वक अछूतोंको अपने जुलूसमें शामिल करने और नाटकके अभिनयमें दाखिल करनेपर साधुवाद देता हूँ। अस्पृश्यताको दूर करनेका एकमात्र रास्ता यही है कि हरएक सुधारक दलित वर्गोंकी खातिर ऐसा ही कोई रचनात्मक कार्य करे, भले ही वह

कार्य कितना ही छोटा हो, और नम्रता किन्तु दृढ़ताके साथ अन्धविश्वास और पूर्वग्रहकी दोहरी दीवारोंको तोड़े। मैं आशा करता हूँ कि कारवारके सुधारकोंको अछूतोंको मन्दिरोंमें दाखिल करनेके प्रयत्नमें सफलता मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २७-१०-१९२७

१३०. सन्देश : दक्षिणको

[२७ अक्टूबर, १९२७][1]

दक्षिणसे विदा होते हुए मुझे काफी दुख हो रहा है। मैं जहाँ भी गया मुझे सभी प्रकारके लोगोंसे हार्दिक स्नेह प्राप्त हुआ — यहाँतक कि उन लोगोंसे भी, जो अपनेको दूसरी राजनीतिक विचारधाराका समझते हैं। मैं जहाँ भी गया वहाँ मुझे चरखेके सन्देशमें सच्ची आस्थाके दर्शन हुए। इसलिए मैं दक्षिणसे पूरा आश्वस्त होकर जा रहा हूँ। मैं चाहता था कि मेरे पास कुछ और समय होता जिससे मैं उन स्थानोंमें भी यात्रा कर लेता जिनके निमन्त्रणको मैं स्वीकार नहीं कर सका था। अब मैं चाहता हूँ कि जनता अपनी आस्थाको कार्यरूपमें परिणत करे, अभीतक जिस हदतक किया है, उससे ज्यादा करे। तब लोगोंको खादीकी उस शक्तिका पता चलेगा, जिसका उन्हें कोई पता नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-१०-१९२७

१३१. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंसे

बम्बई
२९ अक्टूबर, १९२७

'इंडियन डेली मेल' के एक प्रतिनिधि द्वारा यह पूछे जानेपर कि शाही आयोगमें परामर्शदाताओंकी नियुक्तिको आप स्वीकार करेंगे या उसका बहिष्कार करेंगे, महात्मा गांधीने कहा :

मैंने इस प्रश्नपर कोई विचार नहीं किया है।

उन्होंने कहा कि दक्षिण भारतमें होनेके कारण मैं घटनाओंके सम्पर्कमें नहीं रह सका हूँ, और इसलिए शाही आयोगमें भारतीयोंके न रखे जानेके बारेमें जो अफवाहें हैं, उनके बारेमें मैं कुछ भी कहनेको तैयार नहीं हूँ।

१. गांधीजीको २ नवम्बरको वाइसरायसे भेंट करनी थी, अतः वे मंगलोरसे २७ अक्टूबरको सुबह रवाना हुए।

एकता सम्मेलनका जिक्र करते हुए गांधीजीने कहा कि मुझे उसके लिए विशेष रूपसे निमंत्रित नहीं किया गया था, लेकिन अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और कार्यसमितिका सदस्य होनेके नाते साधारण परिस्थितियोंमें मैंने सम्मेलनमें भाग लिया होता। मैंने सम्मेलनमें इसलिए भाग नहीं लिया कि मेरी सेवाएँ उसमें किसी भी तरह उपयोगी न होतीं।

पत्र-प्रतिनिधिने उनसे पूछा: चूँकि हिन्दू-मुस्लिम एकताका सवाल बहुत महत्त्वपूर्ण है, अतः क्या आप ऐसा नहीं सोचते कि यदि आपने सम्मेलनकी कार्यवाहीमें अपना सहयोग दिया होता तो समस्याका मैत्रीपूर्ण हल निकलनेमें उससे बहुत मदद मिलती?

[गांधीजी:] मै मानता हूँ कि यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। यदि मै समझता कि मै सम्मेलनकी कार्यवाहीमें मदद दे सकता हूँ तो निश्चय ही मै अपना दौरा स्थगित करके कलकत्ता गया होता। संक्षेपमें, मै इतना ही कहता हूँ कि एकता स्थापित करनेके तरीकेके बारेमें मेरे विचार कुछ अनोखे ढंगके है, जिन्हें वर्तमान वातावरणमें स्वीकार नही कराया जा सकता। इसलिए मै मदद देनेके बजाय बाधा ही साबित होऊँगा। अतः मुझे लगा कि मेरा शामिल न होना भी एक तरहकी सेवा ही है।

महात्माजीने कहा कि मेरे उन अनोखे विचारोंको 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें देखा जा सकता है।[1]

पत्र-प्रतिनिधिके पूछनेपर गांधीजीने कहा:

सार्वजनिक मामलेमें मुझसे कोई बात जाननेके लिए यदि कोई मुझे निमन्त्रण देता है तो मै कभी उसे अस्वीकृत नही करता।

उन्होंने यह भी कहा कि मैं किसीका भी प्रतिनिधि होकर वाइसरायसे मिलने नहीं जा रहा हूँ। कलकत्तेके एकता-सम्मेलनके बारेमें कुछ प्रश्न करनेपर महात्माजीने कहा:

मैं सम्मेलनमें निमन्त्रित नही था। मुझे निमन्त्रित न कर श्री अय्यंगारने मुझपर अनुग्रह ही किया है। वे इस सम्बन्धमें मेरा मत जानते है और मेरे सच्चे मित्र होनेके कारण उन्होंने मुझे कष्ट नहीं दिया।

यह पूछनेपर कि भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्यके नाते आप सम्मेलनमें क्यों नहीं गये, महात्माजीने कहा:

जाकर मैं कुछ लाभ नही पहुँचा सकता। हिन्दुओं या मुसलमानोंने इस समय जिस नीतिका अवलम्बन किया है उससे मैं सहमत नहीं हूँ और मै जानता हूँ कि मेरे वहाँ उपस्थित होनेसे कार्यमें केवल बाधा ही पड़ेगी।

दक्षिणके दौरेके सम्बन्धमें प्रश्न करनेपर महात्माजीने कहा:

वहाँसे मैं पूरी आशा लेकर लौटा हूँ। खादीके सम्बन्धमें लोगोंने अच्छा उत्साह दिखाया है — यद्यपि इससे भी अधिक उत्साह दिखाया जा सकता था। मेरे विचारमें खादीकी जड़ अब जम गई है।

१. इसके बादका अंश आज, ३१-१०-१९२७ से लिया गया है।

महात्माजीके इस कथनपर कि कुछ हिन्दू मन्दिरोंमें ईश्वरका उतना ही वास है जितना कि एक वेश्यालयमें, जो टीकाएँ हुई है उनका उत्तर देते हुए महात्माजीने कहा :

मैं अपने कथनसे एक अक्षर भी वापस न लूंगा। एक विचारसे यह बिलकुल ठीक है कि ईश्वर सर्वव्यापी है—चोरोके अड्डोमें, ताड़ीखानोमे और वेश्यालयोमें भी वह मौजूद है। पर ईश्वरकी उपासनाके लिए हम इन स्थानोपर नही जाते बल्कि इस कामके लिए हम मन्दिर ढूंढ़ते हैं और वह इस विश्वाससे कि वहांका वायुमण्डल शुद्ध होगा। मैं कहता हूँ कि इस दृष्टिसे ईश्वर कुछ मन्दिरोमें नही वास करता और यदि करता है तो उसी प्रकार जिस प्रकार एक वेश्यालयमें भी उसका वास है। मेरे इस कथनसे यदि कुछ हिन्दुओके भावोपर आघात पहुँचा हो तो मुझे इसका बहुत दुःख है पर सत्यकी और हिन्दू धर्मकी रक्षाके लिए मैं अपने कथनको न वापस ले सकता हूँ न उसमें कुछ घटा-बढा सकता हूँ।

पुतला [प्रतिमा] सत्याग्रहके[1] सम्बन्धमें महात्माजीने कहा :

जब मद्रास कौंसिलने पुतला [प्रतिमा] हटानेके प्रस्तावको अस्वीकृत कर दिया है तो मद्रासके नवयुवकोको चाहिए कि वे अब दूना उद्योग करें और कौंसिलके जिन सदस्योने प्रस्तावका समर्थन किया है उन्हे चाहिए कि वे इन नवयुवकोको हर तरहसे मदद करे। मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि जिन भारतीय सदस्योने प्रस्तावका विरोध किया है उन्होने आन्दोलनके महत्त्वको नही समझा और यूरोपियनोकी ओरसे जो बाधा डाली गई उसके लिए भी मुझे खेद है।

हिन्दू, ३१-१०-१९२७
आज, ३१-१०-१९२७

१३२. भेंट : 'इंडियन नेशनल हेराल्ड'के प्रतिनिधिसे

[३० अक्टूबर, १९२७ या उससे पूर्व][2]

'इंडियन नेशनल हेराल्ड'के एक प्रतिनिधिने गांधीजीसे पूछा कि इस बातकी काफी अफवाह है कि ब्रिटिश संसद द्वारा जो आयोग नियुक्त किया जा रहा है उसमें संसदके सदस्य ही होंगे और भारतीयोंकी स्थिति मात्र परामर्शदाताओंकी होगी। यदि यह बात सच हुई तो वाइसरायसे होनेवाली भेंटमें आप क्या रुख अपनायेंगे? गांधीजीने उत्तर दिया :

शाही आयोग किस प्रकार गठित किया जाये, इस विषयका मुझसे उतना ही सम्बन्ध है जितना कि तपेदिककी बीमारीके इलाजका, जो किसी चिकित्सा-विशेषज्ञके क्षेत्रकी चीज है। मैंने शाही आयोगके विषयमें कोई विचार नही किया है, क्योंकि वह स्पष्ट रूपसे मेरे ज्ञान, मेरे विचार और मेरी प्रवृत्तियोंके क्षेत्रसे बाहरकी चीज है।

१. मद्रासमें जनरल नीलकी प्रतिमा हटानेके लिए; देखिए पृष्ठ ५५-५८ तथा १२९-३१ भी।
२. गांधीजी २९ अक्टूबरको बम्बई आये और ३० को दिल्लीके लिए रवाना हो गये।

प्रश्न: यदि आपसे शाही आयोगका सदस्य बनानेका प्रस्ताव किया जाये तो क्या आप उसे स्वीकार कर लेंगे?

उत्तर: यह प्रश्न मुझसे पूछनेसे क्या लाभ? इसी तरह एक बार मैंने यह कपोल-कल्पना की थी कि यदि मुझे भारतका वाइसराय नियुक्त कर दिया जाये तो मैं क्या करूँगा। लेकिन उस प्रकारकी कल्पनाएँ करनेके दिन बीत चुके हैं।

अन्तमें 'हेराल्ड' के प्रतिनिधिने पूछा: "देशकी व्याधियोंके एक अमोघ उपचारके रूपमें यह सुझाव दिया गया है कि आप राष्ट्रके लिए जो भी करना चाहें उस सबमें आपको तानाशाहके जैसे अधिकार दे दिये जाने चाहिए और आपको भारतका मुसोलिनी बननेके लिए राजी किया जाना चाहिए। आपके खयालसे यह हो जाये तो कैसा रहेगा?"

गांधीजी इसपर खूब हँसे, और फिर पूरी गम्भीरतापूर्वक बोले:

मुझमें न तो मुसोलिनीकी जैसी महत्वाकांक्षा है और न मेरे पास वैसे अधिकार कभी हो सकते हैं। यदि मुझे जबरदस्ती तानाशाह बना ही दिया जाये तो मैं भारतीय मुसोलिनीके रूपमें बड़ा दयनीय सिद्ध होऊँगा। इसके अलावा, सामाजिक या अन्य किसी प्रकारका कोई सुधार जबर्दस्ती नहीं थोपा जा सकता। दूसरे शब्दोंमें, आप लोगोंको बलपूर्वक अच्छा नहीं बना सकते।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-११-१९२७

१३३. टिप्पणी

अनाथ

जिस भाषाका ऐसा कोई कोश न हो जिसे सब लोग स्वीकार करते हों और जिसमें उस भाषाके सारे शब्द मिल जाते हों उसे अनाथ ही कहना होगा। अंग्रेजी शब्दोंकी वर्तनीके लिए हमारे पास असंख्य साधन हैं। बृहत्कोशसे लगाकर जेबमें रखने लायक छोटे-छोटे और सस्ते अनेक कोश उसमें मिल सकते हैं और सबमें शब्दोंकी वर्तनी एक-जैसी मिलती है।

मेरा खयाल है कि हिन्दुस्तानकी दूसरी भाषाओंमें उन भाषाओंके लोक-स्वीकृत कोश विद्यमान हैं, उस दृष्टिसे गुजराती ही एक अनाथ भाषा ठहरती है। मैं गुजरातीके ऐसे एक भी शब्दकोशको नहीं जानता जो सर्वमान्य हो अथवा जिसमें सारे गुजराती शब्द मिल जाते हों। मैंने इस दिशामें अनेक बार प्रयत्न किया; किन्तु हर बार असफल हो गया।

कितने ही सेवक वर्षोंसे इस अभावको दूर करनेके लिए प्रयत्न कर रहे हैं। कहा जा सकता है कि वह प्रयत्न[1] अब ठिकाने लगा है। उसकी खास जिम्मेदारी भाई

१. जोडनी कोश, काका कालेलकरकी भूमिकाके साथ १९२९ में प्रकाशित।

नरहरि परीखने उठाई है। उसके प्रणेता काकासाहब कालेलकर हैं। जिन नियमोंका अनुसरण करके यह कोश तैयार किया जा रहा है उनमें जितने विद्वानोंकी सहमति ली जा सकती थी उन सब विद्वानोंकी सहमति ले ली गई है। कोश उनकी सहमति-सूचक सहीके साथ प्रकाशित होगा।

लेकिन जैसे-जैसे यह काम आगे बढ़ता जाता है वैसे-वैसे ज्यादा मुश्किलें दिखाई पड़ रही हैं। उनमें से कुछको दूर करनेमें प्रत्येक भाषा-प्रेमी मदद दे सकता है। वह मदद किस प्रकारकी हो सकती है और किस तरह दी जानी चाहिए, उसका वर्णन पाठक भाषा प्रेमियोंके प्रति भाई नरहरि परीखके इसी अंकमें प्रकाशित निवेदनमें देखेंगे। अनेक लोगोंकी मददके बिना यह काम जैसा होना चाहिए वैसा नहीं हो सकता। अतः मैं आशा करता हूँ कि सब लोग इसमें यथाशक्ति मदद करेंगे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३०-१०-१९२७

१३४. पत्र : मीराबहनको

रविवार [३० अक्टूबर, १९२७][1]

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्रोंसे मुझे बड़ी सान्त्वना मिलती रही है, क्योंकि उनसे मुझे रोगियोंके सम्बन्धमें सब-कुछ मालूम होता रहा है। तुम रसोई घर अच्छी तरह साफ कर रही हो, इसकी मुझे खुशी है। पिछले सोमवारको मैंने पत्र लिखा तो था। अबतक वह तुम्हें मिल गया होगा। बाकी कल।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

वापसी यात्रामें मैं एक दिनके लिए आश्रममें रुकनेकी आशा करता हूँ।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९६) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. तारीखका निर्धारण पत्रमें गांधीजीके आश्रममें प्रस्तावित विश्राम तथा पहले लिखे गये पत्रके सन्दर्भसे किया गया है। पहले पत्रके लिए देखिए "पत्र : मीराबहनको", २४-१०-१९२७।

१३५. पत्र : मीराबहनको

सोमवार [३१ अक्टूबर, १९२७][1]

चि० मीरा,

यह पत्र चलती हुई और हिचकोले खाती हुई ट्रेनमें लिख रहा हूँ। यो आज मेरा मन कुछ भी लिखनेका नहीं है। अभी जब मैंने सोमवासरीय पत्र लिखना शुरू किया है, शामके ४ बज रहे हैं। मैं काफी नीद ले चुका हूँ और उतना ही समय दो मित्रोकी बातें सुननेमें गया है।

मै चाहता हूँ कि दुग्धालयों और पिंजरापोलोंमें तुमने जो-कुछ देखा वह सब मुझे बताओ तथा उसके नाम भी। लेकिन शायद अब तुम्हारे पास इतना समय नही होगा कि तुम जो उत्तर लिखो वह मुझे दिल्लीमें मिल सके। क्योंकि यदि २ तारीखको वाइसरायके साथ मेरी बातचीत पहली ही भेंटमें खत्म हो गई तो उसी दिन मेरे साबरमतीके लिए रवाना होनेकी आशा है। देखें क्या होता है। इस भेंटसे कोई खास परिणाम निकलनेकी आशा करनेका कुछ आधार नही दिखाई देता, लेकिन जो पहल हुई है, उसे मै इसी कारणसे रद नही करूँगा।

मै यह आशा कर रहा हूँ कि वहाँ आऊँगा तो सख्त बीमार पड़े उन दोनो रोगियोंको चंगा देख सकूँगा। तुम दोनोंपर दबाव डालो कि वे मुख्य रूपसे दूध ही लें और अपना पेट साफ रखें।

सस्नेह,

बापू

अंग्रजी (सी० डब्ल्यू० ५२९०) से।
सौजन्य : मीराबहन

१३६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

सुदी ६ [३१ अक्टूबर, १९२७][2]

बहनो,

एक पत्र स्याहीसे लिखनेका प्रयत्न किया। मगर ट्रेन इतनी तेजीसे और इतनी हिलती हुई चलती है कि स्याहीसे लिखा नही जा सकता और सोमवारका पत्र लिखना छोड़ा तो जा नहीं सकता।

१. तिथिका निर्धारण पिछले और अगले शीर्षकोंके पाठके आधारपर किया गया है।

२. तिथिका निश्चय पत्रमें आश्रमकी बहनोंके एकता-सम्बन्धी प्रयत्नों तथा गांधीजीके उनसे "दो-चार दिनमें" मिलनेकी आशाके उल्लेखसे किया गया है।

एक होनेके अपने प्रयत्न तुम कभी न छोड़ना। हमारी कोशिशमें ही सफलता है। शुभ प्रयत्न कभी बेकार नहीं जाते, यह भगवानकी प्रतिज्ञा है; और इसका थोड़ा-बहुत अनुभव हम सबको है। भण्डारका काम अब तुम छोड़ नहीं सकती। लिया हुआ काम घबराकर हरगिज न छोड़ना। घबराने या हारनेका कोई कारण ही नहीं है। दो-चार बहनोंको अनुभव हो जाये और वे कुशल बन जाये, तब तो कोई अड़चन आनी ही न चाहिए। अगर घबराकर भण्डार छोड़ोगी तो दूसरा काम लेनेमें हमेशा हिचकिचाओगी। मतभेद, राग-द्वेषादिके होते हुए भी जो काम है सो तो होने ही चाहिए। जितना सब करे उससे कम तो हम हरगिज न करें।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

दो-चार दिनमें मिलनेकी आशा रखता हूँ।

गुजराती (जी० एन० ३६७३) की फोटो-नकलसे।

१३७. पत्र : गंगाबहन झवेरीको

मौनवार, कार्तिक सुदी ६ [३१ अक्टूबर, १९२७][1]

चि० गंगाबहन झवेरी,

बच्ची और उसकी माँके बारेमें लिखा तुम्हारा पत्र मिला। झुलसनेका उपचार तो गंगाबहन[2] ठीक-ठीक कर ही लेगी। डाक्टर परसे विश्वास उठ जाना तो अच्छा ही है; किन्तु यह विश्वास किसी [डाक्टर] की लापरवाहीके कारण नहीं उठना चाहिए। सार-सँभाल तो अपने-आपमें एक जुदा गुण है। अतः हम अपनेको उसीके हाथमें सौंपें जिसकी सार-सम्मालके बारेमें किसी तरहकी शंका न हो, और जिसपर हमारी श्रद्धा हो; इसके बाद फिर सब-कुछ ईश्वरकी इच्छापर छोड़ दें।

तुम प्रधानका पद छोड़नेके लिए अधीर मत बनो। मैं फिलहाल तो एक दिनके लिए ही आश्रम पहुँचूँगा। तब तुम विस्तारसे मुझे सब-कुछ बताना। तुम इस पदको अधिकार न मानकर जिम्मेवारी मानो। हम अपनी जिम्मेवारी तो कभी किसीपर नहीं डालते।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३१२४) की फोटो-नकलसे।

१. गंगाबहन झवेरी सितम्बर, १९२७ में आश्रमकी महिलाओंकी प्रधान चुनी गई थीं।
२. गंगाबहन वैद्य।

१३८. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

मंगलवार, १ नवम्बर, १९२७

चि० परसराम,

तुमारा पत्र अभी मीला है। राजकिशोरीके[1] आत्माको तो शांति हि है। तुमारे धीरज रखना। ईश्वर तुमको शांति और भक्ति दे।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० २९७२ से।
सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

१३९. भाषण : जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्लीमें

२ नवम्बर, १९२७

जिन लड़कोंका अभी आपसे परिचय करवाया गया, वे मेरे मित्र और साथी कार्यकर्त्ता, स्वर्गीय अहमद मुहम्मद काछलियाके पौत्र हैं। वे मेरे लिए सगे भाईके समान थे। इन लड़कोंको देखकर मुझे सहज ही उनकी याद हो आई है और मैं समझता हूँ कि उनके बारेमें मुझे आपको कुछ बताना चाहिए। सत्याग्रहके दिनोंमें दक्षिण आफ्रिकामें जो हिन्दू और मुसलमान रहते थे, उनमें से एक भी भारतीय ऐसा नही था जो बहादुरी और ईमानदारीके मामलेमें काछलियाकी बराबरी कर सके। उन्होंने अपने देशके सम्मान और प्रतिष्ठाकी खातिर अपना सब-कुछ बलिदान कर दिया। उन्होंने न अपने व्यापारकी चिन्ता की और न अपनी सम्पदाकी और न मित्रोंकी ही, और तन-मनसे वे संघर्षमें कूद पड़े। उन दिनोंमें भी हिन्दू-मुस्लिम तकरारें जब-तब होती थीं, लेकिन काछलियाने दोनोंको तुलापर समान रूपसे रखा। किसीने उनपर अपने सम्प्रदायके साथ पक्षपात करनेका आरोप कभी नही लगाया।

और उन्होंने देशभक्ति और सहिष्णुताका यह महान गुण किसी स्कूलमें या इंग्लैंडमें नहीं, बल्कि अपने ही घरमें सीखा था, क्योंकि वे तो गुजराती भी कठिनाईसे लिख पाते थे। वकीलोंके तर्कोंका वे जिस प्रकार उत्तर देते थे उसे देखकर वे आश्चर्य करते थे, और उनकी सामान्य विवेक-बुद्धि अकसर वकीलोंके लिए बड़ी कामकी होती थी। उन्होंने ही सत्याग्रहियोंका नेतृत्व किया, और काम करते हुए ही शरीर-त्याग

१. परशुराम मेहरोत्राकी पत्नी जिनकी हालमें ही मृत्यु हुई थी।

किया।[1] उनके अली नामक एक बेटा था, जिसे उन्होंने मेरी देख-रेखमें सौंप दिया था। ग्यारह वर्षीय यह बालक अद्भुत संयत और निष्ठावान मुसलमान था। रमजानके पवित्र महीनेमें वह एक दिनका भी रोजा नहीं छोड़ता था। और फिर भी उनके मनमें हिन्दू लड़कोंके लिए कोई दुर्भाव नहीं था। आज तो दोनों समुदायोंके लोगोंकी तथाकथित धार्मिक निष्ठावादिता अन्य धर्मोंके प्रति यदि घृणा नहीं तो कमसे-कम दुर्भावका पर्याय बन गई है। अलीके मनमें ऐसा कोई दुर्भाव नहीं था, कोई घृणा नहीं थी। मेरे लिए पिता और पुत्र, दोनों आदर्श व्यक्ति हैं, और ईश्वर करे कि आप उनके उदाहरणसे अनुप्रेरित हों।

उन दिनोंमें, जब हिन्दू और मुसलमान एक प्रतीत होते थे तथा एक-दूसरेके लिए और अपने देशके लिए अपना खून बहानेको तैयार थे, मैंने छात्रोंसे सरकारी स्कूल और कालेज छोड़नेकी अपील की थी। इतने वर्षोंके बाद भी उन लड़कोंसे उन शिक्षण-संस्थाओंसे निकल आनेके लिए कहनेका मुझे कोई दुःख नहीं है, और मेरा दृढ़ मत है कि जिन लड़कोंने मेरी अपीलके जवाबमें स्कूल-कालेज छोड़े उन्होंने अपनी मातृभूमिकी सेवा की, और मुझे विश्वास है कि भारतके भावी इतिहासकार उनके त्यागका सराहनापूर्वक उल्लेख करेंगे।[2]

लेकिन दुःखकी बात है कि आज ऐसे मुसलमान हैं जो मसजिदमें जाकर नमाज पढ़ते हैं, और ऐसे हिन्दू हैं जो मन्दिरोंमें जाते हैं और पूजा करते हैं, और फिर भी ये दोनों एक-दूसरेके प्रति घृणासे भरे हुए हैं। वे सोचने लगे हैं कि मसजिद या मन्दिरमें जानेके मतलब हैं कि हमें एक-दूसरेसे घृणा करनी चाहिए। लेकिन अली, बहुत ही धर्मात्मा व्यक्ति होते हुए भी ऐसा कभी नहीं सोचता था। मैंने यह कहानी आपको सिर्फ इसलिए सुनाई है कि मैं चाहता हूँ कि आपमें से प्रत्येक व्यक्ति महान काछलिया और उनके प्यारे पुत्र अलीकी तरह सच्चा देशभक्त बने। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको उन दोनोंके जैसा नेक दिल दे।

हकीमजीने आपको उस स्मरणीय दिवस (११ अक्टूबर, १९२०) की याद दिलाई है जब हिन्दुओं और मुसलमानोंने अपने मतभेदोंको भुला दिया था और हमेशाके लिए एक हो गये थे, जब सारे भारतमें छात्रोंको आमन्त्रित किया गया था कि वे सरकारी या सरकारी सहायता-प्राप्त शिक्षण-संस्थाओंको छोड़कर निकल आयें। मैं जानता हूँ कि यह निमन्त्रण देनेमें मेरा बहुत हाथ था, लेकिन मैं साहसके साथ कहता हूँ कि सात साल बाद भी मुझे उसका कोई दुःख नहीं है और न मैं सोचता हूँ कि वैसा करके मैंने कोई बड़ी भूल की थी। मेरा विश्वास है कि जिन्होंने सरकारी स्कूलोंमें पढ़ाई छोड़ दी थी, उन्होंने देशकी बड़ी सेवा की थी। मुझे निश्चय है कि जब भारतके उस कालका इतिहास लिखा जायेगा तो निःसन्देह इतिहासकारको

१. इस जगह हकीम अजमलखाँने कहा कि गांधीजीकी आवाज धीमी होनेके कारण सुनाई नहीं पड़ रही है, अतः मौलाना मुहम्मद अलीसे कहा जाये कि गांधीजी जो बोलें उसे एक-एक वाक्य करके दोहराते जायें। इसपर मुहम्मद अलीने संक्षेपमें गांधीजीके अबतकके भाषणका सार बताया।

२. इसके बादके दो अनुच्छेद *हिन्दुस्तान टाइम्स*से लिये गये हैं।

लिखना पड़ेगा कि जिन लोगोंने सरकारी संस्थाओंका बहिष्कार किया था, उन्होंने अपना और अपने देशका बहुत भला किया था।

मुझे उन शानदार दिनोंके कुछ चिह्न यहाँ देखकर खुशी हो रही है, और मुझे बहुत हर्ष है कि आप झंडेको ऊँचा रखनेका पूरा-पूरा प्रयत्न कर रहे हैं। आपकी संख्या थोड़ी है, लेकिन संसारमें अच्छे और सच्चे व्यक्तियोंकी संख्या बहुत ज्यादा कभी नहीं रही है। मैं आपसे कहता हूँ कि आप संख्या थोड़ी होनेकी चिन्ता न करें, बल्कि याद रखें कि आप कितने ही थोड़े हों, लेकिन देशकी स्वतन्त्रता आपपर निर्भर है। स्वतन्त्रताका आपके किताबी ज्ञान प्राप्त करने या यन्त्रवत तकली चलाने-मात्रसे भी कोई वास्ता नहीं है। अगर आपमें वे सब चीजें नहीं है जो भारतकी स्वतन्त्रताके लिए आवश्यक हैं तो मैं नहीं जानता कि और किसमें हैं। वे चीजें हैं ईश्वरका भय मानना और किसी भी मनुष्यसे या साम्राज्य कहलानेवाले बहुतसे मनुष्यों-के संगठनसे न डरना। यदि इन दो चीजोंकी शिक्षा इस संस्थामें नहीं प्राप्त की जा सकती तो मैं नहीं जानता कि और कहाँ की जा सकती है। लेकिन मैं आपके प्रोफे-सरोंको जानता हूँ, मैं हकीम साहबको जानता हूँ, और मुझे विश्वास है कि यहाँ ये दो बुनियादी चीजें बहुत सावधानीके साथ सिखाई जा रही हैं।

आपकी संस्थाकी असन्तोषजनक आर्थिक स्थितिकी मैं परवाह नहीं करता। तथ्य तो यह है कि मुझे खुशी है कि हम कठिनाईके साथ गुजारा कर रहे हैं, क्योंकि तब हम अपने रचयिताको और सच्चे मनसे याद करेंगे और उससे डरेंगे।

महात्माजीने इस तथ्यपर बहुत जोर दिया कि यदि विश्वविद्यालय अच्छा काम कर रहा है तो आपको दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि ईश्वर आपको धन दे देगा।[1]

हकीमजीकी यह बात बिलकुल ठीक है कि मेरे लिए दिल्ली आना मुश्किल था। लेकिन आपके पास आना मेरे लिए बड़ी सान्त्वना और राहत देनेवाली चीज थी। मैं आपको खुश करनेके लिए नहीं, खुद अपनेको खुशी देनेके लिए यहाँ आया हूँ। मैं यहाँ एक स्वार्थपूर्ण उद्देश्यसे आया हूँ, और वह है आपको यह बताना कि आपकी मिलियाके बाहर जो घृणा और जहरका बवण्डर चल रहा है, हिन्दू और मुसलमान जो एक-दूसरेके खूनके प्यासे हो रहे हैं, उन सबके बावजूद, आप लड़के लोग यहाँ अपने दिमाग ठंडे रखेंगे, अपने रचयितासे विमुख न होंगे, अपने दिलोंमें घृणाको कोई स्थान न देंगे, तथा अपने देश और देशके धर्मोंको विनाशकी राहपर जाते देखकर मनमें भी खुश न होंगे। यही एक आशा है जो मुझे आपके पास खींच लाई है।

आपने ध्यान दिया होगा कि मैंने खादी या तकलीके बारेमें कुछ नहीं कहा है। उसकी वजह यह है कि जिन दो बुनियादी गुणोंके बारेमें मैंने आपसे बात की है, उनके सामने खादी और तकली भी कुछ नहीं हैं। आप तकली चला सकते हैं और खादी पहन सकते हैं, लेकिन मैंने आपसे जो चीजें करनेको कहा है, यदि आप उन्हें

१. यह अनुच्छेद हिन्दुस्तान टाइम्ससे लिया गया है।

नहीं करते तो आपकी खादी और तकली व्यर्थ होगी। लेकिन मुझे विश्वास है कि हकीम साहबने आपसे खादी पहननेकी आवश्यकताके बारेमें जो-कुछ बताया है, उसे आप भूलेंगे नहीं। आप यह बात ध्यानमें रखेंगे कि खादीके जरिये ही हम आज सैकड़ों बुनकरों, धोबियों, बढ़इयों आदिके अलावा ५०,००० कतैयोंको रोजी दे रहे हैं। यह मत भूलिए कि इनमें बहुत-से मुसलमान हैं। चरखेके बिना कई जगहोंपर मुसलमान औरतें भूखों मर रही होतीं। खादी पहननेके सिवा कोई दूसरा तरीका नहीं है जिसके जरिये आप गरीब हिन्दुओं और मुसलमानोंके साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर सकें।

इसके बाद महात्माजी चरित्र-निर्माणकी अनिवार्य आवश्यकताके विषयमें बड़ी उत्कटतासे बोले। उन्होंने कहा :

देशमें अपने दौरोंमें मैं हजारों छात्रोंसे मिलता हूँ। मैं देखता हूँ कि वे भद्दी और गन्दी आदतोंमें फँसे हुए हैं। उनकी चर्चा करनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि आप सभी उन्हें जानते हैं। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको उन गन्दे कामोंसे बचाये। जब मनुष्य अपने हाथ, आँखों और अपने दिमागको गन्दा कर लेता है तो वह मनुष्य नहीं रह जाता, बल्कि पशु बन जाता है।[1]

हाथ, दिमाग या आँखोंसे कोई बुरा काम करनेसे आपको हमेशा बचना चाहिए। यदि हम सच्चे वीर पुरुष बनना चाहते हैं तो हमें सभी स्त्रियोंको उनकी आयुके हिसाबसे अपनी माँ, बहन या बेटी मानना चाहिए। किसी स्त्रीपर बुरी नजर न डालिए। हमें स्त्रियोंके सम्मानकी रक्षाके लिए मरनेको तैयार रहना चाहिए। मैं जानता हूँ कि लोग आजकल इस कर्त्तव्यको भूलते जाते हैं। मैं ईश्वरसे एक बार फिर प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको इस बुराईसे बचाये।[2]

और सबसे बड़ी बात यह है कि आप अपने-आपको शुद्ध और स्वच्छ रखें, प्राणोंकी कीमतपर भी अपने वचनको निभाना सीखें, और मैंने जो दृष्टान्त आपके सामने दिये हैं, उनकी याद अपने दिलोंमें हमेशा ताजा रखें।

अन्तमें महात्माजीने छात्रोंको थैलीके लिए धन्यवाद दिया और यह कामना व्यक्त की कि उनका विश्वविद्यालय दीर्घजीवी हो और भारतकी आजादीका केन्द्र बने।[3]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-११-१९२७

हिन्दुस्तान टाइम्स, ४-११-१९२७

१, २ तथा ३. ये अनुच्छेद हिन्दुस्तान टाइम्स से लिये गये हैं।

१४०. स्वयंको बदलनेकी आवश्यकता

लोकमान्यने हमें अपना सन्देश चार सीधे-सादे शब्दोंमें दिया था। लेकिन आज भी ऐसे लोग हैं जिन्हें इस सिद्धान्तमें शंका है कि स्वराज्य उनका जन्म-सिद्ध अधिकार है — उसी प्रकार जिस प्रकार कुछ लोग ईश्वरके अस्तित्वमें शका करते हैं। अतः स्वराज्य आन्दोलन हमें इस बातकी प्रतीति करानेका आन्दोलन है कि स्वराज्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है। स्वयंको बदलनेकी आवश्यकताका स्मरण दिलानेवाली बहुत-सी चीजें हमारे बीच पहले ही मौजूद हैं, लेकिन नीलकी प्रतिमा-सम्बन्धी सत्याग्रहपर मद्रास विधान परिषदमें हुई बहस मानो हमारी आँखमें अँगुली डालकर हमें इस आवश्यकताकी याद दिलाती है। इस विक्षोभकारी प्रतिमाको हटानेकी माँग करनेवाला निर्दोष प्रस्ताव भारी बहुमतसे अस्वीकार कर दिया गया। कुछ निर्भीक लोगोको छोडकर लगभग सभी भारतीय सदस्योंने इस प्रस्तावके विरुद्ध मत दिये। इस प्रस्तावपर हुई बहससे स्वराज्यवादी मनोवृत्ति तथा अन्य सभी प्रकारकी मनोवृत्तियोंके बीचके प्रखर अन्तर स्पष्ट हो गये। यह मतदान और बहस इस तथ्यका ताजा उदाहरण है कि स्वराज्यमें जो विलम्ब हो रहा है, वह अंग्रेज "शासकों" की हठधर्मिताके कारण उतना नही है, जितना कि इस कारण है कि हम अपने दर्जेको पहचानने और उसके लिए काम करनेसे इनकार करते हैं। नीलकी प्रतिमाको हटानेके लिए होनेवाला यह आन्दोलन, मेरी विनम्र रायमें, हमारे लक्ष्यकी दिशामें एक कदम है। मैं नीलकी प्रतिमाको हमारी गुलामीका प्रतीक मानता हूँ, और राष्ट्रीय स्वाभिमानकी माँग है कि इसे तथा ऐसे प्रत्येक प्रतीकको हटा दिया जाये। यह आन्दोलन इस तथ्यके कारण और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि इसका लक्ष्य कोई भौतिक लाभ प्राप्त करना नही है। जब करोड़ों भारतीय केवल स्वाभिमानकी रक्षाके लिए एक होकर अपनेको बलिदान करनेको तैयार हो जायेंगे तो स्वराज्य आसानीसे प्राप्त किया जा सकेगा। यूनियन जैकका अपमान होनेपर कोई अंग्रेज व्यक्तिगत तौरपर अपमानित क्यो अनुभव करता है और इस अपमानके विरुद्ध रोष प्रकट करनेकी कोशिशमें वह किसलिए अपनी जान भी दे देगा? यह कोई ऐसी भावना नहीं है जिसका तिरस्कार किया जाये या जिसे दबाया जाये। अपने झण्डेका अपमान होनेपर क्रोधव्यक्त करनेके लिए वह जो तरीका अपनाता है वह निःसन्देह अक्सर बर्बर तरीका होता है, लेकिन यदि वह इस भावनाको छोड़ दे, तो वह अपनी राष्ट्रीय एकता और जिस राष्ट्रका वह सदस्य है, उस राष्ट्रके लिए अपने-आपको उत्सर्ग कर देनेकी शक्ति खो बैठेगा। इसी प्रकार यदि हमें अपने जन्म-सिद्ध अधिकारकी प्रतीति होती तो हमारे लिए यह जानना गर्वकी बात होती कि ऐसे भी नवयुवक है जिन्हें हमारे बीच एक ऐसी प्रतिमाके होनेपर एतराज है जिसका होना राष्ट्रके लिए अपमानजनक है। बहसमे भाग लेनेवाले कई भारतीय सदस्योंने ऐसी प्रतीति या गर्वका कोई परिचय नही दिया। उनके लिए राष्ट्रकी लड़ाई लडनेवाले ये नौजवान अज्ञानी व्यक्ति है, जिनका आचरण केवल निन्दाके योग्य ही है। उन्हें

[नीलकी] प्रतिमाके एक ऐसे प्रमुख सार्वजनिक स्थलपर मौजूद रहनेमे कोई बुराई नही नजर आती जहाँ केवल उन राष्ट्रीय नायकोकी प्रतिमाएँ होनी चाहिए जिनका जीवन राष्ट्रको अनुप्रेरित करेगा और उदात्त बनायेगा।

यह बात बहुत स्पष्ट करनेकी जरूरत नही है कि यह सत्याग्रह व्यक्तिगत रूपमे जनरल नीलके विरुद्ध नही है। 'आतक' के साम्राज्यको स्थायित्व प्रदान करनेके उद्देश्य से यदि जनरल नीलकी जगह जनरल वीरसिंहकी प्रतिमा खड़ी की गई होती तो भी यह सत्याग्रह उतना ही उचित और आवश्यक होता।

बहसके दौरान यूरोपीयोकी ओरसे प्रतिमाका एक बचाव पेश किया गया था। उसे काफी सावधानीके साथ, सयत और युक्तियुक्त शब्दोमें रखा गया था। तथापि उससे यूरोपीय मनोवृत्ति झलकती थी। जनरल नील जिस चीजके प्रतीक थे, वह साम्राज्यको बचानेके लिए आवश्यक थी। और जनरल नीलके दुष्कृत्योको ढँकनेके लिए उनका बचाव करनेवालेके लिए यह जरूरी हो गया कि वह 'द अदर साइड ऑफ द मेडल' ('तसवीरका दूसरा पहलू') के लेखक श्री टॉमसनको पागल करार दे दें और एक घिनौना अभिनन्दनपत्र कहीसे खोज निकाले जिसे गदरके दो वर्ष बाद मद्रासके ११० हिन्दुओने जनरल नीलकी रेजीमेंटको प्रदान किया था। जिन परिस्थितियोमे यह अभिनन्दनपत्र दिया गया था, उनका पता चलानेका मेरे पास कोई तरीका नही है, लेकिन मुझे इसमें आश्चर्यकी कोई बात नही लगती कि ऐसा एक अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया। क्योकि हालकी घटनाओमें से भी ऐसे दृष्टान्त दिये जा सकते है। क्या जनरल डायरको स्वय अमृतसरमें ही इसी प्रकारका एक अभिनन्दनपत्र नही भेंट किया गया था? और यह आश्चर्यकी बात होगी कि यदि आज भी सर माइकेल ओ'डायर भारत लौटें और अच्छे शासनके हितमें जरूरी समझा जाये तो उन्हे एक अभिनन्दनपत्र भेंट करनेके लिए ११० भारतीय न मिले। क्या हमारे ही समयमें अत्यन्त अलोकप्रिय वाइसरायोंको भी अभिनन्दनपत्र और ट्राफियाँ नही प्राप्त हुई है?

यह बडे ही दुःखकी बात है कि अग्रेज लोग भारतीयोकी उन भावनाओकी सराहना करने लगते है जिन्हें यदि कोई अंग्रेज व्यक्त करे तो वे स्वयं शर्मिन्दा होंगे। मुझे याद है कि एक सम्मेलनमें राजभक्तिसे सम्बन्धित एक प्रस्तावपर बोलते हुए एक विद्वान भारतीयने यह कहा कि वे प्रत्येक अग्रेजको अपना शिक्षक मानते है और वे जो-कुछ है, सब ब्रिटेनकी दयासे ही बने है, तो एक गवर्नरकी पत्नीने सबसे पहले जोरसे तालियाँ बजाई थी। मद्रासमें जो-कुछ हुआ, वह कुछ इसी ढंगकी चीज थी और इससे मुझे दुःख हुआ।

लेकिन मद्रास विधान परिषदमें जो विपरीत फैसला हुआ, उसमें आतंकवादके प्रतीकोंके विरुद्ध सघर्ष करनेवाले नवयुवकोको निरुत्साह नही होना चाहिए। उन्हे आन्दोलनका इस समय विरोध करनेवाले अग्रेजो या भारतीयोंके विरुद्ध क्रोध नही करना चाहिए। उन्हे अपने-आपमे और अपने उद्देश्यमें विश्वास होना चाहिए। यदि उनका यह विश्वास बना रहा तो वे एक दिन उन्ही लोगोको अपनी ओर कर लेंगे

जो आज उनका विरोध कर रहे हैं। जिस आन्दोलनकी उन्होंने बुनियाद डाली है, उसे यदि वे बिल्कुल अहिंसात्मक और निर्धारित मर्यादाके अन्दर रखेंगे तो वह सफल होकर रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३-११-१९२७

१४१. तार: मीठूबहन पेटिटको

३ नवम्बर, १९२७

मीठूबहन पेटिट
बम्बई

आज रात अहमदाबादसे बम्बई के लिए रवाना हो रहा हूँ। पाँच की शामको कोलम्बो रवाना होऊँगा।

अंग्रेजी (एस० एन० १२८३८) की माइक्रोफिल्मसे।

१४२. तार: सोमसुन्दरम्को

५ नवम्बर, १९२७

सोमसुन्दरम्
प्रोक्टर
८९, डैम स्ट्रीट
कोलम्बो

ब्रिटिश इंडिया मालवाहक जहाजसे कल सुबह तड़के रवाना हो रहा हूँ। लगभग दस तारीखतक पहुँचूँगा।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२८३८) की माइक्रोफिल्मसे।

१४३. तार: जालरस्टको

५ नवम्बर, १९२७

जालरस्ट[1]
बम्बई

आज रात गुजरात मेलसे रवाना हो रहा हूँ। ग्रान्ट रोड स्टेशनपर मिलो। स्टेशनसे सीधा कोलम्बो जानेके लिए जहाज पकड़ने चला जाऊँगा।

अंग्रेजी (एस० एन० १२८३८) की माइक्रोफिल्मसे।

१४४. तार: चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

५ नवम्बर, १९२७

च० राजगोपालाचारी
गांधी आश्रम
तिरुचेङ्गोडु

कल सवेरे तड़के जहाजसे रवाना हो रहा हूँ। लगभग दसको कोलम्बो पहुँचूंगा। कोलम्बो तार दें। लक्ष्मीको साथ लायें।

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १२८३८) की माइक्रोफिल्मसे।

१४५. पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

बम्बई
रविवार [६ नवम्बर, १९२७][2]

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मीला है। अनायास ही मीला। क्योंकी जिस जहाजमें मैं जानेवाला था वह रुक गया।[3] अच्छा हुआ।

१. सम्भवतः जालभाई और रुस्तमजीकी फर्म।
२. लंका जानेवाले जहाजके रुक जानेके उल्लेखसे।
३. देखिए अगला शीर्षक।

'मारवाड़ी व्याज' प्रयोगसे दुःख लगना नहि चाहीये था। लगा तो मेरे जैनेके तो उसी समय कह देना चाहीये था। मैंने तो उस शब्दका प्रयोग केवल विनोदमें ही कीया था। काठीयावाड़ी शब्दका प्रयोग में बूरे अर्थमें बहोत करता हुं। काठीयावाड़ीका अर्थ खरपटीलुच्चा ऐसे होता है। इसका अर्थ यह तो नहि है की मैं भी ऐसा हुं। आपके प्रेमके वश होकर मैं विनोदमें भी आप चाहें तो मारवाड़ी शब्दका बूरे अर्थमें प्रयोग नहि करूंगा। परंतु मैं चाहता हुं कि आप ऐसे शब्दप्रयोगसे न डरें। 'व्हेन ग्रीक मीट्स ग्रीक' का[1] प्रयोग प्रख्यात है। इससे कोई ग्रीक मात्रको दगाबाझ नहि समझेगा।

आपके जाननेके लीये मैं लीखता हूं की गूजरातमें भी अयोग्य और निर्दय सूद लेनेवाले बहोत हैं। मारवाड़ी अच्छे हो या बूरे आप तो शरीरमें अच्छे बन जांय जैसे हृदयसे हैं; और मारवाड़ीकी आहूती भारतवर्षके यज्ञमें कर दें।

आपका,
मोहनदास

११–२१ कोलम्बो[2]
२२–२५ यात्रा[3]

सी० डब्ल्यू० ६१५० से।
सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१४६. पत्र: मीराबहनको

६ नवम्बर, १९२७

चि० मीरा,

'मेरे मन कछु और है, विधनाके कछु और'। बम्बई पहुँचनेपर शान्तिकुमारने बड़े इत्मीनानसे मुझे बताया कि जहाज आज नहीं जा रहा है, कल जायेगा। इसमें उनका कोई दोष नही था। उन्हें स्वयं इतनी देरसे इस स्थगनका पता चला कि मुझे सूचित नहीं कर सके। मैं चाहता तो आज रेलगाड़ीसे चल सकता था। लेकिन मैं एक दिनके विलम्बमें हर्ज नहीं समझता। स्टीमर ९ या १० तारीखको तूतीकोरिन पहुँचेगा।

मुझे आशा है कि तुम पूरी तरह सुचित्त हो और तुमने कृष्णदासके साथ सब-कुछ साफ कर लिया है। मैं कल भणसालीके साथ अपनी बातचीतसे सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसकी आँखें और भाव-भंगिमा बदल गई हैं। वह बहुत भलमनसाहत और

१. मूलमें यह अंग्रेजी लिपिमें लिखा था।
२ व ३. मूलमें आँकड़े हिन्दीमें तथा शब्द अंग्रेजीमें लिखे थे।

मृदुतामे पेश आया, लेकिन उनके ढगमें कुछ अजीबपन और एक अस्वाभाविकता थी जिससे मुझे कष्ट हुआ। मैं चाहता हूँ कि तुम उससे सम्पर्क बढाओ और इस अशान्त मन.स्थितिमे निकलनेमें उसकी मदद करो। लेकिन उसके साथ बहुत स्नेह और सावधानीका व्यवहार करनेकी जरूरत है।

मैं कल (सोमवारको) शायद नही लिखूंगा, क्योकि [स्टीमर] कही रुकेगा नही जहाँसे पत्र डाकमे डाला जा सके। पत्रोंके उत्तर देनेका काम पूरा करनेके लिए आज मैंने विशेष रूपसे मौन रखा है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९१) से।
सौजन्य : मीराबहन

१४७. पत्र : मणिलाल व सुशीला गांधीको

६ नवम्बर, १९२७

चि० मणिलाल व सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिलते रहते है, किन्तु इन्हे मैं व्यवहार बनाये रखने या वचनका पालन करनेके लिए लिखे गये पत्र मानता हूँ। मैं अपने बुजुर्गोको जो पत्र लिखता था वे इस तरह नही लिखता था बल्कि उन पत्रोंमें मै अपने रहन-सहनका विवरण दिया करता था। ३२ वर्षकी मीराबहन आज भी हफ्तेमें दो-चार पत्र लिख पाती है, वे भी १०-१०, २०-२०, पन्नोंके होते है। वह अपनी मांको भी हर हफ्ते जो पत्र लिखती है उसमें भी वह अपना कलेजा निकालकर रख देती है। तुम दोनोमें से किसी एकको तो समय मिलना ही चाहिए। तुम्हारा प्रेस कैसा चल रहा है, तुम्हारी क्या-क्या दिक्कतें है, तुम्हारा खर्च बढा या घटा, अखबारके कितने ग्राहक है आदि बहुत-सी बातोंके बारेमें तुम यदि लिखना चाहो तो लिख सकते हो; और यदि चाहो तो वहांकी सामाजिक और राजनैतिक स्थितिका हाल भी लिख सकते हो जिसका मै यथासमय उपयोग भी कर सकता हूँ।

सुशीला क्यों पनप नही पा रही है? क्या वह खुराक पचा लेती है? क्या खाती है? कितना दूध पीती है? तुम्हें गायका ताजा दूध मिल पाता है न? आजकल सुशीला प्रेसमें कितना काम कर पाती है?

मैं शायद इस बारकी डाक चूक जाता; किन्तु भगवानने बचा ही दिया। आज ही मुझे समुद्री रास्तेसे कोलम्बोके लिए रवाना होना था। वहाँसे मै दक्षिण आफ्रिका-मेल नही पकड सकता था। आज रविवार है और मेल बुधवारको चलता है।

सोरावजी और उनकी वहू आज यहाँ पहुँच गये और मेरा आशीर्वाद ले गये। विवाह १८ तारीखको होगा। हरिलालके वारेमें वहुत-कुछ लिखता किन्तु आज मैं इसमें वक्त खर्च नहीं करना चाहता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७२७) की फोटो-नकलसे।

१४८. सन्देश: लंकाकी जनताको

[७ नवम्वर, १९२७ या उससे पूर्व]

हालाँकि मैं लंका दरिद्रनारायणके एक आत्म-नियुक्त प्रतिनिधिकी हैसियतसे जा रहा हूँ और इसीलिए भिक्षापात्रके भरनेकी मुझे काफी आशा है, फिर भी इस ऐतिहासिक द्वीपकी यात्रा करनेकी मेरी वहुत समयसे अभिलाषा थी। १९०१ में वहाँ मैं लगभग पहुँच ही गया था, लेकिन ईश्वरको कुछ और मंजूर था। मैं एक श्रमिक हूँ और लंकाके उन श्रमिकोसे मिलकर मुझे खुशी होगी, जिनके कारण लका अपनी वर्तमान स्थितिमें पहुँच सका है।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन ऑब्जर्वर, ७-११-१९२७

१४९. तार: एन० आर० मलकानीको

वम्वई
७ नवम्वर, १९२७

प्रोफेसर मलकानी
नेशनल कालेज
हैदरावाद (सिन्ध)

यदि थडानी मुक्त कर दें तो तुम सारा ध्यान [वाढ़-पीड़ितोंको] राहत देनेके कामपर लगाओ।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ८८०) की फोटो-नकलसे।

१५०. पत्र : मीराबहनको

७ नवम्बर, १९२७

चि० मीरा,

हालाँकि कुछ कहनेको नहीं है, लेकिन हर सोमवारको तुम्हें लिखनेकी अपनी आदतको मैं तोड़ना नहीं चाहता।

मैं मान रहा हूँ कि दुग्ध-शालाओंके बारेमें तुम जो पुस्तकें पढ़ रही हो, उनमें से नोट ले रही हो। अब जब तुम उसी काममें लग गई हो तो मैं चाहता हूँ कि तुम उस क्षेत्रमें विशेषज्ञ बन जाओ। अगर तुमसे सध सके तो तुम्हें आँकड़ोंपर भी पूरा कमाल हासिल करना होगा। बस इतना ध्यान रहे कि इस चीजको लेकर या किसी चीजको लेकर अपनेको परेशान मत करना — उतना ही करना जितना आसानीसे कर सको।

तुम छोटेलालसे सम्पर्क बढ़ाओ। उसे अपने अटपटे स्वभाव और अपनी निराश मनःस्थितिसे छुटकारा पाना ही चाहिए। उसका व्यक्तित्व अब खुलना चाहिए।

पारनेरकरके बार-बार बीमार पड़नेके कारणका भी पता चलाओ। यदि उसे काफी काम करना है तो उसे स्वस्थ रहना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

समुद्र-यात्रा बड़ी आनन्ददायक है।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९२)से।
सौजन्य : मीराबहन

१५१. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

७ नवम्बर, १९२७

भाई बनारसीदासजी,

आपके दो पत्र मीले थे परंतु मुसाफरीके कारण इससे आगे मैं उत्तर न लीख सका।

अब कुछ स्थायी काम ले लीया है उसमें मुझे बहोत अच्छा लगता है।

गेरीसनकी जीवनी जो आश्रममें है उसको भेजनेका मैं आश्रममें लीखता हुं। उपयोग होनेके बाद आप वापिस भेज देंगे।

आपका,
मोहनदास

[पुनश्च :]

अफरीका जानेका छोड़ दीया उचित हुआ है।

पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी
९१, अपर सरकुलर रोड
कलकत्ता[1]

जी० एन० २५५८ की फोटो-नकलसे।

१५२. पत्र : तुलसी मेहरको

कार्तिक शुक्ल १३ [७ नवम्बर, १९२७][2]

चि० तुलसी मेहर,

नव वर्षका तुम्हारा खत अभी पढ़ने पाया। लंका जाती हुई जहाजमें हम सब हैं। साथ काका साहेब भी हैं। तुमारा कार्य अच्छा चलता हुआ देखकर और तुमारी प्रसन्नता देखकर मुझे बड़ा आनन्द होता है। लंकामें कुछ दो हफ्ते होंगे। उसके बाद उत्कल और पीछे मद्रास और जानेवारीमें आश्रम। मैं आश्रममें दो दिन रह आया।

१. मूलमें पता अंग्रेजीमें लिखा था।
२. लंकाकी यात्राके उल्लेखसे।

मलेरियाका जोर कुछ मालूम होता है। देवदासकी हरसका ऑपरेशन कराया अब अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

श्री तुलसी मेहर
चर्खा प्रचारक
नेपाल

जी० एन० ६५३२ की फोटो-नकलसे।

१५३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

सोमवार [७ नवम्बर, १९२७][1]

चि० गंगाबहन (बड़ी),

मुझे गाडीमें अचानक रमीबहन मिल गई। वह महेमदावादसे नडियाद तक मेरे साथ ही आई और लगातार तुम्हारे बारेमें ही बातें करती रही। उसे इस बातका दुःख है कि तुम बच्चोंको नहीं सम्भालती। मैंने कहा कि यदि गंगाबहनको उसकी शर्तपर बच्चे सौंप दिये जायें तथा उसके काममें कोई दखल न दे तो वह बच्चोंको अवश्य सम्भाल लेगी। मेरे इतना कहनेपर उसने कोई उत्तर नहीं दिया। रमीबहनको तुम पत्र तो लिखती ही होगी। उसकी भावनाएँ शुद्ध हैं। आजकल वह अक्षरज्ञान प्राप्त करनेमें जुटी हुई है।

तुमपर जो जिम्मेदारी आ पड़ी है उससे जरा भी विचलित मत होना। तुमने अबतक जो ज्ञान और अनुभव प्राप्त किया है उसकी परीक्षा इसी समय होगी। तुम शान्ति, धैर्य तथा उदारतासे सभी कठिनाइयोंको दूर कर सकोगी। जैसे अकेला समुद्र भी नदियोंको अपनेमें समा लेता है, उन्हें शुद्ध करता है और फिर उसी पानीको लौटा देता है, उसी प्रकार यदि तुम अकेली ही समुद्रके समान बन जाओ तो सभीको आश्रय दे सकोगी। जैसे समुद्र अच्छी और बुरी नदियोंमें भेद न करके सभी को शुद्ध करता है उसी प्रकार जिसका हृदय अहिंसा और सत्यके द्वारा शुद्ध होकर विशाल बन गया है, ऐसे एक ही व्यक्तिके हृदयमें सब समा जाते हैं, तिसपर भी वह न तो उफनता है और न उसमें किसी प्रकारका विकार उत्पन्न हो पाता है। तुम्हें ऐसा ही बनना है, यह याद रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८७०६) से।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

1. बापुना पत्रो-६ : गं० स्व० गंगाबहेनने के आधारपर।

१५४. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, ७ नवम्बर, १९२७

बहनो,

यह पत्र जहाजमें लिख रहा हूँ। डाकमें तो दो दिन बाद डाला जायेगा, लेकिन मेरी आदत तुम्हें सोमवारको ही लिखनेकी है इसलिए आज ही लिख डालता हूँ।

इस बार आश्रममें दो दिन खूब काममें बीते। थकावटके बावजूद आश्रम छोड़ना अच्छा न लगा।

तुम देखती होगी कि तुम सबकी जिम्मेदारी दिन-दिन बढ़ती जा रही है। किन्तु किसीको घबराना नहीं चाहिए। कर्त्तव्य-परायण बनी रहना और अशान्तिमें भी शान्ति प्राप्त करना सीखना। हमारा आनन्द हमारे धर्म-पालनमें हो, कार्यकी सफलता या परिस्थितियोंकी अनुकूलतामें नहीं। नरसिंह मेहताने कहा है:

नीपजे नरथी तो कोई नव रहे दुखी

शत्रु मारीने सहु मित्र राखे।[1]

मगर मनुष्य तो रंक प्राणी है। वह राजा तभी होता है जब कि वह अहंकारको छोड़कर ईश्वरमय हो जाता है। समुद्रसे अलग होकर बूंद किसी कामकी नहीं रह जाती। परन्तु समुद्रमें विलीन हो जानेसे वह अपनी छातीपर इस बड़े जहाजके भारको वहन करनेमें समर्थ होती है। इसी तरह अगर हम आश्रममें और उसके जरिये जगत्में यानी ईश्वरमें समा जाना सीख लें तो पृथ्वीका भार उठानेवाले माने जायेंगे। मगर उस समय तो 'मैं-तू' मिटकर 'वह' अकेला ही रह जायेगा।

मालका ही जहाज हो तो उसमें बड़ी शान्ति रहती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७५) की फोटो-नकलसे।

१. अर्थात् मनुष्यके वशकी बात हो तो कोई भी दुःखी न रहे; वह शत्रुओंका नाश करके केवल मित्रोंको ही रहने दे।

१५५. पत्र : वि० ल० फड़केको

सोमवार [७ नवम्बर, १९२७][1]

भाई मामा,

वरतेजके अन्त्यज आश्रमके बारेमें लिखा तुम्हारा लेख कल ही पढ़ पाया हूँ। लंका जाते हुए जहाजमें बैठा हुआ यह लिख रहा हूँ। उक्त लेख अब तो बहुत पुराना पड गया है इसलिए मैं इसी रूपमें इसे छपनेको नहीं भेज रहा हूँ। अन्त्यज आन्दोलनके बारेमें लिखने योग्य प्रसग आनेपर देखूंगा। तुम्हारी गाड़ी कैसी चल रही है? काका मेरे साथ ही है। मेरी तबीयत भी ठीक ही कही जा सकती है।

११–२१ कोलम्बो

२२–२५ जफना

इसके बाद उड़ीसा और फिर मद्रास — काग्रेस अधिवेशनके समय।

बापूके वन्देमातरम्

श्रीयुत मामा साहेब फड़के
अन्त्यज आश्रम
गोधरा, बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजराती (जी० एन० ३८१९) की फोटो-नकलसे।

१५६. पत्र : जी० एन० कानिटकरको

लंका जाते हुए
८ नवम्बर, १९२७

प्रिय कानिटकर,

जो रिपोर्ट तुम मेरे पास छोड़ गये थे, वह मैंने पूरी पढ़ ली है। रिपोर्ट पढ़नेमें रोचक लगी। मुझे आशा है कि रिपोर्टमें जिन बातोंकी उम्मीद व्यक्त की गई है, उन्हें तुम पूरी करोगे और उत्तम कोटिका और सस्तेसे-सस्ता चरखा तैयार करनेमें सफल होगे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९६१) से।
सौजन्य : गजानन कानिटकर

१. डाककी मुहरसे।

१५७. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

मंगलवार, कार्तिक सुदी १४ [८ नवम्बर, १९२७][1]

सुज्ञ भाईश्री,

यह पत्र अगनबोटमें लिख रहा हूँ। तुम्हारा लम्बा पत्र यथासमय मिल गया था।

मुझे तो ऐसा लगा कि मेरे जैसे व्यक्तिको दिल्ली बुलानेकी कोई जरूरत नहीं थी, मेरी रायमें अन्य लोगोंको बुलाना भी ठीक नहीं था। क्योंकि वाइसराय दूसरोंका मत नही जानना चाहते थे बल्कि अपना मत ही जताना चाहते थे। इस विचित्र घटनासे मुझे आश्चर्य नही हुआ। इस घटनासे देशकी स्थितिकी झलक मिलती है।

हिन्दू-मुस्लिम समस्याको सुलझानेके बारेमें तुम्हारा इलाज तो मर्जसे भी बदतर है। यदि प्रचलित सामान्य कानूनपर सही ढंगसे अमल किया जाये तो बहुतसे झगड़े-टंटे आज ही मिट जायें। इस समस्यापर विस्तारसे चर्चा हुई थी। मै यह नही मानता कि फौजी कानून लागू करके दोनों लड़नेवाले फिरकोंमें एकता कायम की जा सकती है। यदि सरकारकी नीति दोनोंको लड़ाकर सत्ता बनाये रखनेकी न हो तो शायद हिन्दू-मुस्लिम झगड़े कुछ ही महीने चलें। पहले दोनों लड़ लें और फिर एक हो जायें किन्तु यह तो एक लम्बी बात है।

अपना स्वास्थ्य सुधारनेके लिए यदि तुम कही जाकर आराम करो तो अच्छा हो — कामसे छुटकारा लेकर नही, चिन्तासे छुटकारा लेकर।

मैं लंकामें १५ दिन रहूँगा। इसके बाद इस महीनेकी २६ तारीखको उड़ीसाके लिए रवाना हो जाऊँगा। वहाँसे क्रिसमसके समय मद्रास जाऊँगा और जनवरीमें आश्रम लौट आऊँगा। काठियावाड़ परिषदका[2] अधिवेशन १४-१५ जनवरीके आसपास होनेकी सम्भावना है।

मोहनदासके वन्देमातरम

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३२१८)की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : महेश पट्टणी

१. इस दिन गांधीजी लंकाके रास्तेमें एस० एस० कोलाबा जहाजपर थे।
२. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद।

१५८. क्या वह विफल रहा?

अखबारोंमें अकसर ही पढ़नेको मिलता है कि असहयोग आन्दोलन पूर्ण रूपमे विफल रहा। कई शिष्ट आलोचक अकसर बातचीतमें कुछ संकोचके साथ इसकी चर्चा छेड़ देते है और मुझे नरमीसे बतलाते हैं कि अगर मैंने देशको अपने नासमझी-भरे असहयोग आन्दोलनके जरिये गुमराह न कर दिया होता तो उसने बहुत जबर्दस्त उन्नति कर ली होती। इस विषयका आजकी राजनीतिसे कोई सम्बन्ध नही है, इस-लिए यदि मुझे इस बातका विश्वास न होता कि असहयोग हमें एक सक्रिय शक्तिके रूपमे प्राप्त हुआ है जो एक दिन सर्वव्यापी हो जा सकता है तो मैं इस विषयकी चर्चा न करता। साथ ही मेरा उद्देश्य उन लोगोको आश्वस्त करनेका भी है जो आलोचनाओं और शंकाओका सामना करते हुए बहादुरीके साथ असहयोगके पक्षमें दृढतापूर्वक बने हुए हैं। तथापि मैं इस खतरनाक अर्द्धसत्यको स्वीकार करता हूँ कि हिंसात्मक होते ही असहयोग आन्दोलन बिलकुल विफल हो गया। वस्तुतः यहाँ असह-योग और हिंसा दो परस्पर विरोधी शब्द हैं। यह एक जीवन्त धारणा है कि हिंसा हिंसापर ही जीवित रहती है और अपने अस्तित्वके लिए उसे हर क्षण प्रतिहिंसा-की भावनाकी आवश्यकता होती है। इसी धारणाने अहिंसापूर्ण असहयोगको जन्म दिया। इसलिए तथ्य यह है कि जिस क्षण असहयोग हिंसात्मक हो गया, उसने अपनी शक्ति और राष्ट्रनिर्माणकारी स्वरूप खो दिया। लेकिन जिस हदतक वह अहिंसा-त्मक था और रहा, उस हदतक वह पूर्ण सफल रहा, जिसे देखा जा सकता था। १९२० में सहसा ही जो जन-जागृति हुई, वह अहिंसाकी प्रभावकारिताका शायद सबसे बड़ा प्रमाण था। सरकारने जो प्रतिष्ठा खोई है, वह उसे फिरसे प्राप्त नही हो सकती। उपाधियाँ, अदालते, शिक्षण-सस्थाएँ अब मनमें वह आदर मिश्रित भय नही उत्पन्न करती जो वे १९२०में करती थी। देशके कुछ सबसे अच्छे वकीलोंने वकालत-का पेशा हमेशाके लिए छोड दिया है और उसके बदले अपेक्षाकृत गरीबीका जीवन अपनाकर वे खुश हैं। जो थोड़ेसे राष्ट्रीय स्कूल और कॉलेज बच रहे है उन्होने बहुत अच्छा काम किया है। जब गुजरात-रूपी समृद्ध उद्यानको बाढने तबाह कर दिया था उस समय इस विपत्तिसे जूझनेके लिए जो महान संगठन कायम हो गया, वह उसका एक प्रमाण है। यदि राष्ट्रीय शालाओंके छात्र और अध्यापक तथा अन्य असह-योगी कार्यकर्त्ता न होते तो गुजरातके संकटग्रस्त किसानोको ठीक समयपर जो सहायता मिली और जिसकी उन्हें बहुत जरूरत थी, वह सहायता उन्हें कभी न मिल पाती। इस प्रकारके बहुतसे उदाहरण दिये जा सकते है और यह सिद्ध किया जा सकता है कि भारतमें जो भी वास्तविक राष्ट्रीय जीवन है, विशिष्ट वर्गो और जन-साधारणके बीच जो एक सम्बन्ध है, वह असहयोगके ही कारण है।

फिर कार्यक्रमके तीन रचनात्मक मदोको लीजिए। राष्ट्रीय पुनरुद्धारमें खादी दिनोदिन अधिकाधिक योग दे रही है और वह करीब दो हजार कार्यकर्त्ताओंकी फौजके

जरिये १५००से अधिक गाँवोंकी सेवा कर रही है। खादी पचास हजारसे अधिक कतैयोको और कमसे-कम दस हजार बुनकरों, छपाई करनेवालों, रंगरेजो, धोबियों और अन्य कारीगरोंको ठोस सहायता दे रही है, और वह सहायता ऐसी है जो राष्ट्रको सम्पत्ति बढानेमें योग देती है। अस्पृश्यता तो समाप्त होती हुई चीज है जो जिन्दा रहनेके लिए संघर्ष कर रही है। १९२०-२१की हिन्दू-मुस्लिम एकताने अपनी जबर्दस्त सम्भावनाएँ प्रदर्शित कीं। आज दोनों सम्प्रदायोंके बीच हिंसा, कपट, मिथ्याचार और फूटके ऐसे ही जो अन्य लक्षण हैं वे निःसन्देह भयानक हैं, लेकिन वे भोंडी आत्म-चेतनाके सबूत हैं। असहयोग मन्थनकी एक प्रक्रिया थी और अब भी है, और इसने गन्दगीको सतहपर ला दिया है। और यदि अहिंसात्मक असहयोग एक जीवन्त और शुद्धीकारक शक्ति है तो शीघ्र ही वह हमारी आँखोंके सामने उस शुद्ध एकताको प्रकट कर देगी जो सहज ही हमारी आँखोंके सामने पड़ जानेवाली ऊपरी गंदगीके नीचे अदृश्य रूपसे ठोस आकृति ग्रहण कर रही है। इसलिए मेरे मनमें यह बात दिनके प्रकाशकी तरह स्पष्ट है कि स्वराज्य हमें जब भी मिले, लेकिन वह हमें लन्दनसे भेजे गये दानकी तरह नहीं, बल्कि बुराईकी संगठित शक्तियोंके विरुद्ध कठोर और स्वास्थ्यदायक असहयोग द्वारा अर्जित पुरस्कारके रूपमें ही प्राप्त करना होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-११-१९२७

१५९. पत्र: हरजीवन कोटकको

"कावेरिम्बा" बोटसे
१० नवम्बर, १९२७

यदि एक बार भी स्वप्नदोष हो तो हमें चिन्तित और लज्जित होना चाहिए। यह कहा जा सकता है कि स्वप्नदोष मानसिक विकारके कारण ही होता है। हाल ही मेरे सुननेमें आया है कि जिन्हें कब्ज रहता हो उन्हें भी स्वप्नदोष हो जाता है। यह बात सच तो है किन्तु कब्ज भी विकारके कारण ही होता है। विकारहीन स्त्री या पुरुष आवश्यकतासे अधिक एक चुटकी अन्न भी न लें तो उन्हें कब्ज होगा ही नहीं।

किन्तु चिन्ता भी दो प्रकारकी है। पहले प्रकारकी चिन्ता आवश्यक है और वह मनुष्यको ऊँचा उठाती है और दूसरी अनावश्यक तथा गिरानेवाली है। चिन्ता और शर्मके बावजूद हमारा मन प्रफुल्लित रहेगा बशर्ते कि हमने दोष जान-बूझकर न किया हो, उसमें रस न लिया हो। इस चिन्ताका दूसरा नाम है — सतर्कता। दोषमें रस लेनेसे दूसरे प्रकारकी चिन्ता उत्पन्न होती है और वह बादमें ग्लानि उत्पन्न करती है। यह चिन्ता मनुष्यको खा जाती है और तिसपर वह उस दोषके गढ़ेमें गहरे धँसता चला जाता है। ऐसे मनुष्यको स्वप्नदोषका रोग बढ़ता जाता है जबकि सावधान व्यक्तिका यह रोग कम हो जाता है। अब शायद तुम समझ गये होगे कि जिम

व्यक्तिको स्वप्नदोष होता है, वह कभी निश्चिन्त रह ही नहीं सकता। अतः जो व्यक्ति विकारको जीतनेका शुद्ध हृदयसे प्रयत्न करता है, जाग्रत अवस्थामें विकारोंको अपने वशमें रख सकता है, वह स्वप्नदोष होनेपर घबराता नहीं बल्कि स्वप्नदोष होनेपर और सावधान हो जाता है और यह समझकर कि विकार उसे धीरे-धीरे खाये जा रहे हैं, वह उनसे बचनेका प्रयत्न करता रहता है। यदि इतना करनेपर भी स्वप्न-दोष बन्द न हो तो वह धीरजसे काम ले और प्रयत्न करना न छोड़े। मैं स्वयं भी स्वप्नदोषसे सर्वथा मुक्त नहीं हूँ। मुझे याद पड़ता है एक समय मैं बरसों स्वप्नदोषसे मुक्त रहा हूँ किन्तु भारत लौट आने और दूध पीना शुरू कर देनेके बाद ये दोष बढ़ गये। दूधके अतिरिक्त इसके अन्य कारण भी हैं। यहाँके वातावरणसे बीते दिनोंकी याद ताजी हो गई। यह प्रकरण 'आत्मकथा' में भी आयेगा। तुम उसे पढ़ना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१६०. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

कार्तिक बदी १ [१० नवम्बर, १९२७][1]

भाईश्री डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला था। समुद्रके रास्ते कोलम्बो जा रहा हूँ अतः थोड़ा-सा समय मिल गया है जिससे पत्रोंको निबटा रहा हूँ। मुझे अचानक आश्रममें दो दिन बितानेका मौका मिल गया। निरन्तर प्रयत्न करनेसे अहंभाव निश्चय ही चला जायेगा। मैं जनवरीमें आश्रम पहुँचूँगा, तब तुम अवश्य आना।

बापूके आशीर्वाद

भाईश्री डाह्याभाई
जिला कांग्रेस कमेटी
धोलका, बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६९९) से।
सौजन्य : डाह्याभाई पटेल

१. गांधीजीकी लंका-यात्राके आधारपर वर्ष निर्धारित किया गया है।

१६१. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

स्थायी पता : सावरमती
एस० एस० 'चिकोआ'
११ नवम्बर, १९२७

प्रिय चार्ली,

लगता है जैसे मैंने युगोंसे तुम्हें नही लिखा है। और ऐसा इसलिए लगता है क्योंकि मैं वम्बईसे कोलम्बोकी शानदार समुद्र-यात्रा करता रहा हूँ। हम वहाँ आज रातको ही पहुँचेंगे और मैं यह पत्र एक मालवाहक जहाजपर वोलकर लिखवा रहा हूँ। मैं देखता हूँ कि मालवाहक जहाज यदि साफ-स्वच्छ हो तो जहाँतक शान्तिका सवाल है या काम करनेके लिए समयका सवाल है, उससे अच्छा कुछ नही होता। वम्बईसे तूतीकोरिनतक हम एक वहुत वड़े नये और स्वच्छ जहाजमें आये, जिसमें घूमने-फिरनेकी काफी जगह थी। एक दिन वचानेके खयालसे तूतीकोरिनमें मैं एक दूसरे मालवाहक जहाजमें आ गया हूँ। यह भी आरामदेह है, लेकिन जगह ज्यादा नही है।

वाइसरायसे तो भेंट कर ली है।[1] मैं शायद विलकुल न जाता, लेकिन जैसा कि मेरा स्वभाव है, मैं साफ 'ना' नही करना चाहता था। हमने खद्दरकी चर्चा नही की, लेकिन उन्होंने विशेष रूपसे उसपर चर्चा करनेके लिए मुझे फिर निमन्त्रित करनेका वादा किया है। उनके सामने वह निवन्ध रखा था जो तुमने भेजा है। वे एक नेक किन्तु शक्तिहीन व्यक्ति है।[2]

मैंने दिल्लीमें रामचन्द्रनसे भेंट की थी और जमशेदपुरके लिए तुम जो आदमी चाहते हो, उसके वारेमें वात की। मैं उससे मिल नही सका, क्योंकि वह लाहोरमें था। इसलिए मैं तुम्हे इस सम्वन्धमें कोई सलाह देनेमें असमर्थ हूँ। रामचन्द्रन उसे अच्छा आदमी समझते हैं। क्या तुम तेहलरमानीसे मिले थे। उसकी वावत तुम्हारी क्या राय है?

दिल्ली यात्रासे मेरे कार्यक्रममें व्याघात पड़ जानेके कारण मैं इस महीनेकी २० तारीखको उड़ीसा नही पहुँच सकता, जिसकी कि मुझे आशा थी। मुझे लंकामें लगभग एक पखवाड़ा रहना चाहिए। इसलिए मैं ज्यादासे-ज्यादा इस माहकी २६

१. गांधी-इर्विन भेंटकी रिपोर्टके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

२. गांधीजीके साथ अपनी पहली मुलाकातका वर्णन करते हुए वाइसराय, लॉर्ड इर्विनने अपने पिताको लिखा था : "मैंने पहल करके गांधीसे भेंट की है। वे वास्तवमें एक दिलचस्प व्यक्ति हैं।...वे मुझे व्यावहारिक राजनीतिसे कतई हटे हुए लगे। मुझे लगा कि मैं किसी ऐसे प्राणीसे वात कर रहा हूँ जो किसी दूसरे ग्रहसे इस पृथ्वीपर एक पखवाड़ेकी संक्षिप्त यात्रापर आया हुआ है और जिसका तमाम मानसिक दृष्टिकोण उस दृष्टिकोणसे भिन्न है जो उस ग्रहके अधिकांश कार्यकलापोंका नियमन करता है जिसपर वह उतर आया है।" (लाइफ ऑफ लॉर्ड हैलिफैक्स)।

या २७ तारीखको लंकासे उडीसाके लिए रवाना होऊँगा और जिस रास्तेमे सबमे कम समय लगेगा, उसी रास्तेसे वहाँ पहुँच जाऊँगा।

मुझे आशा है कि तुम्हारा हाथ अब बिलकुल ठीक और काम करने लायक हो गया है। बा और महादेवके अलावा काका, प्यारेलाल और जमनादास[1] मेरे साथ हैं। और राजगोपालाचारी तथा सुब्बैया कोलम्बोमें मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

मैंने तुम्हे बताया था कि देवदासका बवासीरके लिए ऑपरेशन हुआ था। वह इस माहकी ८ तारीखको छुट्टी पा गया होगा।

सस्नेह,

मोहन

अंग्रेजी (जी० एन० २६२४) की फोटो-नकलसे।

१६२. पत्र : वी० ए० सुन्दरम्को

१२ नवम्बर, १९२७

प्रिय सुन्दरम्,

इस समुद्र-यात्रासे मुझे पिछली चिट्ठियोंसे निपटनेका कुछ मौका मिल गया है। सावित्रीने सकुशल बच्चा जना और तुमको एक कन्या भेंट की, इसके लिए मैं ईश्वरका कृतज्ञ हूँ। मेरी कामना है कि बच्चा फूले-फले। आशा है, माँ अच्छी तरह है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ३१७७) की फोटो-नकलसे।

१६३. पत्र : नारणदास गांधीको

जहाजसे कोलम्बो जाते हुए
१२ नवम्बर, १९२७

चि० नारणदास,

तुम्हारा १६-१०-१९२७ का पत्र मेरे पास पड़ा हुआ है। जहाजमें कोलम्बो जाते हुए उसका उत्तर लिख रहा हूँ। प्रमुख मन्त्रीके[2] बारेमें तुमने जो लिखा वह ठीक है। किन्तु ये नियम तो तभी लागू हो सकते हैं जबकि कोई संस्था मशीनके ढंगपर चलती हो। उस स्थितितक अभी हम नहीं पहुँच सके हैं इसलिए आसानीसे

१. खुशालचन्द गांधीका सबसे छोटा लड़का।
२. छगनलाल जोशी उस समय आश्रमके मन्त्री थे।

बन सकनेवाले काम पूरे करके यदि हम सन्तोष मान लें तो संस्थाकी जड़ जम जायेगी। और कुछ पूछना चाहो तो जनवरीमें मेरे वहाँ पहुँचनेपर पूछ लेना। काठियावाड़के कामका निर्णय भी हम तभी कर लेंगे।

जमनादास मेरे साथ है यह तो तुम जानते ही हो।

बापूके आशीर्वाद

चि० नारणदास गांधी
सत्याग्रह आश्रम

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७१३) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

१६४. अनमेल विवाह अथवा बालहत्या

ध्रांगध्रा राज्यमें जो अनमेल विवाह हुआ है अथवा होनेवाला है, उसका मेरे पास जो विवरण आया है, उसपर से मैंने अनमेल विवाहके सम्बन्धमें ४० वर्ष पूर्व जो लेख पढ़े थे उनकी याद हो आती है। आज भी ऐसे सम्बन्धोंका हो सकना दुःखकी बात है।

यह काम किया है ध्रांगध्रा राज्यके एक ब्राह्मण नौकर भट्ट केशवलाल नामक व्यक्तिने। उसकी उम्र ५५ के लगभग है। उसकी तीन लडकियाँ है। चार वर्ष पहले उसकी पत्नीकी मृत्यु हो गई थी। उसने अब फिर विवाह करनेके इरादेसे तेरह-चौदह वर्षकी एक बालिकासे सगाई की है।

इस वृद्ध केशवलालके साथ उसके बड़े दामादका इस सगाईके सम्बन्धमें जो पत्र-व्यवहार हुआ है वह उसने मुझे लिख भेजा है और आशा की है कि मैं 'नवजीवन'में कुछ लिखूँगा; सम्भव है उससे इस वृद्ध ब्राह्मणकी मति बदल जाये अथवा वह लज्जित हो। अब भी समय है; इस ब्राह्मणको चाहिए कि वह जाग जाये और भविष्यमें होनेवाली इस बालहत्याके महापापसे उबरे।

भर्तृहरिने अपने अनुभवके आधारपर कहा है कि 'कामातुराणाम् न भयं न लज्जा'। यदि तीन-तीन पुत्रियोंके इस कामातुर बापके मनमें किसी तरह भी भय अथवा लज्जा उत्पन्न हो जाये तो उपरोक्त कोमल बालिका, जो उसकी गोदीमें पौत्रीके रूपमें बैठने लायक है, अवश्य बच जाये।

भट्टजीने ६ अक्टूबरको चराडवासे अपने दामादको लिखा है:[1]

प्रभा, भट्टजीकी सबसे छोटी लड़की है। जब उसका विवाह हो जायेगा तब घर "सूना" लगेगा, इसीलिए इस भले बापको इस उम्रमें दूसरा विवाह करनेकी बात सूझी! लेकिन उसके पत्रके अधिकांश भागकी हर पंक्तिसे तो वासना ही झलकती है।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

यह विषयान्ध वृद्ध पुनः अपने दूसरे पत्रमें अपनी आशाओंका ज्यादा प्रदर्शन इस प्रकार करता है।[1]

इस पत्रपर से हम देखते हैं कि भट्टजी इस सम्बन्धको "शुभ कार्य" मानते हैं और अपने हृदयकी यह अभिलाषा अपने दामादपर प्रकट करते हैं कि जैसी "जापानी रेशमी टुकड़ियों"वाली चुनरी उनकी कन्या "प्रभाके लिए मँगाई गई थी वैसी" साड़ी ली जानी चाहिए और प्रभाकी उम्रकी उस बाल-बहूको पहनायी जानी चाहिए; उनकी अपेक्षा है कि चुनरी ओढ़ानेका यह "शुभकार्य" उनकी बड़ी लड़की जीवीके हाथों सम्पन्न हो।

लेकिन दोनों बड़ी लड़कियाँ और दामाद इस पाप-पूर्ण सम्बन्धकी निन्दा करते हैं, उसका विरोध करते हैं और दामाद पत्र लिखकर ससुरसे विनती करता है कि वे इस पापसे बचें। उसके उत्तरमें भट्टजी लिखते हैं।[2]

इस तरह रस्सी जलते समय भी अपने बल नहीं छोड़ती। यदि इस पापकर्ममें दामाद और लड़कीकी मदद न मिले तो अब भी कदाचित् इस बालहत्यासे भट्टजी बच जायें, ध्रागध्रा बच जाये और भारतवर्ष भी बचे।

ऐसे कुकर्मोंको रोकनेका उपाय केवल प्रबल लोकमत ही है। यहाँ लोकमतका अर्थ है वृद्ध केशवलालका दामाद, लड़की और उसके नाती, सम्बन्धी और पास-पड़ोस इन सबको बिना हताश हुए दृढ़तापूर्वक भट्टजीको समझाना चाहिए। लड़कीके पिताको भी लड़कीकी हत्या करनेसे रोकनेका प्रयत्न करना चाहिए। इस तरह यदि भट्टजीके साथ सब तरहसे असहकार हो तो अभीतक इस कुकर्मके टलनेकी गुंजाइश है।

भट्टजी और उनके जैसे अन्य वृद्ध विधुरोंको जो अपनी वासनापर नियन्त्रण नहीं पा सकते, असंख्य विधवाओंकी बात सोचनी चाहिए। विषय-वैरी तो स्त्री-पुरुष दोनोंको एक समान दुःख देता है। पवित्र विधवाओंका स्मरण करके विधुर शान्त क्यों नहीं हो सकते।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १३-११-१९२७

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

१६५. भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंसे

१३ नवम्बर, १९२७

प्रश्न: आपके फोटो-चित्र आपका सही चित्रण नहीं करते। क्या यह इस कारण है कि फोटो खिंचवाते समय आप मुस्कराते नहीं?

[गांधीजीने उत्तर दिया:] मैं कभी फोटो नही खिंचवाता।

प्रश्न: मैं सोचता हूँ कि लोग कहीं हाथसे बने चित्रोंपर से तो आपके फोटो नहीं बनाते!

उत्तर: यह तो फोटोग्राफर लोग ही जानते होंगे।

[खादीकी प्रगतिके बारेमें पूछे जानेपर गांधीजीने कहा:]

मुझे काफी-कुछ सफलता मिली है।

प्रश्न: क्या आप सोचते हैं कि चरखा अन्ततः औद्योगीकरणकी बुराइयोंको दूर कर देगा?

उत्तर: जहाँतक भारतका सम्बन्ध है, मेरी आशाका आधार मेरा विश्वास है। मै इस विश्वासके आधारपर आशा रख रहा हूँ कि भारतमें चरखेका प्रचार सर्वत्र हो जायेगा और वह औद्योगीकरणकी कई बुराइयोंको दूर कर देगा।

[साइमन आयोगके बारेमें मत प्रकट करनेका अनुरोध किये जानेपर गांधीजीने कहा:]

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, इस मामलेमें मेरा अन्त:करण राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष महोदय और सामान्य रूपसे काग्रेसके हाथोमें है।

प्रश्न: यदि आप असंतुष्ट हों तो क्या आप बहिष्कारकी सलाह देंगे?

उत्तर: इस मामलेमें काग्रेसके नेताओंकी रायको छोड़ मेरा कोई मत नही है।

प्रश्न: वे जो भी निर्णय करें, क्या आप उसे माननेको तैयार हैं?

उत्तर: हाँ, मै उसे स्वीकार करूँगा, और यदि मैं उसका समर्थन नही कर सकता तो मै उसका प्रतिरोध भी नही करूँगा।

प्रश्न: क्या आप समझते हैं कि राजनयिकोंके शान्तिके प्रयत्न सफल होंगे या आप सोचते हैं कि संसार दूसरे युद्धकी ओर बढ़ रहा है?

उत्तर: इस प्रश्नका उत्तर देना कठिन है। लक्षण यही दिखाई पड़ते हैं कि संसार दूसरी लड़ाईकी तैयारी कर रहा है, लेकिन हमें आशा यही करनी चाहिए कि उसे टालना सम्भव हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]

सीलोन डेली न्यूज, १४-११-१९२७

१६६. भाषण : चेट्टियार लोगोंकी सभा, कोलम्बोमें

१३ नवम्बर, १९२७

मित्रो,

मैं आपको इन तमाम थैलियोंके[1] लिए, जो आपने मुझे बहुत ही सुव्यवस्थित ढगसे बिना कोई अनावश्यक समय लगाये भेंट की है, धन्यवाद देता हूँ। मुझे लगता है कि मैं फिर चेट्टिनाडमें खड़ा हुआ हूँ। चेट्टिनाडकी अपनी हालकी यात्राकी मेरी सुखद स्मृतियाँ फिरसे ताजा हो उठी है। उनकी उदारता और कृपा मैं कभी नही भूलूँगा, और आप यहाँ कोलम्बोमें वही सब फिरसे दोहरा रहे है जो मैंने चेट्टिनाडमें देखा था। आपसे इन तमाम उपहारो और मेहरबानियोको प्राप्त करनेमे मुझे केवल इसी बातका सन्तोष है कि यह सब दरिद्रनारायणके लिए किया जा रहा है। और यह देखते हुए कि मैं अपने-आपको भारतके करोड़ो कंगालोंका एक विनम्र न्यासी-मात्र समझता हूँ, मुझे इन उपहारोको स्वीकार करनेमें न केवल कोई लज्जा नही है, बल्कि आपकी उदारता और कृपा देखकर मेरा मन और माँगनेका होता है। आप कितने ही धनवान और उदार हो, लेकिन वास्तवमें किसी एक समुदायके लिए दरिद्र-नारायणके करोड़ो मुँह भरना सम्भव नही है, और यदि आपके बीच ऐसे लोग हो जिन्होने कुछ न दिया हो या दिया हो तो कजूसीके साथ दिया हो, तो मैं आपसे अपील करूँगा कि आप दरिद्रनारायणके नामपर अपनी थैलियाँ खोलिए और जितना दे सकते हो उतना दीजिए। किसी भारतीयके लिए धनका इससे अच्छा उपयोग मैं नही सोच सकता, वह चाहे भारतमें रहता हो या भारतसे बाहर। और आपकी उदारता केवल धन देकर ही समाप्त नही हो जानी चाहिए। यदि आप करोडो मूक लोगोंके साथ जीवन्त सम्बन्ध जोड़ना चाहते है तो आपको खादी अवश्य पहननी चाहिए। खादी उन्ही क्षुधाग्रस्त लोगोके हाथोसे तैयार होती है। यदि आप इन्ही रास्तो पर चलते रहे तो आप देखेंगे कि यदि आपको अपना जीवन शुद्ध बनानेके लिए करोड़ो मूक लोगोके साथ निरन्तर सम्बन्ध बनाये रखना है तो खादी पहनना जरूरी ही है। जहाँ-कही शुद्ध प्रेम है, वही उदारता है, और जहाँ व्यक्तिगत शुद्धता है, वहाँ उस समाजमें तत्काल एकता उत्पन्न हो जाती है। आप देखेंगे कि शुद्धताकी तरफ उठाया गया आपका एक कदम दूसरे कदमकी शुरुआत होगा।

आप एक ऐसे देशमें है, जिसे अजनबी समझा जा सकता है। भौगोलिक और राजकीय दृष्टिसे लका भारतका अग नही समझा जाता। इस देशमें रहनेवाले व्या-पारियोके रूपमे आपसे अपेक्षित है कि आप यहाँके निवासियोंके साथ अनुकरणीय ढंगसे और ईमानदारीके साथ व्यवहार करे। आपके आचरणसे भारतके करोड़ो लोगोके आचरणके सम्बन्धमें धारणा बनाई जायेगी। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आपका

१. लंकामें खादी-कोषके चन्देके लिए, देखिए परिशिष्ट १।

व्यवहार इस सुन्दर देशके लोगोंके साथ बिलकुल सही और शिकायतसे परे है। आपकी तुला बिलकुल सही हो, आपके हिसाब-किताब सही हों, और मैं आशा करता हूँ कि आप इस द्वीपकी प्रत्येक स्त्रीको अपनी बहन, अपनी बेटी या अपनी माँ समझते हैं। धन होनेसे हमारा दिमाग न चकराने पाये। यदि धनको जिन लोगोंके पास वह है और जिनसे वह अर्जित किया जाता है, उन दोनोंके लिए वरदान सिद्ध होना है, तो धनके साथ उत्तरदायित्वकी और अधिक भावना आना जरूरी है।

मुझे आपको और अधिक देर नहीं रोकना चाहिए। मैंने लंकामें अपना काम अभीतक मुश्किलसे ही शुरू किया है। इस द्वीपकी यात्राके दौरान मुझे बहुत-सी चीजोंके बारेमें बोलना होगा, और मैं चाहूँगा कि जिन विभिन्न स्थानोंमें मुझे ले जाया जाये, वहाँ मैं जो-कुछ भी कहूँ उसे आप पढ़ें, और मुझे सबसे ज्यादा खुशी तब होगी जब मेरे इस द्वीपसे चले जानेके बाद मैं देखूँगा कि अपने हृदयके अन्तरतमसे जो बातें मैंने आपके सामने रखी हैं, उन्हें आप भूले नहीं हैं।

मैं आपको उदार हृदयसे दिये गये इन सब उपहारोंके लिए एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ, और यदि ऐसे लोग हों जो कुछ देना चाहते हैं वे अब दे सकते हैं। मैं आपको यह भी सूचित कर दूँ कि यदि आप खादी चाहते हैं तो जिस स्थानपर मुझे ठहराया गया है वहाँसे उसे प्राप्त कर सकते हैं। ईश्वर आपपर कृपा रखे!

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, १४-११-१९२७
विद गांधीजी इन सीलोन

१६७. भाषण: विवेकानन्द सोसाइटी, कोलम्बोमें

१३ नवम्बर, १९२७

मैं आपको अभिनन्दनपत्र तथा थैलीके लिए धन्यवाद देता हूँ। मेरे पास जो थोड़ा-सा समय था, उसमें मैंने आपकी सोसाइटीके कार्योंकी रिपोर्टको सरसरी तौरपर देखनेकी कोशिश की, और मैं आपको सोसाइटीकी अनेक प्रवृत्तियोंके लिए बधाई देता हूँ। विवेकानन्द — यह एक ऐसा नाम है जिसका स्मरण आते ही मन विभोर हो उठता है। उन्होंने भारतके जीवनपर एक अमिट छाप छोड़ी है और आप इस समय भारतके बहुत-से भागोंमें उनके नामपर स्थापित संस्थाएँ देख सकते हैं। रामकृष्ण मिशनकी जो बहुत-सी शाखाएँ हैं सो अलग।

लेकिन मैं देखता हूँ कि मुझे आपको इस सभामें बहुत देर नहीं रोकना चाहिए। बाहर अधीर भीड़ प्रतीक्षा कर रही है। इस समय मैं जो-कुछ कहूँगा वह इतना ही है कि मैं इस सोसाइटीके हर तरहसे फूलने-फलनेकी कामना करता हूँ और मैं यह भी सुझाव दे दूँ कि जबतक आप अपनी संस्थाकी इन प्रवृत्तियोंमें एक वह काम भी न जोड़ लें जिससे दरिद्रनारायणकी सेवा होती है तबतक वे प्रवृत्तियाँ अधूरी रहेंगी।

आपकी थैली मेरे लिए इस बातका प्रतीक है कि आप चरखेके सन्देशको पसन्द करते हैं। यदि आपकी सोसाइटीका नाम विवेकानन्द है तो आप भारतके करोड़ों क्षुधाग्रस्त लोगोंकी उपेक्षा करनेका साहस नहीं कर सकते, और यह विश्वास दिनों-दिन जड़ पकड़ता जा रहा है कि चरखेके बिना भारतके करोड़ों भूखे लोगोंकी सेवा कर सकना असम्भव है। इसलिए मुझे भारतीयोंसे, चाहे वे भारतमें रहते हों या बाहर, एक अपील करनेमें हिचक नहीं है, और वह यह कि वे अपने शरीरपर अपने तथा अपनी जन्मभूमिके करोड़ों क्षुधार्त्त लोगोंके बीच एक जीवन्त सम्बन्धका प्रतीक धारण करें।

अपनी दाहिनी ओर बैठी बहनोंसे तथा कोलम्बोमें, बल्कि लंका-भरमें रहनेवाले फैशनपसन्द भारतीयोंसे मैं कहना चाहता हूँ कि छः वर्षके सतत प्रयत्नोंके बाद अब यह सम्भव है कि आप जितना बारीकसे-बारीक कपड़ा चाहें, वह अब खद्दरके रूपमें भी मिल सकता है।

मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि विदेशी और मिलका बना कपड़ा पहननेकी जगह खद्दर पहनकर आपके लिए अपने देशके करोड़ों स्त्री-पुरुषोंकी जो थोड़ी-सी सेवा करना सम्भव है, उसका आप तिरस्कार नहीं करेंगे।

मैं आपको इस अभिनन्दनपत्रके लिए एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, १४-११-१९२७
विद गांधीजी इन सीलोन

१६८. पत्र : सुरेन्द्रको

रविवार [१३ नवम्बर, १९२७ या उसके पश्चात्][1]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला है। देवदास रास्तेमें बीमार पड़ गया इसलिए उसे बम्बईमें रुकना पड़ा। अब तो वह वर्धा पहुँच गया होगा। वहाँसे अवकाश पा सको तो जरूर वर्धा जाना और उसे जितनी शान्ति दे सको देना। उसके पास पहुँचनेकी तुम्हारी इच्छा स्वाभाविक है; मैं उसे रोकना नहीं चाहता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९४११) की फोटो-नकलसे।

१. यह पत्र देवदासके ८ नवम्बर, १९२७ को अस्पतालसे छुट्टी पानेके बाद लिखा जान पड़ता है; देखिए "पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको", ११-११-१९२७।

१६९. भेंट: 'टाइम्स ऑफ सीलोन' के प्रतिनिधिसे

कोलम्बो

[१४ नवम्बर, १९२७ या उससे पूर्व][1]

'टाइम्स ऑफ सीलोन' के प्रतिनिधिसे अपनी भेंट-वार्त्तामें गांधीजीने कहा कि शाही आयोगके प्रति मेरा रुख कांग्रेस निर्धारित करेगी।

बहिष्कारके बारेमें उन्होंने कहा कि मेरी व्यक्तिगत राय है कि सक्रिय और आम बहिष्कार ब्रिटिश सरकारके लिए एक प्रभावकारी उत्तर सिद्ध होगा।

यह पूछे जानेपर कि क्या आप ईमानदारीसे ऐसा मानते हैं कि अंग्रेजोंके बिलकुल चले जानेपर भारत ज्यादा सुखी होगा, गांधीजीने ऐसा कहा बताते हैं कि मेरा विश्वास है कि भारतमें ही नहीं, बल्कि आफ्रिकामें भी समस्याओंका एकमात्र हल यह है कि अंग्रेज लोग मित्रोंकी भांति बने रहें। उन्होंने कहा, मैं यह स्वीकार करता हूँ कि भारतमें आन्तरिक लड़ाई-झगड़े हैं, लेकिन भारत अन्ततः अपनेको स्वतन्त्र कर लेगा। इस दिशामें इससे कम कोई चीज वह स्वीकार ही नहीं कर सकता।

एक अन्य प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजीने कहा कि असहयोग आन्दोलनका उद्देश्य बुराईकी ताकतोंके विरुद्ध संघर्ष करना है। अन्तमें उन्होंने कहा:

हम मैत्री चाहते हैं, हमपर हुक्म चलानेवाला स्वामी नहीं चाहते।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-११-१९२७

१७०. तार: धनगोपाल मुखर्जीको

[१४ नवम्बर, १९२७][2]

धनगोपाल मुखर्जी
मार्फत
श्रीमती वालर बोर्डन
१०२०, लेकशोर ड्राइव
शिकागो

आपका तार। भारतीय नेताओंका विरोधपत्र जिसे 'टाइम्स' ने छापनेसे मना किया, भारतीय अखबारोंमें व्यापक रूपसे छपा। 'मदर इंडिया'

१. भेंटकी रिपोर्ट इसी तारीखमें छापी गई थी।

२. साधन-सूत्रमें दी गई सूचना तथा कैथरीन मेयो द्वारा लिखित मदर इंडिया पुस्तकके उल्लेखके आधारपर, जो १९२७ में प्रकाशित हुई थी।

विकृत एकांगी तस्वीर है। उसमें सफेद झूठ, अतिरंजना और सन्दर्भ-अपेक्षित तथ्योंको दबाया गया है। कई लोगोंने, जिनकी बातें लेखिकाने उद्धृत करनेका दावा किया है, उनका खण्डन किया है। यह विश्वास, जो अनुचित नही है, दिनो-दिन बढ़ रहा है कि किताब उनके इशारे पर लिखी गई है जो भारतको पश्चिममें जनताकी निगाहोंमें गिराना चाहते है। लम्बा अनुभव रखनेवाले अनेक विख्यात अंग्रेजो अमेरिकियों और अंग्रेज मिशनरियोंने किताबमें कही बातोंका खण्डन और निन्दा की है।[1]

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२५५१) की फोटो-नकलसे।

१७१. पत्र : मीराबहनको

१४ नवम्बर, १९२७

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले।

समुद्र-यात्रा मुझे काफी अच्छी लगी और इच्छा हुई कि काश कुछ और करता।

इस महीनेकी २९ तारीखको लकासे मैं निश्चित रूपसे रवाना हो जाऊँगा। उडीसामें सबसे पहले मैं गंजाम जिलेके बरहामपुरमें पहुँचूंगा। वहाँ पहुँचनेके दो रास्ते हैं, एक कलकत्ता होकर और दूसरा रायचूर-बेजवाडा होकर। दोनोमें से कौन-सा सस्ता या अच्छा है, यह मुझे नही मालूम। तुम इसके बारेमें पता चलाकर तय करो। मैं समझता हूँ कि सुरेन्द्र इन दोनो रास्तोसे परिचित है। २ दिसम्बरको मेरे बरहामपुर पहुँचनेकी आशा है। तो अब उड़ीसामें १ मास नही लगा पाऊँगा, जैसा कि मैंने सोचा था।

अपेक्षित कपडेके परिमाणको कम करनेका तुम्हारा इरादा अनावश्यक है। घरमें तुम ऐसा कर सकती हो, लेकिन शायद सब अवसरोंके लिए नही। जो कार्य तुम्हें करना है, उसके लिए साडी तो शायद जरूरी ही हो। फिर भी मुझे मालूम नही। हमें ज्यादा जल्दी नही करनी चाहिए। खैर, इस मामलेमें मैं तुम्हारी इच्छामें दखल नही दूंगा।

१. १७-११-१९२७ को भेजे गये अपने उत्तरमें धनगोपाल मुखर्जीने गांधीजीको सूचित किया कि फेवचर ब्यूरोने सरोजिनी नायडूको अमेरिका आने और अपने भाषणोंसे कुमारी मेयोकी पुस्तक द्वारा भारतके सुयशको पहुँचाई गई हानिको दूर करनेका निमन्त्रण दिया है।

तुम जितना भी स्नेह भणसालीको दे सकती हो उसे दो और उस स्नेहको अपना असर दिखाने दो। जहाँ तर्कसे काम नहीं बनता, वहाँ अकसर स्नेहसे बन जाता है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९३) से।
सौजन्य : मीराबहन

१७२. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

कोलम्बो
मौनवार, १४ नवम्बर, १९२७

बहनो,

हम शनिवारको कोलम्बो पहुँचे। मुझे आशा थी कि तुममें से किसी न किसीका पत्र मिलेगा, मगर आज सोमवारतक नहीं मिला।

यह देश बहुत रमणीय है। हिन्दुस्तानके बाहर होनेपर भी हिन्दुस्तान जैसा ही लगता है। यहाँ दक्षिणकी तरफके लोग ही ज्यादा बसते हैं। किन्तु वे यहाँके निवासियोंसे बहुत अलग नहीं मालूम होते। यहाँकी स्त्रियोंकी पोशाक सादी है। स्त्रियों-पुरुषोंकी पोशाक लगभग एक-सी कही जा सकती है। दोनों धोती पहनते हैं। वैसे ही जैसे सुरेन्द्र पहनता है। इतना ही है कि यहाँकी धोतियाँ रंगीन और बेलबूटेदार होती हैं। ऊपर दोनों बंडी पहनते हैं। हाँ, बंडीकी बनावटमें थोड़ा फर्क जरूर है। स्त्रियाँ बंडीके बिना हरगिज नहीं रहतीं, जब कि ज्यादातर पुरुष केवल धोतीसे ही सन्तोष कर लेते हैं। कुछ ऐसी ही पोशाक मलाबारमें भी होती है। इतना ही है कि वहाँकी धोतियाँ रंगीन नहीं होतीं। ये कपड़े तो बहुत ही सस्ते पड़ते हैं। दोनों प्रदेशोंमें लोगोंको खादीसे प्रेम हो जाये तो पहननेमें अड़चन आ ही नहीं सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७६) की फोटो-नकलसे।

१७३. भाषण: कोलम्बो नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें

१५ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

सबसे पहले मैं इस बातके लिए क्षमा माँगता हूँ कि मैं आपके सामने खड़ा होकर नहीं बोल रहा हूँ। पिछले कई वर्षोंसे मैं सभाओंमें खड़े होकर बोलनेमें असमर्थ रहा हूँ; इसलिए यदि मैं आपका अभिनन्दनपत्र खड़ा होकर स्वीकार न कर सकूँ, और आपके सामने बैठकर बोलूँ तो उसे आप मेरी अशिष्टता नहीं समझेंगे। मुझे इसका भी दुख है कि इस समय मेरी आवाज ऐसी नहीं है जो दूरतक सुनाई पड़ सके, और मैं आपसे तथा कोलम्बोके नागरिकोंसे इस बातके लिए भी क्षमा चाहता हूँ कि मैं यहाँ समयपर नहीं पहुँच सका। लेकिन इस दोषका भार अधिक शक्तिशाली कन्धोंपर है। मेरा तात्पर्य वाइसराय महोदयसे है। उन्होंने मुझे दिल्ली आनेके लिए निमन्त्रित किया, और यदि आप वाइसराय महोदयकी कार्रवाईको अनुचित करार देनेवाला प्रस्ताव पास करना चाहते हैं तो मैं निश्चय ही आपका साथ दूँगा। लेकिन शायद आप वाइसराय महोदयको क्षमा कर देंगे और इस प्रकार मुझे भी।

मेरे विलम्बसे आनेका दूसरा कारण यह था कि मैं दो माल ढोनेवाले जहाजोंके यात्रीके रूपमें आया, और दोनों जहाजोंके कप्तानों और अधिकारियोंकी इस कोशिशके बावजूद कि वे मुझे यहाँ जितनी जल्दी पहुँचा सकें, पहुँचायें, आप माल ढोनेवाले जहाजोंकी बन्दिशोंको समझ सकेंगे। माल ढोनेवाले जहाजोंको यात्रियोंके बजाय, जिन्हें एक प्रकारसे उनमें अनधिकार प्रवेश करनेवाला ही समझना चाहिए, लदे हुए मालकी फिक्र करनी होती है।

आपके हाथों यह अभिनन्दनपत्र पाना मेरे लिए बहुत खुशीकी बात है। मैं इसके लिए बिलकुल तैयार नहीं था। यदि आप इसे पसन्द करें तो मैं कहूँगा कि मैं तो यहाँ आर्थिक लाभके कारण आया हूँ। मैं अपने ही कुछ देशवासियोंके निमन्त्रणपर लंका आया हूँ और मैंने यह सारा वर्ष, जो अब समाप्त होनेको है, एक ऐसे कामके लिए चन्दा इकट्ठा करनेमें बिताया है जिसका उद्देश्य भारतके करोड़ों कंगालोंकी सेवा करना है। इन मित्रोंने मुझे जो प्रलोभन दिया वह बहुत आकर्षक था।

मैं १९०१ में द्वीपोंमें मोतीके समान इस द्वीपमें आते-आते रह गया था। आपको शायद पता न हो कि दक्षिण आफ्रिकामें मेरे बहुत-से मुसलमान मित्र हैं। वे मुझे प्राणोंके समान प्यारे हैं और उनमेंसे कुछने मुझसे कहा कि भारत जाते हुए मैं कोलम्बो आऊँ और मैंने उस समय वैसा बहुत खुशीसे किया होता, और तब मैं आपके बीच एक पर्यटकके रूपमें इस सुन्दर द्वीपके अतुलनीय सौन्दर्यका आनन्द लेने और आपके द्वारा खुले हृदयसे किये गये आतिथ्यका सुख लेनेके लिए आया होता। लेकिन मैं वही बात

आज नहीं कह सकता। इसी कारण मैं इस अभिनन्दनपत्रके लिए तैयार नहीं था, जिसका मै इस समय शायद अधिकारी नही हूँ।

लेकिन मैं नागरिक जीवनका प्रेमी हूँ और हालांकि मुझे एक पार्षदके रूपमें किसी नगरपालिकामें सेवा करनेका अवसर नहीं मिला, लेकिन मैं एक नागरिककी हैसियतसे दो महान नगरनिगमोंके घनिष्ठ सम्पर्कमें आया हूँ। मेरा तात्पर्य डर्बन नगर-निगम और जोहानिसबर्ग नगरनिगमसे है। और यदि आप इन दो नगरनिगमोंके महापौरोंसे पूछें तो वे शायद इस बातकी पुष्टि करेंगे कि मेरे जैसा एक तुच्छ नागरिक अकेले जितनी सेवा कर सकता है उतनी मैंने उन नगरनिगमोंकी की थी।

जिस स्थानको किसी व्यक्तिने अपना बना लिया है, उस स्थानकी सेवा करनेको मैं एक बहुत बड़े सौभाग्यकी बात मानता हूँ। उसके बादसे मैं भारत-भरके बड़े-बड़े नगरनिगमोंकी कार्यप्रणालियोंका, कमोबेश, निकटसे अध्ययन करता रहा हूँ, और मैं पूर्वमें एक ऐसी नगरपालिकाकी खोज करता रहा हूँ जिसका संचालन आदर्श ढंगसे होता हो। मुझे आपके सामने स्वीकार करना पड़ता है कि मुझे अपने देशमें तो वैसी कोई नगरपालिका मिली नहीं। मुझे यह सोचकर खुशी होगी कि आपकी नगरपालिका एक आदर्श नगरपालिका है। लेकिन आपकी उपलब्धियोंसे सर्वथा अनभिज्ञ होनेके कारण मैं कुछ भी कह सकनेमें असमर्थ हूँ।

कल मैंने आपके प्रशासनकी रिपोर्टकी ताजा प्रति माँगी, किन्तु मेरे लिए उस दिलचस्प रिपोर्टको पूरा पढ सकना सम्भव नहीं था।

डर्बन और जोहानिसबर्ग, दोनों स्थानोंपर स्वयं कुछ प्रारम्भिक कार्य कर चुकनेके कारण मैंने इस रिपोर्टके उन पृष्ठोंको पलटा जिनमें प्लेगका जिक्र था, और मुझे यह पढ़कर कुछ धक्का-जैसा लगा कि आप अभीतक उस अभिशापसे पूर्णतया मुक्त नहीं हो पाये हैं। डर्बन और जोहानिसबर्ग इन दोनों नगरपालिकाओंके हिस्सेमें भी प्लेग पडा था। जोहानिसबर्गमें तो यह बहुत ही उग्र किस्मका था, लेकिन वहाँके नगरनिगमके सदस्योंने इस रोगको और अधिक फैलनेसे रोकनेके लिए कोई भी कीमत चुकानेमें आगा-पीछा नहीं किया। मैं आपको वह बहुत दिलचस्प इतिहास नहीं बताऊँगा कि किस प्रकार जोहानिसबर्गने प्लेगसे संघर्ष किया। डर्बनने भी वैसा ही किया, और उसी सम्बन्धमें मुझे ग्लासगो नगरनिगमके बहुत रोचक इतिहासका अध्ययन करने और यह पढ़नेका मौका मिला कि ग्लासगो नगरको प्लेगसे पूरी तरह सुरक्षित करनेमें किस प्रकार उस नगरने पानीकी तरह पैसा बहाया। और उसका यह प्रयत्न सफल हुआ। उस प्लेगके हमलेके बाद ग्लासगोमें फिर कभी प्लेग फैला हो, इसका मुझे पता नहीं है। मै अगर गलती कर रहा हूँ तो उसे सुधार दें, लेकिन मुझे उम्मीद है कि मेरा खयाल सही है। मैं जोहानिसबर्गकी निजी जानकारीके आधारपर कह सकता हूँ कि जोहानिसबर्गमें प्लेगका हमला दोबारा नहीं हुआ। निश्चय ही वहाँकी जलवायु बहुत अच्छी है और यह तथ्य उसके पक्षमें पड़ता है। लेकिन वहाँके नागरिकोंका पौरुष भी विलक्षण है।

जैसा कि आप जानते हैं, जोहानिसबर्ग ऐसा नगर है जहाँ सभी प्रकारके और सभी जातियों और देशोंके लोग रहते हैं। उसमें बन्तू जातिके लोगोंकी बहुत बड़ी आबादी

है, और वहाँ भारतीयोंकी आबादी भी है। वहाँ भी गन्दी बस्तियाँ हैं, लेकिन इसके बावजूद जोहानिसबर्ग प्लेगसे मुक्त है।

यहाँ मैंने पाया है कि आपकी कठिनाई बन्दरगाह अधिकारीके साथ है— कि आपके इस सुन्दर बन्दरगाहपर जो अनाज आता या यहाँसे बाहर जाता है उसे रोगाणु-मुक्त करना बहुत व्ययसाध्य कार्य है। मैं कहता हूँ कि इस निगमको तमाम ऐसे हितोंके विरुद्ध संघर्ष करना चाहिए ताकि इस नगरको प्लेगसे बिलकुल मुक्त किया जा सके और मेरे जैसे बाहरसे आनेवाले यात्री पूरी स्वतन्त्रताका अनुभव कर सकें। मेरे चिकित्सक सलाहकार मुझसे कहेंगे: "अपने स्वास्थ्यकी इस जीर्ण दशामें आपको कोलम्बो-जैसी जगह नहीं जाना चाहिए।"—और यहाँ आनेसे पहले यदि मैंने इस प्रकारकी रिपोर्ट पढ़ ली होती और अपने चिकित्सक सलाहकारोंकी बात सुननेका मेरा मन होता तो मैं यहाँ नहीं आया होता।

जो दूसरी चीज मैं इस दिलचस्प रिपोर्टमें पढ़ रहा था वह थी आपकी दुग्ध-शालाओंके बारेमें।...

मैं देखता हूँ कि आप सूखा हुआ दूध न्यूजीलैंडसे मँगाते हैं। आप दूधके सूखे हुए तत्त्वोंको मँगाते हैं, और यदि मैं उसी विशेष भाषामें बोलूँ तो आप इन तत्त्वोंको पुनः मिश्रित करके उस तरल पदार्थको बेचते हैं, लेकिन रिपोर्टमें उसका उल्लेख दूधके नामसे किया गया है। मुझे आश्चर्य है कि आपका चिकित्सा अधिकारी उस चीजको दूधके रूपमें पास कैसे कर देता है। जब मैं नन्दी हिल्सपर बीमारीके बाद आराम कर रहा था, उस समय मित्रोंने मुझे विटामिनोंके ऊपर एक किताब भेजी थी, और यदि ये लेखक और प्रतिष्ठित विशेषज्ञ लोग सच्चे हैं, तो वे हमें बताते हैं कि दूध जब अमुक तापमानपर गर्म किया जाता है तो उसके विटामिन नष्ट हो जाते हैं। मैं दूधके सूखे हुए विभिन्न तत्त्वोंके बारेमें कुछ जानता हूँ और मैं जानता हूँ कि जब दूध उस सूखी हुई स्थितिमें पहुँचता है तो वह अपने विटामिन खो देता है। जब आप दूधसे विटामिन निकाल देते है तो आप उसकी आधी पौष्टिकता खत्म कर देते हैं। आपके यहाँ कई दुग्धशालाएँ हैं। मैं एक सुझाव आपको देना चाहता हूँ। आपके यहाँ निरीक्षक हैं, आपके यहाँ उपनियम हैं और उनका उल्लंघन करनेवालोंपर कुछ मुकदमे भी चलाये जाते हैं। इतनी सब जहमत क्यों उठाते हैं और अपनी दुग्ध-शालाओंको नगरपालिकाके अधीन करके आप उनको अपने नियन्त्रणमें क्यों नहीं ले लेते? और आप मेरी बातका विश्वास करें कि तब आप अपने बच्चोंके स्वास्थ्यकी रक्षा कर सकेंगे और साथ ही मुझ-जैसे बूढ़े और जर्जर मनुष्यके स्वास्थ्यका भी। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यहाँ कोलम्बोमें आपके बीच बहुतसे बूढ़े लोग हैं और उन्हें दूधकी आवश्यकता है, तथा आपके यहाँ बहुत बड़ा श्रमिक वर्ग है जिसको सस्ता दूध सुलभ होना चाहिए। आपके डाक-टिकटोंकी तरह ही उसका भी मानक निर्धारित कर दिया जाना चाहिए और लोगोंको बिलकुल गारन्टी किया हुआ दूध मिल सकना चाहिए। और यदि आप यह करना चाहते हैं तो सबसे अच्छा तरीका यही है कि दूध-सम्भरणका काम नगरपालिका करे और वह कोलम्बोके गरीबसे-गरीब व्यक्तिके लिए दूध सुलभ करे।

एक तीसरी बात कहकर मैं खत्म करूँगा। मैं जानता हूँ कि आपके यहाँ एक बहुत सुन्दर बन्दरगाह है। मैं आपके यहाँके दारचीनीके बागानोंसे गुजरा हूँ जो संसारके किसी भी नगरके लिए गर्वकी चीज हो सकते हैं। मैंने आपके यहाँ कुछ भव्य इमारतें देखी है। ये निश्चय ही बहुत अच्छी हैं। लेकिन क्या दारचीनीके बागानोंमें रहनेवाले या इस नगरमें रहनेवाले उन लोगोंको जो व्यापार करते है, इस बातकी जरूरत है कि उनके कल्याणकी चिन्ता न्यासी लोग करें? मेरी समझसे नहीं है। दरअसल आप उन लोगोंके न्यासी हैं जो अपनी देख-भाल खुद नहीं कर सकते। इसलिए आपपर श्रमिकोंके कल्याणका दायित्व है। मैंने आपके यहाँ श्रमिकोंकी बस्तियोको अबतक नहीं देखा है और इस कारण निजी अनुभवसे नही कह सकता कि इन बस्तियोंकी क्या दशा है। लेकिन यदि आप मुझे बता सकें कि ये बस्तियाँ भी उतनी ही सुवासपूर्ण होंगी जितने कि दारचीनीके बागान हैं तो मैं आपकी बातपर यकीन कर लूँगा और जहाँ-कही जाऊँगा आपके नगरका विज्ञापन करता जाऊँगा और मैं कहूँगा: "यदि आप एक आदर्श नगरपालिका देखना चाहते हैं तो कोलम्बो जाइए।" लेकिन मुझे नहीं लगता कि आप मुझसे विशेष योग्यताका वह प्रमाण-पत्र पा सकेंगे। मेरा अभिप्राय आपकी श्रमिक-बस्तियोंकी दशासे है। मैंने आपके श्रमिक वर्गके बारेमें कुछ आँकड़ोंका अध्ययन किया है।

मैं समझता हूँ कि कोलम्बो-जैसा नगर, जो एक दृष्टिसे सूखा है, एक दूसरे अर्थमें भी आसानीसे शुष्क[1] हो सकता है। और यदि आप, जो कोलम्बोके नागरिकोंके कल्याणके जिम्मेदार है, कोलम्बोको शुष्क बनाना चाहते हों और यदि वास्तवमें ऐसा करना आपके लिए सम्भव हो तो आप न केवल कोलम्बोके नागरिकोके और मुझ-जैसे एक तुच्छ व्यक्तिके, बल्कि पूर्वीय देशोंकी सभी नगरपालिकाओंके धन्यवादके पात्र होंगे।

मैंने जो दिशा बताई है, उस दिशामें मार्ग प्रदर्शन करनेमें ईश्वर आपकी सहायता करे। आपने मुझे कृपापूर्वक जो अभिनन्दनपत्र दिया है, उसके लिए मैं एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

सीलोन ऑब्जर्वर, १५-११-१९२७

विद गांधीजी इन सीलोन

१. अभिप्राय शराबबन्दीसे है।

१७४. भाषण: आनन्द कालेज, कोलम्बोमें

१५ नवम्बर, १९२७

प्रिंसिपल महोदय, शिक्षकगण और विद्यार्थियो,

कोलम्बो और लंका आनेमें तथा आप लोगोंका परिचय प्राप्त करनेमें मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। मैं जहाँ-कही भी जाता हूँ, स्कूलके बच्चोंसे मिलना पसन्द करता हूँ।

यहाँ लंकामें अधिकांश लड़के बुद्धकी शिक्षासे प्रभावित रहते हैं। उस महान गुरुने हमें सन्मार्गका पाठ पढ़ाया है और बच्चो, तुम इस प्रकारकी संस्थाओंमें उस सन्मार्गको जाननेके लिए आते हो। उस सन्मार्गको जाननेका अर्थ केवल यही नही है कि हम उन बहुत-सी चीजोंको, जो श्रेष्ठ, भली और सुन्दर लगें, अपने मस्तिष्कमें भर ले, बल्कि यह भी है कि हम सही कार्य करे। खैर, सन्मार्गका पहला सिद्धान्त है सत्य बोलना, सत्यका विचार करना और सत्य-कर्म करना। और दूसरा सिद्धान्त है, प्रत्येक जीवधारीसे प्रेम करना। गौतम बुद्धमें करुणा और दया इतनी भरी हुई थी कि उन्होंने हमें मानवको ही प्यार करनेकी शिक्षा नही दी, बल्कि जिसमें भी जीवन है, उस सबसे, समस्त प्राणि-जगत्से प्रेम करना सिखाया। उन्होंने हमें अपने व्यक्तिगत जीवनको भी शुद्ध रखनेकी शिक्षा दी। इसलिए बच्चो, यदि तुम सत्याचारी नही हो, प्रेमपूर्ण और दयावान नही हो, तुम्हारा व्यक्तिगत आचरण पवित्र नहीं है तो इस संस्थामें तुमने कुछ नही सीखा। गौतम बुद्धका जन्म कहाँ हुआ था, यह मुझे तुममें से कौन लड़का बतायेगा?

एक बहुत छोटे लड़केने, जो महात्माजीके सामने बैठा था, उत्तर दिया: उनका जन्म कपिलवस्तुमें हुआ था।

महात्माजी: और कपिलवस्तु कहाँ है?

लड़का: यह भारतमें है।

महात्माजी: तब मैं तुम सब लड़कोंसे कहता हूँ कि गौतमके देशके लोगोंका तुम लोगोंपर कुछ ऋण है, और, यदि तुम्हें पहले ही मालूम न हो, तो मुझे तुमको बड़े दुःखसे बताना पड़ रहा है कि जहाँ गौतमने जीवन व्यतीत किया और जहाँ उन्होंने उपदेश दिया और जिसे अपने पुनीत चरणोंसे उन्होंने पवित्र किया, उस देशमें भयंकर गरीबी और संकट है। भारतकी जनता, वहाँके करोड़ो लोग जो आज इतने गरीब है, उसका एक कारण यह है कि उन्होंने अपने प्राचीन उद्योगको छोड़ दिया है या फिर वे उससे वंचित कर दिये गये हैं। मेरा मतलब चरखेसे है। खैर, अब वे चरखा फिर शुरू कर सकते हैं, बशर्ते कि भारतका प्रत्येक व्यक्ति और दूसरे लोग भी चरखेपर जो-कुछ काता जाये और बुना जाये, वह पहनने लगें। उस कपड़ेको खादी कहते हैं।

दयाका जो सन्देश गौतमने तुमको और मेरे देश भाइयोंको दिया, उसके लिए यदि तुम अपना आभार प्रकट करना चाहते हो तो तुम खादी जरूर पहनो। जहाँतक मैं जानता हूँ, तुम छोटे लड़कोंने और दूसरोंने जो कपड़ा पहन रखा है, वह कोलम्बो या लंकामें निर्मित नहीं है और यह देखते हुए कि अपने तनको ढँकनेके लिए तुम्हें कुछ कपड़ा खरीदना ही है, तुम्हारा यह प्रथम कर्त्तव्य है कि तुम वही कपड़ा खरीदो जो गौतमके देशभाइयों, करोड़ों भूखे लोगों द्वारा बुना गया है। और यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम सन्मार्गमें जो दूसरा सिद्धान्त बताया गया है, उसके मुताबिक अमल करोगे या अमल करना शुरू कर दोगे। मैंने तुमको जो-कुछ बताया है वह स्वभावत: तुम्हारे शिक्षकों और तुम्हारे माता-पिताओंपर भी दुगुना लागू होता है। यदि तुम चतुर, भले और बहादुर लड़के हो तो तुम इन सब बातोंकी चर्चा अपने शिक्षकों तथा माता-पितासे करोगे और उनसे पूछोगे: "गांधी नामके इस विचित्र व्यक्तिने यह क्या चीज बताई है? और यदि मैं गलतीपर नहीं हूँ तो वे, मैंने तुमसे जो-कुछ कहा है, उसका अक्षरश: समर्थन करेंगे। तुमने मुझे जो पैसा दिया है, वह इसी कामके लिए है और मैं तुमको और तुम्हारे शिक्षकोंको भारतके करोड़ों भूखे लोगोंके लिए यह पसा देनेके लिए धन्यवाद देता हूँ। खद्दर पहनना तो उस कदमका अनुसरण-मात्र है जो आज तुमने उठाया है। भगवान तुम सबको सुखी रखे।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, १६-११-१९२७
विद गांधीजी इन सीलोन

१७५. भाषण: नालन्दा विद्यालय, कोलम्बोमें

१५ नवम्बर, १९२७

प्रिंसिपल महोदय, शिक्षकगण और विद्यार्थियो,

जिस कामके लिए मैं इस सुन्दर द्वीपमें आया हूँ, उस कामके लिए मुझे दान देनेके लिए मैं आपको बहुत धन्यवाद देता हूँ।...[1]

और मैं आपसे कहता हूँ कि बुद्धने जो दया-धर्मका सन्देश दिया है, यदि आप उसपर अमल करना चाहते हैं और गौतमका आपपर जो ऋण है, उसे चुकाना चाहें तो जबतक आप स्वयं खादी तैयार करनेके काबिल नहीं हो जाते, तबतक आप भारतमें निर्मित खादी ही पहनें। मेरे अनुवादक मित्रने[2] बड़े गर्वके साथ मुझे बताया है कि जो कपड़ा वे पहने हुए हैं, वह लंकामें ही तैयार किया गया है। खैर, जबतक वह लंकामें तैयार की गई पर्याप्त खादी पेश करनेमें समर्थ है तबतक मैं आपको भारतमें निर्मित एक गज खादी भी खरीदनेसे मना करूँगा, लेकिन यदि आप अपने हाथोंसे काम

१. इसके बाद गांधीजी बुद्ध और खादीके सन्देशके सम्बन्धमें बोले।
२. जे० एस० पी० जयवर्द्धन, जिन्होंने भाषणका सिंहलीमें अनुवाद किया।

करें और खादी तैयार करें तो वास्तवमें तब भी आप बुद्धके अनुयायी ही समझे जायेंगे। यदि आप वैसा करेंगे तो आप एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करके समूचे संसारकी सहायता करेंगे। लेकिन इस बीच मैं आपको बता दूं कि यदि आप सब, शिक्षकगण और आप लोग, खादी पहनने लगें तो यह एक सही बात होगी और इस प्रकार आपने थैली भेंट करके जो एक कदम उठाया है, यह उसका अनुसरण होगा। मैं आपको एक बार फिर इस विद्यालयमें आमन्त्रित करनेके लिए धन्यवाद देता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको सुखी रखे।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, १६-११-१९२७
विद गांधीजी इन सीलोन

१७६. भाषण : बौद्धोंकी सभामें[1]

१५ नवम्बर, १९२७

आपके अभिनन्दनपत्रके लिए मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। आपके इस सौजन्यका भी मैं आदर करता हूँ कि आपने उसका अनुवाद मुझे पहलेसे ही दे दिया था। मैं श्रीमान महाथेर और भिक्षुओंका भी उनके आशीर्वादके लिए उतना ही आभारी हूँ। मुझे आज जो आशीर्वाद यहाँ प्राप्त हुआ है इसे मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूँ, और आज इस सभामें महाथेर और भिक्षुओंको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं उस आशीर्वादके योग्य बननेकी कोशिश हमेशा करता रहूँगा। आपके मानपत्रमें भारतके बुद्ध गया मन्दिरका जिक्र आया है। श्रीमान महाथेरने भी उसका उल्लेख अभी किया। बहुत जमानेसे उस मन्दिरके बारेमें मैं दिलचस्पी लेता रहा हूँ और कांग्रेसकी ओरसे जो-कुछ करना सम्भव था, बेलगांवमें अ० भा० राष्ट्रीय कांग्रेसके सभापतिकी हैसियतसे मुझे वह करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था।[2] इस सिलसिलेमें कांग्रेसमें किये गये मेरे कार्यपर जो विवाद उठा था, उसका हवाला मेरे पास लंकाके किसी अज्ञात मित्रने भेजा था। उस समय उस झगड़ेमें पड़ना मैंने ठीक नहीं समझा था। अब भी उसके बारेमें कुछ नहीं कहना चाहता। मैं आपको सिर्फ यही भरोसा दिला सकता हूँ कि आपके दावोंको मनवानेके लिए मुझसे जो-कुछ सम्भव था, मैंने किया और अब भी करूँगा। मैं आपसे केवल इतना ही कह सकता हूँ कि कांग्रेसका उतना प्रभाव नहीं है जितना मैं चाहूँगा कि हो। स्वामित्वके अधिकारके सिलसिलेमें कितनी ही मुश्किलें उठ खड़ी होती हैं। कानूनी कठिनाइयाँ भी रास्तेमें हैं। कांग्रेसके पास जो अच्छेसे-अच्छे आदमी थे, उन लोगोंकी उसने एक समिति इसपर विचार करने और अगर हो सके तो उस

१. यह भाषण कोलम्बोके विद्योदय कालेजमें अखिल लंका बौद्ध परिषद द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें दिया गया था।
२. देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ५७९-८०।

महंतसे कोई समझौता भी कर लेनेके लिए बनाई जो इस समय मन्दिरपर कब्जा किये हुए है। उस समितिने अपनी रिपोर्ट दे दी है और मैं यह मान लेता हूँ कि आपमें से कुछ लोगोंने उसे देखा भी है। समितिने पंच मुक़र्रर करानेकी कोशिश की, किन्तु इसमें वह असफल रही। मगर निराश होनेकी कतई वजह नही है। खैर, मैं आपसे यह कह सकता हूँ कि मेरी व्यक्तिगत सहानुभूति बिलकुल आपके साथ है और अगर यह मेरे बसकी बात होती तो मैं आज ही आपको मन्दिर सौंप देता। आपके अभिनन्दन-पत्रमें लंकाके किसी मन्दिरका भी जिक्र था। इस मन्दिरके बारेमें जो विवाद है, उसके विषयमें मैं कुछ नहीं जानता। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आपमें से कोई उस मन्दिरके बारेमें सारी बातें मुझे बताये और यह भी बताये कि जबतक मैं यहाँ हूँ, उस बीच मैं उसके बारेमें क्या कुछ कर सकता हूँ। आप इस बारेमें निश्चिन्त रहें कि अगर मुझे ऐसा लगा कि इसके बारेमें मैं कुछ कर सकता हूँ तो वह करूँगा और यह आपपर कोई एहसान करनेके लिए नहीं, बल्कि अपने मनके सन्तोषके लिए करूँगा।

आपको शायद पता नहीं है कि मेरे बड़े लड़केने मुझपर बौद्ध होनेका इल्जाम लगाया था और मेरे कुछ हिन्दू देशवासी भी यह कहनेमें नही हिचकते कि मैं सनातन हिन्दू-धर्मकी आड़में बौद्ध-धर्मका प्रचार कर रहा हूँ। मेरे लड़के द्वारा लगाये आरोप और हिन्दू मित्रोंके इल्जामके प्रति मेरी सहानुभूति है। और कभी-कभी मैं बुद्धका अनुयायी होनेके इल्जाममें गर्वका अनुभव भी करता हूँ और इस सभामें मुझे आज यह कहनेमें जरा भी हिचक नही है कि मैंने बुद्धके जीवनसे बहुत-कुछ प्रेरणा पाई है। कलकत्तेके नये बौद्ध मन्दिरमें किसी वार्षिकोत्सवपर मैंने यही खयाल जाहिर किये थे। उस सभाके नेता थे अनागारिक धर्मपाल। वे इस बातपर रो रहे थे कि उनके प्रिय कार्यकी ओर लोग ध्यान नही देते और मुझे याद है कि इस रोनेके लिए मैंने उन्हें बुरा-भला कहा था। मैंने श्रोताओंसे कहा कि बौद्ध-धर्मके नामसे प्रचलित चीज भले ही हिन्दुस्तानसे दूर हो गई हो, मगर बुद्ध भगवानका जीवन और उनकी शिक्षाएँ तो हिन्दुस्तानसे दूर नही हुई हैं। यह बात शायद तीन साल पहलेकी है और अब भी मैं अपने उस मतमें कोई फेरबदल करनेकी वजह नही देखता। गहरे विचारके बाद मेरी यह धारणा बनी है कि बुद्धकी शिक्षाओंके प्रधान अंग आज हिन्दूधर्मके अभिन्न अंग हो गये हैं। गौतमने हिन्दूधर्ममें जो सुधार किये, उनसे पीछे हटना आज हिन्दू-भारतके लिए असम्भव है। अपने महान त्याग, अपने महान वैराग्य और अपने जीवनकी निर्मल पवित्रतासे गौतम बुद्धने हिन्दूधर्मपर अमिट छाप डाली है और हिन्दूधर्म उस महान शिक्षकसे कभी उऋण नहीं हो सकता। और अगर आप मुझे क्षमा करें और कहनेकी अनुमति दें तो मैं कहूँगा कि हिन्दूधर्मने आजके बौद्ध-धर्मका जो अंश आत्मसात् नही किया है, वह बुद्धके जीवन और शिक्षाओंका मुख्य अंश ही नही था।

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि बौद्ध-धर्म, या कहिए बुद्धकी शिक्षाएँ हिन्दुस्तानमें पूरी तरह फलीभूत हुईं। और इसके सिवा दूसरा कुछ हो भी नहीं सकता था, क्योंकि

गौतम स्वयं हिन्दुओंमें श्रेष्ठ हिन्दू थे। उनकी नस-नसमें हिन्दू-धर्मकी सभी खूबियाँ भरी पड़ी थी। वेदोंमें दवी हुई कुछ शिक्षाओंमें, जिनके सारको भुलाकर लोगोंने छायाको ही ग्रहण कर रखा था, उन्होने जान डाल दी। उनकी महान हिन्दू भावनाने निरर्थक शब्दोके जजालमें दबे हुए वेदोके अनमोल सत्योको जाहिर किया। उन्होने वेदोंके कुछ शब्दोसे ऐसे अर्थ निकाले, जिनसे उस युगके लोग बिलकुल अपरिचित थे और उन्हें हिन्दुस्तानमें इसके लिए सबसे अनुकूल वातावरण मिला। जहाँ-कही बुद्ध गये, उनके चारों ओर अहिन्दू लोग नही, बल्कि ऐसे हिन्दू विद्वान ही घिरे रहते थे जो स्वय वेदोके ज्ञाता थे। मगर बुद्धके हृदयकी तरह ही उनकी शिक्षा भी अत्यन्त व्यापक और सर्वग्राही थी और इसी कारण उनके मरनेके बाद भी वह जीवित रही, और संसार-भरमें फैल गई। और बुद्धका अनुयायी कहे जानेका खतरा उठाकर भी मै इसे हिन्दू-धर्मकी ही विजय कहता हूँ। उन्होने हिन्दू-धर्मको कभी अस्वीकार नही किया, केवल उसका आधार विस्तृत कर दिया। उन्होने इसमें एक नई जान फूंक दी, इसको एक नया ही रूप दे दिया। मगर अब आगे जो-कुछ मैं कहूँगा उसके लिए आप क्षमा करेंगे। मै आपसे यही कहना चाहता हूँ कि बुद्धकी शिक्षाओंको तिब्बत, लंका, चीन या बर्मा कोई भी देश पूरी तरह आत्मसात् नही कर पाया। मैं अपनी मर्यादा जानता हूँ। मै बौद्ध-धर्मका पडित होनेका दावा नही रखता। बौद्ध-धर्मपर प्रश्नोत्तरमें शायद नालन्दा विद्यालयका कोई छोटा लड़का भी मुझे हरा देगा। मैं जानता हूँ कि यहाँ मै बहुत विद्वान भिक्षुओ और गृहस्थोके सामने बोल रहा हूँ, किन्तु अगर मैं अपने दिलका विश्वास आपसे न कहूँ तो मैं आपके सामने और अपनी अन्तरात्माके सामने झूठा ठहरूँगा।

आप लोगो और हिन्दुस्तानके बाहरके बौद्धोने बेशक बुद्धकी बहुत-सी शिक्षाएँ ग्रहण की है। मगर जब मैं आपके जीवनकी जाँच करता हूँ और लंका, बर्मा, चीन या तिब्बतके मित्रोसे प्रश्न पूछता हूँ तो मै आपके जीवनमें, और बुद्धके जीवनका जो मै मुख्य भाग समझता हूँ, उसमें असंगतियाँ देखकर फेरमें पड़ जाता हूँ। अगर मेरी बातें आपको थका न रही हो तो मैं आपके सामने तीन खास बातें रखना चाहूँगा, जो मेरे दिमागमें अभी-अभी आई है। पहली चीज है ईश्वर कही जानेवाली एक सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिशाली नियतिमें विश्वास करना। मैंने यह बात अनगिनत बार सुनी है और बौद्ध-धर्मकी भावनाको प्रकट करनेका दावा करनेवाली किताबोंमें पढ़ी है कि बुद्ध ईश्वरमें विश्वास नही करते थे। मेरी नम्र सम्मतिमें बुद्धकी शिक्षाओं-की मुख्य बातके यह बिलकुल विरुद्ध है। मेरी नम्र सम्मतिमें यह भ्रान्ति इस बातसे फैली कि बुद्धने अपने जमानेमें ईश्वरके नामपर चलनेवाली सभी बुरी चीजोको अस्वीकार कर दिया था और यह उचित ही किया था। उन्होंने बेशक इस धारणाको अस्वीकार किया कि जिसे ईश्वर कहते है, उसमें द्वेष-भाव होता है, वह अपने कामोंके लिए पछताता है, वह पृथ्वीके राजाओकी तरह लोभ और घूसका शिकार हो सकता है, या वह कुछ व्यक्तियोंपर विशेष कृपालु हो सकता है। उनकी सम्पूर्ण आत्मा इस विश्वासके विरुद्ध विद्रोह कर उठी कि जिसे ईश्वर कहते है, वह अपनी तुष्टिके लिए

अपने ही रचे हुए पशुओंके खूनकी आवश्यकता महसूस करता है। इसलिए उन्होंने परमात्माको उसके सच्चे आसनपर पुनः प्रतिष्ठित किया और उस पवित्र सिंहासनपर बैठे हुए लुटेरेको हटा दिया। उन्होंने यह बात जोर देकर समझाई और इस सत्यकी एक बार फिरसे घोषणा की कि यह संसारके कुछ शाश्वत और अटल नैतिक नियमोंसे शासित है। उन्होने बिना किसी हिचकके कहा है कि नियम ही परमात्मा है।

परमात्माके नियम शाश्वत और अटल हैं। वे परमात्मासे अलग नही किये जा सकते है। ईश्वरकी पूर्णताकी यह अपरिहार्य शर्त है। इसलिए यह भ्रान्ति फैली कि गौतम बुद्धका परमात्मामें विश्वास नही था और वे सिर्फ नैतिक नियमोंमें ही विश्वास करते थे; और स्वयं ईश्वरके बारेमें यह भ्रान्ति फैलनेसे ही निर्वाणके बारेमें भी मतिभ्रम हुआ है। निर्वाणका अर्थ अस्तित्वका सम्पूर्ण अन्त तो बेशक नही है। बुद्धके जीवनकी मुख्य बात जो मै समझ सका हूँ, वह यह है कि निर्वाणका अर्थ है, हममें से सभी बुराइयोंका बिलकुल नष्ट हो जाना, सभी विकारोंका नेस्त-नाबूद हो जाना, हमारे अन्दर जो-कुछ भ्रष्ट है या भ्रष्ट हो सकता है उसकी हस्ती मिट जाना। निर्वाण श्मशानकी मृत शान्ति नही है। वह तो उस आत्माकी जीवन्त शान्ति और सुख है, जिसने अपने-आपको पहचान लिया हो और अनन्त प्रभुके हृदयके भीतर अपना निवास ढूंढ़ निकाला हो।

तीसरी बात यह है कि सभी प्रकारका जीवन पवित्र है, यह विचार भारतसे बाहर देशोंमें जाकर अपना महत्त्व खो बैठा है। परमात्माको उसके शाश्वत आसनपर पुनः प्रतिष्ठित करके बुद्धने मानवताकी बड़ी भारी सेवा की थी, लेकिन उससे भी बड़ी सेवा मैं यह मानता हूँ कि उन्होंने सभी प्राणियोंके जीवनका आदर करना सिखलाया, चाहे वे कितने ही छोटे क्यों न हों। मैं जानता हूँ कि उनका अपना भारत उस ऊँचाईतक नही उठा जितना ऊँचा कि वे उसे देखना चाहते। मगर जब उनकी शिक्षाएँ दूसरे देशोंमें बौद्ध-धर्मके नामसे पहुँची, तब उनका यह अर्थ लगने लगा कि पशुओंके जीवनकी वही कीमत नही है जो मनुष्योंके जीवनकी है। मुझे लंकाके बौद्ध-धर्मके रिवाजों और विश्वासोंका ठीक पता नही है, मगर मैं जानता हूँ कि चीन और बर्मामें उसने कौन-सा रूप धारण किया है। खासकर बर्मामें कोई बौद्ध खुद एक भी जानवर नहीं मारेगा, मगर दूसरे लोग उसे मार और पकाकर लायें तो उसे खानेमें उसको कोई झिझक नहीं होगी। संसारमें अगर किसी शिक्षकने यह सिखाया है कि हरएक कर्मका फल अनिवार्य रूपसे मिलता है तो गौतम बुद्धने ही सिखाया है, मगर तब भी, आज हिन्दुस्तानके बाहरके बौद्ध यदि उनसे बने तो, अपने कर्मोंके फलोसे बचनेकी कोशिश करनेसे बाज नही आयेंगे। मगर मुझे आपके धैर्यकी और परीक्षा नहीं लेनी चाहिए। मैंने उन कुछ-एक बातोंका थोड़ा जिक्र-भर किया है, जिन्हें आपके सामने लाना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ और मै बड़ी नम्रताके साथ और आग्रहपूर्वक आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप उनपर ध्यानसे विचार करें।

बस एक और बात कहकर मैं भाषण समाप्त करूँगा। कल रातको स्वागत समितिके सदस्योंने किसी सभामें खादी और लंकाके सम्बन्धपर कुछ कहनेके लिए

मुझसे कहा था। इस विषयपर बोलनेके लिए मेरे पास अधिक समय नहीं बचा है। मगर मैं उसका सार एक-दो वाक्योंमें देनेकी कोशिश करूँगा। एक बात तो यह है कि आप लोगोंका, जो बुद्धको अपने हृदयका देवता मानते हैं, बुद्धकी जन्मभूमि और उनके उन वंशजोंके प्रति आपका कुछ कर्त्तव्य है, जिनके लिए वे जिये और मरे। आज उनके ये वंशज मुसीबतकी जिन्दगी गुजार रहे हैं, भुखमरीकी जिन्दगी गुजार रहे हैं। अतः मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि खादीके जरिये आप अपने हृदयोंके देवता और अपने बीच एक जीवन्त सम्बन्ध जोड़ सकेंगे। अगर आप उनकी शिक्षाकी मुख्य बातके अनुसार चलें और जीवनको क्षणिक मानते हुए उसका अर्थ सभी भौतिक वस्तुओंका त्याग मानें तो आप तुरन्त ही खादीके सन्देशकी खूबसूरतीको समझ जायेंगे, जिसका कि दूसरा अर्थ है सादा जीवन और ऊँचे विचार। मैं आपमें से हरएकसे कहूँगा कि ये दो विचार लेकर आप अपने लिए खादीके सन्देशका अर्थ खुद ही लगा लीजिए। आपने मुझपर जो कृपा दिखाई है, उसके लिए तथा अभिनन्दनपत्र और आपके आशीर्वादके लिए मैं आपको फिर धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि आपने मेरे नम्र सन्देशको उसी भावनासे ग्रहण किया है जिस भावनाके साथ वह दिया गया है। इसे आलोचककी आलोचना न समझकर दिली-दोस्तका सन्देश मानिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २४-११-१९२७

१७७. भाषण: वाई० एम० सी० ए०[1], कोलम्बोमें

१५ नवम्बर, १९२७

कोलम्बोमें वाई० एम० सी० ए० के हॉलमें एकत्र भारी जन-समूहके सामने बोलते हुए गांधीजीने कहा कि प्रतिदिन संसार-भरमें ईसाइयोंके साथ मेरा घनिष्ठ सम्पर्क होता जा रहा है और इस अवसरका मैं उसी सम्पर्कके एक और उदाहरणकी तरह स्वागत करता हूँ। [आगे उन्होंने कहा:]

कुछ लोग ऐसे हैं जो मेरे यह साफ-साफ इनकार करनेपर भी कि मैं क्रिश्चियन नहीं हूँ, मेरी बातको स्वीकार नहीं करते।

ईसाका सन्देश, जैसा कि मैं उसे समझता हूँ, उनके "सरमन ऑन द माउंट" में विशुद्ध और सर्वांग रूपमें निहित है, और "सरमन ऑन द माउंट" के विषयमें भी, मेरी विनम्र व्याख्या रूढ़ व्याख्यासे कई दृष्टियोंसे भिन्न है। मेरी समझमें, पश्चिममें इस सन्देशको विकृत किया गया है। मेरा यह कहना छोटे मुँह बड़ी बात हो सकता है, लेकिन सत्यका भक्त होनेके नाते मैं जो महसूस करता हूँ, उसे कहनेमें मुझे हिच-

१. यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन।

कना नही चाहिए। मै जानता हूँ कि दुनिया इस बातका इन्तजार नही कर रही है कि ईसाईधर्मके बारेमें मै अपनी कोई राय दूँ।

किसी व्यक्तिका धर्म अन्ततः तो उसके और उसके रचयिताके बीचकी चीज है, जिससे किसी औरको कोई सरोकार नहीं है, लेकिन आज शाम जो मै अपने विचार आपके सामने रखना चाहता हूँ वह इसलिए कि मै सत्यकी अपनी खोजमे आपकी सहानुभूति प्राप्त करना चाहता हूँ और इसलिए कि बहुत-से ईसाई मित्र ईसाके उपदेशोंके बारेमें मेरे विचारोंमें दिलचस्पी रखते है। अतः यदि मेरे सामने केवल "सरमन ऑन द माउंट" और उसकी मेरी अपनी व्याख्या ही होती, तो मै यह कहनेमें नही हिचकता कि 'हाँ, मै ईसाई हूँ।' लेकिन मैं जानता हूँ कि इस समय यदि मै ऐसी कोई बात कहूँ तो इससे बड़ी गलतफहमी पैदा हो जानेका अन्देशा है। मै झूठा दावा करनेका अपराधी हो जाऊँगा क्योंकि तब मुझे आपको बताना पड़ेगा कि ईसाईधर्मकी मेरी अपनी व्याख्या क्या है, और आपके सामने ईसाई-धर्मके बारेमें अपने विचार बतानेकी मेरी कोई इच्छा नही है। लेकिन मै आपको यह बता सकता हूँ कि ईसाई-धर्मके नामसे जो बहुत-कुछ चीजें चलती है वे "सरमन ऑन द माउंट" के विरुद्ध है। कृपया मेरे शब्दोंपर ध्यान दें। मै इस समय ईसाई आचरणकी बात नही कर रहा हूँ। मै ईसाई मान्यताओंकी, ईसाई-धर्मके उस स्वरूपकी बात कर रहा हूँ, जिस रूपमें पश्चिममें उसे समझा जाता है। मैं यह जानता हूँ और मुझे इसका बहुत दुःख है कि सभी जगह मान्यताओंके मुकाबले आचरणमें बहुत कमियाँ है। लेकिन ऐसा मै आलोचनाकी दृष्टिसे नही कह रहा हूँ। मै अपने अनुभवोसे जानता हूँ कि हालाँकि मै अपने कथनोके अनुसार आचरण करनेकी जीवनमें हर क्षण कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन मेरे कथनके मुकाबले मेरे आचरणमें कमी रह जाती है। इसलिए यह बात आलोचनाकी नीयतसे कहनेका मेरा कोई मंशा नही है। लेकिन मै आपके सामने अपनी बुनियादी कठिनाइयाँ रख रहा हूँ। जब १८९३ में मैंने एक विनम्र विद्यार्थीके रूपमें दक्षिण आफ्रिकामें ईसाई साहित्य पढ़ना शुरू किया तो मैंने अपने आपसे पूछा, 'क्या यह ईसाइयत है?' और मुझे हमेशा वेदोंका यह उत्तर मिला 'नेति-नेति' (यह नहीं, यह नही)। और मेरे अन्तरकी गहराइयोंसे आवाज आती है कि मै ठीक हूँ।

मैं ईश्वरमें विश्वास रखनेवाला एक विनम्र व्यक्ति होनेका दावा करता हूँ, और मुझे टुकड़े-टुकड़े भी कर दिया जाये तो ईश्वर मुझे शक्ति देगा कि मै उसके अस्तित्वसे इनकार न करूँ, बल्कि जोर देकर कहूँ कि वह है। मुसलमान कहते हैं कि अल्ला है, और उसके सिवा कोई नही है। ईसाई भी वही बात कहते है, और हिन्दू भी, और अगर कह सकूँ तो बौद्ध लोग भी यही बात कहते हैं, हालाँकि भिन्न शब्दोंमें। हम ईश्वर शब्दकी अलग-अलग व्याख्या भले ही करते हों — उस ईश्वरकी, जिसमें हमारी यह पृथ्वी ही नहीं, ऐसी करोड़ों, अरबों पृथ्वियाँ समाई हुई हैं। हम तुच्छ रेंगनेवाले जीव, जिन्हें उसने इतना असहाय बनाया है, हम उसकी महानता, उसके असीम प्रेम, उसकी अगाध करुणाको कैसे नाप सकते है? उसकी करुणा ऐसी है कि जब मनुष्य धृष्टतापूर्वक उसके अस्तित्वसे इनकार कर देता है, अन्य मनुष्योंका गला काटता है तो वह इसे भी बर्दाश्त कर लेता है। जो ईश्वर इतना क्षमाशील,

इतना दिव्य है, उसकी महानताको हम कैसे नाप सकते हैं। इस प्रकार हम भले वे ही शब्द उच्चारित करे, लेकिन हम सबके लिए उन शब्दोंका एक ही अर्थ होना जरूरी नहीं है। और इसीलिए मैं कहता हूँ कि हमें अपने भाषणों या लेखों द्वारा शुद्धि अथवा तबलीग या धर्म परिवर्तन करानेकी जरूरत नहीं है। हम अपने जीवनके उदाहरण द्वारा ही वास्तवमें वैसा कर सकते हैं। हमारा जीवन औरोंके लिए खुली किताबकी तरह हो। कितना अच्छा हो कि मैं मिशनरी मित्रोंको अपने मिशनके प्रति यह दृष्टि अपनानेके लिए राजी कर सकूँ। तब न कोई अविश्वास होगा, न सन्देह-ईर्ष्या, और न झगड़े ही होंगे।

इसके बाद गांधीजीने आधुनिक चीनको मिसालके तौरपर लिया। उन्होंने कहा, महान राष्ट्रीय उथल-पुथलकी पीड़ासे गुजरते हुए नवचीनके साथ मेरी हार्दिक सहानुभूति है। मुझे चीनके यंग विमेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन (ईसाई युवती संघ) और यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन (ईसाई युवक संघ) के छात्र विभागसे प्राप्त पुस्तिकासे चीनमें चल रहे ईसाई-विरोधी आन्दोलनका पता चला है। पुस्तिकाके लेखकोंने ईसाई-विरोधी आन्दोलनका अपना अर्थ लगाकर उसे प्रस्तुत किया है, लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं है कि नवचीन ईसाई आन्दोलनको चीनकी आत्माभिव्यक्तिका विरोधी मानता है। मेरे लिए इस ईसाई-विरोधी आन्दोलनसे मिलनेवाला पाठ स्पष्ट है। गांधीजीने कहा :

ये नौजवान चीनी ईसाई-धर्म-प्रचारकोंसे कहते हैं कि आप अपने प्रचारको राष्ट्र-विरोधी मत होने दीजिए। पश्चिमकी ओरसे ईसाई-धर्मके प्रचारके जो प्रयत्न हुए हैं, उनके प्रति उनके ईसाई मित्र भी सशंक हो उठे हैं। मैं आपसे कहूँगा कि नौजवानों द्वारा लिखे गये इन निबन्धोंमें एक गहरा अर्थ है, एक गहरा सत्य है, क्योंकि ये नौजवान ईसाई शिक्षाओंके अनुसार जिस हदतक अपने जीवनको ढाल पाये हैं, उस हदतक वे अपने ईसाई-धर्मानुसार किये जानेवाले आचरणोंको उचित ठहरानेकी कोशिश कर रहे हैं और साथ ही साथ उस विरोधका कोई आधार पानेकी कोशिश कर रहे हैं। इस ईसाई-विरोधी आन्दोलनसे जो निष्कर्ष मैं चाहूँगा कि आप निकालें वह यह है कि आप लंकाके लोग अपने परिवेशसे, अपनी जमीनसे नाता न तोड़ें, और पश्चिमके लोग जाने या अजाने लंकावासियोंके रहन-सहनके ढंग, रीति-रिवाजों और आदतोंको, जिस हदतक वे बुनियादी नीति-धर्म और नैतिकताके विरुद्ध न हों, बदलनेकी कोई कोशिश न करें। आज जिसे हम आधुनिक सभ्यता कहते हैं, उसे ही ईसाके उपदेश मत समझिए, और जिन लोगोंके साथ आपने अपना भाग्य जोड़ लिया है, कृपया उनके साथ अनजाने कोई हिंसा मत कीजिए। धर्मोपदेशकके काममें यह शामिल नहीं है कि वह पूर्वके लोगोंके जीवनको जड़से उखाड़ दे, इसका मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ। उनमें जो-कुछ अच्छा है, उसे सहन कीजिए और अपनी पूर्वधारणाओंके वश होकर जल्दबाजीमें उनके सम्बन्धमें कोई राय मत बनाइए। पश्चिमी सभ्यताकी महानतामें आपका अपना जो विश्वास है और अपनी तमाम उपलब्धियों

पर आपका अपना जो गर्व है, उसके बावजूद मैं आपसे विनम्र बननेको कहूँगा और कहूँगा कि आप अपने मनमें सन्देहके लिए थोड़ी गुंजाइश रखें जिसमें, जैसा कि टेनिसनने अपनी कवितामें लिखा है, अपेक्षाकृत ज्यादा सत्य होता है। कहनेकी जरूरत नही कि "सन्देह" से उनका अभिप्राय किसी भिन्न चीजसे था। हममें से हर आदमी अपना जीवन जिये, और यदि हमारा जीवन ही सही जीवन है तो फिर जल्दबाजीका कारण ही कहाँ है? उसकी तो स्वतः प्रतिक्रिया होगी।

आप लंकावासी युवक[1] मित्रोसे मैं कहता हूँ: पश्चिमसे जो तड़क-भड़कवाली चीजें आपके पास आती हैं, उनसे आप चकाचौंध मत हो जाइए। इस अस्थायी दिखावेके कारण आपके पैर लड़खड़ा न जायें। बुद्धने आपसे कभी न भुलाये जानेवाले शब्दोंमें कहा है कि जीवनकी यह छोटी-सी अवधि एक अस्थायी छाया है, गुजर जानेवाली वस्तु है, और यदि आप आँखोसे दिखाई पड़नेवाली चीजोंकी व्यर्थता समझ लेंगे, नित्य परिवर्तित होनेवाले पार्थिव शरीरकी व्यर्थता समझ लेंगे तो आपको परलोकमें सभी कुछ प्राप्त होगा, और इह लोकमें शान्ति प्राप्त होगी, ऐसी शान्ति जो बुद्धिकी समझसे परे है, और ऐसा आनन्द प्राप्त होगा, जिसका हमें कभी कोई आभास भी नही हुआ है। इसके लिए विलक्षण विश्वास, दिव्य विश्वासकी और हम अपनी आँखोंके सामने जो-कुछ देखते है, उस सबका त्याग करनेकी जरूरत है। बुद्धने और ईसाने और मुहम्मदने भी क्या किया? उनका जीवन आत्मत्याग और सब-कुछ त्यागका जीवन था। बुद्धने सभी सांसारिक सुखोंका त्याग कर दिया, क्योंकि वे सारे संसारके साथ अपने सुखको बाँटकर भोगना चाहते थे। ऐसा सुख सत्यकी खोजमें त्याग करने और कष्ट सहन करनेवाले ही प्राप्त कर सकते है। यदि मूल्यवान प्राणोंकी आहुति देकर एवरेस्टके शिखरपर पहुँचना और कुछ मामूली पर्यवेक्षण करना अच्छी चीज है, यदि ध्रुवोंपर एक झंडा गाड़नेके लिए एकके बाद एक अनेक प्राणोंका बलिदान करना गौरवकी वस्तु है, तो शक्तिशाली और अविनाशी सत्यकी खोजमें एक जीवन नही, करोड़ों जीवन नहीं, बल्कि असंख्य जीवन बलिदान करना कितने गौरवकी बात होगी? इसलिए जमीनसे अपने पैर मत उखड़ने दीजिए, अपने पूर्वजोंकी सादगीसे दूर मत हटिए। एक ऐसा समय आ रहा है कि जब वे लोग, जो आजकी अन्धी दौड़में पड़कर अपनी आवश्यकताएँ बढ़ाते जा रहे है और मूढ़तावश ऐसा मान रहे हैं कि इस प्रकार वे जीवनमें जो-कुछ सार है उसमें वृद्धि कर रहे हैं, संसारके सच्चे ज्ञानकी अभिवृद्धि कर रहे हैं, वे अपने कदम वापस लौटायेंगे और कहेंगे: "यह हमने क्या किया?" सभ्यताएँ आई है और चली गई हैं, और हम अपनी जिस प्रगतिपर इतना गर्व करते हैं, उसके बावजूद मेरा मन पूछनेको होता है, "आखिर किसलिए?" डार्विनके एक समकालीन, वैलेसने भी यही बात कही है। उसने कहा, शानदार आविष्कारों और अन्वेषणोसे भरे इन पचास वर्षोंने मानव-जाति की नैतिक ऊँचाईमें एक इंचकी भी वृद्धि नही की है। यही बात एक स्वप्नद्रष्टा और कल्पनालोकमें विचरण करनेवाले व्यक्ति — टॉल्स्टॉय — ने भी कही। यही बात ईसाने

१. वाई० एम० सी० ए० के सदस्योंमें ईसाई और बौद्ध नवयुवक दोनों शामिल थे।

कही, बुद्धने कही और मुहम्मदने भी कही, जिनके धर्मको आज मेरे देशमें नकारा और झुठलाया जा रहा है।

"सरमन ऑन द माउंट" में जो अमृत-जल आपको दिया गया है उसे शौकसे खूब पीजिए, लेकिन तब आपको टाट और भस्मी अपनानी पड़ेगी। "सरमन" की शिक्षाएँ हममें से प्रत्येकके लिए थी। आप ईश्वर और अर्थ-पिशाच दोनोंकी सेवा एक साथ नही कर सकते। करुणामय और दयालु, साक्षात् सहिष्णुता-रूप ईश्वर अर्थ-पिशाचको चार दिनका चमत्कार दिखाने देता है। लेकिन लंकाके नवयुवको, मैं आपसे कहता हूँ कि आप आत्मनाशी अर्थ-पिशाचके इस विनाशकारी तमाशेसे दूर भागिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ८-१२-१९२७

१७८. भाषण: मिशनरी सम्मेलन, कोलम्बोमें

१६ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

आपने कृपापूर्वक इस सभाको मेरी इच्छाकी सूचना देकर मेरा काम आसान कर दिया है। किसी भी मिशनरी संस्थाके निमन्त्रणका मैं सदा स्वागत करता हूँ, और मुझे साथी-मिशनरी कहकर जो सम्बोधित किया गया है उसे मैं अपनी सराहना समझता हूँ। शायद हम "मिशनरी" शब्दको एक ही अर्थ न प्रदान करें। तथापि मैं इस प्रकार सम्बोधित किये जानेको पसन्द करता हूँ। मुझे बताया गया है कि आप हर माह एक सम्मेलन करते है जिसमें लंका या कोलम्बोके मिशनरी इकट्ठे होते है, और मुझे यह भी बताया गया है कि आपने सम्मेलनका यह दिन इसलिए नियत किया है ताकि आप मुझसे मिल सकें और मुझे आपसे मिलनेका सौभाग्य प्रदान कर सकें। मैं आपकी समितिकी इस कृपाकी कद्र करता हूँ, और इसे उसी प्रकारकी एक गोष्ठी बनानेकी दृष्टिसे मैं चाहूँगा कि आपके मनमें जो भी प्रश्न इस समय उठें, आप उन्हें मुझसे पूछिए। इससे मेरा काम सचमुच आसान हो जायेगा। मैं आपके सामने कोई भाषण नही देना चाहता। मेरे पास कोई नई बात कहनेको नही है। मैं कलकत्तेमें, बंगलोरमें, मिशनरी सम्मेलनोंमें बोलता रहा हूँ और मैं मद्रासमें भी मिशनरियोंके सामने बोला हूँ, और जो बातें मैं पहले कह चुका हूँ, उनमें नया जोड़नेको मेरे पास शायद कुछ नही है। लेकिन यह कही बेहतर होगा कि उन सम्मेलनोंमें दिये गये मेरे भाषणों, अथवा अन्यत्र किसी अन्य विषयपर दिये गये मेरे भाषणोंके बारेमें आपने जो पढ़ा हो उसपर से, अथवा आपने मेरे भाषण सुने हो तो उसपर से आपके मनमें जो सवाल आयें, उन्हे आप पूछें। आपमें से कुछ लोगोंने मेरे प्रति जो घनिष्ठ बन्धु-भाव दिखाया है उससे मैं जानता हूँ कि आपने अखबारोंमें मेरे बारेमें

पढ़ा है। अगर आप मुझमें वैसा ही विश्वास रखते हों तो आपने मेरे बारेमें जो-कुछ सुना है उसपर से भी मुझसे सवाल कर सकते हैं, और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि आप मुझसे ऐसे सवाल भी करेंगे जिन्हें चन्द लोगोंकी आपसी बातचीतमें भी अटपटे सवाल माना जा सकता है, तो भी मैं बुरा नही मानूँगा। हम इस सभाको बैठकखानेवाली गोष्ठी नही, बल्कि ऐसे मित्रोंकी आपसी बातचीत बना लें जो एक-दूसरेके और अधिक घनिष्ठ मित्र होने, और गलतफहमीका कोहासा मिटानेकी कोशिश कर रहे हैं।

आगे बोलते हुए महात्मा गांधीने एक भजनका जिक्र किया जो उन्होंने प्रिटोरियामें सुना था: "जब कुहरेके बादल हट जायेंगे तब हम एक दूसरेको ज्यादा अच्छी तरह जान सकेंगे।" आइए, हम लोग देखें कि कहीं कोई कुहरेका बादल न रहने पाये।

इसके बाद प्रश्नोंके लिए थोड़ी देरकी खामोशी छाई रही, और तब श्री जी० पी० विशर्डने पूछा कि मनुष्य अपने पापोंकी क्षमा पा सकता है, इस सिद्धान्तके बारेमें आपका क्या विचार है। महात्मा गांधीने कहा:

यह वास्तवमें एक बहुत अच्छा प्रश्न है। यह एक बहुत पुराना सवाल है और हर पापीके मनमें स्वभावत: उठता है, और मैं मानता हूँ कि चूँकि मैंने अपने लिए जिसे मैं सामान्य मानता उससे कही ज्यादा बार पाप किया है — निश्चय ही मैंने पाप करना कभी नही चाहा है — इसलिए मैं जानता हूँ कि क्षमा करनेको कितना कुछ पड़ा है। मैंने जो गम्भीर पाप किये है, एक बार नही, अनेक बार, इतनी बार कि कोई भी व्यक्ति अपने आपपर लज्जित हो उठे, उन पापोंकी मेरी आत्मस्वीकृति शायद आप लोगोंमें से कुछने पढ़ी हो। अत: स्वयं अपने सन्तोषके लिए भी मैंने इस सवालकी जाँच की है। हो सकता है कि हिन्दू विचारधारामें पालित-पोषित होनेके कारण अथवा हो सकता है कि कुछ जैन मित्रोंके साथ अपने घनिष्ठ सम्पर्कके कारण, यानी कि जिस हदतक जैन-धर्मको हिन्दू-धर्मसे अलग समझा जा सकता है — जो भी वजह हो, मैं इस निष्कर्षपर आया हूँ — मैं समझता हूँ कि अपनी इस उम्रमें यही शब्द इस्तेमाल करना सबसे सुरक्षित है, हालांकि सुधार तो कभी भी किया जा सकता है — कि ईश्वरकी ओरसे क्षमा-जैसी कोई चीज नही होती, यानी उस प्रकारकी क्षमा जिसे हम लौकिक व्यवहारमें देखते-समझते है, उदाहरणार्थ जिस प्रकार कोई राजा अपनी प्रजाके अपराधोंको क्षमा करता है। मैं ईश्वरके नियमको शाश्वत और अपरिवर्तनीय मानता हूँ। जहाँतक मैं ईश्वरके उद्देश्यको समझ सका हूँ, ईश्वर और उसके नियमोंमें वैसा कोई भेद नहीं किया जा सकता जैसा कि हम राजाओं, भू-तलके राजाओं और उनके बनाये नियमोंमें भेद कर सकते है और करते है, और फिर भी कुछ है अवश्य जिसे क्षमाका नाम दिया जा सकता है और जो किसी अत्यन्त क्षमाशील राजा द्वारा प्रदान की जा सकनेवाली किसी भी क्षमासे कहीं अधिक सुनिश्चित और श्रेष्ठ है, और वह क्षमा और कुछ नही एक नया हृदय है। यह ईश्वर द्वारा प्रदान की गई नई निश्चित आशा है जिसे कोई भी स्त्री-पुरुष तनिक भी इच्छा

होनेपर स्वयं परख सकता है, और जहांतक मैं देख सका हूं, हृदय परिवर्तनकी यह प्रक्रिया कुछ उस प्रकार घटित होती है।

महात्मा गांधीने आगे बोलते हुए कहा कि यदि किसी व्यक्तिको अपने अपराधका ज्ञान हो जाये, और वह अपने उस अपराधको धो डालना चाहे तो वह प्रार्थना और ईश्वरसे विनती करके उसे धोनेकी शुरुआत करता है। "प्रार्थना" और "विनती" इन शब्दोंके जो लौकिक अर्थ समझे जाते हैं, उससे उनका अर्थ कहीं अधिक व्यापक है, और यदि हम अपने अन्दर उस सुनिश्चित परिवर्तनकी आवश्यक कसौटीको पूरा करें तो हमें अपने अन्दर विराजमान ईश्वरकी ज्यादा निश्चित अनुभूति होगी, और वह परिवर्तन आ जानेके बाद पाप करनेवालेको अपने अन्दर ऐसा महसूस होगा जैसे उसके लिए एक सुरक्षाकी दीवार खड़ी होती जा रही है, और इसके बावजूद वह अपनी किसी विशेषताके कारण नहीं बल्कि उस जीवन्त सुरक्षा-दीवारके कारण सुरक्षा महसूस करेगा जिसे वह अपने सामने, अपने चारों ओर, अपने नीचे, और अपने ऊपर बनते देखेगा, और इस दीवारके कारण वह पाप और अपराधसे परे हो जायेगा।

यह एक धीरे-धीरे होनेवाली प्रक्रिया है, लेकिन हमारे सामने यह चमत्कारकी भाँति सहसा घटित होती प्रतीत होती है और इसीलिए हम उसके लिए "ग्रेस" [कृपा] शब्दका इस्तेमाल करते हैं। मैं इस शब्दका खुलकर इस्तेमाल करता हूं क्योंकि हिन्दू-धर्ममें भी इसके लिए एक समानार्थी शब्द है। यह शब्द ईसाई-धर्मके उपदेशोंसे ज्योंका-त्यों नहीं लिया गया है; यह तो हिन्दू पुरोहितोंकी नहीं, हिन्दू-शास्त्रकारोंकी सभी पुस्तकोंमें सामान्य रूपसे पाया जाता है। उन्होंने अपने अनुभव लिपिबद्ध कर दिये थे और उन्होंने अपने अनुभवका वर्णन इसी तरह किया है। मुझे इस प्रक्रियाका ज्ञान कैसे हुआ मैं नहीं जानता; इसकी मुझे चिन्ता भी नहीं है। यदि मैं ईसाइयोंके साथ अपने घनिष्ठ सम्पर्कके जरिये इस प्रक्रियातक पहुँचा हूँ तो मुझे इसकी खुशी होगी, और यदि मैं हिन्दू संस्कारोंमें पला-पुसा होनेके कारण उस नतीजेपर पहुँचा हूँ तो भी मुझे खुशी होगी। मेरा उद्देश्य तो यह पता चलाना है कि मैं अपने पापोंसे बच सकता हूँ कि नहीं; उस पापमयताके जबर्दस्त बोझसे कोई छुटकारा है कि नहीं, और इसीलिए मुझे लगता है कि यह एक धीमी प्रक्रिया है जो तबतक चलती रहती है जबतक वह इतनी विकसित नहीं हो जाती कि हम इसे महसूस करने लगें, और तब हम कहते हैं कि यह परिवर्तन सहसा हुआ है, लेकिन व्यक्तिगत रूपमें मैं सहसा परिवर्तनमें विश्वास नहीं करता। ईश्वरके ब्रह्माण्डमें चमत्कार-जैसी कोई चीज नहीं है। यह तो सुनिश्चित और अपरिवर्तनीय नियमोंके अनुसार चालित है। लेकिन चूंकि हम इन तमाम नियमोंको समझते नहीं हैं और चूंकि ईश्वरके कार्य इतने रहस्यपूर्ण और हमारी समझके बाहर हैं, हमारे लिए धीरज धारण करना जरूरी है, और तभी हमारा इसे चमत्कार कहना उचित होगा। लेकिन सारी प्रक्रियाको ठंडे दिमागसे देखते हुए मैं नहीं सोचता कि ईश्वर चमत्कारोंके जरिये काम करता है, और यदि मेरी

यह बात सही है कि यह प्रक्रिया धीरे-धीरे होनेवाले परिवर्तनकी है, तब दो चीजें हैं जो स्वयं हमारे अन्दर घटती रहती हैं। एक तो है प्रतिक्षण एक निश्चित प्रयास, अविरत प्रयास की क्रिया; और दूसरी है हमें नवजीवन प्रदान करनेवाली उस नवजीवनदायी शक्तिकी — जिसे मैं ईश्वर कहूँगा — सहायताके बिना अपनी निपट असहायताकी निश्चित प्रतीति। इस प्रकार एक ओर तो वह सहायता है जिसे हम ईश्वरकी कृपा कहते हैं और दूसरी ओर है मनुष्यका प्रयत्न, फिर वह प्रयत्न कितना ही तुच्छ क्यों न हो। ये दोनों प्रक्रियाएँ साथ-साथ ही चलती रहती हैं।[1]

गांधीजीने इस सिलसिलेमें 'प्लिमथ ब्रदर'[2] का जिक्र किया . . . [और कहा:]

लेकिन जिस प्लिमथ ब्रदरसे मैं मिला[3] उनका तर्क था कि मानवीय प्रयत्न जैसी कोई चीज नहीं होती। यदि आप ईसाके सूली चढ़ाये जानेका तथ्य स्वीकार करते हैं तो सारा पाप बिलकुल समाप्त हो जायेगा। चूंकि मैं जानता था और ऐसे अनेक ईसाई मित्रोंसे मेरा बहुत निकटका सम्बन्ध था जो इस दिशामें निश्चित प्रयास कर रहे थे, इसलिए मैं चकित रह गया। मैंने उनसे पूछा, "लेकिन क्या आप गिरते नहीं?" उन्होंने उत्तर दिया, "गिरता तो हूँ, लेकिन मैं अपने इस विश्वाससे शक्ति प्राप्त करता हूँ कि ईसा मेरी ओरसे हस्तक्षेप करते हैं और मेरे सारे पाप धो डालते हैं।" अब मैं आपको बताता हूँ कि वे क्वेकर मित्र भी जिन्होंने मुझे इस प्लिमथ ब्रदरसे मिलवाया था, कुछ कम चकित नहीं हुए। क्षमा-याचना करनेके मतलब हैं कि हम फिरसे पाप न करें और क्षमा प्रदान किये जानेके मतलब है कि हममें सब प्रकारके प्रलोभनोंका प्रतिरोध करनेकी शक्ति हो। लगातार और अथक प्रयत्न करनेके बाद ही ईश्वर सुरक्षाकी दीवारके रूपमें हमारे बचावके लिए आता है, और हमारे भीतर इस बातकी निरन्तर बढ़ती हुई प्रतीति होती जाती है कि हम पाप नहीं करेंगे। मुझे याद है कि हक्सलेके साथ एक प्रसिद्ध विवादमें ग्लैडस्टनने कहा था कि जब ईश्वर निश्चित रूपसे हमपर कृपा करता है तब हम पाप करनेमें सर्वथा अक्षम हो जाते हैं। ग्लैडस्टनने कहा है कि ईसा तो जन्मसे ही पापसे सर्वथा मुक्त थे, लेकिन हम निरन्तर प्रयास करके ही वैसे बन सकते हैं। जबतक हमारे मनमें एक भी बुरा विचार आता रहता है तबतक हमें समझना चाहिए कि ईश्वरने हमें पूरी तरह क्षमा नहीं किया है या पूरी तरह हमपर कृपा नहीं की है।

[यह पूछे जानेपर कि श्रद्धाके मामलोंमें गांधीजीकी स्थिति क्या समझौतेकी स्थिति नहीं है, उन्होंने कहा:]

जिस मित्रने यह आलोचना की है, मैं उनकी निश्चय ही सराहना करता हूँ लेकिन वह विश्वास करें कि मेरे लिए समझौतेका कोई सवाल नहीं हो सकता। मेरे

१. इसके आगेका पाठ महादेव देसाई द्वारा लिखित और २२-१२-१९२७ के *यंग इंडिया*में प्रकाशित "सीलोन मेमोयर्स" से लिया गया है।

२. ईसाइयोंके 'प्लिमथ ब्रदरन' नामक एक सम्प्रदायका सदस्य।

३. देखिए *आत्मकथा*, भाग २, अध्याय ११।

लिए तो यह कहा गया है कि मैं जो-कुछ करता हूँ, पूरी तरह करता हूँ, और उस पर इतना जोर देता हूँ कि लोगोंको यह चीज खटकती है। मैं जानता हूँ कि जब मैं अपनेको सनातनी हिन्दू बताता हूँ तो मित्र लोग गड़बड़ीमें पड़ जाते हैं क्योंकि सनातनी कहे जानेवाले व्यक्तिके आमतौरपर जो लक्षण होते हैं उन्हें वे मुझमें नहीं देखते। लेकिन उसका कारण यह है कि एक कट्टर हिन्दू होनेके बावजूद मैं अपने विश्वासोंमें ईसाई धर्म, इस्लाम और जरथुस्त्रकी शिक्षाओंके लिए गुंजाइश पाता हूँ और इसलिए मेरा हिन्दू-धर्म कुछ लोगोंको कई चीजोंकी खिचड़ी-जैसा प्रतीत होता है और कुछने तो मुझे धर्मके मामलोंमें विभिन्न स्रोतोंसे अपनी पसंदके अनुसार कुछ-कुछ ले लेनेवाला सार-सग्रही व्यक्ति तक करार दिया है। किसी व्यक्तिको सार-सग्रही कहनेके मतलब है कि उस व्यक्तिका कोई विश्वास या धर्म नहीं है, लेकिन मेरा विश्वास तो बहुत व्यापक है, जो ईसाइयोंका विरोध नहीं करता — यहाँतक कि 'प्लिमथ ब्रदर' जैसे लोगोंका भी नहीं — यहाँतक कि बड़ेसे-बड़े धर्मान्ध मुसलमानका भी विरोध नहीं करता। मेरा यह धर्म अत्यन्त व्यापक सहिष्णुतापर आधारित है। मैं किसी व्यक्तिको उसके धर्मान्ध कृत्योंके लिए बुरा-भला कहनेसे इनकार करता हूँ क्योंकि मैं उसके कृत्योंको उसके दृष्टिकोणसे देखनेकी कोशिश करता हूँ। यह व्यापक विश्वास ही है जो मुझे सहारा देता है, बल देता है। यह स्थिति थोड़ी अटपटी है, यह मैं जानता हूँ — लेकिन मेरे लिए नहीं, औरोंके लिए!

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, १७-११-१९२७
यंग इंडिया, २२-१२-१९२७

१७९. भाषण : श्रमिक संघकी सभा, कोलम्बोमें

१६ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय, मित्रो और साथी मजदूरो,

मैं जिस उद्देश्यको सामने रखकर संसारके द्वीपोंमें मोती-सदृश इस द्वीपमें आया हूँ, उसके निमित्त दी गई आपकी थैली तथा आपके अभिनन्दनपत्रके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपको साथी मजदूर कहकर मैंने अपनेको मजदूर कहा है, और ऐसा मैंने इस कारण किया है कि १९०४से मैं भरसक एक मजदूरकी भाँति रहनेका प्रयत्न करता रहा हूँ। लेकिन उससे बहुत पहले ही मैं श्रमकी गरिमाको समझने और उसकी कद्र करने लगा था, और साथ ही यह भी महसूस करने लगा था कि श्रमको जो प्रतिदान मिलना चाहिए वह उसे नहीं मिल रहा है। और ईश्वरने अपनी असीम अनुकम्पावश मेरा जीवन ऐसा बना दिया कि मैं श्रमिकोंके, और श्रमिकोंके सेवा-कार्यके अधिकाधिक निकट खिंचता चला गया। इसलिए आपके बीच होने और अपने साथी मजदूरोंसे एक अभिनन्दनपत्र पानेकी तथा उन लोगोंकी ओरसे साथ ही

एक थैली पानेकी भी मुझे बहुत खुशी है जो आर्थिक दृष्टिसे आपकी अपेक्षा कही खराब हालतमें हैं। आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें "भारत माता" शब्दका जो प्रयोग किया है उसने मेरे अन्तरतमको छू लिया है। यह शब्द मेरे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण इसलिए हो जाता है क्योंकि मैं जानता हूँ कि आपमें से सब लोग भारतीय नही है। शायद आप लोगोंके सामने — आप लोगोमें जो भारतीय नही है और जो इस यूनियन या इन यूनियनोंमें बहुसंख्यामें है — इस शब्दका इस्तेमाल करते समय वह अर्थ नही था जो मै इसे प्रदान करता हूँ और जिसे मै अभी स्पष्ट करूँगा। ऐसी अनुश्रुति है — और अनुश्रुति कभी-कभी इतिहाससे श्रेष्ठ होती है — कि प्राचीन कालमे राम नामके एक राजा लंका द्वीपको एक दुष्ट राजाके चंगुलसे छुड़ानेके लिए यहाँ आये थे और जब कि विजयके पुरस्कार स्वरूप वे इसे अपने राज्यमें मिला सकते थे तब वैसा न करके उन्होंने इसे उस दुष्ट राजाके विभीषण नामक भाईको सौप दिया और उसे लंकाका राजा बना दिया।

आधुनिक भाषामें कहा जाये तो इसके अर्थ यह है कि रामने लंकाकी जनता या राजा विभीषणकी राजनिष्ठाकी परीक्षा लिये बगैर और जनताको या राजा विभीषणको अभिभावककी तरह कुछ समयतक अपने अभिरक्षणमें रखे बगैर उन्हे सीधे पूर्ण स्वशासन या औपनिवेशिक दर्जा प्रदान कर दिया। इस अनुश्रुतिका जो काल बताया जाता है, तबसे लेकर अबतक लंकामें, और भारतमें भी अनेक परिवर्तन हुए हैं और दोनोंने भाग्यके बड़े उतार-चढ़ाव देखे है, लेकिन भारतमें करोड़ो लोग आज भी इतिहासके तथ्योंकी अपेक्षा इस अनुश्रुतिमें कही अधिक दृढ़तापूर्वक विश्वास करते है। और यदि इस सुन्दर द्वीपके रहनेवाले आप लोग अपने निकटस्थ पडोसीके साथ कुछ अपनापन माननेमें हेठी महसूस न करते हों तो मै आपको सलाह दूंगा और कहूँगा कि इस अनुश्रुतिमें भारतके करोड़ों लोगोंको जो गर्व है उसे आप भी महसूस करें। और अब आप समझ सकते है कि मैंने आपसे यह क्यो कहा कि आपने, जो मेरी रायमें भारतके एक 'अपत्य राज्य' के निवासी है, "भारत माता" शब्दके प्रयोग द्वारा भारतके प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करके ठीक ही किया है।

मै यह भी बताऊँगा कि अनुश्रुतिके राम इस पृथ्वीपर कभी रहे हों या न रहे हों, और दस सिरवाला रावण लंकामें कभी रहा हो या न रहा हो, लेकिन यह सच है कि एक ऐसा राम है जो आज भी जीवित है और एक रावण भी है जो जीवित है। हिन्दू धर्ममें राम ईश्वरका मधुर और पवित्र नाम है, और हिन्दू पुराणोमें रावण उस दुष्टता या बुराईका नाम है जो मानव-शरीरमें मूर्तिमती हो उठती है। राम-रूपी ईश्वरका काम है कि जब और जहाँ कहीं बुराई हो, उसका नाश करें, और साथ ही उनका यह भी काम है कि विभीषण सदृश अपने भक्तोको स्वशासनका अपरिवर्तनीय अधिकार प्रदान करें।

अपने अन्दरके बुराई-रूपी दशाननका अपने हृदयस्थ ईश्वर, रामकी सहायतासे नाश करके, आइए, हम सब लोग, चाहे मजदूर हों या और कुछ, स्वशासनका अधिकारपत्र माँगें। और आप साथी मजदूर, जिन्हें अपना वाजिब हिस्सा अभी

पाना बाकी है, आपको शायद रामकी सहायता और रामकी कृपाकी ज्यादा जरूरत है ताकि आप अपनेको अपनी बुराइयाँ दूर करके स्वशासन पानेके योग्य बना सकें। अगर कोई आपसे कहे कि दक्षिण आफ्रिकाके गिरमिटिया मजदूरोंको आत्मिक स्वतन्त्रता मैंने दिलवाई या अहमदाबाद या मलाबारके मजदूरोंको स्वतंत्रता मैंने दिलवाई तो आप उसका विश्वास मत कीजिए। उन्होंने जो-कुछ प्राप्त किया वह इसलिए प्राप्त किया कि उन्होंने स्वशासनका नियमन करनेवाले अपरिवर्तनीय नियमोंका पालन किया। उन्होंने अपनी मदद स्वयं की, इसलिए वे विजयी हुए। और मैं आपको संक्षेपमें बता दूँ कि आपको अपना हक हासिल करनेके लिए क्या करना चाहिए। अपने आपको यूनियनोंके रूपमें संगठित करना निश्चय ही पहला कदम है। लेकिन मैं आपको अनुभवसे बता सकता हूँ कि जो शर्तें मैं आगे आपको बताने जा रहा हूँ यदि आप उनको पूरा नही करते तो आपकी यही यूनियन आपके बन्धनका कारण बन सकती है। आपमें से हरेकको अपने-आपको अपने साथी मजदूरोंके हितोंका न्यासी समझना चाहिए और स्वार्थ-साधक नही होना चाहिए। परिस्थितियाँ कितनी ही गम्भीर और उत्तेजक क्यो न हो, आपको उनमें अहिंसक रहना चाहिए। यदि आपको शराबकी बुरी लत है तो आपको उसे बिलकुल छोड़ देना होगा। तभी आप सच्चे इन्सान होंगे और अपनी गरिमाको समझेंगे। शराबके नशेके प्रभावमें मनुष्य पशुसे भी बदतर हो जाता है और अपनी बहन, अपनी माँ और पत्नीके बीच अन्तर भूल जाता है। और यदि आप सचमुच मुझे अपना मित्र मानते है तो अपने इस पुराने मित्रकी सलाह मानें और शराबसे उसी प्रकार दूर भागें जिस प्रकार आप अपने सामने फुफकारते हुए किसी साँपके आगेसे भागेंगे। साँप तो केवल शरीरका ही नाश कर सकता है, लेकिन शराब तो आत्माको ही पतित कर देती है। इसलिए शराब तो साँपसे भी ज्यादा भयंकर है। यदि आपको जुआ खेलनेकी आदत है तो आप उससे भी बचें।

एक इससे भी नाजुक चीज है जिसके सम्बन्धमे कल या आज एक मित्रका पत्र पाकर मुझे कष्ट हुआ। इस मित्रने पत्रमें अपना नाम दिया है। वह मुझे बताते है कि मजदूरोंमें व्यक्तिगत शुद्धताका सर्वथा अभाव है। वह मुझे बताते हैं कि आपमें से बहुत-से लोग, स्त्री-पुरुष, शील और मर्यादाका तनिक भी ख्याल किये बिना छोटी-छोटी जगहोमे जहाँ आड़ और परदेकी कोई गुंजाइश नही होती, भरे रहते हैं। मनुष्यको पशुसे साफ अलग करनेवाली बहुत-सी चीजोमें से एक चीज यह है कि मनुष्यने अपने आरम्भिक कालसे ही विवाह-बन्धनकी पवित्रता स्वीकार की है और आत्मसंयमका पालन करके — जिसे वह उत्तरोत्तर बढ़ाता ही गया है — स्त्रीके सम्बन्धमें अपने जीवनका नियमन किया है।

मेरे प्यारे दोस्तो, यदि मनुष्यके रूपमें आपको अपनी गरिमाकी उपलब्धि करनी है और अपनी पूरी ऊँचाईतक उठना है, जैसा कि आपको उठना चाहिए, तो मैंने आपको यह जो छोटी-सी चीज बताई है उसे अपने दिमागमें रखिए, इसे सहेज कर रखिए और आज रातसे ही इसे कार्यरूपमें परिणत कीजिए। यदि आपके साधन ऐसे नही हैं कि आप बुनियादी शील-मर्यादाका पालन करने योग्य पृथक् और पर्याप्त

निवासस्थान उपलब्ध कर सकें, तो आप ऐसी पतनकारी परिस्थितियोंमें और इतने अपर्याप्त वेतनपर काम करनेसे इनकार कर दीजिए। आप इतने कम वेतनपर काम करें कि जिसमें नैतिकताके बुनियादी नियमोंका पालन करना भी असम्भव हो, उसकी अपेक्षा यदि आप बिलकुल भूखे रहनेकी स्थितिको स्वीकार करेंगे तो मैं आपका वीर पुरुषोंकी भाँति सम्मान करूँगा। मुझे इसकी परवाह नहीं कि आप हिन्दू हैं, अथवा आप अपनेको बौद्ध कहते हैं, आप ईसाई हैं या मुसलमान हैं, धर्मकी माँग एक है और अपरिवर्तनीय है। अपनी पत्नीके अलावा आपको किसी भी अन्य औरतको बहन या माँ समझना चाहिए जिसका शरीर उतना ही पवित्र माना जाना चाहिए जितना कि आपकी बहन या माँका शरीर है। मैं सलाह दूँगा कि आप अपनी यूनियनका इस्तेमाल आन्तरिक सुधारके लिए भी उतना ही करें जितना कि बाहरी हमलेसे बचावके लिए करें और याद रखिए कि जहाँ अपने अधिकारों और सुविधाओंके ऊपर आग्रह करना बिलकुल उचित है वहीं यह भी जरूरी है कि उस दायित्वको भी समझें जो हर अधिकारके साथ जुड़ा हुआ है।

इसलिए जहाँ आप पर्याप्त वेतन, अपने मालिकोंके हाथों उचित मानवोचित व्यवहार तथा अच्छे साफ-सुथरे निवास-स्थानोंका आग्रह करेंगे वहाँ आप यह भी समझेंगे कि आपको अपने मालिकोंका काम अपना ही काम समझकर करना चाहिए और पूरी ईमानदारी और ध्यानसे करना चाहिए। आप अपने बच्चोंकी किसी भी हालतमें उपेक्षा न करें, बल्कि उन्हें अच्छी शिक्षा दें और उचित ढंगसे उनका पालन-पोषण करे ताकि जब वे बड़े हों तो मानव-जगत-रूपी मंचपर अपनी भूमिका अच्छे ढंगसे निभा सकें।

और अन्तमें, आपने भारतके करोड़ों अभागे लोगोंकी याद की, यह तो बहुत अच्छा किया, लेकिन मैं आपको सलाह दूंगा कि आप उनके तथा अपने बीच एक जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करें, खासकर यदि आप अब भी समझते हों कि भारत मातृदेश है; आप उन चन्द करोड़ लोगोंकी खातिर वस्त्रपर खर्च होनेवाली हर पाई केवल खादीमें लगायें, अन्य किसी कपड़ेपर नहीं। मैं आपको एक बार फिर आपके इस अभिनन्दनपत्र तथा थैलीके लिए तथा आज शाम मैंने आपसे जो चन्द शब्द कहे हैं, उन्हें धीरज तथा ध्यानके साथ सुननेके लिए धन्यवाद देता हूँ। मैं आपके स्वयंसेवकोंको भी धन्यवाद देता हूँ जो अपनी योग्यता-भर मेरी सेवा करते रहे हैं और मेरा पूरा ध्यान रखते रहे हैं। हालाँकि इस बातका जिक्र मैंने पहले नहीं किया, लेकिन मेरे ध्यानसे यह बात छूटी नहीं थी। मैं आशा और प्रार्थना करता हूँ कि जो शब्द मैंने कहे हैं वे आपके दिलोंमें समा जायेंगे और मेरी जो सलाह आपको ठीक लगे ईश्वर आपको उसे कार्यान्वित करनेकी सद्बुद्धि और शक्ति देगा।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, १७-११-१९२७

१८०. एक उद्धरण

श्री रिचर्ड ग्रेगने, जिनके नामको 'यंग इंडिया' के पाठक 'तकली स्पिनिंग' पुस्तिकाके सह-लेखकके रूपमें जानते हैं, एक पुरानी पुस्तकसे निम्नलिखित उपयोगी उद्धरण भेजा है। इसे उन्होंने अपने शोधकार्यके दौरान ढूँढ निकाला है।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-११-१९२७

१८१. वर्णाश्रम और उसका विरूपीकरण

पाठक एक अन्य स्तम्भमें ब्राह्मण-अब्राह्मण प्रश्नपर श्रीयुत नाडकर्णीका दिलचस्प पत्र[2] देखेंगे। उन्होंने मुझसे कहा है कि मैंने तमिलनाडुके अपने हालके दौरेमें भाषणोंमें वर्णाश्रमके सम्बन्धमें अपने जो विचार प्रकट किये हैं उन्हें और विस्तारसे स्पष्ट करूँ और मैं वैसा खुशीसे कर रहा हूँ। मेरे भाषण तो कमोवेश पूरेके-पूरे इन स्तम्भोंमें प्रकाशित हो चुके हैं।

इस प्रश्नका विवेचन अच्छी तरह हो सके इसलिए मैं पहले तो यह स्पष्ट कर दूँ कि मैं उस शूद्रकी प्रसिद्ध कथाको विचार योग्य नहीं मानता जिसके बारेमें कहा जाता है कि उसका सर रामने इस कारण काट दिया था कि उसने संन्यासी बननेकी धृष्टता की थी। मैं शास्त्रोंका शाब्दिक अर्थ नहीं करता; मैं उन्हें इतिहासके रूपमें तो निश्चित ही नहीं पढ़ता। शम्बूकका सर काट लेनेकी कथा रामके सामान्य चरित्रसे मेल नहीं खाती। विभिन्न रामायणोंमें जो-कुछ भी कहा गया हो, मैं अपने रामको किसी शूद्रका, या किसीका भी सर काटनेमें सर्वथा असमर्थ मानता हूँ। यदि शम्बूककी कथासे कुछ भी सिद्ध होता है तो यही कि जिस जमानेमें इस कथाका जन्म हुआ उस जमानेमें शूद्रोंके लिए अमुक धार्मिक विधि-विधानोंका अनुष्ठान गम्भीर अपराध माना जाता था। शूद्र शब्दके यहाँ क्या अर्थ है इसके बारेमें हम अन्धकारमें हैं। मैंने पूरी कथाका अन्योक्तिके रूपमें भी अर्थ लगाये जाते सुना है। लेकिन इससे यह तथ्य नहीं बदल जाता कि हिन्दू-धर्मके विकासकी किसी अवस्थामें शूद्रोंके ऊपर कुछ अनुचित निषेध लागू थे। बस इतना ही है कि मुझे शम्बूकके कथित वधके लिए

१. यह उद्धरण यहाँ नहीं दिया जा रहा है। यह १७९६ में रोममें प्रकाशित फ्रा पाओलिनो दा सैन बार्टोलोमियो लिखित पुस्तक ए वॉयेज टु द ईस्ट इंडीजके अंग्रेजी अनुवादमें से लिया गया था। अन्य चीजोंके अलावा, इसमें कहा गया था: "यह बात सचाईके साथ कही जा सकती है कि कताई, बुनाई और रंगाईमें भारतीय लोग संसारके सभी राष्ट्रोंसे अच्छे हैं।"

२. पत्रके उद्धरणोंके लिए देखिए परिशिष्ट ६।

प्रायश्चित्त करनेमें श्रीयुत नाडकर्णीका साथ देनेकी जरूरत नही है क्योंकि मै नहीं मानता कि उस नामके किसी ऐतिहासिक व्यक्तिका वध राम नामके किसी ऐतिहासिक व्यक्तिने किया था। हिन्दूसमाजके तथाकथित निम्न वर्गोंके, विशेष रूपसे तथाकथित अस्पृश्योंके सामान्य उत्पीड़नके लिए एक हिन्दूके नाते मैं अपने जीवनके क्षण-क्षणमें प्रायश्चित्त कर रहा हूँ। मेरी रायमें शम्बूकके जैसे दृष्टान्तोंका वर्णाश्रमके प्रश्नपर धार्मिक दृष्टिसे की जानेवाली चर्चामें कोई स्थान नही है। इसलिए मेरा विचार केवल यह बतानेका है कि मै वर्णाश्रम किसे समझता हूँ, और यदि मेरे सामने यह सिद्ध कर दिया जाये कि वर्णाश्रमकी जो व्याख्या मै करता हूँ उसके लिए हिन्दू-धर्ममें कोई प्रमाण नहीं है तो मैं वर्णाश्रम व्यवस्थाको अस्वीकार करनेमें हिचकूँगा नही। जैसा कि श्रीयुत नाडकर्णी कहते है, वर्ण और आश्रम, ये दो भिन्न शब्द है। चार आश्रमोंकी व्यवस्था मनुष्यको जीवनका उद्देश्य ज्यादा अच्छी तरह पूरा करनेमें सहायक और इसके लिए वर्णका नियम आवश्यक है। वर्णके नियमके अनुसार व्यक्तिको अपनी आजीविकाके लिए अपने बाप-दादोंका वैध धन्धा करना चाहिए। मै इसे एक सर्व-व्यापी नियम मानता हूँ जो मानव-परिवारका नियमन करता है। इसको भंग करनेका परिणाम गम्भीर होता है जैसा कि हमारे लिए हुआ है। लेकिन मनुष्योंकी बहुत बड़ी संख्या अनजाने ही अपने बाप-दादोंका पुश्तैनी धन्धा करती है। हिन्दू धर्मने इस नियमकी खोज करके और सोच-समझकर इसका पालन करके मानव-जातिकी एक महान सेवा की है। यदि पशुओंसे भिन्न मनुष्यका कार्य ईश्वरको जानना है, तो यह स्वाभाविक ही है कि वह अपने जीवनका मुख्य भाग यह पता चलानेमें ही न गँवा दे कि जीविका अर्जित करनेके लिए कौनसा धन्धा उसके लिए सबसे उपयुक्त होगा। इसके विपरीत, वह देखेगा कि उसके लिए अपने पिताका धन्धा करना ही सर्वोत्तम है, और वह अपना खाली समय और अपनी प्रतिभा खुदको उस कार्यके योग्य बनानेमें लगायेगा जो मनुष्य जातिके लिए निर्धारित किया गया है।

इसलिए यहाँ मेरे पत्रलेखकने जो कठिनाई बताई है वह उठती ही नही। क्योंकि विभिन्न प्रकारकी स्वैच्छिक सेवाएँ करते हुए भी अपनेको उस निर्धारित कामके योग्य बनानेमें किसीके सामने कोई रुकावट नहीं है। इस प्रकार श्रीयुत नाडकर्णी, जो ब्राह्मण माता-पिताकी सन्तान है, और मै, जो वैश्य माता-पिताकी सन्तान हूँ, दोनों ही वर्णके नियमके साथ पूरी संगतता रखते हुए आवश्यकता पड़नेपर निश्चय ही अवैतनिक राष्ट्रीय स्वयंसेवकोंकी भाँति, या अवैतनिक परिचारकोंकी भाँति या अवैतनिक भंगियों की भाँति सेवा कर सकते है, हालाँकि वर्णके नियमानुसार ब्राह्मण होनेके नाते वह अपनी रोटीके लिए अपने पड़ोसियोंकी उदारतापर निर्भर करेंगे और वैश्यके नाते मै दवा बेचकर या किरानेकी अन्य चीजें बेचकर अपनी रोटी कमाऊँगा। जबतक कोई व्यक्ति कोई उपयोगी सेवाके बदले पुरस्कारका दावा नहीं करता तबतक वह वैसी सेवा करनेको स्वतन्त्र है।

वर्ण-नियमकी इस संकल्पनामें कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्तिसे श्रेष्ठ नहीं है। ऐसे सभी धन्धे जो वैयक्तिक या सार्वजनिक नैतिकताके विरुद्ध नही है, बराबर दर्जेके

हैं और सम्माननीय हैं। एक भंगीका वही दर्जा है जो एक ब्राह्मणका है। क्या मैक्समूलरने ही यह नही कहा है कि किसी भी धर्मकी अपेक्षा हिन्दू-धर्ममें जीवन कर्त्तव्य-मात्र है — न उससे ज्यादा, न कम।

इसमें कोई सन्देह नही है कि अपने विकासकी किसी अवस्थामें हिन्दू-धर्ममें भ्रष्टाचार आ गया और ऊँच-नीचकी भावनाने उसमें प्रवेश करके उसे दूषित कर दिया। लेकिन असमानताका यह विचार मुझे यज्ञकी उस भावनाके बिलकुल विरुद्ध प्रतीत होता है जो हिन्दू-धर्मकी प्रत्येक चीजमें प्रधान है। एक ऐसी जीवन-योजनामें जो अहिंसापर आधारित है — वह अहिंसा जिसका सक्रिय रूप सभी जीवोंके लिए विशुद्ध प्रेमभाव है — किसी एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्गपर श्रेष्ठता स्थापित करनेकी कोई गुंजाइश ही नही है।

वर्णके इस नियमके विरुद्ध यह नही कहा जा सकता कि वह जीवनको नीरस बना देता है और उसमें महत्त्वाकांक्षाके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रहने देता। मेरी रायमें वर्णका नियम ही हम सबके लिए जीवनको जीने योग्य बनाता है, और उस लक्ष्यको पुनः प्रतिष्ठित करता है जो जीवनको सार्थक बनाता है, अर्थात् आत्म-ज्ञान प्राप्त करनेका लक्ष्य। आज हम उन्ही भौतिक उद्देश्योंके बारेमें सोचते और प्रयत्न करते प्रतीत होते हैं जो अपनी प्रकृतिसे अस्थायी हैं, और ऐसा हम उस एक चीजको बिलकुल भुलाकर करते हैं जो सबसे जरूरी है।

यदि मुझसे कहा जाये कि वर्णकी जो व्याख्या मैंने की है उसका समर्थन हिन्दू आचरणकी संहिता अर्थात् स्मृतियोंसे नही होता, तो मेरा उत्तर है कि जीवनके बुनियादी और अपरिवर्तनीय सिद्धान्तोंपर आधारित आचरण-संहिताएँ तो समयके साथ ज्यों-ज्यों हम नये-नये अनुभव प्राप्त करते हैं, नये-नये पर्यवेक्षण करते हैं, बदलती जाती हैं। स्मृतियोंके कई ऐसे नियमोंको उदाहरणके रूपमें प्रस्तुत करना सम्भव है जिन्हें हम अनिवार्य नही मानते और पालन करने योग्य भी नही समझते। अपरिवर्तनीय सिद्धान्त बहुत कम हैं और सभी धर्मोंमें समान हैं। इन सिद्धान्तोंको लागू करनेकी दृष्टिसे धर्मोंमें भिन्नता है। और किसी भी धर्ममें इन सिद्धान्तोंको कार्यान्वित करनेके जो भी तरीके हो सकते हैं उन सभी तरीकोंको आजमाया नही जा चुका है। विचारोंके विस्तार तथा नये तथ्योंके ज्ञानके साथ उनका भी विस्तार होता जाता है। बल्कि मेरा तो विश्वास है कि मानवके अनुभवके विकासके साथ-साथ शब्दोंके अर्थ भी विकसित होते हैं। प्राचीन ऐतिहासिक कालमें यज्ञ, सत्य, अहिंसा, वर्णाश्रम आदि शब्दोंसे जो अर्थ ध्वनित होते थे, आज उनकी अपेक्षा ज्यादा व्यापक अर्थ ध्वनित होते हैं। इस सिद्धान्तको वर्ण शब्दपर लागू करें तो उसकी चालू व्याख्यासे — जिसके बारेमें हम यह मान रहे हैं कि वह युगकी आवश्यकताओं और नैतिकताकी हमारी कल्पनासे असंगत है — अपने आपको बँधा हुआ मानना जरूरी नही है, बल्कि बँधा हुआ मानना मूर्खतापूर्ण और गलत है। इसके विपरीत करना आत्मघात होगा।

ऊपर बताये गये ढंगसे वर्णपर विचार करनेपर हम देखते हैं कि उसमें और आजकी जाति-प्रथामें कोई समानता नही है। इसी तरह अन्तर्जातीय भोज या

अन्तर्जातीय विवाहका निषेध भी वर्णके नियमकी स्वीकृतिका आवश्यक अंग नहीं है। यह सम्भव है कि ये निषेध वर्णके परिरक्षणके लिए आरम्भ किये गये हों; निर्बन्ध विवाहके विरुद्ध प्रतिबन्ध तो आत्म-संयमपर आधारित किसी भी जीवन-योजनामें आवश्यक हैं। निर्बन्ध सहभोजके ऊपर प्रतिबन्ध स्वास्थ्यके विचारसे या आदतोंमें भिन्नताके कारण लगे हैं। लेकिन पहले इन प्रतिबन्धोंकी अवहेलना करनेपर किसी सामाजिक या कानूनी दण्डका विधान नहीं था और न इससे कोई वर्ण-भ्रष्ट होता था, और जो ज्यादा बड़ी चीज है वह यह कि अब भी इनकी अवहेलनाके ऐसे कोई परिणाम नहीं होने चाहिए।

मूलतः वर्ण चार थे। यह एक बुद्धिमत्तापूर्ण और समझमें आने योग्य विभाजन था। लेकिन संख्या वर्णके नियमका कोई अंग नहीं है। एक दर्जी जरूरी नहीं कि लोहार बन जाये, हालाँकि दोनोंको वैश्यके वर्गमें रखा जा सकता है और रखना चाहिए।

तमिलनाडुमें जो सबसे जोरदार आपत्ति उठाई गई वह यह थी कि मेरी व्याख्याके अन्तर्गत वर्ण कितना ही अच्छा और अहानिकर प्रतीत होता हो, इस व्यवस्थाको या तो किसी भिन्न नामसे चलाया जाये और नहीं तो इसे बिलकुल समाप्त कर दिया जाये क्योंकि वर्ण-व्यवस्था नामसे दुर्गन्ध आती है। आपत्ति करनेवालोंको भय था कि मेरी व्याख्याकी तो अवहेलना की जायेगी लेकिन वर्तमान हिन्दू-धर्ममें जो भयंकर असमानताएँ और अत्याचार प्रचलित हैं उनका वर्णकी आड़में समर्थन करनेके लिए मेरे कथनोंका खुलकर हवाला दिया जायेगा। उन्होंने यह भी कहा कि सर्वसाधारणके लिए तो जाति और वर्ण पर्यायवाची शब्द हैं, और जबकि वर्णका संयम कहीं नहीं बरता जाता, जातिका अत्याचार सभी जगह व्याप्त है। इन सब आपत्तियोंमें निःसन्देह बहुत बल है। लेकिन ये ऐसी आपत्तियाँ हैं जिन्हें ऐसी बहुत-सी भ्रष्ट हो चुकी व्यवस्थाओंके खिलाफ उठाया जा सकता है जो किसी समय अच्छी थीं। सुधारकका काम यह है कि वह किसी व्यवस्थाकी जाँच करे, और यदि उसके दोषोंको उस व्यवस्थासे अलग किया जा सकता है तो वह उस व्यवस्थामें सुधार लानेका प्रयत्न करे। किन्तु वर्ण एक मानव-निर्मित व्यवस्था मात्र नहीं है, यह एक ऐसा जीवन-नियम है जिसे उसने खोजा है। अतः इसे दरकिनार नहीं किया जा सकता। इसके छिपे हुए अर्थों और सम्भावनाओंका पता चलानेकी कोशिश की जानी चाहिए, और समाजके भलेके लिए उसका इस्तेमाल करना चाहिए। हमने देखा है कि इस नियम या व्यवस्थामें कोई बुराई नहीं है बल्कि बुराई श्रेष्ठता और हीनताके उस सिद्धान्तमें है जिसे इसमें ऊपरसे जोड़ दिया गया है।

यह भी सवाल उठता है कि आजकलके जमानेमें, जबकि सभी चारों वर्ण या उपवर्ण सभी प्रतिबन्धोंको तोड़ रहे हैं, नियम-संगत या नियम-विरुद्ध तरीकोंसे अपने भौतिक सुख-साधनोंकी अभिवृद्धि कर रहे हैं और जबकि कुछ वर्ण या उपवर्ण अन्य वर्णोंपर श्रेष्ठताका दावा करते हैं और दूसरे वर्ण, जैसा कि उचित है, उस दावेको चुनौती देते हैं, तब इस नियमको कार्यान्वित किस प्रकार किया जाये। अब बात यह है कि भले ही हम इस नियमकी उपेक्षा करें वह अपना प्रभाव तो दिखायेगा

ही। लेकिन तब उसका यह प्रभाव दण्डके रूपमें फलित होगा। इसलिए अगर हमें विनाशसे बचना है तो हमें इस नियमको स्वीकार करना होगा। और यह देखते हुए कि इस समय हम अपने ऊपर 'शक्तिशाली ही जीवित रहेगा' का मानवेतर नियम लागू करनेमें लगे हुए हैं, हमारे लिए यह अच्छा होगा कि हम सब अपनेको एक ही वर्ण — अर्थात् शूद्र वर्णका मान ले, भले ही हममें से कुछ लोग शिक्षा दे रहे हों, कुछ लोग सैनिकका धन्धा कर रहे हो और कुछ लोग वाणिज्य-व्यापारमें लगे हुए हो। मुझे याद है कि १९१५मे नेल्लोरमें सामाजिक सम्मेलनके अध्यक्षने कहा था कि पहले सब लोग ब्राह्मण थे, और आज भी सभीको ब्राह्मण ही मानना चाहिए तथा दूसरे वर्णोंको समाप्त कर देना चाहिए। यह मुझे उस समय भी एक विचित्र प्रस्तावना सुझाव लगा था और आज भी लगता है। यदि सुधारको शान्तिपूर्ण ढगसे होना है तो तथाकथित ऊँचे लोगोको अपनी ऊँचाइयोसे नीचे उतरना पड़ेगा। युगोंसे जिन लोगोको इस बातकी शिक्षा दी गई है कि वे समाजकी सीढीमें अपनेको सबसे निचले वर्गका मानें, वे सहसा ही तथाकथित उच्च वर्गोंकी योग्यताएँ नही प्राप्त कर सकेंगे। अतः वे केवल खून-खराबेके जरिये ही, दूसरे शब्दोमें स्वयं समाजको ही नष्ट करके शक्ति और सत्ता प्राप्त कर सकते हैं। मेरे सामने जो पुनर्रचनाकी योजना है उसमें अस्पृश्योंका कोई उल्लेख नही है क्योकि मैं वर्णके नियममें या हिन्दू धर्मशास्त्र अस्पृश्यताके लिए कोई स्थान नही पाता। वे अन्य सभी लोगोके साथ शूद्र वर्णमे समाहित हो जायेंगे। इन्हीमें से अन्य तीन वर्ण धीरे-धीरे शुद्ध होकर और वर्णमें बराबरी रखते हुए, हालांकि उनके धन्धे भिन्न होगे, निकलेंगे। ब्राह्मण बहुत थोड़े होगे। उनसे भी कम क्षत्रिय वर्गके लोग होगे जो भाड़ेके टट्टू नही होंगे या आजके जैसे निरंकुश शासक नहीं होगे, बल्कि राष्ट्रके सच्चे रक्षक और न्यासी होंगे जो उसकी सेवामें अपने प्राणोकी आहुति दे देंगे। सबसे कम शूद्र होगे क्योकि एक सुव्यवस्थित समाजमें साथी मानवोसे कमसे-कम श्रम कराया जायेगा। सबसे ज्यादा संख्या वैश्योकी होगी। इस वर्णमें सभी धंधे शामिल होगे — किसान, व्यापारी, शिल्पी आदि। यह योजना कल्पनादेशकी लग सकती है, तथापि लड़खडाते हुए कदमोंसे विशृंखलताकी तरफ बढते हुए समाजकी निर्बाध स्वच्छन्दताका जीवन जीनेकी अपेक्षा मैं अपनी कल्पनाके इस स्वप्न लोकमें रहना ज्यादा पसन्द करता हूँ। व्यक्ति भले ही अपनी कल्पनाके ससारको समाज द्वारा स्वीकृत होते न देख सके लेकिन उस कल्पनामें रहनेकी छूट उसे अवश्य है। किसी भी सुधारकी शुरूआत व्यक्तिसे ही हुई है और जिस सुधारमें अपनी अन्दरूनी शक्ति रही है और जिसके पीछे एक सशक्त आत्माका बल रहा है उसे उस सुधारकके समाजने स्वीकार कर लिया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-११-१९२७

१८२. खादीके सिले-सिलाये कपड़े

एक पारसी मित्रने खादीके सिले-सिलाये कपड़ोंके सम्बन्धमें कुछ सुझाव भेजे हैं। मैं उनको नीचे दे रहा हूँ :

> बाजारमें जैसे खादीकी बनी टोपियाँ मिल जाती हैं, वैसे ही हिन्दुस्तानी और अंग्रेजी फैशनकी बनी कमीजें और बण्डियाँ भी क्यों न रखी जायें? बेशक खादीके दूकानदारोंमें इतनी सूझ-बूझ अवश्य होनी चाहिए कि वे मालूम कर सकें कि किस फिल्मके सिले-सिलाये कपड़े जल्दी बिक सकते हैं और उन्हें वे खादीसे तैयार करा लें। . .

खादीके दूकानदारोंको इस सुझावपर विचार करना चाहिए। यह खादीको सस्ता बनानेका और शहरोंमें रहनेवालोंको रोजी देनेका एक साधन जुटा देगा। खादी सीनेवाले दरजीमें यदि इतनी देशभक्ति हो कि बाजार-भावसे कुछ कम ही मजदूरी ले, तो इस प्रकार होनेवाली बचतसे उस कपड़ेमें लगी खादीकी कीमत घट जायेगी। कुमारी मीठूबहन पेटिटने कुछ बड़े सुन्दर कौशलपूर्ण नमूने तैयार किये हैं जिनको वे खादीपर बना देती हैं और इसके लिए वे जो कीमत लगाती हैं वह उनको अपने गिने-चुने ग्राहकोंसे खुशी-खुशी मिल जाती है, क्योंकि ग्राहक जानते हैं कि इसके जरिये वे खादीको ही नहीं, उन लड़कियोंको भी सहारा दे रहे हैं जिनको खादीके कामसे ज्यादा अच्छी और ईमानदारीकी दूसरी कोई रोजी नहीं मिल सकती थी। बिहार और तमिलनाडुमें मैंने ऐसे दरजी देखे हैं जो सिर्फ खादीकी सिलाई करते हैं। इसलिए कोई कारण नहीं कि शिक्षित लोग भी खादीकी सेवा करनेके साथ-साथ अपनी रोजीके लिए भी खादीकी सिलाईका काम क्यों न शुरू करें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-११-१९२७

१८३. भाषण : नेगोम्बोमें

१७ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

आपने मुझे जो सुन्दर और कलात्मक अभिनन्दनपत्र भेंट किया है उसके लिए मैं आपका हृदयसे आभार मानता हूँ। जबसे मैं आपके इस सुन्दर द्वीपमें आया हूँ मुझे हर तरफसे स्नेह ही स्नेह प्राप्त हो रहा है और आपने मुझे इस मनोरम स्थान पर बुलाकर तथा अभिनन्दनपत्र भेंट करके इस स्नेहमें और वृद्धि कर दी है। आशा है कि आपके बीच मेरे जो देशभाई रह रहे हैं वे शान्ति और सद्‌भावपूर्वक रह रहे हैं। और आपमें से जो लोग भारतसे आये हैं, उनसे मैं कहना चाहता हूँ कि आप अपनेको भारतीय संस्कृति और परम्पराका प्रतिनिधि जानकर तदनुसार आचरण करें। इस द्वीपके रहनेवाले आप लोगोंसे मैं चाहता हूँ कि आपको जब भी इनमें कुछ बुराई नजर आये, तब आप इन्हें अपना निकटतम पड़ोसी जानकर उसे सहन कर लें।

जिस प्रकार कि आप लोगोंने मुझे सहयोग दिया है और मेरी यात्रा सफल बनाई है यदि उसी तरह आप आपसमें सहयोगके साथ रहते रहे तो मैं अपनी बात-चीतके अन्तमें अपने आपको एक प्रसन्न और सौभाग्यशाली व्यक्ति समझूंगा। यह देखकर मुझे तनिक भी आश्चर्य नहीं हुआ कि आप, लंकाके सत्कारशील लोग, जो विनम्र उद्देश्य लेकर मैं यहाँ आया हूँ उसे उपयोगी और आवश्यक समझते हैं। वास्तवमें मुझे इससे ज्यादा आश्चर्य तो तब होता जब आप उन लाखों लोगोंकी करुण पुकार सुनकर भी अपने कर्त्तव्यको न निभाते — उन लाखों लोगोंकी पुकार जिनके बारेमें हरेक व्यक्ति स्वीकार करेगा कि वे अध-भूखोंकी स्थितिमें जीवन बिता रहे हैं। अभिनन्दनपत्रके लिए मैं आपको एक बार और धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

सीलोन डेली न्यूज, १८-११-१९२७

१८४. भाषण: कुरुनेगलकी सार्वजनिक सभामें

१७ नवम्बर, १९२७

. . . श्री तम्बीराजाने लंकाकी राजनीतिक स्थितिका और सुधार आयोगसे उन्हें क्या आशाएँ हैं इनका जिक्र किया है। इस प्रश्नपर मेरे लिए कोई मत व्यक्त करना, मुझे यहाँ जो आतिथ्य प्राप्त हुआ है, उसका दुरुपयोग करना होगा। तथापि मैं कामना करता हूँ कि आपकी आशाएँ पूरी होंगी और शाही आयोग अपना काम पूरा करनेके बाद जो निर्णय देगा वह जनताके लिए पूर्ण रूपसे संतोषजनक होगा।

उन्होंने कहा कि एक अन्य प्रश्न है जिसके बारेमें मैं अपने विचार स्वतंत्रता-पूर्वक प्रकट कर सकता हूँ। उसका सम्बन्ध मद्य-निषेधसे है। इस थोड़ेसे समयमें मैंने इस विषयमें आँकड़ोंकी कुछ जानकारी प्राप्त करनेकी कोशिश की है, और मुझे यह देखकर बहुत दुःख हुआ है कि इस मामलेमें लंका समुद्रके पार स्थित अपने पड़ोसीसे बेहतर स्थितिमें नहीं है। मेरी रायमें जो व्यक्ति शराबका गुलाम है वह पशुसे बेहतर नहीं है। मैं लंकाके मद्यपान-विरोध संघकी सफलताकी कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि संघके सदस्य तबतक सन्तुष्ट नहीं होंगे जबतक लंकामें शराब पूरी तरह बहिष्कृत नहीं हो जाती। एक अन्य विषय भी है जिसपर मैं कुछ कहना चाहता हूँ। मुझे बताया गया कि यहाँकी कतिपय जातियोंकी स्त्रियोंको ऊँची जातियाँ कमरसे ऊपरके कपड़े पहननेकी अनुमति नहीं देतीं। मुझे आशा है कि यदि किसी स्त्रीको अपनी पसन्दका कोई भी कपड़ा पहननेसे रोका जाये तो इस सभामें उपस्थित स्त्रियाँ इस बातको व्यक्तिगत अपमानकी बात समझेंगी। अन्तमें गांधीजीने आशा प्रकट की कि इस देशके लोग भारतमें बने कपड़ेको खरीदकर भारतके अपने भूखे पड़ोसियोंकी मदद करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

सीलोन डेली न्यूज, १८-११-१९२७

१८५. भाषण: माटलेकी सार्वजनिक सभामें

१८ नवम्बर, १९२७

आपने जो अभिनन्दनपत्र और थैलियाँ मुझे भेंट की है उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

आपने अपने अभिनन्दनपत्रोंमें बड़ी कृपापूर्वक मेरी पत्नीका भी उल्लेख किया है। लेकिन आपको यह बताते हुए मुझे बहुत दुःख होता है कि आज सुबह वह मेरे साथ नही है। दरअसल बात यह है कि हम लंकाकी यात्रा आप लोगोंसे सम्मान प्राप्त करनेके उद्देश्यसे नही कर रहे है बल्कि भारतके लाखों गरीबोकी सेवाकी दृष्टिसे जो काम मैंने अपने हाथमें लिया है, उसके लिए कर रहे है। मैंने देखा है कि लोग अकसर मेरी पत्नीको मेरी माँ समझनेकी भूल कर बैठते है, जैसा कि पिछली रात एक सज्जनने की। मेरे लिए, और मुझे उम्मीद है कि मेरी पत्नीके लिए भी, यह भूल केवल क्षमाके योग्य ही नही है बल्कि स्वागतके योग्य भी है। पिछले कई सालोंसे हमारे आपसी समझौतेके अनुसार वह अब मेरी पत्नी नही रह गई है। कोई ४० साल पहले मैं अनाथ हो गया था, और लगभग पिछले ३० सालोसे वह मेरी माँ, मित्र, परिचारिका, रसोइया, बोतल साफ करनेवाली और विभिन्न प्रकारके कार्य करनेवाली है। यदि दिन शुरू होते ही वह भी सम्मान प्राप्त करनेके लिए मेरे साथ आ जाती तो मुझे भोजनके बिना रहना पड़ता और अन्य किसीने मेरे कपड़ो और मेरी जरूरतोका खयाल न किया होता। इसीलिए हमने एक युक्तिसंगत समझौता कर लिया है कि सम्मान मेरे हिस्से रहेगा और सारी मेहनत-मजदूरी उनके हिस्से। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि उनके बारेमें आपने जो सम्मानजनक बातें कही हैं कोई-न-कोई सहयोगी वे सब बातें उनके कानतक पहुँचा देंगे, और मैं आशा करता हूँ कि जो सफाई मैंने आपको दी है उसे आप उनकी अनुपस्थितिका पर्याप्त कारण मानकर स्वीकार कर लेंगे।

बेकारकी वैयक्तिक सफाई देनेमें मैंने आपका जो बहुत-सा समय लिया है उसके लिए मैं आपसे माफी चाहता हूँ लेकिन मेरे सामने बैठे हुए पुरुष, खासतौरपर स्त्रियाँ, यदि उस कैफियतके गम्भीर पक्षको समझेंगी और इसमें निहित रहस्यकी कद्र करेंगी तो मुझे कोई शक नही कि इससे आप सबको काफी प्रसन्नता प्राप्त होगी।

मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि जिस देशमें भगवान बुद्धकी वाणी गूँज रही हो उस देशकी जनताका ध्यान इस बातकी ओर दिलानेकी कोई जरूरत नही है कि यह जीवन सुख और सुविधाओंका नही बल्कि कर्त्तव्य और सेवाका समुच्चय है।

वास्तवमें सासारिक सुखोपर तरह-तरहके नियन्त्रण लगानेकी आवश्यकताका भान ही मनुष्यको पशुसे अलग करता है।

इसीलिए मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि बुद्धके इस देशके लोग, देशके अन्य भागोंके समान ही शराबके आदी हैं।

इस द्वीपके आँकड़ोंका अध्ययन करनेपर मुझे पता चला कि सामान्य राजस्वमें शराबसे होनेवाली आयका महत्त्वपूर्ण स्थान है। मुझे यह जानकर तो और भी धक्का लगा कि शराबकी इस आदतको भारतके विपरीत यहाँ शर्म व अनादरकी चीज नहीं माना जाता।

आप जानते हैं कि मैं ऐसे देशमें पैदा हुआ हूँ जहाँ गौतमने जन्म लिया, जहाँ उनको ज्ञानकी प्राप्ति हुई और जहाँ उन्होंने अपना जीवन बिताया। लंकाके बौद्ध धर्मके विद्वान चाहे जो-कुछ कहें, लेकिन मैं चाहता हूँ कि आप मुझसे यह बात तो जान लीजिए कि शराबकी यह आदत बुद्धकी भावनाके बिलकुल विपरीत है। क्योंकि इस देशमें हिन्दू-धर्म, ईसाई-धर्म और इस्लामके माननेवाले काफी लोग हैं, अतः मैं आपको यह बता दूँ कि हिन्दू-धर्ममें मद्यपान पाप माना जाता है। इस्लाममें भी इसे वर्जित माना गया है। मुझे यह स्वीकार करते हुए दुख होता है कि ईसाई-धर्म-प्रधान यूरोपमें मद्यपानको अनादरकी दृष्टिसे नहीं देखा जाता, लेकिन आपको यह बतानेमें मैं खुशी महसूस करता हूँ कि हजारों नहीं तो ऐसे सैकड़ों लोगोंने जिनसे मित्रता करनेका मुझे सौभाग्य मिला है, यह विश्वास दिलाया है कि मद्यपानकी यह आदत ईसाकी भावनाके बिलकुल विरुद्ध है।

ईसाई-धर्मी अमेरिकाके साथ मेरा काफी निकटका सम्पर्क है। आप जानते हैं कि अमेरिकाके लोग शराबकी इस बुराईके विरुद्ध कितनी बहादुरीसे लड़ रहे हैं। इसलिए मैं आप सबसे, चाहे आप बौद्ध धर्मके माननेवाले हों, चाहे हिन्दू हों, ईसाई हों या मुसलमान हों, आदरपूर्वक यह आग्रह करता हूँ कि इस देशको शराबके अभिशापसे मुक्त करनेके महान प्रयत्नमें आप सब एक हो जायें।

ठंडे जलवायुवाले प्रदेशोंमें दवाके तौरपर शराबकी आवश्यकताके सम्बन्धमें चाहे जो-कुछ कहा जाये, लेकिन इस बातसे तो हरेक सहमत है कि ऐसे समशीतोष्ण कटि-बंधमें शराब पीनेकी तो कोई भी बात नहीं है।

एक और बात जिसकी ओर मैं आप सबका ध्यान दिलाना चाहता हूँ वह है संसारके सबसे उदार धर्म — बौद्धधर्म — में विद्यमान अस्पृश्यता। मैं चाहता हूँ कि आप तुरन्त यह घोषणा करनेके लिए कदम उठायें कि प्रत्येक व्यक्ति आपके साथ बराबरीका दर्जा रखता है। जबतक आप एक भी व्यक्तिको अस्पृश्य मानते हैं तबतक आप बौद्धधर्म और मानवतासे विमुख समझे जायेंगे।

अन्तमें, क्योंकि आपने मेरे उद्देश्यमें काफी रुचि ली है, मैं चाहता हूँ कि जबतक आपके कपड़े इस सुन्दर देशमें ही तैयार नहीं होते तबतक खादीका ही कपड़ा खरीद-कर आप अपनी सहानुभूतिको और व्यापक बनायें।

मेरे नाई मित्रोंने मुझे एक अभिनन्दनपत्र और एक थैली भेंट की है। यह लाखों भूखे लोगोंके लिए उनके सहयोगियोंकी ओरसे सहानुभूतिकी ऐसी अभिव्यक्ति है जिससे मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ। यदि समृद्धिशाली लोग अभावग्रस्त लोगोंका सदैव ध्यान रखें तो मुझे और भी खुशी होगी।

मैं आपको अभिनन्दनपत्रों तथा थैलियोंके लिए एक बार फिरसे धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

१८६. भाषण : धर्मराज कालेज, कैण्डीमें

१८ नवम्बर, १९२७

यह मेरा सौभाग्य रहा है कि संसारके जिस किसी भागमें मैं गया हूँ, मैंने अपने आपको सुखी महसूस किया है और अपनेको सुखी बना लिया है। अगर मैं ऐसा करनेमें समर्थ न होता तो शायद बहुत पहले मैं आत्महत्या किये बिना ही मर गया होता। लेकिन जब मैं अपने पारसी मित्रोसे मिलता हूँ तो मुझे दुगुना सुख मिलता है। आप वास्तवमें यह सब नही समझ सकते। आप शायद यह भी सोच सकते है कि मैं मजाक कर रहा हूँ। यह मजाक नही है। बात गम्भीर है, क्योकि दक्षिण आफ्रिका और भारतमें पारसियोंके साथ मेरा निकटका सम्पर्क रहा है, और उनसे मुझे व्यक्तिगत तौरपर प्रेम ही प्रेम प्राप्त हुआ है। आप बेशक अब भी यह न जानते हो लेकिन आपके सामने मुझे यह स्वीकार करते हुए बहुत खुशी होती है कि मेरे श्रेष्ठ कार्य-कर्त्ताओंमें से कुछ पारसी है, और वे है भारतके पितामहकी तीन पौत्रियाँ।

लेकिन अपने व्यक्तिगत और पारिवारिक मामलोके ऊपर मैं आपका बहुत समय नही लेना चाहता। इस थैलीके लिए मैं आपको बहुत धन्यवाद देता हूँ और आपसे मिलनेका मुझे यह सुअवसर मिला, इसकी मुझे खुशी है।

जैसा कि कुछ देर पहले मैंने ट्रिनिटी कालेजके विद्यार्थियोंको बताया है, आपकी शिक्षाका निर्माण अगर सचाई और पवित्रताकी ठोस बुनियादपर न हुआ तो आपकी शिक्षा बिलकुल व्यर्थ है। यदि आप लडकोने अपने जीवनकी व्यक्तिगत पवित्रतापर ध्यान नही दिया, यदि आप मन, वचन और कर्मसे शुद्ध बननेके प्रति सतर्क न रहे तो मैं आपको बता दूं कि आपका जीवन व्यर्थ है, चाहे आप पूर्ण रूपसे विद्वान भले बन जायें।

मुझसे आप लोगोंका ध्यान एक बातकी ओर दिलानेको कहा गया है। पवित्रता तो सबसे पहले निर्मल हृदय रखनेमें है, लेकिन हृदयमें जो-कुछ होता है वास्तवमें वह बाहरी कार्यों और बाहरी व्यवहारके रूपमें प्रकट हो जाता है। जो लड़का अपना मुख शुद्ध रखना चाहता है वह कभी अपशब्द नही कहेगा। बेशक यह बात बिलकुल स्पष्ट है। लेकिन वह कभी अपने मुंहमें ऐसी कोई चीज भी नही रखेगा जिसके कारण उसकी बुद्धि मन्द हो, उसका मस्तिष्क विकृत हो और जिससे उसके मित्रोको हानि पहुँचे।

मुझे पता है कि कुछ लड़के धूम्रपान करते है और लंकामें आप सब उतने ही बुरे है जितने बुरे बर्माके लड़के है, हालांकि धूम्रपानकी इस बुरी आदतकी दृष्टिसे

तो सभी जगहके लड़के बुरे बन रहे हैं। और जैसा कि आप जानते हैं, पारसियोंको निःसन्देह अग्निपूजक कहा जाता है या यों कहिए कि भ्रमवश कहा जाता है। वे आपसे ज्यादा अग्निपूजा करनेवाले नहीं हैं भले ही वे ईश्वरको सूर्यके रूपमें देखते हों जो कि अग्नि-देवताके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

आपमें से बहुतसे भले पारसी सिगरेट नहीं पीते हैं, और जब भी आपके संरक्षणमें कुछ लड़के हों, तो आप उन्हें ऐसी शिक्षा दीजिए कि वे धूम्रपानसे अपना मुंह कभी दूषित न करें।

यदि आपमें से कोई धूम्रपान करता हो तो आजसे वह इस बुरी आदतको छोड़ दे। धूम्रपानसे श्वास दूषित हो जाता है। यह गन्दी आदत है। धूम्रपान करनेवाला व्यक्ति जब रेलके डब्बेमें होता है तो यह खयालतक नहीं करता कि उसके आसपास स्त्रियाँ बैठी हैं या ऐसे व्यक्ति बैठे हैं जो धूम्रपान नहीं करते और उसके मुँहसे जो बदबू आती है वह उनके लिए नफरतकी बात हो सकती है।

दूरसे तो सिगरेट एक छोटी-सी चीज लगती है लेकिन सिगरेटका धुआँ जब किसीके मुँहसे अन्दर जाता है और फिर बाहर निकलता है तो वह विष होता है। धूम्रपान करनेवाले यह भी परवाह नहीं करते कि वे कहाँ थूकते हैं।

यहाँ गांधीजीने यह समझानेके लिए कि तम्बाकूकी आदतका प्रभाव शराबसे ज्यादा खतरनाक होता है, टॉलस्टॉयकी एक कहानीका हवाला दिया और आगे कहा:

धूम्रपानसे बुद्धि कुंठित होती है और यह एक बुरी आदत है। अगर आप डाक्टरोंसे पूछें, और यदि वे अच्छे डाक्टर हैं, तो वे आपको बतायेंगे कि बहुतसे मामलोंमें कैंसरका कारण धूम्रपान रहा है या कमसे-कम मूल कारण तो धूम्रपान ही होता है।

जब धूम्रपानकी कोई आवश्यकता ही नहीं है तो फिर लोग धूम्रपान करते क्यों हैं? यह कोई भोजन नहीं है। इसमें कोई आनन्द नहीं सिवा इसके कि पहले पहल हमें कोई [इसके आनन्दका] सुझाव देता है।

बालको! यदि आप अच्छे लड़के हैं और यदि आप अपने शिक्षकोंके और माता-पिताके प्रति आज्ञाकारी हैं तो आप धूम्रपानसे दूर रहें और इस प्रकार आप जो-कुछ बचायें उसे कृपया भारतके भूख-पीड़ित लाखों लोगोंके लिए मेरे पास भेज दें।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

१८७. भाषण: कैण्डीमें[1]

१८ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मुझे दुख है कि केवल कुछ महीने पहले मेरी आवाज जैसी थी अब वैसी नही रह गई है। मेरी आवाज अब ऐसी है कि वह बहुत दूरतक नही पहुँच सकेगी और यदि हॉलमें पीछे बैठे हुए लोग मेरी आवाज न सुन सके तो आशा है कि वे मेरी इस शारीरिक दुर्बलताके लिए क्षमा कर देंगे। मुझे नही मालूम कि आपके सामने खड़े होकर बोलनेमें, शरीरसे असमर्थ होनेके लिए भी मुझे आपसे माफी माँगनेकी जरूरत है या नही। आपने मुझे जो अभिनन्दनपत्र भेंट किया है तथा उसमें देशके तथा मानवजातिके प्रति की गई मेरी कुछ सेवाओंका जो उल्लेख किया है उसके लिए मैं आपको सच्चे दिलसे धन्यवाद देता हूँ। आज मैं इस प्राचीन देशके बारेमें तथा यहाँके नागरिक जो कठिनाइयाँ झेल रहे है उसके बारेमें कुछ पढ रहा था। उसे पढ़कर मेरे मनमें पीड़ा और दुख छा गया है। मैंने अभी वह पुस्तिका समाप्त नही की है। लेकिन जो पढा है वह यहाँके नागरिकोंके कष्टोंको जान लेनेके ख्यालसे काफी है। आप श्रोताओंके माध्यमसे मैं उन लोगोसे यही कह सकता हूँ कि मेरा पूरा हृदय उनके साथ है। आशा है आपकी सारी उत्तम अभिलाषाएँ पूरी होंगी।

जैसा कि कोलम्बोमें मैंने कहा भी था, मैं नगरके जीवनका प्रेमी हूँ। मैं यह जरूर मानता हूँ कि नगर-सेवाका कार्य एक सौभाग्यकी बात है और एक कर्त्तव्य है जिसे स्त्री या पुरुष, प्रत्येक नागरिकको अपनी-अपनी योग्यताके अनुसार निभाना चाहिए। वह सेवा नगरपालिकाका सदस्य बने बिना भी की जा सकती है। हरेक व्यक्तिके भाग्यमें सदस्य निर्वाचित होना नहीं होता। मैं नही समझता कि आप लंकाके लोग भारतके लोगोसे भिन्न है, और इसीलिए मुझे भय है कि यहाँ भी भारतकी ही तरह नगरपालिकाओंका सदस्य बननेकी कामना अक्सर होती होगी और यदि ऐसा हो तो हम इस भावनाको जितनी जल्दी निकाल सके हमारे लिए उतना ही अच्छा है।

मुझे पता नही कि आपके यहाँ गन्दी बस्तियाँ है या नही। मेरे ख्यालमें आप उनसे अछूते नही है। लेकिन जो लोग नगर-पार्षद है उनका कर्त्तव्य समृद्ध नागरिकों-की अपेक्षा गरीबोंके प्रति कही अधिक होता है। बम्बई, कलकत्ता और इलाहाबाद तथा भारतके तकरीबन सभी मुख्य शहरोंमे मुझे नगरपालिकाका अनुभव हो चुका है और मैंने देखा है कि जो लोग प्रभावशाली और पैसेवाले है उनको तो नगर-पालिकाकी सेवाका समुचित और तुरन्त लाभ मिल जाता है लेकिन गरीबोंको और

१. नगरपालिकाकी ओरसे दिये गये अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें।

शायद ही कोई ध्यान देता हो। यदि मैं आपसे यह कहूँ कि भारतके सभी शहरोंमें यही हालत है तो यह मेरी गलती होगी। कोई भी नगर-पार्षद गरीबोंकी सेवा करना अपना कर्त्तव्य नहीं मानता। मुझे यह भी बता देना चाहिए कि अब यह हालत सुधर रही है, हालांकि सुधारकी गति दुखद रूपसे धीमी है।

मैं आपसे यह कहनेका साहस करूँगा कि लंकामें आप लोग हम भारतके लोगोंकी अपेक्षा अधिक सुखी, कहीं अधिक सुखी हैं, और वह इस कारण कि आपके यहाँ विशाल जन-संख्याकी समस्या नहीं है। प्राकृतिक सौन्दर्य अथवा जलवायुकी दृष्टिसे आपका देश किसीसे पीछे नहीं है। यहाँ प्लेग होने अथवा प्लेगसे डरनेकी तो कोई वजह ही नहीं है। दक्षिण आफ्रिकाकी कुछ नगरपालिकाओंकी ही तरह — मैं दक्षिण आफ्रिकाको अपने देशसे भी अधिक अच्छी तरह जानता हूँ — आप भी ऐसी बीमारियोंको दूर रखनेमें समर्थ हो सकेंगे। मैंने देखा है कि केपकी नगरपालिकाओंकी तरह ही यहाँकी नगरपालिकाएँ भी अपने दर्शनीय स्थलोंका विज्ञापन करने तथा विश्वके सभी भागोंसे पर्यटक लोगोंको आकृष्ट करनेका कार्य करती हैं। वे अपने शहरोंको खूब सुन्दर सजाकर उनका विज्ञापन करती हैं; फिर आपका यह नगर तो सौन्दर्यकी दृष्टिसे केपटाउनसे भी बढ़कर है।

जो प्राकृतिक दृश्यावलि लंकामें मैं अपने चारों ओर देख रहा हूँ उसका शायद विश्व-भरमें कोई सानी नहीं है। और मनुष्यके लिए इस सौन्दर्यमें जितनी अभिवृद्धि कर सकना सम्भव है वह यदि आप कर दें तो निःसन्देह आप भी इस सुन्दर स्थानका विज्ञापन कर सकते हैं और संसारके सभी भागोंके लोगोंको आकृष्ट कर सकते हैं और ऐसा करनेमें उनका और आपका, दोनोंका, लाभ होगा।

भगवान बुद्धकी ज्योतिसे दीप्त इस द्वीपमें उन यात्रियोंके सीखनेके लिए काफी कुछ है। आपका एक महान धर्म है जिसकी विश्व-भरमें कोई समता नहीं कर सकता। यह वह धर्म है जो उदात्ततम व्यक्तिको और उदात्त करता है। इसके माननेवालोंकी संख्या संसारमें सबसे अधिक है। लेकिन आपका धर्म आज कोई बहुत अच्छी हालतमें नहीं है। इसका कारण यह है कि आप इसे अच्छा बनानेके लिए कोई प्रयत्न नहीं करते। ऐसा करना आपका कर्त्तव्य है।

आपके लिए सबसे अच्छी शुरूआत और क्या हो सकती है कि आप इस सुन्दर स्थानको एक छोटा स्वर्ग बना दें। अभिनन्दनपत्रके लिए मैं आपको फिरसे धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

सीलोन डेली न्यूज, १९-११-१९२७

विद गांधीजी इन सीलोन

१८८. भाषण : कैण्डीकी सार्वजनिक सभामें

१८ नवम्बर, १९२७

मैं इन बहुत सारे सुसज्जित अभिनन्दनपत्रों, बहुमूल्य मंजूषाओं और बहुत-सी थैलियोंके लिए आपका आभारी हूँ।

मैंने उम्मीद की थी कि मैं आपके सामने विस्तारसे कुछ बोल सकूँगा, लेकिन इस सभाके लिए नियत ६० मिनटोंमें से ४० मिनट आपके द्वारा इन उपहारोंको स्नेहपूर्वक भेंट करने और इन अभिनन्दनपत्रोंको पढ़नेमें ही लग गये हैं।

मुझे आपके इस सुन्दर द्वीपमें आ सकनेकी बहुत ज्यादा खुशी है। आपके बीच जो-कुछ चन्द घण्टे मैंने बिताये हैं उनमें मुझे कैण्डीके लोगोंकी कुछ कठिनाइयों और कष्टोंके बारेमें जानकारी हुई है। मेरी इच्छा है कि मैं केवल मौखिक सहानुभूति प्रकट न करके आपकी कुछ वास्तविक सेवा कर सकता, लेकिन जो स्थिति है उसमें मुझे इतनेसे ही सन्तोष करना पड़ेगा कि मैं आपको अपनी हार्दिक सहानुभूतिका विश्वास दिलाऊँ और ईश्वरसे प्रार्थना करूँ कि किसी प्रकार आपके दुख दूर हों।

आपने अपने एक अभिनन्दनपत्रमें मुझसे कुछ करनेको कहा है ताकि बुद्ध गया आपको फिर सौंप दिया जाये। मैं आपको यह विश्वास दिला सकता हूँ कि इस सम्पत्तिको आपको वापस दिलानेके लिए मैं अपनी शक्ति-भर प्रयत्न करूँगा। (हर्ष-ध्वनि) लेकिन कितना अच्छा होता कि मैं यह सोच सकता कि आपका ताली बजाना वाजिब है, क्योंकि मुझे भय है कि मेरे तमाम प्रयत्नोंके बावजूद, आप जितना समझते प्रतीत होते हैं, आपकी सहायता करनेकी मेरी सामर्थ्य उसकी अपेक्षा कहीं कम है।

इसलिए मैं आपको सावधान करता हूँ कि आप मेरे आश्वासनपर बहुत ज्यादा उम्मीद न बाँध बैठें और आपसे कहता हूँ कि आप बिना ढील डाले अपने अधिकारको मनवानेकी खातिर अपना प्रयत्न जारी रखें।

मैंने आशा की थी कि मैं आपसे चरखेके सन्देशके बारेमें कह सकूँगा क्योंकि वह आपपर भी लागू हो सकता है, लेकिन मुझे लगता है कि मेरे पास जो चन्द मिनटका समय है उसे आपकी ज्यादा गम्भीर और जरूरी समस्याओंकी चर्चामें लगाना मेरा कर्त्तव्य है।

मैंने सुना है और मुझे यह जानकर दुख हुआ है कि आप लोगोंमें भी, जो बुद्धके अनुयायी हैं, अस्पृश्यताका कड़ाईसे पालन किया जाता है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यह बुद्धकी भावनाके सर्वथा विरुद्ध है। और मैं बौद्धों और हिन्दुओंसे आग्रह करूँगा कि वे अपने समाजको इस अभिशापसे मुक्त करें।

फिर आपके बीच शराबखोरीका अभिशाप प्रचलित है, जैसा कि वह संसारके दूसरे भागोंमें भी है। जहाँतक मुझे ज्ञात है, मद्यपान संसारके सभी महान धर्मोंकी भावनाके विरुद्ध है, और बौद्ध धर्मकी भावनाके विरुद्ध तो निश्चित ही है।

मुझे पता चला है कि यहाँ आपको अपने जिलेमें यह अधिकार प्राप्त है कि आप मद्यनिषेध लागू करा दें। आपकी धरती छोड़नेके बाद यह जानकर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता होगी कि आप इस सुन्दर द्वीपको इस अभिशापसे मुक्त करानेके लिए मद्य-निषेध करानेके अपने इस अधिकारका पूरा-पूरा उपयोग कर रहे है।

मुझे यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि बागानोंके क्षेत्रमें लोगोंको मद्यनिषेध करानेका अधिकार प्राप्त नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि मुझे दी गई यह सूचना सही नहीं है। लेकिन यह सूचना सही हो या गलत, मेरी आवाज किसी प्रकार बड़े-बड़े बागान-मालिकोंतक पहुँचेगी जिन्हें अपने आपको उन मजदूरोंके कल्याणका न्यासी मानना चाहिए जिनके ऊपर उनकी अद्भुत समृद्धि निर्भर करती है। मै नम्रतापूर्वक उनसे यह कहनेका साहस करता हूँ कि मजदूरोंके सामाजिक कल्याणमें व्यक्तिगत दिलचस्पी लेना उनका कर्त्तव्य है, जिनके शरीर और आत्मातक उनके संरक्षणमें है। मै उनका कर्त्तव्य मानता हूँ कि वे न केवल शराबके रूपमें मजदूरोंके सामने प्रलोभन न रखें, बल्कि वे उन्हें गलत रास्तोंसे बचायें।

मैं देखता हूँ कि इस सभाके लिए निर्धारित समय समाप्त हो चुका है। अतः कैण्डीके लोगोंने जो अपार सहृदयता मेरे प्रति दिखाई है उसके लिए मैं एक बार फिर उन्हें धन्यवाद देकर अपना भाषण समाप्त करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

१८९. भाषण: बादुल्लाकी सार्वजनिक सभामें

१९ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मैं आपके अभिनन्दनपत्र तथा थैलीके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। आपके इस सुन्दर द्वीपमें आकर मुझे बहुत आनन्द प्राप्त हुआ है।

मैं अपने सामने निकटवर्ती बागानोंसे आये हुए हजारों मजदूरोंको देख रहा हूँ। कितना अच्छा होता कि मेरे पास आपके बीच जानेका और जिस वातावरणमें आप रहते है उसे तथा आपके निवास स्थानों और जीवनके ढंगको देखनेका समय होता।

आप सबको शायद पता न हो कि मेरे जीवनका लगभग एक युग मजदूरोंके बीच या उनके घनिष्ठ सम्पर्कमें गुजरा है, और आपके बीच कुछ दिन गुजारनेमें, आपकी जरूरतों और आकांक्षाओंको समझनेमें मुझे बहुत ज्यादा खुशी मिली होती, लेकिन मै आशा करता हूँ जिस वजहसे मै कुछ समयके लिए आपके बीच आकर नहीं रह पाऊँगा, उसको आप मेरी इस असमर्थताका पर्याप्त कारण मानकर स्वीकार करेंगे।

वह कारण यह है कि इस समय मैं भारतके उन करोड़ो लोगोंके आत्मनियुक्त प्रतिनिधिके रूपमें यात्रा कर रहा हूँ जिनकी दशा यहाँ उपस्थित आपमें से किसीकी भी अपेक्षा कही ज्यादा बुरी है। आपने मुझे जो थैलियाँ भेंट होते देखी है, वे इन्हीं लोगोंके वास्ते दी गई हैं।

इस थैलीके हर रुपयेका इस्तेमाल प्रतिदिन कमसे-कम १६ स्त्रियोंको उनकी झोपड़ीमें रोजी दिलानेके लिए इस्तेमाल होगा। ये वे स्त्री-पुरुष हैं जो अधपेट रहनेके बावजूद अपना घर, अपनी झोपड़ी और अपने खेतोंको छोड़ नही सकते। उस धनमें जो साल-भर इकट्ठा किया जाता रहता है, प्रतिवर्ष लगभग ५०,००० स्त्रियोंको चरखा उद्योगके जरिये उनके घरोंमें सहायता दी जा रही है।

इन कतैयोंके पीछे कई हजार बुनकरो, रंगरेजो, छपाई करनेवालो, धोबियो तथा अन्य लोगोंको भी मदद पहुँचाई जा रही है, जो अगर कताईका पुनरुद्धार न हुआ होता तो बेरोजगार होते।

यह काम एक अखिल भारतीय संस्थाके जरिये किया जा रहा है जिसे अखिल भारतीय चरखा संघ कहते हैं। इसमें कई आत्मत्यागी लोग हैं जो या तो लखपतियोंके बेटे हैं या जिनकी योग्यता और ईमानदारी स्वयं सिद्ध है।

हालाँकि इस कामके लिए मैं धनवान लोगोंसे खुशीसे पैसा इकट्ठा करता हूँ, लेकिन मुझे आप-जैसे गरीब लोगोंसे, जो मेरे सामने बैठे है, धन इकट्ठा कर सकनेमें बहुत ज्यादा खुशी होती है। खुशीसे दिये गये हरएक पैसे, हर आनेका भी वैसा ही स्वागत है जैसा कि किसी धनीके एक या दस रुपयेके नोटका।

मैं जानता हूँ कि अपनी उपस्थितिसे इस अवसरकी शोभा बढानेवाले आप लोगोंमे से बहुतसे लोग ऐसे हैं जिन्हें इस कोषमें कुछ चन्दा देनेका अवसर ही नही दिया गया। यदि मेरा अनुमान सही है, और आपमें से बहुतसे लोगोने चन्दा नहीं दिया है तो मैं आपको निमन्त्रित करता हूँ कि यदि आपका मन हो तो आप इस सभासे जानेसे पहले इस उद्देश्यके लिए अपनी सामर्थ्य-भर देकर जायें।

मुझे आपको यह सूचित कर सकनेकी खुशी है कि अभी जब मैं श्रोताओंसे यह अपील कर ही रहा हूँ, एक सज्जनने प्रकटतः अपनी जेबका सारा धन पहले ही भेज दिया है जो आठ रुपये और कुछ आने है।

लेकिन एक अधिक गम्भीर चीज जिसका मैं आपसे जिक्र करना चाहता हूँ, यह है कि आपको खादी पहनकर इन क्षुधापीडित लाखों लोगोंके साथ जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए। ये लोग चन्देमें प्राप्त होनेवाले इन रुपयोंकी सहयतासे यह खादी तैयार करते हैं। मैं जो खादी तैयार करता हूँ उसके लिए यदि मुझे ग्राहक नही मिलते तो चन्देमें प्राप्त होनेवाले ये सारे रुपये बिलकुल बेकार होंगे। मैं देख रहा हूँ कि मेरी अपीलका जवाब मिलना पहले ही शुरू हो गया है, और यदि आपमें से प्रत्येक व्यक्ति अपने हाथ जेबमें डाल दे, अपनी निगाह उन लोगोंपर रखे जो चन्दा एकत्र कर रहे है और कान मेरी ओर लगाये रहे तो मैं जो सन्देश आपको देनेवाला हूँ वह आसानीसे दे सकूंगा।

एक महत्त्वपूर्ण विषय है जिसकी मैं आपके साथ चर्चा करना चाहता हूँ। एक मित्रने आज सुबह मुझे बताया कि इस जगह सैकड़ों करघोंपर काम हुआ करता था, और मुझे दुखपूर्वक कहा कि विदेशी कपड़े और विदेशी सूतका आयात होनेके कारण ये सारे करघे बन्द पड़े हैं और यह पुराना उद्योग इस जिलेमें लगभग समाप्त-प्राय ही है। -

मैंने इस मित्रको बता दिया है कि यदि वह रुई साफ करनेसे लेकर कताई तककी सारी प्रक्रियाओंको सिखानेके लिए विशेषज्ञोंकी सहायता चाहते हैं, तो यह सहायता उन्हें लंकामें ही प्राप्त हो सकती है। कोलम्बोके निकट ही एक परिवार है जिसने पहले ही सारी प्रक्रियाएँ सीख ली हैं और वह अपना कपड़ा कच्ची रुईसे तैयार करता है।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यदि इस सुन्दर द्वीपमें वास्तवमें जरूरतमन्द स्त्री-पुरुष हैं तो इससे अच्छी बात और कोई नहीं हो सकती कि आप अपना ही कता और बुना कपड़ा पहनें। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप इन रेवरेंड महोदयके काम और उसकी प्रगतिके लिए अपनी हार्दिक सहायता प्रदान करेंगे और वह जो उद्यम और कौशल आपके उपयोगके लिए प्रस्तुत करेंगे उसका उपयोग करेंगे।

आज तीसरे पहर एक सज्जनने मुझे बताया कि आपके यहाँ इस प्रकारका सामाजिक कार्य या किसी भी प्रकारका राजनीतिक कार्य करनेवाली कोई संस्था या संगठन नहीं है। और निश्चय ही मुझे इस बातसे बहुत अधिक खुशी होगी कि इस सभाका एक परिणाम यह हो कि आप एक ऐसा संगठन बना लें, जिसका संचालन निःस्वार्थ कार्यकर्त्ता करें।

एक और मित्र मेरे पास आये और मुझसे पूछा कि लंकाके लोगोंके लिए चरखेका क्या सन्देश है। उन्होंने मुझे बताया कि इस द्वीपमें भी ऐसे स्त्री-पुरुष हैं जिन्हें कामकी जरूरत है, और मेरी पूछताछके जवाबमें उन्होंने बताया कि वे मुझसे कोई ऐसा रास्ता जानना चाहते थे जिसके जरिये इस सुन्दर द्वीपके नवयुवकोंको जल्दबाजीमें और बिना अच्छा-बुरा समझे पश्चिमकी हर चीजकी नकल करनेसे रोका जा सके।

एक चौथे मित्रने मुझे लिखा है कि मैं लंकाकी कुछ स्त्रियोंको जो सुन्दर वस्त्र पहने देखता हूँ और बहुत सारे नवयुवकोंको यूरोपीय शैलीके बढ़िया वस्त्र पहने देखता हूँ उससे मैं ऐसा न मान लूँ कि ऐसे वस्त्र पहननेवाले लोगोंके पास बहुत धन है। यह पत्रलेखक मुझे बताता है कि बढ़िया वस्त्रोंमें सजे हुए इन आदमियोंमें से बहुतसे लोग अपने आपको, मुझे कहते हुए दुख होता है, चेट्टि या पठान सूदखोरोंके चंगुलमें पाते हैं।

तो, चरखा इस वर्गके सभी लोगोंके लिए एक सन्देश देता है। उस क्षुधा-पीड़ित पुरुष या स्त्रीसे जिसके पास करनेको शायद कोई काम नहीं है, चरखा कहता है: "कताई करो, और तुम्हें कमसे-कम रोटीका एक सूखा टुकड़ा मिल जायेगा।"

यह तो चरखेका आर्थिक सन्देश है, लेकिन उसके पास सभी लोगोंके लिए एक सांस्कृतिक सन्देश भी है। चरखा सांस्कृतिक ढंगसे आपसे और मुझसे कहता है:

"यह देखते हुए कि इस धरतीपर करोड़ो लोग ऐसे है, जो कामके अभावमें मजबूरन बेरोजगार रहते है, और चूँकि मैं ही ऐसा यन्त्र हूँ जिसे किसी एक भी व्यक्तिके मुँहकी रोटी छीने बगैर उन लोगोंके हाथोंमें दिया जा सकता है, क्या आप इन करोड़ों लोगोकी खातिर मुझे नही चलायेंगे और इस प्रकार सच्चे उद्यमका, सच्चे काम और आत्मनिर्भरताका तथा ईश्वरकी इस धरतीपर सभीके लिए आशाका वातावरण नही उत्पन्न करेंगे?"

यह वह सांस्कृतिक सन्देश है जो चरखा इस धरतीके सभी लोगोंको देता है, भले ही वे किसी भी देश, धर्म या जातिके हो।

मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि चरखेके इस सास्कृतिक सन्देशको धीरे-धीरे किन्तु निश्चित रूपसे संसारके विभिन्न कोनोंमें ग्रहण किया जा रहा है। मै ऐसे अंग्रेजों, आस्ट्रियनो, जर्मनो, पोलोको जानता हूँ जिन्होने चरखेकी इस अपीलको पहले ही स्वीकार कर लिया है। और मैं लंकाके सम्पन्न स्त्री-पुरुषोको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि वे चरखेके सास्कृतिक सन्देशको स्वीकार कर लेंगे और अपने इस्तेमालके लिए कमसे-कम कुछ कपड़ा स्वय बनानेकी कोशिश करेंगे तो वे इस कार्यको पूरा करनेके बाद अपने अन्दर आजकी अपेक्षा कही ज्यादा गौरवकी भावनाका अनुभव करेंगे।

चरखेका एक तीसरा सन्देश है जो लाक्षणिक है। चरखा सादा जीवन और उच्च विचारका पक्षपाती है। आज भौतिक सुखोंपर सुख जोड़नेकी, और जीवनको इतना जटिल बना लेनेकी जो अन्धाधुन्ध दौड़ मची हुई है जिसमें मनुष्य स्वयं अपनेको या अपने ईश्वरको समझने-जाननेके अयोग्य हो जाता है; चरखा उसके स्थायी विरोधका प्रतीक है। वह आपसे और मुझसे जीवनके प्रत्येक क्षणमें यह अपील करता है और कहता है कि: "मेरा उपयोग कीजिए और आप देखेंगे कि यदि आप सब मिलकर मेरा उपयोग करे, तो मैं छोटा और तुच्छ भले ही प्रतीत होऊँ, मैं यन्त्र रूपी अभिशापकी अंधाधुन्ध और बिना सोचे-विचारे की जानेवाली पूजाके विरुद्ध एक दुर्दमनीय शक्ति सिद्ध होऊँगा।"

चरखा लंकाके उन स्त्री-पुरुषोंके लिए बराबर एक फटकार है जो तरह-तरहके फैशनों और स्टाइलोंके पीछे भागते है। वह उनसे कहता है: "अपने देशकी खातिर दूसरोके तौर-तरीकों और रिवाजोंकी नकल मत करो जो तुम्हें केवल हानि पहुँचा सकते है, और ईश्वरके लिए ऐसा कुछ बननेकी इच्छा मत करो, जैसा कि लंकाका हर व्यक्ति नही बन सकता हो।"

अब मुझे आपके सामने एक या दो अन्य बातें भी कहनी हैं जिनकी मै चर्चा करना चाहता हूँ, और मै आपको शराबखोरीकी बुराईके बारेमें बताना चाहता हूँ।

मै जानता हूँ कि आप मजदूरोमें से बहुतसे लोगोको शराबकी लत है। शराबकी लत सर्प-दंशसे भी खराब चीज है। साँपके काटनेसे विषके कारण शरीरकी मृत्यु हो सकती है, लेकिन शराबकी आदत तो आत्माको विषाक्त और भ्रष्ट कर देती है। इसलिए मै आग्रह करूँगा कि आप फुफकारते हुए साँपको देखकर जिस प्रकार भागेंगे उसी प्रकार इस अभिशापसे भी दूर भागें।

मैं इस जिलेमें मजदूरोंके मालिकोंसे नम्रतापूर्वक निवेदन करूँगा कि उन्हें अपने कर्मचारियोंके कल्याणके लिए अपने आपको न्यासी मानना चाहिए और उन्हें शराबकी लतसे बचानेकी कोशिश करनी चाहिए। मेरी नम्र रायमें इन मालिकोंका यह निश्चित कर्त्तव्य है कि वे अपने पास-पड़ोसकी हर कैन्टीनको बन्द कर दें और अपने कर्मचारियोके सामनेसे ऐसा हर प्रलोभन हटा दें। मैं निजी अनुभवसे यह बात कह सकता हूँ कि यदि वे अपने आदमियोंके लिए बढ़िया उपहारगृह खोल देंगे और उनके लिए सभी प्रकारके निर्दोष खेलोंकी व्यवस्था कर देंगे तो वे पायेंगे कि इन आदमियोंको इस नशीले पेयकी कोई आवश्यकता नहीं होगी।

कैण्डीसे इस स्थानके लिए आते हुए मुझे ऐसी सुन्दर दृश्यावलि देखनेको मिली जो मुझे बहुत कम देखनेको मिली है। जहाँ प्रकृति इतनी उदार रही है, और जहाँ प्रकृति आपको अपने आसपास इस भव्य दृश्यावलिके रूपमें इतनी निर्दोष मादकता प्रदान करती है, वहाँ स्त्री-पुरुषोंके लिए चमकदार किन्तु घातक शराबसे नशा प्राप्त करना निश्चय ही अपराध है। मैं बुद्धके अनुयायियोंसे कहता हूँ कि यह विचार करना बुद्धकी शिक्षाके विरुद्ध है कि बुद्धकी पूजा करनेवाले लोग शायद शराब पी सकते हैं।

मुझे यह सुनकर गहरा दुख हुआ कि आपमेंसे बहुतसे लोग, जो बौद्ध-धर्मके माननेवाले हैं, अस्पृश्यताके अभिशापका पालन करते हैं। मुझे एक बहुत बड़े अफसरसे पता चला कि आप कुछ बौद्ध लोग इसे अपमानकी बात समझते हैं कि कोई अस्पृश्य स्त्री कमरसे ऊपर कोई वस्त्र पहने। मुझे बिना विरोधके भयके यह कहनेमें कोई संकोच नहीं है कि यदि आप अस्पृश्यतामें विश्वास करते हैं तो आप बुद्धकी शिक्षासे बिलकुल इनकार करते हैं। बुद्ध, जो तुच्छतम प्राणीको अपने समान ही प्रिय मानते थे, वे मनुष्य मनुष्यके बीच इस निंद्य भेदभावको और एक भी मनुष्यको अस्पृश्य मानना कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते थे।

मुझे यह जानकर भी उतना ही दुख हुआ कि आप हिन्दू लोग भी इस अभिशापको भारतमें ही पीछे नहीं छोड़ आये हैं बल्कि लंकामें प्रवेश करनेके बाद भी इसे अपने साथ ले आये हैं। मेरी हार्दिक इच्छा है कि लंकामें रहनेवाले बौद्ध और हिन्दू प्रयत्नपूर्वक इस अभिशापको अपने बीचसे खत्म कर दें।

मुझे एक-दो वाक्य एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चीजके बारेमें भी कहने हैं जिसे मैं लगभग भूल गया था।

कोलम्बोमें मुझे एक पत्र मिला था जिसमें मुझे बताया गया था कि बागानों और बड़े-बड़े कारखानोंमें स्त्री-पुरुषोंका जीवन उतना शुद्ध नहीं है जितना होना चाहिए। पत्रमें आगे कहा गया था कि स्त्री-पुरुषोंके सम्बन्ध भी वैसे नहीं हैं जैसे होने चाहिये।

जो चीज मनुष्यको पशुसे मुख्य रूपसे अलग करती है, वह यह है कि मनुष्य होश सम्हालनेके बादसे अनवरत आत्म-संयमका जीवन व्यतीत करने लगता है। ईश्वरने मनुष्यको इस योग्य बनाया है कि वह अपनी बहन, अपनी माँ, अपनी पुत्री और अपनी पत्नीमें भेद कर सके। एक क्षणके लिए भी ऐसा मत सोचिए कि चूँकि आप लोग मजदूर हैं इसलिए आप लोगोंको इन आवश्यक भेदों और प्रतिबन्धोंको न माननेकी

छूट है। यदि आपकी झोंपड़ियाँ इस प्रकार बनी हुई नहीं हैं कि आप शिष्टता और आवश्यक गोपनीयताके नियमोका पालन कर सकें, तो मैं आपके मालिकोंसे अनुरोध करूँगा कि वे आपको सुविधाएँ प्रदान करें ताकि आप वैसा कर सकें।

ईश्वर आपको मेरे इन अन्तिम शब्दोंका महत्त्व समझनेमें मदद करे।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

१९०. "भूंडी भूंछी"

कच्छसे बाहर रहनेवाले गुजरातियोंने शायद "भूंडी भूंछी" का नाम भी न सुना हो। ऐसा जान पड़ता है कि "भूंडी भूंछी" नामक कर केवल कच्छमें ही लिया जाता है। मेघवाल जातिमें[1] जो व्यक्ति पुनर्विवाह करता है उससे यह कर लिया जाता है। इस करका दरबारकी ओरसे इजारा दिया जाता है। कहा जाता है कि अपनी आय बढ़ानेके लिए इजारेदार अनेक प्रकारके अत्याचार करते हैं।

जब मैं कच्छमें[2] था तब इसके और अन्य बातोंके सम्बन्धमें महारावश्रीके[3] साथ मेरी बातचीत हुई थी और अवश्य ही मैंने यह आशा की थी कि "भूंडी भूंछी" कर तुरन्त खत्म हो जायेगा। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि मेरी यह आशा झूठी थी क्योंकि एक कच्छी पाठक लिखते हैं।[4]

यही पत्रलेखक "भूंडी भूंछी" कर और उसके इजारेसे होनेवाले दुःखोंका वर्णन करते हैं। उसमेंसे मैं निम्नलिखित अंश उद्धृत करता हूँ।[5]

इसके उपरान्त अन्य अवतरणोंको प्रकाशित करनेमें शर्म आये ऐसी हकीकत भी पत्रलेखक देते हैं। उन्हें मैं प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ। मैं ऐसी आशा रखता हूँ कि कदाचित् उपर्युक्त हकीकतोंमें भी अतिशयोक्ति है। परन्तु पाणिग्रहणके लिए कर, और उसमें भी एक ही जातिपर, ऐसा कर हो ही नहीं सकता। मैंने कच्छमें ऐसा एक भी अधिकारी नहीं देखा, जिसने इस बार करका बचाव किया हो। "लम्बे अरसेसे चला आ रहा है", "किसीका ध्यान इस ओर गया ही नहीं", ऐसे बेबुनियाद उत्तर अवश्य कोई-न-कोई देता था। लेकिन हम सबको ऐसा लगा कि यह कर तो चला ही गया है और निर्दोष मेघवालोंकी दिक्कत दूर हो गई।

परन्तु वैसा नहीं हुआ और पत्रलेखक मेरी मददकी आशा रखता है। मैं चाहता हूँ कि मेरे पास महारावश्रीको अथवा उनके अमलदारोंको समझानेकी शक्ति हो। वह हो

१. एक अन्त्यज जाति।
२. गांधीजी २२ अक्टूबर, १९२५ से ३ नवम्बर, १९२५ तक कच्छमें थे।
३. कच्छ राज्यके तत्कालीन महाराजा।
४. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।
५. नहीं दिया गया है।

तो तुरन्त उसका उपयोग करूँ। वर्तमान पत्रोंके प्रभावकी मर्यादा होती हैं। महात्माओंका असर तो यह होता है कि लोग उनका लाभ उठा लेते हैं। सत्याग्रहीका असर भी सीमारहित नहीं होता। पत्रकारके रूपमें कच्छमें मेरा प्रभाव शून्य कहा जा सकता है, महात्माके रूपमें यह प्रभाव उधार पासेमें है और सत्याग्रहीके नाते समयानुसार। सत्याग्रहीका असर प्रबल होनेके बावजूद कालक्षेत्र और संयोगोंको लेकर उसकी भी सीमा है। इस समय मेरा सत्याग्रह कच्छके मेघवालोंके पास नहीं पहुँच सकता। संयोग प्रतिकूल है और फिर कच्छ मेरे क्षेत्रके बाहर है। इसलिए मेरे पास उपाय केवल एक अशक्त — गरीब — की विनय और प्रार्थनाका ही है। वह प्रार्थना मैं इस लेखके द्वारा महारावश्री और उनके अमलदारोंसे करता हूँ।

लेकिन कच्छकी जनताके पास तो, यदि उसमें हिम्मत और दया हो, तो बहुत सारे उपाय हैं। उसे न तो बलवा करनेकी जरूरत है और न बहुत कड़े उपाय अपनानेकी। रूठ जानेके उपायका प्रयोग भारतीय जनताने हमेशा किया है। जब राजा न्याय न करे तब जनता रूठ सकती है और राजाको समझा सकती है। आजकल तो हम रूठनेकी शक्ति भी खो बैठे हैं। महाजन लघुजन हो बैठे हैं। मुझे ऐसे समयका स्मरण है जब महाजनकी सत्ता राजासे भी ज्यादा थी। लेकिन आज महाजनमण्डल नाम-मात्रका रह गया है। उसमें स्वार्थ और अनीतिने प्रवेश कर लिया है और वे जो एक समय लोगोंके प्रतिनिधि और सच्चे रक्षक थे, अब नहीं रहे बल्कि बहुत स्थानोंपर भक्षक बने दिखाई देते हैं। इसीसे राजा और अमलदार जनताकी ओरसे निडर हो गये हैं और लापरवाह तथा स्वेच्छाचारी बन बैठे हैं। इस स्थितिको सुधारनेका उपाय केवल लोक-शिक्षा है।

इस शिक्षाका अर्थ स्कूलकी शिक्षा नहीं। अपितु कितने ही सुधारक जो रणमें हारकर भी विवेक नहीं छोड़ते, मर्यादाका पालन करते है, गाम्भीर्य रखते हैं और अपने चरित्र बलसे राजा-प्रजा दोनोंको ढकते हैं और दोनोंपर अपना प्रभाव डालते हैं — ऐसी है वह शिक्षा! वे सच्ची लोक-शिक्षा प्रदान कर सकते है। तिसपर भी यदि देर लगे तो भले ही लगे परन्तु यही सबसे सीधा और छोटा रास्ता है।

जबतक ऐसा सुधारक वर्ग जागे तबतक जिसे जो-जो सूझे वह सत्य और अहिंसाका मार्ग ग्रहण करे। उपर्युक्त लेखकने मुझे लिखनेका मार्ग ग्रहण किया है। वह केवल छोटा-सा कदम है। यदि वह अधिक बड़ा कदम उठाना चाहे तो उसे मेघवाल जातिमें प्रवेश करना चाहिए और उनके दुःखोंकी विस्तारसे जाँच करनी चाहिए। कुछ एक दुःखोंका निवारण उनकी जातिमें प्रवेश करनेपर हो सकता है। इसके अतिरिक्त युवक वर्ग हारकर बाहर बैठा रहे इससे बेहतर तो यह होगा कि वह जहाँ-जहाँ अनीतिका, अन्यायका दावानल भभकता हो वहाँ जा बैठे। त्यागपूर्वक साधना करनेवालोंको सीधे उपाय खुद ही मिल जाते हैं।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २०-११-१९२७

१९१. चरखा संघके बारेमें

एक बिहारी सज्जनने जो कलकत्तामें रहते हैं, हिन्दीमें तीन प्रश्न पूछे हैं और वे उनके उत्तर 'नवजीवन' में चाहते हैं। चूंकि वे प्रश्न गुजरातियोंके लिए भी थोड़े बहुत उपयोगी हो सकते हैं इसलिए मैं उन्हे नीचे गुजरातीमें दे रहा हूँ। प्रश्न इस तरह है:

> १. अखिल भारतीय चरखा संघके टूट जानेके बाद उसके संचित कोषका क्या होगा? जिन लोगोने इस कोषमें चन्दा दिया है, देते हैं, अथवा देंगे, उनका तो इसपर कोई स्वत्व नही रह जायेगा। तो इस कोषके अन्तिम उपयोगका निर्णय करते समय दाताओंकी सम्मति ली जायेगी अथवा नही?
>
> २. मेरे प्रान्त (बिहार)में साढ़ेतीन रुपयेमें आठ हाथकी एक जोडी मजबूत धोती मिल जाती है। पर यहाँ अभय आश्रम अथवा खादी प्रतिष्ठानमें सवा चार रुपयेसे कममें वैसी ही धोती नही मिलती। तो क्या इससे मेरे इस सन्देहकी पुष्टि नही होती कि इन सस्थाओंके संचालक अपने ऊपर अखिल भारतीय चरखा संघका नियंत्रण न होनेसे दलालीका लाभ लेते है; जबकि पूरा बिहारका काम सीधे चरखा संघके नियंत्रणमें है।
>
> ३. निरंतर चेष्टा करते रहनेपर भी खादीके दाममें कमी क्यो नही हो रही है? कमसे-कम बंगालमें तो गत दो वर्षोमें कोई कमी नही हुई। हाँ, कपड़ेकी किस्ममें कुछ सुधार अवश्य हुआ है
>
> मैंने उपर्युक्त प्रश्न खादी आन्दोलनके कट्टर पक्षपाती होनेकी हैसियतसे पूछे हैं।

पहले प्रश्नमें चरखा संघके बारेमें कुछ अश्रद्धा है और दानियोंके सामान्य अधिकारके बारेमें अज्ञान है।

कितने ही ऐसे मित्र भी जो मुझे अच्छी तरह पहचानते है और चरखा संघके सदस्योंको भी खूब जानते है, सोचते हैं कि मेरे मरनेके बाद चरखा संघ टूट जायेगा और खादी की प्रवृत्ति समाप्त हो जायेगी। एक आलोचकने तो यहाँतक भविष्यवाणी की है कि मेरा शव भी चरखेकी लकड़ीसे जलाया जायेगा। ऐसी स्थितिमें यदि खादीके इस पक्षपातीके मनमें शंका उठी है तो क्या दोष दिया जाये? पर उन्हे और उन जैसोको मैं इत्मीनान दिलाना चाहता हूँ कि मेरी लाशको कोई चरखेकी लकडीसे नही जलायेगा। चरखा संघके सदस्य आज जो काम करते हैं, मेरे मरनेके बाद वे उसमें दुगुना करनेवाले हैं। खादीके ऊपर अनन्य श्रद्धाका मैंने ही इजारा नही लिया है। देशमें खादी-प्रवृत्तिके नेस्तनाबूद होनेका मैं एक भी चिह्न नही देखता; ऐसे चिह्न जरूर देखता हूँ कि खादीपर लोगोंका विश्वास बढ़ता जाता है। इसके अलावा चरखा संघकी समितिके सदस्य खादीके भक्त है। वे स्वतंत्र रूपसे विचार करते हैं। उनमें कितनोंने तो

खादीके लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया है और उसीके लिए जीते हैं। मैं ऐसी कल्पना कर ही नहीं सकता कि ऐसे लोग चरखा संघको टूटने देंगे। विशेषता इसीमें है कि किसी संस्थामें रहनेवाले यही प्रवृत्ति पैदा करें कि अगर दूसरे लोग बेवफा निकलें तो भी वे स्वयं तो अपनी संस्थामें अश्रद्धा न रखते हुए अंततक वफादार ही रहेंगे और उसे चलाते जायेंगे। इसमें तो मुझे लेशमात्र भी शंका नहीं है कि चरखा संघमें ऐसे सेवक हैं।

पर जो उत्पन्न होता है, उसका नाश अवश्य होता है। इस न्यायसे किसी दिन चरखा संघका नाश भी संभव है। सभी प्रकारके नाश हानिरूप नहीं होते। शुद्ध प्रवृत्तिका नाश महान परिवर्तनके रूपमें होता है। जब हम छोटा मन्दिर छोड़कर बड़ा बनाते हैं तो मानते हैं कि मन्दिरका उद्धार हुआ है और बात है भी यही। इसी प्रकार मेरी अनन्य श्रद्धा है कि जब चरखा संघका लय होगा तो किसी महान संस्थामें लय होगा।

चरखा संघमें एक कौड़ी भी देनेवालेका अधिकार अक्षय है। चरखा संघको दानियोंकी सम्मतिके बिना बन्द नहीं किया जा सकता, यानी अगर चरखा संघके द्रव्यका उपयोग खादीके सिवा किसी दूसरे काममें किया जाये तो इसमें दानियोंकी सम्मति होनी चाहिए। अगर कोई कार्यकर्त्ता स्वेच्छापूर्वक चरखा संघके द्रव्य या नामका दुरुपयोग करे तो चन्दा देनेवालोंमें से कोई भी उसका हाथ पकड़ सकता है। जो संस्था दानसे चलती है वह सार्वजनिक है और उसकी सुव्यवस्थापर सिर्फ दानियोंका ही नहीं बल्कि सारी जनताका हक है। यह सीधी-सादी बात सभी नहीं जानते; और जो जानते भी हैं या तो निष्क्रिय होते हैं अथवा स्वार्थी। इसलिए बहुत-सी संस्थाओंमें बेईमानी चलती है और पैसेका दुरुपयोग होता है। पर इसके लिए जवाबदेह है केवल सर्वसाधारण जनता, जहाँ समाज सोया हुआ, आलसी, बेफिक्र या स्वार्थी है वहाँपर दंभी, लुच्चे वगैरहकी बन आती है और वे मनमानी करने लगते हैं।

अब दूसरा सवाल लें।

यह बात बिलकुल ठीक है कि बिहारकी खादी और बंगालकी खादीके दामोंमें फर्क है। पर उसका कारण यह नहीं है कि दलाल लोग बीचमें नफा खाते हैं। बिहार और बंगालकी कार्यपद्धतिमें कुछ फर्क है और इससे बंगालमें खादी पैदा करनेका खर्च अधिक आता है। पर मुख्य कारण तो यह है कि बंगालमें बुननेवालों और कातनेवालोंको कुछ अधिक देना पड़ता है। बंगालकी संस्थाओंके ऊपर भी चरखा संघकी देखरेख और अंकुश तो है ही। खादी कार्य है ही ऐसा कि उसमें अभी हालमें तो अलग-अलग प्रान्तोंमें अलग-अलग भाव रहेंगे। गुजरातकी खादी शायद बंगालसे भी मँहगी होगी। बिहारसे तो महँगी है ही। इसका कारण यह नहीं है कि बीचमें कोई दलाली खा जाता है। राजपूतानेकी खादी शायद बिहारसे भी सस्ती है। तमिलनाडुकी कितने ही प्रकारकी खादी तो निश्चय ही सस्ती है। मैं इसमें कोई परेशानीकी बात नहीं देखता। खादी-की मारफत हम गरीबोंको उनकी अपनी ही जगहपर निभाना चाहते हैं। इसमें किसी जगह कम खर्च आयेगा और किसी जगह अधिक। हमें खयाल इसीका रखना चाहिए

कि सारे धनका अधिक भाग गरीबोंके ही हाथमें जाये। जितनी सावधानीसे इसका ख्याल रखा जा सके, उतनी सावधानीसे इसका ख्याल रखना चरखा संघका काम है, ऐसा ही होता भी है। यह भी याद रखना चाहिए कि बंगाल ही केवल एक प्रान्त है जो अपने यहाँ पैदा होनेवाली लगभग सारी खादी अपने ही प्रान्तमें यानी बंगालमें ही खपा लेता है।

आखिरी सवाल।

मेरी जानकारीके मुताबिक तो खादीकी कीमत सारे हिन्दुस्तानमें घटी है। यही नियम बंगालकी खादी पर भी लागू होता है। जहाँ खादीकी किस्म सुधरी है और कीमत जैसीकी तैसी बनी हुई है, वहाँ भी वह घटी ही कही जायेगी। सामान्य रीतिसे सारे भारतवर्षके लिए यों कहा जा सकता है कि औसत कीमतें कमसे-कम पच्चीस प्रतिशत कम हुई हैं। कई जगहोंपर कई किस्मके कपड़ोंपर तो वे पचास प्रतिशततक कम हुई हैं। अभी हालमें मुख्य ध्यान तो खादीकी किस्म सुधारनेकी ओर दिया जा रहा है।

यह वांछनीय है कि ये बिहारी खादी-भक्त खादीमें जैसी दिलचस्पी लेते हैं, सभी खादी-भक्त वैसी ही दिलचस्पी लें। शंकानिवारण दिलचस्पीको बढ़ानेमें मददगार बन जाता है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि जिन्हें सच्ची और ठीक शंकाएँ हों वे 'नवजीवन' द्वारा अपनी शंकाओंका निवारण करायें।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २०-११-१९२७

१९२. भाषण : नुवारा इलियामें

२० नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय, देवियो और सज्जनो,

मैं आपको आपके अभिनन्दनपत्र तथा आपकी थैलीके लिए धन्यवाद देता हूँ। हर जगह मेरे भाषणका सिंहली और तमिल भाषाओंमें अनुवाद किया गया है। लेकिन यहाँ चूंकि मैं देखता हूँ कि आपमें से अधिकांश लोग तमिल हैं, इसलिए मैंने स्वागत समितिके अध्यक्षको सुझाव दिया कि सिंहली भाषामें अनुवाद न किया जाये ताकि आपका और मेरा समय बच सके, और मैं आशा करता हूँ कि आप इस व्यवस्थाको स्वीकार कर लेंगे। महोदय, आपने अपने अभिनन्दनपत्रकी सादगीके लिए क्षमा माँगी है। इसमें न केवल क्षमा माँगनेकी कोई जरूरत नहीं थी, बल्कि इसके विपरीत आपने जो पैसा बचाया है उसके लिए आप मेरी हार्दिक बधाईके पात्र हैं। मैं भारतके भूखसे पीड़ित लोगोंका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करता हूँ और आप जो भी पैसा इकट्ठा करते हैं उसकी एक-एक दमड़ीको उन क्षुधा पीड़ित करोड़ों लोगोंकी खातिर बचानेके मामलेमें मैं या आप जितनी भी कड़ाई बरतें वह कम है। फूलोंपर तथा अन्य सजावटोंपर खर्च होनेवाले एक-एक रुपयेका मुझे मलाल होता है। आप याद रखें कि इस प्रकार हरएक रुपया

जो आप बचायेंगे, उसके मतलब होंगे सोलह भूखी स्त्रियोंके लिए भोजन, और मैं उन्हीं भूखी स्त्रियोंकी ओरसे आपका समर्थन प्राप्त करनेके लिए आपके द्वीपमें आया हूँ। मेरे लिए यह बहुत खुशीकी बात है कि यहाँके लोगोंने मेरी अपीलका बड़ी उदारतासे जवाब दिया है। मुझे बताया गया है कि यह थैली श्रमिकों और कंगानियों[1] तथा इसी प्रकारके लोगों द्वारा स्वेच्छासे दिये गये चन्देसे इकट्ठा की गई है। मैं इस उदारताका प्रत्युत्तर केवल कोरे धन्यवादसे ही दे सकता हूँ, लेकिन मैं यह अवश्य जानता हूँ कि इस थैलीके लिए जिस-जिसने स्वेच्छासे चन्दा दिया है उसे ईश्वर सुखी रखेगा। आप अपने ऐश्वर्य-प्रसाधनों, इत्र, खिलौनों, गहनों तथा दिखावटी बढ़िया कपड़ोंपर जो भी पैसा खर्च करते हैं वह तो धनकी बर्बादी मात्र है; लेकिन आप इत्मीनान रखें कि इस उद्देश्यके लिए दिया गया हर रुपया, हर गिन्नी दस गुनी मात्रामें आपके पास लौटेगी, और यदि इस सभामें कोई लोग ऐसे हों जिन्होंने इस थैलीमें चन्दा नहीं दिया है अथवा जिनसे किसीने माँगा नहीं है, तो मैं उनसे कहूँगा कि मेरे भाषणके दौरान वे धीरेसे अपना चन्दा मेरे पास भेज दें। बादुल्लाकी सभामें जैसी उदारता दिखाई गई, और सभामें मेरी अपीलका जैसा जवाब मिला उससे मेरा हौंसला बढ़ा है कि मैं आपसे यह अपील करूँ। आप जानते हैं कि भारतके लाखों गाँवोंमें प्रत्येक घर इस समय जर्जर हो गया है क्योंकि ये बेचारे लोग कृषिसे होनेवाली अपनी आयको जिस एकमात्र उद्योगके सहारे पूरा करते थे उस उद्योगसे उन्हें वंचित कर दिया गया है। मैं आशा करता हूँ कि मित्र लोग जब चन्दा इकट्ठा कर रहे हों उस समय कोई शोर नहीं किया जायेगा। आप मेरे बोलते समय कृपया शांति रखें क्योंकि मैं उन मजदूरोंसे जो इस सुन्दर पहाड़ीके चारों ओर फैले पड़ौसके बागानोंसे आये हैं और जो मेरे सामने और पीछे दिखाई पड़ रहे हैं, एक व्यक्तिगत अपील करना चाहता हूँ।

आप मजदूरोंसे मैं चाहता हूँ कि आप समझ लें कि मैं भी आपमें से एक हूँ और करीब ३० वर्ष पहले जब मैं दक्षिण आफ्रिका गया था, तभीसे मैं अपना भाग्य आपके भाग्यके साथ जोड़ता रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप पुरुष और स्त्रीके रूपमें अपनी गरिमाका अनुभव करें, उसे पहचानें। आप मजदूर हैं, इस कारण अपने आपसे हिकारत मत कीजिए और न किसी दूसरेको करने दीजिए। सच्चे श्रममें न कभी शर्म थी और न है। इन पहाड़ियोंके चारों ओर मजदूरोंके अस्तित्वके अभावमें इन इलाकोंकी आज जो स्थिति है वह असम्भव थी, लेकिन यदि आपको अपनी गरिमाकी रक्षा करनी है, तो उसके साथ कुछ सुनिर्धारित शर्तें जुड़ी हुई हैं। सबसे पहली और जरूरी शर्त है कि आप शराबकी दूकानोंके पास भी न फटकें। शराब ऐसा शैतान है जिसके जालमें आपको नहीं फँसना चाहिए। शराबके प्रभावमें आया हुआ आदमी अपनी पत्नी और बहनोंके बीचका भेद भूल जाता है। इसलिए यदि आपने शराब अबतक न छोड़ दी हो तो आप पवित्र संकल्प करें कि आप इस अभिशप्त जलके स्पर्शसे अपने होंठ गन्दे नहीं करेंगे, बल्कि यदि स्वयं अपने लिए और अपने परिवारोंके लिए खाने-कपड़ेका इन्तजाम करनेके बाद आपके पास अलग रखनेको कुछ पैसा बच रहे तो उसे ज्यादा अच्छे उद्देश्यके लिए

१. मजदूरोंके ठेकेदार।

रखें, अपने बच्चोंको शिक्षा देनेके लिए रखें, उस दिनके लिए रखें जब आपके हाथ-पाँव अशक्त हो जायें और आपके लिए आराम करनेका समय आ जाये। यह सारी बचत आपके काम आयेगी, और मैं आपसे कहूँगा कि आप ईश्वरके नामपर उस बचतका कुछ अंश उन लोगोंकी खातिर भी इस्तेमाल कीजिए जो आपकी अपेक्षा कहीं अधिक गरीब हैं।

मैं यह भी जानता हूँ कि आपमें से बहुतसे लोग शुद्ध जीवन व्यतीत नहीं करते। अपवित्र जीवन जीना गलत है। धरतीके सारे प्राणियोंमें केवल मनुष्यको ही ईश्वरने ऐसा रचा है जो स्त्रियोंमें बहन, बेटी, माँ और पत्नीमें भेद कर सकता है। ऐसी परिस्थितियोंमें रहनेसे इनकार कर दीजिए जिनमें आपके लिए अनुशासन, पवित्रता और संयमका जीवन जीना असम्भव हो। मेरी कामना है कि मेरी आवाज आपके मालिक लोग सुनेंगे, क्योंकि मैं जानता हूँ वे इस बातका ध्यान रखेंगे कि आपके दैनिक जीवनमें वे व्यक्तिगत दिलचस्पी लें। मैं जानता हूँ कि आपमें से बहुतसे लोग अपने खाली या फालतू वक्त और धनको जुआ खेलनेमें बर्बाद करते हैं। आपको अपने खाली समयका ऐसा दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। चूँकि आपको अपने बागानोंमें खुली हवामें रहनेकी पर्याप्त सुविधा है इसलिए मैं आपको सलाह दूँगा कि आप अपना खाली समय अपनी बुद्धिको विकसित करनेमें लगायें। और यदि आपके पास फालतू समय हो तो अपने और अपने परिवारके लिए आप सूत कातें।

मैं जानता हूँ कि आप जब इस द्वीपमें आते हैं तो अपने साथ अस्पृश्यताका अभिशाप भी ले आते हैं। मैं आपको बताता हूँ कि हिन्दू-धर्ममें अस्पृश्यताका कोई औचित्य नहीं है। एक भी मनुष्यको अस्पृश्य समझना गलत है, और मैंने जो बातें आपको बताई हैं यदि आप उन्हें ध्यानमें रखेंगे, और उनपर अमल करेंगे तो आप देखेंगे कि आप कहीं ज्यादा अच्छे पुरुष और कहीं ज्यादा अच्छी स्त्रियाँ बन जायेंगे।

कोलम्बोसे प्राप्त एक पत्रमें मुझको याद दिलाई गई है कि लंकाके बहुतसे बागानोंमें अंकुश कृमिका रोग बहुत होता है। इस रोगसे पूरी तरह बचा जा सकता है, और मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि आपके मालिक लोग आपको उस रोगसे बचनेका उपाय नहीं सिखा सके हैं। मैं निश्चित रूपसे जानता हूँ कि यह रोग केवल गन्दगीके कारण होता है। जो पत्र मुझे मिला है उसमें कहा गया है कि कुछ उपाय हैं जो काफी अच्छे हैं, और यदि ऐसे उपचार हों तो आप निश्चय ही उनका प्रयोग कर सकते हैं — विशेष रूपसे यह देखते हुए कि इस रोगकी रोक-थाम बहुत आसानीसे हो सकती है। मुख्य चीज यह है कि आप अपनी स्वच्छता-सफाईका ध्यान रखें। मुझे यह मानते हुए दुख होता है कि सफाई-स्वच्छता सम्बन्धी आपके तरीके बहुत ठीक नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि यदि बागान-मालिक लोग आपको स्वास्थ्य-सम्बन्धी शिक्षा देनेके लिए समुचित कार्रवाई करेंगे तो वे स्वयं अपने प्रति, आपके प्रति और मानवताके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करेंगे। यह रोग पानीको गन्दा करने और उसी पानीको सभी तरहके कामोंमें इस्तेमाल करनेसे होता है। यदि आप स्वास्थ्य-विषयक बुनियादी बातोंको समझें और सीखें, और यदि आप पीनेके पानीको कपड़ा धोकर या

अन्य प्रकारसे गन्दा न करें तो अंकुश-कृमिकी बीमारी आपको कभी नहीं होगी। मैं आपके अभिनन्दनपत्र तथा उदारतापूर्वक दी गई थैलीके लिए एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
विद गांधीजी इन सीलोन

१९३. पत्र : मीराबहनको

कैण्डी
सोमवार, २१ नवम्बर, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्र मिले।

यदि छोटेलालकी हालतमें वहाँ सुधार न हो सकता हो तो उसे वायु-परिवर्तनके लिए बाहर जाना चाहिए। देखना वह क्या करता है। त्यागीजीको यदि दूसरे हमलेसे बचना है तो उन्हें मुख्यतः दूधपर रहना चाहिए। भणसालीके लिए मुझे चिन्ता बनी हुई है। खुशी है कि पारनेरकर चले गये। बेहतर यही है कि पूरी तरह स्वस्थ होनेसे पहले वह न लौटें। तुम्हारे बाहर रहनेपर सुरेन्द्र तुम्हारी जगह बछड़ी ले सकता है। मैं २ दिसम्बरको बरहामपुर पहुँचूंगा। तुम अपने आनेकी ठीक तारीख, समय और मार्ग बाबू निरंजन पटनायक, खादी डिपो, बरहामपुर (जिला गंजम)को तार या पत्रसे सूचित कर देना। गो-पालनपर दो या तीन पुस्तकोंसे ज्यादा मत पढ़ो। मैं नहीं समझता कि उड़ीसामें तुम्हारे पास अध्ययनके लिए उतना समय होगा जितना तुम सोचती हो।

मुझे याद पड़ता है कि मैंने तुम्हें [अपनी] माँ से चाहे जितनी किताबें और चीजें आदि न मँगानेको कहा था। लेकिन गो-पालन-सम्बन्धी साहित्यके मामलेमें इस नियममें छूट ली जा सकती है। उनके परिचित विशेषज्ञ जिन पुस्तकोंकी सिफारिश करें, ऐसी सभी पुस्तकें वह भेज सकती हैं।

मिलनेसे पहले यह मेरा अन्तिम पत्र है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९४) से।
सौजन्य : मीराबहन

१९४. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२१ नवम्बर, १९२७

प्रिय सतीश बाबू,

तो अब आपने एक भाई खो दिया। अगर हम सीखें तो प्रियजनोंकी मृत्युमे हमें बहुत शिक्षा मिलती है। जन्मकी तरह ही वह भी सदा हमारे साथ रहती है। हर व्यक्तिको इस बातका ज्ञान है, लेकिन समय आनेपर हममें से कितने कम लोग उससे लाभ उठा पाते हैं, और जाने क्यों, हम हिन्दू लोग, जिन्हें मृत्युसे सबसे कम प्रभावित होना चाहिए, मुझे लगता है, हमी लोग उससे सबसे ज्यादा दुखी होते हैं। क्या आपने 'महाभारत' में युद्धमें मरनेवालोकी मृत्युपर लोगोने जैसा लज्जाजनक विलाप किया है उसे पढा है? मैं यह आपके लिए नही लिख रहा हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि आप अपेक्षतया सुचित्त हैं। मुझे हेमप्रभादेवीके बारेमें [सन्देह है][1]। मैं चाहूँगा कि आप अपनी टिप्पणीके साथ इस पत्रका अनुवाद उनके सामने कर दें।

आपने जो खादी भेजनेका वादा किया था वह मुझे नहीं मिली। अगर आपने भेज दी होती तो मैं समझता हूँ कि मैं वह सब यहाँ बेच देता। मैं २ दिसम्बरको बरहामपुर, जिला गंजम पहुँचनेकी आशा करता हूँ। मैं २९ तारीखको लंकासे चलूँगा। २५ को कोलम्बोसे चलूँगा और २६ को जफना पहुँचूँगा।

सप्रेम,

आपका,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५७९) की फोटो-नकलसे।

१९५. पत्र : हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

कैण्डी
सोमवार [२१ नवम्बर, १९२७][2]

प्रिय भगिनी,

तुमारा खत मीला है।

सतीशबाबुके भाईके स्वर्गवास [से] तो दुःखी नहिं हुई होगी। जन्मने सुख क्या मरणसे दुःख क्या? यह तो गीतावाक्य है। निखिलका स्वास्थ्य अबतक अच्छा नहिं रहता है इससे तुमको बहोत व्यथा होती है मैं देख रहा हुं। मैं कैसे आश्वासन दे सकुं? सब ज्ञानका उपयोग यदि हम ऐसे समय पर न कर सके तो ज्ञानका कुछ

१. यहाँ कुछ शब्द अस्पष्ट हैं।
२. गांधीजी इस दिन कैण्डीमें थे।

उपयोग हि नहिं है। इस वातका निश्चय करके अपना कर्त्तव्य हि सुख और शांति समज कर स [मय] व्यतीत कीजीयो।

लंकाकी मुसाफरीमें उद्यम तो बहोत रहता है परंतु मुल्क वहोत रमणीय है। हवा ठंडी है इससे कुछ दुःख नहिं होता है।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० १६६० की फोटो-नकलसे।

१९६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

सोमवार, २१ नवम्बर, [१९२७][1]

बहनो,

तुम्हारी तरफसे इस बार अभीतक पत्र नहीं मिला। लंकामें इतना ज्यादा घूमना होता है कि पत्र कोलम्बोसे तुरन्त नहीं पहुँच सकते।

लंकाकी स्त्रियोंको देखकर अकसर आश्रमकी स्त्रियाँ याद आती हैं। एक तरफ स्त्रियोंकी पोशाक सादी है, यह तो लिख ही चुका हूँ। दूसरी तरफ, बड़े घरोंकी स्त्रियोंने शौक इतना ज्यादा बढ़ा लिया है कि उनके शरीरपर रेशम और जरीके सिवा कुछ भी नहीं पाया जाता। मेरी नजरमें तो यह बिलकुल शोभा नही देता। मै मनसे यह पूछता रहता हूँ कि ये स्त्रियाँ ऐसी पोशाक किसे दिखाने या रिझानेको पहनती होंगी। यहाँ पर्दा तो है ही नहीं।

स्त्रियाँ इतना सारा बनाव-सिंगार किसलिए करती है इस सवालका उत्तर जितना मै दे सकता हूँ उससे तुम ज्यादा दे सकती हो। किन्तु यह सब देखकर मुझे यह खयाल तो आता ही है कि आश्रममें जो कमसे-कम शृंगार करनेकी रुढ़ि चल पड़ी है, वह अच्छा ही हुआ। मेरा मन यह तो नहीं मानता कि आश्रममें शृंगार बिलकुल है ही नही। तुम्हारा [मन] मानता हो तो कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७७) की फोटो-नकलसे।

१. पत्रसे प्रगट है कि गांधीजी इस समय लंकामें थे, वर्षका निश्चय उसीके आधारपर किया गया है।

१९७. पत्र : आश्रमके बालकोंको

२१ नवम्बर, १९२७

कैण्डी शहरकी अपनी स्वाभाविक सुन्दरता इतनी श्रेष्ठ है कि उसे देखते हुए मन थकता ही नही। सारा प्रदेश छोटी-छोटी पहाड़ियो, वनस्पति और हरियालीसे इतना भरपूर है कि कही कोई सूखी जगह तो नजर ही नही आती। ऐसे स्थानमें घूमना मुझे बहुत भाया। काकासाहब कुछ कामकी बात कह रहे थे इसलिए मेरे कान वहाँ थे किन्तु आँखें तो ईश्वरकी इस लीलाको ही देखनेमें निमग्न थी। सोचता हूँ कि [प्रकृतिके] इन विशाल मन्दिरोके होते हुए भी ईश्वरका ध्यान करनेके लिए लोग लाखो अथवा करोडो रुपया खर्च करके [कृत्रिम] विशाल मन्दिरोका निर्माण क्यों करवाते हैं? इन मन्दिरोसे क्या सचमुच धर्मकी कोई पुष्टि हुई है? इस प्रश्नपर तुम लोग विचार करना और अपना निर्णय मुझे बताना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१९८. पत्र : वि० ल० फड़केको

सोमवार [२१ नवम्बर, १९२७][1]

भाईश्री ५ मामा,

तुम्हारा पत्र मिला। जब मुझे तुम्हारा 'बरतेज' वाला लेख पढनेको मिला उस समय तो तुमने उसे प्रकाशित करनेकी इच्छा व्यक्त नही की थी न? मुझे तो मालूम ही नही कि मीठूबाईका भाषण छप गया है। किन्तु यह सही है कि बाढ-पीड़ितोंसे सम्बन्धित लेख सीधे प्रेसको भेज दिया गया था। यदि बरतेजवाली टिप्पणीमें कुछ विशेषता थी तो उसपर 'विशेष' लिखकर उक्त टिप्पणी सीधे मुझे भेजनी चाहिए थी। पंचमहालके अन्त्यजोमें दौरा करना उचित हो तो क्या तुम्हें ऐसा नही लगता कि यह कार्य तुम स्वयं ही कर सकते हो? किन्तु उनके बीच घूमना-फिरना भी तो आना चाहिए न? नानाभाईसे विनती करते रहो। यदि तुम काकाको लिखोगे तो वे भी

१. डाककी मुहरसे।

लिखेंगे . . . ऐसा काका कहते हैं। तुम्हारे . . . साथ रहा। वाकी . . . वात वे भूल . . . नही।[1]

बापूके आशीर्वाद

भाईश्री ५ मामा
अन्त्यज आश्रम
गोधरा, बी० बी० सी० आई० रेलवे
भारत

गुजराती (जी० एन० ३८१८ (२)) की फोटो-नकलसे।

१९९. भाषण: स्त्रियोंकी सभा, कोलम्बोमें[2]

२२ नवम्बर, १९२७

मैं महिलाओंकी ऐसी सभाओंका आदी हूँ जहाँ हजारों बहनें अपनी स्वाभाविक अवस्थामें आती हैं और जहाँ [श्रोताओंसे मेरा] हार्दिक सम्बन्ध होता है। मैं नही समझता कि अस्वाभाविक-सी इस सभाके बारेमें भी मैं वही वात कह सकता हूँ।

भूखों मरते हुए लाखों लोगोंका एक सजीव चित्रण स्त्रियोंके सामने प्रस्तुत करनेके बाद गांधीजीने कहा:

जब महेन्द्र लंका आये थे उस समय मातृभूमि [भारत] के बच्चे भूखों नहीं मर रहे थे, न तो भौतिक अर्थमें और न आध्यात्मिक अर्थमें; तथा उस समय हमारा सितारा बुलन्दीपर था और आपने उस गौरवमें हिस्सा बँटाया। आज बच्चे भूखों मर रहे हैं, और उन्हीकी ओरसे मैं भिक्षा-पात्र लेकर यहाँ आया हूँ, और यदि आप उनके साथ अपने सम्बन्धोसे इनकार नही करती हों, बल्कि उस सम्बन्धमें कुछ गर्वका अनुभव करती हों तो जैसा कि बहुत-सी जगहोपर बहनोंने किया है, आप मुझे अपना पैसा ही नही, बल्कि अपने जेवर भी दें। जहाँ भी मैं बहनोको जेवरोंसे खूब लदा हुआ देखता हूँ, मेरी भूखी आँखें उन गहनोंपर टिक जाती हैं। गहनोकी माँग करनेमें एक छिपा हुआ मंशा भी होता है, और वह है स्त्रियोंको गहने और जेवरोंकी बेहद लालसासे मुक्त करना। जो स्वतन्त्रता मैं अन्य बहनोंके साथ लेता हूँ, यदि वही आपके साथ भी ले सकूँ तो मैं आपसे पूछता हूँ कि वह कौनसी चीज है जिसके कारण स्त्री पुरुषोंकी अपेक्षा ज्यादा जेवर लादती है? महिला मित्रोंने मुझे बताया है कि औरत पुरुषको

१. साधन-सूत्र (पोस्ट कार्ड) कटा-फटा होनेके कारण यह अंश छूट गया है।

२. "हॉन्टिंग मेमोरी" शीर्षकसे प्रकाशित अपने लेखमें महादेव देसाईने इस सभाके बारेमें लिखा है: "गांधीजीने दक्षिण भारतकी स्त्रियोंकी सभाओं जैसी एक सभाकी आशा की थी जिसमें हजारों स्त्रियाँ होंगी। लेकिन उसकी जगह मुश्किलसे एक दर्जन औरतोंकी एक सभा एक शानदार भवनके ड्राइंग रूममें हुई। इसे सार्वजनिक सभाकी संज्ञा देना सही नहीं था। . . . एक क्षण तो ऐसा लगा जैसे वह (गांधीजी) कुछ नहीं बोलेंगे और अपने कार्यक्रममें लिखे दूसरे समारोहमें चले जायेंगे। लेकिन उन्होंने देखा कि इसमें जो स्त्रियाँ उपस्थित थीं उनका कोई दोष नहीं था। . . . अतः उन्होंने उनके सामने भाषण दिया।"

प्रसन्न करनेके लिए ऐसा करती है। मैं आपसे कहता हूँ कि यदि आप संसारके विविध कार्योंमें अपनी भूमिका निभाना चाहती हैं तो आपको पुरुषोंको प्रसन्न करनेके लिए गहनोंसे सजनेसे इनकार कर देना चाहिए। यदि मैं स्त्री जन्मा होता तो मैं पुरुषके इस दम्भके विरुद्ध विद्रोह कर देता कि स्त्री तो उसके खेलनेकी चीज है और इसीलिए पैदा हुई है। स्त्रीके मनमें प्रवेश करनेकी नीयतसे मैं मानसिक रूपसे स्त्री ही बन गया हूँ। मैं अपनी पत्नीके साथ जैसा व्यवहार किया करता था उससे भिन्न व्यवहार करनेका जबतक मैंने निश्चय नहीं किया तबतक मैं उसके हृदयमें प्रवेश नहीं कर सका। अब मैंने उसके पतिकी हैसियतसे अपने सभी तथाकथित अधिकारोंको छोड़कर उसको उसके सारे अधिकार प्रदान कर दिये हैं। आज आप देखेंगे कि वह मेरी ही तरह सीधी-सादी है। आप उसके अंगपर कोई नेकलेस या बढ़िया कपड़े नहीं पायेंगी। मैं चाहता हूँ कि आप भी उसीकी तरह हो जायें। आप अपनी खुदकी सनक और पसन्दकी गुलाम होनेसे और अपने पुरुषोंकी गुलाम होनेसे इनकार कर दें। अपनेको सजाइए मत, इत्र और लवेंडरके पीछे मत जाइए; यदि आप सुगन्धित होना चाहती हैं तो वह सुगन्ध आपके हृदयसे निकलनी चाहिए, और तब आप पुरुषको ही नहीं, मानवताको भी अपने वशमें कर लेंगी। आपका यह जन्म-सिद्ध अधिकार है। पुरुष स्त्रीसे पैदा होता है, वह स्त्रीका ही हाड़-मास है। अपनी शक्ति पहचानिए और अपना सन्देश एक बार फिर दीजिए।

गांधीजीने सीताकी शुद्धताकी शक्तिका उदाहरण दिया, और कुमारी श्लेसिनका उदाहरण दिया जो अपनी शुद्धता और हृदयकी निर्भीकताके कारण दक्षिण आफ्रिकामें हजारों लोगोंकी प्रशंसा-पात्र थीं, जिनमें खूंख्वार पठान, लुटेरे और दुश्चरित्र लोग भी शामिल थे। उन्होंने बताया कि सच्ची गरिमा किस चीजमें है।

क्या आप बागानोंमें अपनी बहनोंकी दुर्दशाको जानती हैं? उन्हें अपनी बहनों जैसा मानिए, उनके बीच जाइए, और सफाई-सम्बन्धी अपने बेहतर ज्ञान तथा अपनी प्रतिभासे उनकी सेवा कीजिए। आपकी गरिमा उनकी सेवामें हो। क्या सेवाके लिए कहीं दूर जानेकी जरूरत है? ऐसे लोग हैं जो दुष्ट हैं; शराबी हैं जो समाजके लिए खतरा हैं, उनके बीच निर्भीकतापूर्वक जाइए और उनकी दुष्टतासे उनको मुक्त कीजिए, उसी प्रकार जिस प्रकार "साल्वेशन आर्मी" की स्वयंसेविकाएँ निर्भीकता-पूर्वक चोरों और जुआरियों और शराबियोंके अड्डोंपर जाती हैं, और उनके गले और पैरों पड़कर उन्हें सही रास्तेपर ले आती हैं। यह सेवा आपको कहीं ज्यादा फबेगी — आपने जो यह अच्छे कपड़े पहन रखे हैं, इनसे भी ज्यादा। तब आप जो धन बचाएँगी, उसका मैं न्यासी होऊँगा और उसे गरीबोंमें बाँटूंगा।

मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि यह जो सन्देश मैंने आपको दिया है, आपके हृदयमें स्थान पाये।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

२००. भाषण : जाहिरा कालेज, कोलम्बोमें

२२ नवम्बर, १९२७

इस कालेजमें आ सकनेकी मुझे वाकई बहुत खुशी हुई है।

आपने मुझे उन सुखद दिनोंकी याद ताजा करा दी है जो मैंने दक्षिण आफ्रिकामें बिताये थे। उन दिनों मेरा जीवन लगभग पूरी तरह मेरे मुसलमान देशभाइयोंके साथ जुड़ा हुआ था और १८९३ के आरम्भमें मुझे कुछ बहुत ही अच्छे मुसलमानोके सम्पर्कमें आनेका तथा उनको प्रभावित करनेका सौभाग्य मिला था। इसीलिए आपने जो मुझे इस हॉलमें निमन्त्रित किया है उसपर मुझे कोई आश्चर्य नही है।

मौलाना शौकत अलीने लंकासे लौटनेपर लंकाके मुसलमानोंकी ओरसे मुझे सन्देश दिया था कि मै जल्दसे-जल्द लंका आऊँ। लेकिन वह और मै, हम दोनों जिस काममें लगे हुए थे उसके कारण उस समय मेरा यहाँ आना सम्भव नहीं हो सका।

आपमें से जो लोग भारतीय समाचारपत्र पढ़नेके आदी हैं वे यह जानते होंगे कि कोलम्बो रवाना होनेसे कुछ देर पहले ही मुझे दिल्ली स्थित जामिया कालेजके प्रोफेसरों और विद्यार्थियोंसे भेंट करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मेरे पास आपके सामने कोई बाकायदा भाषण दे सकनेका समय नहीं है क्योंकि अभी मुझे और बहुतसे कार्य निपटाने हैं, लेकिन दिल्लीमें विद्यार्थियोंके समक्ष जो भाषण[1] मैंने दिया था उसका सार मैं दे दूंगा।

इस महान कालेजमें आप जो-कुछ शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं यदि उसका निर्माण निर्मल चरित्रकी बुनियादपर नहीं हुआ तो वह व्यर्थ रह जायेगी।

जिस उत्साहके साथ यहाँ काम किया जा रहा है तथा कुछ ही वर्षोंमें जो अभूतपूर्व उन्नति की गई है उसके बारेमें आपकी पत्रिकाओंमें पढ़ते समय मैं सराहना किये बिना नही रह सका। लेकिन जब मै शिलान्यास-समारोहके अवसरपर गवर्नरके सामने पढ़ी गई रिपोर्टको देख रहा था तो उस समय मुझे यह अनुभव हुआ कि क्या ही अच्छा हो यदि हम निर्मल चरित्रकी बुनियाद तैयार कर सकें जिसपर [गुण रूपी] पत्थरपर-पत्थर चुने जायें और जब एक इमारत तैयार हो जाये तो हम उसे हर्ष और गर्वके साथ देख सकें। लेकिन चरित्रका निर्माण गारा और पत्थरसे नहीं किया जा सकता; और न ही इसका निर्माण आपके अलावा किसी दूसरेके हाथोंसे हो सकता है। प्रिंसिपल और प्रोफेसर पुस्तकों द्वारा आपका चरित्र नहीं बना सकते। चरित्रका निर्माण तो उनके जीवनको देखकर होता है और सच पूछिए तो, इसे आपको स्वयं बनाना होता है।

ईसाई-धर्म, हिन्दू-धर्म तथा संसारके अन्य महान धर्मोंका अध्ययन करते हुए मैंने देखा कि सब धर्मोंमें अपार भिन्नता रहते हुए भी एक बुनियादी एकता तो है ही

१. देखिए "भाषण : जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्लीमें", २-११-१९२७।

और वह है — सत्य और निष्पापत्व। 'निष्पापत्व' को आपको शब्दशः स्वीकार करना चाहिए, जिसका अर्थ है जीवहत्या और हिंसा न करना। यदि आप सब लड़के उटकर सदैव सत्य और निष्पापत्वपर दृढ़ रहेंगे तो आपको यह लगेगा कि आपने ठोस बुनियाद तैयार कर ली है।

आपने जो उदार थैली मुझे भेंट की है उसके लिए मैं आभारी हूँ। इसका उद्देश्य भारतके लाखों क्षुधा-पीडितोंको काम दिलाना है। इनमें हिन्दू, मुसलमान और ईसाई सब शामिल हैं। इसलिए आपने मुझे यह दान देकर इन लाखों क्षुधा-पीडितों और अपने बीच एक सम्बन्ध स्थापित कर लिया है, और ऐसा करके आपने वह चीज कर दिखाई है जो ईश्वरको प्रिय है। यदि आपको यह पता नहीं होगा कि इस थैलीका उपयोग किस काममें किया जाता है तो यह सम्बन्ध बड़ा ढीला रह जायेगा। इन रुपयोंका उपयोग जैसा वस्त्र मैंने पहन रखा है उस वस्त्रके उत्पादनके निमित्त पुरुषों और स्त्रियोंको काममें लगानेके लिए किया जाता है। यदि आपको इस प्रकार तैयार होनेवाली खादीको पहननेवाले लोग नहीं मिल सके तो यह सारा रुपया बेकार हो जायेगा।

अब हम हर रुचि और फैशनकी परितुष्टि कर सकते हैं। यदि आप भारतके लोगोंके साथ स्थायी और अटूट सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं तो आप आगेसे खादी पहनने लगेंगे।

[अंग्रेजीसे]
विद गांधीजी इन सीलोन

२०१. भाषण : कोलम्बोमें पारसियोंके समक्ष

२२ नवम्बर, १९२७

आपने मुझे एक बाकायदा अभिनन्दनपत्र भेंट न कर सकनेके लिए क्षमा माँगी है। आपका अभिनन्दनपत्र तो आपके हृदयोंपर अंकित है जो कि आपने मेरे सामने खोल दिये हैं।

पारसियोंके साथ मैं एक विचित्र सम्बन्धसे बँधा हुआ हूँ। मैं जहाँ कहीं भी उनके सम्पर्कमें आया हूँ, उन्होंने मुझपर — एक हिन्दूपर — जो स्नेह बरसाया है, वह एक ऐसी बात है जिसे समझाया नहीं जा सकता और न जिसका रहस्य समझा जा सकता है।

मैं जहाँ कहीं भी गया हूँ पारसी भाइयोंने मुझे ढूंढ निकाला है। जिस समय मुझे कोई जानता तक न था और मेरे ऊपर महात्मापनका बोझ भी नहीं लादा गया था, ऐसे समयमें एक पारसीने मुझसे मित्रता की और मुझे अपना बनाया। मेरा अभिप्राय दक्षिण आफ्रिकाके प्रसिद्ध दिवंगत पारसी रुस्तमजीसे है।

जिस समय १८९६ में डर्बनमें उतरते हुए दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीयोंने मुझे घेर लिया और मारपीट की उस समय पारसी रुस्तमजीने अपनी जान और मालका गम्भीर खतरा उठाकर मुझे और मेरे परिवारको संरक्षण दिया। भीड़ने उनका घर

फूंक देनेकी धमकी दी; लेकिन रुस्तमजीको, जिन्होंने हमें अपने घरमें पनाह दी थी, कोई विचलित नही कर सका। तबसे लेकर मेरे साथ अपने आजीवन मैत्रीकालमें उन्होंने मेरी और मेरे आन्दोलनोकी सहायता की। और १९२१ में तिलक स्वराज्य कोषके लिए दिया गया उनका दान विदेशमें रहनेवाले किसी भारतीय द्वारा दिया गया सबसे बड़ा दान था।

श्री (बादमें सर) रतन टाटाने मुझे दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रहके दौरान उस समय २५,००० रुपयेका एक चेक भेजा था जिस समय मुझे रुपयेकी अत्यधिक आवश्यकता थी। और दादाभाई नौरोजी! उनका मेरे ऊपर जो ऋण है उसका मैं कैसे बखान कर सकता हूँ? उन्होंने मुझे ऐसे समयमें सहारा दिया जबकि मैं इग्लैंडमें एक अनजान और बेसहारा नवयुवक था। और आज उनकी पौत्रियाँ मेरे खादीके कार्यमें मेरे लिए बहुत बड़ा सहारा है।

मैं चाहता हूँ कि आप अपने पूर्वजोकी परम्पराको कायम रखें और पश्चिमकी दिखावटी फैशनकी नकल करके उनकी [पूर्वजोंकी] सादगी और मितव्ययिताको न भुलायें। आपका समाज अपनी दानशीलताके लिए ससार-भरमें प्रसिद्ध है और दानशीलताके साथ ऐशोआराम पसन्दगी और फिजूल खर्चीका कोई मेल नही बैठता। मुझे यह देखकर खुशी हुई कि आपने यहाँ अपनी कुछ सादगी और भारतीय तौर-तरीकोंको कायम रखा है। आप अपनी व्यावसायिक योग्यताके लिए जाने जाते हैं और आपके लोग जहाँ कहीं भी गये हैं उन्होंने बहुत धन कमाया है। लेकिन याद रहे कि उन्हें उनके धन-दौलतने नहीं बल्कि उनकी उदार दानशीलताने प्रसिद्ध बनाया है।

उस परम्पराको अटूट बनाये रखनेमें ईश्वर आपकी सहायता करे।

[अंग्रेजीसे]
विद गांधीजी इन सीलोन

२०२. भाषण : लंकाकी राष्ट्रीय कांग्रेसके कोलम्बो अधिवेशनमें

२२ नवम्बर, १९२७

आपने जिन शब्दोंमें मेरा उल्लेख किया है, उनके लिए और प्राचीन कालमें जब भारत और लंकाके बीच सम्बन्ध स्थापित था, तबकी उस सुखद स्मृतिकी याद दिलानेके लिए भी मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं भारतके लिए और आपके लिए, और मैं कहूँ तो समस्त संसारके लिए, उस सम्बन्धके महत्त्वके बारेमें अपना मत प्रकट करनेमें आपका समय नही लेना चाहता। मगर इतना मैं कहूँगा कि मेरी रायमें गौतम बुद्धकी शिक्षाएँ कोई नया धर्म नही थी। जहाँतक मैं उन उच्च शिक्षाओंका अध्ययन कर सका हूँ, मैं इसी नतीजेपर पहुँचा हूँ, और आज नही बल्कि बहुत दिन पहले ही पहुँच चुका था, कि गौतम बुद्ध हिन्दू-धर्मके सबसे बड़े सुधारकोंमें से एक थे और वे अपने जमानेके लोगोंपर और भविष्यकी पीढ़ियोंपर उस सुधारकी

ऐसी छाप छोड गये है जो कभी मिट नही सकती। मगर आपके पास और मेरे पास भी समय इतना कम है कि इस अत्यन्त रोचक विषयकी ज्यादा चर्चा करना मुझे उचित नही जान पड़ता। इसलिए मैं अब काग्रेससे सम्बन्धित सासारिक समस्याओंको ही ले रहा हूँ।

आज हिन्दुस्तानकी काग्रेसके नाममें एक जादू-जैसा असर पैदा हो गया है। इस संस्थाके पीछे ४० वर्षोंका अनवरत इतिहास है। और आज हिन्दुस्तानमें उसकी जितनी इज्जत है, उतनी किसी दूसरी राजनीतिक संस्थाकी नही है। और यह भी उतने सारे उतार-चढावोंके बावजूद बनी हुई है जिनमेंसे होकर काग्रेसको, ससारकी अन्य सभी राजनीतिक सस्थाओं और दलोंकी भाँति ही, गुजरना पडा है। इसलिए मैं इस बातको स्वतःसिद्ध मान लेता हूँ कि अपनी सभाको "काग्रेस" नाम देकर आप भी जहाँतक बन पडे और आवश्यक हो इसकी पूर्वज सस्थाकी परम्पराओंका पालन करनेका सकल्प कर रहे हैं। मेरा खयाल है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको मैं पूर्वज सस्था कह सकता हूँ। इसी बातके आधारपर मैं आज आपसे कहना चाहता हूँ कि काग्रेस कैसी होनी चाहिए और भारतकी राष्ट्रीय काग्रेस कैसे भारतमें अपनी इतनी प्रतिष्ठा बना सकी है। मैं जानता हूँ कि मेरा उसके साथ केवल १० सालका — या अब तो १२ सालका भी कह सकता हूँ — सम्बन्ध है। मगर जैसा कि आपको मालूम है, इन १२ सालोंतक काग्रेसके साथ मेरा इतना घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, मैं उसके साथ इतना एकाकार हो गया हूँ कि अब उसके बारेमें कुछ अधिकारके साथ आपसे बातें कर सकता हूँ। मगर दूसरी दृष्टिसे मेरा इस पूर्वज संस्थाके साथ सम्बन्ध लगभग ३० साल पुराना कहा जायेगा।

सन् १८९३ में दक्षिण आफ्रिका जानेपर मैं काग्रेसके सपने देखा करता था। मैं काग्रेसके कामके बारेमें थोड़ा-बहुत जानता था, मगर इस महान संस्थाके एक भी वार्षिक अधिवेशनमें तबतक शामिल नही हुआ था। आप लोगोंके समान ही, मैंने नवयुवकके रूपमें वहाँ नेटाल भारतीय काग्रेस स्थापित करनेमें हाथ बँटाया था। वह सभा भी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ढंगपर ही बनी थी, और स्थानीय आवश्यकताओंके अनुसार उसमें जरूरी फेर-बदल कर लिये गये थे। इसलिए मैं १८९३ के बादसे ऐसी सस्थाओंके सिलसिलेमें अपने सार्वजनिक जीवनका अनुभव आपको बतला सकता हूँ। मैं उतने पहले, १८९४ में ही, यह समझ गया था कि ऐसी किसी भी सभाको सचमुच कारामद बनने और 'राष्ट्रीय' कहलानेके लिए जरूरी है कि उसके मुख्य-मुख्य कार्यकर्त्ता काफी कुछ आत्म-त्याग करें। मैं कहने जा रहा था कि उसके मुख्य कार्यकर्त्ता बहुत काफी आत्म-त्याग करें। मुझे आपके सामने यह कबूल करनेमें कोई हिचक नही कि हमारे उस छोटे समाजमें भी इस आदर्शपर अमल करना मैंने बहुत मुश्किल पाया, क्योंकि दक्षिण आफ्रिकाके उस सबसे छोटे प्रान्त नेटालके हमारे उस समाजमें लगभग ६० हजार आदमी तो थे ही, उनमें से भी अधिकाशको कांग्रेसकी कार्रवाईके सिलसिलेमें मत देनेका अधिकार नही था।

फिर भी काग्रेस पूरी तरह प्रातिनिधिक थी और लोगोंके सभी हितोंका ध्यान रखती थी, क्योंकि उसने अपनेको इन लोगोंके हिताहितका संरक्षक बना लिया था।

मगर यहाँ उस संस्थाका इतिहास तो बतलाना नहीं है। उस छोटी-सी संस्थामें भी मैंने देखा कि आपसमें झगड़े होते ही थे, लोग सेवा करनेकी अपेक्षा सत्ता हथियानेकी अधिक कोशिश करते थे; उनमें अपनेको बड़ा बनानेकी जितनी चाह थी, उतनी अपनेको मिटा देनेकी नहीं। और इस पूर्वज संस्थामें भी इन १२ वर्षोंसे मैं लगातार देखता आ रहा हूँ कि स्वार्थ-सिद्धि की और सत्ता हथियानेकी ही कोशिश लगातार दिखाई पड़ती है। हमारी तरह आपके लिए भी अपना अस्तित्व बनाये रखने और प्रगति करनेके लिए यह नितान्त आवश्यक और अपरिहार्य है कि आत्म-त्याग, आत्म-संयम और अपनेको मिटा देनेकी चाह हमारे अन्दर पैदा हो, क्योंकि हम भी अभी खुद अपने पैरों खड़े होनेकी कोशिशमें ही है, हमें भी आत्म-विकास और स्वराज्यकी योग्यताके अपने दावे सिद्ध कर दिखाने हैं।

मैं यह दावा नहीं करता कि यहाँ आनेपर इन दो-चार दिनोंमें ही मैंने आपके यहाँकी राजनीति समझ ली है और आपकी कांग्रेसकी अन्दरूनी हालत मैं जान गया हूँ। मुझे पता नही कि वह कितनी सबल और लोकप्रिय है। मै तो यही आशा कर सकता हूँ कि वह सबल और लोकप्रिय होगी। आशा है कि अभी-अभी मैंने जिन दोषोंका उल्लेख किया वे आपमें न होंगे। मैं बखूबी जानता हूँ कि सत्तारूढ़ शक्तियोसे लोहा लेना और सरकारसे और खासकर विदेशी सरकारके — अपने पूर्ण विकास, अपनी आत्माभिव्यक्तिकी कोई गुंजाइश न छोड़नेवाली सरकारके — खिलाफ अखाड़ेमें उतरना बड़ा ही रोचक काम है और आप जानते ही हैं कि मैं इसका खूब मजा ले चुका हूँ। लेकिन आखिर मैं इस नतीजेपर भी पहुँचा हूँ कि स्वराज्य और सहज आत्म-विकास कोई ऐसी चीजें तो हैं नहीं जो दूसरा कोई हमसे ले सके, या हमें दे सके। यह तो सच है कि हमारे भाग्य-विधायक लोग — आज जिनके हाथों हमारे भाग्यका निबटारा होता मालूम पड़ता है, वे लोग — अगर सहानुभूति रखें, हमारी महत्वाकांक्षाओं-को समझें, हमारे अनुकूल हों तो बेशक हमारे लिए उन्नति करना आसान होगा। मगर आखिर स्वराज्य निर्भर करता है हमारी ही आन्तरिक शक्तिपर, बड़ीसे-बड़ी कठिनाइयोंसे जूझनेकी हमारी सामर्थ्यपर। सच पूछो तो ऐसा स्वराज्य जिसे पानेके लिए और सुरक्षित रखनेके लिए अविराम प्रयत्न दरकार न हो वह स्वराज्य, स्वराज्य कहलानेके काबिल ही नहीं। मैंने इसीलिए अपनी कथनी और करनीके जरिये यह दिखाने की कोशिश की है कि राजनीतिक स्वराज्य — अर्थात् विशाल जन-समुदायका स्वशासन — एक-एक व्यक्तिके अलग-अलग व्यष्टि-परक स्वराज्यसे कोई बेहतर चीज नहीं है और इसलिए उसे पानेके लिए ठीक वे ही साधन दरकार हैं जो व्यष्टि-परक स्वराज्य या स्व-शासनके लिए दरकार हैं। और जैसा कि आपको भी मालूम है यही आदर्श मैंने हिन्दुस्तानमें, मौके-बेमौके, हर जगह, जनताके सामने रखनेकी कोशिश की है, जिससे अकसर शुद्ध राजनीतिक प्रवृत्तिवाले लोग चिढ़ भी जाते हैं।

मैं उस राजनीतिक विचारधाराका माननेवाला हूँ जिसके प्रधान गोखले थे। मैंने उनको अपना राजनीतिक गुरु कहा है, और वह इसलिए नहीं कि उनकी हरएक बातको, उनके हर कार्यको, मैंने स्वीकार कर लिया था या आज भी करता हूँ, बल्कि

इसलिए कि उनके जीवनकी मुख्य प्रेरक शक्ति थी, 'राजनीतिको धर्ममय बनाने' की उनकी उत्कट अभिलाषा। (मैं उनके सबमें अधिक निकट पहुँचा था और मैं यही समझा हूँ।) 'भारत सेवक समाज' (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के जिसके वे संस्थापक और प्रथम अध्यक्ष थे, उद्देश्य और कार्य-विवरणकी भूमिकामें उन्होंने ये ही शब्द लिखे थे। उन्होंने खूब समझ-बूझकर बिलकुल स्पष्ट लिखा है कि मैं राजनीतिको धर्ममय बनानेके लिए ही यह संस्था स्थापित कर रहा हूँ। उन्होंने केवल अपने आस-पास, सिर्फ अपने देशकी राजनीतिका ही अध्ययन नहीं किया था, बल्कि वे समूचे इतिहासके बड़े ही सूक्ष्मदर्शी और सतर्क जिज्ञासु थे। उन्होंने संसारके सभी देशोंकी राजनीतिका अध्ययन किया था, और उन्हें यह देखकर गहरी निराशा हुई थी कि आध्यात्मिकता या धर्मनीतिका राजनीतिसे कहीं कोई सरोकार ही नहीं है। इसलिए उन्होंने अपनी सारी शक्ति लगाकर राजनीतिमें धर्मनीतिका प्रवेश करानेका प्रयत्न किया और मैं कहूँगा कि इसमें उन्हें कुछ सफलता — मैं कहने जा रहा था कि काफी सफलता — मिली थी। इसीलिए उन्होंने अपनी संस्थाका नाम भारत सेवक समाज रखा था। आज वह समाज अनेक प्रकारसे देशकी सेवा कर रहा है।

पता नहीं आपको ये बातें रुचती भी हैं या नहीं, मगर मुझे अगर अपनी इस छोटी-सी यात्राके दौरान की गई आपकी कृपाओंके प्रति सचमुच कृतज्ञता प्रकट करनी है तो मैं वही कहकर कर सकता हूँ जो कुछ मुझे सच मालूम होता है, आपको महज खुश करनेके लिए मैं मुँह-देखी बातें नहीं कह सकता। आपको पता होगा कि यह खास चीज — सत्य — हमारी कांग्रेसके सिद्धान्तका अनिवार्य अंग है। इसलिए हमारा सिद्धान्त है वैध और शान्तिमय तरीकोंसे स्वराज्य प्राप्त करना।

आप देखेंगे कि मैं इस बातपर जोर देनेसे कभी नहीं थकता कि चाहे जो हो मगर सत्य और अहिंसापर हमें दृढ़ रहना चाहिए। मेरी विनम्र सम्मतिमें, अगर ये दोनों शर्तें पूरी हो जायें तो आप दुनियाकी किसी भी शक्तिका मुकाबला कर सकते हैं और अन्तमें न सिर्फ यही कि आपका कुछ भी नहीं बिगड़ेगा, बल्कि आपके उस तथाकथित विरोधीका भी बाल तक बाँका नहीं होगा। हो सकता है कि वह कुछ समयतक आपके अहिंसापूर्ण प्रहारोंका मतलब न समझ सके, वह आपके बारेमें गलत-फहमी भी फैलाये, मगर जबतक आप इन दोनों शर्तोंका दृढ़ताके साथ पालन करते रहते हैं, आप सत्य और अहिंसापर दृढ़ हैं, तबतक आपको उसकी राय या भावनाओंकी ओर देखनेकी जरूरत नहीं। तब आपके कार्योंका फल ठीक ही निकलेगा और आप इस तरीकेसे अन्य किसी भी तरीकेकी अपेक्षा अधिक तेजीसे आगे बढ़ सकेंगे। यह रास्ता देखनेमें लम्बा मालूम पड़ सकता है, मगर यदि आप लगातार मेरे ३० सालके अनुभवका विचार करें तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सफलताके लिए यही रास्ता सबसे छोटा है। मैं इससे छोटा कोई रास्ता नहीं जानता। मैं जानता हूँ कि अकसर इसके लिए अविचल विश्वास और अपार धैर्यकी जरूरत पड़ती है, पर यदि यही एक बात हमारे दिलमें गहरी बैठ जाये तो फिर जो राजनीतिज्ञ, अपनी नहीं, पूरे देशकी सेवा करना चाहता है, उसके लिए दूसरा कोई रास्ता नहीं रह जाता।

एक वार ऐसा संकल्प कर लेनेपर मनमें विश्वास पैदा हो जाता है और विश्वासके साथ ही धैर्य भी आ जाता है, क्योंकि तव आप जान जाते हैं कि इससे वेहतर या छोटा रास्ता दूसरा है ही नहीं।

मुझे आशंका है कि हिन्दुस्तानकी तरह आपका समाज भी अलग-अलग सम्प्रदायों और गुटोंमें वँटा हुआ है। आज ही मैंने साम्प्रदायिकताके समर्थनमें कही कुछ सरसरी तौरपर पढ़ा था। हिन्दुस्तानमें भी हम इस अभिशापसे पीड़ित हैं। हम इसे अभिशाप ही समझते हैं, इसकी तारीफ नहीं करते। जो साम्प्रदायिकतामें विश्वास करते हैं वे भी खुलासा कहते हैं कि यह अनिवार्य दोष है और जितनी जल्दी हो, इससे पिण्ड छुड़ाना ही होगा।

हिन्दुस्तानमें हमें तीस करोड़ आदमियोंसे काम पड़ता है, मगर यहाँ तो जन-संख्या इतनी कम है कि मुझे आपके यहाँ साम्प्रदायिकताका समर्थन — इतना जोरदार समर्थन — सुनकर कष्ट और आश्चर्य दोनों हो रहा है। पर मैं जानता हूँ कि यह राष्ट्रीयता के विलकुल विरुद्ध है। आप स्वराज्य प्राप्तिकी इच्छा करते हैं, और करनी चाहिए भी। स्वराज्य किसी एक ही देशका नहीं, वल्कि सभी देशोंका — मुझे कहना चाहिए कि सर्वाधिक सभ्य जातियोंकी तरह ही वन्य जातियोंका भी — जन्मसिद्ध अधिकार है। तव फिर उनका तो पूछना ही क्या जो संस्कृतिके मामलेमें संसारके किसी भी देशसे पीछे नहीं हैं, जिन्हें प्रकृतिने वह सव-कुछ दिया है जो वह दे सकती थी, और जिनके पास धन, जन और नैसर्गिक उपहारकी सम्पदा है और जिसके वलपर आप संसारके सवसे शक्तिशाली देशोंमें से एक वन सकते है, मगर तव भी इस समय आप स्वराज्यसे वहुत दूर मालूम पड़ते हैं।

मैं यह कल्पना भी नहीं कर सकता कि आपमें कोई ऐसे भी होंगे जो इस विश्वाससे अपने मनको भरमा लेते होंगे कि आज उनको शासनके जो अधिकार मिल गये हैं वे स्वराज्यकी मेरी परिभाषाके अनुरूप हैं। और जवतक आपका समूचा राष्ट्र एक स्वरसे नहीं वोलता — ईसाई, मुसलमान, वौद्ध, हिन्दू, यूरोपीय, सिंहली, तमिल और मलायीके स्वरोंमें नहीं — तवतक आपको वह स्वराज्य नहीं मिलेगा; मैं कहने जा रहा था कि तवतक आप वैसा स्वराज्य प्राप्त कर ही नहीं सकते। मैं इसे मान ही नहीं सकता।

महोदय, आपने कहा था कि आप सभी जातियों और धर्मोका प्रतिनिधित्व करते है। मैं इसके लिए आपको वधाई देता हूँ। अगर आप इस दावेको सावित कर सकें तो आप वड़ेसे-वड़े सम्मानके अधिकारी हैं और तव आपकी कांग्रेस संस्था ही नहीं, वल्कि आप भी इस योग्य हैं कि हम आपका अनुकरण करें। हमारी संस्था पुरानी है, फिर भी मुझे शर्मके साथ कवूल करना पड़ता है कि हम ऐसा दावा नहीं कर सकते। हम प्रयत्न कर रहे हैं, हम अन्धेरेमें राह टटोल रहे हैं, हम प्रान्तीयताको दवानेकी कोशिश कर रहे हैं; हम जातीयताको दवाते हैं, अगर मैं नया शव्द वनाऊँ तो हम धर्मवादको दवाते हैं और हम राष्ट्रीयताका पूर्ण रूपसे विकास करनेकी कोशिशमें हैं। लेकिन आपके सामने यह स्वीकार करते हुए मैं शर्मिन्दा हूँ कि फिर भी हम

इस लक्ष्यसे कोसो दूर है। मगर आपकी स्थिति ऐसी है कि आप दौड़में हमसे आगे बढ़ जा सकते है और हमारे सामने एक मिसाल पेश कर सकते हैं; आपके लिए यह सरल है, हमारी वनिस्वत बहुत ही अधिक सरल है। मगर उनके लिए एक लाजिमी शर्त है, और वह यह कि आपमेंसे कमसे-कम कुछ लोगोको तो अवश्य ही इसमें अपना सारा समय देना होगा — सिर्फ समय ही नही बल्कि अपना सर्वस्व दे देना होगा, आपको आत्मनिग्रह करना होगा।

जैसा कि गोखले कहते थे, राजनीति तो आज फुर्सतका समय गुजारनेका खेल बन गई है, जब कि उसे कुछ लोगोंका एकमात्र पेशा होना चाहिए; देशके कुछ योग्यतम लोगोको उसमें तन्मय हो जाना चाहिए। पर कोई आदमी राष्ट्रकी नि.स्वार्थ सेवामें तभी जुट सकता है जब उसके अन्दर सत्य, निर्भीकता और अहिंसाके तत्त्वोंकी प्रधानता हो।

मैं आशा करता हूँ कि आपकी काग्रेसमें ऐसे स्त्री-पुरुष मौजूद होगे, स्त्रियाँ भी होंगी, क्योंकि उन्हे पुरुषोंके साथ-साथ चलना ही चाहिए। जैसा कि मैंने हिन्दुस्तानमें कहा है, हमारे एक अंगको लकवा मारे हुए है। स्त्रियोंको पुरुषोंके बराबर उठना है। मैंने आज स्त्रियोंकी एक सभामें कहा था कि तुम जगलीपनमें पुरुषोंकी नकल मत करो, उनमें जितनी अच्छी चीजें है, उन सबमें ही उनकी बराबरी करो। तभी आपके इस द्वीपमें बड़ा ही सुन्दर मेल बैठेगा, और प्रकृतिने इतनी उदारतापूर्वक आपको जो दान दिये है, आप तभी उनके योग्य बन सकेंगे।

आज सवेरे कैण्डीसे कोलम्बो आते समय मैं सोच रहा था कि ईश्वरने जिसे नैसर्गिक रूप सुधाका वरदान दिया है उस लंकाको मदिराके उन्मादसे बचानेके लिए काग्रेस क्या करने जा रही है? मैं आपके सामने एक विनम्र सुझाव रखता हूँ। अगर कांग्रेसको पूरे तौरपर राष्ट्रीय बनना है तो वह इस मूलभूत सामाजिक समस्याको यो ही नही छोड़ सकती। यहाँकी समशीतोष्ण जलवायुमें, जहाँ कृत्रिम मस्तीकी कोई जरूरत नही, आपके लिए यह शर्मकी बात है कि आपकी आमदनीका एक काफी बड़ा हिस्सा शराबसे हासिल हो। सम्भव है आप यह न समझते हों कि मजदूरोंका — जिनके आप जैसे रक्षक है और जो आपके पक्षमे मत डालकर केवल एक बार अपनी इच्छा व्यक्त कर पाते हैं — इससे क्या बिगड़ रहा है। मैंने हजारों-हजार मजदूरोंको हैटनमें देखा। मुझे तो गन्धकी बिलकुल ही पहचान नहीं रही, मगर एक मित्रने मुझे बतलाया कि उनमें कुछके शरीरसे शराबकी महक आ रही थी। वे तो इसपर होहल्ला मचा रहे थे कि उनका ही कोई साथी शराबके नशेमें पागल हो रहा था। खैर मुझे मालूम है कि इसपर आप क्या कहेंगे। आप यही कहेंगे न कि वह हालत तो अधिक पीनेसे हुई थी मगर संयमित ढंगसे थोड़ी-सी शराब पीनेमें कोई हर्ज नही। मैं जानता हूँ कि कई आदमियोंने पहले ऐसा ही दावा किया और वे बादमें बुरी तरह असफल सिद्ध हुए। मैं दक्षिण आफ्रिकाके शहरोंमें रह आया हूँ। मैंने वहां शराबके नशेमें चूर हब्शियों, यूरोपीयों और हिन्दुस्तानियोंको नालियोंमें पड़ा पाया है। मैंने शराबके नशेमें उच्चाधिकारियों, वकीलो और बैरिस्टरोंको मोरियोंमें पड़े देखा है और उनकी

लाज बचानेके लिए पुलिसके सिपाहियों द्वारा उन्हें उठाकर ले जाते देखा है। मैंने शराबके नशेमें पागल जहाजके कप्तानोंको अपना काम सहायक अधिकारीपर छोड़ जाते देखा है, या अपना कैबिन भ्रष्ट करते देखा है जहाँ तैनात रहकर उनसे अपने मुसाफिरोंकी सुरक्षा करनेकी अपेक्षा की जाती है। आप हिन्दुस्तानके प्रति अपनी निष्ठाका दम भरते हैं और 'रामायण' की कथासे अपना सम्बन्ध जोड़ते हैं। तब आपको रामराज्यसे कम किसी भी व्यवस्थासे सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए और राम-राज्यमें स्वराज्य भी शामिल है। आज जबकि यह अभिशाप इस रमणीक देशके कोने-कोनेमें फैला हुआ है, आपको इस समस्याको हल करनेके लिए पूरे मनोयोगसे लग कर देशको सर्वनाशसे बचाना चाहिए।

एक और भी समस्या है — अस्पृश्यताकी। आप रोडियोंको[1] अछूत मानते हैं। उनकी स्त्रियोंको अपना वक्षस्थल ढँकनेकी मुमानियत है। अब समय आ गया है कि कांग्रेस रोडियोंका मसला अपने हाथमें ले, उनको अपनाये और कांग्रेसका काम करनेके लिए उनमें से स्वयंसेवक बनाने शुरू कर दे। प्रत्येक जनको जबतक राज्य सत्ताके उपयोगका अधिकार नहीं मिलता तबतक लोकतन्त्र असम्भव है, पर जनताके लोकतन्त्र-को हुल्लड़शाही तो मत बनाइए। स्वराज्य या स्वशासनमें तो हर परयाको, हर मजदूर तकको जो आपको अपनी रोजी पैदा करनेमें सहायता देता है, हाथ बँटानेका अवसर रहेगा। मगर इसके लिए आपको उनके जीवनसे सम्बन्ध जोड़ना पड़ेगा, उनके साथ हेल-मेल पैदा करना होगा, जिन झोपड़ोंमें वे ठसाठस भरे रहते हैं, उनमें जाना होगा, उनकी देख-भाल करना आपका कर्त्तव्य होगा। आप उनका जीवन बना सकते हैं, और बिगाड़ना भी आपके ही हाथमें है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस इन दोनों सवालोंको हल करनेकी कोशिश कर रही है। हमारे कार्यक्रममें उनका स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और बुनियादी है। अगर आप अपनी कांग्रेसको सचमुच ही राष्ट्रीय बनाना चाहते हैं, अगर आप उसे लंकाके सबसे गरीब और दीन-हीन लोगोंका भी प्रतिनिधि बनाना चाहते हैं तो आपसे मेरा अनुरोध है कि अगर आपने अबतक इन बातोंको अपने कार्यक्रममें न जोड़ा हो तो अब तुरन्त जोड़ लीजिए, अपनी राजनीतिमें धर्मनीतिको पूरी तौरपर शामिल कराइए और इसके बाद सब-कुछ स्वयं ही ठीक होता चला जायेगा। तब स्वराज्य, जो आपका जन्मसिद्ध अधिकार है, फलोंसे लदे वृक्षसे पके हुए फलके समान आपके हाथोंमें आप ही आ टपकेगा। भगवान् करे कि इस सन्देशका आपपर यथोचित प्रभाव पड़े और यह आपके हृदयोंमें गहरा पैठ जाये।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १-१२-१९२७

१. कथा चली आ रही है कि राजाकी रसोईके लिए हिरनका मांस भेजनेका काम करनेवाले एक रोडियाने एक दिन उसके स्थानपर मनुष्यका मांस भेज दिया था। इसपर उसकी समूची जातिको बहिष्कृत कर दिया गया था।

२०३. भाषण: तमिल संघ, कोलम्बोमें

२२ नवम्बर, १९२७

आपने जो अभिनन्दनपत्र दिया है, और मेरे अनुष्ठानके लिए जो थैली दी है, उसके लिए मैं आपका हृदयसे कृतज्ञ हूँ।

मैं जानता हूँ कि इस सुन्दर देशमें मैं जहाँ-जहाँ भी गया हूँ, तमिल मित्रोंने अपने अभिभूत कर देनेवाले प्रेममे मुझे घेर लिया है, और मैं जिस उद्देश्यको लेकर यहाँ आया हूँ उसके लिए वे अधिकसे-अधिक जो-कुछ दे सकते थे, दिया है। इसलिए मुझे इसमें कोई आश्चर्य नही हो रहा है कि इस संघके सदस्य, आप लोगोंने अपनी ओरसे मुझे एक अलगसे थैली देनेका निश्चय किया, लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि आपने जो दिया है वह देनेमें आप भलीभाँति सक्षम है, और यदि आप मेरे सन्देशका पूरा महत्त्व समझें तो आपने जितना दिया है उससे भी ज्यादा देना आपके लिए सम्भव है।

महोदय, आपने यह कहकर मुझपर बड़ी कृपा की है कि मैं इस सभाको बताऊँ कि इस समय मैं जो चन्दा इकट्ठा कर रहा हूँ उसका उपयोग किस प्रकार किया जा रहा है और इस धन-राशिके वितरणसे मैं क्या अपेक्षाएँ रखता हूँ।

भारतमें एक सघ है जिसका नाम है अखिल भारतीय चरखा संघ। इस संघका अपना सविधान है, और इसके कार्यका संचालन ९ व्यक्तियोकी एक परिषद करती है जिसका मैं संघके अस्तित्वके प्रथम पाँच वर्षोके लिए अध्यक्ष हूँ। एक करोड़पति व्यापारी इस संघके कोषाध्यक्ष हैं। उनका नाम सेठ जमनालाल बजाज है। इस समय वह मेरे एवजमें परिषदके अध्यक्षके रूपमें भी काम कर रहे हैं। संघके मंत्री एक धनवान व्यक्तिके पुत्र हैं जिनका नाम है शंकरलाल बैंकर। परिषदके अन्य सदस्य भी ऐसे ही प्रसिद्ध लोग है जो अपने आत्म-त्यागके लिए भी प्रसिद्ध हैं। यह परिषद भारत भरमें अपनी शाखाओंके जरिये काम करती है। सभी हिसाब-किताबकी जाँच समय-समय पर चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट लोगों द्वारा की जाती है।

इस संघके जरिये आज भारत भरमें १,५०० से ऊपर गाँवोंकी सेवा की जा रही है। और इन गाँवोंमें कमसे-कम ५०,००० कतैयोको, जो हिन्दू है, मुसलमान है, और कुछ तो ईसाई तथा अन्य लोग भी है, चरखेके जरिये काम उपलब्ध करवाया जा रहा है। जबकि चरखेके आविर्भावसे पहले इन लोगोंके पास सालमें चार महीने कोई काम करनेको नही था, अब चरखेके आविर्भावके बादसे वे चरखा चलाकर प्रतिदिन एकसे दो आने तक कमा लेते है। इनमें से सबसे ज्यादा धन तमिलनाडुमें खर्च होता है, क्योंकि सबसे ज्यादा बड़ी संख्यामें कतैये तमिलनाडुके उन जिलोंमें पाये जाते है जहाँ लगभग सदा अकालकी स्थिति बनी रहती है। अकसर औरतें कई मील पैदल चलकर रुई या पूनियाँ लेने तथा सूत देने और अर्जित किया पैसा प्राप्त करने आती है।

इन कतैयोंके पीछे कई हजार बुनकरोंका भी उद्धार हो गया है, और धोबियोंका भी जिनका विशेष काम खादीको धोना है। रंगसाजों, छपाई करनेवालों और व्यापारियोंको भी काम मिला है।

१,९०० मील लम्बे और १,५०० मील चौड़े इस विशाल क्षेत्रमें करीब १,००० क्लर्क वर्गके कर्मचारियोंको रोजगार मिला हुआ है जो प्रतिमाह २० से ३० रुपये या ४० रुपयेतक कमाते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो ७५ रुपये या १५० रुपये प्रतिमाह भी कमाते हैं, लेकिन इनकी संख्या बहुत कम है। इन सबके ऊपर अवैतनिक कार्यकर्त्ताओंका एक दल है जो कुछ भी वेतन नहीं पाते लेकिन जो सेवाके भावसे काम करते हैं। सभी प्रान्तीय कार्यालयों और उप-प्रान्तीय कार्यालयोंका भी निरीक्षण होता है और उनके लिए नियमित हिसाब-किताब रखना जरूरी है जिसकी समय-समयपर जाँच होती है।

इस संघके जरिये पिछले साल २० लाख रुपयेसे ऊपरकी खादी तैयार हुई और बेची गई थी। यह काम कितना ही बढ़ाया जा सकता है बशर्ते हमें पहले कार्यकर्त्ता मिलें और फिर रुपया मिले। ५-६ सालके अनुभवसे हमने जाना है कि यदि हमें लोगोंसे पर्याप्त आर्थिक सहायता प्राप्त हो, खुशीसे खरीदनेवाले खरीदार मिलें और यदि हमें योग्य कार्यकर्त्ता मिलें तो हमारे लिए भारतमें समस्त ७,००,००० गाँवोंकी सेवा कर सकना केवल समयकी बात रह जाये। इसीलिए मैं इसे संसारका सबसे बड़े पैमानेपर होनेवाला सहकारी प्रयत्न कहनेमें नहीं हिचकता।

मैंने जो परिणाम गिनाये हैं यद्यपि वे सन्तोषजनक हैं लेकिन वे कामकी दृष्टिसे या जो उद्देश्य मेरी दृष्टिमें है उसके लिहाजसे बहुत अच्छे अथवा बिलकुल पर्याप्त नहीं है। लेकिन इसमें देर इतनी ही है कि भारतके लिए आपकी तरह महसूस करनेवाले सभी लोग इस काममें विश्वास करने लगें। इससे मेरे अहंकी तुष्टि हो सकती है, लेकिन मैं जानता हूँ कि जबतक मुझे लोगोंसे खादीके सिद्धान्तको स्वीकार करानेके लिए और उन्हें अपना फाजिल पैसा निकालनेके लिए राजी करनेके हेतु दौरे करने पड़ते हैं तबतक इस स्थितिको सन्तोषजनक नहीं समझा जा सकता। यदि आप पैसा इकट्ठा करने और खादीके लिए ग्राहक ढूँढ़नेका काम मेरे कन्धेपर से उतार दें और अपने ऊपर ले लें तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि इन गाँवोंको संगठित करने और आपको सर्वोत्तम किस्मकी तथा सस्तीसे-सस्ती खादी देनेके लिए एक प्रवीण कतैयेके रूपमें मैं अपनी प्रतिभाका इस्तेमाल कर सकता हूँ।

मैं जानता हूँ कि आप सब क्षण-भरमें ही निपुण कतैये नहीं बन सकते, लेकिन खादीके ग्राहक बनकर और धन इकट्ठा करनेवाले बनकर आप खादी-विशेषज्ञ जरूर बन सकते हैं। मुझे यह बात अच्छी तरहसे मालूम है और मुझे इसका दुख है कि देश मुझे धनकी खोजमें और खादीके लिए ग्राहकोंकी खोजमें जगह-जगह भटकनेपर मजबूर करके मेरी योग्यताओंका अलाभकारी उपयोग कर रहा है।

मैं आपसे इस प्रकार दिल खोलकर जो बात कर रहा हूँ वह महज इस कारण कि तमिलनाडुके अपने दौरेमें, जहाँसे मैं यहाँ आया हूँ, और जहाँके आप लोग रहनेवाले

है, मुझे इतना अभिभूत कर देनेवाला स्नेह और उतना उदार व्यवहार मिला है, विशेष रूपसे चेट्टिनाडमें, कि मेरे मनमें और अधिक पानेकी तीव्र लालसा उत्पन्न हो गई है।

मैं समझता हूँ कि आपका अपना एक खेल-कूदका क्लब है, और यह एक अच्छी चीज है। मैं चाहता हूँ कि आप इससे ऊँची कोटिके खिलाड़ी भी बनें। मैं चाहता हूँ कि आपमें खिलाडियों-जैसी ऐसी भावना हो कि आप भारतमें भूखसे पीड़ित लोगोंके साथ अपने धनको बाँट कर उपयोग करें, उनके सामने मुट्ठी-भर चावल फेंककर नहीं, बल्कि उन्हें जिस ढंगसे मैं कामके लिए प्रशिक्षित करके काममें लगाना चाहता हूँ उस ढंगसे उनके लिए काम प्राप्त करके।

मैं यह भी चाहूँगा कि इस द्वीपमें जो मजदूर हैं उनके साथ आप अपनी सेवा कर सकनेकी योग्यता या क्षमताको बाँटें और इसमें भी खिलाड़ीकी भावनासे काम लें। यह वही समाज-सेवा है जिसके लिए बहुतसे नौजवानोंकी योग्यताकी जरूरत है, नौजवान जिन्हें मैं अपने सामने देख रहा हूँ। मैंने बादुल्ला और हैटनके बीच जो हजारों मजदूर देखे उनके बारेमें अपने अनुभव बतानेमें मैं आपका समय नहीं लूँगा। एक ओर तो मैं उन्हें देखकर प्रसन्न हुआ और दूसरी ओर मैंने देखा कि आप नौजवानोंके सामने उन लोगोंके लिए करनेको कितना कुछ पड़ा है जो जर्जर होते जा रहे हैं और जिन्हें यह भी नहीं मालूम कि शुद्ध जीवन किस प्रकार बिताया जाता है।

आपने मेरा सन्देश सुन लिया है। यदि अभी भी कुछ लोग हैं जिन्होंने कुछ नहीं दिया है या पर्याप्त नहीं दिया है तो वे कृपया अपना चन्दा मुझे भेज दें, और यदि आप उन लाखों गरीब लोगों तथा अपने बीच एक जीवन्त सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं तो आप चन्दा देनेके साथ ही यह निश्चय भी करेंगे कि खादीके सिवा आगेसे कोई दूसरा कपड़ा नहीं खरीदेंगे।

आपकी उदारताके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-११-१९२७
विद गांधीजी इन सीलोन

२०४. भाषण: पानडुरामें

२३ नवम्बर, १९२७

महात्माजीने पहले श्री आर्थर वी० डायसको ढूंढ़ा, मगर वे सभामें नहीं आये थे। इसके बाद उन्होंने कहा कि मेरी बड़ी इच्छा है कि पानडुरामें मद्य-निषेध आन्दोलनके जनकसे मुलाकात करूँ। मैंने मद्य-निषेधके लिए काम करनेवाले इन सज्जनके बारेमें पहलेसे सुन रखा है और मेरा खयाल है कि वे उसी भावनासे काम कर रहे हैं, जिस भावनासे मैं करता हूँ। मुझे आशा है कि पानडुराकी जनता मद्य-निषेधके लिए और भी प्रयत्न करेगी।

यदि आप वैसा करेंगे तो न केवल वर्तमान पीढ़ीकी कृतज्ञताके पात्र होंगे, बल्कि भावी पीढ़ियाँ भी आपका आभार मानेंगी। मुझे अनेक स्थानोंपर पियक्कड़ोंके बीच रहनेका मौका मिला है। मैंने मद्यपानकी बुराईके बारेमें बहुत सारा साहित्य पढ़ा है। मैं ऐसे घरोंको जानता हूँ जो इस बुराईके कारण उजड़ गये हैं। ऐसे लोगोंको, प्रतिष्ठित लोगोंको, जानता हूँ जो इसके चक्करमें पड़कर बर्बाद हो गये हैं। मैंने मद्यप पतियोंको अपनी पत्नियोंके साथ राक्षसी व्यवहार करते देखा है। शराबके नशेमें धुत एक कप्तान तो एक बार एक जहाजके सभी कर्मचारियोंको मौतके ही मुँहमें झोंकने जा रहा था। मैं खुद उस जहाजपर मौजूद था। आप लोग तो गर्म जलवायुमें रहते हैं इसलिए आप शराब पियें, इसका कोई कारण नहीं है। यह राक्षसी वृत्ति है, ईश्वर और मानवताके प्रति जघन्य अपराध है। इसके घातक प्रभावसे महान श्रमिक वर्ग अधिकाधिक बेकार होता जा रहा है। फिर लंकामें अस्पृश्यता भी है, यहाँतक कि बौद्धोंके बीच भी।

उन्होंने कहा, किन्हीं कैण्डी निवासी सज्जनने मुझे बताया था कि बौद्धोंके बीच भी अस्पृश्यता रूपी यह बुराई मौजूद है, यद्यपि अस्पृश्यता बौद्ध धर्मके बिलकुल खिलाफ है।

आप चाहे अस्पृश्यताको जो नाम दें, यह चीज बहुत बुरी है। बौद्ध-धर्ममें तो पशुओंके प्रति भी दयाका व्यवहार करनेकी शिक्षा दी गई है, इसलिए उसमें इसके लिए कोई स्थान नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, २५-११-१९२७

२०५. भाषण: गैलेकी सार्वजनिक सभामें

२३ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और भाइयो,

अभी आप लोगोंने मुझे जो मानपत्र और चन्देकी राशियाँ भेंट की है, उनके लिए मैं आपका आभारी हूँ।

इस सुन्दर द्वीपकी धरतीपर मैंने जबसे पैर रखे हैं तभीसे मैंने उसे अपने प्रति स्नेह और आतिथ्यकी भावनासे आपूरित पाया है और आप लोग मुझपर प्रेम और शुभेच्छाओंकी वर्षा करते रहे हैं। अभी इन बालकों और बालिकाओंने जिस शुभकामना गीतका गायन किया उसे मैं आपकी शुभेच्छाके प्रदर्शनके इस क्रममें कोई कम महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं देता। कुछ मिनट पहले आपकी नगरपालिकाने भी मुझे एक मानपत्र भेंट किया है और मैं पूरी योग्यतासे इन दोनों अभिनन्दनपत्रोंका संयुक्त रूपसे उत्तर देना चाहता हूँ। लेकिन मैं जानता हूँ कि यदि मैं उत्तर यथासम्भव अधिकसे-अधिक संक्षेपमें दूँ तो आप उसके लिए मुझे धन्यवाद ही देंगे। मैं उत्तर संक्षेपमें ही दूंगा, क्योंकि मैं आपको ज्यादा समयतक इस धूपमें रोके रहना नहीं चाहता।

मुझे जो-कुछ इस नगरके आप नागरिकोंसे कहना है, नगरपालिकाके पार्षदोंसे उससे कोई भिन्न बात नहीं कहनी है।

जिस आशाको मैं इस द्वीपमें आनेके दिनसे ही बार-बार व्यक्त कर रहा हूँ, उसीको यहाँ एक बार फिर व्यक्त करना चाहता हूँ।

मुझे आशा है कि आप लोग अपनेको मद्यपानके अभिशापसे मुक्त करने और इस द्वीपसे जातीय भेद-भावको मिटा देनेके लिए कुछ भी उठा नहीं रखेंगे। गौतम बुद्धने, जिनका जीवन सतत त्यागकी एक गाथा है, यह उपदेश दिया है कि उनके अनुयायियोंको शराबसे अपने मुँह दुर्गन्धित और शरीर विषाक्त नहीं करने चाहिए। इस्लामने शराबकी निन्दा स्पष्ट शब्दोंमें की है। और जहाँतक ईसाई-धर्मको मैंने समझा है, ईसाई-धर्मके सिद्धान्तमें शराब पीनेका समर्थन कहीं नहीं किया गया है; और एक हिन्दूके नाते तो मैं व्यक्तिगत रूपसे आपको इस बातका प्रमाण दे सकता हूँ कि मेरे धर्ममें मद्यपानको पाप माना गया है।

आप अपनी मातृभूमिसे इस द्वीपमें भी साम्प्रदायिकताका अभिशाप ले आये हैं, लेकिन मैं आशा करता हूँ कि जहाँतक ईश्वर और मानवताके लिए काम करनेका सम्बन्ध है, आप अपने देशकी भलाईके लिए एक ही मातृभूमिकी सन्तानोंकी तरह एक दूसरेके कन्धेसे-कन्धा मिलाकर काम करेंगे। भगवान् बुद्धकी उदात्त शिक्षाके साथ-साथ आप अपने देश भारतसे जातीय भेदभावको भी यहाँ ले आये हैं। जबतक आप इन भेद-भावोंको बरतते रहेंगे तबतक यह नहीं माना जायेगा कि आपने बुद्धकी शिक्षाको समग्र रूपसे अंगीकार कर लिया है। आज दुनियामें लोकतन्त्रकी जो भावना फैली

हुई है, उसका तकाजा है कि किसीको किसीसे बड़ा नहीं मानना चाहिए। सब उसी एक परम पिताके पुत्र और पुत्रियाँ है।

और अन्तमें मै आपसे यह अनुरोध करूँगा कि आप तिरनागम महिला संघके उदाहरणका अनुकरण करें और इस प्रकार अपने दानको गरिमा प्रदान करें और मेरे प्रति व्यक्त किये गये अपने स्नेह-सौहार्दकी शोभा बढ़ायें। उस संघने हिक्कडुवामें मेरा स्वागत करते हुए मुझे यह सूचित किया था कि वह महिलाओंके बीच खद्दरको लोकप्रिय बनानेके लिए एक प्रचार आन्दोलन प्रारम्भ करने जा रहा है।

मुझे यह देखकर बड़ी खुशी हो रही है कि भारतके करोड़ों अभावग्रस्त लोगोंकी दशा सुधारनेमें मेरी सहायता करनेके लिए बौद्ध, हिन्दू, मुसलमान और ईसाई, सब एक साथ मिलकर सामने आये हैं। मै ईश्वरसे यही प्रार्थना करता हूँ कि जिस प्रकार एक होकर आपने इस अवसरपर काम किया है उसी प्रकार एक होकर अपनी मातृभूमिके कल्याणके लिए भी काम कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

२०६. भाषण: महिन्द कालेज, गैलेमें

२४ नवम्बर, १९२७

इस अत्यन्त आनन्ददायक समारोहमें[1] उपस्थित होकर मुझे अत्यन्त हर्षका अनुभव हो रहा है। इस सभारोहकी कार्यवाहियोंको देखने और बहुत सारे लड़कोंसे परिचय प्राप्त करनेका अवसर देकर आपने वास्तवमें मेरा बहुत बड़ा सम्मान किया है।

मैं आशा करता हूँ कि इस संस्थाका उत्तरोत्तर विस्तार होगा, और मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यह इस योग्य है। इस सुन्दर द्वीप और यहाँके लोगोंके बारेमें मैं इतना तो जान ही गया हूँ कि कह सकूँ कि इस देशमें बौद्ध लोग इतनी बड़ी संख्यामें मौजूद है कि वे न केवल इस एक संस्थाको, बल्कि ऐसी बहुत-सी संस्थाओं-को चला सकते हैं। इसलिए, मैं आशा करता हूँ कि आर्थिक सहायताका अभाव कभी भी इस संस्थाके मार्गमें बाधक नहीं होगा। किन्तु, चूँकि मैं दक्षिण आफ्रिका और भारतकी शिक्षण-संस्थाओंके बारेमें कुछ जानकारी रखता हूँ, इसलिए आपसे कहूँगा कि साहित्यिक शिक्षाके लिए सिर्फ ईंट और गारेकी बनी बढ़िया इमारत ही काफी नहीं है। वास्तविकता यह है कि जो ऐसी संस्थाओंका दिन-प्रतिदिन निर्माण करते हैं, वे हैं इनसे सम्बद्ध सच्ची वृत्तियोंवाले लड़के और लड़कियाँ। मैं वास्तुकलाकी दृष्टिसे सर्वथा निर्दोष ऐसे विशाल भवनोंको भी जानता हूँ जो नामके लिए तो शिक्षण संस्थाएँ हैं, लेकिन वास्तवमें वे पाखण्डकी प्रतिमूर्तियाँ हैं। इसके विपरीत मैं ऐसी संस्थाओंको भी जानता हूँ जो साधनोंके अभावमें प्रतिदिन अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिए

१. पुरस्कार वितरण समारोह।

संघर्ष कर रही है, किन्तु साथ ही उसी अभावके कारण आत्मिक दृष्टिसे प्रतिदिन प्रगति भी कर रही है। मानव-जातिके एक महानतम शिक्षक और आप सबके हृदयमें एकमात्र सम्राट्के रूपमें प्रतिष्ठित उस व्यक्तिने किसी मानव-निर्मित भवनमें बैठकर नहीं, बल्कि एक विशाल वृक्षकी छायामें बैठकर दुनियाको अपना जीवन्त सन्देश सुनाया था। और यह कहनेकी धृष्टताके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे कि इस तरहकी महान संस्थाको ऐसी शिक्षा देनी चाहिए और इस ढंगसे देनी चाहिए कि उसका लाभ लंकाके प्रत्येक बालक और बालिकाको मिल सके।

मैंने इतने ही दिनोंमें यह देख लिया है कि भारतकी तरह इस देशमें भी शिक्षाको उत्तरोत्तर अधिकाधिक व्ययसाध्य बनाया जा रहा है। नतीजा यह है कि यह गरीब लड़कोंकी पहुँचसे परे हो गई है। हम सबको सावधान हो जाना चाहिए और ऐसी गम्भीर भूल करनेसे बचना चाहिए, अन्यथा हम भावी पीढ़ियोंके धिक्कारके पात्र होंगे। उस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए मैं सबसे ज्यादा जोर इस बातपर दूंगा कि आरम्भसे अन्ततक सारी शिक्षा सिंहली भाषामें ही दी जानी चाहिए। मेरा निश्चित मत है कि किसी भी राष्ट्रके बच्चोंके लिए विदेशी भाषामें शिक्षा ग्रहण करना आत्मघातके समान है। यह चीज उन्हे उनके जन्म-सिद्ध अधिकारसे वंचित करती है। विदेशी माध्यमका मतलब है बच्चोंपर अनुचित बोझ लादना, और यह उनकी मौलिक चिन्तनकी समस्त क्षमता समाप्त कर देता है। यह उनके विकासके मार्गमें बाधक होता है और उन्हे अपने देश-समाजसे काटकर अलग कर देता है। इसलिए मैं इसे राष्ट्रके लिए बहुत बड़े दुर्भाग्यकी बात मानता हूँ। मैं आपसे एक बात और कहना चाहूँगा। संस्कृत भारतकी मातृ-भाषा रह चुकी है, और चूंकि आपने सारी धार्मिक शिक्षा उस व्यक्तिके उपदेशोंसे ग्रहण की है जो खुद एक सच्चा भारतीय था और जिसने संस्कृत साहित्यसे प्रेरणा ग्रहण की थी, इसलिए संस्कृतको एक ऐसी भाषाके रूपमें अपने पाठ्यक्रममें स्थान देना बिलकुल उचित है जिसका अध्ययन गहराईसे किया जाये। इस तरहकी संस्थासे मैं यह अपेक्षा करूँगा कि वह सिंहलीमें ऐसी पाठ्यपुस्तकें तैयार करे जिनमें प्राचीन ज्ञान-विज्ञानकी उत्तम बातोंका समावेश हो और जो लंकाके सारे बौद्ध समाजके लिए सुलभ हों।

मुझे आशा है कि आप ऐसा नहीं समझते होंगे कि मैं आपके सामने कोई ऐसा लक्ष्य रख रहा हूँ जिसे प्राप्त ही नहीं किया जा सकता। इतिहासमें मैंने ऐसे उदाहरण भी देखे है जब शिक्षकोंने मातृभाषाकी गरिमा और लुप्तप्राय प्राचीन ज्ञान-विज्ञानके गौरवको पुनः प्रतिष्ठित करनेके लिए भगीरथ प्रयत्न किये है।

मुझे यह देखकर सचमुच बड़ी प्रसन्नता हुई है कि आप लोग क्रीडा-व्यायामकी ओर समुचित ध्यान दे रहे हैं। खेल-कूदमें आपने जो विशेष स्थान प्राप्त करके दिखाया है, उसके लिए मैं आपको बधाइयाँ देता हूँ। मैं नहीं जानता कि आपका कोई देशी खेल-कूद है या नहीं। लेकिन, अगर यह हकीकत हो कि इस पवित्र भूमिपर क्रिकेट और फुटबालका चलन होनेसे पहले आपके लड़के कोई खेल नहीं खेलते थे तो मुझे घोर, बल्कि दुखद आश्चर्य होगा। यदि आपके अपने राष्ट्रीय खेल हों तो मैं आपसे अनुरोध

करूँगा कि आपकी संस्थाको उन्हें पुनः प्रतिष्ठित करना चाहिए। मैं जानता हूँ कि भारतके कई बहुत अच्छे देशी खेल हैं। वे क्रिकेट और फुटबालकी ही तरह रोचक और उत्साहवर्धक हैं। उनमें खतरे भी उतने ही रहते हैं। और ऊपरसे उनकी एक खूबी यह है कि वे व्ययसाध्य नहीं होते, क्योंकि उनपर लगभग कोई खर्च नहीं बैठता।

"पुरातन" के नामपर चलनेवाली हर चीजका मैं अन्धभक्त नहीं हूँ। कोई चीज चाहे जितनी भी प्राचीन हो, यदि उसमें कोई बुराई या अनैतिकता है तो उसे मिटानेमें मैं कभी संकोच नहीं करता। लेकिन, इतना तो मैं स्वीकार करूँगा कि मैं प्राचीन रीति-रिवाजोंका भक्त हूँ और यह सोचकर मुझे बड़ा दुःख होता है कि लोग आधुनिकताकी आपाधापीमें पड़कर अपनी पुरानी परम्पराओंसे घृणा करने लगते हैं और अपने जीवनमें उनका आचरण करनेकी कोई परवाह नहीं करते।

हम प्राच्य लोग उतावलीमें अक्सर ऐसा मान बैठते हैं कि हमारे पूर्वज हमारे लिए जो-कुछ विधान कर गये, वे अन्धविश्वासोंके अलावा और कुछ नहीं थे। लेकिन, प्राच्य संसारकी अमूल्य निधियोंके अपने दीर्घकालके अनुभवके बलपर मैं इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि यद्यपि उनमें बहुत-सी बातोंका अन्धविश्वासपूर्ण होना भी सम्भव है, किन्तु उससे कहीं अधिक बातें ऐसी हैं जो न केवल अन्धविश्वासपूर्ण नहीं है, बल्कि यदि हम उन्हें ठीकसे समझें और उनका आचरण करें तो वे हमारे लिए जीवनदायिनी और हमारी वृत्तियोंको ऊर्ध्वमुखी करनेवाली साबित होती हैं। इसलिए, पश्चिमकी जादुई चकाचौंधमें हमें अपनी आँखें बन्द नहीं कर लेनी चाहिए।

लेकिन, मैं एक बार फिर आपसे यह कह देना चाहता हूँ कि आप ऐसा माननेकी भूल न करें कि मैं पश्चिमकी हरएक चीजसे घृणा करता हूँ। पश्चिमवालोंके बहुतसे गुणोंको तो खुद मैंने ही ग्रहण किया है। वांछनीय और अवांछनीय, सही और गलतके बीच भेद कर सकनेकी मनुष्यकी क्षमताके लिए संस्कृतमें एक बहुत ही अर्थ-गर्भित और सटीक शब्द है — वह है "विवेक"। अंग्रेजीमें इसका निकटतम पर्याय "डिस्क्रिमिनेशन" है। मुझे उम्मीद है कि आप पाली और सिंहलीमें इस शब्दको स्थान देंगे।

आपके पाठ्यक्रमके बारेमें मैं एक बात और कहना चाहूँगा। मैंने शिल्प और दस्तकारियोंके बारेमें कुछ सुननेकी आशा की थी। यदि आप अपने यहाँके लड़कोंको शिल्प और दस्तकारीके काम सिखानेपर विशेष ध्यान न दे रहे हों, और अगर अब भी समय हो तो मैं आपसे निवेदन करूँगा कि शिल्प और दस्तकारीके जिन कार्योंसे इस द्वीपके लोग परिचित हों, ऐसे आवश्यक कार्योंको पाठ्यक्रममें अवश्य दाखिल किया जाये। निश्चय ही, इस संस्थासे निकलनेवाले सभी लड़के सरकारी कार्यालयोंमें क्लर्क या नौकर होनेकी आशा नहीं करेंगे और न वे होना ही चाहेंगे। यदि वे राष्ट्रकी शक्तिको बढ़ाना चाहते हों तो उन्हें पूरे मनोयोग और कौशलसे देशी शिल्पों और दस्तकारियोंको सीखना चाहिए; और सांस्कृतिक प्रशिक्षणके रूपमें तथा गरीबसे-गरीब लोगोंके साथ तादात्म्य स्थापित करनेके प्रतीकके रूपमें मुझे हाथ-कताईसे अधिक उदात्त दस्तकारी और कोई नहीं जान पड़ती। यह बहुत सीधा-सादा काम है और इसलिए इसे आसानीसे सीखा जा सकता है। यदि आप हाथकताईके साथ इस विचारको भी मिला दीजिए

कि इसे आप अपनी स्वार्थ-सिद्धिके लिए नही, बल्कि देशके गरीबसे-गरीब लोगोंके लिए सीख रहे हैं तो यह मनुष्यको ऊपर उठानेवाला एक धार्मिक कृत्य बन जाता है। इस धर्मकार्यके साथ-साथ कोई ऐसा धन्धा, कोई ऐसा हस्तशिल्प भी जुड़ा होना चाहिए जिसे लड़के अपने बादके जीवनमें जीविकोपार्जनका एक साधन मान सकें।

धार्मिक शिक्षाको स्थान देकर आपने बिलकुल ठीक किया है। यह समझनेके लिए कि धार्मिक शिक्षा सबसे अच्छी तरह किस प्रकार दी जा सकती है, मैंने कई लड़कोंपर प्रयोग करके देखा है। मैंने पाया कि किताबी शिक्षा किसी हदतक तो सहायक है, लेकिन कोरी किताबी शिक्षा बेकार है। मैंने यह पाया कि धार्मिक शिक्षा देनेका तरीका यह है कि शिक्षक खुद ही धर्मनिष्ठ जीवन जियें। मैंने देखा है कि लड़के जितना शिक्षकोंके व्यक्तिगत जीवनसे सीखते है, उतना शिक्षकों द्वारा उनके सामने किताबें पढ़ने या मुँहसे दिये गये व्याख्यानोसे नही सीखते। मैंने पाया है कि लड़को और लडकियोमें अपने शिक्षकोंके मनमें प्रवेश कर जानेकी ऐसी क्षमता रहती है जिसका स्वयं उन्हे भी भान नही होता, किन्तु जिसके द्वारा वे अपने शिक्षकोंके विचारोंको जान लेते हैं। लानत है उस शिक्षकपर जो मुँहसे एक बात सिखाता है लेकिन हृदयमें कुछ और ही विचार रखता है।

अब बस, एक-दो शब्द सिर्फ लड़कोंके लिए कहकर मै भाषण समाप्त करूँगा। बहुत-से लड़के-लड़कियो या आप ऐसा भी कहें तो बहुत गलत न होगा कि हजारों लड़के-लड़कियोंके पिताकी हैसियतसे मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आखिरकार आपका भाग्य आपके ही हाथोमें है। यदि आप दो शर्तोंका पालन करे तो मुझे इसकी कोई परवाह नही कि अपने स्कूलमें आप क्या सीखते हैं और क्या नही। एक तो यह है कि चाहे जैसी भी कठिन परिस्थिति आ पडे, आप निर्भीक होकर सत्यपर आरूढ़ रहें। कोई सत्यनिष्ठ और बहादुर लडका किसी चीटीको भी हानि पहुँचानेकी बात नही सोच सकता। अपने स्कूलमें सभी कमजोर लड़कोंकी रक्षा करता है। और स्कूलके अन्दर या बाहरके जिन लोगोको भी उसकी सहायताकी आवश्यकता होती है, उनकी सहायता करता है। जो लड़का मनसा-वाचा-कर्मणा पवित्र नही है वह स्कूलसे निकाल बाहर दिये जाने लायक है। बहादुर लड़का अपना मन सदा पवित्र रखता है, अपनी दृष्टि सीधी रखता है और अपने हाथोंको निष्कलुष रखता है। जीवनके इन मूलभूत सिद्धान्तोंको सीखनेके लिए आपको किसी स्कूलमें जानेकी आवश्यकता नही है। यदि ये तीन गुण आपमें हैं तो समझ लीजिए कि आपकी नींव बहुत मजबूत है।

तो अब ईश्वरसे मेरी यही प्रार्थना है कि सच्ची अहिंसा और पवित्रता आपके जीवनमें सदा आपकी सुरक्षा-कवच बनी रहे। ईश्वर आपकी सभी उदात्त आकांक्षाओंको फलीभूत करनेमें आपकी सहायता करे। इस समारोहमें शामिल होनेको मुझे निमन्त्रित करनेके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

दि गांधीजी इन सीलोन

२०७. भाषण: अकमिमाना बालिका बुनाई केन्द्रमें

२४ नवम्बर, १९२७

[गांधीजीने] कहा कि आपसे यह अभिनन्दनपत्र और थैली प्राप्त करके मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है और अकमिमाना बालिका बुनाई केन्द्र (अकमिमाना गर्ल्स वीविंग इन्स्टीट्यूट)का शिलान्यास करनेको निमन्त्रित करके आपने मेरा बहुत सम्मान किया है। मुझे उम्मीद है कि यह केन्द्र प्रगति करेगा। आप सबको शायद यह मालूम नहीं होगा कि कई उपयोगी काम सीखनेके सिलसिलेमें मैं बुनाईका काम भी सीख रहा था। कताई और बुनाई सीखते हुए मैंने पाया कि जिस देशको बुनाईका काम अपनाना है, उसे कताईको भी अपनाना चाहिए। मेरा मतलब यह है कि जब कोई देश स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरताके लिए बुनाई उद्योगको अपनाता है तो उसमें कताई भी शामिल है और आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि जब लंकाशायरमें बुनाई उद्योग प्रारम्भ हुआ, उससे पहले वहाँ कताईका काम जोरोंसे होता था। इस विषयपर ज्यादा विस्तारसे कहनेके लिए मेरे पास समय नहीं है, लेकिन इतना अवश्य कहूँगा कि यदि आप लंकाको स्वावलम्वी और आत्मनिर्भर देश बनाना चाहते हैं तो आपको भारतकी तरह किसी-न-किसी प्रकारकी कताई और बुनाईको भी अपनानेकी जरूरत है।

महात्माजीने, मानपत्रमें बौद्धोंको बुद्ध-गया फिरसे दे दिये जानेके बारेमें जो उल्लेख किया गया था, उसकी भी चर्चा की। उन्होंने कहा कि यदि कोई सत्ता-सम्पन्न व्यक्ति मुझे पूरा अधिकार दे दे और मेरे हाथमें एक कलम थमा दे तो मैं उसी क्षण बुद्ध-गया बौद्धोंको दे दूँ। दुर्भाग्यवश, इस सम्बन्धमें मैं जो-कुछ करना चाहूँगा वह करनेकी मुझमें शक्ति नहीं है, लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि बुद्ध-गया बौद्धोंको खुद उन्हींकी सम्पत्तिकी तरह उन्हें वापस दिलानेके लिए मैं कुछ भी उठा नहीं रखूँगा। लेकिन सबसे बड़ी बात यह है कि आपको हिम्मत नहीं हारनी चाहिए, आशा नहीं छोड़नी चाहिए। अपना स्वत्व प्राप्त करना आपके हाथोंमें है, क्योंकि यह एक सर्वस्वीकृत सिद्धान्त है कि जो लोग अपना स्वत्व प्राप्त करनेकी चिन्ता खुद नहीं करते, उन्हें वह कभी नहीं मिलता।

वक्ताने आगे ग्रामीण जीवनकी चर्चा करते हुए कहा कि यदि आप शराबखोरीको दूर नहीं करते तो आपके गाँव बर्बाद हो जायेंगे। आज सुबह मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि इस क्षेत्रमें आपके सुन्दर देशका रूप बिगाड़नेवाला कोई भी शराबखाना नहीं है। इस उपलब्धिके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। इस भवनमें उपस्थित बौद्ध भिक्षुओंसे मैं अनुरोध करूँगा कि वे जनताको पूर्ण मद्यनिषेधके मार्गपर

ले जानेकी भरसक कोशिश करें। लेकिन, आपको अपनी गतिविधियाँ इस क्षेत्र-विशेष तक सीमित रखकर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए। आपको अपनी गतिविधियोंका विस्तार दूर-दूरके क्षेत्रोंतक करना चाहिए ताकि मद्यपानका अभिशाप पूर्ण रूपसे सदाके लिए मिट जाये और यहाँके लोगोंका जीवन सुरक्षित हो तथा यह देश मदिराके कलंकसे सर्वथा मुक्त हो जाये।

अन्तमें उन्होंने कहा कि बुद्धने इस सिद्धान्तका प्रचार किया कि सभी मनुष्य समान हैं। किसीका पड़ोसी उतना ही अच्छा है जितना वह स्वयं है। यदि आप इसी समयसे और यहींसे जाति-भेदको दूर करनेकी कोशिश शुरू नहीं कर देते तो इसका मतलब यह है कि आप इस धर्मके सच्चे अनुयायी नहीं हैं।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, ३-१२-१९२७

२०८. भाषण : मताराम्में

२४ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

आपने मुझे जो मानपत्र और थैलियाँ भेंट करनेका सौजन्य दिखाया है, उस सबके लिए मैं आपका हृदयसे आभारी हूँ। शोफरों, नाइयों तथा अन्य भाइयोंने इस मंचपर अपनी-अपनी थैलियाँ भेंट की हैं। गरीब लोगोंसे प्राप्त इन थैलियोंकी मैं दिलसे कद्र करता हूँ। इनसे प्रकट होता है कि उन्होंने उन लोगोंको भुला नहीं दिया है जो उनसे भी गरीब हैं, लेकिन, एक थैलीकी घोषणा नहीं की गई और वह है आपके प्रतिनिधि श्री ओवेसेकेरेसे प्राप्त ५०० रुपयेका चेक। इस चेकके बारेमें दो तरहके खयाल हैं। एक तो खुद मेरा है और वह यह है कि उन्होंने नम्रतावश अपने दानको छिपा रखा है। लेकिन, एक दूसरा खयाल भी है जो अनुभवपर आधारित होनेके कारण शायद ज्यादा ठीक है। वह यह है कि श्री ओवेसेकेरेने बहुत कंजूसीसे काम लिया है और वे नहीं चाहते कि उनके ५०० रुपयेके अनुदानकी घोषणा करके लोगोंको शोफरोंकी थैलीसे[1] उसकी तुलना करनेका मौका दिया जाये। लेकिन, मैं तो एक भिखारी हूँ, एक न्यासी हूँ, इसलिए मैं श्री ओवेसेकेरे तथा उनकी उदारता या कृपणताके बारेमें कोई निर्णय नहीं दे सकता। यह निर्णय तो मैं आप लोगोंपर, जिनके कि वे प्रतिनिधि हैं, छोड़ता हूँ। आप ही जानिए कि उन्होंने आपका ठीक प्रतिनिधित्व किया है या गलत। लेकिन, आप सब भारतके करोड़ों भूखों मरने लोगोंके लिए दिये गये अपने दानके लिए मेरा हार्दिक धन्यवाद स्वीकार कीजिए। मैं तो आपको यही आश्वासन दे सकता हूँ कि इन थैलीमें डाले गये एक-एक

१. शोफर संघने १०० रुपयेकी थैली भेंट की थी।

रुपयेका आपकी जेबोंमें पड़े हर रुपयेसे अधिक मूल्य है, क्योंकि मेरे हाथमें आये एक रुपयेका मतलब भारतकी उन १६ गरीब कत्तिन बहनोंके लिए एक बार भोजनकी व्यवस्था हो जाना है जिन्हें इस रुपयेके अभावमें शायद भूखे ही रहना पड़ता।

श्री ओबेसेकेरे जब मुझे इस सुन्दर स्थानमें ले आ रहे थे तब उन्होंने मुझे बताया कि हाथ-बुनाईको प्रोत्साहन देनेकी कोशिशें की जा रही हैं। इस कदमके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ और मेरे लिए इससे अधिक हर्षकी बात और कुछ नहीं होगी कि चन्द महीनोंमें मुझे यह सूचना मिले कि इस देशमें कमसे-कम आप लोग तो ऐसे हैं ही जो अपना तन अपने ही बुने कपड़ोंसे ढँकते हैं। लेकिन, मैं आपसे एक निवेदन और करना चाहता हूँ। जहाँ आप अपना तन अपने यहाँके कते-बुने कपड़ोंसे ही ढँकनेकी तैयारियाँ कर रहे हैं, वहीं भविष्यमें जब कभी आपको मौका मिले, आप खद्दर खरीदकर इस कार्यको जारी रखें जिसे आपने इन अनुदानोंके रूपमें प्रारम्भ किया है। एक बात और भी बता दूं कि यदि आप अपनी वस्त्र-सम्बन्धी आवश्यकताओंके विषयमें आत्म-निर्भर बनना चाहते हैं तो हाथ-कताई शुरू कर देना भी जरूरी है।

इसके बाद महात्माजीने नगरपालिकाओं तथा नगरपरिषदोंके कामकी चर्चा करते हुए लोगोंसे हार्दिक अनुरोध किया कि किसी बौद्ध देशमें मद्यपान और जाति-भेद नहीं होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
सीलोन डेली न्यूज, ३०-११-१९२७

२०९. भाषण: कानूनके छात्रोंके सम्मुख, कोलम्बोमें

[२५ नवम्बर, १९२७][1]

आपने यह सवाल[2] पूछा, इससे मुझे बड़ी खुशी हुई है क्योंकि मैं कह सकता हूँ कि इस विषयपर यदि मैं अधिकारपूर्वक नहीं बोल सकता तो और कोई नहीं बोल सकता। कारण यह है कि जबतक मैंने वकालतका धन्धा किया, सत्य और ईमानदारीसे रंच-मात्र भी विचलित नहीं हुआ।

तो अब अपने सवालका जवाब लीजिए। यदि आप वकालतके धन्धेमें धर्मका समावेश करना चाहते है तो सबसे पहले तो आपको बराबर इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि इस धन्धेको आप अपनी थैली भरनेका साधन न बना लें, हालाँकि आज तो दुर्भाग्यवश अकसर ऐसा ही होता है। इसके विपरीत आपको अपने धन्धेका उपयोग देशसेवाके लिए करना चाहिए। सभी देशोंमें ऐसे वकीलोंके उदाहरण मिलते हैं, जिन्होंने त्यागमय जीवन बिताया, जिन्होंने अपनी अद्भुत कानूनी प्रतिभाका उपयोग पूरी तरहसे देश-सेवामें किया, यद्यपि इसके कारण स्वयं उन्हें लगभग दरिद्रताका जीवन व्यतीत करना

१. इस तिथिको गांधीजी कोलम्बोमें थे।
२. वकालतके धन्धेमें धर्मका समावेश कैसे किया जाये?

पड़ा। भारतमें आपके सामने स्वर्गीय मनमोहन घोषका उदाहरण है। उन्होंने निलहे साहबोंके खिलाफ चलनेवाले संघर्षमें आगे बढ़कर हिस्सा लिया और अपने गरीब मुवक्किलोंसे एक पाई भी लिये बिना, अपने स्वास्थ्यकी परवाह न करते हुए, बल्कि अपनी जानको भी खतरेमें डालकर उनकी सेवा की। वे अत्यन्त प्रतिभाशाली वकील थे, किन्तु साथ ही बहुत बड़े परोपकारी भी। यह एक ऐसा उदाहरण है जिसे आपको अपने सामने रखना चाहिए। या इससे भी अच्छी बात यह होगी कि आप 'अनटु दिस लास्ट' में दिये गये रस्किनके सिद्धान्तका अनुसरण करें। वे पूछते हैं, "किसी वकीलको अपने कामके लिए पन्द्रह पौंड क्यों लेना चाहिए, जबकि एक बढ़ईको अपने कामके लिए मुश्किलसे पन्द्रह शिलिंग मिलते हैं?" वकीलोंकी फीसकी दरें सभी जगह अन्यायपूर्ण होती हैं। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने खुद ही इतनी फीस ली है, जिसे मैं बहुत ऊँची कहूँगा। लेकिन, आपको बता दूँ कि जब मैं वकालत करता था तब भी मेरा धन्धा मेरे लिए जनताकी सेवाके मार्गमें कभी बाधक नहीं हुआ।

एक दूसरी बात भी है जिसकी ओरसे मैं आपको सचेत कर देना चाहूँगा। इंग्लैंडमें, दक्षिण आफ्रिकामें बल्कि सर्वत्र वकील लोग अपने मुवक्किलोंके लिए जाने-अनजाने असत्यका सहारा लेते हैं। एक प्रसिद्ध अंग्रेज वकीलने तो यहाँतक कहा है कि अपने जिस मुवक्किलके बारेमें वकीलको मालूम हो कि वह दोषी है, उसका बचाव करना भी उसका कर्त्तव्य हो सकता है। इससे मैं सहमत नहीं हूँ। वकीलोंका कर्त्तव्य बराबर न्यायाधीशोंके सामने सत्यको प्रस्तुत करना और सचाईको जाननेमें उसकी सहायता करना होता है। दोषीको निर्दोष साबित करना उसका कर्त्तव्य नहीं होता। अपने धन्धेकी गरिमाको बनाये रखना आपके हाथोंमें है। यदि आप अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं करेंगे तो फिर सोचिए कि और धन्धोंका क्या होगा? आप नौजवानोंको, जो समाजके भावी कर्णधार होनेका दावा करते हैं, जैसा कि अभी आपने किया है, राष्ट्रका आदर्श नागरिक सिद्ध होना चाहिए। यदि नमक ही अपना सलोनापन छोड़ दे तो फिर उसे किस प्रकार नमकीन बनाया जा सकता है?

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

२१०. भाषण : बौद्ध युवक संघ, कोलम्बोमें

२५ नवम्बर, १९२७

प्रारम्भमें गांधीजीने सहिष्णुताकी आवश्यकता समझाई। उन्होंने कहा कि मैं किसी भी तरहसे विद्वान होनेका दावा नहीं करता। धर्मके सम्बन्धमें मैंने अपना अध्ययन एडविन आर्नोल्डकी कृति 'लाइट ऑफ एशिया' से शुरू किया। इस पुस्तकने मुझे मुग्ध कर लिया। तभीसे बुद्ध मेरे मनपर छाये रहे हैं, इतने कि मुझे प्रच्छन्न बौद्धतक कहा गया है। और जैसा कि एक बार मैंने पहले भी कहा है, इस आरोपको मैं अपनी प्रशंसा मानता हूँ, हालाँकि मैं जानता हूँ कि यदि मैं खुद ऐसा कोई दावा करूँ तो कट्टर बौद्ध लोग उसे तुरन्त अस्वीकार कर देंगे। फिर भी, एक ऐसे व्यक्तिके नाते, जिसने बौद्ध-धर्मकी भावनाको ग्रहण किया है, मैं सम्पूर्ण विनयके साथ किन्तु निःसंकोच भावसे फिर वही बात कहूँगा — हालाँकि दूसरे शब्दोंमें — जो मैंने पिछले प्रसंगपर कही थी। उन्होंने कहा :

हिन्दू-धर्ममें विभिन्न धर्मोंके ठीक-ठीक और श्रद्धापूर्ण अध्ययनके लिए कुछ शर्तें रखी गई हैं। वे शर्तें ऐसी हैं जो सर्वत्र लागू होती हैं। यह भी याद रखिए कि गौतम एक सच्चे हिन्दू थे। वे हिन्दूधर्मकी भावनासे ओतप्रोत थे, वैदिक भावनासे आपूरित थे। उनका जन्म और लालन-पालन उसी प्रेरणाप्रद परिवेशमें — मनुष्यकी आत्माके लिए प्रेरणाप्रद परिवेशमें — हुआ था; और जहाँतक मैं जानता हूँ उन्होंने हिन्दू-धर्म या वेदोंके सन्देशको कभी अस्वीकार नहीं किया। उन्होंने जो-कुछ किया वह यह कि जिस निर्जीव धार्मिक वातावरणमें उनकी आत्मा आकुल हो रही थी, उसमें एक जीवन्त सुधार किया। मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि उस महात्माने जिस स्रोतसे प्रेरणा ग्रहण की उस मूल स्रोतका अध्ययन किये बिना आपका बौद्ध-धर्मका अध्ययन अधूरा रहेगा; अर्थात्, जबतक आप संस्कृत और संस्कृत धर्मग्रन्थोंका अध्ययन नहीं करते तबतक आपका अध्ययन अधूरा रहेगा। लेकिन यदि आप बौद्ध-धर्मके शाब्दिक वर्णनको नहीं, बल्कि उसकी भावनाको समझना चाहते हैं तो आपका कर्त्तव्य यहीं समाप्त नहीं होता। उस अध्ययनके साथ वे शर्तें जुड़ी हुई हैं, जिनके बारेमें अब मैं बताऊँगा। वे शर्तें ये हैं कि जो पुरुष अथवा स्त्री धर्मका अध्ययन करना चाहे, उसे सबसे पहले तो पाँचों यमोंका पालन करना चाहिए। ये पाँच यम आत्म-संयमके नियम हैं। वे इस प्रकार हैं : एक तो है ब्रह्मचर्य; दूसरा सत्य; तीसरा अहिंसा अर्थात् तुच्छसे-तुच्छ प्राणीके विरुद्ध भी हिंसा न करना; और चौथा अस्तेय। अस्तेयका मतलब चोरी न करना है। लेकिन यहाँ चोरीका वह अर्थ नहीं है जो हम सामान्यतया लगाते हैं। उसमें जो वस्तु आपकी नहीं है, उसे किसी भी तरहसे ग्रहण करना या उसे सतृष्ण दृष्टिसे देखना तक शामिल है। पाँचवाँ नियम है अपरिग्रह। जो मनुष्य सांसारिक सम्पदाओंका स्वामी

बनना चाहता है वह बुद्धके सन्देशके मर्मको कभी भी नही समझ पायेगा। ये अनिवार्य शर्तें हैं। कुछ अन्य शर्तें भी हैं; लेकिन इनका वर्णन इसलिए कर रहा हूँ कि ये बुनियादी शर्तें हैं और बुद्ध होनेसे पूर्व गौतमने इन तमाम नियमोंका पालन किया था। वास्तवमें उन्होंने इन नियमोंके मर्मको समझकर उनका पालन किया था जैसा कि उनके किसी समकालीनने नही किया था। मेरा नम्र निवेदन है कि जबतक आप भी इन नियमोंका पालन करते हुए प्रार्थनापूर्ण मनसे महात्मा बुद्धके आशयको समझनेकी कोशिश नही करेंगे तबतक आप बुद्धके सन्देशके मर्मको नही समझ पायेंगे। भले ही उनके सम्बन्धमें लिखी तमाम पुस्तकोंके अध्ययनसे आपने उनके बारेमें जानकारी प्राप्त की हो, किन्तु इसका कोई महत्त्व नही है। लेकिन मैं कहूँगा कि यदि आप इन बुनियादी शर्तोंका पालन करने लगेंगे तो आप सब-कुछ समझने लगेंगे और इन पुस्तकोंकी व्याख्या एक नये दृष्टिकोणसे करने लगेंगे। जरा देखिए तो कि जिस पुस्तकपर करोड़ों मुसलमानोंकी अडिग आस्था है, उसीको इस्लामके आलोचकोंने कैसे विकृत रूपमें पेश किया है और इस्लामके उपदेशोंको किस तरह घृणास्पद सिद्ध करनेकी कोशिश की है। यह आलोचना लिखनेवाले लोग बेईमान नही, बल्कि ईमानदार थे। वे ऐसे लोग नही थे जो सत्यकी खोज करनेकी कोशिश नही कर रहे थे। लेकिन किसी धर्मका अध्ययन करनेसे पूर्व जिन शर्तोंका पालन करना चाहिए, उन शर्तोंका ज्ञान उन्हे नही था। फिर यह भी देखिए कि हिन्दू-धर्मके आलोचकोंने क्या किया है। मैंने उनमें से कई आलोचकोंकी कृतियाँ उनके आशयको समझनेकी कोशिश करते हुए पढी, लेकिन अन्तमें इसी निष्कर्षपर पहुँचा कि वे हिन्दू-धर्मका क, ख, ग भी नही जानते और उसकी सर्वथा गलत व्याख्या कर रहे है। ईसाई-धर्मको ही लीजिए। बहुत-से हिन्दुओंने इसकी गलत व्याख्या की है। उन्होने, 'बाइबिल', 'ओल्ड टेस्टामेंट' और 'न्यू टेस्टामेंट' का अध्ययन मनमें पहलेसे ही कुछ धारणाएँ बनाकर छिद्रान्वेषीकी तरह किया। लेकिन हिन्दुओंकी ही बात क्या कहिए? मैंने तो अपनेको नास्तिक माननेवाले खुद अंग्रेजोंकी ही ऐसी कृतियाँ पढी है जिन्होंने 'बाइबिल' के अर्थका अनर्थ कर दिया है और बड़े सुन्दर ढंगसे लिखा ऐसा ढेर-सा साहित्य भोले-भाले स्त्री-पुरुषोंके पास पहुँचा दिया है जिसे पढनेसे उनका भारी नुकसान हुआ है। इस युवक सघके सदस्योंके सामने मैंने ये बातें इसलिए रखी है कि मैं चाहता हूँ, आप लंका और लंकाके द्वारा सारी दुनियामें बौद्ध-धर्मके पुनरुन्नयनके अग्रदूत बनें और ससारको एक अग्राह्य, मृत और रूढि-जर्जर धर्मके बजाय एक जीवन्त धर्म देनेमें सबसे आगे रह सकें।

मैंने अपने प्रतिनिधिको बौद्ध पुरोहितोंसे मिलने भेजा। उन्होंने कहा कि वे कोई बहस नही कर सकते, बस वही कह सकते है जो भगवान बुद्धने उन्हे सिखाया है। वैसे तो उनका ऐसा कहना ठीक है, लेकिन आज सर्वत्र चीजोंको जाँच-परखकर उनके बारेमें निर्णय लेनेकी प्रवृत्ति है। हमें उस प्रवृत्तिका खयाल रखना ही है। दुनिया सत्यको खोजनेकी कोशिशमें है, और इस भयंकर खीचतान और संघर्षके बीच शान्ति पानेके लिए आकुल हो रही है। सत्यको जाननेकी इच्छा भी है, लेकिन जैसा कि मैंने आपको सुझानेकी धृष्टता की है, जिन्होंने धर्मका शास्त्रीय अध्ययन किया, जिन्होंने

सत्यको पानेके लिए जीवन अर्पित कर दिया, और जिनकी अस्थियाँ हिमालयकी सफेद बर्फमें मिलकर एकाकार हो गई हैं, उन्होंने ये निधियाँ सिर्फ भारतके तीस करोड़ लोगोंके लिए ही नहीं छोड़ी है, बल्कि ये निधियाँ उन सबकी हैं जो उन्हें समझनेकी कोशिश करें। और फिर उन्होने स्वयं ही कहा, "सत्य क्या है, यह हम आपको नही बता सकते।" यह न लिखकर बताया जा सकता है, न बोलकर, इसे तो जीवनके द्वारा ही जाना जा सकता है। यह बुद्धिसे परे है, लेकिन अनुभवसे परे नही है। इसलिए उन्होंने कहा, "हमारा कहना है कि तथ्य इस प्रकार हैं, लेकिन उनकी परख तो आपको स्वयं करनी पड़ेगी। आप अपनी बुद्धिका उपयोग करें। हम आपकी बुद्धिको कुण्ठित नहीं करना चाहते। लेकिन यदि आप इस तरह चीजोंको स्वयं परखने बैठेंगे तो मेरे इस निष्कर्षसे अवश्य सहमत होंगे कि ईश्वरने हमें जो बुद्धि दी है, आखिरकार उसकी शक्ति भी सीमित है, और जो सीमित है, वह असीमको नहीं पा सकता। इसलिए इन प्रारम्भिक शर्तोंका पालन कीजिए, भले ही ये शर्तें कठिन और थकानेवाली हों, ज्यामिति और बीजगणित सीखनेकी इच्छा करनेवालेके समान ही आपको भी इन प्रारम्भिक प्रक्रियाओंसे गुजरना ही है। आप उनका मनन कीजिए और तब आप देखेंगे कि हम आपसे जो-कुछ कह रहे हैं, आपका भी वही अनुभव है।"

अब मैं आपको इस बातका सिर्फ एक उदाहरण दूँगा कि आज किस प्रकार बुद्धके उपदेशोंकी उपेक्षा की जा रही है। इस विषयपर लगभग अन्त-अन्ततक मैंने अपना मुँह बन्द रखा है। हाँ, विद्योदय कालेजमें दिये गये भाषणमें मैंने इसका कुछ संकेत अवश्य किया था।

आप यह मानते हैं कि गौतमने दुनियाको यह सिखाया कि हमें सृष्टिके तुच्छतम प्राणीको भी अपने बराबर समझना चाहिए। वे धरतीके कीड़े-मकोड़ोंकी जिन्दगीको भी अपनी ही जिन्दगीके समान बहुमूल्य मानते थे। यह कहना थोथा अहंकार है कि मनुष्य सृष्टिके सभी प्राणियोंका स्वामी है। इसके विपरीत, चूँकि ईश्वरने मानव-जीवनको कुछ महत्तर उपादानोंसे युक्त कर रखा है, इसलिए वह अपनेसे हीनतर प्राणियोंका न्यासी है; और महात्मा बुद्धने इस सत्यको अपने जीवनमें चरितार्थ किया। 'लाइट ऑफ एशिया' में मैंने किशोरावस्थामें ही पढ़ा था कि किस प्रकार उन्होंने उन अज्ञानी ब्राह्मणोंके सामने ही, जो समझते थे कि निर्दोष मेमनोंका रक्त भेंट करके वे ईश्वरको प्रसन्न कर रहे हैं, मेमनेको अपने कन्धोंपर उठा लिया और उन्हें चुनौती दी कि अब एक भी मेमनेकी बलि चढ़ा कर दिखाओ। उनकी उपस्थिति-मात्रसे ब्राह्मणोंके कठोर हृदय पिघल गये। उन्होंने भगवान बुद्धकी ओर देखा और अपने घातक छुरोंको तुरन्त फेंक दिया। इस प्रकार सभी जानवरोंकी जानें बच गईं। उन्होंने दुनियाको यह सन्देश क्या इसीलिए दिया था कि वह उसे झुठलाये, जैसाकि आज वह कर रही है? मैं मानता हूँ कि जबतक आप लोग, जो कि उस महान धर्मके थातीदार है, सृष्टिके समस्त प्राणियोंको अवध्य नहीं मानते तबतक आप महात्मा बुद्धके उपदेशोंकी भावनाके प्रति ईमानदारी नहीं बरत रहे हैं; और जबतक आप मांसाहार-का त्याग नही कर देते और इस भ्रामक विश्वासको मनमें कायम रखते हैं कि चूँकि

जिन जानवरोंका मांस आप खाते हैं उनका वध किसी और ने किया, इसलिए आप उनके वधके पापके भागी नहीं हैं, तबतक यह नहीं माना जायेगा कि आप सभी प्राणियोंको अवध्य मानते हैं। आप परम्पराओंकी आड़ लेते हैं। आप कहते हैं कि भगवानने कभी भी मांस-भक्षणका निषेध नहीं किया। मैं ऐसा नहीं मानता। यदि आप भगवानके उपदेशोंको मेरे बताये दृष्टिकोणसे देखेंगे और परम्पराकी भावनापर गहराई-से विचार करेंगे तो आपको एक नई दृष्टि और नया अर्थ मिलेगा। तब आप देखेंगे कि जब भगवानने यह कहा कि "मैं आपको मांस-भक्षणसे नहीं रोकता", तब वे वास्तवमें यह बात उन लोगोंसे कह रहे थे जिन्हें ईसाइयोंकी भाषामें हम कठोर हृदय (हार्ड ऑफ हार्ट) कहेंगे। उन्होंने उनकी कमजोरीका खयाल करके ही उन्हें मांसाहार-की अनुमति दी; उन्होंने ऐसा कुछ इसलिए नहीं किया कि वे अपने उपदेशके तर्कसंगत परिणामसे अनभिज्ञ थे। यदि देवताओंको पशुबलि नहीं दी जा सकती थी तो हम स्वाद-लोलुप प्राणियोंके लिए उनकी बलि कैसे चढ़ाई जा सकती थी? जब उन्होंने पशु-बलिका निषेध किया तो वे जानते थे कि वे क्या कह रहे थे। क्या वे नहीं जानते थे कि पशुओंकी बलि आखिरकार मनुष्योंके खानेके लिए ही दी जाती है? कलकत्तेमें लोग कालीको हजारों भेड़-बकरियाँ क्यों बलि चढ़ाते हैं? उस परम हिन्दू गौतमका सन्देश ग्रहण करनेके बाद भी वे ऐसा काम क्यों करते हैं जो स्वयं उनके लिए और हिन्दूधर्मके लिए कलंक रूप है? क्या वे बलि चढ़ाये पशुओंके शरीर हुगलीमें फेंक देते हैं? नहीं, वे मांसकी बोटी-बोटी बड़े चावसे चबा जाते हैं और यह समझते हैं कि काली-को भेंट कर दिये जानेके कारण यह मांस पवित्र हो गया है। इसलिए बुद्धने कहा था, यदि तुम बलिदान ही करना चाहते हो तो खुद अपनी, अपनी वासनाओंकी और आर्थिक तथा सांसारिक आकांक्षाओंकी बलि चढ़ाओ। यह मनुष्यको ऊपर उठानेवाला बलिदान होगा। मेरी यही कामना है कि भगवान बुद्ध आपको मेरे शब्दोंको तौलने और उनका सार ग्रहण करनेकी सद्‌बुद्धि दें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१२-१९२७

२११. भाषण: लंका भारतीय संघ, कोलम्बोमें[1]

२५ नवम्बर, १९२७

मैं जानता हूँ कि आपके सामने बहुत-सी राजनीतिक समस्याएँ उठती रहती हैं। जो लोग अपने देशसे जाकर किसी दूसरे देशमें बसते हैं — और ऐसा तो हम करते ही हैं — उनके आचरणको मार्ग-दर्शन देनेवाला एक सिद्धान्त मेरे विचारसे यह होना चाहिए कि वे अपने अंगीकृत देशके लोगोंके सुख-दुःखको अपना सुख-दुख मान कर चलें। उनका हित-साधन ही हमारा मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। हमारे हितका स्थान उनके बाद ही आना चाहिए। यही मुझे एक शोभनीय मार्ग प्रतीत होता है, और यह उस महान सिद्धान्तके भी अनुकूल है जो हमें सिखाता है कि हम दूसरोंके साथ वैसा ही व्यवहार करें जैसे व्यवहारकी अपेक्षा हम अपने प्रति दूसरोंसे रखते हैं। जैसा कि आप जानते हैं, इसी सिद्धान्तके अनुसार सोचते हुए मैंने भारत-स्थित अंग्रेजोंसे बार-बार कहा है कि उन्हें, वे जिस-जिस देशमें रहते हैं, उस देशके करोड़ों अभावग्रस्त लोगोंके हितको ही अपना हित बना लेना चाहिए और किसीने भी मेरे इस कथनके औचित्यपर शंका नहीं की है। हमारे और हमारे देशमें आनेवाले विदेशियोंके सम्बन्धों-का निर्धारण एक नियमके अनुसार हो और जब हम खुद विदेशोंमें जाकर रहें तो हम किसी दूसरे नियमसे संचालित हों, ऐसा नहीं हो सकता। और यद्यपि मैं लंकाको पराया देश नहीं मानता और यद्यपि सिंहलियोंके मुँहसे यह सुनकर मुझे अतीव प्रसन्नता हुई है कि वे भारतको अपनी मातृ-भूमि ही समझते हैं, फिर भी उनके साथ अपने सम्बन्धोंका नियमन करते समय हम यदि यह मानकर चलें कि वे विदेशी हैं तो बहुत अच्छा हो। सबसे निरापद तरीका यह है कि जब हम कोई सेवा करना चाहें तो उन्हें अपना कुटुम्बी मानें और जब अपने किसी अधिकारपर आग्रह करना हो तो कुटुम्बका आधार न लें। सच तो यह है कि मैंने जीवनके इस सिद्धान्तको, जिसे मैं आच-रणका स्वर्णिम सिद्धान्त कहता हूँ, भारतके अन्दर भी प्रान्तोंके पारस्परिक सम्बन्धोंका निर्धारण करनेमें लागू किया है। उदाहरणके लिए, जब-कभी मैं बंगाल या मद्रास या गुजरातके अलावा किसी अन्य प्रान्तमें गया हूँ और जहाँ-कहीं मैंने गुजरातियोंकी बस्तियाँ देखी हैं, मैंने गुजरातियोंसे यह कहनेमें कभी भी कोई संकोच नहीं किया है कि वे जिस प्रान्तमें जाते हैं उस प्रान्तके लोगोंके हित-साधनको अपने हित-साधनसे अधिक महत्त्व दें। मुझे तो मानव-मानवके आपसी व्यवहारमें मीठा सम्बन्ध कायम रखनेका दूसरा कोई तरीका ही दिखाई नहीं देता, और अपने दीर्घकालके अनुभवके बलपर मेरी यह धारणा पक्की हो गई है कि मैंने अभी जो स्वर्णिम सिद्धान्त बताया है, उसके पालनमें जब कभी कोई व्यवधान पड़ा है, तभी झगड़े-टंटे, बल्कि एक-दूसरेके सिर फोड़नेकी भी वारदातें हुई हैं। अतः मेरे देशभाइयो, मुझे इसमें तनिक भी सन्देह

१. तमिलमें इस भाषणका अनुवाद श्री राजगोपालाचारीने किया था।

नहीं कि अभी मैंने आपको जो सिद्धान्त सुझाया है, यदि आप अपने आचरणका नियमन उसके अनुसार करेंगे तो इसमें आपकी शोभा और गौरव बढ़ेगा और आपके इस आचरणसे सारे भारतको, जिसकी मुक्तिके लिए हम अपनी पूरी शक्तिसे जूझ रहे हैं, सम्मान मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]

सीलोन डेली न्यूज, २६-११-१९२७

२१२. भाषण: रेड्डियार संगम, कोलम्बोमें

२५ नवम्बर, १९२७

मैं आपको इन सारे मानपत्रों और थैलियोंके लिए धन्यवाद देता हूँ।

मैं देखता हूँ कि जैसे-जैसे लंकासे प्रस्थान करनेका मेरा समय निकट आता जाता है, वैसे-वैसे आपके हृदयमें मेरे लिए अधिकाधिक स्थान बनता जा रहा है और उसीके साथ मानपत्रोंका आकार भी बढ़ता जा रहा है। लेकिन, आप रेड्डियार बन्धुओंको तथा दूसरे लोगोंको मेरे बारेमें ज्यादा जानकारी होनी चाहिए थी और आप सबको यह भी मालूम होना चाहिए था कि यदि आप मुझे बड़े-बड़े फ्रेमोंमें मढ़वाकर मानपत्र देंगे तो आपको साबरमती आश्रममें एक ऐसी जगह भी तलाश देनी चाहिए जहाँ मैं इन्हें रख सकूँ। यदि आप उदारतावश मुझे इन सारे मानपत्रोंको रखनेके लिए एक बड़ा भवन बनवानेके निमित्त हजारों रुपये देनेको तैयार होते तो मैं आपसे यही कहता कि यदि आपके पास इतना पैसा है कि इन चीजोंके रखनेके निमित्त मेरे लिए एक घर बनवा सकें तो सारा पैसा मुझे दे दीजिए; उसका उपयोग भारतकी क्षुधार्त्त बहनोंको अधिक भोजन देनेके लिए किया जायेगा। आपको यह भी मालूम होना चाहिए था कि पिछले कई वर्षोंसे मैं व्यक्तिगत उपयोगके लिए कोई मूल्यवान् उपहार स्वीकार नहीं करता। आपको इतना तो मालूम होगा ही कि मुझे ऐसे मानपत्रों-को, जिन सभाओंमें ये भेंट किये गये हैं उन्हींमें नीलाम कर देनेमें कोई संकोच नहीं हुआ है और इस कारण लोग मुझपर अशिष्टताका आरोप लगायेंगे, ऐसा भी कोई खतरा मुझे नहीं रहा है। लेकिन, इस सुन्दर द्वीपमें, जहाँ मुझे अजनबी माननेकी भूल की जा सकती है, मैंने सिंहली भाइयोंकी भावनाका खयाल करके उनके भेंट किये हुए मानपत्रोंको नीलाम नहीं किया। लेकिन, यहाँ तो मैं जानता हूँ कि आप मुझे गलत नहीं समझेंगे। इसलिए मैं आपकी अनुमतिसे — मैं मान लेता हूँ कि आप अनुमति तो दे ही देंगे — इनको नीलाम करना चाहता हूँ। इससे जो पैसा मिलेगा उनसे आपके द्वारा भेंट की गई थैलियोंकी राशिमें वृद्धि होगी और भूखे लोगोंके मुँहमें दाने पड़ेंगे। वास्तवमें मैं आपके मानपत्रोंको मुझे ऐसा करनेका प्रलोभन देनेवाली चीज मानता हूँ, और इसलिए मैं ज्यादा लम्बा भाषण देकर आपका और अपना वक्त बर्बाद नहीं करूँगा।

कोलम्बोसे प्रस्थान करनेके पूर्व मैं आपसे एक दो बातें कह देना चाहता हूँ। चूंकि आप इस सुन्दर द्वीपमें अपनी जीविका कमा रहे हैं, इसलिए आप यहाँ उसी तरह रहिए जिस तरह दूधमें चीनी रहती है। जिस प्रकार दूधसे लबालब भरी प्यालीमें भी यदि आहिस्तेसे एक चम्मच चीनी डाल दी जाये तो प्यालीसे दूध गिरने नहीं लगता बल्कि चीनी उसमें अपने लिए स्थान बना लेती है, और दूधका स्वाद बढ़ा देती है, उसी प्रकार आप भी इस द्वीपमें रहिए ताकि आप खामखाह टपक पड़नेवाले लोग न माने जायें और जिन लोगोंके बीच आप रहते हैं उनके जीवनको सुखी और सरस बना सकें।

इस बातका ध्यान रखिए कि भारतमें हममें जो बुराइयाँ हैं वे यहाँ आकर यहाँके जीवनको विषाक्त न करने पायें। हमें अपने साथ अस्पृश्यताके अभिशापको इस देशमें न ले आना चाहिए। परमपिता परमेश्वरके राज्यमें कोई छोटा या बड़ा हो ही नहीं सकता। हम कभी-कभी ऐसा व्यवहार करते हैं कि दुनिया शैतानका राज्य बन गई-सी जान पड़ती है। हम इस देशको शैतानका राज्य बनानेके बजाय ईश्वरका राज्य बनायें। हमारा जीवन सर्वथा पवित्र, दृष्टि सीधी और हाथ निष्कलुष हों। और चूंकि आपने मुझे इतने सारे उपहार देनेकी उदारता दिखाई है, इसलिए क्या आपसे यह अपेक्षा भी करूँ कि भविष्यमें आप जो भी कपड़ा खरीदेंगे, सब खद्दर ही होगा?

भाइयो, मैं आपसे इस द्वीपमें मद्यपानके खिलाफ जो महान आन्दोलन चल रहा है, उसमें शामिल होनेका अनुरोध करूँगा। न केवल आप स्वयं मद्यपान न करें, बल्कि इस आन्दोलनकी भी सहायता करें और जिन समाजोंमें लोग मद्यपान करते हों उन्हें इससे छुटकारा पानेमें मदद दें तथा इस देशमें पूर्ण मद्य-निषेध लागू करानेमें सहायक बनें।

आपके सारे सौजन्य और कृपाके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ। आपके इस व्यवहारको मैं सदा याद रखूँगा।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

२१३. भाषण : कोलम्बोकी विदाई सभामें

२५ नवम्बर, १९२७

अध्यक्ष महोदय और भाइयो,

आपने मेरे बारेमें जो शब्द कहे है और स्वय अपनी ओरसे तथा कोलम्बोके नागरिकोंकी ओरसे जो शुभकामनाएँ व्यक्त की है, उनके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। इस बड़ी थैलीके लिए भी आपको धन्यवाद देता हूँ। वैसे तो अभी जितने रुपयोकी थैलीकी घोषणा की गई, वह रकम अच्छी खासी है, लेकिन मै जानता हूँ और आपको भी जानना चाहिए कि कोलम्बोके नागरिकोने केवल यही नही और भी बहुतसी थैलियाँ मुझे सहर्ष भेंट की है। मै जबसे कोलम्बोमें हूँ, धीरे-धीरे एकके बाद एक बहुतसी सस्थाएँ और व्यक्ति मुझे थैलियाँ भेंट करते रहे है — सिर्फ सार्वजनिक रूपसे ही नही, बल्कि मेरे निवास-स्थानपर आकर व्यक्तिगत रूपमे भी भेंट करते रहे है। इस तरह वे खासी रकमें देते रहे हैं और इन सभी अनुदानोंको मै इसी थैलीका हिस्सा मानता हूँ।

एक तरहसे मेरी लका यात्रा आज समाप्त होती है, हालांकि ठीक-ठीक देखें तो आपके इस आतिथ्य-भावनासे आपूरित देशसे मै २९ तारीखको जफनामे प्रस्थान करूँगा। जफना जाते हुए पता नही क्यो, मुझे कुछ ऐसा लग रहा है जैसे मै एक अलग स्थानको जा रहा हूँ। मै यहाँसे अपने साथ लंकाकी अति सुन्दर जलवायु और यहाँके लोगोंकी सुखद स्मृतियाँ लेकर जा रहा हूँ। सच मानिए, कोलम्बोसे जाते हुए मेरा मन बड़ा उदास हो रहा है और यदि मुझसे बनता तो निश्चय ही मै यहां ज्यादा दिन ठहरता। लेकिन, मुझे उड़ीसाका दौरा करना है। यह भारतके सबसे अधिक दुखी प्रदेशोंमें से एक है, बल्कि कहिए कि यह वहाँका सबसे अधिक दुखी प्रदेश है। इन दिनों उसपर बहुत जबरदस्त बाढ़का कोप हुआ है। इसलिए, मै वहाँ जानेका कार्यक्रम स्थगित नही कर सकता।

परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयसे लेकर छोटेसे-छोटे सरकारी कर्मचारीतक में और बड़े-बड़े व्यापारियो तथा अन्य पूंजीपतियोसे लेकर गरीबसे-गरीब मजदूर तकके हृदयमें मैंने अपने प्रति अगाध स्नेहका अनुभव किया है, और महोदय, आपने सच ही कहा है कि इस देशके सभी जातियो और रंगोंके लोगोंने एक होकर मुझपर असीम स्नेहकी वर्षा की है, और जहाँतक मेरे यहाँ आनेके उद्देश्यका सम्बन्ध है, आपने निश्चय ही, आपसे जो भी आशाएँ की जाती थी, सब पूरी की है।

आपने कहा है कि मै दुबारा अवकाशका समय बितानेके लिए लंका आऊँ। यदि ईश्वरने मुझे अवकाशका समय सुलभ कराया और उनकी कृपासे मै तबतक जीवित रहा तो आप विश्वास मानिए कि मुझे यहां बुलानेके लिए आपको ज्यादा कहने-सुननेकी जरूरत नही होगी। लेकिन, चाहे मै इस सुन्दर द्वीपमें दुबारा आ

सकूँ या नहीं, इतना तो निश्चित समझिए कि मेरा मन सदा आप लोगोंके साथ रहेगा। और मैं आपके जीवनक्रमको पूरी-पूरी व्यक्तिगत रुचिसे देखता रहूँगा।

जब मैंने आपके देशकी यात्रा करनेका निश्चय किया था, उसी समय अपने ऊपर यह कठोर बन्धन लगा लिया था कि मैं आपकी राजनीतिक समस्याओंके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहूँगा, और न अभी इस विषयमें कुछ कहनेका मेरा इरादा है। लेकिन मुझे मालूम है कि अभी एक महत्त्वपूर्ण आयोग आपकी राजनीतिक दशाकी जाँच कर रहा है। जहाँतक मुझे समय मिल पाया है, मैं इसकी कार्यवाहीका अध्ययन करनेकी कोशिश करता रहा हूँ। और मैं यही कामना करना चाहूँगा कि इसकी कार्यवाही और इसके निष्कर्ष इतने बुद्धिमत्तापूर्ण और अच्छे हों कि वे इस देशके लिए, जो दुनियाके सर्वोत्तम देशोंकी कोटिमें आता है, विशुद्ध वरदान साबित हो सकें।

राजनीतिक सवालोंपर कुछ कहे बिना मैं यह आशा भी व्यक्त करना चाहूँगा कि जिस प्रकार एक होकर आपने मुझ-जैसे अदना आदमीका स्वागत-सत्कार किया है, उसी प्रकार एक होकर आप अपनी राजनीतिक आकांक्षाको पूरा करनेके लिए भी काम करेंगे, अपने तमाम मतभेद भुला देंगे, और बजाय ऐसा सोचनेके कि हम हिन्दू हैं और हम बौद्ध, हम ईसाई हैं और हम मुसलमान आदि तथा हमारा एक दूसरेसे कोई सरोकार नहीं है, आप अपने आपको इस महान देशकी जनता समझेंगे और अपनी उच्चतम राजनीतिक आकांक्षाको पूरा करेंगे। खुद मेरी समझमें तो यह बात कभी नहीं आ पाई है कि कोई अल्पसंख्यक जाति ऐसा क्यों सोचे कि यदि उसे पृथक् प्रतिनिधित्व नहीं दिया जाता तो उसकी माँगोंपर पूरा ध्यान नहीं दिया जायेगा और वे उसे नहीं मिलेंगी। ऐसा रुख तो मुझे बराबर राष्ट्रीय भावनाके अभावका सूचक-सा जान पड़ा है।

आज सुबह अपने देश भाइयोंके सामने बोलते हुए मैंने जो विचार व्यक्त किया था, उसे यहाँ फिर दोहराना चाहता हूँ। वह यह है कि जिन लोगोंने लंकाको अपने देशकी तरह अपना लिया है और अब यहाँ सिर्फ अपनी जीविका ही नहीं कमा रहे हैं, बल्कि और भी बहुत-कुछ यहाँसे प्राप्त कर रहे हैं, उन्हें अपने हितोंके मुकाबले यहाँके मूल निवासियों अर्थात् सिंहलियोंके हितोंको प्राथमिकता देनी चाहिए। लेकिन, मैं जानता हूँ कि इस विषयमें मुझे अधिक गहराई और विस्तारसे कुछ नहीं कहना चाहिए।

अब मैं एक-दो वाक्य उस विषयपर कहना चाहूँगा जिसके सम्बन्धमें मैं बराबर सभी सभाओंमें बोलता आ रहा हूँ। मेरा मतलब अस्पृश्यताकी घोर बुराईके सन्दर्भमें जाति-भेदके सवालसे है।

मैंने जिससे भी इस विषयपर बातचीत की है, सभीने मुझे यह विश्वास दिलाया है कि बौद्ध-धर्ममें अस्पृश्यताकी बात तो दूर रही, जाति-भेदतकके लिए कोई आधार नहीं है। किन्तु, बड़े आश्चर्यकी बात है कि इस देशके बौद्धोंके बीच भी ऐसा कड़ा सामाजिक विभाजन है और ऊँच नीचकी भावना है। यह भावना इतनी प्रबल है कि अस्पृश्यताकी सीमातक जाती है। उदाहरणके लिए, रोडियोंके सम्बन्धमें यही बात लागू

होती है, यद्यपि आज सुबह मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि उनकी संख्या अब ६०० से अधिक नहीं होगी। मैं जानता हूँ कि यदि भारत बुद्धके सन्देशको और महेन्द्रको आपके देशमें भेजनेके लिए गर्व कर सकता है तो आपको जाति-भेदके अभिशापसे अभिशप्त करनेके लिए उसे लज्जाका भी भागी बनना है। कितना अच्छा हो कि आप भारतसे बौद्ध-धर्मके तत्त्वोंको, यदि वे आज भी वहाँ मौजूद हों तो, अधिकाधिक ग्रहण करें और उस महान् देशसे आपको जो अभिशाप मिला है, उसे त्याग दें।

इसी तरह, जहाँतक मैंने बौद्ध-धर्मका अध्ययन किया है और लोक-मतका प्रतिनिधित्व करनेवाले जाने-माने लोगोंसे बातचीतकी है, आपके बीच मद्यपानके अभिशापके अस्तित्वका कोई आधार मुझे दिखाई नहीं देता। यह देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई है कि आपको ऐसा अधिकार है कि यदि किसी खास इलाकेके लोग चाहें तो वहाँ मद्यनिषेध किया जा सकता है—और आप इस अधिकारका लाभ भी उठा रहे हैं। लेकिन, मेरा यह दु:खद अनुभव रहा है कि इस विनाशकारी अभिशापको किसी ऐसे-वैसे तरीकेसे दूर नहीं किया जा सकता और न इसके प्रति धीरजसे काम लेनेकी ही गुंजाइश है। इसलिए मैं आपसे नम्रतापूर्वक अनुरोध करूँगा कि इस दिशामें अपने प्रयत्नोंमें आप अधिक गति लाइए और इस देशको इस जबरदस्त बुराईसे, जो कमसे-कम श्रमिक वर्गकी शक्ति और नैतिकताका विनाश कर रही है, देशको छुटकारा दिलाइए। और यह आशा तो मैं करता ही हूँ कि आप विदेशी शराबके साथ भी कोई रियायत नहीं करेंगे। मुझे मालूम है कि वह भी उतनी ही नुकसानदेह होती है, जितनी कि देशी शराब। जहाँतक मैं खुद परिस्थितियोंका अध्ययन कर सका हूँ और मद्यनिषेधकी समस्याका अनुभव रखनेवाले डाक्टर मित्रोंसे विचार-विमर्श कर सका हूँ, मुझे तो इसमें कोई सन्देह नहीं दिखाई देता कि हम समशीतोष्ण कटिबन्धमें रहनेवाले लोगोंके लिए मद्यपानका कोई कारण नहीं है।

अब मैं एक-दो वाक्य चरखेके सन्देशके बारेमें, जहाँतक वह आपपर लागू होता है, कहूँगा। मैं जानता हूँ और यह जानकर मुझे बड़ी खुशी होती है कि आप लोग उस तरहकी कष्टकर गरीबीसे अनभिज्ञ हैं जो भारतमें व्याप्त है और जिसके कारण करोड़ों लोगोंको प्रतिदिन भूखा रहना पड़ता है। इसलिए चरखेका आपके लिए शायद कोई आर्थिक महत्त्व न हो, लेकिन मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं दिखाई देता कि इस सुन्दर देशके लिए इसका सांस्कृतिक महत्त्व बहुत अधिक है। सादगीका इसका जीवन्त सन्देश सभी देशोंपर लागू होता है, और आप यह स्वीकार करेंगे कि यदि आपके यहाँ लड़के-लड़कियाँ, बल्कि स्त्री-पुरुष भी प्रतिदिन एक घंटा सूत काता करें और यदि आप अपनी वस्त्र-सम्बन्धी आवश्यकताओंकी हदतक स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बन जायें तो उससे आपको कोई हानि तो नहीं ही होगी, उलटे उस राष्ट्रके गौरव और आत्म-विश्वासकी अभिवृद्धि होगी।

फैशनके प्रति लोगोंके मोहको मैं बड़े चिन्तातुर मनसे देखता रहा हूँ। आजके यहाँके उच्चतर वर्गोंके युवक-युवतियोंमें फैशनपरस्ती बहुत आ गई है। पश्चिमकी इस चकाचौंधमें डाल देनेवाले सम्मोहनके चक्करमें पड़कर वे अपने-आपको देशसे गरीब

लोगोंसे, जो ऐसे फैशनकी बात कभी सोच ही नहीं सकते, किस प्रकार अलग करते जा रहे हैं, इसका उन्हें कोई भान नही है। मुझे तो यही लगता है कि यदि आप अपनी सादगीको छोड़कर इस झूठी चमक-दमकको अपना लेंगे तो यह इस महान राष्ट्रके लिए अशुभ, बहुत ही अशुभ बात होगी।

लेकिन, आप चरखेके इस सांस्कृतिक पहलूको समझें या न समझें, आप कई मंचोसे स्वेच्छासे भारतके प्रति अपनी निष्ठाकी घोषणा तो कर ही चुके हैं—आपने उसे अपनी मातृभूमि कहा है। बड़ी-बड़ी थैलियाँ भेंट करके आपने उस निष्ठाका व्यावहारिक प्रमाण भी दिया है। अब आपसे मेरा यही अनुरोध है कि आप दोनों देशोंको जोड़नेवाली इस कड़ीको और भी मजबूत बनायें और आपके अनुदानोंसे जो खादी तैयार होगी उसे अपने कपड़े रखनेकी आलमारियोंमें पर्याप्त स्थान देकर इस सम्बन्धको आप जीवन्त रूप दें।

आपने मुझपर जिस प्रकार हृदय खोलकर स्नेह और कृपाकी वर्षा की है उसका तनिक भी प्रतिदान देनेकी सामर्थ्य मुझमें नही है, लेकिन मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि भूखसे तड़पते वाणीहीन करोड़ों लोग, जिनके लिए आपने धन दिया है, आपको इस सहायताके लिए आशीर्वाद देंगे, और उन करोड़ों लोगोंके एक आत्म-नियुक्त अदनासे प्रतिनिधिके नाते मैं सर्वशक्तिमानसे यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि वह आपका कल्याण करे और इस सुन्दर द्वीपके तमाम लोगोंको वे सभी शक्तियाँ और सम्पदाएँ प्रदान करे जिनके आप पात्र हैं। मैं स्वयंसेवकों और स्वागत-समितिके सदस्योंको भी हम जबतक यहाँ रहे तबतक उन्होंने मेरे और मेरे साथियोंके प्रति जो स्नेह दिखाया, उसके लिए धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

२१४. भाषण : जफनाकी सार्वजनिक सभामें

२६ नवम्बर, १९२७

इन सभी मानपत्रों और अनेकानेक थैलियोंके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ।

आपने जिस भावनाके वशीभूत होकर अपने भेंट किये सभी मानपत्रोंको यहाँ पढ़नेका आग्रह नही किया, उसकी मैं कद्र करता हूँ, लेकिन स्वागत समितिने बहुत ही सौजन्यपूर्वक और मेरी सुविधाका खयाल करके मुझे सभी मानपत्रोंकी थैलियाँ पहले ही सुलभ करा दी थीं। इस सभामें आनेके पूर्व ही मै इन मानपत्रोंको ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूँ और उनमें से एकमें बिलकुल ठीक ही कहा गया है कि मैं जफनाके नवयुवकोंके कारण ही लंका आया।

लंका आकर लंकावासियोंके असीम आतिथ्यका उपभोग करनेके बाद मैं यही कह सकता हूँ कि मेरा मन आपके इस सुन्दर देशकी यात्राकी सुखदतम स्मृतियोंसे भरा हुआ है।

जफना आकर तो मुझे ऐसा लगता ही नहीं कि मैं लंकामें हूँ। मुझे लगता है कि जैसे मैं भारतके ही किसी हिस्सेमें होऊँ। न आपके चेहरे और न आपकी भाषा ही मेरे लिए विदेशी है। यद्यपि मैं आपमें से हरएकको सूरतसे नहीं पहचान सकता, फिर भी मैं जानता हूँ कि मैं आपमें से कुछ लोगोंसे भारतमें मिल चुका हूँ।

मेरा खयाल है इसीलिए आपने ऐसा माना कि आपको मुझपर अपना अपरिमित आतिथ्य उँड़ेलकर ही संतुष्ट होनेकी जरूरत नहीं है, बल्कि आप मुझसे कुछ काम भी ले सकते हैं। जब मैं लंकाके दक्षिणी और मध्य-भागोंका दौरा कर रहा था उस समय पत्रलेखकोंने मुझपर पेचीदे सवालोंकी उतनी बौछार नहीं की थी जितनी कि मेरे कोलम्बोमें रहते हुए भी जफनाके भाइयोंने अपने पत्रोंके जरिये की। उन्होंने मुझसे तरह-तरहके पेचीदे सवाल पूछे।

यह सब मैं कोई शिकायतके तौरपर नहीं कह रहा हूँ। इसमें मेरा उद्देश्य आपको यह बतलाना है कि मैं इन तमाम पत्रोंमें निहित भावनाकी कद्र करता हूँ। मैं जानता हूँ कि यह आपके इस विश्वासका द्योतक है कि आपकी अपनी कुछ-एक समस्याओंका समाधान पानेमें मैं आपकी सहायता कर सकता हूँ। यह आपके साथ मेरे मैत्री-सम्बन्धका भी सूचक है, क्योंकि मित्रको ही यह विशेष अधिकार प्राप्त होता है कि वह केवल अपने मित्रका स्वागत-सत्कार करके ही न रह जाये, बल्कि उसे अपना विश्वास-भाजन भी बनाये, उसे अपनी कठिनाइयोंको दूर करनेको आमन्त्रित करे।

मैं जानता हूँ कि पत्रलेखकोंने अपने पत्रोंमें जो सवाल उठाये हैं, उनका समाधान तत्काल आपके सामने न रखनेके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। उन सारे पत्रोंको ध्यानमें रखते हुए मैं इन चार दिनोंमें, जबतक मैं यहाँ रहूँगा, अपने आसपासके वातावरणसे, जहाँतक सम्भव है वहाँतक, सारे प्रश्नोंके मर्मको समझ लेना चाहता हूँ। यदि मैं ऐसा न करूँ तो मुझे पूरा विश्वास है कि जिन प्रश्नोंकी पृष्ठभूमि मुझे ठीकसे मालूम नहीं है उनके बारेमें जल्दबाजीमें निर्णय देकर मैं आपके साथ भी अन्याय करूँगा और खुद अपने साथ भी।

आपकी ग्राम-समितियोंके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। आपके यहाँके अनेकानेक ग्राम-संगठनोंकी प्रगति तथा कार्य-प्रणालीकी जानकारी देनेके खयालसे आपने जो विवरण तैयार करके मुझे देनेकी कृपा की थी, उसे मैं पढ गया हूँ। विवरणके लेखकोंके इस विचारसे मैं सहमत हूँ कि इन ग्राम-संगठनोंका सफल संचालन निस्सन्देह स्वराज्य-प्राप्तिकी कुंजी है। मैं आपको अपना यह अनुभवगत निष्कर्ष बता दूँ कि किसी भी ग्राम संगठनकी सफलता अच्छे कानूनपर नहीं, बल्कि उसे चलानेवाले अच्छे लोगोंपर निर्भर करती है। इसके लिए ऐसे बहुत सारे युवकों और युवतियों, बल्कि वृद्ध लोगोंकी भी आवश्यकता होगी जो गाँवमें गहरी और व्यक्तिगत ढंगकी रुचि लें — उतनी ही, जितनी रुचि वे अपने परिवारोंमें लेते हैं। आखिरकार राष्ट्रीयताकी सबसे सच्ची कसौटी यही तो है कि व्यक्ति सिर्फ अपने परिवारके आधे दर्जन या अपने कुनबेके सौ-पचास लोगोंके बारेमें ही नहीं सोचे, बल्कि जिस समुदायको वह अपना राष्ट्र कहता है उसके हितोंको अपने निजी हितोंके ही समान समझे।

जब मैं कोलम्बोमें था, उस समय मुझे जो पुस्तक भेजी गई थी और उसके बादमें जो साहित्य मुझे सुलभ कराया गया है, उससे आपकी प्रवृत्तियोंके बारेमें इतना तो जान ही गया हूँ कि कह सकूँ कि सफल ग्राम-संगठनके लिए आवश्यक सारे उपादान आपके पास है। आपका समाज छोटा और काफी सुगठित है। इस समाजके सभी लोग एक ही भाषा बोलते हैं और स्पष्टतः आपके यहाँ सुव्यवस्थित शिक्षा-संस्थाएँ हैं। जाहिर है कि आपने प्राचीन सभ्यतामें जो-कुछ अच्छा और उदात्त था, उसके प्रति अपना प्रेम अभीतक खोया नहीं है। स्पष्ट ही, पाश्चात्य सभ्यताकी चमक-दमकसे अभी आपकी आँखें चौंधिया नहीं गई हैं। इसलिए, आपके लिए अपने भाग्यका निर्माण स्वयं करना बहुत आसान है।

यह जानकर मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ है कि अब आपके यहाँ पूर्ण मद्यनिषेध लगभग सम्पन्न होनेको है। अभिशाप रूप शराबखानोंको बन्द करना सही दिशामें उठाया गया एक महत्त्वपूर्ण कदम है। आप न केवल यहाँके लोगोंकी हार्दिक बधाईके पात्र हैं, न केवल लंकाकी जनताकी बधाईके पात्र हैं, बल्कि अपनी मातृभूमिके लोगोंकी भी हार्दिक बधाईके पात्र हैं। मुझे इस बातसे और भी खुशी होती है कि आपने बिलकुल निकट भविष्यमें पूर्ण मद्यनिषेध सम्पन्न करनेका वचन दिया है, लेकिन मुझे मालूम हुआ है कि आपके रास्तेमें कुछ आन्तरिक कठिनाइयाँ हैं।

एक भाईने मुझे पत्र लिखते हुए साथमें एक पर्चा भेजा है, जिसका उद्देश्य स्पष्टतः मद्यनिषेधके लिए काम कर रहे लोगोंकी प्रवृत्तियोंका प्रतिकार करना है। मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि वह पर्चा बहुत सुन्दर ढंगसे लिखा हुआ है और उसे ऊपर-ऊपरसे पढ़नेपर तो ऐसा लगता है कि कतिपय धर्मतत्त्वज्ञ भी मद्यपानके पक्षमें रहे हैं। यह देखकर मुझे बड़ा दुःख हुआ है और साथ ही आश्चर्य भी। दुखके साथ कहना पड़ता है कि पर्चेके लेखकने अपनी परिहास-प्रियता और सयानापन दिखानेकी उत्कंठा में उन लोगोंकी भावनाको चोट पहुँचानेमें भी कोई संकोच नहीं किया है, जिनके उद्देश्यका उसने विरोध किया है। उसने केलेके सुन्दर पत्तोंपर बड़े ही सुरुचिपूर्ण और सादे ढंगसे चावल और दही परोसकर खानेवालोंकी हँसी उड़ानेमें भी कोई संकोच नहीं दिखाया है और न उन लोगोंके सादे जीवनका ही मजाक उड़ानेमें उसे कोई हिचक हुई है, जो तन ढँकनेके लिए सिर्फ एक धोती ही काफी समझते हैं। उसने ऐसे लोगोंको अर्ध-नग्न कहा है। कहाँ तो मद्यनिषेध-जैसा गम्भीर विषय और कहाँ लेखक द्वारा — यदि वह भारतीय हो तो — अपने ही देशभाइयोंकी सादगीका इस तरह हलके मनसे मजाक उड़ाना? उसके प्रति न्याय करनेकी अपनी पूरी कोशिशके बावजूद मुझे इन दो बातोंमें कोई संगति नहीं दिखाई दी।

लेकिन चाहे आपके सामने आन्तरिक कठिनाइयाँ हों या बाहरी, मैं तो यही उम्मीद करता हूँ कि आप पूर्ण मद्यनिषेध सम्पन्न करनेके लिए अविरत प्रयत्न करते रहेंगे।

चूँकि मैं बराबर आलोचकोंकी सही बातको स्वीकार करने और उनसे जो सीखने लायक है उसे सीखनेमें विश्वास रखता हूँ; इसलिए इस पर्चेपर से मैं आपको दो सुझाव देना चाहूँगा। उनमें से एक यह है कि जोर-जबरदस्ती या असत्यकी छाया-

तकसे दूर रहिए। अवतक कोई भी सच्चा सुधार जोर-जबरदस्तीके बलपर सम्पन्न नहीं हुआ है, क्योंकि यद्यपि वैसा करनेसे सतही सफलता मिल सकती है, लेकिन वह ऐसी अनेक बुराइयोंको जन्म देता है जो उस बुराईसे भी बदतर होती हैं जिसे दूर करनेके लिए ऐसा तरीका अपनाया जाता है। लेकिन, कोई मेरी बातोंका गलत अर्थ न लगाये। पूर्ण मद्यनिषेधकी घोषणा करनेवाले कानूनको मैं किसी भी रूपमें जोर-जबरदस्ती नहीं मानता। जब लोकमत पूरी ईमानदारीसे और साफ-साफ पूर्ण मद्यनिषेधके पक्षमें हो तब जनताको न केवल कानून द्वारा पूर्ण मद्यनिषेधकी घोषणा कराने और उसे लागू करानेके लिए जरूरी कदम उठानेका अधिकार है, बल्कि वैसा करना उसका कर्त्तव्य हो जाता है।

इस पर्चेके लेखकने असत्यमय आचरणके दृष्टान्तोंका उदाहरण देते हुए कहा है कि कुछ लोग एक ओर तो मद्यनिषेध-सम्बन्धी सभाओंमें भाग लेते हैं और दूसरी ओर शराब पीते हैं। यदि मद्यनिषेध आन्दोलनको चलानेवाले ऐसे पाखण्डी लोग भी हों तो इसका विफल होना निश्चित है। मैं आशा करता हूँ कि मद्यनिषेध-जैसे न्याय-संगत, उदात्त और मानवीय उद्देश्यके लिए काम करनेमें आप लोग अपने आपको पाखण्डसे मुक्त रखनेकी विशेष सावधानी बरतेंगे।

दूसरा सुझाव यह है कि मद्यनिषेध कानून स्वीकार करवा लेनेके बाद आपको चुपचाप बैठ नहीं जाना चाहिए। सच तो यह है कि आपके लिए वैसा करनेकी कोई गुंजाइश ही नहीं है।

पर्चेका लेखक प्रकारान्तरसे यह कहता है कि अमेरिकामें मद्यनिषेध विफल रहा। किन्तु मुझे खुद अमेरिकी लोगोंसे ही इस विषयमें बहुत-कुछ मालूम हुआ है। अमेरिका-जैसे बड़े देशमें मद्यनिषेध यद्यपि हमें बहुत ही कठिन, लगभग असम्भव प्रतीत हो सकता है, किन्तु यह वहाँ विफल नहीं हुआ है, बल्कि धीरे-धीरे सफलताकी मंजिल तय कर रहा है। अमेरिकाके साहसी सुधारकोंको जो कठिनाइयाँ झेलनी पड़ रही हैं, उनके मुकाबले आपके देशमें तो कोई कठिनाई है ही नहीं। मैं आपसे उन महान सुधारकोंका अनुकरण करनेको कहूँगा। जिस कानूनको बनवानेके लिए उन्होंने दीर्घ कालतक सतत संघर्ष किया था, उसे प्राप्त करनेके बाद वे निश्चिन्त होकर बैठ नहीं गये हैं, बल्कि अब वे एक बहुत बड़ा रचनात्मक कार्य करनेमें जुटे हुए हैं। कारण यह है कि जब किसीको शराबखोरीकी लत लग जाती है तो उसे उस ओरसे विरत करना अत्यन्त कठिन कार्य होता है। इसलिए अमेरिकावाले ऐसे लोगोंको सही रास्तेपर लानेके लिए तरह-तरहके उपाय कर रहे हैं।

शराबखोरोंके लिए शराबखोरीकी लत तो एक बीमारी-जैसी ही है, इसलिए आपको उनके लिए वही सब करना होगा जो आप अपने बीमार भाई या बहनके लिए करेंगे। शराबखानोंके स्थानपर उनके लिए आपको उपाहारगृहोंकी व्यवस्था करनी पड़ेगी, उन्हें उनके किसी मनपसन्द काममें व्यस्त रखनेके लिए मनोरंजनके सभी निर्दोष साधन सुलभ करने पड़ेंगे। आप लोगोंको यह सुधार सम्पन्न करनेकी सारी सुविधाएँ सुलभ हैं, और यदि आप इसमें पूरी तरह सफल हो जायेंगे तो सारे भारतके लिए एक गौरवपूर्ण उदाहरण पेश करेंगे।

और अन्तमें मेरा सुझाव यह है कि आप अपने खिलाफ काम करनेवाले लोगोंके प्रति अपने मनमें अधीरता या क्रोध नहीं लायेंगे। मुझे नही मालूम कि यहाँकी वस्तु-स्थिति भी भारत तथा दुनियाके अन्य हिस्सोंके ही समान है या नही, लेकिन मैं इतना अवश्य जानता हूँ कि भारत, इंग्लैंड और अमेरिकामें मद्यनिषेध-विरोधियोंके पक्षमें केवल सुयोग्य किन्तु सिद्धान्तहीन लेखकगण ही नहीं हैं, बल्कि शराब बनाने-वालोंकी थैलियोंके मुँह भी उनके लिए खुले रहते हैं।

लेकिन, आपसे तो मैं यही अपेक्षा करूँगा कि जो सिद्धान्त मैंने हमारे अपने देशके सामने रखनेकी धृष्टता की है और जिसे आप भी अपनी मातृभूमि कहते हैं, यदि आप उसी सिद्धान्तके अनुसार अर्थात् सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तके अनुसार ही चलेंगे तो इन चतुर लेखकोंके विरोधको निष्प्रभाव बना सकेंगे, भले ही उनके पीछे पैसेका बल क्यों न हो।

अब मैं दलित, या कहिए शोषित वर्गोंके सम्बन्धमें कुछ कहना चाहता हूँ। उनसे दो मानपत्र पाकर मुझे बड़ी खुशी हुई। मैं यह स्वीकार करूँगा कि यह बुराई किसी भी हदतक आपके यहाँ होगी, ऐसी आशा मैंने नहीं की थी। मैं तो समझता था कि इस बुराईको आप अपनी मातृभूमिमें ही छोड़ आये हैं और इस द्वीपमें आपने एक नये अध्यायका शुभारम्भ किया है। मैंने सोचा था कि आप तो उस देशमें रहते हैं जहाँ बुद्धकी आत्मा निवास करती है और इसलिए आप अस्पृश्यताके कलंकसे मुक्त होंगे। आखिरकार गौतम हिन्दू ही तो थे। वे और कुछ नहीं, महानतम हिन्दू सुधारकोंमें से ही एक थे। इसलिए किसी भी हिन्दूको उनसे मानव-प्रेमकी शिक्षा लेनेमें *लज्जाका* अनुभव करनेकी जरूरत नही है। हम यह समझ लें कि एक भी मनुष्यको अपनेसे नीच अथवा अस्पृश्य मानना पाप है। यदि आप सर्वज्ञ और सबसे प्रेम करनेवाले ईश्वरमें विश्वास रखते हैं जैसा कि आपको रखना ही चाहिए, तो आप अपने दलित भाइयोंके लिए अपने मन्दिरोंके दरवाजे तुरन्त खोल देंगे।

दलित भाइयोंसे मैं एक बात कहना चाहूँगा। मैं नहीं जानता कि मद्यपानके सवालको स्थगित कैसे रखा जा सकता है। लेकिन यह जानता हूँ कि भारतमें बहुत-से दलित भाइयोंको शराबखोरीकी आदत लगी हुई है। यदि आपमें से किसीको यह लत हो तो मैं उम्मीद करता हूँ कि वह इसे छोड़ देगा, और अगर कोई मरे हुए पशुओंका मांस या गोमांस खाते हों तो वे हिन्दू धर्मके सच्चे अनुयायी बननेके लिए ये आदतें भी छोड़ देंगे।

अभी मेरे सामने मामूली-सी आपसी अनबनके बारेमें लिखे बहुत सारे पत्र पड़े हुए हैं। ईसाइयों और हिन्दुओंके बीच जो-कुछ मतभेद हो गया है, उसे मैं ऐसी मामूली अनबन ही कहूँगा। लेकिन उसके सम्बन्धमें लिखे इन पत्रोंसे मुझे बहुत धक्का लगा है। मैं अबतक इन मतभेदोंका कारण नहीं समझ पाया हूँ। इसलिए मैं उनके बारेमें ज्यादा कुछ नही कहना चाहता। मैं चाहूँगा कि मेरे जफनासे प्रस्थान करनेसे पूर्व ही मुझे आपसे यह सुननेको मिले कि आपने आपसमें ही इन मतभेदोंका निबटारा कर लिया है। निश्चय ही आप लोगोंका समाज इतना छोटा है कि आप

इन मामूली मतभेदोंको आपसमें ही निबटा सकते हैं। जहाँतक मैं उन पत्रोंसे समझ पाया हूँ, वास्तवमें इस अनबनके लिए भी यहाँ कोई कारण नहीं है, लेकिन मैं आशा करता हूँ कि मैं भविष्यमें किसी अवसरपर इस विषयपर विस्तारसे कुछ कहूँगा। यहाँ तो मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मैं उस सवालमें दिलचस्पी रखने-वाले हरएक व्यक्तिको मुझे मुक्त भावमें किन्तु संक्षेपमें अपने विचारोंको स्पष्ट करते हुए पत्र लिखनेको निमन्त्रित करता हूँ। इस मामलेमें आपकी कुछ भी सहायता करके मुझे बड़ी खुशी होगी।

और अन्तमें, चूँकि आपने मुझे थैलियाँ भेंट करनेमें इतनी उदारता दिखाई है और मैं जानता हूँ कि अभी और भी बहुत-सी थैलियाँ मुझे मिलेंगी, इसलिए आपसे मेरा अनुरोध है कि अपने कपड़े रखनेकी आलमारीमें खादीको थोड़ा स्थान देकर आप अपनी मातृभूमिके प्रति अपना प्रेम और भारतके करोड़ो क्षुधार्त्त मानवोंके प्रति अपनी सहानुभूति बराबर बनाये रखिए। यह आपके और उन करोड़ों क्षुधार्त्त लोगोंके बीच एक जीवन्त सम्बन्ध होगा। मैं जानता हूँ कि इस मामलेमें सबसे बड़ा दोष आपके यहाँकी स्त्रियोंका ही है, और मैं उनमेंसे प्रत्येकसे अलगसे अनुरोध करता हूँ कि वे नफीस रेशमी साड़ियोंके मोहको कम करें और उनकी अभावग्रस्त बहनें जो वस्त्र तैयार कर सकती हैं उन्हींका उपयोग करके संतोष मानें। तब और केवल तभी उनके बारेमें ऐसा माना जायेगा कि वे अनुश्रुतियोंके अनुसार अपने पुनीत चरणोंसे इस भूमिको पावन करनेवाली सीताके आदर्शोका किसी हदतक पालन कर रही हैं। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि वे खादीकी साड़ी पहननेके कारण कुछ कम सुन्दर नहीं दिखेंगी। और मैं उन्हें इस बातके लिए भी अभीसे आगाह कर देता हूँ कि यहाँसे प्रस्थान करनेसे पूर्व मैं उनसे बहुत सारे जेवरात पानेकी अपेक्षा रखता हूँ।

एक बात है, जो मुझे नहीं भूलनी चाहिए। आपने मुझपर भारी-भरकम चीजोंका बोझ लाद दिया है। मैं तो समझता था कि आप लोग चूँकि मुझे निकटसे जाननेका दावा करते हैं, इसलिए आपको यह भी मालूम होगा कि यदि आप मुझे मोटे-मोटे फ्रेमोंमें मढ़वाकर मानपत्र भेंट करते हैं तो वे आपसे कुछ लेकर आपको ही लौटा दिये जायेंगे। आपने केवल मोटे-मोटे फ्रेमोंपर ही बहुत खर्च नहीं किया है, बल्कि मानपत्रोंको भी सुन्दर ढंगसे सजाया है। यदि आपने यह सब मनमें यह बात रख कर नहीं किया हो कि आपसे इन मानपत्रोंको ऊँची कीमतोंपर खरीदनेको कहा जायेगा, तो उसका मतलब यह है कि आपने अपनी क्षुधा-पीड़ित बहनोंको उतने पैसेसे वंचित कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू ऑर्गनाइज़र?

२१५. भाषण: छात्र-कांग्रेसकी सभा, जफनामें

२६ नवम्बर, १९२७

आज शाम भेंट किये गये आपके सुन्दर मानपत्रके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आपने कहा है, और ठीक ही कहा है कि इस सुन्दर द्वीपमें मुझे ले आनेका श्रेय आपको ही है। पर आपको यह भी याद रखना चाहिए कि किसी कामका श्रेय लेनेवालोंको कोई गड़बड़ी होनेकी हालतमें बदनामी भी अपने ही सिर लेनी पड़ती है।

आज शाम यहाँ आपको कोई सन्देश देना मेरे लिए थोड़ा कठिन है। इसलिए कि मुझे न तो आपकी कांग्रेसके बारेमें पर्याप्त जानकारी है और न ही मुझे यह पता है कि यहाँ इस सभामें किन-किन वर्गोके लोग उपस्थित हैं; हाँ, आपके सुयोग्य अध्यक्षने आपकी कांग्रेसके उद्देश्य मुझे अवश्य बतला दिये हैं। इन उद्देश्योंके बारेमें ही मैं अपने कुछ विचार आपके सामने रखता हूँ।

आपके अध्यक्षकी बात यदि मैंने ठीक-ठीक समझी है तो आपका प्रथम उद्देश्य प्राचीन संस्कृतिका पुनरुद्धार करना है। तब फिर आपको समझना चाहिए कि प्राचीन संस्कृति आखिर है क्या? और फिर निश्चय ही वह संस्कृति ऐसी होनी चाहिए जिसका पुनरुद्धार करनेके इच्छुक हिन्दू, ईसाई, बौद्ध या कहिए, हर धर्म और विश्वासके विद्यार्थी हों। यह इसलिए कि यहाँ मैं यह मानकर चलता हूँ कि आप जब प्राचीन संस्कृतिकी बात कहते हैं तो आप केवल हिन्दू विद्यार्थियोंतक ही अपनेको सीमित नहीं रखते। मैं यह मानकर चलता हूँ कि इस छात्र-संघमें हिन्दू, ईसाई, मुसलमान और बौद्ध आदि सभी धर्मोंके विद्यार्थी शामिल हैं। हालाँकि इस समय इसके सदस्योंमें एक भी मुसलमान या बौद्ध विद्यार्थी नहीं है, पर मेरे तर्कपर इस बातका कोई प्रभाव इसलिए नही पड़ता कि आपका चरम लक्ष्य तो सभीके लिए स्वराज्य हासिल करना है, जफनाके हिन्दुओं और ईसाइयों-भरके लिए नहीं। आप तो इस द्वीपमें बसनेवाली समस्त जनताके लिए स्वराज्य चाहते हैं और जफना इसका एक हिस्सा ही है। इसलिए मैंने इन विभिन्न धर्मोंके विद्यार्थियोंको संघमें शामिल करनेके बारेमें जो बात कही है वह इसपर खरी उतरती है। अब इस स्थितिमें हम अपना प्रश्न लें — हम जिसका पुनरुद्धार करना चाहते है वह प्राचीन संस्कृति आखिर है क्या? इससे स्पष्ट है कि वह एक ऐसी संस्कृति होनी चाहिए जो इन सभी धर्मावलम्बियोंकी समान संस्कृति हो और जिसे ये सभी लोग स्वीकार करते हों। इसलिए निःसन्देह ही वह संस्कृति प्रधानतया तो हिन्दू संस्कृति ही होगी, लेकिन वह मात्र हिन्दू संस्कृति या विशुद्ध हिन्दू संस्कृति कदापि नही हो सकती। वह प्रधानतया हिन्दू संस्कृति होगी — ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ कि प्राचीन संस्कृतिका पुनरुद्धार करनेके इच्छुक आप लोग प्रमुखतया हिन्दू ही है, और आपको सदा ही उस

देशका ध्यान रहता है जिसे आप गर्वके साथ अपनी मातृभूमि कहनेमें हर्ष महसूस करते हैं, और जो सर्वथा उचित है।

मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि हिन्दू संस्कृतिमें बौद्ध संस्कृति भी आवश्यक रूपसे सम्मिलित है। इसका सीधा-सा कारण यह है कि स्वयं बुद्ध एक भारतीय थे और भारतीय ही नहीं, वे हिन्दुओंमें एक श्रेष्ठतम हिन्दू थे। गौतमकी जीवनीमें मुझे ऐसी कोई बात नहीं मिली जिसके आधारपर कहा जा सके कि उन्होंने हिन्दू-धर्म त्यागकर कोई अन्य धर्म अपना लिया था। मेरा काम और भी आसान हो जाता है जब मैं सोचता हूँ कि स्वयं ईसा भी तो एक एशियाई ही थे। इसलिए अब हमारे विचारके लिए प्रश्न यह होना चाहिए कि एशियाई संस्कृति या प्राचीन एशियाई संस्कृति क्या है। और इस तरह देखा जाये तो मुहम्मद भी तो एशियाई ही थे। चूँकि आप प्राचीन संस्कृतिके उन सभी तत्त्वों या उपादानोंका ही तो पुनरुद्धार करना चाहेंगे जो उच्चादर्शपूर्ण हैं और जिनका स्थायी महत्त्व है; इसलिए आप किसी भी ऐसे उपादानका पुनरुद्धार तो कर ही नहीं सकते जो इनमें से किसी भी धर्मके विरुद्ध पड़ता हो। अब प्रश्न यह बनता है : पता लगाया जाये कि वह कौन-सा तत्त्व या उपादान है जो इन सभी महान धर्मोंमें सर्वाधिक रूपमें समान पाया जाता है। और इस प्रकार सभी उच्चादर्शपूर्ण उपादानोंकी विवेचना करनेपर आपको जो सर्वाधिक सहज और स्पष्ट उपादान मिलेगा वह है सत्यवादिता और अहिंसा — इसलिए कि सत्य, निष्ठा और अहिंसा ही इन सभी महान धर्मोंमें समान रूपमें मौजूद रही हैं। जाहिर है कि आप उन अनेक रीति-रिवाजोंका पुनरुद्धार तो नहीं ही चाहेंगे जिनको आप और हम अब कभीके भूल चुके हैं और जो कभी किसी समयमें हिन्दू-धर्ममें शामिल थे। मुझे याद पड़ता है कि न्यायमूर्ति स्वर्गीय रानडेने प्राचीन संस्कृतिके बारेमें बोलते हुए एक अत्यन्त ही मूल्यवान विचार व्यक्त किया था। उन्होंने श्रोताओंसे कहा था कि उनमें से किसी भी एक व्यक्तिके लिए यह बतलाना कठिन होगा कि प्राचीन संस्कृतिका ठीक-ठीक रूप वास्तवमें क्या था; और वह संस्कृति कबसे प्राचीन न रहकर आधुनिक बनने लगी थी। उन्होंने यह भी कहा था कि कोई भी विवेकशील व्यक्ति किसी भी चीजको केवल इसलिए प्रमाण नहीं मान लेगा कि वह प्राचीन है। संस्कृति प्राचीन हो या आधुनिक, उसे तर्क और अनुभवकी कसौटीपर खरा तो उतरना ही चाहिए। मैं इस छात्रसंघके विद्यार्थियोंको यह चेतावनी इसलिए दे रहा हूँ क्यों कि वे देशके भाग्य-विधायक हैं और आज हमारे इस देशमें ही नहीं बल्कि सारे संसारमें अनेक प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ हमारे चारों ओर सिर उठा रही हैं। भारतके अपने अनुभवसे मैं कह सकता हूँ कि प्राचीन संस्कृतिके पुनरुद्धारकी दुहाई देनेवाले अनेक व्यक्ति पुनरुद्धारकी आड़में प्राचीन अन्धविश्वासों और पूर्वग्रहोंको पुनः जीवित करनेमें भी कोई संकोच नहीं करते।

गांधीजी धीमे स्वरमें बोल रहे थे और उनका भाषण दोहराया जा रहा था तथा उसका अनुवाद करनेकी जरूरत पड़ रही थी इसलिए क्षमा माँगते हुए उन्होंने कहा :

मैं आपको अपने अनुभवकी बात बतला रहा था। मैं बतला रहा था कि हमारी मातृभूमिमें ही कुछ प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ सक्रिय हो गई हैं। प्राचीन परम्पराओं और

प्राचीन नियमोंके गड़े मुर्दे उखाड़कर अस्पृश्यताकी घृणित प्रथाका औचित्य सिद्ध करनेकी कोशिश की जा रही है। आपको शायद मालूम हो कि ऐसा ही एक प्रयास अब देवदासियोंकी प्रथाका औचित्य ठहरानेके लिए किया जा रहा है।

मैंने आपको जो चेतावनी दी है कि प्राचीन संस्कृतिके पुनरुद्धारके नामपर बहकावेमें आकर आप गलत काम न करें, उससे आप ऐसा न समझें कि मैंने यों ही एक इतना लम्बा भाषण दे डाला है। अब आप शायद समझ गये होंगे कि यह चेतावनी कितनी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह चेतावनी आपको एक ऐसा व्यक्ति दे रहा है जो प्राचीन संस्कृतिका मात्र प्रेमी ही नहीं, वह जीवन-भर इसी कोशिशमें भरसक लगा रहा है कि प्राचीन संस्कृतिके सभी उच्चादर्शपूर्ण और स्थायी महत्त्वके उपादानोंको नया जीवन दिया जाये। प्राचीन संस्कृतिके छिपे हुए खजानेकी खोज करते-करते ही मुझे यह अनमोल रत्न हाथ लगा है कि प्राचीन हिन्दू संस्कृतिमें जितना भी कुछ स्थायी महत्त्वका है वह हमें ईसा, बुद्ध, मुहम्मद और जरतुश्तके उपदेशोंमें भी समान रूपसे मिलता है। इसीलिए मैंने अपने तईं यह तरीका निकाल लिया है कि जब मुझे हिन्दू-धर्ममें कोई ऐसी बात दिखाई पड़ती है जिसके बारेमें प्राचीन शास्त्रकार सहमत है, किन्तु जो मेरे ईसाई-बन्धु या मेरे मुसलमान भाईको स्वीकार्य नहीं है तब मुझे तत्काल उसकी प्राचीनतापर सन्देह होने लगता है। इस प्रकारके विवेचनके फलस्वरूप ही मैं इस अनिवार्य निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हमारे इस विश्वमें सबसे अधिक प्राचीन यदि कुछ है तो यही दो तत्व हैं — सत्य और अहिंसा। मैंने सत्य और अहिंसापर विचार करते-करते ही यह अनुभूति की है कि मुझे किसी भी उस प्राचीन प्रथा या रीति-रिवाजका पुनरुद्धार करनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए जो हमारे वर्तमान — आप चाहें तो कहिए आधुनिक — जीवनसे मेल न खाता हो। प्राचीन प्रथाएँ या रीति-रिवाज अपने उस कालमें सर्वथा उपयोगी और शायद नितान्त आवश्यक भी रहे हों जब उनको अपनाया गया था, परन्तु हो सकता है कि आधुनिक युगकी आवश्यकताओंसे उनकी पटरी पूरी तरह न बैठती हो, भले ही वे सत्य और अहिंसाके प्रतिकूल न हों। अब आप खुद देख सकते हैं कि हम जिसे करुणानिधि, दयामय, क्षमाशील आदि नाम देते है, उसी ईश्वरके नामपर बरकरार रखी जानेवाली अस्पृश्यता, देवदासी-प्रथा, शराबखोरी, पशु-बलि इत्यादिको जब हम एक ही झटकेमें, निर्ममताके साथ एक तरफ हटा देते है तो हमारे सामनेका मार्ग कितना प्रशस्त, कितना निरापद बन जाता है। ये प्रथाएँ हमारी नैतिकताकी भावनाको ठेस पहुँचाती हैं, इसलिए हम बिना हिचकिचाये तुरन्त इनका परित्याग कर सकते हैं। इसका निषेधात्मक पहलू आपने देखा। इसका एक रचनात्मक पहलू भी है, जो उतना ही महत्त्व रखता है।

इसका रचनात्मक पहलू आपके सामने रखनेके सिलसिलेमें मैं अहिंसाके सिद्धान्तके एक नितान्त आवश्यक, सहज निष्कर्षकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करता हूँ। मैंने इसे अपने अत्यन्त ही प्रिय मित्रों, चेट्टिनाडके चन्द बड़े ही कर्मठ समाज-सुधारकोंके सामने पेश किया था। वह निष्कर्ष या तर्क यह है — यदि हम अहिंसाका वरण करते हैं तो फिर हमको संसारकी किसी भी ऐसी वस्तुकी आकांक्षा नही करनी चाहिए

जो निम्नसे-निम्न या हीनसे-हीन मनुष्यको सुलभ न हो। यदि यह प्रस्ताव तर्क-सम्मत है—और मैं दावेके साथ कहता हूँ कि यह अहिंसाके सिद्धान्तका एक बिलकुल सीधा सहज निष्कर्ष है—और यदि आप इसे स्वीकार करते हैं और यह पूरे तौरपर तर्क-सम्मत भी है, तो इससे एक यही सहज परिणाम निकलता है कि हमें संसारकी किसी भी वस्तुके बदले अपनी प्राचीन कालकी सरलता, अपनी सादगीको त्यागनेके लिए तैयार नहीं होना चाहिए। अब आप शायद समझ गये होंगे कि आधुनिकताकी होड़का मैं इतना डटकर विरोध क्यों करता हूँ। पाश्चात्य देशोंमें आधुनिकताकी मोहक चकाचौंध ऐसी तड़ित-गतिसे कौंध कर आ रही है कि लगता है जैसे हम उसमें डूब जायेंगे, उसीके रंगमें रँग जायेंगे। मैंने अपने लेखोंमें और अपने भाषणोंमें भी इस बातका हर जगह पूरा ध्यान रखा है कि पाश्चात्य देशोंमें अपनाये जानेवाले आधुनिक तरीकों, उनकी आवश्यकताओं और भौतिक सुख-सुविधाओंकी बहुलताके तौर-तरीकेमें तथा गिरि-शिखरपर दिये गये ईसाके उपदेशकी सारभूत शिक्षाओंमें भेद किया जाये और इन दोनोंको एक ही समझनेकी गलती न की जाये। मैंने इसीलिए अपने भाषणके आरम्भमें ही आपको इसका संकेत दे दिया था कि मैं आगे क्या कहने जा रहा हूँ। आरम्भमें ही मैंने आपसे कहा था कि आखिर ईसा और मुहम्मद भी एशियाई ही थे। अमेरिका और इंग्लैंड तथा संसारके अन्य भागोंमें आज जो भी कुछ हो रहा है, हमें ईसाके उपदेशों और उनके सन्देशको उससे अलग समझना चाहिए और दोनोंमें स्पष्ट भेद करना चाहिए। मैं स्वयं भी दक्षिण आफ्रिकामें अपने हजारों-लाखों ईसाई मित्रोंके साथ रह चुका हूँ और अब तो सम्पर्कका दायरा बढ़ जानेके कारण संसार-भरके ईसाइयोंके साथ रह रहा हूँ, [पर मैंने अपने आपको उस पाश्चात्य चकाचौंधसे अछूता रखा है,] तो आप हिन्दू और मुट्ठीभर बौद्ध लोग—अगर इतने भी बौद्ध यहाँ हैं—भी अपनी प्राचीन संस्कृतिके प्रति सच्चे बने रहनेका संकल्प करें और तथाकथित ईसाइयतके वेशमें आपके पास पहुँचनेवाली इस मोहक चकाचौंधसे कोई सरोकार न रखें। यदि आपमें अडिग आस्था हो, यदि आप अपनी आस्थाको किसी भी तरह मन्द न पड़ने देनेके लिए प्रयत्नशील रहें, तो आप देखेंगे कि आपके ईसाई मित्र अपनी पाश्चात्य चकाचौंध लेकर भले ही आपके पास आयें, पर वे उसे त्याग देंगे और आपके सादगीके सिद्धान्तके कायल बन जायेंगे; क्योंकि इसीसे उस निष्कर्षकी सच्चाई सिद्ध होगी जो मैंने आप सबके सामने रखा है।

यदि आप मेरे सभी तर्कोंको भलीभाँति समझते गये हैं तो आपको मेरा सन्देश, चरखेका अमिट सन्देश, समझनेमें जरा भी कठिनाई नहीं होगी—इसलिए कि मुझे तो चरखेके पीछे ईश्वरका वरद्‌हस्त दिखाई देता है, मुझे तो उसमें एक ऐसे त्राणकर्ताके दर्शन होते हैं जो दीनसे-दीन जनोंकी आवश्यकताओंकी हर समय पूर्ति कर सकता है। इसीलिए मैं केवल चरखेकी बात सोचता हूँ, चरखा ही चलाता हूँ, चरखेके बारेमें ही ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ और इसीके बारेमें भाषण देता फिरता हूँ। और यदि आप मुझे दूसरी कोई ऐसी चीज बतला सकें जो हमें संसारके भूखे-नंगोंके निकट पहुँचा दे, हमें एकदम भंगियोंके स्तरपर ले आ सके, तो मैं अपना चरखा वापस ले लूँगा और आपकी बतलाई उस चीज या उस साधनको शिरोधार्य कर

लूँगा। आप शायद अब अच्छी तरह समझ गये होंगे कि मै क्यों इतनी बेशर्मीसे हर दिन भिक्षा-पात्र लेकर दर-दर भटकता फिरता हूँ और हर आदमीसे कहता हूँ कि खुशीसे जितना बन सके इसमें डाल दो। अब मैंने आपका काफी समय ले लिया है। अब आप ऊबने लगे होंगे। इसलिए मुझे अपना भाषण समाप्त करना चाहिए और इसकी त्रुटियोंको ठीक करनेका काम आपपर ही छोड़ देना चाहिए। मैं छात्रोंके साथ कई अन्य विषयोंपर भी बात करना चाहता हूँ, क्योंकि उनको मुझपर भरोसा है, लेकिन आज मुझे अधिक कुछ नही कहना चाहिए।

आपने जितना कुछ किया है और आप जो कर रहे है उस सबके लिए मैं समूचे हृदयसे आपका आभारी हूँ। मैं जब कोलम्बोमें था, आपने मेरे पास एक मसविदा भेजा था; यदि आप सब उसीका पालन करें, उसीके अनुसार चलें तो वह सचमुच आपकी बहादुरी होगी। हाँ, उस मसविदेमें एक अशुद्धि थी जिसे मैं शुद्ध कर देना चाहता था, लेकिन यह अब किसी अन्य अवसरपर करूँगा। आपने जिस धैर्यके साथ मेरी सारी बातें सुनी हैं, उसके लिए मै आपका आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-१२-१९२७
विद गांधीजी इन सीलोन

२१६. पत्र: हरजीवन कोटकको

जफना
२७ नवम्बर, १९२७

ब्रह्मचर्य किसे कठिन जान पड़ा है? तुम तो विचलित नही हुए न? खूब सजग रहना। भले ही दुनिया इधरसे उधर हो जाये किन्तु ली हुई प्रतिज्ञा छूटनी नही चाहिए। तुमने उपवास करनेका विचार करके ठीक ही किया है। उससे कितनी शान्ति मिलती है, यह देखना। शारदाको तो बिलकुल याद नही करते न? खादीका ही स्मरण करना। खादी जैसी स्त्री तो जगतमें मिल ही नही सकती और यदि उसे असंख्य पुरुष भी वरें तो भी वह चिरकुमारी ही रहेगी, और जो पुरुष केवल उसीका वरण करता है वह उसे वरण करनेके बावजूद अखण्ड ब्रह्मचारी है। उसकी अनन्यभावसे भक्ति करते हुए तुम्हें अन्य बातोंपर विचार करनेका समय ही कहाँ मिलेगा?

इस दुनियामें जो चीजें तुम्हारे लिए नहीं हैं उनके बारेमें सोच-विचार कैसा? जब मेरे और तुम्हारे जैसे कुछ लोग दृढ़तापूर्वक अपनी प्रतिज्ञाका पालन करेंगे, तभी हम और यह दुनिया इस दावानलसे बच सकेंगे।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२१७. एक पत्र

२७ नवम्बर, १९२७

हममें से यह तो कोई नहीं कह सकता कि म० की विषय-वासना कैसे शान्त होगी। मैं इतना जानता हूँ कि उसकी विषय-वासना शान्त करना तुम्हारा धर्म नहीं है। एक दूसरेकी विषय-वासनाको शान्त करना पति-पत्नी दोनोंमें से किसीका धर्म नहीं है। यह उद्देश्य दोनोंकी सहमतिसे ही पूरा होना चाहिए। संसार तो चलता ही जा रहा है; क्योंकि विषय-भोगमें सभी तो फँसे हुए हैं। उसे रोकना सबका कर्त्तव्य है। इसे रोकनेकी चेष्टा करते हुए कोई महापराक्रमी तर ही जाता है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२१८. जफनामें ईसाई मिशनरियोंके साथ चर्चा[1]

२७ नवम्बर, १९२७

रेवरेंड डब्ल्यू० ए० कर्थिगंसेरने पूछा कि धर्मके क्षेत्रमें भारतका क्या भविष्य है; उसमें ईसाइयोंका क्या सहयोग रहेगा और गांधीजी ईसाइयोंसे क्या अपेक्षा रखते हैं।

महात्माजीने उत्तर दिया कि पहले प्रश्नका उत्तर देना मेरी क्षमतासे बाहर है। हाँ, दूसरे प्रश्नका उत्तर मैं दे सकता हूँ। पिछले अनेक वर्षोंसे मेरी यही अभिलाषा रही है कि भारतमें सभी धर्मोंको अपने वास्तविक रूपमें, सत्यके अपने अनुभूत अंशके आधारपर फूलना-फलना चाहिए। यह इसलिए कि मैं किसी भी एक धर्मको समग्र सत्यका प्रवक्ता नहीं मानता। चूँकि मेरा यही दृष्टिकोण है और चूँकि जीवन-भर मेरा स्वभाव सहिष्णुताका रहा है, इसलिए मेरी अपनी कोई पसन्द या नापसन्दगी इस मामलेमें नहीं है। मैसूरके दीवान साहबने ईसाई मिशनरियों और मुसलमानोंसे अपील की है कि वे अछूतोंका धर्म-परिवर्तन करानेके बदले उनको बेहतर हिन्दू बनानेकी कोशिश ही करें। मैं उनकी इस अपीलकी ताईद करता हूँ। मेरा खयाल है कि यदि भिन्न-भिन्न महान धर्मोंके सभी अनुयायी एक-दूसरेके सम्पर्कसे अपने-आपको बेहतर इन्सान बनानेकी कोशिश करें, तो हमारा यह संसार मनुष्यके रहनेके लिए कहीं एक अधिक सुन्दर स्थान बन जायेगा। जबतक भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण रहेंगे तबतक ईसाई धर्म, इस्लाम और हिन्दू धर्म जैसे विशाल धार्मिक वर्ग बने ही रहेंगे; और

१. मिशनरी सम्मेलनमें।

इन सभी धर्मोंमें किन्हीं दो व्यक्तियोंके सोचनेका तरीका बिलकुल एक जैसा नहीं है। परन्तु यदि सभी धर्मोंके अनुयायी... परस्पर एक-दूसरेके धर्मका विचार उन-उन लोगोंके दृष्टिकोणसे विचार करने लगें तो सब लोग जल्दी ही एक-दूसरेसे सहमत हो जायेंगे। मैं जिस भारतका सपना देखता हूँ उसमें किसी एक ही धर्मका विकास होगा, ऐसा मैं नहीं सोचता। मैं उससे यह आशा करता हूँ कि उसमें सभी धार्मिक विश्वासोंको सम्मानकी दृष्टिसे देखा जायेगा; उसमें सभी धर्म साथ-साथ रहेंगे और उनमें परस्पर सन्देह या ईर्ष्या पैदा नहीं हो पायेगी, जिसकी कुछ झलक मुझे यहाँ जफनामें भी देखनेको मिली है।

रेवरेंड जे० विकनेलने प्रश्न किया: "आप भारतमें हिन्दू-मुसलमान एकताके लिए काम करते रहे हैं। क्या दोनोंमें एकता पैदा होनेकी कोई सम्भावना है?"

महात्माजी: हाँ है, बिलकुल निश्चित तौरपर है।

रेवरेंड विकनेल: एक गो-पूजक है, दूसरा गो-भक्षक; एक मूर्ति-पूजक है, दूसरा मूर्तिभंजक?

महात्मा गांधीने कहा कि मैं मानता हूँ कि कुछ सतही फर्क है और चूँकि मैं एक छोटा-मोटा रसोइया भी हूँ, इसलिए मैं जानता हूँ कि गन्दे नमकको थोड़ी-सी गन्दी चीनीके साथ मिलानेपर क्या होता है। उनको एक बर्तनमें रखकर आगपर चढ़ा दीजिए और फिर थोड़ा पानी डाल दीजिए। सारी गन्दगी सतहपर आ जायेगी और उसे देखकर कोई भी अनाड़ी रसोइया यही निष्कर्ष निकालेगा कि वह सब गन्दगी ही है और वह बिना सोचे-समझे उसे फेंक देगा। लेकिन मैं एक सिद्धहस्त रसोइया होनेके नाते जानता हूँ कि उस गन्दगीको सतहपरसे आसानीके साथ हटाया जा सकता है और तब शुद्ध चीनी और नमकके कणोंको अलग-अलग किया जा सकता है। हिन्दुओं और मुसलमानोंके बारेमें भी यही बात है। यह सही है कि आज वे कुत्तोंकी तरह आपसमें उलझ रहे हैं, लेकिन यह सब एक-दूसरेके करीब आनेके लिए ही है। उनके परस्पर जूझनेका वास्तविक कारण यह नहीं कि एक मूर्ति-पूजक और दूसरा मूर्ति-भंजक है, या एक गो-पूजक और दूसरा गो-भक्षक है। वास्तविक कारण तो पारस्परिक भय है जो दोनोंको सता रहा है और पारस्परिक अविश्वास है जिसके मूलमें सदा भय ही रहता है। आज यही सब हो रहा है और दुर्भाग्यकी बात यह है कि दोनों जातियाँ बहकावेमें आ गई हैं और दोनों ही अपने-अपने धर्मोंकी मूलभूत शिक्षाओंको भूल बैठी हैं। स्पष्ट दिख रहा है कि हिन्दू लोग अहिंसाका सिद्धान्त भूल बैठे हैं, हालाँकि वे 'अहिंसा परमो धर्मः' कहते नहीं थकते। मुसलमान शायद यह सोचते हैं कि इस्लाममें अहिंसाकी तरह ही हिंसाके लिए भी काफी गुंजाइश है। पर मैंने जब-जब अपने मुसलमान मित्रोंके साथ इसके बारेमें जिरह की है, उन्होंने यही कहा है कि इस्लाम हमेशासे अहिंसाके सिद्धान्तका प्रतिपादक रहा है लेकिन

उसने यह छूट दी है कि अगर अहिंसाका पालन न हो सके, तो वह हिंसाका सहारा ले सकता है। इसलिए किसी भी हालतमें अहिंसाका तत्त्व वास्तवमें दोनों धर्मोंमें समान रूपसे मौजूद है। जो परस्पर लड़ रहे हैं वे इस्लाम और हिन्दू धर्म नहीं, बल्कि दोनों धर्मोंके उपद्रवकारी तत्त्व हैं। इसलिए जब उपद्रवकारी तत्त्वोंकी शक्ति छीज जायेगी तब दोनों धर्म स्वाभाविक दशामें आ जायेंगे; और यदि ऐसा न हुआ तो अडिग आस्था रखनेवाले एक व्यक्तिके नाते मुझे यह पक्का यकीन है कि जो भले हिन्दू और भले मुसलमान आज पिछली कतारोंमें पड़ गये हैं, वे ईश्वरसे प्रार्थना करनेमें अपार आस्था रखते हैं, और ईश्वर एक दिन उनकी प्रार्थना अवश्य सुनेगा और उपद्रवकारियोंको मुँहकी खानी पड़ेगी।

प्रश्न: मुझे आपके दक्षिण आफ्रिकामें किये गये कामसे हमेशा बड़ी दिलचस्पी रही है। वहाँ आपने जो काम किया उससे मुझे बड़ी खुशी हासिल होती रही है। क्या आप दक्षिण आफ्रिकाके अपने कामके अबतकके परिणामसे सन्तुष्ट हैं?

महात्माजी: मैं कहने जा रहा था कि अत्यधिक संतुष्ट हूँ, पर वह शायद अतिशयोक्ति होगी। पर हाँ, मैं बहुत काफी सन्तुष्ट हूँ। इस समय तो हालात बड़े अच्छे नजर आ रहे हैं। परममाननीय शास्त्रीजी सचमुच बड़ा शानदार काम कर रहे हैं।

'भगवद्गीता' और 'न्यू टेस्टामेन्ट' दोनों ही आपको प्रेरणा और शान्ति कैसे दे पाते हैं? इस प्रश्नके उत्तरमें महात्माजीने कहा कि 'न्यू टेस्टामेंट'से मेरी आत्माको अपार शान्ति और आनन्द मिला है, विशेषकर गिरि-शिखरवाले उपदेशसे, क्योंकि ठीक वही बात मेरे मनमें घूम रही थी। बादमें मैंने 'गीता' का अध्ययन किया; और मुझे गिरि-शिखरवाले उपदेश और 'गीता'में कोई अन्तर नहीं दिखाई पड़ा। गिरि-शिखरवाले उपदेशमें जो बात पूरे विस्तारसे स्पष्ट ढंगसे समझाई गई है, उसीको 'गीता'ने एक वैज्ञानिक शास्त्रीय सूत्रके रूपमें पेश कर दिया है। 'गीता' एक अर्थमें तो शास्त्रीय या वैज्ञानिक ग्रन्थ है, परन्तु दूसरे अर्थमें वह शास्त्रीय नहीं भी है, क्योंकि उसमें मात्र बुद्धिसम्मत मार्गका नहीं, 'प्रपत्ति' या ईश्वरके समक्ष शरणागतिका भी प्रतिपादन किया गया है। 'प्रपत्ति' या शरणागतिको मैं विशुद्ध प्रेम ही कहूँगा, ऐसा प्रेम जिसमें समस्त प्राणि-मात्र समा जायें, कुछ ही प्राणियों या किसी प्राणी विशेषके प्रति प्रेम नहीं, ऐसा प्रेम जो हर प्रकारकी घृणासे ऊपर उठ सके, अछूता रह सके। गांधीजीने बतलाया कि उन्होंने कैसे पहले-पहल 'ओल्ड टेस्टामेंट' और उसके बाद अत्यन्त हर्ष और उत्साहके साथ 'न्यू टेस्टामेंट' पढ़ा था और वे बादमें कैसे 'भगवद्गीता' तक पहुँचे थे ताकि श्रोतागण इनसे स्वयं समझ सकें कि उनकी प्रेरणाका स्रोत क्या और कहाँ है।

[अंग्रेजीसे]

सीलोन डेली न्यूज, १-१२-१९२७

२१९. भाषण: भारतीयोंकी सभा, जफनामें

२७ नवम्बर, १९२७

मै जबसे लंका आया हूँ तबसे मेरी यह प्रतीति बढ़ती ही जा रही है कि यह लंका नही, बल्कि भारतका ही एक सुन्दरतर प्रतिरूप है, जहाँ मैं रह रहा हूँ। यहाँके प्राकृतिक दृश्योंको देखते हुए ऐसा लगता है कि निश्चय ही यह भारतका एक सौन्दर्यमण्डित रूप है। यद्यपि मै जानता था कि लंकामें मुझे बहुत अच्छे प्राकृतिक दृश्य देखनेको मिलेंगे, फिर भी सचमुच मैंने जैसे दृश्य यहाँ देखे, वे मेरी समस्त अपेक्षाओंसे परे थे और इसलिए हालकी एक सभामें मै यह कहे बिना नही रह सका कि लंका तो मुझे भारतमाताकी नाकसे खुलकर गिरी नथकी तरह लगता है। यदि लंकाकी जनता सचमुच भारतीय संस्कृतिकी उत्तराधिकारी है — जैसा कि उसे होना भी चाहिए — तो उसे भी भारतमाताके विभासित रूपको अपने जीवनमें प्रतिबिम्बित करना चाहिए।

क्या गौतम बुद्ध भी आखिरकार एक महानतम हिन्दू सुधारक ही नही थे? और मुझे तो ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि लंकाके लोग, जिन्हें उस महात्माकी शिक्षा विरासतमें मिली है और जिन्होंने उस शिक्षाको अपनाया है, भारतके लोगोंसे भी आगे बढ़ जायें। अफसोस कि आज वह स्रोत, जिससे लंकाने पुरातन कालमें शक्ति प्राप्त की थी, लगभग सूख गया है। ऐसा लगता है कि अभी तो हम भारतवासी स्वयं बुरे दिनोंमें फँस गये हैं। आज तो हम खुद ही अपने अस्तित्वकी रक्षा करनेके लिए संघर्ष-रत हैं। हमारा जीवन इतना दूभर हो गया है कि अंग्रेज-इतिहासकारोंके अनुसार भारतकी आबादीका कमसे-कम दसवाँ हिस्सा बराबर भुखमरीकी स्थितिमें रह रहा है।

इस बढ़ती हुई कष्टकर गरीबीके दंशको दूर करनेके लिए मै लगातार जगह-जगह घूमता फिर रहा हूँ; धनी-मानी लोगोंके मनमें उन गरीबोंके प्रति सहानुभूति जगानेके लिए भटक रहा हूँ, जिन्हें यह भी नहीं मालूम कि पेटभर भोजन क्या होता है। लेकिन मैं जहाँ-कहीं भी जाता हूँ, मेरे देशभाइयोंने मेरे अनुरोधका उत्तर बड़े उत्साहसे दिया है। यह मेरे लिए परम सन्तोषकी बात है, बल्कि यही वह चीज है जिसके बलपर चतुर्दिक अन्धकारसे घिरे होनेके बाद भी मैंने हिम्मत नही हारी है।

इसलिए आप मुझे मिलनेके लिए बुलाकर लाये और आपने मुझे ठोस सहायता देकर अपनी सहानुभूति प्रकट की, इसपर मुझे कोई आश्चर्य नही होता। लेकिन, मुझे आपसे यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि आपने जो सहानुभूति मुझे पैसेके रूपमें दी है, वह अपने आपमें पर्याप्त नही है। इसे तो मैं आपकी इस आकांक्षाका एक प्रतीक-मात्र मान सकता हूँ कि आप और भी सहायता करनेको तत्पर हैं। इसलिए मैं यहाँ

उसी बातको हजारवीं बार दोहराऊँगा जो मैं श्रोताओंसे सभी जगह कहता आ रहा हूँ। वह यह है कि जबतक आप ये दान देनेके साथ-साथ भविष्यमें अपनी वस्त्र-सम्बन्धी आवश्यकताएँ पूरी करनेके लिए केवल खादी ही खरीदनेका निश्चित संकल्प नहीं लेते तबतक ऐसा नहीं माना जायेगा कि आपने उन क्षुधा-पीड़ित भाई-बहनोंके प्रति अपना बुनियादी कर्त्तव्य पूरा किया।

और इस भवनमें उपस्थित बहनोंको भी उन करोड़ों क्षुधार्त्त लोगोंकी सहायता करनी चाहिए और उनके मूक अनुरोधके प्रति संवेदनशील होना चाहिए। न उन्हें और न पुरुषोंको ही नाक-भौंह सिकोड़कर मुझसे ऐसा कहना चाहिए कि खादी तो बहुत महँगी है, यह काफी नफीस नहीं है और यह हमारी रुचिके अनुकूल भी नहीं है। आजतक मैंने किसी भी माँको अपने बच्चोंके सुन्दर न होनेकी शिकायत करते नहीं सुना है और न यही कहते सुना है कि उसके बच्चे तो उसके आर्थिक साधनोंके लिए भार-रूप हैं। यदि उन करोड़ों क्षुधार्त्त मानवोंके लिए आपके हृदयमें दर्द है, यदि आप सचमुच ऐसा मानते हों कि वे क्षुधापीड़ित हैं और आपके अपने ही सगे भाई-बहन हैं, तो फिर आप खादीकी ऊँची कीमत या उसकी घटिया किस्मके बारेमें शिकायत कैसे कर सकते हैं? जब आप देख रहे हैं कि करोड़ों लोगोंके पास खानेको कुछ नहीं है और उन्हें तभी खिलाया जा सकता है जब आप उनके पवित्र किन्तु काँपते हुए हाथोंसे तैयार की गई खादी पहनें, तो आपको फैशन या कीमतके बारेमें सोचनेका क्या अधिकार है?

क्या आप उन अंग्रेजों और जर्मनोंसे कुछ सबक नहीं लेंगे जिन्होंने एड़ी-चोटीका पसीना एक कर दिया, अकथनीय यातनाएँ सहीं, और अवर्णनीय रूपसे भयंकर परिस्थितियोंमें तरह-तरहकी मुसीबतें झेलीं — मृत्युतकका सामना किया? और यह सब किसलिए? सिर्फ उस चीजके लिए जिसे वे अपने देशकी प्रतिष्ठाका प्रश्न समझते थे। फिर आप ही सोचिए कि कृत्रिम रुचियों और फैशनकी पोशाकोंके सम्बन्धमें अपनी धारणाओंको छोड़ देना तथा खादीके लिए कुछ अधिक कीमत देनेको तैयार रहना आपके लिए कितना ज्यादा जरूरी है; क्योंकि यहाँ सिर्फ आपकी बहनोंकी प्रतिष्ठा ही खतरेमें नहीं है, बल्कि उनके अस्तित्वपर ही बन आई है।

इसलिए मैं उस दिनकी कामना करता हूँ जब आप श्रीयुत राजगोपालाचारीपर खादीके, बल्कि यदि आपको फैशनेबुल साड़ियाँ चाहिए हों तो सुन्दर और गोटे-वाली साड़ियोंके आर्डरोंकी बौछार कर देंगे। लेकिन, अब मुझे एक अन्य विषयपर भी कुछ कहना चाहिए।

जब कभी मैं भारतसे बाहरके देशोंमें गया हूँ, बल्कि भारतमें भी मैं जब-जब विभिन्न प्रान्तोंमें गया हूँ, तब मैंने उन देशों या प्रान्तोंमें बाहरसे आकर बसे लोगोंको यही सलाह दी है कि वे जहाँ बस गये हैं, उस स्थानके हितोंको प्रमुख महत्त्व दें और अपने हितोंको गौण बना दें। चाहे आप हिन्दू हों या पारसी अथवा मुसलमान, चाहे ही आप किसी भी प्रान्तके हों, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। मैं तो समझता हूँ कि आपका यह अनिवार्य कर्त्तव्य है कि आप उस देशके मूल निवासियोंके बीच उनके हृदयमें घुलनेवाले

शूलकी तरह नहीं, बल्कि दूधमें शकरकी तरह रहें। आपको ऐसे लोगोंके बीच अपनी संस्कृतिके थातीदारकी तरह रहना चाहिए और उन लोगोंके सुख-दुखको अपना सुख-दुख समझना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

विद गांधीजी इन सीलोन

२२०. भाषण: जफनामें[1]

२७ नवम्बर, १९२७

मुझे याद भी नहीं कि आज कितनी सभाओंमें भाषण देना पड़ा है।[2] यह सभा आजकी आखिरी सभा है। मेरे लिए वे सभी सभाएँ महत्त्वपूर्ण थीं; मगर यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आपने मेरे बोलनेके लिए विशेष रूपसे हिन्दुओंकी यह सभा बुलाई है। इसके मानी मैं यह समझता हूँ कि आप हिन्दुओंसे मैं बतौर एक हिन्दूके बात करूँ। और इससे मुझे बड़ी खुशी हो रही है। आपको मालूम होगा कि मेरा दावा है कि मैं कट्टर हिन्दू हूँ, हालाँकि दूसरे जो लोग अपनेको कट्टर हिन्दू कहते हैं, वे मेरे इस दावेको नहीं मानते। खैर, मैं सत्यका पुजारी हूँ इसलिए आपको भ्रममें नहीं डालना चाहता। अगर कट्टर हिन्दुत्वके मानी मुसलमानों और ईसाइयोंसे वैर करना हो, अगर कट्टर हिन्दुत्व सिखलाता हो कि इस आदमीको छुओ मगर उसे मत छुओ; इसका या उसका छुआ भोजन अपवित्र है, उसे मत खाओ, तो मैं कहूँगा कि मैं कट्टर हिन्दू नहीं हूँ। लेकिन अगर कट्टर हिन्दू होनेका अर्थ इस बातका सतत शोध करते रहना है कि दरअसल हिन्दू-धर्मका सच्चा स्वरूप क्या है, और हिन्दू-धर्मका जो भी सच्चा स्वरूप अपनी समझमें आये, उसीके अनुकरणका यथाशक्ति पूरा प्रयत्न करना, तो मैं दावा करता हूँ कि मैं सच्चा कट्टर हिन्दू हूँ। इसके अलावा महर्षि व्यासके मतानुसार भी मैं कट्टर हिन्दू हूँ। उन्होंने 'महाभारत' में कहा है कि तुलाके एक पलड़ेपर दुनियाके सभी यज्ञ आदि हों और दूसरेपर केवल सत्य हो तो भी सत्यका पलड़ा ही भारी रहेगा और राजसूय और अश्वमेघ यज्ञों सहित सभी यज्ञोंका पलड़ा हल्का ही रहेगा। अब अगर 'महाभारत' को पंचमवेद माना जाये, तो मैं जरूर कट्टर हिन्दू हूँ, क्योंकि अपने जीवनके क्षण-क्षणमें मैं सत्यका ही अनुसरण करनेकी कोशिश करता हूँ, और इसके लिए कैसी भी कीमत चुकानी हो, मैं उसे कम गिनता हूँ।

अब इस सभामें अपना दावा पेश कर चुकनेके बाद मैं आपसे कहूँगा कि मेरी विनम्र सम्मतिके अनुसार बतौर कट्टर हिन्दूके आपका यहाँ जफना और लंकामें क्या कर्त्तव्य है। सबसे पहले तो आपको उनका खयाल करना होगा, जिनकी आबादी इस द्वीपमें सबसे अधिक है। मैं आपको यह सुझाना चाहता हूँ कि वे आपके सहधर्मी हैं।

१. यह भाषण लंकामें रहनेवाले हिन्दुओंकी सभामें दिया गया था।

२. गांधीजी इससे पहले नौ सभाओंमें भाषण कर चुके थे।

वे अगर चाहें तो इस बातसे इनकार कर सकते हैं, क्योंकि वे कहेंगे कि बौद्ध-धर्म हिन्दू-धर्मका अंग नहीं है और बहुत अंशोंतक उनका कहना सही भी होगा। कितने ही हिन्दू भी यह नहीं मानते कि बौद्ध-धर्म हिन्दू-धर्मका ही अंग है; बल्कि वे तो इसमें अपना गौरव मानेंगे कि बौद्ध-धर्मको हिन्दुस्तानसे उन्होंने मार भगाया। मगर ऐसा कुछ नहीं है। बात दरअसल यह है कि स्वयं बुद्ध भी बड़े-से-बड़े हिन्दुओंमें से थे, और उन्होंने हिन्दू-धर्मको सुधारनेकी कोशिश की थी। इसमें उन्हें सफलता भी मिली थी। उस समय हिन्दू-धर्मने यही किया कि बुद्धकी शिक्षाओंमें जो सबसे अच्छी और सच्ची थी, उन्हें अपना लिया था। इसीलिए मैं कहता हूँ कि इस प्रकार बुद्धकी शिक्षाएँ अपनेमें जज्ब कर लेनेसे हिन्दू धर्मका विस्तार हुआ, वह अधिक व्यापक बन गया था। हिन्दू-धर्मने काम इतना ही किया कि बुद्धकी शिक्षाओंको अपनेमें समा लेनेके बाद उनके आसपास जो मैल जमा हो गया था उसे साफ करके दूर कर दिया। लंकाके बौद्धोंको समझानेका सबसे अच्छा तरीका एक ही है और वह यह कि आप हिन्दू-धर्मके इस अधिक व्यापक और उदार स्वरूपके अनुरूप आचरण करें। बुद्धने जो एक बात भारतको सिखलाई वह यह थी कि परमात्मा कोई ऐसा जीव नहीं जो निर्दोष प्राणियोंकी बलिसे खुश हो जाये। इसके विपरीत उनका तो कहना था कि परमात्माको खुश करनेके लिए बलि चढानेवाले दुहरा पाप बटोरते हैं। इसलिए अगर आप अपने धर्मका सच्चा पालन करना चाहते हैं तो आपको अपने एक भी मन्दिरमें निर्दोष प्राणियोंकी बलि नहीं चढानी चाहिए। सारे भारतवर्षके हिन्दुओंके विरुद्ध खड़ा होकर भी मैं यह कहनेको तैयार हूँ कि प्रयोजन कोई भी क्यों न हो, परमात्माको खुश करनेके लिए ही क्यों न हो एक भी पशुकी बलि चढ़ाना बुरा काम है, पाप है, गुनाह है।

दूसरी बात जो गौतम बुद्धने सिखलाई वह यह थी कि आज जिसे जाति कहा जाता है — और जो उनके जमानेमें भी थी — वह सरासर गलत है, यानी उन्होंने अपने जमानेमें श्रेष्ठता और हीनताका जो खयाल हिन्दू-धर्मको नष्ट कर रहा था, उसे दूर कर दिया था। मगर उन्होंने वर्णाश्रमसे इनकार नहीं किया। वर्ण-धर्म और जाति-प्रथा एक ही चीज नहीं हैं। जैसा कि मैंने दक्षिण भारतमें कई बार कहा है और 'यंग इंडिया' में विस्तारसे लिखा है, वर्ण-धर्म और जाति-प्रथामें कोई समान तत्त्व नहीं है। जबकि वर्ण-धर्म प्राणदाता है, जाति-प्रथा प्राणनाशक है; और जाति-प्रथाका सबसे घृणित स्वरूप है — अस्पृश्यता। आप अपने बीचसे अस्पृश्यताको दूर करें। मैं निर्भीकतापूर्वक कहता हूँ कि आज अस्पृश्यताको जिस रूपमें व्यवहृत किया जा रहा है उसके लिए हिन्दू-धर्ममें कहीं कोई स्थान नहीं है। अगर आप अपने बौद्ध देश-बन्धुओंके बीचमें सच्चे हिन्दू-धर्मका आचरण बनाये रखना चाहते हैं तो किसी भी आदमीको भूलकर भी अस्पृश्य मत मानिए। अफसोस तो यह है कि लंकाके बौद्धोंने स्वयं भी हिन्दुओंका यह अभिशाप अपना लिया है। जिनके बीचमें जाति-प्रथा होनी ही नहीं चाहिए थी, उनमें भी आज जातियाँ हैं। परमात्माके लिए यह भूल जाइए कि कोई बड़ा है और कोई छोटा। बस यही याद रखिए कि आप सब हिन्दू हैं, और एक दूसरेके सगे भाई हैं।

जफनाके किसी हिन्दू मित्रने मुझे लिखा है कि यहाँ हिन्दुओंके कुछ मन्दिरोंमें वेश्याओंका अमुक अवसरोंपर नाच कराया जाता है। अगर यह बात सच है तो आप देवालयोंको वेश्याओंके अड्डे बना रहे हैं। अगर मन्दिरको पूजास्थान होना है, देवस्थान रहना है तो उसे कुछ सुनिश्चित मर्यादाओंका पालन करना होगा। मन्दिरमें जानेका एक वेश्याको भी उतना ही अधिकार है, जितना किसी सन्तको है। मगर यह अधिकार तो उसे तब है जब वह वहाँ अपने पाप धोने जाये। मगर जब किसी मन्दिरके रक्षक धर्म या देवपूजनकी आड़में वेश्याको वहाँ ले जाते हैं, तब वे देवस्थानको वेश्यालय बना देते हैं। और अगर आपके पास कोई आकर यह साबित करनेकी कोशिश करे कि आपके मन्दिरोमें वेश्याओंको नाचने या किसी ऐसे ही कामके लिए बुलाना उचित है तो वह कितना ही बड़ा या प्रतिष्ठित आदमी क्यो न हो, आप उसकी बात न मानें, और मेरी इस बातपर अड़े रहें। अगर आप हिन्दू बनना चाहते है, अगर आपको परमात्माकी पूजा मंजूर है, तो आप अपने मन्दिरोके दरवाजे तथाकथित अछूतोंके लिए भी खोल दें। परमात्माके दरबारमें उसके भक्तोंमें कोई फर्क नही किया जाता। वह तो इन अस्पृश्यों और तथाकथित स्पृश्यों, सबकी पूजा एक-सी स्वीकार करता है। उसके यहाँ सिर्फ एक शर्त है — प्रार्थना सच्चे दिलसे होनी चाहिए।

और भी कई बातें है जिनपर आपको ध्यान देना है। आज आपको ऐसी दुनियामें रहना है जिसमें मुसलमान और ईसाई भी रहते हैं। इनका धर्म महान है और इनके अनुयायियोंकी संख्या भी विशाल है। आपके जफनामें मुसलमानोकी आबादी मुश्किलसे २ या ३ प्रतिशत है, और ईसाइयोंकी १० प्रतिशत। चाहे ये दो फी सदी हों या बीस, मगर रहना आपको इन्हींके साथ है। और अगर मैं हिन्दू-धर्मको ठीक-ठीक समझता हूँ तो सच्चा हिन्दू-धर्म वही है जो दूसरे धर्मोंके साथ उदारता और सहिष्णुताका व्यवहार करे। और चूँकि वे भी इस अन्तरीप और इस द्वीपके वैसे ही बाशिन्दे हैं जैसे कि आप, इसलिए उन्हें अपना भाई मानना आपका फर्ज है। जबतक आप यह नही करते, आपमें सच्ची राष्ट्रीय भावनाका विकास नही होगा, जो अत्यन्त आवश्यक है, और फिर इसीलिए आपके अन्दर सच्चे हिन्दू-धर्म और मानवीय भावनाका विकास भी नही होगा। आपको अपने लड़कोंकी शिक्षा-दीक्षाका प्रबन्ध करनेका अधिकार है। मुझे इसकी खुशी है कि आपका अपना एक शिक्षा-मण्डल है। आप उसको सही भावनाके साथ अधिक मजबूत बनाइए, मगर इसके मानी यह नही होने चाहिए कि आपकी और ईसाई-धर्म प्रचारकोंकी शिक्षा संस्थाओंके बीच कोई खटपट रहे। अगर आपके यहाँ सुयोग्य शिक्षक हों और आप हिन्दू विद्यार्थियोंको यथेष्ट सुविधाएँ दें, तो फिर सब हिन्दू लड़के आपके यहाँ पढ़ने आयेंगे ही। और शिक्षाके क्षेत्रमें मैं पारस्परिक ईर्ष्याका तो कोई स्थान ही नही मानता। पर मैंने सुना है कि यहाँ ऐसा कुछ है। मुझे यह सुनकर खुशी हुई थी कि अभी हालतक हिन्दू, मुसलमान और ईसाई यहाँ पूरे मेल-मिलापसे रहते थे। अभी हालमें ही आपके और ईसाइयोंके बीच कुछ मनमुटाव हो गया है। और चूँकि आपकी संख्या उनसे बहुत अधिक है, उनसे मिलकर अपने झगड़े तय कर लेना आपका कर्त्तव्य है और अगर आप इस अभागी जाति-प्रथाके भावको दूर कर सकेंगे तो आप देखेंगे कि सभी कठिनाइयाँ दूर हो जायेंगी।

और फिर चूंकि आपकी ही संख्या सबसे अधिक है, इसलिए जफनामें और जफनाके जरिये लंकामें शराबखोरीको बिलकुल बन्द करा देनेका दायित्व भी आपके ही कन्धोंपर है। हिन्दू-धर्म आपको शराब पीनेकी इजाजत नहीं देता। अगर शिक्षा-मण्डल अपने कर्त्तव्यका पालन करे तो उसे आपकी पाठशालाओंमें संस्कृत-शिक्षाको प्रोत्साहन देना चाहिए। संस्कृतका कुछ ज्ञान प्राप्त किये बिना, मैं किसी भी हिन्दू लड़केकी शिक्षा अधूरी ही मानता हूँ। और जहाँतक मुझे पता है, हिन्दू-धर्ममें 'भगवद्गीता' के समान कोई ग्रन्थ सर्वत्र सुलभ, और सर्वग्राही नहीं है। इसलिए, अगर आप अपनेको और अपने लड़कोंको हिन्दुत्वकी भावनामें ओत-प्रोत कर देना चाहते हैं, तो आप 'गीता' की शिक्षाओंका रहस्य समझनेकी कोशिश करेंगे। आपको 'रामायण' और 'महाभारत' का भी सामान्य ज्ञान पैदा करना चाहिए।

अन्तमें, मैं यह कहूँगा कि मानव जातिकी अनेकानेक कठिनाइयोंका मैं दो के अलावा और कोई उपाय नहीं जानता। इन उपायोंकी तो मैं हमेशा माला ही जपता रहता हूँ। वे हैं सत्य बोलना, और हर कीमतपर अहिंसाका पालन करना। जितने निश्चित रूपसे मैं यह जानता हूँ कि मैं आपके सामने बैठा हुआ हूँ, उतना ही निश्चित विश्वास मुझे इस बातका है कि अगर मैं इन दोनों चीजोंकी सच्ची भावना आपके हृदयोंमें उतार सकूं और इनके अनुसार आचरण करनेमें प्रवृत्त कर सकूं, तो आपकी हर मुश्किल ऐसे दूर हो जायेगी जैसे आंधीमें तिनके उड़ जाते हैं। और तब ईश्वर अपने स्वर्गासनसे उतर कर आपके बीच आकर रहने लगेंगे और आपसे कहेंगे : "हिन्दुओ! तुम खरे साबित हुए!"

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१२-१९२७

२२१. तार : मीराबहनको

जफना
२८ [नवम्बर], [१९२७][1]

मीराबाई
आश्रम
साबरमती

क्या डाक्टरने घावको चीरा भी है? छः तारीखतक बरहामपुर या आस-पासके इलाकोंमें ही रहूँगा। सप्रेम।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९५) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. गांधीजी २८ तारीखको जफनामें थे।

२२२. पत्र : मीराबहनको

२८ नवम्बर, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे पैरमें ऐसी क्या खराबी हो गई थी? लेकिन ये सभी विपत्तियाँ कष्ट-सहन और अनुशासनका अंग हैं। तुम्हारे दो तारोंका उत्तर मैं दे चुका हूँ।[1] जल्द-बाजीमें कोई काम मत करो। अगर तुम्हारे पैरको चिकित्साकी जरूरत हो तो अभी आश्रम न छोड़ना ही अच्छा रहेगा। क्योंकि मेरा खयाल है, मैं तुम्हें बता चुका हूँ कि उड़ीसामें भी कुछ दौरा करना होगा। मुझे एक स्थानपर आराम करनेकी फुर्सत नहीं मिलेगी। लेकिन खैर, जो तुम्हें सबसे अच्छा लगे, तुम वही करना। वहाँ यदि तुम सुखी नहीं रह सकती हो तो चाहे तुम लंगड़ा रही हो अथवा ठीक हो, यहाँ चली आओ। यदि तुम अपनेको रोक सको तो जनवरीमें तो हम हर हालतमें मिलेंगे। लेकिन मैं तुमसे तुम्हारे मनके खिलाफ कुछ करनेको नहीं कहूँगा। तुम्हारा मन जैसा कहे, वैसा ही करो।

तुमने पोशाकमें जिस फेरफारके बारेमें लिखा है, वह मुझे कोई बहुत चौंकानेवाली बात तो नहीं लगती।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२९७) से।
सौजन्य : मीराबहन

२२३. पत्र : अब्बास तैयबजीको

जफना
२८ नवम्बर, १९२७

प्रिय भुर्र-र-र[2],

क्या तुमने शीरी और फरहादकी कहानी पढ़ी है? क्या तुमने प्रेमियोंको अपने प्रियके पत्रोंसे या उसके बारेमें मिलनेवाले समाचारोंसे कभी अघाते जाना है? तो अब क्या तुम्हें आश्चर्य होता है कि मैं तुम्हारे पत्रके लिए क्यों तरस रहा था? मेरी रेहानाकी खोजकी कहानी भी ऐसी ही है।

फिर प्यार।

तुम्हारा,
भुर्र-र-र

अंग्रेजी (एस० एन० ९५६०) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. अब्बास तैयबजी और गांधीजी आपसमें एक दूसरेको 'भुर्र-र-र' कह कर सम्बोधित करते थे।

२२४. पत्र : सुरेन्द्रको

२८ नवम्बर, १९२७

देवदासकी स्थिति अत्यन्त दयनीय है। राजाजी लक्ष्मीको उनके हाथोंमें सौंपनेको कदापि तैयार नहीं होंगे जो कि उचित भी है। लक्ष्मी उनकी आज्ञाके बिना एक कदम भी आगे नहीं रखेगी। वह तो आनन्द विभोर है जबकि देवदास दीवाना बनकर लक्ष्मीके नामकी माला जपता रहता है और कष्ट पा रहा है। यदि वह इतना प्रेम ईश्वरसे करता तो साधुओंमें गिना जाता और उच्च कोटिका सार्वजनिक कार्यकर्ता बनता।

किन्तु देवदास भी प्रकृतिके विरुद्ध कैसे जा सकता है। उसे मेरी आज्ञा माननी है किन्तु उसकी आत्मा उसके विरुद्ध जाती है। ऐसा लगता है कि वह यह मान बैठा है कि लक्ष्मीके साथ उसका विवाह मैं नहीं होने देता; इससे वह मुझसे चिढ़ा रहता है। इस स्थितिसे उसे कैसे उबारा जाये यह फिलहाल मुझे सूझ ही नहीं रहा है। तुम लोगोंमें से कोई उसे किसी तरह शान्त कर सको, उसे धर्मका बोध करा सको तो कराना। यह भी सम्भव है कि मैं देवदासको समझा न होऊँ और इस कारण उसके प्रति अन्याय करता होऊँ। यदि पत्र लिखनेसे उसे शान्ति मिल सकती हो तो लिखना। मैं तो उसे प्रायः लिखता ही रहता हूँ।

यह तो मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि उसकी बीमारियोंका कारण उसके मनमें भरे विकार ही हैं। अनजाने ही ये विकार मनुष्यको कुतर-कुतर कर खाते रहते हैं। इस बारेमें मुझे तनिक भी शंका नहीं है। देवदास स्वयंको विलासी मानता है यह सच है किन्तु उसके बारेमें विलासी शब्द हलका है। उसका मन विषयी है, यह वह स्पष्ट नहीं देख पा रहा है इस कारण विषय-वासना उसे खाए जा रही है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२२५. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

जफना
२८ नवम्बर, १९२७

बहनो,

यह इलाका भी लंका कहलाता है, फिर भी दक्षिणी लंकासे बहुत निराला है। यहाँ तो तमिल-हिन्दुस्तानियोंकी ही बस्ती है। और वे हिन्दुस्तानके ही सारे रीत-रिवाज पालते हैं। इसलिए दक्षिण भारतमें और इसमें कोई फर्क नहीं दिखाई देता। यह जरूर जान पड़ता है कि यहाँकी बहनें शायद दक्षिणसे कुछ ज्यादा आजादीके साथ रहती हैं। यहाँ एक गुजराती दम्पति है। बहन (काशीबाई) राजकोटके अच्छे घरानेकी लड़की है। उसके पति बड़ौदाके प्रसिद्ध हरगोविन्ददास काँटावालाके पुत्र हैं। वे यहाँ न्यायाधीश हैं। उनकी सज्जनताकी काफी ख्याति है। मेरा आधा खाना तो यहाँ काशीबाई पहुँचाती है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि बा छुट्टीपर है।

कल यहाँसे रवाना हो रहे हैं। अब जहाँ जाना है वहाँ सचमुच अस्थि-पंजर हैं। उनके दर्शन पुनः करने, हृदयको और अधिक मथने और चरखेका मर्म और अधिक समझनेके लिए अधीर हो रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७८) की फोटो-नकलसे।

२२६. पत्र : टी० बी० केशव रावको

२९ नवम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मेरा निश्चित मत है कि 'गीता' को पढ़ने और समझनेका सबको अधिकार है। समय मिलनेपर 'यंग इंडिया' में आपके पत्रके बारेमें लिखनेकी आशा करता हूँ[1]।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० १५९) की फोटो-नकलसे।

१. इसके बारेमें गांधीजीने शायद "सत्यका विरूपण" ८-१२-१९२७ में लिखा था।

२२७. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

मार्गशीर्ष शुक्ल ५ [२९ नवम्बर, १९२७][1]

भाई रामेश्वरदास,

आपका पत्र मीला है। मैं कल फिर देश तरफ प्रयाण करूंगा। रामनामका जप दिलसे करनेसे अवश्य शांति मीलेगी।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० १८९ की फोटो-नकलसे।

२२८. भाषण : सेंट जॉन कालेज, जफनामें

२९ नवम्बर, १९२७

यदि आप मुझसे यहाँ मिलनेको आतुर थे तो मैं कह सकता हूँ कि मैं भी इसके लिए कुछ कम उत्सुक नहीं था। यद्यपि मैं लखपतियों द्वारा भेंट किया गया पैसा भी स्वीकार करता हूँ और कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ, किन्तु लड़के-लड़कियोंसे, जो अभी अपने जीवनका निर्माण कर रहे हैं, छोटे-छोटे दान — वे चाहे जितने भी छोटे हों — प्राप्त करके मुझे कहीं अधिक प्रसन्नता होती है। इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि जो दान भोले-भाले लड़के-लड़कियोंसे मिलते हैं वे उनके दानसे कहीं अधिक फलप्रद साबित होते हैं जिन्हें दुनियादार लोग माना जा सकता है। दूसरा कारण यह है कि आप जैसे लोगोंसे दान पाकर मैं ज्यादा जिम्मेदारी महसूस करता हूँ . . .।[2]

मैं आपके सौजन्य और उदारताका कोई प्रतिदान देनेमें असमर्थ हूँ। मैं तो ईश्वरसे सिर्फ यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि वह आपको अपने जीवनमें अच्छे काम करनेकी शक्ति दे। मैं जानता हूँ कि मस्तिष्ककी शिक्षाके साथ-साथ यदि हृदयको भी सच्चा प्रशिक्षण नहीं मिलता तो वह शिक्षा कुछ नहीं है। ईश्वर करे, अपनी बुद्धिके साथ-साथ आपके हृदयका भी विस्तार हो। मैं एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-१२-१९२७

१. गांधीजीने लंकासे वापसी यात्रा ३० नवम्बर, १९२७ को आरम्भ की थी; मूलमें [illegible] डाक मुहर लगी हुई है।

२. इसके बाद गांधीजी खादी और अस्पृश्यताके बारेमें बोले।

२२९. भाषण : सेन्ट्रल कालेज, जफनामें

२९ नवम्बर, १९२७

भारतके करोड़ों अधभूखे लोगोंके लिए उदारतापूर्वक भेंट की गई इस थैलीके लिए मैं आपका हृदयसे आभारी हूँ। महोदय, आपने अभी जिस महत्त्वपूर्ण सवालको दोहराया है, उसकी सूचना आपने मुझे समय रहते कल ही भेज दी थी।[1] यदि मैं इस सवालका जवाब देना टाल सकता तो मुझे बहुत खुशी होती, क्योंकि अभीसे लेकर साढ़े दस बजे तक मुझे बहुत-से कार्यक्रमोंमें शरीक होना है। इसके अलावा, इसके कुछ और भी कारण है, जिन्हें मैं बताना जरूरी नही समझता। मगर मेरे जीवनका तो यही सिद्धान्त रहा है कि जब और जैसे मुझे अटपटी स्थितिमें डालनेवाले ऐसे प्रसंग आयें, मैं उन्हें टालूँ नहीं, बल्कि उन्हें स्वीकार करके उनसे निबटता चलूँ, बशर्ते कि उनसे निबटना मेरे लिए बिलकुल असम्भव ही न हो। इसलिए मेरे पास जो कुछ-एक मिनटका समय है, उसमें मैं इस प्रश्नका उत्तर देना चाहता हूँ।

एक वाक्यमें कहूँ तो मैं यह कहूँगा कि अनेक वर्षोंसे नाजरथके जीससको मैं विश्वके बड़े धर्मगुरुओंमें से एक मानता आया हूँ और यह बात मैं सम्पूर्ण विनम्रताके साथ कह रहा हूँ। विनम्रताका दावा मैं इसलिए कर रहा हूँ कि मैंने जो-कुछ कहा है, बिलकुल वही मेरे हृदयकी अनुभूति है। हाँ, यह तो है ही कि एक गैर-ईसाई और हिन्दूके नाते मुझे नाजरथके जीससका स्थान जितना ऊँचा लगा है, ईसाई लोग उन्हें उससे कही अधिक ऊँचे स्थानके योग्य मानते हैं। बजाय यह कहनेके कि मैं उन्हें अमुक स्थान देता हूँ, मैंने जो यह कहा है कि वे मुझे अमुक स्थानके अधिकारी लगते हैं, वह जान-बूझकर कहा है, क्योंकि मैं मानता हूँ कि किसी महान व्यक्तिका स्थान निर्धारित करनेका अधिकार न मुझे है और न किसी अन्यको। वैसा करना धृष्टता ही होगी। मानव-जातिके महान गुरुओं और पथप्रदर्शकोंको किसीने कोई स्थान दिया नहीं है, बल्कि वे मानव-जातिकी सेवा करनेके बलपर स्वयं उस स्थानके अधिकारी बन गये हैं। लेकिन किन्ही लोगोंके बारेमें कुछ अनुभव करनेका अधिकार तो हममें से अधमसे-अधम और तुच्छसे-तुच्छ व्यक्तिको भी है। मानव-जातिके ऐसे महान गुरुओं और हमारे बीच का सम्बन्ध कुछ-कुछ पति-पत्नीके सम्बन्ध जैसा होता है। यदि मैं तर्क द्वारा यह तय करने लग जाऊँ कि मैं अपने हृदयमें अपनी पत्नीको कौनसा स्थान देता हूँ तो यह बहुत भयानक बात होगी। अपने हृदयमें उसे स्थान विशेषपर प्रतिष्ठित करना मेरे बसकी बात नही है। इसके विपरीत वह वास्तवमें वहाँ जिस स्थानकी अधिकारिणी है, उस स्थानपर आसीन है। यह बात विशुद्ध रूपसे अनुभूतिसे सम्बद्ध है। तब मैं यह कह सकता हूँ कि मेरे हृदयमें जीसस मानव-जातिके एक महान शिक्षकके रूपमें प्रतिष्ठित

१. कालेजके प्रिंसिपलने गांधीजीसे पूछा था कि वे ईसा मसीहको विश्वके महान धर्म गुरुओंके बीच ईश्वर द्वारा भेजे दूतके रूपमें नहीं, बल्कि एक मनुष्य और गुरुके रूपमें कौन-सा स्थान देंगे।

है, और उस स्थानको प्राप्त करनेमें स्वयं उनका बहुत बड़ा हाथ रहा है। अभी ईसाइयोंकी बात अलग रखिए। इस कालेजमें शिक्षा ग्रहण करनेवाले जो ७५ प्रतिशत हिन्दू लोग हैं, मैं उनसे कहूँगा कि जीससके उपदेशोंका श्रद्धापूर्वक अध्ययन किये बिना आपका जीवन अधूरा रहेगा। मैं निजी अनुभवसे इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि जो लोग, चाहे वे किसी धर्मके अनुयायी हों, दूसरे धर्मोंकी शिक्षाका श्रद्धापूर्वक अध्ययन करते हैं वे अपने धर्मके प्रति अपनी आस्थाको कमजोर करनेके बजाय अपने धर्मकी सम्भावनाओंको बढ़ाते ही हैं। खुद मैं तो दुनियाके किसी भी बड़े धर्मको झूठा नहीं मानता। सभीने मानव-जातिको संवारनेमें योगदान दिया है और आज भी वे अपना काम कर रहे हैं। इस प्रकार सभीको उदार शिक्षामें, जैसा कि मैंने कहा है, दूसरोंके धर्मोंका श्रद्धा-पूर्वक अध्ययन करना भी शामिल मानना चाहिए। लेकिन, मैं इस विषयपर ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता, और न मेरे पास उसके लिए समय है।

मगर अभी बोलते-बोलते मेरे मनमें एक बात आई है, जिसका आधार 'बाइबिल' का मेरा प्रारम्भिक अध्ययन है। उसका एक वाक्य, उसे मैंने ज्योंही पढ़ा त्योंही, मेरे मन-प्राणपर छा गया। वह यह था:

> इस संसारको ईश्वरका साम्राज्य बना दो और फिर देखोगे कि पवित्रता और पुण्य और सब-कुछ तुम्हें अपने-आप प्राप्त हो गये हैं।[1]

यदि आप इस वाक्यकी भावनाको समझ लें, उसके मर्मको पहचान लें और उसके अनुसार आचरण करें तो आपको यह जाननेकी भी आवश्यकता नहीं रह जायेगी कि आपके हृदयमें जीससका या अन्य किसी धर्मगुरुका कौन-सा स्थान है। यदि आप सच्चे भंगीका काम करेंगे, अपने हृदयको झाड़-बुहारकर पवित्र करके उन धर्मगुरुओंके योग्य बना देंगे तो आप पायेंगे कि वे बिना बुलाये ही आपके हृदयमें प्रतिष्ठित हो गये हैं। मेरे लेखे समस्त सच्ची शिक्षाका उद्देश्य यही है। हृदयके संस्कारको मस्तिष्कके संस्कारसे कहीं ऊँचा स्थान देना चाहिए। ईश्वर आपको शुद्ध-पवित्र बनाये!

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-१२-१९२७

२३०. भाषण : उण्डुविल गर्ल्स कालेज, जफनामें

२९ नवम्बर, १९२७

आज सुबह आपसे मिलकर मैं वास्तवमें बहुत प्रसन्न हूँ। आपने जो दान दिये हैं, वे सच्चे हृदयसे दिये हैं। इसलिए उन्हें सामान्य रूपसे भेंट की गई थैलीमें मिला देनेकी बात मुझे अच्छी नहीं लगी। फिर भी आपके द्वारा अपनी रकमोंको आम थैलीमें मिला देनेकी बातका जो सबसे अच्छा मतलब हो सकता है, मैं वही लगाऊँगा। वह यह है कि लड़कोंकी अपेक्षा अधिक संकोची और विनम्र होनेके कारण आप यह नहीं चाहतीं कि मुझे मालूम हो कि आप सबने कुछ दिया है।

१. सेंट मैथ्यू, ६, ३३।

लेकिन, आपको बता दूं कि भारत-भरमें हजारों-हजार लड़कियोंसे मिलनेके बाद अब यह कठिन है कि लड़कियाँ अपने अच्छे कार्योंको मुझसे छिपा सकें। अब तो कुछ लड़कियाँ मुझे अपने बारेमें बुरी बातें बतानेमें भी संकोच नहीं करतीं। मैं यही आशा करूँगा कि इस समय मेरे सामने उपस्थित लड़कियोंमें से कोई भी वैसा कोई बुरा काम नहीं करती। मेरे पास आपके साथ जिरह करनेके लिए समय नहीं है, इसलिए मैं आपसे प्रश्न पूछ-पूछकर आपको ऊबाने नहीं जा रहा हूँ। लेकिन, यदि हमारे बीच ऐसी लड़कियाँ हों जो बुरे काम करती हों तो वे समझ लें कि उनकी शिक्षा बेकार है।

आपके माता-पिता आपको गुड़िया बननेके लिए स्कूलोंमें नहीं भेजते। इसके विपरीत, आपसे दयाकी देवी बननेकी अपेक्षा की जाती है। ऐसा समझनेकी भूल न करें कि केवल अस्पतालोंमें एक खास ढंगकी पोशाक पहननेवाली लड़कियाँ ही दयाकी देवी मानी जा सकती हैं। जब कोई दयाकी देवी बन जाती है तो वह तुरन्त अपनी चिन्ता कम और जो लोग उससे अधिक दीन-दुखी और अभागे हैं, उनको चिन्ता ज्यादा करने लगती है। और मुझे भेंट की गई थैलीमें अपनी शक्ति-भर दान देकर आपने दयाकी देवीका ही काम किया है, क्योंकि यह थैली उनके निमित्त भेंट की गई है जो दुर्भाग्यवश आपसे कहीं अधिक गरीब हैं। थोड़ा-सा पैसा दे देना बड़ा आसान है, लेकिन कोई छोटा-सा काम खुद करना ज्यादा कठिन है। यदि आपके मनमें उन लोगोंके प्रति, जिनके लिए आपने पैसे दिये हैं, कुछ दया हो तो आपको एक कदम आगे जाकर, इन लोगों द्वारा तैयार की गई खादी भी पहननी चाहिए। जब खादी आपके पास लाई जाये तब यदि आप उसको पहननेपर यह कहें कि 'खादी कुछ खुरदरी है, इसलिए हम इसे नहीं पहन सकते' तो मैं यही समझूंगा कि आपमें आत्म-त्याग की भावना नहीं है।

यह तो इतनी अच्छी चीज है कि इसके सम्बन्धमें उच्च वर्ग और निम्न वर्ग, स्पृश्य और अस्पृश्यका कोई सवाल ही नहीं उठता और यदि आपके हृदयकी भावना भी वैसी ही हो और आप अपनेको अन्य लड़कियोंसे ऊँची नहीं समझती हों तो यह सचमुच बहुत अच्छी बात है। ईश्वर आपका कल्याण करे!

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-१२-१९२७

२३१. भाषण: सर रामनाथन बालिका विद्यालय, जफनामें

२९ नवम्बर, १९२७

आजकी सुबह यहाँ आकर सचमुच मुझे अतीव प्रसन्नताका अनुभव हो रहा है। इस स्कूलमें आकर मानो मैं जफनाकी विभिन्न शिक्षण संस्थाओंको देखनेका क्रम निष्पन्न कर रहा होऊँ। आजकी सुबह यह सारा समारोह जिस सुरुचि और सादगीके साथ आयोजित किया गया है, सच मानिए, मेरा ध्यान उस ओर खासतौरसे गया है। मैं उदारतापूर्वक दी गई १,१११ रुपयेकी थैलीकी भी कद्र करता हूँ, जो अधिकांश थैलियोंसे भिन्न एक खादीके थैलेमें बन्द करके भेंट की गई है। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि लेडी रामनाथनने सर पी० रामनाथनका भेजा एक तार मुझे दिया है, जो स्वयं इस समारोहमें शामिल नहीं हो पाये। यदि मैं सर रामनाथनकी उदारता और विचारशीलताके इस अमर स्तम्भको नहीं देख पाता तो मुझे बराबर इसका पछतावा रहता। लेडी रामनाथनने बहुत ही कृपापूर्वक मुझे आपके अभिनन्दन-पत्रकी एक प्रति, इस संस्थाकी रिपोर्ट और आपकी पत्रिकाकी दो प्रतियाँ पहले ही सुलभ करा दी थी।

आपने अपने अभिनन्दनपत्रमें यह वादा किया है कि आप इस दिनको एक वार्षिक उत्सवके रूपमें मनाने जा रही हैं और इसका उपयोग खादी-कार्यके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके लिए करेंगी। इसने मेरे हृदयको छू लिया है। मैं जानता हूँ कि यह कोई थोथा वादा नहीं है, बल्कि आप इस वादेको धार्मिक निष्ठाके साथ निभाने जा रही हैं। जिन करोड़ों क्षुधार्त्त लोगोंके लिए मैं यह दौरा कर रहा हूँ, वे यदि अपनी बहनोंके इस संकल्पको समझ सकें तो मैं जानता हूँ कि उनके हृदय खिल उठें, लेकिन आपको यह जानकर दुख होगा कि यदि मैं यह बताने भी लगूँ तो ये करोड़ों मूक लोग, जिनके लिए आपने मुझे यह थैली दी है और लंका-भरमें और भी बहुत सारी थैलियाँ दी गई हैं, ऐसी बातोंको समझ ही नहीं पायेंगे। उनके कष्टकर जीवनका मैं चाहे जितना और जैसा वर्णन करूँ, वह उनकी सही अवस्थाका चित्र नहीं पेश कर सकता।

इसपर से सहज ही यह प्रश्न उठता है कि उनके लिए और उन-जैसे लोगोंके लिए आपको क्या करना है। यह कह देना आसान है कि आप अपने जीवनमें कुछ और सादगी अपनाइये, कुछ और परिश्रमी बनिये, लेकिन यह तो इस सवालके साथ खिलवाड़ करना होगा। मगर ऐसे ही विचारोंके कारण मैं चरखेकी ओर मुड़ा। जिस तरह मैं अभी आपसे कह रहा हूँ, उसी तरह मैंने अपने मनसे कहा कि यदि आप अपने और उन करोड़ों क्षुधार्त्त मानवोंके बीच कोई जीवन्त सम्बन्ध स्थापित कर सकें तो आपके लिए, उनके लिए और सारी दुनियाके लिए आशाका एक आधार हो जायेगा। आपको इस संस्थामें धार्मिक शिक्षा दी जाती है और यह बहुत अच्छी बात है। आपके यहाँ एक सुन्दर मन्दिर भी है। आपकी समय-सारिणीसे पता चलता

है कि आप अपना दिन पूजा-प्रार्थनासे शुरू करती है, जो बहुत अच्छी और मनुष्यको ऊपर उठाने वाली चीज है। लेकिन यदि आप अपने दैनिक जीवनमें उस पूजाकी भावनाके अनुरूप आचरण नहीं करतीं तो वह पूजा सहज ही केवल एक रीति-निर्वाह बनकर रह जा सकती है। इसलिए मेरा कहना है कि उस पूजाकी भावनाके अनुरूप आचरण करनेके लिए आप चरखेको अपनाएँ; प्रतिदिन आधे घंटेतक उसपर बैठें और अभी मैंने जिन करोड़ों क्षुधार्त्त मानवोंकी दशाका वर्णन किया है, उनके बारेमें सोचते हुए ईश्वरके नामपर अपने मनमें यह कहती रहें कि 'मैं उन्हींकी खातिर कात रही हूँ।' यदि आप यह सब अपने हृदयसे करेंगी तो यह जानते हुए कि प्रदर्शनके लिए नहीं, बल्कि तन ढँकनेके लिए कपड़ा पहननेका मतलब उस पूजाके लिए और अधिक विनम्र और पवित्र होना होगा, आपको निश्चय ही खादी पहनकर अपने तथा उन करोड़ों लोगोंके बीच वैसा अटूट सम्बन्ध स्थापित करनेमें कोई हिचक नहीं होगी। इस संस्थाकी लड़कियोंसे मुझे इतना ही नहीं कहना है।

सर रामनाथनने आपके लिए जितना कुछ किया है और लेडी रामनाथन तथा उनकी देख-रेखमें काम करनेवाले कर्मचारी जितना कुछ कर रहे हैं, यदि आप उसके योग्य बनना चाहती हैं तो आपको और भी बहुत-सी बातें करनी होंगी। आपकी पत्रिकाओंमें किसी हदतक क्षम्य गौरवके साथ इस बातका उल्लेख किया गया है कि इस स्कूलकी कुछ भूतपूर्व छात्राएँ अभी क्या कर रही हैं। मैंने कुछ इस ढंगके उल्लेख देखे कि अमुक-अमुकने शादी कर ली, आदि-आदि। ऐसे ४-५ उल्लेख थे। मैं जानता हूँ कि जो लड़की वयस्क हो चुकी हो, मतलब कि २५ या २२ वर्षकी भी हो चुकी हो, उसके शादी करनेमें कुछ बुरा नहीं है। लेकिन, इनमें मुझे ऐसा कोई उल्लेख कहीं नहीं देखनेको मिला कि अमुक लड़कीने अपने-आपको सिर्फ सेवाके लिए अर्पित कर दिया है। इसलिए मैं आपसे भी वही बात कहना चाहता हूँ जो मैंने बंगलोरकी लड़कियोंके बारेमें महाविभव महाराजा साहबके कालेजकी छात्राओंमें कही थी। मैंने कहा था कि यदि आप सब सिर्फ गुड़िया बनकर रह जायें और इन शिक्षण-संस्थाओंसे निकलते ही सार्वजनिक जीवनसे अलग हो जायें तब तो माना जायेगा कि आपको संवारनेके लिए शिक्षाशास्त्री लोग जो इतना सारा प्रयत्न कर रहे हैं और उदार लोग जो इतना सारा धन खर्च कर रहे हैं उसके बदले लाभ बहुत कम रहा है। अधिकांश लड़कियाँ स्कूलों और कालेजोंसे फुरसत पाते ही सार्वजनिक जीवनसे अलग हो जाती हैं। आप इस संस्थाकी छात्राओंको ऐसा-कुछ नहीं करना चाहिए। आपको कुमारी एमरी और इस संस्थाकी देख-भाल करनेवाली उन अन्य अनेक महिलाओंका अनुकरण करना चाहिए जो यदि मैं गलत न कह रहा होऊँ तो, अविवाहिता ही हैं। हर लड़की, हर भारतीय लड़की, शादी करनेको ही जन्म नहीं लेती। मैं ऐसी अनेक लड़कियोंके उदाहरण दे सकता हूँ जो सिर्फ एक व्यक्तिकी सेवा करनेके बजाय अपना सब-कुछ लगाकर समाजकी सेवा कर रही हैं। वह घड़ी आ पहुँची है जब हिन्दू लड़कियोंको सीता और पार्वतीके समान या उनसे भी श्रेष्ठ बनकर दिखाना है। आप अपनेको शैव कहती है। आप जानती हैं कि पार्वतीने क्या किया था।

उन्होंने पैसा खर्च करके पति नहीं पाया था, और न उन्होंने अपनेको बिकने ही दिया। लेकिन आज वे हिन्दू समाजके आकाशको एक देदीप्यमान नक्षत्रकी तरह गौरवान्वित कर रही हैं और उनका नाम मान मनियोंमें लिया जाता है। क्यों? इसलिए नहीं कि उन्होंने किसी शिक्षण-सस्थामें कोई उपाधि प्राप्त की थी, बल्कि इसलिए कि उन्होंने अश्रुतपूर्व तपस्या की थी। मुझे मालूम हुआ है कि यहाँ दहेजकी दुर्भाग्यपूर्ण प्रथा है, जिसके कारण युवतियोंको अपने लिए सुयोग्य जीवन-साथी पाना बहुत मुश्किल हो जाता है। वयस्क लड़कियोंसे — और आपमें से कुछ वयस्क हैं — ऐसे प्रलोभनोंपर विजय पानेकी आशा की जाती है। यदि आप इन कुरीतियोंका विरोध करना चाहती हैं तो आपको, आपमें से कुछको, जीवन-भर या कमसे-कम कुछ वर्ष कुमारी रहना पड़ेगा। फिर जब आपके शादी करनेका समय आयेगा और आपको लगेगा कि आपको एक जीवन-साथी चाहिए ही तो आप पैसे या प्रसिद्धि वाले अथवा शारीरिक दृष्टिसे सुन्दर पुरुषके लिए आकुल न रहेंगी, बल्कि आप पार्वतीकी तरह एक ऐसे जीवन-साथीको ढूँढेंगी, जिसमें वे सारे अनुपम गुण विद्यमान हैं जो ऊँचे चरित्रके लिए आवश्यक हैं। आप जानती हैं कि नारदजीने पार्वतीके सामने शिवका कैसा चित्र प्रस्तुत किया था। बिलकुल दरिद्र, अगमें भभूति लगाये, किसी भी तरहसे सुन्दर न दिखनेवाला ब्रह्मचारी। यह वर्णन सुनकर पार्वतीने कहा था — हाँ, यही मेरा पति है। जबतक आपमें से कुछ लडकियाँ तप करनेमें ही — पार्वतीकी तरह हजार वर्षतक नहीं — संतोष नहीं मानती समाजमें तबतक बहुत-से शिव तैयार नहीं होंगे। हम कमजोर मानव-प्राणी ऐसा नहीं कर सकते, लेकिन आप कमसे-कम अपने जीवनकी अवधिमें ऐसा कर सकती हैं। यदि आप इन शर्तोंको स्वीकार करेंगी तो फिर गुड़ियोंके राज्यमें खो जानेको कतई तैयार न होंगी, बल्कि पार्वती, दमयन्ती, सावित्री और सीताकी तरह सती बननेका प्रयत्न करेंगी। मेरे विचारसे तब और केवल तभी आप ऐसी संस्थाके योग्य सिद्ध हो सकेंगी। ईश्वर आपमें यह महत्वाकांक्षा भरे और यदि आपमें यह आकांक्षा हो तो उसे फलीभूत करनेमें वह आपका सहायक हो।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-१२-१९२७

२३२. भाषण: तेल्लीपल्ली बुनाई स्कूल, जफनामें

२९ नवम्बर, १९२७

बुनाई पाठशालाको स्थापित करनेके लिए महात्माजीने प्रबन्धकोंको बधाई दी, लेकिन उनसे कहा कि जबतक वे हाथ-कताईको भी इसमें शामिल नहीं करेंगे इसे पूरी सफलता नहीं मिलेगी। उन्होंने कहा कि बुनाई पाठशालाकी सफलता उन लोगोंकी आवश्यकतासे नहीं आँकी जा सकती जो चन्द रुपये माहवार कमा लेनेकी नीयतसे इसमें प्रशिक्षित हुए हैं, बल्कि उस पद्धतिसे आँकी जा सकती है जिससे पूरा समाज सम्पन्न और संस्था आत्मनिर्भर बन सकेगी। उन्होंने कहा हाथ-कताईको यदि आपने हाथ-बुनाईसे अलग किया और कताईके लिए मेहनतानेकी माँग की तो आप पूरी तरह निराश होंगे। उन्होंने आगे बोलते हुए कहा कि हिन्दुओं और ईसाइयोंने जिस प्रकार मिलकर मेरा स्वागत किया है, मुझे आशा है यही भावना उनके सभी सम्बन्धोंको प्रभावित करती रहेगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-१२-१९२७

२३३. भाषण: जफना कालेज, जफनामें

२९ नवम्बर, १९२७

आपके इस प्रायद्वीपमें इतनी सारी शिक्षण-संस्थाओंमें जाने और उन्हें देखनेसे मुझे बहुत ज्यादा खुशी हुई है। इन सब खुशियोंमें इस कालेजमें, जो मैं समझता हूँ कि इस प्रायद्वीपकी सबसे पुरानी शिक्षण संस्था है, आनेकी खुशी भी कुछ कम नहीं है। और फिर मुझे बताया गया है कि इस संस्थाके बहुतसे पुराने विद्यार्थी आज देशके विशिष्ट सेवक हैं। और अन्तिम बात यह है कि बंगलोरमें मुझे आपके वाइस-प्रिंसिपलसे मिलनेका सौभाग्य मिला था। स्वागत समितिके दो सचिव भी इस स्कूलके पुराने विद्यार्थी रह चुके हैं। लड़के और लड़कियोंके मुस्कराते हुए चेहरे देखकर मुझे हमेशा ही प्रसन्नता होती है। मुझे यह भी मालूम है कि जिस कार्यको करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त है, वह कार्य आज बहुत-से वयस्क लड़के कर रहे हैं, जिन्होंने कि अपना सब-कुछ मातृभूमिकी सेवाके लिए अर्पित कर दिया है। इसलिए आपकी थैली मेरे लिए बहुमूल्य है। मैं जानता हूँ कि ये सारी रकमें तथा यह छोटी रकम भी, जो मुझे लड़के और लड़कियोंसे प्राप्त हुई है, बड़ी उम्रके दुनियादार व्यक्तियोंसे प्राप्त रकमोंकी अपेक्षा अधिक फलप्रद सिद्ध होंगी। आपने जो रकम दी है, उसपर सरलताकी छाप पड़ी हुई है, और यह जायेगी भी उन करोड़ों या उन करोड़ोंमें से

कुछ पुरुषों और स्त्रियोंके पास, जो खुद भी सरल हैं और शायद जानबूझकर हैं, क्योंकि इसके अतिरिक्त वे और कुछ हो ही नहीं सकते...'

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-१२-१९२७

२३४. भाषण : रामनाडकी सार्वजनिक सभामें

३० नवम्बर, १९२७

सभापति महोदय और मित्रो,

मानपत्रों, सूतकी मालाओं और अनेक थैलियोंके लिए मैं आपका आभारी हूँ। सचमुच ईश्वर सर्वशक्तिमान है। यदि हमारे पास आँखें हों तो हम क्षण-प्रतिक्षण उसकी महानता देख सकते हैं। साढ़े पाँच बजे झड़ी लगी हुई थी। मैंने उसे देखकर तय कर लिया था कि सभा नहीं होगी। परन्तु मेरी आशंका निराधार सिद्ध हुई। बादल छँट गये और अब हमारे सामने एक विशाल समुदाय एकत्र होता जा रहा है। मैं इतना अहंकारी नहीं कि सोचने लगूँ कि ईश्वरने सिर्फ मेरी खातिर या आपकी खातिर ही यह सब कर दिया है। पर इतनी विनम्रता मुझमें है कि मैं हमारे निकट चलनेवाले घटना-क्रममें और उसके हमारे अनुकूल बननेमें — इन सबके पीछे ईश्वरकी महानताके दर्शन कर सकता हूँ। हमारे अन्दर इतनी विनम्रता होनी चाहिए कि जब यह घटना-क्रम हमारे प्रतिकूल पड़े और हमारे मार्गमें भाँति-भाँतिकी बाधाएँ आ खड़ी हों, तब हम ईश्वरको दोष न देने लगें, यह न सोचने लगें कि वह इतना महान नहीं है। मानव-इच्छाओंकी नगण्यता तो आप यहीं इसी समय देख सकते हैं, जब मैं भाषण दे रहा हूँ।[2] मैं चाहता हूँ कि आप सब वर्षाके इन घुमड़ते बादलोंमें मानवकी क्षुद्रता और ईश्वरकी महानताको पहचानें, भले ही आप सिरोंपर छाते तान लें। पर मैं यहाँ आपको ईश्वरकी महानताके बारेमें भाषण देने नहीं आया हूँ; और न ईश्वरको अपनी महानता विज्ञापित करनेकी ऐसी कोई जरूरत ही है, जैसी मुझको है। उसकी महानता तो कालके विशाल पृष्ठपर अमिट अक्षरोंमें अंकित है। इसलिए, आइए, हम उसकी महानताके आगे शीश नवाकर, फिर अपने काममें लग जायें।[3]

बहुत दिनोंसे मेरी बड़ी इच्छा थी कि मैं यथाशीघ्र यहाँ आऊँ; और पिछली बार जब मैं यहाँसे केवल तीस मीलकी दूरीतक पहुँच कर भी यहाँ नहीं आ सका तो मेरा मन बड़ा दुखी हो गया था। इसलिए यहाँ आकर आपसे थैली प्राप्त करनेकी अपनी इच्छाकी पूर्तिसे मुझे अतीव प्रसन्नता हुई है। मैं आपको बतला दूँ कि इस सभामें आनेसे पहले मैं महिलाओंकी एक सभामें गया था। उनको कोई भाषण दरकार नहीं था, वे नहीं चाहती थीं कि मैं भाषण करूँ। मैंने उनको देखकर यही अनुमान लगाया कि

१. इसके बाद गांधीजी खादी, साप और प्रेमके सम्बन्धमें बोले।
२. हल्की-सी बूँदाबाँदी होने लगी थी और कई लोगोंने अपने छाते खोल लिये थे।
३. इस समयतक वर्षा बिल्कुल थम चुकी थी।

वे बड़े ही गरीब घरोंकी महिलाएँ थीं। अगर उनकी कोई इच्छा थी तो यही कि उनके पास जितने भी पैसे हों लगभग सभी मुझे सौंप दें। अगर किसी महिलाने अपनी साड़ीके खूँटमें दो सिक्के बाँध रखे थे तो उसने एक अपने हाथसे और दूसरा अपने बच्चोंके हाथोंसे मेरी झोलीमें डलवा दिया। इस प्रकार अपनी झोलीमें सिक्के जमा होते देखकर मेरी छाती फूल उठी थी। यद्यपि वे थे तो कुछ पैसे ही, पर उन आँखों और उन हाथोंको देखकर मुझे स्पष्ट अनुभूति हुई कि यही उनका सर्वस्व था और इसके साथ उन्होंने अपना समूचा हृदय भेंट कर दिया था। और आप भी शायद मेरी इस बातसे सहमत होंगे कि चन्द पैसोंकी वह भेंट इस थैलीके लिए दिये गये बड़ेसे-बड़े दानकी अपेक्षा अधिक मूल्यवान थी। मैंने इस घटनाका उल्लेख और यह तुलना इस उद्देश्यसे नहीं की कि आपकी भेंट की हुई थैलीका महत्त्व मैं घटाना चाहता हूँ। मेरा सौभाग्य है कि मुझे ऐसी सैकड़ों घटनाओंका प्रत्यक्षदर्शी बनना पड़ता है। उनमें से एक इस घटनाका उल्लेख करनेका मेरा मंशा यही है कि आप इस तथ्यको भली-भाँति हृदयंगम कर लें कि हमारा यह आन्दोलन भारतके कंगालोंका आन्दोलन है। इसका उल्लेख मैंने यह बतलानेके लिए भी किया है कि हमारे देशकी महिलाएँ उपेक्षाके योग्य नहीं हैं, ऐसी नहीं है जिनकी पुरुषोंको कोई परवाह ही नहीं करनी चाहिए या जिनको दासियाँ या पुरुषोंकी वासना तृप्त करनेका साधन-मात्र समझा जाये। इस घटनाका उल्लेख मैंने इसलिए किया है कि आप लोग भी अपने हृदयोंमें इन सीधी-सादी बहनों जैसी अडिग आस्था पैदा करें। और इस घटनाके उल्लेखका अन्तिम कारण यह है कि मैं इसके जरिये आपके मानपत्रके आरम्भिक अनुच्छेदका उत्तर देना चाहता हूँ।

आप चाहते हैं कि मैं भारतके राजनीतिक संघर्षका नेतृत्व करूँ। मैंने कोयम्बटूरमें भी कहा था कि मुझे लगता है कि मैं चरखेको अपना सारा समय देकर राज-नीतिक संघर्षके लिए भी अपना तुच्छ योगदान कर रहा हूँ। पर यदि 'राजनीतिक' शब्दका वह अर्थ भी लगाया जाये, जो आपने मानपत्रमें लगाया है, तो भी राजनीतिको धर्ममय बनाना तबतक सम्भव नहीं जबतक कि हमारे अन्दर उतनी ही अगाध और अडिग आस्था न हो जितनी कि हमारी इन भोली-भाली बहनोंके मनमें है। उनकी आस्था परिणाम या लाभका मुँह नहीं जोहती, वह भय या संकोचसे सर्वथा अपरिचित है। बच्चा जब अपनी माँकी गोदमें दुबककर अपनेको सर्वथा सुरक्षित महसूस करता है, तब वह आगा-पीछा नहीं सोचता, यह सोचने नहीं बैठता कि माँ उसकी रक्षा करनेमें सचमुच समर्थ भी है या नहीं। और यदि हमारे देशमें राजनीतिक ढंगसे सोचने-वाले लोग — सार्वजनिक सभाओंका आयोजन करने, भाषण देने और सुननेके अभ्यस्त लोग — भी भारतके उज्ज्वल भविष्यके बारेमें इतनी ही उत्कट आस्था रखते होते, यदि चरखेके सन्देशपर उनकी ऐसी ही अडिग आस्था होती, तो निःसन्देह स्वराज्य कबका मिल गया होता। चरखेको आप भारतकी आर्थिक समस्याओंका हल न भी मानिए। कमसे-कम उसे हमारी अपनी आस्था, हमारे विश्वासकी कसौटी तो मानिए। लाभ-हानिकी दृष्टिसे सोचनेके अभ्यस्त अपने देश भाइयोंके सामने मैंने चरखेका बेजोड़ और अकाट्य आर्थिक पहलू रख दिया है। परन्तु यदि हमारे हृदयमें आस्था हो तो

फिर चरखेके पक्षमें अर्थशास्त्रीय तर्क जुटानेकी, उसे सिद्ध करनेकी कोई जरूरत ही नहीं रह जाती। तब तो हमारे लिए इतना ही जानना काफी होगा कि चरखेसे कोई हानि नहीं हो सकती और उपयोगकर्त्ताओंके लिए चरखा एक उपयोगी वस्तु है, क्योंकि चरखेने कुछ महिलाओंको जीविका जुटाई है। अगर ये तथ्य ही हमारी आस्थाको दृढ़ बनानेमें और करोड़ों लोगोंको चरखा अपनानेके लिए प्रवृत्त करनेमें समर्थ हो जायें तो पर्याप्त है। इसलिए कि एक बड़ी सीधी-सी बात है जिसे हर कोई आसानीसे समझ सकता है और वह यह है कि जब देशके करोड़ों जन ऐसी किसी वस्तुपर अपनी आस्था जमा देंगे तो सारे राष्ट्रमें एक जबर्दस्त शक्ति पैदा हो जायेगी, एक सम्मिलित शक्ति जो अदमनीय होगी। मुझे चरखेपर ऐसी ही आस्था है और इसलिए मुझमें इतना धैर्य है कि मैं इस महान परन्तु विपदग्रस्त देशकी जनतामें चरखेके प्रति एक सामान्य जागृति पैदा होने और उस जागृतिके फलस्वरूप सामान्य आस्था पैदा होनेके दिनका इन्तजार कर सकता हूँ।

आपने अपने मानपत्रमें शाही आयोगका उल्लेख किया है। लगभग १७ दिनसे, बल्कि ठीक हिसाब लगाया जाये तो इधर २३ दिनसे मुझे भारतके घटना-क्रमके बारेमें लगभग नहींके बराबर जानकारी रही है, क्योंकि उस सुन्दर, सुवासित द्वीपमें जाकर मेरे पास जानकारी प्राप्त करनेका ऐसा कोई साधन नहीं रह गया था। हां, कोलम्बोके स्थानीय समाचारपत्रोंमें कुछ छुटपुट खबरें मिल जाती थीं। अब देशमें लौटनेपर मैं सारी घटनाओंका सिलसिला समझनेकी कोशिश करूँगा। और तबतक तो मैं वही दोहरा सकता हूँ जो मैंने लंकामें समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंसे कहा था — यह कि शाही आयोगके मामलेमें मैंने तय कर लिया है कि अपनी अन्तरात्माकी बात न सुनकर मैं कांग्रेसके अध्यक्ष और कांग्रेसके सामान्य सदस्योंकी इच्छाके मुताबिक ही चलूँगा।[1]

आपका अनुरोध है कि यहाँ एक खादी-केन्द्र खोल दिया जाये। यदि यह किसी भी तरह सम्भव होता तो मुझे भरोसा है कि अखिल भारतीय चरखा संघकी परिषद अबतक यहाँ एक शाखा कबकी स्थापित कर चुकी होती। मैं जानता हूँ कि कताई और बुनाईके लिए यह स्थान अनुकूल है। परन्तु देशके भिन्न-भिन्न भागोंमें केन्द्र स्थापित करनेके लिए संघ तीन चीजें देखता है — अमुक स्थानपर ठीक ढंगके कार्यकर्त्ता हों, उपयुक्त वातावरण हो और धन सुलभ हो। धनकी कठिनाई नहीं है और होती भी तो आप अब थैली भेंट कर ही चुके हैं। अनुकूल परिस्थितियाँ भी मौजूद हैं। लेकिन सबसे बड़ी कठिनाई तो ठीक ढंगके कार्यकर्त्ता पानेकी है और यह कठिनाई देशमें हर जगह महसूस की जा रही है। देशमें ऐसे कार्यकर्त्ताओंकी संख्या अँगुलियोंपर गिनने लायक ही है जो आत्मत्यागी हों, मेहनतसे काम करें और चरखे तथा करघे और खादी व्यवसायके तरीकोंका अध्ययन करनेमें दिमाग लगायें। अगर आपके यहाँ इन गुणोंसे युक्त कार्यकर्त्ता मौजूद हों, तो मैं कहूँगा कि आप अखिल भारतीय चरखा संघकी तमिलनाडु शाखाके मन्त्री श्रीयुत रामनाथनसे तुरन्त लिखा-पढ़ी शुरु कर दें।

१. देखिए "भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंसे", २३-११-१९२७।

यहाँके स्कूली विद्यार्थियोंसे दो थैलियाँ पाकर मुझे बड़ी खुशी हुई है। राजा हाई स्कूलके विद्यार्थियोंने अपने मानपत्रमें इस बातके लिए क्षमा माँगी है कि वे थैलीके लिए कम राशि जमा कर पाये। लंकामें कुछ विद्यार्थियोंने तो हर स्कूल पीछे एक हजार तककी थैली भी दी है, जैसा कि रामनाथन गर्ल्स कालेजने कल किया था। विद्यार्थियोंकी ओरसे दी गई थैलियाँ यदि राशियोंके हिसाबसे देखी जायें, तो काफी छोटी ही रहती है। परन्तु मै थैलियोंको उनकी राशियोंके हिसाबसे छोटी या बड़ी नहीं मानता। बहनों द्वारा भेंट की गई जिस थैलीका मैंने उल्लेख किया है, यदि विद्यार्थियोकी थैलियाँ भी उसी तरहकी हों, उन्होंने अपनी सारी बचत थैलीमें दे दी हो, तो फिर थैली छोटी होनेके लिए क्षमा माँगनेकी कोई जरूरत ही नही। पर यदि विद्यार्थियोने चन्दा देनेमें कोई कंजूसी की है, तो उनको इसपर फिरसे विचार करना चाहिए, और यथाशक्ति अधिकसे-अधिक देना चाहिए। विद्यार्थियोंके मानपत्रमें किये गये इस वायदेसे मुझे बड़ी खुशी हुई है कि आगेसे वे अधिकसे-अधिक खादी ही खरीदेंगे। ऐसा वायदा कर देनेके बाद, उनको उसे अच्छेसे-अच्छे तरीकेसे निभाना चाहिए। विद्यार्थियोंको यह भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि देशका भविष्य उनके ही हाथोंमें है। और यदि विद्यार्थी लोग अपना चरित्र उन्नत नही बनायेंगे, यदि वे विचारोंकी पवित्रता और इससे भी अधिक हृदयोंकी पवित्रता अपने अन्दर पैदा नहीं करेंगे और अपने वायदोंके प्रति सच्चे नही रहेंगे तो देशका भविष्य बिलकुल भी आशापूर्ण नहीं रह जायेगा। विद्यार्थियोंको यह भलीभाँति महसूस कर लेना चाहिए कि चारित्रिक दृढ़ताके बिना सारा किताबी ज्ञान एकदम निरर्थक हो जाता है।

अब मैं दो बातें शेष श्रोताओसे कहना चाहता हूँ। शराबखोरीकी लत जिनको हो, उनको शराबखोरी बिलकुल छोड़ देनी चाहिए और इस देशमें पूर्ण मद्य-निषेधके लिए सभीको प्रयत्नशील होना चाहिए। और अब समय आ गया है कि हम सब लोग बिलकुल भुला दें कि इस देशमें अस्पृश्यता-जैसा कोई कलंक कभी था भी। मैं आपको बतलाता हूँ कि मैं यह देखकर बड़ा लज्जित हुआ कि हमारे पड़ोसी लंकाको भी यह छूत लग गई है। हम अगर सचमुच स्वराज्य चाहते हैं तो हमें यह बात बिलकुल ही भूल जानी चाहिए कि हमारे समाजमें चन्द लोग अन्य लोगोंकी अपेक्षा बड़े या श्रेष्ठ हैं।

आपने मुझे फ्रेममें जड़ा हुआ मानपत्र भेंट किया है। आप जानते ही हैं कि मैं ऐसी चीजोंको बेचकर देशके मूक निर्धन लोगोंके लिए अधिकसे-अधिक धन जमा करनेसे अपनेको नहीं रोक पाता। अपने आपको भुखमरीसे पीड़ित करोड़ों लोगोंका प्रतिनिधि बतलानेवाले व्यक्तिके लिए ऐसे कीमती उपहार रखना बिलकुल शोभा नही देता। उसे तो यही शोभा देता है कि ऐसे उपहारोंको धनके रूपमें बदल ले और उस धनको अपने स्व-निर्धारित लक्ष्यके लिए उपयोगमें ले।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-१२-१९२७

२३५. हिन्दू-मुस्लिम एकता

हालमें जब मै दिल्ली गया था, डाक्टर अन्सारीने मुझसे कहा कि मैने कलकत्तामें विश्वस्त आदमियोके मुंहसे सुना था कि आपको हिन्दू-मुस्लिम एकतामें न तो विश्वास रहा है और न दिलचस्पी ही, और आप अली-भाइयों जैसे मुसलमान दोस्तोंसे अलग ही अलग बचते फिरते है। इसलिए डाक्टर अन्सारीने सुझाया कि मैं गलतफहमी और शक दूर करनेके लिए दिल्लीकी किसी सार्वजनिक सभामें अपने विश्वासका ऐलान करूँ। मैं इस सलाहको और कुछ नही तो केवल इसीलिए नही मान सका कि हकीम साहब अजमलखाँ और स्वामी श्रद्धानन्दकी पहलेकी दिल्ली आज गुंडोंकी दिल्ली बन रही है जहाँ मेरे लिए ठहरना भी मुहाल है, भाषणकी तो बात दूर। खैर, मैंने डाक्टर अन्सारीसे वादा किया कि जितनी जल्दी हो सका मैं अपनी स्थिति साफ करनेकी कोशिश करूँगा। अब मैं वही कर रहा हूँ।

हिन्दू-मुस्लिम एकता और दूसरे सभी सम्प्रदायोंकी एकतामें मेरा विश्वास पहले ही जैसा दृढ है। हाँ, उसे सफल बनानेका मेरा तरीका बदल गया है। पहले मैं सभाएँ करने, प्रस्ताव रखने और स्वीकृत करानेमें शामिल होता था, और इस तरह एकता लाना चाहता था। अब इन बातोमें मेरा विश्वास नही रह गया है। उनके लिए हमारे यहाँ उपयुक्त वातावरण नही है। मेरी समझमें अविश्वास, शक, डर और असहायताभरे इस वातावरणमे इन तरीकोसे दिली एकता होनेके बदले, उसमे बाधा पड़ती है। मैं इसलिए परमात्मासे प्रार्थना करने और ऐसे दूसरे व्यक्तिगत दोस्ताना काम करनेपर भरोसा रखता हूँ जो किये जा सके। इसलिए एकता पैदा करनेके लिए की गई सभाओमें जानेकी मुझे कोई ख्वाहिश नही रह गई है। तो भी इसके मानी यह नही कि मैं ऐसे प्रयत्नोंको बुरा समझता हूँ। इसके विपरीत, जिन्हे ऐसी सभाओंमें विश्वास है, वे उन्हें जरूर करें। मैं उनकी पूरी सफलता चाहूँगा।

दोनो ही जातियोकी मौजूदा मनोवृत्तिसे मेरा मेल नही बैठता। अपने खयालसे दोनों ही कह सकते है कि मेरा तरीका असफल रहा है। मैं जानता हूँ कि जिनकी रायकी कुछ कीमत है, उन लोगोके बीच मैं अत्यन्त ही अल्पमतमें हूँ। इन सभाओं वगैरामें शामिल होकर मैं उपयोगी सेवा तो कर नही सकता। और चूँकि सच्ची एकता स्थापित होती देखनेके सिवाय दूसरी किसी चीजमें मेरी दिलचस्पी नहीं है, इसलिए जहाँ मैं हाजिर होकर सेवा नही कर सकता, वहाँ मै गैरहाजिर रहना ही एक सेवा समझता हूँ।

मुझे तो सत्य और अहिंसाको छोडकर अन्य किसी चीजसे कोई आशा नहीं है। मैं जानता हूँ कि जब सब तरीके असफल हो जायेंगे, तब इनके जरिये ही सफलता प्राप्त होगी। इसलिए चाहे मै एक अकेला ही रह जाऊँ या मेरी ओर दुश्मन हों, मगर मै चलूँगा तो उसी रास्तेपर जो मुझे जान पड़ता है कि ईश्वरने दिखलाया है। मात्र सामयिक नीतिके तौरपर तो अहिंसा आज किसी कामकी नहीं। नीतिके तौरपर यह

तभी कारगर हो सकती है जब कि हमारे अपने बीच इसके विरुद्ध काम करनेवाली शक्तियाँ न हों। मगर जब अपने बीच हमारा उन लोगोंसे वास्ता पड़ता है जो खास हालातमें हिंसासे काम लेना अपना ध्येय मानते हैं तब अहिंसा काम-चलाऊ नीतिके तौरपर कारगर नहीं रह सकती। अहिंसामें पूर्ण विश्वास रखनेवालेके विश्वासकी परीक्षाका समय भी वही होता है। इसलिए मैं और मेरे विश्वास, दोनोंकी ही आज परीक्षा हो रही है। और अगर हम सफल होते मालूम न पड़ें तो दर्शक या आलोचक मेरे सिद्धान्तको दोष देनेके बदले मुझे ही दोष दें। मैं जानता हूँ कि कभी-कभी मुझे अपने आपसे भी लड़नेको लाचार होना पड़ता है। अबतक मैं ऐसा नहीं बन सका हूँ कि मेरे विचारोंमें भी हिंसाकी गुंजाइश न रहे। मगर मैं ऐसी वैचारिक हिंसाके विरुद्ध परमात्माकी दी हुई सारी शक्तिसे संघर्ष कर रहा हूँ।

अब शायद पाठक समझ गये होंगे कि मैं अली-भाइयोंके साथ पहले जितना क्यों नहीं रहता। अब भी मैं उनकी मुट्ठीमें हूँ। वे अब भी मुझे सगे भाइयों-जैसे प्रिय हैं। मुसलमानोंके गाढ़े वक्तमें उनका साथ देनेके लिए मुझे जरा भी अफसोस नहीं है। अगर फिर अवसर आया तो मैं वैसा ही करूँगा। हालाँकि हम दोनोंका उद्देश्य एक ही है, मगर आज हमारे रास्ते एक नहीं हैं। वे तो मुझे शिमले और कलकत्तेकी सभाओंमें ले जाते[1]। कोहाटके दंगोंके[2] बादसे घटनाओंको समझनेमें हम लोग एक राय नहीं हो सके हैं। मगर वह दोस्ती ही किस कामकी जो इसीपर निर्भर हो कि हर बातमें हमारी रायें मिलती रहें। सच्ची दोस्ती तो ऐसी होनी चाहिए जो ईमानदाराना मतभेदको, चाहे वह कितना ही तीव्र क्यों न हो, बरदाश्त कर सके। मैं मानता हूँ कि हमारे मतभेद ईमानदाराना हैं और इसलिए जिन लोगोंको मेरे और अली-भाइयों तथा दूसरे मुसलमान मित्रोंके बीच, जिनका नाम पाठक सहज ही बूझ सकते हैं, दोस्तीके टूटने या उसमें कमी आ जानेका शक हो, वे समझ लें कि वह अब भी पहले जैसी ही पक्की बनी हुई है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-१२-१९२७

१. सितम्बर, १९२७के शुरूमें हिन्दू और मुसलमान नेताओंका एकता सम्मेलन मु० अ० जिन्नाकी अध्यक्षतामें शिमलामें हुआ था; इसी तरहका एक दूसरा सम्मेलन अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने, २७ अक्टूबर, १९२७को कलकत्तामें बुलाया था।

२. देखिए खण्ड २६, पृष्ठ ३३३-४१।

२३६. अमेरिकासे सहायता

लगातार यात्राके कारण मैं इससे पहले रेवरेंड जॉन हेन्स होम्सके[1] निम्नलिखित पत्रको प्रकाशित नहीं कर सका :

> जो विनाशकारी बाढ़ अगस्तमें आपके देशमें आई थी, उसकी खबर सुनते ही मैंने 'यूनिटी' में तुरन्त उसकी कहानी छाप दी थी। आगे अब हमने प्रोफेसर हैरी वार्डके सहयोगसे एक कोषके लिए, जिसका नाम हमने "गांधी सहायता कोष" रखा है, धन संग्रह करनेके खयालसे जनताके नाम एक अपील छापी है। अपनी इस अपीलको हम विभिन्न धार्मिक समाचारपत्रों तथा उदारवादी पत्रिकाओंमें छाप रहे हैं और मुझे कुछ अच्छे परिणामकी आशा है।
>
> इसी बीच 'यूनिटी' ने अपना एक अलग कोष खोल लिया है, और इसमें से मैं आपको प्राथमिक भेंटके रूपमें मनीऑर्डर द्वारा १०० डालर भेज रहा हूँ। दूसरी सहायता हम प्राप्त होते ही भेजेंगे।
>
> इस भारी विपत्तिके लिए, जिसने आपको तथा आपके देशकी जनताको संकटमें डाल दिया है, क्या मैं अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट कर सकता हूँ? अहमदाबाद किस कदर विपत्तिमें फँस गया है तथा आश्रम संकटसे घिर गया है, इसकी खबरसे मैं अत्यन्त दुखी हो गया हूँ। अगर आप और कोई सूचना भेज सकें तो आगे धन संग्रह करनेमें यह बहुत सहायक हो सकती है।

मुझे इस बातका निश्चय है कि पाठक अमेरिकासे प्राप्त धनकी मात्रापर नहीं जायेंगे। शायद हमें यह अधिकार नहीं है कि अपनी स्थानीय कठिनाइयों — जैसे गुजरातमें आई हालकी बाढ़ — में दूर देशोंसे किसीकी सहायताकी अपेक्षा करें। इसलिए इस अयाचित और अप्रत्याशित अमेरिकी सहायताके पीछे जो नीयत है वह महत्त्वपूर्ण है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १-१२-१९२७

१. [illegible] गांधीजीके [illegible] एक पादरी।

२३७. खादीका अर्थशास्त्र

मेरे सामने इस समय खादीसे सम्बन्धित दो छोटी-छोटी किताबें पड़ी है। एक है बिहारके श्रीयुत राजेन्द्रप्रसादकी लिखी 'खादीका अर्थशास्त्र', जो बिहार चरखा-संघ कार्यालय, मुजफ्फरपुरसे तीन आनेमें मिलती है। चरखा-संघकी बिहार शाखा एक ग्रन्थमाला निकालना चाहती है, और उस मालाकी यह पहली किताब है। दूसरी किताब है गांधी आश्रम, तिरुचेङ्गोडकी रिपोर्ट। यह आश्रम श्रीयुत चक्रवर्ती राजगोपालाचारीके निर्देशनमें चलता है। यह रिपोर्ट, मन्त्री, गांधी आश्रम, तिरुचेङ्गोड (दक्षिण भारत)को एक आनेका डाक-टिकट भेजनेसे मिल सकती है।

पहली किताबकी शैली बहुत सुगम है और संक्षेपमें लिखी गई है जिससे कि कामकाजी साधारण आदमी भी उसे पढ़कर खादीका अर्थशास्त्र समझ सके। मैं यहाँ उसकी दलीलोंको संक्षेपमें नहीं दूंगा, क्योंकि वह खुद ही चरखेके पक्षमें दी जा सकनेवाली दलीलोंका संक्षेप-मात्र है। मगर यह कहा जा सकता है कि पक्ष-विपक्षकी सभी दलीलोंको सामने रखनेके बाद राजेन्द्रबाबूने यह दिखलाया है कि केवल चरखेके जरिये ही विदेशी कपड़ेको देशसे हटानेमें सफलता मिल सकती है और बाईस करोड़ चालीस लाख किसानोंको चरखेके सिवाय दूसरा कोई सहायक धन्धा नही दिया जा सकता, जिसके बिना वे आधे पेट रहते हैं और रहेंगे, क्योंकि उन्हें सालमें कमसे-कम १२० दिन तो निठल्ले बिताने ही पड़ते हैं, और पड़ेंगे।

श्रीयुत राजगोपालाचारीकी रिपोर्ट तो सच्ची बातों और आँकड़ोंका वैज्ञानिक विवेचन है, और वह राजेन्द्रबाबूकी दलीलोंको पूरी तरह सिद्ध करता है और उनको पुष्ट बनाता है। पाठकके लिए यह जानकारी रोचक होगी कि आश्रमके खर्चका ८५ फीसदी तो कतैयों-बुनकरोंके पास जाता है, ९½ फीसदी कार्यकर्त्ताओंको मिलता है और ५½ फीसदी दूसरे खर्चोंमें जाता है। रिपोर्टमें ऐसे रोचक और शिक्षाप्रद आँकड़े हैं जिनसे मालूम होता है कि कतैयों, बुनकरों और धोबियोंकी कितनी आमदनी हुई है। इन लोगोंको आज जितनी आमदनी हो रही है, वह चरखेके बिना इनमें से शायद किसीको भी नही होती और कतैयोंको तो निश्चय ही कोई आमदनी नही होती। इस रिपोर्टमें आश्रमके कामोंपर हुए आय-व्ययका भी प्रमाणित लेखा दिया हुआ है। एक पृष्ठमें यह दिखलाया गया है कि ग्राहक खादीका जो मूल्य देता है उसका वितरण किस प्रकार होता है। आँकड़े ये हैं:

किसान	३७ फीसदी
कातने और बुननेवाले	५४ फीसदी
कार्यकर्त्ता	६ फीसदी
अन्य खर्च	३ फीसदी

और कहा गया है :

"कपड़े तो आप पहनेंगे ही, पर अगर आप खादी पहनते हैं तो हिन्दुस्तानके गाँवोंके पुनरुद्धारमें हाथ बँटाते हैं।"

अकेले आश्रमने ही पिछले ढाई वर्षोंमें आसपासके गाँवोंके गरीब आदमियोंमें, १,२४,५२६ रु० बाँटे हैं, और वह कुछ खैरातमें नहीं बल्कि घर बैठे कामके बदलेमें। आश्रम मुफ्त दवाखाना भी चलाता है, जिसमें पिछले ११ महीनोंमें १०,१४५ रोगी आये, और १४८ रोगियोंकी शल्य-चिकित्सा की गई। रोगियोंमें अछूत कहलानेवाले लोग भी थे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १-१२-१९२७

२३८. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे

मद्रास
१ दिसम्बर, १९२७

गांधीजीने पत्र-प्रतिनिधि द्वारा पूछे गये अनेक प्रश्नोंका उत्तर देनेसे इनकार कर दिया। उन्होंने कहा :

मैं लंकासे अभी ताजा-ताजा लौटा हूँ और किसी प्रश्नका उत्तर देनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। . . .

इसके बाद गांधीजीका ध्यान शाही आयोगके[1] बारेमें उनके लंकामें दिये गये इस बयानकी[2] ओर दिलाया गया, जिसमें उन्होंने कहा था कि मेरा अन्तःकरण कांग्रेस अध्यक्षके पास गिरवी रखा है। गांधीजीसे पूछा गया कि क्या वे उस बयानपर अब भी टिके हुए हैं और क्या वे कांग्रेस अध्यक्षके इस विचारसे सहमत हैं कि इस समयकी बड़ी जरूरत यह है कि शाही आयोगकी नियुक्तिके पीछे जो नीति है, उसके विरोधमें बड़े पैमानेपर सामूहिक आन्दोलन फिरसे आरम्भ करनेके लिए गौहाटी कार्यक्रममें फेरबदल किया जाये।[3] क्या महात्माजी स्वयं किसी ऐसे आन्दोलनका नेतृत्व करेंगे? गांधीजीने अपना यह उत्तर दोहराया कि पिछले कुछ सप्ताहोंसे मैं भारतकी घटनाओंके सम्पर्कमें नहीं रहा हूँ। इस प्रश्नका और अच्छी तरह अध्ययन करनेका अवसर मिलनेसे पहले मैं इस समय कुछ कहना नहीं चाहता। उन्होंने कहा :

१. देखिए परिशिष्ट ८।
२. देखिए "भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंसे", १३-११-१९२७।
३. वाइसरायके वक्तव्यके अंशोंके लिए, देखिए परिशिष्ट ७।

मेरा अन्तःकरण अभी भी श्री श्रीनिवास अय्यंगारके[1] पास गिरवी रखा है और उस समयतक रहेगा जबतक कि मद्रासमें डा० अन्सारी[2] सिंहासनारूढ़ नहीं हो जाते।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-१२-१९२७

२३९. भाषण: चिकाकोलकी सार्वजनिक सभामें

३ दिसम्बर, १९२७

लगता है कि आप लोग हर अच्छी चीजमें गरीब उत्कलके[3] साथ हिस्सा बाँट लेते हैं। मैं ऐसा मानकर खुश था कि मेरा यहाँ आना भी एक ऐसी ही अच्छी चीज है, क्योंकि मेरा इरादा बीसके-बीसों दिन उड़ीसाके नरकंकालोंसे मिलने-जुलनेमें व्यतीत करनेका था। लेकिन आप आन्ध्र-लोग इस तरह उड़ीसाके द्वारपाल हैं, और आपने मुझको रोक लिया है। लेकिन मुझे खुशी है कि मैं जो चाहता था, वह आपने पहले ही कर दिया है। आन्ध्र प्रदेशमें प्रवेश करनेके बाद मैं आपके साथ अपना व्यापार करता रहा हूँ और मैं जानता हूँ कि ईश्वर उन सब अज्ञात लोगोंका भला करेगा जो मेरे साथ, दरिद्रनारायणके आत्मनियुक्त प्रतिनिधिके साथ, सहयोग करते रहे हैं। और यहाँ भी आप वही चीज कर रहे हैं। पिछली रात कई बहनें आईं और उन्होंने मुझे एक थैली भेंट की। लेकिन मैं आपको बता दूँ कि आखिरकार मेरा यह आन्ध्रका दौरा नहीं है। मैं आपको इतनी आसानीसे छोड़नेवाला नहीं हूँ, और क्योंकि गंजमके कुछ हिस्सोंका मैंने दौरा कर लिया है, केवल इसीलिए देशभक्त कोंडा वेंकटप्पैया भी मुझे छोड़ देंगे, ऐसा नहीं है। मैं अगले वर्षके आरम्भमें आन्ध्रका दौरा करनेके लिए वचनबद्ध हूँ, और मैं आशा करना चाहता हूँ कि आप इस समय जो कर रहे हैं, वह अगले वर्ष आप जो-कुछ करनेवाले हैं, उसका पूर्वाभास-भर है।

आपको सच्चे असहयोगमें विश्वास है। शराबखोरीकी बहुत बड़ी बुराई श्रमजीवी लोगोंको खोखला किये डाल रही है। मैं चाहूँगा कि आप बिना हिचके इस बुराईके साथ असहयोग करें, और मैं आपके सामने अपने नुकसानकी परवाह किये बिना यह प्रस्ताव रखता हूँ कि जो लोग शराबकी आदत छोड़ दें वे बचतकी राशिको दरिद्र-नारायणके नामपर मेरे साथ आधा-आधा बाँट लें। फिर, मैं देखता हूँ कि धूम्रपानकी बुरी लतके कारण आपमें से बहुतोंने अपने मुँहको धुएँकी चिमनी बना दिया है। आप धूम्रपान करनेवाले लोग जानते नहीं कि यह कितनी गन्दी आदत है। जब मैंने यह अपील की तो मैंने देखा कि बहुत-से लोगोंने अपने सिगार या सिगरेटें फेंक दीं। धूम्रपान करनेवाले लोग नहीं जानते कि वे अपने बच्चोंके लिए क्या चीज विरासतमें

१. कांग्रेसके अध्यक्ष, जिनका कार्यकाल समाप्त होनेवाला था।

२. कांग्रेसके नव-निर्वाचित अध्यक्ष।

३. उड़ीसाका दूसरा नाम।

छोड़ रहे हैं। मेरी तरह आप भी जानते हैं कि बच्चे धूम्रपानके बारेमें अपने शौकको सन्तुष्ट करनेके लिए पैसोंकी चोरी करते हैं। इसलिए मैं आपसे धूम्रपानकी आदतके साथ असहयोग करनेको और इस प्रकार बचनेवाले पैसेको भी मेरे साथ बाँटनेको कहता हूँ।

इसी प्रकार हिन्दुओंको अस्पृश्यता-रूपी पिशाचके साथ भी असहयोग करना चाहिए। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यह पिशाच हमें ईश्वरकी ओरसे विमुख किये हुए है, और अस्पृश्यताकी बाधा हमारे ही विनाशके लिए रची गई है।

इसके बाद महात्माजीने श्रोता-समुदायमें से किसी व्यक्ति द्वारा लिखकर पूछे गये कुछ प्रश्नोंके उत्तर दिये। पहला प्रश्न था: मातृभूमिके उत्थानके लिए नवयुवक लोग अब क्या तरीके अपनायें? महात्माजीने कहा:

बहुत-सी चीजें हैं जो मैं सुझा सकता हूँ, लेकिन एक चीज है जो वे सबसे अधिक सरलतासे कर सकते हैं, और वह है खादी-कार्य। वे हर महीने या हर वर्ष अमुक धन-राशि खादी-कार्यके निमित्त अलग निकाल सकते हैं। यदि उनके पास समय हो तो वे उसे अपने जिलेमें खादी-कार्यका संगठन करनेमें लगा सकते हैं। यदि वे इसे करना शुरू कर दें तो वे देखेंगे कि उन्होंने वह दे दिया है, जो उनमें सर्वोत्तम है। यदि वे संगठन-कार्य न कर सकें या यदि उनमें यह आत्म-विश्वास न हो कि वे संगठन-कार्य कर सकेंगे तो वे प्रतिदिन आधा घंटा कताईको दे सकते हैं और अपना सूत अखिल भारतीय चरखा संघको भेजकर उसके सदस्य बन सकते हैं।

दूसरा प्रश्न किसी सार्वजनिक कार्यकर्त्तामें अपेक्षित शैक्षणिक तथा अन्य योग्यताओंके बारेमें था। महात्माजीने कहा:

जहाँतक शैक्षणिक योग्यताओंका प्रश्न है, सार्वजनिक कार्यकर्त्ताको अपने प्रान्तकी भाषा जाननेके अलावा राष्ट्र-भाषा हिन्दी भी अवश्य जाननी चाहिए। लेकिन अन्य योग्यताएँ तो कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं। कार्यकर्त्ताओंको पूर्णतः ईमानदार होना चाहिए और उनका निजी चरित्र शुद्ध होना चाहिए। जिन लोगोंकी दृष्टि सीधी नहीं है और जिनके मन पाशविक प्रवृत्तियोंसे भरे हुए हैं वे राजनीतिक कार्य करनेके उपयुक्त नहीं हैं। और मेरी रायमें जबतक वह हर कीमतपर सत्य और अहिंसाका पालन करनेमें विश्वास नहीं रखता, तबतक उसे राजनीतिज्ञ नहीं होना चाहिए।

तीसरे प्रश्नका उत्तर देते हुए महात्माजीने कहा:

हमारे सभी नेता जब तरह-तरहकी योजनाएँ सोचने और बनानेमें लगे हुए हैं, तब हम साधारण कार्यकर्त्तागण सबसे अच्छा काम यही कर सकते हैं कि चरखेके सन्देशको पूरी तरह कार्यरूपमें परिणत कर डालें। साठ करोड़ रुपये बचानेके प्रयत्नमें हाथ बँटाना आपके और मेरे लिए कोई छोटी बात नहीं है। आप और मैं सब लोग विधान-परिषदों, विधान-सभाओं और नगरपालिकाओंमें तो नहीं जा सकते। यदि हम जाना भी चाहें तो हमारे पास सभी योग्यताएँ नहीं होंगी। लेकिन खादीके लिए जिन योग्यताओंकी आवश्यकता है, वे हम सबमें जन्मसे ही मौजूद हैं। इसके लिए

हृदयके प्रशिक्षणके सिवा बहुत प्रशिक्षणकी आवश्यकता नहीं है। खादी-कार्य करते हुए आप देखेंगे कि आपके अन्दर शक्ति आती जा रही है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ९-१२-१९२७

२४०. खादीपर निबन्ध

पाठक जानते ही होंगे कि श्री रेवाशंकर जगजीवन [झवेरी] के घोषित पुरस्कारके आधारपर अंग्रेजीमें खादीपर निबन्ध लिखनेकी योजना भी की गई थी। इस तरह अध्यापक पुणताम्बेकर और श्री वरदाचारीने मिलकर जो निबन्ध लिखा था उसे पुरस्कार मिला था। यह निबन्ध पढ़ने लायक है इसलिए जमनादास भगवानदास स्मारकमालाके लिए उसका अनुवाद किया गया है। सत्याग्रहाश्रमके छगनलाल जोशीने इसका अनुवाद किया है। अब वह प्रकाशित हो गया है। उसकी कीमत एक रुपया रखी गई है। अनुवादके २१५ पृष्ठ बने हैं। सब मिलाकर २६० पृष्ठ हैं। बाकीके पृष्ठोंमें परिशिष्ट हैं। सभी परिशिष्ट उपयोगी हैं। अन्तिम पृष्ठपर गुजरातकी खादीका संक्षिप्त इतिहास दिया हुआ है, अर्थात् पहले गुजरातमें कहाँ-कहाँ खादी तैयार होती थी और वह अमूल्य उद्योग कैसे नष्ट हो गया, यह बताया गया है। अनुवाद सरल भाषामें है। इसलिए गुजराती पाठकको समझनेमें दिक्कत नहीं होगी। चरखा-प्रवृत्तिका रहस्य अच्छी तरहसे समझनेके इच्छुक व्यक्तिको चाहिए कि वह इस पुस्तकको पढ़ जाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१२-१९२७

२४१. भाषण: स्त्रियोंकी सभा, बरहामपुरमें[1]

४ दिसम्बर, १९२७

बहनो,

आपने खादी कार्यके लिए दो थैलियाँ भेंटकी हैं। मैं आपकी भेंट कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ। आप ऐसा न सोचें कि मैं आपमें से कुछ को उड़िया और कुछको तेलगु समझता हूँ। आपको लगना चाहिए कि आप सभी लोग भारतीय हैं। कुछ लोग कहते हैं कि हम आन्ध्र देशके हैं और कुछ कहते हैं कि हम उड़ीसाके हैं। आप सब लोग अपनेको भारतवासी मानिये। आप सब लोग परस्पर एक-दूसरेके दुख और सुखमें हिस्सा बँटायें; तभी आप सीता-जैसी बननेके योग्य होंगी। सीता अपने-आपको अयोध्याका नागरिक नहीं समझती थीं। वह हमेशा अपनेको सम्पूर्ण भारतका

१. उड़ीसामें।

नागरिक मानती थी। मुझे सचमुच खुशी है कि आपने यह अभिनन्दनपत्र राष्ट्रीय भाषा अर्थात् हिन्दीमें लिखा है। आप सब लोगोंको विदेशी साड़ियाँ छोड़ देनी चाहिए। आप केवल खादीका उपयोग करें। किसी स्त्रीको सुन्दर साड़ियाँ और आभूषणोंका इस्तेमाल करनेकी कोई जरूरत नहीं है। जिस एक चीजकी आवश्यकता स्त्रीको है, वह है शुद्धता। आप सब खादी पहनें। आप सब शुद्ध और सत्यवादी बनें। आपको किसी व्यक्तिको अस्पृश्य नहीं समझना चाहिए। भारतवर्षमें किसी व्यक्तिको अस्पृश्य समझना एक बहुत बड़ा पाप है। ईश्वरके लिए यह पाप मत कीजिए। उन लोगोंसे प्रेम कीजिए जो गरीब हैं, बीमार हैं और भूखे हैं। आप उनसे प्रेम करती हैं इसे सिद्ध करनेके लिए आप प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा चरखेपर सूत कातिए। जिन्होंने उस खादी कोषके लिए कुछ भी नहीं दिया है, मैं उनसे अपील करता हूँ कि वे चन्देमें पैसा या आभूषण दें।

[उड़ियासे]

समाज, १०-१२-१९२७

२४२. भाषण : छात्रोंकी सभा, बरहामपुरमें

४ दिसम्बर, १९२७

प्रोफेसरगण, छात्रो और भाइयो,

इस सभामें हम जिस कार्यक्रमका अनुसरण करेंगे, वह अन्य सभाओंमें अपनाये गये कार्यक्रमोंसे भिन्न होगा। हम लोग अपने सत्याग्रह आश्रममें पिछले कई वर्षोंसे प्रातः ४ बजकर १५ मिनटपर और सायं ७ बजे सामूहिक प्रार्थना करते हैं। जब आश्रमवासी किसी और जगह जाते हैं तो यही क्रम वहाँ भी चलाते हैं। यह जानते हुए कि [यात्राओंके दौरान] शामको ७ बजे नियमतः प्रार्थना करना कठिन है, हमने यह तय किया है कि रातमें सोनेसे पहले प्रार्थना अवश्य की जानी चाहिए।

शुक्रवार, २ दिसम्बरको जब हमने गंजम जिलेमें प्रवेश किया उस समय बहुत रात हो गई थी। बहुत अधिक कार्य होनेके कारण मैं सोनेसे पहले प्रार्थना करना भूल गया। सुबह जब मैं जगा तो भयसे काँप उठा। मैं देख सकता था कि मैंने प्रभुके प्रति बहुत बड़ी गलती की थी। इसलिए हमने निश्चय किया कि जो व्यक्ति प्रार्थना करना भूल जाये उसे किसी-न-किसी प्रकारका प्रायश्चित्त करना चाहिए। हमने यह भी तय किया कि हम चाहे किसी जगहपर हों, हमें शामको रामके नामका एक बार स्मरण अवश्य करना चाहिए। कार्यक्रमके अनुसार मुझे इस सभामें ७ बजे पहुँचना था और ऐसा माना गया था कि हम सब एक साथ प्रार्थना करेंगे; लेकिन छत्रपुरसे मोटर द्वारा आते समय मैंने देखा कि ७ तो बज चुके हैं। इसलिए मैंने मोटर गाड़ीमें अकेले ही प्रार्थना कर ली। लेकिन जब हमने सामूहिक प्रार्थना करना तय किया है तब मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप सब अभी इसी समय यहाँ

प्रार्थना करें। जिन छात्रों तथा अन्य लोगोंको प्रार्थनामें विश्वास है वे आँख बन्द करके प्रार्थना करें। प्रार्थनाके बाद मैं उसकी उपयोगिताको समझानेकी कोशिश करूँगा। जो लोग प्रार्थना करनेके लिए अनिच्छुक हैं, उनसे मेरा अनुरोध है कि वे शान्तिपूर्वक बैठे रहें।[1]

जिस प्रकार शरीरके लिए भोजन आवश्यक है, उसी प्रकार आत्माके लिए प्रार्थना आवश्यक है। कोई मनुष्य कई दिनोंतक बिना भोजन किये रह सकता है — जैसा कि मेकस्विनीने ७० से अधिक दिनतक किया था — लेकिन ईश्वरमें विश्वास रखते हुए मनुष्य एक क्षण भी बिना प्रार्थना किये नही रह सकता और न उसे रहना ही चाहिए। आप कहेंगे कि हम ऐसे बहुत-से लोग देखते है जो प्रार्थना नही करते। मैं भी साहसपूर्वक कहता हूँ कि वे प्रार्थना नही करते, लेकिन यह तो मानवकी पाशविक वृत्ति है और जो उसके लिए मृत्युसे भी ज्यादा बुरी है। मुझे इसमें रचमात्र भी सन्देह नहीं है कि आज हमारा वातावरण जिस लड़ाई-झगड़ेसे भरा हुआ है, वह हमारी सच्ची प्रार्थनाकी भावनाके अभावके कारण है। मैं जानता हूँ कि आप मेरे इस कथनसे असहमत होंगे और कहेंगे कि लाखों हिन्दू, मुसलमान और ईसाई प्रार्थना करते है। मैंने सोचा था कि आप इस प्रकारकी शंका उठायेंगे, इसलिए मैंने "सच्ची प्रार्थना" शब्दोंका प्रयोग किया है। तथ्य यह है कि हम मात्र होंठ हिलाकर प्रार्थना करते रहे हैं, और यह मात्र होठोंसे प्रार्थना करनेके दम्भसे बचनेके लिए ही है कि हम लोग आश्रममें 'भगवद्गीता' के द्वितीय अध्यायके अन्तिम श्लोक हर संध्या प्रार्थनामें दोहराते है। यदि 'आत्माकी समानता'का, जिसका वर्णन उन श्लोकोंमें है, प्रतिदिन ध्यान करें, तो यह निश्चित है कि हमारा हृदय ईश्वरकी ओर उन्मुख होगा। यदि आप छात्रगण अपनी शिक्षाको शुद्ध चरित्र और शुद्ध हृदयकी सच्ची नीवपर आधारित करना चाहते हों तो इसके लिए प्रतिदिन नियमपूर्वक सच्चे मनसे प्रार्थना करनेसे अधिक सहायक और कोई चीज नही हो सकती।

[अंग्रेजीसे]

समाज, १०-१२-१९२७

यंग इंडिया, १५-१२-१९२७

१. प्रथम दो अनुच्छेद उड़िया पत्र **समाज**से लिये गये हैं। इसके बादकी सामग्री १५-१२-१९२७के **यंग इंडिया**में प्रकाशित महादेव देसाईके "साप्ताहिक पत्र" से ली गई है। महादेव देसाईने लिखा है: "छात्रोंकी सभा शाम सात बजे रखी गई थी। यद्यपि हम सभामें सात बजे नहीं पहुँचे और अपनी प्रार्थना हमें मार्गमें ही करनी पड़ी, फिर भी गांधीजीने सभामें सामूहिक प्रार्थना करनेका निश्चय किया। प्रार्थना हुई, जिसमें छात्रोंने पूरी शान्ति रखी . . .।"

२४३. तार : जमनालाल बजाजको

बरहामपुर
५ दिसम्बर, १९२७

जमनालालजी बजाज
आश्रम
साबरमती

मोहनलाल मिला था। तुम्हारे और जयदयालजीके तार मिलनेसे पहले ही उसे घर भेज दिया।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद

२४४. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

बरहामपुर
सोमवार [५ दिसम्बर, १९२७][1]

बहनो,

तुम्हारा मणिबहनको लिखा हुआ पत्र मिला। आज मेरे पास बहुत समय नहीं है। आश्रममें शृंगार तो हरगिज नहीं होना चाहिए, इस बारेमें मुझे जरा भी शंका नहीं है। इतना तो साफ ही है कि जबतक देशमें भयंकर भुखमरी फैली हुई है, तबतक रत्ती-भरकी अंगूठी भी रखना या पहनना पाप है। कपड़े तो शरीरको ढँकने और सरदी-गरमीसे बचनेके लिए ही पहने जाने चाहिए। इस आदर्शतक पहुँचनेका सब बहनोंको प्रयत्न करना चाहिए।

शृंगारकी उत्पत्तिके बारेमें तो आज नहीं लिखूंगा। ऐसा नहीं लगता कि मेरा सवाल तुमने अच्छी तरह समझ लिया है।

लक्ष्मीबहन बीमार कैसे हो गई? वे तो बीमार पड़ती नहीं थीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७९) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी उस दिन बरहामपुरमें थे।

२४५. पत्र: मणिलाल व सुशीला गांधीको

५ दिसम्बर, १९२७

चि० मणिलाल व सुशीला,

मुझसे इस बारकी डाक चूक गई। मैं लंका-प्रवासमें कामका ठीक सिलसिला कायम नहीं रख सका। बहुत अधिक घूमना-फिरना हुआ। किन्तु इस प्रकार यदि मुझसे डाक चूक जाये तो तुम घबराना नहीं और न मेरी चूकका अनुकरण ही करना। तुम दोनों मेरी तरह कर्मठ बनो और साथ ही मेरे दोषोंको नजर अन्दाज करना न सीखो, और फिर चूको तो भले ही चूको। वास्तवमें सही उत्तराधिकारी तो वही है जो उत्तराधिकारमें वृद्धि करता है।

सुशीलाका यह लिखना ठीक है कि कलामें स्वदेशी और परदेशीका भेद नहीं होता। किन्तु उसके इस कथनपर थोड़ा विचार करना उचित होगा। कलाके सम्बन्धमें उथली दृष्टिसे विचार करते हुए कलाप्रेमी उसकी आड़में बहुतसे दोष छिपा देते हैं। अतः हम इस बातपर विचार करें कि कला किसे कहना चाहिए। जो-कुछ भी हमारी आँखको रुचे वह सब कला नहीं है। अनेक विशेषज्ञों द्वारा स्वीकृत कला भी कला नहीं हो सकती। अनेक चित्रों तथा प्रतिमाओंके बारेमें मुझे विश्व विख्यात कला समीक्षकोंके भिन्न-भिन्न विचार पढ़नेको मिले हैं। अतः हमें इस बातपर विचार करना चाहिए कि कला क्या है। 'कला क्या है'[1] नामक पुस्तकका अनुवाद हो गया है। यह पुस्तक सुशीलाको पढ़ लेनी चाहिए। यदि वहाँ यह पुस्तक उपलब्ध न हो तो मुझे लिखना।

देवदासने बीमारीमें बहुत कष्ट उठाया है। उसकी नाकमें कुछ खराबी आ गई है। फिर बुखार आया। अब वह ठीक है। बा उसके पास गई है। आज मैं उत्कलमें हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७३१) की फोटो-नकलसे।

१. लियो टॉल्स्टॉय कृत पुस्तक, व्हाट इज़ आर्ट।

२४६. भाषण: छत्रपुरमें[1]

[६ दिसम्बर, १९२७ या उससे पूर्व]

मैं बड़ी उत्सुकतासे उस दिनकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ जब कि भारतकी भगिनी भाषाओंके बीच चल रही इस हानिकर स्पर्धाका पूरी तरह अन्त होगा। जिस तरह एक भाई अपनी अनेक बहनोंको एक-सा लाड़-प्यार देता है, उसी तरह हम उन सभी भाषाओंको लाड़-प्यार क्यों नहीं देते? इस हानिकर स्पर्धाका परिणाम यह हो रहा है कि हम अपनी मातृभाषाको भूलते जा रहे हैं और अन्य भाषाओंसे ईर्ष्या करते हैं तथा बड़ी आसानीसे इस बातमें विश्वास कर लेते हैं कि अंग्रेजी भारतकी आम भाषाका स्थान ले लेगी, यहाँतक कि मातृभाषाका भी। वस्तुतः मेरे पास एक सुझाव आया था कि यहाँ इस सभामें मैं अंग्रेजीमें बोलूँ। मैं इसे मातृ-भूमिकी दुहिता भाषाके प्रति प्रेमका अभाव मानता हूँ और विदेशी भाषाके प्रति अस्वस्थ प्रेम मानता हूँ। यह बात नहीं कि मैं अंग्रेजीसे घृणा करता हूँ लेकिन यह बात जरूर है कि मैं हिन्दीसे अधिक प्रेम करता हूँ। यही कारण है कि मैं भारतके शिक्षित वर्गके लोगोंसे हिन्दीको अपनी आम भाषा बनानेके लिए निवेदन कर रहा हूँ। हिन्दीके माध्यमसे ही हम दूसरे प्रान्तोंसे सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं और अन्य प्रान्तीय भाषाओंका विकास कर सकते हैं। एक विदेशी भाषाके जरिये शिक्षा प्राप्त करनेके कारण यदि हमारे दिल और दिमाग कमजोर न हो गये होते तो कोई कारण नहीं है कि हम सभी लोग पाँच-छः प्रान्तीय भाषाएँ क्यों न जानते होते। भाषाओंके बीच स्पर्धाके सम्बन्धमें मेरी कही गई बात संकीर्ण प्रान्तीयताकी भावनापर भी लागू होती है। यह वही प्रान्तीयतावाद है जिसने हमारी राष्ट्रवादी भावनाके पूर्ण विकासको अवरुद्ध कर दिया है। राष्ट्रीयताकी भावनाको बढ़ानेके ख्यालसे स्वर्णिम नियम यह है कि जो अधिक शक्तिशाली हो उसे निर्बलकी, जहाँतक सम्भव हो, मदद करनी चाहिए और उसके लिए त्याग करना चाहिए। और अब आप स्वस्थ राष्ट्रीयताके विकासमें सहायक हो सकेंगे और गरीबों और पददलितोंके तन ढँकनेवाली खादीके औचित्यको समझ सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१२-१९२७

१. अपने "साप्ताहिक पत्र" में महादेव देसाईने बताया है कि विद्यालयोंमें लड़कोंने "वन्दे मातरम्" का गायन किया था, किन्तु किसी संकीर्ण विचारोंवाले बंगभाषाभाषीने इसमें से "हिन्द" शब्दको निकाल कर "बंगाल" शब्द रख दिया था। . . .इस अवसरपर गांधीजी इसी संकीर्णतावादी भावनाके विरुद्ध बोले थे।

२४७. पत्र : मगनलाल गांधीको

मगलवार [६ दिसम्बर, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा करता ही रहता हूँ किन्तु यदि तुम्हारा पत्र नही मिलता तो यह मान लेता हूँ कि इस प्रकार मैं तुम्हारा स्तवन तो कर ही रहा था। जब हम कोई अप्रिय बात कहना चाहते हैं तो वह मधुर ही मानी जाती है क्योंकि वह बात सच ही होती है और सच सदैव मधुर होता है। अतः तुम मुझसे जो-कुछ कहना उचित समझो उसे कहनेमें झिझकना नही। तुमने जिन पत्रोंके बारेमें लिखा है वे मुझे नहीं मिले। 'सत्यना प्रयोगो' में बहुत-सी भूलें रह गई होंगी, हालाँकि मै काफी सावधानी बरतता हूँ। किन्तु जब याददाश्त ही धोखा दे जाये तो मै किसके सामने अपना दुखड़ा रोऊँ? सामान्य या विशेष किसी भी तथ्यात्मक भूलकी ओर मेरा ध्यान अवश्य दिलाना।

'अजहुँ न निकसे प्राण कठोर'।[2] मुझे तो भय है। महादेवने तो इसे अपनी दृष्टिसे गाया था। अभिप्राय तो जब वह सुनाये तब जान पाओगे। फिलहाल तुम जिस काममें लीन हो गये हो उसमें लीन होना अच्छा ही हुआ।[3] तुम आश्रम आते-जाते रहते हो यह भी ठीक ही है। तुम अपने सुझाव और टिप्पणियाँ तो भेजते ही रहना। आदर्श गाँवको सचमुचका आदर्श गाँव बनानेमें अपनी जान लड़ा देना; तभी उसमें प्राणवान मनुष्य रह सकेंगे।

बा वहाँ देवदासके पास गई है। अब और अधिक लिखनेका समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६९) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१. कस्तूरबा गांधीके देवदासके पास जानेके उल्लेखसे जान पड़ता है कि यह पत्र भी उसी समय लिखा गया होगा जबकि "पत्र : मणिलाल व सुशीला गांधीको", ५-१२-१९२७ लिखा गया था।

२. सन्त दादूके भजनकी पंक्ति।

३. इन दिनों मगनलालने ग्रामोंमें रचनात्मक कार्य करना आरम्भ कर दिया था।

२४८. सत्यका विरूपण

एक भाई एक हाई स्कूलके आचार्यकी मददसे विद्यार्थियोंमें 'गीता' की पढ़ाई शुरू करानेका प्रयत्न कर रहे हैं। परन्तु 'गीता' की कक्षा खुलनेके थोड़े समय बाद हुई सभामें एक बैंकके मैनेजर खड़े हुए और सभाके काममें विघ्न डालकर बोले कि विद्यार्थियोंको 'गीता' पढ़नेका अधिकार नहीं है। 'गीता' कोई बच्चोंके हाथमें देनेका खिलौना तो नहीं है। अब उन भाईने मुझे इस घटनाके बारेमें लम्बा और दलीलोंसे भरा पत्र लिखा है और अपनी दलीलके समर्थनमें रामकृष्ण परमहंसके कितने ही वचन दिये हैं। उनमें से कुछ मैं यहां देता हूं:

> बालकों और नौजवानोंको ईश्वरकी साधना करनेका प्रोत्साहन देना चाहिए। वे स्वस्थ निर्दोष फलोंकी तरह होते हैं क्योंकि संसारकी वासनाओंका दूषित स्पर्श उन्हें जरा भी नहीं लगा होता। ये वासनाएं जहां एक बार उनके मनमें घुसीं कि फिर उन्हें मोक्षके रास्तेकी तरफ मोड़ना बहुत मुश्किल हो जाता है।
>
> मैं नौजवानोंको इतना ज्यादा क्यों चाहता हूं। इसलिए कि वे अपने मनके सोलहों आने मालिक हैं। वे जैसे-जैसे बड़े होते जायेंगे, वैसे-वैसे उनके मन छोटे-छोटे भागोंमें विभक्त होते जायेंगे। विवाहित आदमीका आधा मन स्त्रीमें बसा रहता है। जब बच्चा होता है, तो चार आने मन वह खींच लेता है। बाकी चार आने मन माता-पिता, दुनियाके मान-मर्तबे और कपड़े-लत्तोंके शौक वगैरामें बँट जाता है। इसलिए बालकोंका मन ईश्वरको आसानीसे पहचान सकता है। बूढ़े आदमीके लिए यह बड़ी कठिन बात है।
>
> तोतेका गला बड़ी उम्रमें पक जाता है, तब उसे गाना नहीं सिखाया जा सकता। वह बच्चा हो तभी सिखाना चाहिए। इसी तरह बुढ़ापेमें ईश्वर-पर मन लगाना मुश्किल है। तरुणाईमें आसानीसे लगाया जा सकता है।
>
> एक सेर मिलावटी दूधमें छटांक-भर पानी हो, तो उसकी खीर बनानेके लिए बहुत थोड़ी मेहनत और थोड़ा ईंधन चाहिए। परन्तु सेर-भर दूधमें तीन पाव पानी हो तो उस दूधको गाढ़ा करनेके लिए कितनी मेहनत और कितना ईंधन चाहिए? बच्चोंके मनको वासनाओंका मैल थोड़ा ही लगा होता है, इसलिए वह ईश्वरकी तरफ मुड़ सकता है। वासनाओंमें पूरी तरह रंगे हुए बूढ़े लोगोंके मनको किस तरह मोड़ा जा सकता है?
>
> बांसके छोटे पेड़को जैसा चाहें मोड़ लीजिए, परन्तु पके बांसको मोड़ने लगें तो वह टूट जायेगा। बच्चोंके दिलको ईश्वरकी तरफ मोड़ना आसान है, परन्तु बूढ़े आदमीका दिल खींचने चलें तो वह छिटक जाता है।

> मनुष्यका मन राईकी पुड़िया-जैसा है। जैसे पुड़ियाके फट जानेपर बिखरे हुए दाने चुनकर जमा करना कठिन है, वैसे ही जब मनुष्यका मन कई तरफ दौड़ता हो और संसारके जालमें फँस गया हो, तब उसे मोड़कर एक जगह लगाना बहुत कठिन है। बच्चोंका मन कई तरफ नहीं दौड़ता, इसलिए उसे किसी चीजपर आसानीसे एकाग्र किया जा सकता है। किन्तु बूढ़ेका मन दुनियामें ही रमा रहनेके कारण उसे इधरसे खींचकर ईश्वरकी तरफ मोड़ना बहुत कठिन है।

'वेद' पढ़नेके अधिकारके बारेमें मैंने सुना था, परन्तु यह मुझे कभी खयालतक न था कि बैंकके मैनेजरने जिस अधिकारकी कल्पनाकी थी उसकी जरूरत 'गीता' पढ़नेके लिए भी पड़ेगी। वह यह बता देते तो अच्छा होता कि उस अधिकारके लिए क्या गुण जरूरी है। स्वयं 'गीता' ने ही स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि 'गीता' निन्दकके सिवा और सबके लिए है। हिन्दू विद्यार्थी यदि 'गीता' नही पढ़ सकते तब तो वे शायद कोई भी धर्म-ग्रन्थ नही पढ़ सकते। सच पूछो तो हिन्दू धर्मकी मूल कल्पना ही यह है कि विद्यार्थियोंका जीवन ब्रह्मचारीका है और उन्हें इस जीवनकी शुरुआत धर्मके ज्ञान और धर्मके आचरणसे करनी चाहिए, जिससे जो-कुछ वे सीखते हैं, उसे पचा सकें और धर्माचरणको अपने जीवनमें उतार सकें। पुराने जमानेका विद्यार्थी यह जाननेसे पहले ही कि मेरा धर्म क्या है, उसपर अमल करने लग जाता था; और इस तरह अमल करनेके बाद उसे जो ज्ञान मिलता था उसके आधारपर अपने नियत किये गये आचरणका रहस्य वह समझ सकता था।

इस तरह अधिकार तो उस समय भी था। परन्तु वह अधिकार पाँच यम — अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य — रूपी सदाचरणका था। धर्मका अध्ययन करनेकी इच्छा रखनेवाले हर आदमीको ये नियम पालने पड़ते थे। धर्मके इन आधारभूत सिद्धान्तोंकी जरूरत सिद्ध करनेके लिए धर्म-ग्रन्थोंसे प्रमाण जुटानेकी जरूरत नहीं रहती।

किन्तु आजकलके इस तरहके अनेक व्यापक अर्थवाले शब्दोंकी तरह 'अधिकार' शब्द भी विकृत हो गया है, और अब एक धर्म-भ्रष्ट मनुष्यको भी सिर्फ ब्राह्मण कहलानेके कारण ही शास्त्रोंके पठनका और उन्हें हमें समझानेका अधिकार है ऐसा माना जाता है; और दूसरे एक आदमीको, जिसे किसी खास स्थितिमें जन्म लेनेके कारण 'अछूत' पद मिल गया है — भले ही वह कितना ही धर्मात्मा हो — शास्त्र पढनेकी मनाही है।

परन्तु जिस 'महाभारत' का 'गीता' एक भाग है, उसके रचयिताने इस पागलपन-भरे निषेधके विरोधमें ही यह महाकाव्य लिखा और वर्ण या जातिका जरा भी भेद किये बिना सबको उसे पढ़नेकी आजादी दे दी। मेरा खयाल है कि उसने इसमें सिर्फ मेरे द्वारा ऊपर बताये हुए यमोंके पालनकी ही शर्त रखी होगी। 'मेरा खयाल है' ये शब्द मैंने इसलिए जोड़े हैं कि यह लिखते समय मुझे याद नहीं आता कि 'महाभारत' पढ़नेके लिए यमोंके पालनकी शर्त रखी गई है या नहीं। किन्तु अनुभव

बताता है कि हृदयकी शुद्धि और भक्तिभाव, ये दो बातें शास्त्रोंको अच्छी तरह समझनेके लिए जरूरी हैं।

छापेखानोंके मौजूदा जमानेने सारे बन्धन तोड़ डाले हैं। आज जितनी आजादीसे धर्मनिष्ठ लोग शास्त्र पढ़ते हैं, (यदि अधिक नहीं तो) उतनी ही आजादीसे नास्तिक भी पढ़ते हैं। किन्तु यहाँ तो चर्चाका विषय इतना ही है कि धर्मकी शिक्षा और उपासनाके एक अंगके रूपमें विद्यार्थियोंका 'गीता' पढना ठीक है या नहीं। इसके बारेमें मैं यही कहूँगा कि यम-नियमके पालनकी शक्ति और इस कारण 'गीता' पढनेकी योग्यतामें विद्यार्थियोंसे बढ़कर अन्य कोई भी वर्ग मेरे ध्यानमें नहीं आता। दुर्भाग्यसे यह मानना पड़ता है कि अधिकांश विद्यार्थी और शिक्षक पाँच यमोंके सच्चे अधिकारकी ओर किंचित् भी ध्यान नहीं देते।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ८-१२-१९२७

२४९. देव-मन्दिर

यहाँ लंकामें ऐसे वातावरणके बीच जहाँ प्रकृतिने मुक्त हाथों अपना बहुमूल्य खजाना लुटाया है, 'यंग इंडिया' के लिए लिखते हुए मुझे अपने एक कवि-हृदय मित्रके पत्रकी याद आती है जिसे उन्होंने ऐसे ही वातावरणसे प्रभावित होकर लिखा था। उस पत्रका एक अनुच्छेद मैं पाठकोंके सामने रखता हूँ:

> एक मनोरम भोर! शीतल और मेघाच्छादित, जिसमें तन्द्रिल सूर्यकी किरणें ऐसी कोमल लगती हैं जैसे मखमल। यह भोर आश्चर्यजनक रूपसे शान्त है — उसमें प्रार्थना-जैसी खामोशी छाई हुई है। कुहरा ऐसा प्रतीत होता है जैसे धूपका धुआँ हो, वृक्ष ध्यानमग्न पुजारियोंकी तरह लगते हैं और पक्षी भजन गानेके लिए आये हुए तीर्थ-यात्रियोंके समान प्रतीत होते हैं? काश! भगवान्की भक्तिमें तन्मय होनेकी कला हम प्रकृतिसे सीख सकते। लगता है कि हम जब, जहाँ और जैसे चाहें, वैसे पूजा करनेका अपना जन्मसिद्ध अधिकार भूल बैठे हैं। हम मन्दिरों, मस्जिदों और गिरजाघरोंका निर्माण करते हैं ताकि हमारी पूजा अर्चना तांक-झांक करनेवाली आँखों और बाह्य प्रभावसे सुरक्षित रहे। लेकिन हम भूल जाते हैं कि दीवारोंके भी कान और आँखें होती हैं और फिर कौन जाने कि छतोंमें भूतोंने डेरा ही डाल रखा हो।
>
> लेकिन मैं बहक रहा हूँ; ऐसा ही लिखता रहा तो शायद अगले क्षण मैं अपनेको उपदेश देता हुआ पाऊँगा। इतनी सुन्दर भोरमें यह कैसा मूर्खता-पूर्ण कार्य है। समीपके ही उद्यानमें एक नन्हा बच्चा पक्षीकी तरह सरल

मनसे और प्रसन्नचित्त होकर गाना गा रहा है। मेरा दिल करता है कि मैं वहाँ जाऊँ और उसके नन्हें पैरोंकी धूल उठा लूँ। चूँकि मैं अपनी भावनाको गीतमें उतनी सरलतासे नहीं उँडेल सकता जितना कि वह नन्हा बच्चा, इसलिए मेरा एकमात्र चारा मौन रहनेमें ही है।

जब हम देखते हैं कि अनन्त आकाशके सुनील चंदोवेके तले प्रकृतिका यह नित्य-नवीन मन्दिर हमें आमंत्रण दे रहा है कि सच्ची पूजा करनी हो तो धर्मके नाम पर लड़ने-झगड़ने और ईश्वरके नामको बदनाम करनेके बजाय यहाँ आओ तब ऐसा लगने लगता है कि ये मन्दिर और मस्जिदें और गिरजे, जो दम्भ और ढकोसलोंको छिपाते हैं और जिनके दरवाजे गरीबोंके लिए बन्द होते हैं, ईश्वर और ईश्वरकी पूजाका उपहास-मात्र हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ८-१२-१९२७

२५०. भाषण: बानपुरमें

८ दिसम्बर, १९२७

आपने जो अभिनन्दनपत्र और थैली भेंट की है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैंने अपने डाक्टरोंकी सलाहके खयालसे बानपुर आनेका विचार त्याग दिया था। लेकिन जब मुझे पता चला कि पुलिस गाँववालोंको धमका रही है और चेतावनी दे रही है कि यदि वे सभामें आयेंगे तो उन्हें घोड़ोंके पैरों तले रौंद दिया जायेगा और सैनिक उन्हें गोलियोंसे भून देंगे तब मैंने बानपुर आनेका निश्चय कर लिया।

आपको भय क्यों होना चाहिए? जिस व्यक्तिने कोई अपराध नहीं किया है उसे भय करनेकी जरूरत नहीं है। और याद रखिए कि यदि आप भयभीत नहीं होंगे तो आपको कोई भयभीत नहीं करेगा। अन्ततः पुलिसवाले हमारे भाई-बन्धु ही हैं। जब वे आपको डराने-धमकाने आयें तो आप उनसे पूछिए कि ऐसा करके वे क्या पाना चाहते हैं। अगर वे आपको जेल ले जायें तो कोई प्रतिरोध मत कीजिए। अगर वे आपको गाली दें तो आप बदलेमें उन्हें गाली न देकर उनकी गलतीको हँसीमें टाल दीजिए। यदि वे आपको मारें-पीटें तो बदलेमें अपना हाथ मत उठाइए, बल्कि मामलेकी रिपोर्ट अपने सबसे निकटवर्ती जन-प्रतिनिधिसे कीजिए। मैं आपको अदालतमें जानेके खिलाफ आगाह करता हूँ, क्योंकि अन्ततः हमारी इच्छा यह नहीं है कि पुलिसको दंड मिले, बल्कि यह है कि उसे अपने कियेपर पछतावा हो। लेकिन आपको लगे कि आपको अदालतमें जाना चाहिए तो आप जा सकते हैं। किसी भी हालतमें आतंकसे दबिए मत, क्योंकि भय तो बीमारीसे भी बुरी चीज है। जो मनुष्य किसी अन्य मनुष्यसे डरता है वह मनुष्यत्वसे च्युत हो जाता है। केवल ईश्वरसे

ठहरिए। मैं यहाँ कल दो बजेतक हूँ। आपको जो-कुछ कहना हो आप आकर मुझे बता सकते हैं।[1]

आपके अभिनन्दनपत्रमें कहा गया है कि आपके यहाँ खादीका कोई काम नहीं होता। आप अपने जिलेके अन्य भागोंके खादी कार्यकर्त्ताओंसे परामर्श कीजिए, और जबतक आप स्थानीय तौरपर खादी नहीं तैयार करने लगते तबतक उड़ीसामें बनी खादी खरीदिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-१२-१९२७

यंग इंडिया, २२-१२-१९२७

२५१. पत्र : सी० एफ० एन्ड्र्यूजको

[बोलगढ़,
१० दिसम्बर, १९२७][2]

प्रिय चार्ली,

अब मैं कार्यक्रमपर फिरसे विचार कर रहा हूँ। सम्बलपुरको छोड़ दिया जायेगा। मैं कृतज्ञ हूँ कि तुम मुझे जमशेदपुर नहीं भेज रहे हो। मैं यहाँ सोमवारतक हूँ। मैं साक्षीगोपाल सोमवारकी रातको और बालासोर बुधवारको पहुँचूँगा। शेष अनिश्चित है। हाँ, खड़गपुरकी विजय[3] तो निश्चय ही ईश्वरकी देन थी।

सप्रेम,

मोहन

[पुनश्च :]

मैं अब बेहतर हूँ।

सी० एफ० एन्ड्र्यूज
बालासोर

अंग्रेजी (जी० एन० २६२५) की फोटो-नकलसे।

१. यह अनुच्छेद यंग इंडियामें प्रकाशित महादेव देसाईके "साप्ताहिक पत्र"से लिया गया है।

२. डाककी मुहरसे।

३. अगस्त-सितम्बर १९२७में बंगाल-नागपुर रेलवे प्रशासनने खड़गपुर वर्कशॉपमें १६०० कर्मचारियोंकी छँटनी करनेका निश्चय किया था। कर्मचारियोंने सत्याग्रहका सहारा लिया। वर्कशॉप १२ सितम्बरको बन्द कर दिया गया और ८ दिसम्बरको खोला गया, और तब एक जाँचके परिणामस्वरूप कुछ कर्मचारियोंको, जिन्हें निकाल दिया गया था, फिरसे नौकरीपर बहाल कर लिया गया, और जिन कर्मचारियोंकी छँटनी की गई थी उनमें से कुछको दी जानेवाली मुआवजेकी रकम बढ़ा दी गई। (इंडिया इन १९२७-२८, पृष्ठ १७७-८)।

२५२. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

बोलगढ़
१० दिसम्बर, १९२७

प्रिय सी० आर०,

तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि मुझे एक छोटे-से सुन्दर गाँवमें तीन दिन शान्तिसे बितानेको मिले हैं। इससे पहले, लंकाके कार्यक्रमसे भी खराब हो सकता हो तो वह गंजमका कार्यक्रम रहा, हालाँकि वहाँ बीस हजार मिले। उसके वाद एक डाक्टर मेरा रक्तचाप लेने आया। आपने रक्तचाप लेनेका जैसा प्रबन्ध किया था, वैसा ही प्रबन्ध निरंजन बाबूने किया है। जब डाक्टरने १९० देखा तो वह डर गया, और साराका-सारा कार्यक्रम फिरसे बनाया गया है। इसीका फल यह आराम है। व्यक्तिगत रूपसे मैं डाक्टरके पढ़ेपर अविश्वास करता हूँ। तथापि उसने गलत भी पढ़ा हो तो उससे लाभ ही हुआ है। कटकसे आये एक नये डाक्टरने रक्तचाप १५५ और १६५ के बीच पढ़ा है। उसका खुदका कहना है कि वह १५५ और १६० के बीच है। महादेव और प्यारेलालने १६५ पढ़ा। हृत्स्फारी ९०-१०० है। यदि इन सबको ठीक पढ़ा गया है तो रक्तचाप वैसा ही है जैसा पहले था और चिन्ताकी कोई बात नही है। तथापि यह मैं तुम्हें रक्तचापके बारेमें बतानेको नही लिख रहा हूँ। तुम्हारे लिए इतना जानना काफी है कि मैं ठीक-ठाक हूँ।

संलग्न पत्र भेजनेके खयालसे यह पत्र मैं बोलकर लिखा रहा हूँ। यदि तुम गाँवकी जाँच करके यह पता चलानेके लिए किसीको भेज सको कि हम उस प्रस्तावको स्वीकार कर सकते हैं या नहीं, तो कृपया भेज दो। किसी भी हालतमें तुम पत्रलेखक श्री जी० सुब्रमण्यम्से खुद पत्र-व्यवहार करो। मैं उन्हें एक पोस्टकार्ड भेजकर सूचित कर रहा हूँ कि वह तुमसे पत्रकी अपेक्षा करें।

मैं तुम्हें डा० जोजेफका पत्र भी भेज रहा हूँ। उनका सुझाव मुझे ठीक लगता है। मै सोचता हूँ कि हमें नागरकोइलमें कुछ काम करना चाहिए, और अगर आपके पास कोई अन्य योजना न हो तो कृपया उनसे पत्र-व्यवहार करो और लिख दो कि उनका सुझाव मान्य है, और उसे संघकी[1] परिषदके सामने रखा जायेगा, और तुम उन्हें जल्दी ही सूचित करोगे। इस बीच तुम उन्हें सूतका नमूना भेज सकते हो जो वह चाहते हैं। हमें सूत उठा सकना चाहिए, और अगर वहाँ स्थानीय बुनकर हों तो हम उसे शायद वही बुनवा भी सकें। डा० जोजेफको कृपया जल्दी लिख दो। मैंने उन्हें बता दिया है कि सुझाव मुझे ठीक लगता है और मैंने उनका पत्र विचारार्थ तुम्हारे पास भेज दिया है।

१. अखिल भारतीय चरखा संघ।

मुझे आशा है कि तुमने मद्रासमें ठिकाना तय कर लिया है। सतीशबाबू एक दिनके लिए मेरे पास हैं। वह मद्रास आयेंगे और तुम लोगोंके पास ठहरेंगे। तुम बच्चोंके दूधका थोड़ा-सा मक्खन, ज्यादासे-ज्यादा एक पौंड, तैयार रखना।

यह एक पत्र . . . का[1] है। कृपया प्राप्ति सूचना उन्हें दे दो। मैं उन्हें नहीं लिख रहा हूँ। उनका प्रस्ताव काफी अच्छा मालूम होता है। अवश्य हम लोग तुम्हारे पास होंगे।

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४७) की फोटो-नकलसे।

२५३. भाषण : सार्वजनिक सभा, बोलगढ़में

१० दिसम्बर, १९२७

भय तो हैजा, चेचक या मलेरिया आदि रोगोंसे भी घातक चीज है। रोग तो शरीरको ही क्षीण करते हैं, जबकि भय आत्माको नष्ट कर देता है। और भय करनेवाले लोग ईश्वरको नहीं समझ सकते। जो व्यक्ति ईश्वर-भीरु है, ईश्वरका नाम लेता है, वह मनुष्योंसे नहीं डर सकता। मैं उन मित्रोंकी सूचनाओंको गलत मानकर नहीं टाल सकता जिन्होंने मुझे सूचित किया है कि आप पुलिस द्वारा और उन अन्य लोगों द्वारा डराये गये हैं; और उन लोगोंने आपको बताया है कि जो लोग मेरे पास आयेंगे उन सबोंको सरकार पकड़ लेगी। मुझे ऐसी किसी चीजका पता नहीं है जिसके लिए सरकार गिरफ्तारी करे और जहाँतक मैं जानता हूँ सरकारने अभीतक लोगोंसे यह नहीं कहा है कि जो धन मैं इकट्ठा कर रहा हूँ उसमें वे चन्दा न दें। मैं समझता हूँ कि उड़ीसा गरीब है, और इसलिए जमींदार और सरकारी अधिकारी अपने स्वार्थके लिए लोगोंको भयमें रखना चाहते हैं। बानपुरके दौरेके बादसे मैं वातावरणमें कुछ अजीब चीज देख रहा हूँ। मेरी समझमें नहीं आता कि यदि लोगोंको मुझसे दूर रखा जायेगा, या खादीके काममें बाधा डाली जायेगी तो उससे सरकारको किस प्रकार सन्तोष होगा। मुझे यह विचार ही असह्य है कि एक व्यक्ति किसी दूसरेको सताये और मुझे यह देखकर शर्म लगती है कि ऐसे गरीब सीधे-सरल लोगोंके साथ इस प्रकारका व्यवहार किया जाये। मैं इस बातपर लज्जित महसूस करता हूँ कि जहाँ मैं विदेशी लोगोंके जुल्मोंको सहन नहीं कर सकता, वहीं मेरे अपने देशके जमींदार और अधिकारी लोगोंको डराते रहे हैं। जिन लोगोंको डराया गया है यदि उनके नाम मुझे दे दिये जायें तो मेरा इरादा उनके पास जानेका है, और यदि जमींदारोंके नाम भी दे दिये जायें तो मैं उनके पास भी जाऊँगा और इस विषयपर उनसे बात करूँगा। भय बीमारीसे भी घातक होता है और मैं उनसे कहता हूँ कि वे डर छोड़ दें, ताकि जो लोग डराते हैं उनका काम अपने-आप बन्द हो जाये। शराब, जुआ और वेश्यागमन छोड़ दीजिए ताकि आप ईश्वरको प्राप्त करने लायक शुद्ध बनें। मुसीबतमें

1. मूलमें यहाँ खाली जगह है।

उड़ीसामें धन एकत्र करने नहीं आया हूँ, लेकिन खादीकी खातिर मैं गरीबोंसे भी भीख माँगनेमें नहीं हिचकता। ईश्वर आपपर कृपादृष्टि रखे।

[अंग्रेजीसे]

उड़ीसा सरकारके रेकार्डोंसे।

२५४. पत्र : एडा रोजेनग्रीनको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,[1]

मुझे आपका पत्र मिला,[1] धन्यवाद। आप 'सेल्फ रेस्ट्रेन्ट वर्सस सेल्फ इंडलजेंस' नामक पुस्तकका अनुवाद कर सकती हैं। जहाँतक शर्तोंका सवाल है, वह मैं आपपर छोड़ता हूँ। जो-कुछ भी दिया जायेगा वह सार्वजनिक उपयोगमें लगाया जायेगा।

पश्चिमकी स्त्रियोंके बारेमें आप जो कहती हैं वह केवल आंशिक रूपमें ही सही है और शायद कुछ हदतक भारतकी स्त्रियोंके बारेमें भी सच है, लेकिन ये आधुनिकताके रंगमें रंगी उच्च वर्गकी स्त्रियाँ हैं और बहुत कम हैं। जहाँतक स्त्रियोंकी बहुत बड़ी संख्याका सवाल है, वे अपने ही कामोंमें इतनी व्यस्त रहती हैं कि विषय-वासनासे सम्बन्धित विचारोंके लिए उनके पास अवकाश ही नहीं है। यह तो पुरुषका ही गुण है कि वासना जब उसपर हावी हो जाये तो वह आक्रामक हो उठता है। सहिष्णुताके सम्बन्धमें आप जो कहती हैं वह दुर्भाग्यवश संसार-भरकी औरतोंके मामलेमें बिलकुल सच है और मैं नहीं समझता कि स्त्रियोंमें से अधिकांश इस कमजोरीको दूर कर सकेंगी। शायद उनके शरीरकी संरचना ही ऐसी है जो प्रभावशील विरोधकी वृत्तिके विकासमें बाधक है, उन चन्द सुनिश्चित परिस्थितियोंको छोड़कर जो विशेष संस्कृतिकी देन हैं। और चूँकि स्त्री सहिष्णु होती है इसलिए मैंने कहा है कि स्त्रीके बजाय वह पुरुष ही है जो ज्यादा दोषी होता है। और पश्चिमकी आधुनिकाएँ भी चतुराईसे पुरुषोंको अपनी ओर आकर्षित करनेके सिवा कुछ नहीं करतीं। स्त्रियोंके द्वारा पुरुषोंके प्रति बलात्कारका रुख अपनाये जानेके मैं ज्यादा दृष्टान्त नहीं जानता। स्त्रीमें अपनेको नियन्त्रित करने और घुटकर रह जानेकी विलक्षण क्षमता होती है और चाहे उसके दिलमें वासनाका तूफान ही क्यों न उठ रहा हो, वह आक्रामक नहीं होती।

हृदयसे आपका,

एम० एडा रोजेनग्रीन
लिडिनगो, स्वीडन

अंग्रेजी (एस० एन० १२५४१) की फोटो-नकलसे।

१. २८-९-१९२७ का पत्र जिसमें रोजेनग्रीनने गांधीजीकी पुस्तकका स्वीडिश भाषामें अनुवाद करनेकी इजाजत चाही थी।

२५५. पत्र : हेनरी नीलको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका कृपापत्र और संलग्न सामग्री मुझे मिली। मुझे नहीं लगता कि मैं सचमुच कुछ ऐसी चीज लिख सकता हूँ जो आपके उपयुक्त हो। इसलिए आपके अनुरोधको न माननेके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे।[1]

जहाँतक बाल-कल्याणका सम्बन्ध है, जिस अर्थमें लॉर्ड लिटनने कहा है उस अर्थमें मैंने इस समस्यामें दिलचस्पी नहीं ली है, लेकिन एक अर्थमें, जिसे मैं ज्यादा ऊँचा मानता हूँ और जिसमें कुछ हजार नहीं, बल्कि कई करोड़ बच्चे शामिल हैं, मैं उनके कल्याण-कार्यमें बराबर लगा हुआ हूँ, क्योंकि हाथ-कताई आन्दोलनका उद्देश्य उस देशके लाखों भूखों मर रहे लोगोंको प्रभावित करनेका है, जिनमें छोटे बच्चे भी शामिल हैं। और यदि मैं सफल होता हूँ तो मैं जानता हूँ कि जिस ढंगके बाल-कल्याणकी आपको और लॉर्ड लिटनको जानकारी है, उसका होना सुनिश्चित है।

जो छपा हुआ पर्चा आपने भेजा है उसका उत्तर देना कठिन है क्योंकि लेखकने उसी चीजको एक भिन्न दृष्टिकोणसे देखा है। इसलिए मेरी कोई इच्छा उस लेखकी आलोचना करनेकी नहीं है और मैं उसे आपकी इच्छाके अनुसार इसके साथ ही लौटा रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

जज हेनरी नील

अंग्रेजी (एस० एन० १२५४५) की फोटो-नकलसे।

२५६. पत्र : अल्पवयस्क रक्षा-समिति, कोचीनके मन्त्रीको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

लगातार यात्राके कारण मैं आपका पत्र आज ही पा सका। देवदासी प्रथाकी निन्दा करनेमें मुझे कोई हिचक नहीं है, लेकिन यह देखते हुए कि मैं आपकी समितिके किसी भी सदस्यको व्यक्तिगत रूपसे नहीं जानता, मेरे लिए आपकी अपीलके बारेमें

१. हेनरी नीलने अपने ८-१०-१९२७ के पत्रमें गांधीजीसे "भारतके लोगोंपर ईसा मसीहकी शिक्षाके प्रभावके बारेमें एक लिखित वक्तव्य" मांगा था तथा अन्य विषयोंपर भी उनके विचार मांगे थे।

कुछ कहना उचित नहीं होगा। यदि आप वहाँके लिए अपरिचित हैं तो मेरे लिए तो और भी अपरिचित हैं। अतः आपका कर्त्तव्य है कि लोग आपको अपनी ईमानदारी और मेहनतके साथ काम करनेके जरिये पहचानें। और मुझे विश्वास है कि कोचीनमें ऐसे उदार लोग पर्याप्त संख्यामें होंगे जो आपके अनुष्ठानमें शामिल हो जायेंगे।

हृदयसे आपका,

मंत्री
अल्पवयस्क रक्षा-समिति
कोचीन

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४२) की माइक्रोफिल्मसे।

२५७. पत्र: डी० आर० भाण्डारकरको

स्थायी पता: आश्रम, साबरमती
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

लगातार यात्रा करते रहनेके कारण मैं आपके पत्रका इससे पहले उत्तर नहीं दे सका। आपने जो समय-सीमा निर्धारित की है उसने आपके द्वारा मुझपर सौंपे गये कार्यको कर सकना लगभग असम्भव बना दिया है। यदि मैं स्वयं उसे न करूँ तो केवल महादेव उस कार्यको कर सकता है, लेकिन उसपर पहले ही जो कामका दबाव है, उसे और बढ़ानेको मेरा दिल नहीं करता। फरवरीतक उसके पास या मेरे पास एक क्षण भी फाजिल नहीं है।

हृदयसे आपका,

प्रोफेसर डी० आर० भाण्डारकर
३५, बालीगंज, सर्कुलर रोड
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४३) की माइक्रोफिल्मसे।

२५८. पत्र : जे० एन० जिनेन्द्रदासको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका लम्बा पत्र मिला था। लोकमतके दबावसे दुखमें पड़े लोगोंको एक स्थानसे दूसरे स्थानपर प्रयाण करनेसे रोकना या उसका नियमन करना सम्भव नहीं है, और कानून बनाकर उसे रोकना गलत होगा। लेकिन लंकामें बुद्धिमत्तापूर्ण और लोगोंकी दशा सुधारनेवाले कानून बनाकर गरीब मजदूरोंके आव्रजनसे जुड़ी हुई बुराइयोंको रोकनेमें काफी कुछ किया जा सकता है, फिर चाहे ये मजदूर किसी भी जातिके क्यों न हों। आपको लंकामें ऐसा लोकमत तैयार करना चाहिए जो मजदूरोंके मालिकोंसे ज्यादा मानवीय व्यवहारकी, पर्याप्त मजदूरीकी, और स्वास्थ्यप्रद तथा खुले आवासोंकी माँग करे। भारतीय मजदूरोंको विदेशी माननेके बजाय आपको उन्हें अपना ही मानना चाहिए। आखिरकार ये मजदूर लंकामें इसीलिए जाते हैं क्योंकि वहाँ उनकी जरूरत है।

हृदयसे आपका,

जे० एन० जिनेन्द्रदास
४५, परानावाडिया रोड
मराडाना, कोलम्बो

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४४) की माइक्रोफिल्मसे।

२५९. एक पत्र

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र मिला। मैं मुक्ति प्राप्त करनेके लिए ईसाई-धर्मको अपनाना किसी भी रूपमें आवश्यक नहीं मानता। मैं ईसा मसीहके अनन्य देवत्वमें विश्वास नहीं करता। मैं ऐसा नहीं मानता कि सभी रोमन कैथॉलिक बिशपोंका जीवन सन्देहसे परे है। मेरी रायमें विवाहके बारेमें ऐसा सोचना कि उसमें किसी भी एक पक्षकी प्रेरणा पर पाशविक भोग किया जाता है, विवाहके बारेमें बहुत हलका दृष्टिकोण अपनाना है। विवाहके इससे कहीं ज्यादा उत्तम उपयोग हैं। मुझे इसका पता नहीं है कि धर्म किसी भी दम्पतिके लिए यह जरूरी बताता हो कि एकके कहनेपर दूसरा सम्भोग

अवश्य करे। इसके विपरीत, जबतक दोनों ही समान रूपसे इच्छुक न हों तबतक सम्भोगकी अनुमति नहीं है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४५) की माइक्रोफिल्मसे।

२६०. पत्र : श्रीप्रकाशको

बोलगढ़ (उड़ीसा)
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय श्रीप्रकाश,

इतने समयतक तुम्हारे पत्रका जवाब न देनेके लिए क्षमा करना, लेकिन मैंने अपनी शक्तिसे ज्यादा काम किया है और मेरे पास ढेर-सारे पत्रोंका उत्तर देनेके लिए कोई समय नहीं रहा है। मैं उत्कलमें जरा मार्गसे हटकर एक दूरके गाँवमें आराम करनेपर विवश हुआ हूँ इसीलिए मुझे बकाया पत्र-व्यवहारसे निबटनेका समय मिला है, और उन्हें देखते हुए मैंने तुम्हारा पत्र पाया है। आश्रमसे तुम्हारे पत्रके साथ भेजी गई रसीद यह रही।

'आज' वालोंको शिकायत नहीं करनी चाहिए। मुफ्त प्रतियाँ केवल सुविख्यात अंग्रेजी अखबारोंको ही भेजी गई हैं। यहाँतक कि विख्यात मित्रोंको भी प्रतियाँ नहीं भेजी गई हैं क्योंकि आखिरकार इस समय 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' बहुत गरीब अखबार हैं। उनकी बिक्री १९२० और १९२१ जैसी नहीं है, और इसके बावजूद विज्ञापन आदि न लेनेकी बाधाओंके साथ ही आत्मनिर्भर रहनेके कठोर नियमका पालन किया जाता है, और जब कभी इन अखबारोंको चलानेके खर्चमें कुछ बच जाता है, तो वह सबका-सब सार्वजनिक कार्यमें लगा दिया जाता है। तब यदि 'आज' एक मुफ्त प्रतिकी अपेक्षा करे तो यह उतना ही पैसा गरीब लोगोंकी जेबसे निकालनेके समान होगा। यदि इस स्पष्टीकरणके बावजूद तुम या 'आज' कार्यालयके कर्मचारी एक मुफ्त प्रतिकी अपेक्षा करें तो मुझे बताओ और मैं स्वामी आनन्दसे भेजनेको कह दूँगा। अवश्य मैं जानता हूँ कि 'आज' तुम्हारी तरफका एक अग्रणी अखबार है जैसा कि उदाहरणके लिए 'वसुमती' कलकत्तेमें है। लेकिन जहाँतक मैं जानता हूँ किसी भी देशी भाषावाले अखबारको अंग्रेजी प्रति नहीं दी गई है।

तुम मुझसे अपने मनकी बात अवश्य कहो, चाहे पत्र लिखकर या मेरे पास आकर। मैं तुम्हारे बोझ बँटाकर खुश होऊँगा। इसलिए मुझे एक ऐसा मित्र अवश्य मानो जो तुम्हारी बातोंको अपनेतक ही सहेजकर रखेगा और तुम्हारे बोझको हल्का करनेकी कोशिश करेगा। मै जनवरीमें साबरमतीमें रहूँगा। मुझे दुख है कि उस महीनेमें मुझे कुछ दिनोंके लिए काठियावाड़ जाना होगा[1]। लेकिन यदि तुम वहाँ पूरे

१. देखिए "भाषण: काठियावाड़ राजनीतिक परिषद, पोरबन्दरमें", २२-१-१९२८।

महीने रहोगे तो तुम भी मेरे साथ काठियावाड़ जाकर उस विभिन्न प्रदेशको देख सकते हो।

चरखा नियमित रूपसे अवश्य कातो, और एक बार ठीक चलाना आ जानेपर तुम उसे छोड़ना नहीं चाहोगे। वह एक विश्वसनीय साथी होगा जो तुम्हारे चाहने-पर ही तुमसे बोलेगा। लेकिन चरखा चलानेमें तुम्हें पूरा आनन्द तभी मिलेगा जब तुम चरखेको, और चरखेके जरिये अपने-आपको हमारे देशके तुच्छसे-तुच्छ लोगोंके साथ जोड़ लोगे। और यदि निर्धनतम लोगोंके साथ अपना सम्बन्ध माननेमें कोई लज्जा नहीं है तो तकलीको जारी रखनेमें कोई शर्मकी बात क्यों होगी। मैं समझता हूँ कि तुम्हे यह मालूम है कि अल्मोड़ामें और भारतके अनेक अन्य भागोंमें गड़रिये अपनी तकली साथ रखते हैं और जहाँ कहीं भी जाते हैं, वहीं अपना ऊन कातते रहते हैं।

तुम्हारा,

श्रीयुत श्रीप्रकाश
बनारस

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४६) की माइक्रोफिल्मसे।

२६१. पत्र : हरजीवन कोटकको

बोलगढ़, उड़ीसा
११ दिसम्बर, १९२७

बुरे विचारोंके कारण जब मन मलिन हो उठे तो ऐसे विचारोंको मनमें न आने देनेकी चेष्टा करनेकी बजाय हमें किसी अन्य कार्यमें मन लगा देना चाहिए; अर्थात् उसे उपयुक्त काममें सम्बन्धित विचारोंमें उलझा देना चाहिए। या फिर मनको रामनाममें लगाना, कुछ पढ़नेमें लगाना, ऐसे किसी शारीरिक श्रममें लगाना चाहिए जिसमें मनको ओतप्रोत करना होता हो। इधर-उधर दृष्टि नहीं डालनी चाहिए। यदि किसी स्त्रीपर दृष्टि पड़े तो उधरसे दृष्टि हटा लेनी चाहिए। किसी स्त्री अथवा पुरुषकी ओर आँख उठाकर देखना तो शायद ही आवश्यक होता है। इसीलिए ब्रह्मचारी तथा अन्य लोगोंके लिए यह विधान है कि वे चलते हुए अपनी दृष्टि नीचेकी ओर रखें। और यदि हम बैठे हों तो अपनी दृष्टि स्थिर रखें। ये सब बाह्य उपाय हैं, किन्तु हैं अमूल्य। जब तुम्हें उपवासकी आवश्यकता जान पड़े तब उपवास कर सकते हो।

तुम्हें सातवलेकरजीके पास जानेकी आवश्यकता नहीं है। वे तुम्हें आसन जरूर सिखा सकते हैं। आसन सीख लेना उचित ही है। यदि तुम सिर्फ आसन सीखनेके लिए उनके पास जाना चाहो तो अवश्य चले जाना। मैं उन्हें अच्छी तरह जानता हूँ, वे सज्जन पुरुष हैं।

उपवास-कालमें यदि स्खलन हो जाये तो उससे डरना नहीं चाहिए। वैद्योंका कहना है कि मनमें विषय विकार न होते हुए मलके दबावसे भी स्खलन हो जाता है। किन्तु ऐसा माननेके बदले यह मानना अधिक लाभदायक होगा कि मानसिक विकारोंके कारण ही स्खलन होता है। हमें मानसिक विकारोंका सदा पता नहीं चल पाता। पिछले पन्द्रह दिनोंमें मुझे नींदमें दो बार स्खलन हो चुका है। मुझे वे स्वप्न याद भी नहीं हैं। हस्तमैथुनकी बुराई तो मुझमें कभी थी ही नहीं। इस स्खलनका कारण मेरे शरीरका निर्बल होना तो है ही; किन्तु मैं जानता हूँ कि मेरे मनके भीतर कहीं विकार भरे हुए हैं। जाग्रत अवस्थामें तो उन विकारोंको मैं अपने वशमें रख सकता हूँ किन्तु जो वस्तु विषकी तरह शरीरमें भरी हुई है वह बलपूर्वक अपना मार्ग बना लेती है। मुझे इसका दुःख तो है किन्तु कोई घबराहट नहीं है। मैं सतर्क रहता हूँ। शत्रुको दवा भी देता हूँ किन्तु उसे देशनिकाला नहीं दे पाया हूँ। यदि मैं सच्चा हूँ तो उसे अवश्य निष्कासित कर सकूँगा। सत्यके तेजको वह सह नहीं सकेगा। यदि तुम्हारे बारेमें भी यही बात हो तो मेरे अनुभवसे लाभ उठाना। मानसिक विकार स्वभावमें तो अपनी पत्नीके प्रति हो चाहे परस्त्रीके प्रति, एक ही हैं। वह परिणाममें अलग-अलग है। हम फिलहाल इस शत्रुके बारेमें विकार रूपमें विचार कर रहे थे। इसलिए यह जान लो कि अपनी पत्नीके प्रति मेरे जैसा विषयी शायद ही होगा। इसीलिए मैंने अपनी दयनीय स्थिति तुम्हारे सामने रखकर तुम्हें हिम्मत बँधाई है। बा आज मेरे लिए माँके समान है। लगातार प्रयत्न करने और भगवानकी दयासे ही यह सम्भव हो सका है। किन्तु उस अपवित्र जीवनके उत्तराधिकारमें बचे अवशेष मुझे पीड़ित करते रहते हैं और मैं उन्हें पीड़ित करता रहता हूँ। और यदि ईश्वरकी कृपा हुई तो मैं इस जीवनमें ही उनपर विजय पा लूँगा।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२६२. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

बोलगढ़
मौनवार, १२ दिसम्बर, १९२७

बहनो,

आज मुझे एकान्त तो बहुत है, लेकिन वह बीमारके कमरेका एकान्त है। यहाँकी हालत देखकर दिल जलता है और यहीं रह जानेकी इच्छा होती है। तुममें से कोई भी बहन तैयार हो तो उसे यहाँ आनेके लिए जरूर ललचाऊँ। यहाँ सब स्त्रियाँ परदा रखती हैं। लोगोंके पास न पूरा कपड़ा है, न खाना। उड़ीसामें प्रवेश करनेसे पहले जब मीराबहनने जितने कपड़े थे उनसे भी कम करनेकी माँग की, तब मैं कुछ घबराया था। यहाँ आकर देखा कि उसका कहना ठीक ही था। यहाँकी स्त्रियाँ सिर्फ

एक धोती ही पहनती है — आधा भाग कमरमें और आधा भाग शरीरके ऊपरके हिस्सेके लिए। खानेमें न घी मिलता है, न दूध। लोग सब गरीब हैं। किसी पुलिसवालेने डरा दिया है, इसलिए मेरे पास भी नहीं आते। एक घरमें मीराबहनको अकेली छोड़कर मैं चला गया, तो पचासों स्त्रियां उसे घेर कर बैठ गईं और अनेक प्रकारकी बातें पूछने लगीं। अगर कोई बहन इन बहनोंमें काम करनेके लिए तैयार हो तो मेरी रायमें वह बहुत-कुछ कर सकती है। मगर यह सब तो भविष्यकी बात हुई। अभी तो तुम सब तैयार हो जाओ। तैयार होनेका मतलब है 'मैंपन' भूल जाओ। इतना कर लो तो कहीं भी जा सकती हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६८०) की फोटो-नकलसे।

२६३. पत्र : रमेशचन्द्रको

मुसाफरीमें
१२ दिसम्बर, १९२७

भाई रमेशचंद्रजी,

आपको उत्तर देनेकी आशासे आपका पत्र मैंने आजतक रखा। आज उत्तर दे सकता हुं।

मास भक्षण और वनस्पति भक्षण दोनों हिंसा है परन्तु एक वस्तुके सिवा मनुष्य कहीं भी नहीं जी सकता है दूसरेके सिवा प्रायः सब जगहमे जी सकता है। यदि जीव जीवमें दुःखके ज्ञानका भेद है तो जो दुःख गायको मरनेके समय होता है वह वनस्पति जीवको नहिं होता है। जीव मात्रके लीये कुछ न कुछ हिंसा अनिवार्य है। अहिंसा धर्मका पालक अल्पतम हिंसा करेगा। अन्य धर्मोंमें मांसाहारकी आज्ञा नहिं है उसका प्रतिबंध नहिं है। दूसरे धर्मोंमें या तो हिंदु धर्ममें भी वैसी प्रथा है हमारे जानना अच्छा है। परंतु यदि हमारी बुद्धि निरामिषाहारको नैतिक दृष्टिसे विशेष माने तो हमारे उसका स्वीकार करना चाहीये। अहिंसाका उपासक वनस्पतिके उपयोगमें भी मर्यादित होता जायगा। ग्रीनलैंड इत्यादि प्रदेशमें निरामिषाहारी रहना कठिन है, असंभवित नहिं। यदि असंभवित भी सिद्ध कीया जाय तो भी इससे हर जगह मासाहारकी आवश्यकता सिद्ध नहिं हो सकती है। प्रवृत्तिमात्र सदोष होते हुए भी हम तुलना करके बहोतसा त्याग करते रहते हैं। मुमुक्षुके जीवनमें निरंतर त्याग वृत्तिकी वृद्धि होती है, होना आवश्यक है।

दूध अंडेमें भेद है। अंडे अनावश्यक है। दूध भी बडोंके लीये अनावश्यक है। मैंने मूर्खताके वश होकर विलायतमें अंडे खाये है जैसे इस देशमें मांस। परंतु जब मैं सावधान हुआ तब मैंने उसका त्याग [कीया] और निरामिषाहारी मित्रोंके साथ [भी] इतनी हि चीज लेना था जिनमें अंडे न थे। इस [का] मैंने अब समझ लीया

है कि निर्जीव अंडे बहो[त] पैदा होते हैं। इसका शास्त्र है और प्राय: निर्जीव अंडे ही लोक खाते हैं। परंतु इस बातसे अंडे खाद्य पदार्थ नहिं बन सकते हैं।

अहिंसा व्यापक धर्म है। शरीरको प्राणसे अलग करना हि हिंसा नहिं है। ब्रह्मचर्यका त्याग भी मेरी दृष्टिमें हिंसा है। प्रसिद्ध बात है की मांसाहार अंडे और दूध भी ब्रह्मचारीके लीये त्याज्य वस्तु है। केवल वनस्पतिके आहारसे ब्रह्मचर्य सुलभ हो जाता है।

अंतमें, यद्यपि आहारका विषय धार्मिक मनुष्यके लीये अत्यावश्यक है तथापि न इसीमें धर्म अथवा अहिंसाकी समाप्ति है न यहि सर्वोपरि वस्तु है। धर्म और अहिंसाका पालन हृदयकी बात है। हृदयको विशुद्ध बनानेमें जिसको मांसाहारके त्यागकी आवश्यकता प्रतीत न हो वह त्याग न करे।

आपका,

मोहनदास

जी० एन० ६२७९ की फोटो-नकलसे।

२६४. तार: साकरचन्दको

बालासोर

१४ दिसम्बर, १९२७

साकरचन्द सेठ
केनिलवर्थ कालेज
पंचगनी

आशा है आप बेहतर हैं। लिख रहा हूँ। ईश्वर आपको प्रसन्न रखे।

गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ७१५९) की फोटो-नकलसे।

२६५. पत्र : जे० डब्ल्यू० पेटावलको

(शिविर) बालागांव
१४ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

ट्रेनपर लिखा गया आपका पत्र मुझे मिला। यह बड़ी ही दुखद बात है क्योंकि, हालांकि मैं मानता हूँ कि मेरा स्वभाव काफी लोचशील है, लेकिन जहाँ आप कुछ तफसीलके मामलेमें ही भिन्नता देखते हैं वहाँ मैं आपके और अपने बीच काफी महत्त्वपूर्ण मतभेद देखता हूँ। मुझे लगता है कि हमारे दृष्टिकोण बिलकुल भिन्न हैं। जहाँ आपकी आँखोंके सामने एक नगण्य अल्पसंख्यक लोग अर्थात् शिक्षित भारतीय हैं, वहाँ मेरी आँखोंके सामने तुच्छतम अपढ भारतीय हैं जो रेलवे लाइनोंसे बहुत दूर रहते हैं। निःसन्देह शिक्षित भारतीयोंका वर्ग एक महत्त्वपूर्ण वर्ग है, लेकिन मेरे लिये उनका महत्त्व अपढ भारतीयोंके ख्यालसे ही है, और उन्हींके वास्ते है। शिक्षित-वर्ग अपने अस्तित्वका औचित्य तभी सिद्ध कर सकता है जब वह जनसाधारणके लिए अपने-आपको उत्सर्ग करनेको तैयार हो। इसलिए आपकी योजना मुझे बिलकुल प्रभावित नहीं करती। मैंने सर प्रफुल्लचन्द्र रायकी भूमिका पढ़ी है, और आप अन्य जो-कुछ लेख भेजते रहे हैं उन्हें भी मैंने पढ़ा है। हालांकि मैं इन महान लोगोंकी सराहना करता हूँ, लेकिन वे मुझे मेरी बुनियादी स्थितिसे नहीं हिला सकते। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप अपने और मेरे बीच बुनियादी मतभेदोंको स्वीकार करें और इन मतभेदोंके बावजूद यदि कर सकें तो मुझसे प्रेम करें। जहाँतक मेरा सवाल है, यह मतभेद मुझे आपसे प्रेम करनेसे नहीं रोकता और इसीलिए मैं आपको आपके पत्रोंके जवाबमें जितना अकसर लिख सकता हूँ, लिखता हूँ, और हम दोनोंके स्वभावके अन्तरोंको स्पष्ट करनेकी कोशिश करता हूँ ताकि हम शीघ्र ही यह स्वीकार कर लें कि हममें मतभेद है, और आशा करें कि एक दिन हममें से कोई एक दूसरेकी बात स्वीकार कर लेगा।

हृदयसे आपका,

कैप्टेन जे० डब्ल्यू० पेटावल
बागबाजार
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४८) की फोटो-नकलसे।

२६६. आरोप-पत्र

क्या आप मानते हैं कि दुष्टोंका दलन और धर्म-परायणोंका संरक्षण प्रत्येक आदर्श सरकार और उससे भी अधिक महात्माजनोंका प्राथमिक कर्त्तव्य है? अगर आप इसे स्वीकार करते हैं, तो फिर इस युगों पुराने सिद्धान्तसे आपके राजनीतिक दर्शनका कहाँ मेल बैठता है? क्या कुरुक्षेत्रकी युद्ध-भूमिमें अर्जुनको दिये श्रीकृष्णके उपदेशका यही सार नहीं?

क्या अवतारोंने भी इसी बुद्धिमत्तापूर्ण नीतिका पालन नहीं किया था जिससे जग-विख्यात राजा बलीका राज्य छीना गया, बालि मारा गया और जरासंधका नाश हुआ?

आप साधारण मानवोंसे और वह भी उनके एक विशाल समुदायसे यह आशा कैसे रखते हैं कि वे अपने धूर्त शत्रुओंके वार बिना किसी तरहके बदलेकी कार्रवाईके सहते जायेंगे? इस दृष्टिसे यदि हम उच्च भावनाओंसे ओतप्रोत आपकी शिक्षाओं और उपदेशोंको अव्यावहारिक और साधारण मानवोंके लिए अशक्य मानें तो क्या वह अनुचित होगा? दक्षिण आफ्रिकामें आपकी अस्थायी और जब-तब किसी-किसी बातमें मिली सफलताको आपके प्रशंसकोंने बहुत बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया है और साधारण बुद्धिके हिन्दुस्तानी यह भूल करके कि दक्षिण आफ्रिकाका उदाहरण हिन्दुस्तान-जैसे विशाल देशपर जिसमें बहुत-सी भाषाएँ और धर्म हैं, लागू नहीं पड़ता, आँखें मूँदकर (भेड़ोंकी तरह) आपके पीछे चलकर मुश्किलमें पड़ गये हैं। बहुतसे देशभक्तोंका जीवन बर्बाद करनेके बाद क्या आपने अबतक यह नहीं समझा कि 'एक वर्षके भीतर स्वराज्य' दिलानेकी आपकी घोषणा[1] गलत साबित हुई है? क्या आप यह कबूल नहीं करते कि बारडोलीमें आपकी कलाबाजीसे[2] गुन्टूरकी जनताके बीच बड़ी घबराहट फैल गई जो आपके कार्यक्रमके अनुसार बड़ी वीरता और मर्दानगीसे काफी समयसे कर देना बन्द किये हुए थी[3]?

क्या हम पूछ सकते हैं कि खिलाफत-आन्दोलनमें आपके पड़ने और उसके फलस्वरूप थोड़ेसे धर्मांध मुसलमानोंके हाथोंमें कांग्रेसके खेलनेका क्या फल हुआ? जिस हिन्दू-मुस्लिम एकताके बारेमें आपने इतना लिखा और कहा है, जिसके नामपर आपने सभी हिन्दुओंसे इतनी अपील की है कि वे अपने मुसलमान भाइयोंसे मेल-मिलाप करें, क्या वही एकता मुसलमानोंके संकटकी घड़ी टलते ही बालूके किले-सी ढह नहीं गई? क्या आप अपनी पवित्र शिक्षाओंसे कभी इसकी

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १६२-६६ और परिशिष्ट १।

२. अर्थात् १२ फरवरी, १९२२ को बारडोलीमें सत्याग्रह स्थगित करना; देखिए खण्ड २२, पृष्ठ ३९९-४०३।

३. देखिए खण्ड २२, पृष्ठ ३९८।

भी आशा रखते हैं कि धर्मान्ध और बहादुर मुसलमानों और जाति-रोगसे पीड़ित भीरु हिन्दुओंमें कभी मेल होगा? क्या आपको कभी इसका भान हुआ है कि जबसे अहिंसाके सिद्धान्तकी बदौलत कांग्रेसमें आप मुखिया बने तभीसे साम्प्रदायिक झगड़े बराबर बढ़ते ही गये हैं?

क्या आप कबूल नहीं करेंगे कि आपने अपने राजनीति-दर्शनको धर्मकी शब्दावलीका चाहे जितना भी बाना पहनाया हो, मगर उससे पण्डित मालवीय, देशबन्धु दास, लाला लाजपतराय, श्रीयुत विजयराघवाचारियर, श्री केलकर, डाक्टर मुंजे और दूसरे अखिल भारतीय नेता आजिज आ गये थे?

क्या यह सच है कि आपने महात्मा तिलकका नेतृत्व, कमसे-कम शुरूमें ही सही, स्वीकार नहीं किया था? तब इसकी क्या वजह है कि आप आज सामाजिक और धार्मिक किस्मके तमाम पेचीदा विवाद फिर उखाड़कर राष्ट्रीय ध्येयको हानि पहुँचा रहे हैं? क्या आप यह नहीं समझते कि पहलेसे ही दब्बू किस्मके हिन्दुओंमें इससे और भी अधिक फूट फैलती है? तब क्या इस तरह अप्रत्यक्ष रूपसे आप हमारे ध्येयके शत्रुओंके हाथमें ही नहीं खेल रहे हैं, जिनकी एकमात्र दलील यह है कि हम सामाजिक रूपसे राजनीतिक स्वतन्त्रताके अयोग्य हैं?

क्या ऊँची जातिके सवर्ण हिन्दुओंके पवित्र मन्दिरोंमें, जिन्हें उन्होंने केवल अपने ही लिए बनवाया था, प्रवेश करनेके लिए आप पंचमोंको उत्तेजित करके ठीक काम कर रहे हैं? क्या आप अपनेको त्रिनेत्र (रुद्र) समझते हैं कि युग-युगसे चली आनेवाली प्रथाओंको एक दृष्टिमें भस्म कर डालें? हालमें हमें यह जान कर आश्चर्य हुआ है कि आपने विधवा-विवाहका समर्थन करना शुरू किया है और अपरिपक्व बुद्धि नवयुवकोंको विधवाओंसे विवाह करनेकी धृष्टतापूर्ण सलाह दी है। क्या आप यह नहीं मानते कि स्वामी विवेकानन्द और दूसरे लोगोंने विधवा-विवाहका समर्थन नहीं किया इसमें उनकी दूरदर्शिता ही थी, क्योंकि कुमारी कन्याओंके विवाहोंमें आज होनेवाली कठिनाइयोंतकका उन्हें भान था। क्या हम पूछ सकते हैं कि इन सब अत्यन्त विवादग्रस्त प्रश्नोंको स्वराज्यके प्रश्नके साथ मिला देनेसे एकता पैदा करनेमें कहाँतक मदद मिलेगी? स्वराज्यका प्रश्न तो शुद्ध राजनीतिक प्रश्न है जिसके लिए आशा की जाती है कि हम सब एकमत होकर काम करेंगे।

विज्ञानकी उन्नतिके इस युगमें आपका चरखा लोकप्रिय नहीं हो सकता क्या आप अपने अनुभवोंके आधारपर यह नहीं सोचते कि अगर आप केवल मजदूरोंके संगठनके काममें लगे रहें तो कहीं अच्छा रहेगा?

अहिंसा-धर्ममें सच्ची निष्ठा रखनेके नाते क्या आपका यह कर्त्तव्य नहीं हो जाता कि आप उन नगरपालिकाओंसे मानपत्र स्वीकार न करें जिनके यहाँ बूचड़खाने चलते हैं?

बरहामपुरमें मुझे किसी भाईने एक लम्बा पत्र भेजा था। ऊपर उसीका कुछ अंश दिया गया है। चूंकि मेरे पास यह माननेका कारण है कि इस पत्र-लेखकने वे बातें खुलासा कहनेका साहस किया है जो दूसरे लोग मनमें छिपाये हुए हैं, अतः मुझे जान पड़ता है कि इन आरोपोंका जवाब देना जरूरी है।

इन सवालोंका ब्यौरेवार जवाब देना जरूरी नही है। हममें से बहुत लोग एक भारी भूल यह करते हैं कि शास्त्रोंका अक्षरशः अर्थ लगाने लगते हैं। वे भूल जाते हैं कि मात्र शब्दोंका पालन शास्त्रोंकी आत्माको नष्ट कर देता है और उनके भावार्थका अनुसरण उसे विकसित करता है। 'महाभारत' और 'पुराण' न तो बिलकुल इतिहास ही हैं, और न धर्मशास्त्र ही। मुझे लगता है कि वे मनुष्यके धार्मिक इतिहासको भिन्न-भिन्न रूपोंमें समझानेकी एक आश्चर्यजनक रूपसे उपयुक्त योजनाके अन्तर्गत लिखे गये हैं। उनमें वर्णित सभी नायक हम लोगों-जैसे अपूर्ण, दोषयुक्त, नश्वर प्राणी हैं, अगर अन्तर है तो अपूर्णताकी मात्रामें ही। उनके वर्णित कामोंका हम आँख मूँदकर अनुकरण नही कर सकते। 'महाभारत' की सारी शिक्षाका सार इतनेमें दिया हुआ है कि संसारमें सत्य सभी वस्तुओंसे सर्वोपरि है।

मगर मैं शास्त्रोंमें लिखी हरएक बातका औचित्य सिद्ध करनेकी कोशिश नहीं कर रहा हूँ। इन ग्रन्थोंको श्रद्धाके साथ पढ़नेपर मुझपर सब मिलाकर जो असर पड़ता है, मैं उसीको मानता हूँ। हरएक आदमीको, जो सच्चा होना चाहता है, यही करना पड़ेगा। इस तरह मेरा दावा है कि अहिंसा और सत्यमें मेरा विश्वास उन्हीं ग्रन्थोंके पढ़नेसे पैदा हुआ है, जमा है, जिसमें से निकालकर ये भाई मेरे सामने ये प्रश्न उपस्थित कर रहे हैं। यही नही, बल्कि मेरा विश्वास आज मेरे अस्तित्वका परमावश्यक अंग बन पाया है, और इसलिए वह इन किताबोंके या किन्हीं और किताबोंके सहारे-के बिना भी स्थिर रह सकता है। निश्चय ही, हरएक धार्मिक प्रवृत्तिवाले आदमीके जीवनमें एक ऐसा समय आता ही है जब उसकी श्रद्धा आत्म-पोषित होती है। इसलिए भले ही सिद्ध किया जाये कि अवतारोंने फलाँ काम किया था, फलाँ काम नहीं किया था, मगर इसका मुझपर कोई असर नही पड़ सकता। दिनोंदिन बढ़ता और सबल होता हुआ मेरा अनुभव मुझसे कहता है कि जहाँतक आदमीके लिए सम्भव हो, उस हद तक सत्य और अहिंसाका पालन किये बिना न तो व्यक्तियोंको और न जातियोंको ही शान्ति मिल सकती है। बदला लेनेकी नीतिको कभी सफलता नहीं मिली। बदला लेनेसे, जिसमें अकसर धोखेबाजी और जोर-जबरदस्ती भी शामिल होती है, कभी-कभी अस्थायी और दिखावटी सफलता मिलनेके इक्के-दुक्के उदाहरणोंसे हमें घबराना नही चाहिए। संसार-का अस्तित्व आज इसीलिए बना हुआ है कि यहाँपर घृणासे प्रेमकी मात्रा अधिक है, असत्यसे सत्य अधिक है। इसकी जाँच जो कोई सोचनेकी तकलीफ उठाये वह कर सकता है। धोखेबाजी और जोर-जबरदस्ती तो बीमारियाँ हैं। सत्य और अहिंसा स्वास्थ्य है। यह तथ्य कि संसार अभीतक नष्ट नही हो गया है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि संसारमें रोगसे अधिक स्वास्थ्य है। इसलिए जो इसे समझ लें, उनको अत्यन्त प्रतिकूल स्थितियोंमें भी स्वास्थ्यके नियमोंका पालन करना चाहिए।

मेरे उपदेश और शिक्षाएँ, भावुकतामय या अव्यावहारिक नहीं हैं, क्योंकि मैं वही सिखलाता हूँ जो पुराना है, और जो कहता हूँ वही करनेकी कोशिश करता हूँ, और मेरा यह दावा है कि जो मैं करता हूँ वह हरएक आदमी कर सकता है क्योंकि मैं एक बहुत मामूली आदमी हूँ; मेरे सामने भी वही प्रलोभन हैं, मुझमें भी वही कमजोरियाँ हैं, जो हममेंसे निर्बलसे-निर्बल मनुष्यमें हैं।

दक्षिण आफ्रिकामें उस समयके निर्धारित लक्ष्यके मानदण्डसे पूरी सफलता मिली थी। जो बात छोटे समाजोंपर लागू होती है, वही बड़े समाजोंपर भी होती है, केवल उसी तरहका प्रयत्न ज्यादा बड़े पैमानेपर करना पड़ेगा।

मुझे अपनी पद्धतिमें इतना अधिक विश्वास है कि मैं यह भविष्यवाणी कर सकता हूँ कि आनेवाली पीढ़ियाँ १९२० और १९२१ सालको भारतवर्षके इतिहासमें सबसे गौरवशाली पृष्ठ समझेंगी, और उनमें भी बारडोलीकी 'कलाबाजी' सबसे महान् काम समझा जायेगा। बारडोलीके निर्णयने हिन्दुस्तानको इस लायक बनाया कि वह दुनियासे नजरें मिला सके, सिर ऊँचा रख सके। राष्ट्रके लिए यही एकमात्र सच्चा, बहादुरीका और प्रतिष्ठापूर्ण रास्ता था जिसे वह कांग्रेसके सिद्धान्तोंमें आस्था रखते हुए कर सकता था। स्वराज्यकी लड़ाई कोई छलावा तो नहीं; और अगर किसीको बिना चाहे तकलीफ उठानी भी पड़ी तो इसलिए कि वे आगके साथ खेल रहे थे।

खिलाफत-आन्दोलनमें पड़नेसे दोनों जातियाँ सबल हुई हैं और उससे एक ऐसी जन-जागृति उत्पन्न हुई है जिसके किसी और तरहसे पैदा होनेमें एक जमाना लग जाता। अगर सच्ची एकता कभी होगी, तो मेरी ही शिक्षाओंके माननेसे होगी। आजके हिन्दू-मुस्लिम झगड़े, हिन्दुओंके आपसी झगड़े और मुसलमानोंके भी अपने आपसी झगड़े जन-जागृतिके ही चिह्न हैं। आज जो हम देख रहे हैं वह तो आत्म-शुद्धिकी क्रियामें ऊपर उतरा आई मैल या गन्दगी है। लेखक महोदय चीनी साफ करनेके किसी कारखानेमें चीनीका साफ किया जाना देख आयें, तब वे मेरा मतलब ज्यादा ठीक समझ जायेंगे। यह मैल सिर्फ फेंक दिये जानेके लिए ही सतहपर आ गया है।

मुझे इसका पता नहीं कि पण्डित मदनमोहन मालवीय और लेखकके गिनाये दूसरे नेता मेरी राजनीतिसे आजिज आ गये हैं। कुछके बारेमें तो मैं जानता हूँ कि उनके साथ बात ठीक इसकी उलटी ही है। वे अगर आजिज आ गये हों, तो भी मुझे आशा है कि मेरा विश्वास उन सभी मित्रोंका मतभेद भी सह लेगा, जिनकी सम्मतिका मेरे लिए काफी-कुछ मूल्य है।

लोकमान्यके बारेमें लेखक अपना अज्ञान तब प्रकट करते हैं जब वे उनकी वे नीतियाँ बतलाते हैं जो लोकमान्यकी कभी थी ही नहीं। मैं जानता हूँ कि मेरे और उनके बीच कुछ बुनियादी मतभेद थे, मगर लेखकने जिनकी कल्पना की है, मतभेद वैसे नहीं थे। एक बात जो हमें अपने आदर्श नायकोंसे सीखनी चाहिए वह यह है कि हमें उनके कामोंकी, बेसमझे-बूझे आँख मूँदकर नकल नहीं करनी है।

हमें उनसे उनकी बहादुरी, उनका महान स्वार्थ-त्याग, उनकी परिश्रमशीलता, उनका देश-प्रेम और अपने आदर्शोंपर दृढ़ रहनेकी आन सीखनी चाहिए। हम जब बिना किसी संगतिके या यथेष्ट ज्ञानके उनके इक्के-दुक्के कामोंकी नकल करने लगते हैं, तभी भयंकर भूल करते हैं।

मेरा दावा है कि जिन समाज-सुधारोंकी मैं आज पैरवी कर रहा हूँ, और जिसमें परमात्माकी कृपासे मेरे कई प्रसिद्ध देशवासी भी मेरा साथ दे रहे हैं, उनके बिना हिन्दू-धर्मके नष्ट हो जानेका खतरा है।

लेखकके अविश्वासके बावजूद चरखा बराबर प्रगति ही करता जा रहा है। श्रमके सागरमें चरखेका काम ही मेरा योगदान है।

मेरा दावा है कि नगरपालिकाओंसे मानपत्र स्वीकार करते समय उनके बूचड़-खानोंमें होनेवाली पशु-हत्याओंका मुझपर प्रभाव नही पड़ता, बल्कि मानपत्र लेनेके बहाने मुझे उन्हें अपने सिद्धान्तका उपदेश देनेका अवसर मिलता है। और मुझे यह लिखते हुए खुशी है कि वे इसका कभी बुरा नहीं मानते और कभी-कभी तो वे मेरे विनम्र सुझाव स्वीकार भी कर लेते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१२-१९२७

२६७. पत्र: एच० ए० जे० गिडनेको

स्थायी पता: आश्रम, साबरमती
१५ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला था।[1] मेरे पास आपको कोई लम्बा सन्देश भेजनेके लिए समय नही है, लेकिन मैं यह कह सकता हूँ:

ऐंग्लो-इंडियन समाजकी मौजूदा और भावी नीति यूरोपीयोंके रूपमें मान्यता प्राप्त करनेकी नही होनी चाहिए, बल्कि उसे भारतके जन-साधारणके उद्देश्यको अपना मानकर चलना चाहिए, क्योंकि जो-कुछ भी वे है, जन-साधारणकी बदौलत हैं। यूरोपीय खूनको एक बाधा मानना चाहिए और इसका इस्तेमाल यूरोपकी सतही चीजोंकी नकल करनेमें नही, बल्कि यूरोपीयोंके अच्छे गुणोंको आत्मसात् करने और उन्हें जन-साधारणके साथ बाँटनेमें करना चाहिए। कुछ ऐंग्लो-इंडियनों द्वारा अपने-

१. अपने २५-११-१९२७ के पत्रमें कर्नल गिडनेने गांधीजीसे ऐंग्लो-इंडियन रिव्यूके लिए बड़े-दिनके अवसरपर एक सन्देश भेजनेको कहा था।

आपको एक अलग वर्ग समझने और अपने लिए विशेष सुविधाएँ प्राप्त करनेके प्रयत्न अन्तमें व्यर्थ और अशोभनीय सिद्ध होंगे।

हृदयसे आपका,

ले० कर्नल एच० ए० जे० गिडने
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १२६३९) की फोटो-नकलसे।

२६८. पत्र : आई० संन्यास राजू तथा अन्य लोगोंको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
१५ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मैंने देशभक्त वेंकटप्पैयासे आन्ध्रके उन मित्रोंके नाम प्राप्त कर लिये हैं जिन्होंने खादी कार्यके लिए खादी बोर्ड, अब चरखा संघ, द्वारा अग्रिम दिये गये धनके लिए समुचित कानूनी गारंटियाँ दी थीं। मुझे बताया गया है कि आप इन गारंटी देनेवालोंमें से एक हैं और आपसे भुगतान प्राप्त करनेमें कठिनाई हो रही है। मैं आपसे जोरदार अपील करूँगा कि आप अपना दायित्व निभायें, जो केवल कानूनी ही नहीं, नैतिक भी है। और मेरी रायमें हम लोग, जो देशकी सेवा करनेका दावा करते हैं, केवल कानूनी दायित्वसे भी अधिक नैतिक दायित्वोंसे बँधे हुए हैं। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप अपनी सम्पूर्ण सम्पत्तिमें से इस रकमके भुगतानको सबसे पहला स्थान देंगे, और अन्य मित्रोंको अपना दायित्व निभानेके लिए राजी करेंगे।

हृदयसे आपका,

(१) इच्चातूरी संन्यास राजू, टेक्कली।
(२) गडे राजमसार, बरहामपुर।
(३) उन्नव रामलिंगम् पंतुलु, म्युनिसिपल चेयरमैन, बरहामपुर।
(४) मल्लादि कृष्णमूर्ति पंतुलु, वकील, बरहामपुर।
(५) ठाकुर रामकृष्णराव[1] (जो अब काशी चले गये हैं)।

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४९) की माइक्रोफिल्मसे।

१. इनको पत्र नहीं भेजा गया था।

२६९. पत्र : वसुमती पण्डितको

वालासोर
१६ दिसम्बर, १९२७

जमनालालजी, मगनलाल आदिके सामने तुमने अपने मनकी बात कह दी, यह तुमने बहुत ही बुद्धिमानीका काम किया। जिस व्यक्तिने अपने दोष देख लिए हैं, और जिसने अपनेको बिलकुल बदल लिया है उसके सामने अपनी गुजरी जिन्दगीकी बातें कहनेमें शर्म कैसी? किन्तु पाप भी रोग है और रोग-मात्र पाप है। मुझे यदि आन्त्र-वृद्धिकी चर्चा करते हुए संकोच हो तो तुम्हें मानसिक आन्त्रवृद्धिकी चर्चा करते हुए संकोच होगा। हम जबतक रोगको पाले रहेंगे तबतक हमें शर्म लगेगी, संकोच होगा, मानसिक पीड़ा होगी। किन्तु जिस प्रकार ऑपरेशन करके रोगको जड़से निकाल फेंकनेके बाद हमारा शरीर हलका हो जाता है, उसी प्रकार हमारा मन भी हलका हो जाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२७०. पत्र : बहरामजी खम्बाताको

१६ दिसम्बर, १९२७

भाईश्री ५ खम्बाता,

जबतक भाई गोविन्दजी चेडा तुम्हारी शरणमें हैं तबतक मुझे कोई चिंता नहीं है। डा० जीवराज मेहता क्या कहते हैं, ऑपरेशन कौन करेगा आदि बातें मुझे लिखते रहना।

आशा है तुम्हारा स्वास्थ्य अब सुधर गया होगा।

तुम दोनोंको
बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]
१८–२१ कटक
२३ मद्रास

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५०११) से।
सौजन्य : तहमीना खम्बाता

२७१. गोरक्षाके बारेमें लेख

श्री वालजी देसाईने जो लेख 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' में गुजराती और अंग्रेजीमें गोरक्षापर लिखे हैं, कई पाठकोंकी ओरसे उन्हें पुस्तक रूपमें प्रकाशित करनेकी माँग आई है। उसके खर्चके लिए धूलियाके श्री रामेश्वरदासने २५ रु० देनेको लिखा है। इतनेसे ही पुस्तकको प्रकाशित करनेका खर्च निकल आनेमें सन्देह है; इसलिए पुस्तक तभी प्रकाशित की जा सकती है, जब दूसरे गोभक्त भी सहायता दें। 'नवजीवन' की आर्थिक स्थिति इसके बिना इसे प्रकाशित करनेकी नहीं है। अखिल भारतवर्षीय गोरक्षा मण्डलके पास जो धन है वह रचनात्मक कार्यके लिए ही काफी नहीं है; इसलिए शेष रकमको उसमें से पूरा करनेका साहस नहीं होता। अगर पाठकगण थोड़ी-थोड़ी सहायता दे देंगे तो पुस्तक तुरन्त प्रकाशित कर दी जायेगी। अगर कुछ नफा मिला तो वह गोरक्षा मण्डलको दिया जायेगा। प्राप्त सहायताके अनुसार यह पुस्तक गुजराती, अंग्रेजी और हिन्दीमें प्रकाशित की जायेगी।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १८-१२-१९२७

२७२. पत्र : तिरुकोट्टासुन्दरम् पिल्लेको

कटक
१८ दिसम्बर, १९२७

प्रिय तिरुकोट्टासुन्दरम्,

मैं लंकाका दौरा समाप्त करनेवाला था, उस समय आपका पत्र[1] मिला। मैं आपको पहले उत्तर नहीं दे सका क्योंकि आपका पत्र इधर-उधर हो गया था, और इसलिए मेरे ध्यानमें नहीं आ सका। मैंने मामलेकी पूरी जाँच-पड़ताल की है और इस निष्कर्षपर आया हूँ कि श्री वरदाचारीने जितनी जल्दी सम्भव हो सकता था उतनी जल्दी थैलीका धन गिना था। जब दौरे तेजीसे किये जा रहे हों उस समय थैलियोंका धन दाताओंकी उपस्थितिमें, या जिस दिन थैलियाँ मिलें उसी रात गिनना सम्भव नहीं है। दाता लोग थैलियाँ तभी देते हैं जब उन्हें दान प्राप्त करनेवालोंकी ईमानदारीमें तथा दानकी रकमको सहेजकर रखने तथा खर्च करनेकी खातिर ईमानदार

१. तिरुकोट्टासुन्दरम्‌ने गांधीजीका ध्यान पालमकोट्टामें प्राप्त थैलीमें २००० रुपयेकी कमीकी ओर दिलाते हुए उसकी जाँच करनेका अनुरोध किया था (एस० एन० १२९४०)।

व्यक्तियोंको चुन सकनेकी उसकी क्षमतामें पूरा विश्वास होता है। यह पहला मौका नहीं है जब थैलियोंमें घोषित रकमसे कम धन पाया गया है और थैलियाँ दान-प्राप्तकर्त्ताके हाथमें पहुँचें इससे पहले ही उनमें कमी हो जाती है और इसमें थैलीको सहेजकर रखनेवालेका अक्सर कोई दोष नहीं होता। अतः मैं आपको इतनी ही तसल्ली दे सकता हूँ कि आप कमीको लेकर उद्विग्न न हों। इससे आपपर कोई लांछन नहीं आता और न उन लोगोंपर आना चाहिए जो खादी संगठनके कार्यमें मेरे साथ सम्बद्ध हैं।

श्रीयुत वरदाचारी अत्यन्त विश्वस्त खादी कार्यकर्त्ताओंमें से हैं और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपको उनकी ईमानदारीपर शक करने या उनकी उद्योग-शीलतामें सन्देह करनेका कोई कारण नहीं है। मुझे अखिल भारतीय चरखा संघमें उनसे ज्यादा कर्मठ और ईमानदार कार्यकर्त्ता कोई नहीं दिखा। उन्होंने मुझे बताया है कि उन्होंने पालमकोट्टामें थैलीको गिना अवश्य था लेकिन थैली गिन चुकनेके बाद आप नहीं मिले। इसलिए श्रीयुत विश्वनाथ पिल्लेने गिननेकी जो तारीख समझी है उसमें स्पष्टतः कोई गलतफहमी हुई है। और यदि आप अब भी सन्तुष्ट न हों तो जब मैं मद्रासमें होऊँ उस समय आप मुझसे मिल सकते हैं, और मैं आपको कुछ मिनटका समय देनेकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पी० तिरुकोट्टासुन्दरम् पिल्ले
सिन्दुपूण्डुराई
तिन्नेवेल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १२६४० ए०) की माइक्रोफिल्मसे।

२७३. पत्र : गोपराजू सत्यनारायण मूर्तिको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
१९ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं आपको रामनामसे अच्छी चीज कुछ नहीं दे सकता। जब कभी आपको अपने ऊपर भूतोंके रेंगनेका भय हो, आपको रामका चिन्तन करना चाहिए, और वे ऐसे छिन्न-भिन्न हो जायेंगे जैसे सूरजके सामने कोहरा। यदि मैं आपकी जगह होता तो मैं एक स्वस्थ शरीरवाले भिखारीको भीख नहीं देता, चाहे वह ब्राह्मण हो या न हो। यदि आपका शरीर अनुमति दे तो जाड़ोंमें भी सुबह तड़के ठंडे पानीमें स्नान करना एक अच्छी चीज है। किसी अच्छे उद्देश्यसे साइकिल चलानेमें मैं कोई

हर्ज नहीं देखता। यदि आप आश्रम जाना चाहते हैं तो आपको मन्त्रीको लिखना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत गोपराजू सत्यनारायण मूर्ति
वराहगिरि हाउस
बरहामपुर

अंग्रेजी (जी० एन० ६०१०) की फोटो-नकलसे।

२७४. पत्र : रेहाना तैयबजीको

कटक[1]
११ दिसम्बर, १९२७

प्रिय रेहाना,

तुम्हारा पत्र मिला। आज मुझे बोलकर लिखाना पड़ेगा। यह पत्र एक हिच-कोले खाती हुई ट्रेनमें बोला जा रहा है जो हमें कटक ले जा रही है।

मैं जानता हूँ कि तुम हिन्दुओंके पूर्वग्रहोंका बुरा माने बिना काम करती रह सकती हो। बेचारे नौकरोंको समझ ही नहीं है। मैं समझता हूँ कि मुसलमान बहनोंमें तुमने जैसी कटुता पाई उसका उसी प्रकारकी हिन्दू बहनोंमें कोई अभाव नहीं है। इन बहनों द्वारा अपनी सहायता आप करनेके असफल प्रयत्नोंका जो विवरण तुमने लिखा है वह बहुत अच्छा है, बहुत मजेदार है और दुखद है। सम्पन्नता हममें से बहुतोंको किस तरह बिगाड़ देती है।

मैं आशा करता हूँ कि तुमने बेचारे छिपे हुए आल्फ्रेडपर जो ज्यादती की उसका उनपर कोई खराब असर नहीं हुआ। मुझे खुशी है कि तुमने "निराशाकी मनःस्थिति" से छुटकारा पा लिया है। तुम जानती हो कि 'गीता' के एक पाठकके नाते तुम्हें निराश होना ही नहीं चाहिए।

सप्रेम,

बापू

कुमारी रेहाना तैयबजी
मार्फत लाला रघुबीर सिंह
कश्मीरी गेट, दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० ९६०६) की फोटो-नकलसे।

१. यह पत्र जिसे गांधीजीने कटक जाते हुए ट्रेनमें बोलकर लिखाया था, स्पष्टतः कटकमें टाइप और हस्ताक्षरित किया गया था।

२७५. पत्र : एस० हैंडी परिवनायगमको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
१९ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। खादीके प्रति आपके उत्साहसे मुझे खुशी है। इस उत्साहको बनाये रखनेका एक-मात्र तरीका यही है कि खादीके कार्यको पूरी व्यावसायिक कार्य-कुशलताके साथ किया जाये और इसके लिए आपके पास कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो सभी प्रक्रियाओंका विशेषज्ञ हो। कोलम्बोमें आपके यहाँ श्रीयुत जयरामदास जयवर्द्धन है। यदि आप और कार्यकर्त्ताओंको प्रशिक्षित करना चाहते हैं तो शायद श्रीयुत च० राजगोपालाचारी एक या दो लोगोंको तिरुचेङ्गोडके अपने आश्रममें ले सकेंगे। मै जानता हूँ कि आप इस उत्साहको किसी प्रकार समाप्त नहीं होने देंगे।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० हैंडी परिवनायगम
जफना कालेज
वड्डुक्कोडाई
लंका

अंग्रेजी (एस० एन० १२६२२) की माइक्रोफिल्मसे।

२७६. पत्र : के० एस० कारंतको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
१९ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। निश्चय ही यदि आप अपनी पुस्तक प्रकाशित करना चाहते है तो कोई हर्ज नहीं है। शायद मेरा अपना अनुभव यह है कि जबतक और ज्यादा तथा और सही अनुभव न हो जाये तबतक ऐसी किताबें न छापना ही बेहतर है।

आपने जो विभिन्न प्रकारके आसनोंका उल्लेख किया है, वह मुझे कई पुस्तकोंमें से लिया गया मालूम होता है। मै इस प्रकारकी पुस्तकोंके लेखकोंके साथ पत्र-व्यवहार करता रहा हूँ और मैंने देखा है कि उन्होंने जो-कुछ लिखा है वह न तो अपने अनुभवसे पूरी तरह सही उतर सकता है और न ही दूसरोंके अनुभवोंसे, कि जिनपर भरोसा किया जा सके। लेकिन आपने जो-कुछ लिखा है उसमें आपको विश्वास है

तो मेरी इच्छा आपको किताब छपवानेसे रोकनेकी नहीं है। आसन और प्राणायाम अगर वास्तवमें उतने ही कारगर हैं जितना कि दावा किया गया है तो आप स्वयं उनको पूरी तरह प्रयुक्त करके क्यों नहीं देखते? मेरा इरादा खुद वैसा करनेका था लेकिन मेरी बीमारीके कारण स्वयं विशेषज्ञोंने मुझे मना कर दिया।

मैं ब्रह्मचर्य और विधवा पुनर्विवाहका एक साथ समर्थन करनेमें तबतक कोई असंगति नहीं देखता जबतक मैं ये दोनों चीजें एक ही व्यक्तिके सन्दर्भमें न रखूँ। हालाँकि मैं चाहूँगा कि सभी नौजवान ब्रह्मचारी हो और रहें, लेकिन मैं ऐसे लोगोंके विवाहका समर्थन करनेमें बल्कि उनका विवाह करवानेमें नहीं हिचकता जो आत्म-संयम बरत सकना असम्भव पाते हैं। अवश्य, जब मैं बाल-विधवाओंके विवाहका समर्थन करता हूँ तो मैं ऐसा मानकर चलता हूँ कि वे वही सुख चाहती हैं जिसकी सभी जीव कामना करते हैं, और केवल कुछ मानव ही प्रयत्नपूर्वक आत्म-संयम कर पाते हैं। ब्रह्मचर्य कोई ऐसी चीज नहीं है जो ऊपरसे थोप दी जाये और बाल-विधवाओंको अविवाहित रहनेके लिए विवश करना पाप है।

जिन पतित बहनोंका आपने जिक्र किया है, यदि उनको किसी भी जातिके आदमीसे विवाह करनेमें आपत्ति न हो तो उन्हें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए, और न उन्हें किसी भी जातिपर आपत्ति करनी चाहिए। यदि वे उपयुक्त वर नहीं प्राप्त कर सकती तो मेरा उनसे ब्रह्मचर्य पालन करनेको कहना अर्थपूर्ण है। अर्थात् यदि वे किसी जातिकी या किसी प्रान्तकी सीमा अपने ऊपर लगाना चाहें, और फिर भी शुद्ध जीवन व्यतीत करना चाहें, तो स्वभावतः उन्हें ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए; अन्यथा उन्हें किसी भी सामाजिक स्थितिका कोई भी आदमी स्वीकार कर लेना चाहिए।

आप 'सेल्फ रेस्ट्रेन्ट वर्सेस सेल्फ इंडल्जेंस' का अनुवाद छाप सकते हैं। लेकिन कृपया वैसा करनेसे पहले 'नवजीवन' के प्रबन्धकसे पूछ लें वर्ना उन्होंने कहीं किसी दूसरेको अनुमति न दे दी हो।

आपने रामकृष्ण परमहंसके बारेमें क्या लिखा है सो मैं नहीं जानता। आपकी सूचनाके बावजूद यह कहना गलत नहीं होगा कि वह अहिंसाकी साक्षात् मूर्ति थे। वह उस धर्ममें विश्वास करते थे और अपनी बुद्धिके अनुसार उनका पालन करनेका उन्होंने प्रयत्न किया। भले ही उन्होंने कुछ ऐसी चीज की, जो आज हमारे अपेक्षाकृत अधिक व्यापक अनुभवके कारण अहिंसाके सिद्धान्तके विरुद्ध प्रतीत होती है, लेकिन यह रामकृष्णके गुणोंको कम नहीं करती; क्योंकि वह अपने चारों ओर प्रचलित प्रथाओंसे बाहर हटकर नहीं सोच सकते थे। जहाँतक भोजनका सम्बन्ध है, यह सम्भव नहीं[1] है कि भावी पीढ़ियाँ पके हुए खानेको अहिंसाके विरुद्ध बतालेंगी लेकिन इसके बावजूद अहिंसाके मौजूदा प्रामाणिक ज्ञाता पका हुआ भोजन खानेकी अनिवार्यता न समझ पानेके लिए निन्दाके पात्र नहीं होंगे। कोई भी व्यक्ति पूर्ण अहिंसाका पालन नहीं कर सकता। भौतिक शरीरके चलते कुछ हिंसा लाजमी है जिससे बचा नहीं

१. "नहीं" (नॉट) शब्द भूलसे लिखा गया है।

जा सकना। इसलिए अहिंसामें विश्वास करनेवाला व्यक्ति इस हिंसाको कमसे-कमतर करनेके लिए सतत प्रयत्नशील रहता है।

यदि आप चाहते हैं कि मैं आपकी पुस्तककी पाण्डुलिपि वापस कर दूं तो कृपया मुझे बतायें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० एस० कारंत
मार्फत के० एस० अचरलू, एम० ए०
शिक्षक, दवंगेरे

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५२) की माइक्रोफिल्मसे।

२७७. पत्र: ऑलिव डोकको

स्थायी पता: आश्रम, साबरमती
१९ दिसम्बर, १९२७

प्रिय ऑलिव,

कुमारी श्लेसिनसे परिवारके बारेमे तथा तुम्हारे कार्यकलापोंके बारेमें सब-कुछ जानकर मुझे बहुत आनन्द हुआ। क्लीमेंटसे, जो अब डॉक्टर क्लीमेंट हैं, हाथ मिलानेकी, और तुमको "लीड काइंडली लाइट" गाते सुननेकी मेरी बहुत इच्छा होती है। तुमको उस दृश्यकी याद शायद न हो, मुझे है, और मेरी स्मृति इतनी स्पष्ट है कि यदि मै चित्रकार होता तो मैं उसे चित्रित कर सकता था।[1]

तुम्हारा आफ्रिकाके वन्य प्रदेशोंमें भ्रमणके लिए जाना मुझे तनिक भी आश्चर्यजनक नही लगता, क्योंकि मैं जोजेफ डोकके बच्चोंसे इससे कमकी कोई अपेक्षा ही नही करता।

बोलकर लिखाये गये इस पत्रके लिए तुम मुझे क्षमा करोगी। मेरे सामने विकल्प था कि लिखना टाल दूं या बोलकर लिखाऊँ। मैंने ज्यादा बेहतर चुनाव किया है। कृपया कभी-कभी लिखती रहो।[2]

तुम सबको प्यार सहित,

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२२७) से।
सौजन्य: सी० एम० डोक

१. देखिए खण्ड २९, पृष्ठ १३०-३१।
२. ऑलिव डोकने इस पत्रकी प्राप्ति-सूचना २ मार्च, १९२८को दी थी (एस० एन० ११९६८)।

२७८. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

[illegible]

मौनवार [१९ दिसम्बर, १९२७][1]

बहनो,

ईश्वरकी इच्छा होगी तो इसके बाद तुम्हें पत्र लिखनेके लिए एक ही सोमवार रहेगा।

मीराबहनका पत्र मिल गया। तुमने पोशाकके विषयमें अधिक चर्चा करनेके लिए लिखा है। उसपर अभी तो चर्चा नहीं करूँगा, परन्तु जब हम मिलें तब जरूर प्रश्न करना। भीतर ही भीतर जबतक शृंगारका मोह बाकी है, तबतक देखा-देखी कुछ भी फेरबदल या त्याग करना व्यर्थ है। परन्तु जब मोह उतर जाये और फिर भी मन उस तरफ जाता हो, तब तो देखादेखी, शर्मसे या किसीभी बहानेसे मोहको मारना चाहिए और उचित परिवर्तन कर लेना चाहिए। मोहादि शत्रु हमें इतना तंग करते हैं कि जहाँसे भी उचित मदद मिल जाये, उसका उपयोग करके हमें उनसे अपनी रक्षा करनी चाहिए। यह सब उनके लिए लिख रहा हूँ जो सच्चे हैं और सच्चे बनना चाहते हैं। 'गीताजी' में एक जगह कहा गया है कि जो ऊपरसे संयम करके मनमें विषयोंका सेवन करता है, वह मूढात्मा मिथ्याचारी है। यह वाक्य पाखण्डीके लिए है। वही 'गीताजी' सच्चा प्रयत्न करनेवालेके लिए कहती है कि प्रमाथी इन्द्रियोंका बार-बार संयम करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६७४) की फोटो-नकलसे।

२७९. पत्र : नारणदास गांधीको

मौनवार [१९ दिसम्बर[2]] १९२७

चि० नारणदास,

इसके साथका पत्र पढ़कर उनका उत्तर भिजवाना और फिर यही पत्र उत्तर देनेके लिए भाई फूलचन्दके पास भिजवा देना। भाई फूलचन्द मुझे मूल पत्र भी भिजवा दें ताकि मैं उत्तर दे सकूँ। उत्तर मद्रासके पतेपर देना।

१. पोशाक और शृंगार सम्बन्धी चर्चाके आधारपर तथा इस तारीखको गांधीजीके [illegible] ठहरनेके आधारपर भी।

२. १९२७ में गांधीजी २३ दिसम्बरको मद्रास पहुँचे थे।

अब तो पुरुषोत्तम बिलकुल स्वस्थ हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७१३) से।
सौजन्य: राधाबहन चौधरी

२८०. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

कटक
२० दिसम्बर, १९२७

प्रिय चार्ली,

ये कागजात तुम्हारे पढ़ने और विचार करके मुझे यह बतानेके लिए हैं कि क्या सुझावमें कुछ तत्त्व है।

हालाँकि डाक्टरोंका कहना है कि रक्तचाप ज्यादा है, लेकिन मुझे उसके किसी प्रभावका पता नहीं चलता। और तीन डाक्टरों तथा तीन यन्त्रोंने कल विभिन्न अंक सूचित किये — २००, १८०, १६०। जब डाक्टरोंमें ही मतभेद हो तो कोई क्या करे? कुछ भी हो, तुम्हें चिंता नहीं करनी चाहिए।

सप्रेम,

मोहन

अंग्रेजी (जी० एन० २६२६) की फोटो-नकलसे।

२८१. पत्र: एम० फ्रांसिस एच० ल्यूकको

स्थायी पता: आश्रम, साबरमती
२० दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। मैं इससे बेहतर कोई तरीका नहीं सोच पाता कि आप किसी अस्पतालसे सम्बद्ध हो जाइए जहाँ आप आसानीसे उन लोगोंके सम्पर्कमें आ सकेंगी जो आपके ध्यानमें हैं।

मुझे आपका आश्रममें आना याद है। मैं इस समय यात्रा कर रहा हूँ और जैसी फोटो आप चाहती हैं वैसी कोई फोटो मेरे पास नहीं है। आपको शायद पता

१. २६-९-१९२७ का; पत्रलेखिका एक शिक्षित अंग्रेज महिला थीं। उन्होंने दीन-दुखी और अस्पृश्य लोगोंकी सेवा करनेकी इच्छा प्रकट की थी।

न हो कि मैंने फोटो कभी नहीं खिचवाई, लेकिन हां, बाजारोंमें मेरे गहुत गोंगे गये बहुतसे फोटो उपलब्ध हैं।

हृदयसे आपका,

एम० फ्रांसिस एच० ल्यूक
द मैट्रन्स आफिस
सेंट थॉमस हास्पिटल, एस० ई० १
लन्दन

अंग्रेजी (एस० एन० १२५५४) की फोटो-नकलसे।

२८२. पत्र : एस० एन० घोषको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२० दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं 'यंग इंडिया' के मैनेजरसे आपका नाम निःशुल्क सूचीमें रखनेको कह रहा हूँ।

वहाँ आपके झगड़ेके बारेमें मैं कुछ नहीं लिख रहा हूँ क्योंकि क्या किया जा सकता है इसके बारेमें मैं स्वयं असमंजसमें हूँ। यदि आप 'यंग इंडिया' के नियमित पाठक हैं तो आपने देखा होगा कि मैं एक भी फाजिल शब्द नहीं लिखता। मैं बहुत-सी चीजोंके बारेमें असहाय अनुभव करता हूँ और इसलिए उन्हें छोड़ देता हूँ। आप विश्वास करें कि अगर मैं नहीं लिख रहा हूँ तो उसका कारण यह नहीं है कि मेरी मदद करनेकी इच्छा नहीं है।

हृदयसे आपका,

श्री एस० एन० घोष
द इंडिया फ्रीडम फाउंडेशन
७९९ ब्रॉडवे, न्यूयॉर्क (यू० एस० ए०)

अंग्रेजी (एस० एन० १२५५५) की फोटो-नकलसे।

२८३. पत्र : हेलेन हॉसडिंगको

कटक
(उड़ीसा)
२० दिसम्बर, १९२७

मुझे आपके सब पत्र मिले है जिनका इधर बराबर यात्रा करते रहनेके कारण उत्तर नही दे सका। और न मेरे पास आपको इसके सिवा कोई उपयोगी बात बतानेका समय है कि मै किसी-न-किसी प्रकार चल रहा हूँ हालांकि डाक्टर लोग मुझसे कहते है कि मेरा रक्तचाप बढ़ रहा है। मै अगले वर्षके आरम्भमें आश्रम पहुँचनेकी आशा करता हूँ। मै आपसे किसी भी दिन यह सुननेकी अपेक्षा करता हूँ कि भारतसे आप जो शरीरकी दुर्बलताएँ ले गई हैं उन्हें आपने डैन्यूबमें फेंक दिया है और आपकी चहचहाहट वैसी ही जोरदार है जैसी कि वह इस दुखसे भरे प्रदेशमें आनेसे पहले थी।

कुमारी हेलेन हॉसडिंग
हर्रांशिग ए० एमरशी
बी मिनचेन (जर्मनी)

अंग्रेजी (एस० एन० १२५५६) की फोटो-नकलसे।

२८४. भाषण : कटकके खादी कार्यकर्त्ताओंके समक्ष[1]

२० दिसम्बर, १९२७

१

इस संस्थाके संचालक उतने ही सचेत और अपनी संस्थाके हित-चिन्तक होने चाहिए, जैसे कि बैंक आफ इंग्लैंडके हैं। यह बैंक दुनियाका सबसे बड़ा सहकारी-संघ है। बल्कि हमारे संचालकोंको उस बैंकके संचालकोसे भी अधिक निःस्वार्थ होना चाहिए, क्योंकि खादी संघ तो स्वार्थके लिए नहीं बल्कि गरीबोंकी सेवाके लिए ही खोला जायेगा। उनकी योग्यता इसीमें होगी कि वे मामूलीसे-मामूली बातपर भी खूब ध्यान दें, चरखा-शास्त्रमें निष्णात बनें। जबतक ये चरखा-शास्त्रके अच्छे जाननेवाले और योग्य संगठनकर्त्ता नहीं बनते, वे कुछ भी नही कर सकेंगे।

आपके कुछ सवालोसे पता चलता है कि आप कितने अव्यावहारिक है। आप पूछते है कि क्या मैं आपके लिए लंगोटी पहिनना और एक खास तरहका आहार करना भी जरूरी कर दूंगा। नहीं भाई, आपके कपड़े और भोजनका ढँग निश्चित नहीं करना

१. ये भाषण, १८, १९ और २० दिसम्बर, १९२७को दिये गये थे। यहाँ उनको अन्तिम भाषणकी तिथिके अन्तर्गत प्रकाशित किया जा रहा है। इस सम्बन्धमें देखिए "भाषण: राजापाल्यम्‌के खादी वस्त्रालयमें", ४-१०-१९२७ भी।

चाहता। मैं तो यही चाहता हूँ कि आप इस आन्दोलनकी मूल भावनाको समझें और अपना जीवन उसीके अनुरूप बनायें।

आप लोगोंमें से जो उड़ीसाकी सेवा करना चाहते हैं, उनसे मैं यह कहूँगा कि आप उड़ीसाको सारे भारतवर्षका खादी-भण्डार बना दीजिए। जबतक आप प्रतिद्वन्द्विताकी भावनाको बिलकुल समाप्त नहीं कर देते और आप सब मिलकर केवल खादी तैयार करनेमें नहीं लग जाते, तबतक यह नहीं हो सकता। खादी-खादीमें प्रतिद्वन्द्विता कैसी? मैं यह बात समझ सकता हूँ कि दूसरे प्रान्तोंसे खादी मँगानेका आप विरोध करें, मगर उड़ीसाके ही भिन्न-भिन्न हिस्सोंमें तैयार की जानेवाली खादीमें तो आपको कोई फर्क नहीं करना चाहिए। आप सब मिलकर काम करने और खादीकी बिक्रीको समन्वित करनेमें लग जाइए।

एक दिन मैंने कुछ नवयुवकोंको खेतीके विकासकी बातें करते सुना था। अगर कोई मेरे सामने सिद्ध कर दे कि खेतीका सुधार करनेसे सभी गरीबोंकी गरीबी दूर हो जायेगी और यह योजना व्यावहारिक है, और देशके करोड़ों लोगोंका अभाव दूर करनेके लिए इसका उपयोग किया जा सकता है, तो मैं चरखेके बारेमें अपना मत बदल दूँगा। मगर मैं आपको सावधान करता हूँ कि आजकी परिस्थितिमें आपको इसमें सफलता नहीं मिल सकती। मैं एक आदर्श कृषि-फार्म बनानेकी कोशिश कर रहा था। मेरे कुछ ऐसे नासमझ मित्र भी हैं जो प्रयोग करनेके लिए मुझे रुपये दिया करते हैं। और मैं उन प्रयोगोंपर पानीकी तरह रुपया बहा देता हूँ। मैंने स्वर्गीय सर गंगारामसे भी बातें करके उनके सामने अपने फार्मोंके बारेमें पूरी जानकारी रखी, मगर वे सभी हमारी खेतीको सुधारनेकी कोई व्यावहारिक तैयार योजना नहीं बतला सके। आप गाँवोंमें जाइए और वहीं अपनी धूनी रमा दीजिए, मगर गाँववालोंके मालिक मत बनिए, उनके विनम्र सेवक बनिए। आप अपना नित्य-प्रतिका जीवन ऐसा बनाइए कि उसीको देखकर वे समझ लें कि उनको क्या करना है और वे अपने जीवनका तौर-तरीका कैसे बदल सकते हैं। केवल भावनासे ही कुछ न होगा, उसी प्रकार जिस प्रकार कि भाप जबतक नियंत्रणमें नहीं लाई जाती, तबतक वह कोई काम नहीं कर पाती; नियन्त्रित होकर ही वह एक बड़ी शक्ति बन पाती है। मैं चाहता हूँ कि आप गाँवोंमें ईश्वरका सन्देश लेकर जायें, भारतकी जख्मी आत्माके लिए मरहम लेकर जायें।

२

आप इसकी जरा भी फिक्र न करें कि आपकी बनाई खादीका क्या होगा। अगर जरूरत पड़े तो उसकी बिक्रीका भार मैं ले लूँगा। आप तो जितना भी उत्पादन कर सकें, करते जायें। खद्दर बनानेके लिए उड़ीसासे बढ़कर अन्य कोई क्षेत्र नहीं हो सकता। खद्दरके धंधेको तो केवल एक उड़ीसा ही उपयोगी धन्धा साबित कर सकता है। मुझे तो इसकी व्यावहारिकताका विश्वास १९०८ में ही हो गया था, मगर आपको उसे कार्य रूपमें साबित कर दिखलाना चाहिए। दुनियाको दिखला दीजिए कि हम खादीके बिना नहीं जी सकते। आप मुझे देखकर अपना विश्वास

मत बनाइये, बल्कि स्वतः अपने मनमें इतना पक्का विश्वास पैदा कीजिए कि गांवोका खयाल भले बदल जायें, मगर आप इसीपर डटे रहें। लोगोंको आप दिखला दीजिए कि अगर पेट-भर खाना चाहिए तो उन्हें उसके लिए काम करना होगा, और वह काम केवल आप ही और वह भी अपनी ही शर्तोंपर दे सकते है। लोगोंकी मात्र देशभक्तिपर ही आप बराबर निर्भर नही कर सकते। आपको इतनी अच्छी खादी बनानी पड़ेगी, जो अन्य सभी किस्मके कपड़ोंसे ज्यादा अच्छी हो।

याद रखिए कि जबतक लोगोंको यह विश्वास नही होता कि वे खादीके बिना जी नहीं सकते और खादीमें ही उनकी मुक्ति है, तबतक आपको सफलता मिलनेसे रही। आप समझ लीजिए कि मैं यह आन्दोलन कुछ विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार-भर करनेके लिए नही चला रहा हूँ, बल्कि यह तो हमारे जीवनकी एक जरूरी शर्त है और यदि हमें अपना अस्तित्व बनाये रखना है तो उसके लिए अपनी जरूरतका कपड़ा आप तैयार करनेका यह एक निमित्त है।

आप गाँवोमें जाइए। गाँववालोंमें ही हिलमिल जाइए। चरखतियाकी पाठशालाके अध्यापकने जो कहानी बतलाई थी उससे आँखें खुल जाती हैं। वह एक आदर्श गाँव था। उसके सामने काम करनेके लिए कितना व्यापक क्षेत्र पड़ा था! आप गाँवकी पाठशालाका काम संभाल सकते हैं, बच्चोंको अपने साथ एकप्राण बना सकते हैं और फिर बच्चोंके जरिये गाँवोंमें काम कर सकते हैं। उनसे अपनेको अलग मत समझिए। उनके सुख-दुःखमें शामिल होइए। उनसे पूछिए कि वे अपने परिवारके लोगोको कलकत्ताकी उन रोगग्रस्त खोलियोंमें रहने क्यों भेजते है, उनसे गाँवमें ही काम क्यों नहीं कराते? उनके घरोमें जाइए; उन्हें कातना सिखलाइए, बुननेका ढँग बतलाइए। उनके रहन-सहनके दोष उन्हें बताइए। सफाईके प्राथमिक नियम उन्हें बतलाइए। इसी प्रकार रचनात्मक ढँगकी कताईसे स्वराज्य मिलेगा, इसी भूमिपर चरखा अपना सुन्दरतम संगीत सुना सकता है। आप हर एक गाँवको स्वयं-सम्पूर्ण बनाइए, हर घरकी जरूरतका कपड़ा वहींपर कतवाकर बुनवाइए। मगर इसके अलावा भी आपके पास कुछ खादी बच ही जाये तो आप मुझसे अभी बिक्रीकी गारंटी लिखवा लीजिए। अगर वह खादी ठीक हुई तो मैं उसे बेच दूँगा। याद रखिए कि वही कार्यकर्त्ता योग्य गिना जायेगा जो जहाँ रहता है, उस गाँवको पूर्ण स्वावलम्बी बना डाले। मगर ये सब बातें तो आदमी-आदमीपर निर्भर करेगी। इसके लिए प्रेमकी पाठशालाको छोड़कर और कोई विद्या दरकार नहीं। क्या हमारे पास सच्चे, ईमानदार, वीर और उत्कट देश-प्रेमसे प्रेरित कार्यकर्त्ता मौजूद हैं?

३

एक चीज जो मैं इस विपत्ति-ग्रस्त देशके दोहरी विपत्तिसे पीड़ित आप लोगोंके मनमें उतार देना चाहता हूँ, वह यह है कि आप अपने-आपको आसपासकी पीड़ित मानवताके इस महासमुद्रमें बिलकुल गर्क कर दीजिए। उनसे थोड़ा भी अलगाव शेष मत रहने दीजिए। मानवता चूँकि पीड़ित है, इसलिए समस्या काफी सरल है। आपका मार्ग सीधा है, संकीर्ण भले ही हो। और आपको यह कार्य उचित और

विनम्र निवेदनकी भावनासे करना चाहिए। हम लोग यहाँ तीन दिनसे प्रार्थना करते आ रहे हैं। प्रार्थनासे मनको शान्ति मिलती है, एक ऐसा बल और ऐसी सान्त्वना मिलती है जो अन्य किसी तरीकेसे नहीं मिल सकती; परन्तु प्रार्थना हृदयसे निकलनी चाहिए। प्रार्थना जब हृदयसे नहीं निकलती, तो वह सिर्फ ढोल पीटने जैसी होती है, या कहिए कि गलेसे निकली आवाज-मात्र होती है। परन्तु जब वह हृदयसे निकलती है, तो वह विपत्तिके पहाड़ोंको पिघला सकती है। जो भी चाहे इस बलकी परीक्षा ले सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-१२-१९२७

२८५. पत्र : देवी वेस्टको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२१ दिसम्बर, १९२७

मुझे तुम्हारा पत्र मिला।[1] बाढ़से[2] जबर्दस्त हानि हुई है, लेकिन इसमें बाढ़-पीड़ित लोगोंके सर्वोत्तम गुण भी प्रकट हुए हैं। सहसा ही एक संगठन खड़ा हो गया, जिसने बड़ी दृढ़तापूर्वक और उतनी ही सफलतापूर्वक इस भयंकर संकटका मुकाबला किया।

इधर कुछ समयसे कुमारी श्लेसिन मुझे नियमित रूपसे लिखती रही है, और अवश्य ही वह हमेशाकी तरह धुनी और भली है। आजकल एल्बर्ट[3] कभी नहीं लिखता। फिर भी मुझे उसके समाचार मिले थे, और मैं जानता हूँ कि वह तथा उसका परिवार खूब अच्छी तरह हैं। मणिलाल और उसकी पत्नी मुझे नियमित रूपसे लिखते रहे हैं।

मैं काफी अच्छा हूँ। शायद मैं पहले जैसा स्वस्थ तो कभी नहीं हो सकूँगा, लेकिन ईश्वरने जो-कुछ शक्ति अभी भी मुझमें रहने दी है उसके लिए मैं उसका कृतज्ञ हूँ।

मुझे आशा है कि तुम नियमित रूपसे 'यंग इंडिया' और 'इंडियन ओपिनियन' पा रही हो। अगर नहीं, तो कृपया मुझे सूचित करो। प्रभुदास पहलेसे काफी बेहतर है। वह अपने पिताके साथ एक पहाड़ी स्थानपर है। और लोग, जिन्हें तुम जानती हो, मजेमें हैं। अगर तुमने फोटो खिंचाई हो तो मुझे एक जरूर भेजो। मुझे विश्वास है कि आश्रममें जो लोग तुम्हें जानते और खूब प्यार करते हैं, वे यदि तुम्हें प्रत्यक्ष नहीं तो तस्वीरमें ही देखकर प्रसन्न होंगे। जैसा कि तुमने देखा होगा, मैंने लंका

१. अपने २-१०-१९२७ के पत्रमें देवी वेस्टने गांधीजीको उनके जन्म-दिवसपर बधाई दी थी।

२. जुलाई १९२७ में गुजरातमें। देखिए खण्ड ३४।

३. ए० डब्ल्यू० वेस्ट; देवी वेस्टके भाई।

सहित दक्षिण भारतका बड़ा श्रमसाध्य दौरा किया है। मैं नववर्ष दिवसपर या उससे पहले आश्रम पहुँचनेकी आशा करता हूँ।

तुम्हारा,

कुमारी देवी वेस्ट
२३, जॉर्ज स्ट्रीट
लॉथ, लिंक्स

अंग्रेजी (एस० एन० १२५४३) की फोटो-नकलसे।

२८६. पत्र : निर्मलचन्द्र डे को

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२१ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं ठीक देख सकता हूँ कि जबतक आपकी ईश्वरमें जीवन्त आस्था न हो, आप पापपूर्ण विचारोंसे छुटकारा नहीं पा सकते, पापपूर्ण कार्योंसे तो और भी नहीं। वैसी आस्था प्राप्त करनेका जो एकमात्र तरीका मैं आपको बता सकता हूँ वह यह है कि आप मनुष्यकी तुच्छताको और इस प्रकार स्वयं अपनी तुच्छताको समझें और आग्रहपूर्वक विश्वास करें . . .[1], यह मानकर कि एक कोई "हस्ती" है जो पूर्ण है और जो संसाररूपी अद्भुत रचनाके लिए उत्तरदायी है।

आपके साथ बुराईके उद्भवके बारेमें बहस करनेकी मुझमें क्षमता नहीं है। मेरे लिए इतना ही काफी है कि मैं नम्रतापूर्वक बुराईको बुराईके रूपमें समझ लूं और उससे संघर्ष करूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि ईश्वर इस संघर्षमें सदैव मेरी सहायता करता है। विजय तो प्रयत्न करनेमें है। ईमानदारीके साथ एक गुरु पाने और प्रयत्न करनेके लिए शुद्ध जीवन व्यतीत करना जरूरी हो जाता है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत निर्मलचन्द्र डे
इंजीनियरिंग कालेज होस्टल, शिवपुर
पो० आ० बोटेनिकल गार्डन
हावड़ा

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५३ ए०) की माइक्रोफिल्मसे।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ छूटा हुआ है।

२८७. पत्र : विश्वम्भर सहायको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२१ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे दुःख है कि आपका पत्र आज ही मेरे हाथमें आया। अगर मेरी याददाश्त ठीक है तो मैंने अपनी 'गाइड टु हेल्थ'[1]को हिन्दी या उर्दूमें प्रकाशित करनेका एकाधिकार किसीको नहीं दिया है। मुझे मालूम है कि बहुतसे लोगोंने उस पुस्तक का अनुवाद भारत और यूरोप, दोनों जगह प्रकाशित किया है। आपको मेसर्स एन० डी० सहगल ऐंड सन्स, लाहौरसे मेरा अनुमतिपत्र दिखानेको कहना चाहिए, और यदि ऐसा कोई अनुमतिपत्र आपको दिखाया जाये तो कृपया उसकी एक प्रति पुष्टिके लिए मुझे भेजिए।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत विश्वम्भर सहाय
प्रेम साहित्य भण्डार
मेरठ

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५४) की माइक्रोफिल्मसे।

२८८. पत्र : देवीचन्दको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२१ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे दुख है कि आपके पत्रका पहले उत्तर न दे सका। आपकी पृच्छा बिलकुल उचित है। जबतक मैं विश्वासभंग न करूँ तबतक मैं खादीके लिए जो धन एकत्र करता हूँ या जो धन उस निमित्त भेजा जाता है उसे खादीपर ही खर्च किया जाना चाहिए। लेकिन मैं अस्पृश्योंके लिए जरूर धन एकत्र करता हूँ और मुझे मिलता भी रहता है, जो केवल उनके उत्थानपर ही खर्च किया जाता है। मैं विभिन्न

१. आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान; देखिए खण्ड ११ और १२।

गतिविधियोंके लिए इस प्रकार धन एकत्र करता हूँ और उसपर मेरा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष नियन्त्रण रहता है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत देवीचन्द
अध्यक्ष, दयानन्द दलित उद्धार मण्डल
होशियारपुर, पंजाब

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५५) की माइक्रोफिल्मसे।

२८९. पत्र: मणीन्द्रचन्द्र रायको

स्थायी पता: आश्रम, साबरमती
२१ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मैं आपके पत्रका उत्तर इससे पहले देनेमें असमर्थ रहा हूँ। मैं यह सोचे बगैर नहीं रह सकता कि आपकी धारणा आपके इस तर्कसे प्रभावित है कि आत्मविकासके लिए मनुष्य-जातिको कोई प्रयत्न नही करना चाहिए। आप कहेंगे कि सजा पाये हुए निर्दोष कैदीको अपनी रिहाईके लिए प्रयत्न नहीं करना चाहिए। मैं एक कैदीमें और उस असहाय निर्दोष लड़कीमें कोई भेद नही देखता जिसे एक ऐसे आदमीके हवाले कर दिया जाये जिसे वह बिलकुल नही जानती। आपके तर्क पहले तर्कके अनुरूप ही प्रतीत होते है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत मणीन्द्रचन्द्र राय
हेड मास्टर
बरहामपुर नेशनल स्कूल
बरहामपुर, डाकखाना खगरा

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५६) की माइक्रोफिल्मसे।

२९०. पत्र : टी० के० रामुन्नी मेननको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२१ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे दुःख है कि मैं इससे पहले आपके पत्रका उत्तर नहीं दे सका।

अगर आपके लिए सम्भव हो तो मैं चाहूँगा कि जब मैं मद्रासमें होऊँ उस समय आप मुझसे मिलें। मैं नहीं चाहता कि आपकी जो नौकरी है उसे आप जल्दबाजीमें छोड़ दें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत टी० के० रामुन्नी मेनन
कोऑपरेटिव अफसर
पोस्ट पुथियारा
(मलाबार)

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५७) की माइक्रोफिल्मसे।

२९१. पत्र : प्यारेलालको[1]

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२१ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मैं आपके पत्रका उत्तर पहले नहीं दे सका। मैं नहीं समझता कि आपको एक योजनाकी उतनी जरूरत है जितनी उपयुक्त कार्यकर्त्ताओंकी, और चूँकि आपके पास कुमारी जेमिनर और बाबू जुगलकिशोर हैं, अतः मेरी समझमें आपके लिए उनकी सलाहसे चलना सबसे अच्छा है। एक गलतीसे बचनेको मैं आपसे कहूँगा, और वह यह कि विधवा-गृहको मात्र एक साहित्यिक स्कूल न बना दें जिसमें विधवाओंको खुद कुछ करना ही न पड़े। मैं तो विधवाओंको कुछ औद्योगिक प्रशिक्षण देकर उन्हें

१. एक लोकहितैषी जिनकी १९३३ में मृत्यु हो गई।

आत्म-विश्वासी और अन्ततः आत्म-निर्भर बनाना चाहूँगा। मैं उनमें वर्ग-भावना भी उत्पन्न नहीं होने दूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री प्यारेलाल
नं० २, मेटकाफ हाउस रोड
दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५८) की माइक्रोफिल्मसे।

२९२. हमारा और उनका कलंक

उड़ीसाका दौरा बहुत दिनोंसे मुल्तवी चला आता था, और जब उसका अवसर आया भी तो मेरे सन्ताप और मेरी जिल्लतको बेहद बढ़ा देनेके लिए ही। नजदीकसे नजदीकके रेलवे स्टेशनसे ३१ मील दूर, बोलगढ़में, मैं ११ तारीखको दीनबन्धु एन्ड्रयूजके साथ बैठा बातें कर रहा था। उसी समय सिर्फ एक मैली-सी लंगोटी पहने कमर झुकाये एक आदमी झुकता हुआ मेरे सामने आया। उसने जमीनसे एक तिनका उठा कर मुँहमें डाल लिया, और मेरे आगे साष्टांग लोट गया; फिर उठकर उसने प्रणाम किया, तिनका निकालकर बालोंमें खोस लिया और जाने लगा। यह दृश्य देखते हुए मैं पीड़ासे तड़प रहा था। यह खतम होते ही मैंने किसी दुभाषियेको चीखकर पुकारा और इस भाईको बुलाकर बातें करने लगा। वह बेचारा अछूत था। बोलगढ़से छः मीलपर रहता था। बोलगढ़में लकड़ी बेचने आया था। वहाँ आनेपर मेरे बारेमें सुनकर मुझे देखने चला आया था। मेरे पूछनेपर कि मुँहमें तिनका क्यों लिया था, उसने कहा, "आपका आदर करनेके लिए।" शर्मसे मैंने सिर झुका लिया। इस 'आदर' की कीमत मुझे बहुत भारी, असह्य जान पड़ी। मेरी हिन्दू-भावनाको गहरी ठेस लगी थी। मैंने कहा, "मुझे कुछ दोगे?" वह बेचारा एक पैसेके लिए कमर टटोलने लगा। मैंने कहा, "मुझे तुम्हारे पैसे नहीं चाहिए, पर मैं उससे भी अच्छी चीज माँगता हूँ।" उसने कहा, "दूँगा।" मैंने उससे पूछ लिया था कि वह शराब पीता था, मुरदार मास खाता था, क्योंकि यह तो उनका रिवाज था।

"मैं तुमसे यह माँगता हूँ कि तुम जबान दो कि दुनियामें किसी आदमीके लिए आगेसे मुँहमें तिनका नहीं दूँगा, यह आदमीके आत्म-सम्मानके लायक काम नहीं है; फिर कभी शराब नही पीऊँगा, क्योंकि वह आदमीको पशु बना देती है; मुरदार मांस नहीं खाऊँगा, क्योंकि यह हिन्दू-धर्मके विरुद्ध है और कोई भी सभ्य आदमी कभी मुरदार मांस नही खायेगा।"

उस गरीबने जवाब दिया, "मगर शराब न पीऊँ और मुरदार मांस न खाऊँ तो बिरादरीवाले मुझे जातिसे निकाल देंगे।"

"तब जात-बाहर होनेकी तकलीफ सहो, और जरूरत पड़े तो गाँव भी छोड़ दो।"

इस पददलित गरीब आदमीने इसका वचन दे दिया। अगर वह अपनी बात पर कायम रहा हो, तो उसकी यह भेंट, मेरे धनी देशवासियोंके दिये धनसे कहीं अधिक मूल्यवान होगी।

यह अस्पृश्यता हमारा सबसे बड़ा कलंक है। इसकी जलालत दिनों-दिन बढ़ती जाती है।

मगर यह अविस्मरणीय घटना तो उस भारी शर्म और दुःखका एक अंश-भर थी। (१९१६ में[1]) चम्पारनके बाद मैंने फिर कभी यह मृत्यु-जैसा सन्नाटा नहीं देखा था, जो बाणपुरके जरिये उड़ीसामें प्रवेश करनेपर मैंने देखा है। शायद उड़ीसाकी शान्ति चम्पारनकी शान्तिसे भी बुरी है। वहाँके किसानोंके बीच थोड़े ही दिनोंतक रहनेके बाद उनमें उत्साह आ गया था। मगर उड़ीसामें इतनी जल्दी उत्साह आनेमें मुझे शंका है। मुझे बताया गया है कि जमींदारों, राजाओं और स्थानीय पुलिसने किसानोंको मेरे पास आनेसे बहुत डरा दिया है। मैं तो इस विश्वासमें फूला हुआ था कि अब जमींदारों, राजाओं और छोटेसे-छोटे पुलिस अफसरोंने मुझसे डरना छोड़ दिया है। मगर यहाँ आकर मेरा खयाल बदला है। कमजोरीके कारण खुद इधर-उधर घूमनेमें असमर्थ होनेके कारण मैंने मित्रोंको लोगोंके बीच भेजा और इसके कारणका पता लगवाया। वे लोग यह खबर लाये कि लोगोंको कहा गया है कि गांधीजीके पास मत जाओ। उनके सम्मानमें किये गये किसी समारोहमें शामिल मत हो, नहीं तो सजा मिलेगी। ऐसी सूचनाएँ दूसरे प्रान्तोंमें भी दी गई हैं, मगर ऐसे साधारण दिनोंमें उनका कहीं कोई असर नहीं पड़ा है। उड़ीसाके किसान ऐसे मालूम पड़े जो सदा भयभीत रहते हैं और इसलिए उन्हें सहज ही विचलित किया जा सकता है।

यह ऐसा कलंक है जो हमारे और हमारे विदेशी शासकों, दोनोंके माथेपर है। यह सच है कि राजा और जमींदार और पुलिसके छुटभैये, सभी हमारे अपने ही भाई, अपने ही हाड़-मांस हैं। मगर इस भयके, डरके मूल कारण तो हमारे शासक हैं। उनके शासनका आधार ही है 'भय'। उन्होंने अपनी प्रतिष्ठाके नामपर हमारे बड़ेसे-बड़े लोगोंको भी किसी-न-किसी तरह झुकनेपर लाचार किया ही है। जहाँ यह पस्ती पहले ही मौजूद थी वहाँ उसे उन्होंने और ज्यादा बढ़ा दिया है। उन्हें किसानोंमें व्याप्त इस घृणित भयकी मौजूदगीका पता था। मगर जहाँ कहीं उन्होंने अपने राज्य-के हितके नामपर उसे और उसके कारणोंको अपनी छातीसे नहीं लगाया, वहाँ उसे दूर करनेका भी कोई प्रयत्न नहीं किया। इसलिए वे इन दुखद दृश्योंके लिए प्रत्यक्ष रूपसे दोषी भले न हों, तो भी इसमें उनका बहुत बड़ा हाथ है, इस इल्जामसे तो वे बरी नहीं हो सकते।

मगर हमारा कलंक तो और भी बड़ा है। अगर हम सबल, स्वाभिमानी और निडर होते तो फिर विदेशी शासक कुछ बुराई कर ही नहीं सकते थे। जो लोग डरपोक

१. गांधीजी यहाँ भूलसे १९१७ की जगह १९१६ लिख गये हैं।

होते हैं, सिर्फ वे ही दूसरोंसे डरते हैं। और इसे तो कबूल करना ही होगा कि अंग्रेजोंके आनेके बहुत दिन पहलेसे हम अपने जमींदारों और राजाओंसे डरनेके आदी थे। वर्तमान शासकोंने तो सिर्फ उसीको एक विधिवत शास्त्र-सा बना लिया है, जो पहले भी न्यूनाधिक स्थूल रूपमें मौजूद था ही। इसलिए उड़ीसाके कार्यकर्त्ताओंको लोगोंको सिखलाना है कि इस भीरुताको, जो करीब-करीब कायरता ही है, छोड़ दो। और यह जमींदारों, राजाओं या पुलिसवालोंको गालियाँ देनेसे नहीं होगा। ये लोग तो जब देखते हैं कि किसानोंने अपनी नामर्दीकी आदतें भुला दी हैं, तब वे खुद दबने लगते हैं या कभी-कभी दोस्त भी बन जाते हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २२-१२-१९२७

२९३. कोई चीज तुच्छ नहीं है

एक मित्रने मुझे चरखेके विषयमें एक समालाप भेजा है। मुझे इस कहानीमें कोई कथा-वस्तु नहीं मिली, इसलिए मैं उसे नहीं छाप रहा हूँ, लेकिन मैं निम्नलिखित शिक्षाप्रद छन्द खुशीके साथ छाप रहा हूँ,[1] जिन्हें लेखकने उद्धृत किया है और एक छोटी लड़कीके द्वारा कहलाया है जो अपने छोटे भाईसे कह रही है कि हालांकि वे छोटे हैं लेकिन उन्हें गरीबोंकी खातिर चरखा चलाना चाहिए:

ये सुन्दर छन्द बड़े लोगोंपर भी समान रूपसे लागू होते हैं जो इस काल्पनिक कहानीके छोटे बच्चोंसे बेहतर बातें नहीं करते। हम यज्ञके रूपमें चरखा न कातने का यह निराधार बहाना नहीं बना सकते कि यह तो बहुत मामूली चीज है जिसका कोई उपयोग नहीं हो सकता। हमारा काम इस तरहकी बातें करके आलस्य करना नहीं है; हमारा काम तो अपनी भरसक जो हो सके करना है और ईश्वर उसका जो उपयोग करना चाहे, वैसा उपयोग उसके ऊपर छोड़ देना है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २२-१२-१९२७

१. इनका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है।

२९४. पत्र : सुभद्रा तुलजापुरकरको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

मेरी तरुण मित्र,

मैं तुम्हारे पत्रका[1] इससे पहले उत्तर नहीं दे सका। तुम 'गीता' का पूरा पाठ बिना एक भी गलती किये सुना सकती हो, और तुम्हें 'गीता' का सस्वर पाठ करनेके लिए पुरस्कार मिला है, इसके लिए बधाई। 'गीता' का पाठ करनेके अलावा, उसका अध्ययन करनेका सर्वोत्तम तरीका यह है कि उसका एक-एक श्लोक लिया जाये, उसके अर्थको पूरी तरह समझा जाये, और अपने जीवन-व्यवहारमें उनका पालन किया जाये। जब कभी मैं बम्बई आऊँगा, तब शायद तुम आकर मुझे कुछ अध्यायोंका पाठ सुनाओगी।

हृदयसे तुम्हारा,

कुमारी सुभद्रा तुलजापुरकर
एन० पी० पाठारेका घर
पुर्तगाली चर्चके पास
दादर, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२६३५ ए०) की फोटो-नकलसे।

२९५. पत्र : जेबुन्निसाको[2]

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे दुख है कि मैं आपके पत्रका उत्तर इससे पहले नहीं दे सका। आश्रमसे मुझे सूचना मिली है कि आपका नाटक वहाँ प्राप्त किया जा चुका है। लेकिन जैसा कि आपने देखा होगा, मैं बराबर भ्रमण कर रहा हूँ। हालाँकि मैं जनवरीमें आश्रम पहुँच जानेकी आशा करता हूँ, लेकिन मुझे कोई अन्दाज नहीं है कि मैं आपकी पाण्डुलिपि

१. ६-१०-१९२७ का; पत्रलेखिका १५ वर्षकी लड़की थी।

२. एक मुसलमान महिला जो अपना उर्दू नाटक गांधीजीको समर्पित करना चाहती थी।

को कब पढ़ सकूँगा। इसलिए मैं आपसे केवल इतना ही वादा कर सकता हूँ कि मैं जल्दीसे-जल्दी उसे देखनेकी कोशिश करूँगा। लेकिन यदि आपका विचार उसे प्रकाशित करानेका हो तो मैं आपसे कहूँगा कि आप मेरी रायका इन्तजार न करें, बल्कि यदि मौलाना मजहरुल हक और डा० सैयद महमूद-जैसे मित्र उसे ठीक मानते हों, तो उसे प्रेसको भेज दीजिए।

हृदयसे आपका,

बेगम जेबुन्निसा
मार्फत सैयद अहमद अली साहब
मुहल्ला साहबगंज
छपरा

अंग्रेजी (एस० एन० १२६३७) की माइक्रोफिल्मसे।

२९६. पत्र : पिचप्पा सुब्रह्मण्यम् चेट्टियारको

मद्रास
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

आपसे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि जिस विवाहके लिए आपको कोलम्बोमें मेरे पाससे चला जाना पड़ा था, वह यथावत् सम्पन्न हो गया। कृपया वर-वधूको मेरी शुभ-कामनाएँ एक बार फिर दे दीजिए और उनसे कहिए कि मैं उन दोनोंसे देशकी सेवाके लिए कार्य करनेकी अपेक्षा रखता हूँ।

हाँ, लंकासे बहुत अच्छा चन्दा प्राप्त हुआ। आपसे कोई विशेष बात करनेको कहनेकी मुझे जरूरत नहीं है क्योंकि आपका सारा हृदय खादी सेवामें लगा है, जो कि इस समय देशकी सबसे अधिक व्यापक और व्यावहारिक सेवा है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पिचप्पा सुब्रह्मण्यम् चेट्टियार
अमरावती पुदूर
गांधी नगर
जिला रामनाड

अंग्रेजी (एस० एन० १२६५९) की माइक्रोफिल्मसे।

२९७. पत्र : कमलादेवीको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र[१] पसन्द आया। आपने भारतकी लड़कियों और स्त्रियोंके बारेमें जो-कुछ कहा है वह मोटे तौरपर सही है। लेकिन गुलामीको दूर करनेके लिए आप और आपकी जैसी स्थितिमें जो और लड़कियाँ हैं, वे बहुत-कुछ कर सकती हैं। यदि आप अपने निश्चयमें दृढ़ रहें और साथ ही विनम्र भी रहें तो मुझे विश्वास है कि आपके पिता आपको अपने मनकी बात करने देंगे। लेकिन परिणाम प्राप्त करनेके लिए आपको धीरजसे काम लेना होगा। आपने अपने लिए साबरमती आश्रममें जिस सादगीके जीवनकी कल्पना की है, वैसा जीवन वहीं बिताइए। आखिरकार सबसे बड़ी चीज तो मन ही है। और यदि आपके मनमें सादगी और शुद्धताका विचार दृढ़ रूपसे जम गया है तो संसारकी कोई शक्ति मनसे उस[२] विचारको अलग नहीं कर सकती।

आपने जीवनकी आवश्यकताओंके बारेमें अपने विचारोंके सम्बन्धमें जो-कुछ कहा वह मैंने देखा। क्या आप चाहती हैं कि मैं आपके पितासे बात करूँ और उनके साथ पत्राचार भी करूँ? आपको अपने पितासे दिल खोलकर बात करनेमें और उनपर पूरा विश्वास करनेमें डरना नहीं चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीमती कमलादेवी
अखिल मिस्त्री लेन
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६०) की माइक्रोफिल्मसे।

१. कमला देवीके पिता उनका विवाह कर देना चाहते थे, किन्तु वह स्वयं गांधीजीके आश्रममें जाकर रहना चाहती थीं। देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ २८४ तथा पृष्ठ ४२१-२२।

२. मूलमें यहाँ 'देयर' था पर इसे 'दैट' करके अनुवाद किया गया है।

२९८. पत्र : एस० जी० दातारको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र तथा श्राद्धके विषयपर आपका लेख प्राप्त हुआ, लेकिन उसे मैंने छापा नहीं, क्योंकि आपके दृष्टिकोणपर 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें कई बार चर्चा की जा चुकी है। मेरी रायमें अपने दिवंगत माता-पिताका जो सबसे अच्छा श्राद्ध कोई पुत्र कर सकता है वह यह है कि अपने माता-पिताके सभी अच्छे गुणोंको अपने जीवनमें उतार ले। शास्त्रोंके शब्दोंको निरे दोहराना तो उनकी आत्माका हनन करना है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० जी० दातार
वकील
बागलकोट

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६१) की माइक्रोफिल्मसे।

२९९. पत्र : आर० रामास्वामीको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र तथा खादीके विषयमें संलग्न लेख मिला। मैं नहीं समझता कि उसे 'यंग इंडिया' में छापना जरूरी है। इसलिए मैं उसे लौटा रहा हूँ। मेरी रायमें जिस प्रकारका एक सामान्य वक्तव्य आपने तैयार किया है उस प्रकारके वक्तव्य छापनेसे खादी लोकप्रिय नहीं होगी। इसके लिए संगठन और व्यक्तिगत प्रचार-कार्य जरूरी है, और ये दोनों ही जहाँतक सम्भव है, किये जा रहे हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० रामास्वामी
६, शिवप्पा मैन्शन
दादर, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६२) की माइक्रोफिल्मसे।

२९८. पत्र : एस० जी० दातारको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र तथा श्राद्धके विषयपर आपका लेख प्राप्त हुआ, लेकिन उसे मैंने छापा नहीं, क्योंकि आपके दृष्टिकोणपर 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें कई बार चर्चा की जा चुकी है। मेरी रायमें अपने दिवंगत माता-पिताका जो सबसे अच्छा श्राद्ध कोई पुत्र कर सकता है वह यह है कि अपने माता-पिताके सभी अच्छे गुणोंको अपने जीवनमें उतार ले। शास्त्रोंके शब्दोंको निरे दोहराना तो उनकी आत्माका हनन करना है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० जी० दातार
वकील
बागलकोट

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६१) की माइक्रोफिल्मसे।

२९९. पत्र : आर० रामास्वामीको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र तथा खादीके विषयमें संलग्न लेख मिला। मैं नहीं समझता कि उसे 'यंग इंडिया' में छापना जरूरी है। इसलिए मैं उसे लौटा रहा हूँ। मेरी रायमें जिस प्रकारका एक सामान्य वक्तव्य आपने तैयार किया है उस प्रकारके वक्तव्य छापनेसे खादी लोकप्रिय नहीं होगी। इसके लिए संगठन और व्यक्तिगत प्रचार-कार्य जरूरी है, और ये दोनों ही जहाँतक सम्भव है, किये जा रहे हैं।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० रामास्वामी
६, शिवप्पा मैन्शन
दादर, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६२) की माइक्रोफिल्मसे।

प्रथाओंसे निपटना पड़ता है जिनका कोई नैतिक आधार नहीं है या जो अनैतिक हैं, फिर भले ही वे बहुत प्राचीन या पूर्वग्रह समर्थित क्यों न हों।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० वी० विश्वनाथ अय्यर
वकील
तूतीकोरिन

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६४) की माइक्रोफिल्मसे।

३०२. पत्र : चेरुकाण्डी कुट्टनको

स्थायी पता : आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मेरी पृच्छापर उत्तरमें प्रिटोरियाके प्रवासी तथा एशियाई मामलोंके कमिश्नर द्वारा भेजे गये पत्रकी प्रतिलिपि साथ भेज रहा हूँ। यदि आप मुझे ज्यादा पूरी जानकारी दे सकें तो मैं नेटालके अधिकारियोंके साथ पत्रव्यवहार करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत चेरुकाण्डी कुट्टन
इंग्लिश कंपोजीटर
"मलाबार स्पेक्टेटर" प्रेस
कालीकट (दक्षिण मलाबार)

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६५) की माइक्रोफिल्मसे।

प्रथाओंसे निपटना पड़ता है जिनका कोई नैतिक आधार नहीं है या जो अनैतिक हैं, फिर भले ही वे बहुत प्राचीन या पूर्वग्रह समर्थित क्यों न हों।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० वी० विश्वनाथ अय्यर
वकील
तूतीकोरिन

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६४) की माइक्रोफिल्मसे।

३०२. पत्र: चेरुकाण्डी कुट्टनको

स्थायी पता: आश्रम, साबरमती
२३ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र,

मेरी पृच्छापर उत्तरमें प्रिटोरियाके प्रवासी तथा एशियाई मामलोंके कमिश्नर द्वारा भेजे गये पत्रकी प्रतिलिपि साथ भेज रहा हूँ। यदि आप मुझे ज्यादा पूरी जानकारी दे सकें तो मैं नेटालके अधिकारियोंके साथ पत्रव्यवहार करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत चेरुकाण्डी कुट्टन
इंग्लिश कंपोजीटर
"मलाबार स्पेक्टेटर" प्रेस
कालीकट (दक्षिण मलाबार)

अंग्रेजी (एस० एन० १२६६५) की माइक्रोफिल्मसे।

करेगा। यदि इस सभामें उपस्थित लोगोंने उत्कलके उन भूखसे जर्जर लोगोंको देखा होता तो वे मुझसे इस बातपर फौरन सहमत हो जाते कि खादी ही एकमात्र वस्तु है जो उन्हें इस गिरी हुई दशासे उबार सकती है। खादीका आन्दोलन एक ऐसा आन्दोलन है जिसमें तमिल और तेलगु भाषी लोग, उत्तर और दक्षिण भारतके लोग जाति या विश्वासके भेदभावके बिना भाग ले सकते हैं। उत्कलकी यात्रा करनेपर वे खादी आन्दोलनका अपने-आप समर्थन करने लगेंगे। औद्योगिक प्रदर्शनीकी बगलमें खादी प्रदर्शनी हाथीके साथ चींटी-जैसी दिखाई पड़ती है। औद्योगिक प्रदर्शनीमें विदेशी और देशी दोनों चीजें हैं। खादी प्रदर्शनीमें आप केवल हाथका कता और हाथका बुना भारतीय माल ही पायेंगे। और यहाँ कोई प्रतियोगिता नहीं है; अगर है तो यही कि "मैं सेवा कैसे करूँ, मैं सबसे अच्छे ढंगसे सेवा कैसे करूँ।" खादी प्रदर्शनीमें आप गरीब आदमियों और औरतों द्वारा तैयार किया गया माल देखेंगे, और इस मालको बनानेसे बहुत-से गरीब लोगोंको भोजन प्राप्त हुआ होगा। मैंनचेस्टरमें बना माल और भारतीय मिलोंमें बना माल तो अंग्रेज और भारतीय पूंजीपतियोंको समृद्ध करता है; जबकि खादी उस गरीबसे-गरीब मेहनतकशको भोजन मुहय्या करती है जिसके पास आजीविकाका कोई दूसरा साधन नहीं है। खादी आन्दोलनने २००० गाँवोंमें फैले ७५ हजार कतैयोंको भोजन दिया है और ६००० बुनकर खादीके वस्त्र बुनकर अपनी रोजी चलाते हैं। मैंने इस आन्दोलनके सिलसिलेमें केवल कतैयों और बुनकरोंका ही उल्लेख किया है, और उनका जिक्र नहीं किया है जो छपाई, रंगाई आदि जैसे कामोंमें लगे हैं और जिन्हें आन्दोलनसे लाभ पहुँचा है। इन गरीब आदमियोंके अलावा मध्यवर्गके करीब एक हजार नौजवानोंने खादीका काम उठा लिया है। खादी बेरोजगार लोगोंको रोजगार भी देगी और मध्यवर्गके बीच बेरोजगारीकी उस समस्याको हल करेगी जिसने बहुत-से लोगोंको उद्विग्न कर रखा है। खादी भारतके लोगोंको — ब्राह्मणों और अब्राह्मणोंको, हिन्दुओं तथा मुसलमानोंको और तथा-कथित अस्पृश्योंको — रोजगार देगी। शीघ्र ही आप लोग विभिन्न दुकानोंमें जाकर प्रदर्शित वस्तुओंको अपनी आँखोंसे देखेंगे। जब आप अन्दर जायें उस समय मैं कहूँगा कि आप गरीबोंके प्रति सहानुभूतिकी भावना लेकर जायें और विचार करें कि गरीब लोगोंने अपनेको जीवित रखनेके लिए कुछ अर्जित करनेके वास्ते उन वस्तुओंके उत्पादनपर कितनी शक्ति और कितना समय लगाया होगा। आप लोग यह भी देखेंगे कि खद्दरकी वस्तुओंका मूल्य भी काफी घट गया है।

खादी प्रदर्शनीकी बगलमें आप हिन्दी प्रदर्शनी देखेंगे। हिन्दी आन्दोलनकी कल्पना करोड़ों भारतीयोंके हितको ध्यानमें रखकर की गई है। हिन्दी या हिन्दुस्तानीको २१ करोड़ लोग बोलते हैं, और यह बहुतसे मुसलमानोंकी मातृभाषा है। यही एक भाषा है जो अन्तर्प्रान्तीय भाषा बन सकती है। पिछले कुछ समयसे दक्षिण भारतमें हिन्दीका प्रचार करनेका प्रयत्न किया जा रहा है। हिन्दी प्रचार सभाकी स्थापना की गई

है और वह तमिलनाडु तथा आन्ध्र देशमें काफी बड़ी संख्यामें लोगोंको हिन्दीकी शिक्षा देती रही है। इन दो प्रान्तोंमें बहुत-से लोगोंने हिन्दी सीखी है और परीक्षाएँ पास की हैं। हिन्दी प्रदर्शनीका उद्घाटन पंडित मदनमोहन मालवीयको करना था, लेकिन चूंकि वह नहीं पहुँच सके हैं इसलिए इसका उद्घाटन मुझसे करनेको कहा गया है। मैं आपसे कहूँगा कि आप हिन्दी सीखें। मैं आपको बता दूँ कि इसे आसानीसे सीखा जा सकता है और सीख लेनेपर आप देखेंगे कि यह एक सुन्दर भाषा है।

इन शब्दोंके साथ महात्माजीने खादी और हिन्दी प्रदर्शनियोंका विधिवत् उद्घाटन किया।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-१२-१९२७

३०५. टिप्पणी: एक लेखपर[1]

हमें इस कलंकसे कब छुटकारा मिलेगा? क्या पिछली प्रलयसे[2] भी हिन्दुओंकी आँखें नहीं खुलीं? ढेढों और भंगियोंको ओछी जातिका किसने बनाया? ब्राह्मण और बनिये ऊँची जातिके कब हो गये?

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २५-१२-१९२७

३०६. इन्द्रराज चरखा

कश्मीरमें चरखेका क्या स्थान है, इस बारेमें श्री हरजीवनदास कोटकने १-१२-२७ की 'खादी पत्रिका' में एक लेख लिखा है। मैं प्रत्येक खादीप्रेमीको यह लेख पढ़ जानेकी सलाह देता हूँ। उस लेखका मूल्य भाई हरजीवनदासके अनुभवमें निहित है। उन्होंने स्वयं कश्मीरमें रहकर निरीक्षण किया है और उसके बाद यह लेख लिखा है। इसमें तीन बातें स्पष्ट होती हैं।

१. चरखेका महत्त्व,
२. कश्मीरमें आज भी इस प्रवृत्तिके लिए कितना स्थान है; और
३. कश्मीरमें इस अमूल्य हस्तकलाका ह्रास।

१. यह टिप्पणी मोहनलाल कामेश्वर पंड्याके उस लेखके अन्तमें दी गई थी जिसमें उन्होंने शिकायत की थी कि अछूतोंको डाकोरमें रणछोड़रायजीके मन्दिरमें जाना और मन्दिरके पासके गोमती कुंडमें नहाना निषिद्ध है।

२. अभिप्राय गुजरातमें जुलाई, १९२७ में आई हुई बाढ़से है; देखिए खण्ड ३४।

चरखेके महत्त्वके प्रमाण हमें दक्षिणमें कन्याकुमारीसे लेकर नागरकोइलतक मिलते हैं, पूर्वमें ठीक असमतक मिलते हैं और अब उत्तरमें ठीक कश्मीरतक मिले हैं। पश्चिममें ठेठ काठियावाड़में मिलते हैं। पश्चिममें मैं कराचीको नही लेना, क्योंकि कराची नया शहर है। और यह स्वाभाविक ही है कि वहाँ लोग धनके मदमें चरखेकी कीमत न जानें। वैसे वहाँ भी रणछोड़दास जैसे खादीभक्तकी प्रवृत्तिसे आजतक नये ढंगसे चरखा-प्रचारका कार्य चल रहा है और खादीका उपयोग हो रहा है।

भाई हरजीवनदासके लेखसे हमें जो जानकारी मिलती है वह हमें चेतावनी देती है। जानकारी यह है कि वहाँ जो रेशम होता है वह हाथसे कता हुआ नही होता। आजतक हममें से शौकीन लोग, यह मानकर कि वह हाथकता होगा, कश्मीरी रेशमका उपयोग करते हैं। लेकिन जो हाथसे ही कते हुए सूत, ऊन अथवा रेशमके कपड़ेका उपयोग करना चाहते हैं, यह बात स्पष्ट है कि उनके लिए कश्मीरी रेशम भी त्याज्य है। उत्तम बात तो यह है कि अपने पहनने लायक कपड़ेके लिए वे हाथसे कातें, मध्यम बात यह है कि अपने आसपाससे कतवा लें, और कनिष्ठ यह कि हाथ कताईके नामपर प्रामाणिक विक्रेतासे जो मिल जाये सो पहनें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५-१२-१९२७

२०७. हिन्दू विधवाएँ क्या करें?

अजमेरसे एक सज्जन हिन्दीमें लिखते हुए इस प्रकार सूचित करते हैं:

> मैं चाहता हूँ कि आप मेरे निम्नलिखित प्रश्नोंका उत्तर 'नवजीवन'में दें।
>
> उन हिन्दू विधवाओंको जो पुनर्विवाह नहीं करना चाहतीं, अपना शेष जीवन किस प्रकार व्यतीत करना चाहिए?
>
> महर्षि दयानन्दने तो लिखा है कि उनको ब्रह्मचर्यपूर्वक रहते हुए स्वयं पढ़ना और बालिकाओंको पढ़ाना चाहिए।
>
> क्या आप इस बातसे सहमत हैं? इसको मानते हुए और भारतकी वर्तमान स्थितिको देखते हुए आप और कौन-कौन-सी बातोंको इसके साथ जोड़ देना चाहते हैं?

महर्षि दयानन्दका अभिप्राय यह नही है कि केवल सीखने, सिखलानेमें ही विधवा अपना सारा समय लगाये; यह बात तो केवल दृष्टान्त स्वरूप ही हो सकती है। शिक्षाका अर्थ इस जगह तो केवल अक्षर-ज्ञान ही है। अक्षर-ज्ञान एक खास हदतक जरूरी है। पर मेरी दृष्टिमें इससे अधिक जरूरी शिक्षा भुखमरी दूर करनेकी है। और मेरा यह निश्चय दिनोंदिन बढता जाता है कि वह चरखेकी शिक्षा है। अगर हम पढ़े-लिखे, अपनेको ऊँचे वर्णके माननेवाले मध्यवित्तीय लोग अपने वर्गके बाहर रहनेवाले गरीबोंकी हालतका विचार करें तो किसीको चरखके सिवाय और कुछ सूझ ही नहीं सकता। चरखा मुख्यतः स्त्रियाँ ही चलायेंगी क्योंकि समय भी विशेषरूपसे उन्हींके पास होना है।

इसलिए मैं जगह-जगह दिन-रात यही बात पुकार-पुकार कर कह रहा हूँ कि उनसे काम लेकर हिन्दुस्तानके करोड़ो रुपये बाहर जानेसे बचाइए और सच्चा स्वराज्य — रामराज्य — स्थापित कीजिये।

स्त्रियोंमें काम तो स्त्रियाँ ही अच्छी तरह कर सकती हैं। यहाँ उत्कल देशमें जहाँ मैं यह लिख रहा हूँ, गरीब स्त्रियाँ भी पर्देमें रहती हैं। उनका पर्दा तोड़कर उनके बीच कौन जा सकता है? मेरे साथ मीराबहन हैं। उन्हें मैंने एक गाँवमें भेजा। कोई पचास स्त्रियाँ आसपास आ जमी और उनके हर्षका पार नहीं रहा। वे अनेक बातें पूछने लगीं। चरखेकी बात निकली। ये स्त्रियाँ एकदम भोली, सादी और अन-जान थी। सच्ची शिक्षा तो ऐसी असख्य स्त्रियोको मिलनी चाहिए। स्वच्छ चरित्रवाली विधवाएँ यह शिक्षा सहज ही दे सकती हैं; इस तरह वे अपना काम साधें और हिन्दुस्तानका बेड़ा भी पार हो। परोपकारकी वृत्तिवाली विधवाबहनें यह कार्य सहज ही सीख सकती हैं और कर भी सकती है पर इसमें बडी बात तो यह है कि उनमें गाँवोमें जानेका उत्साह हो, और वहाँ जाकर वे ऊबें नहीं। ब्रह्मचर्यका व्रत लेनेवाली विधवा न तो अबला है, और न अपंग ही। अगर वह अपनेको पहचान ले तो वह बलवती है, स्वाश्रयी है, सुरक्षित है। ऊपरके कामकी अपेक्षा मैं आजकल लड़कियोको दी जानेवाली शिक्षाको तुच्छ गिनता हूँ। पर जो विधवा गाँवोंमें न जाये, आलस्यमें दिन बिताती रहे अथवा धर्मके भ्रममें साल-दर-साल तीर्थक्षेत्र माने जानेवाले स्थानोमें भ्रमण करती फिरे, उसके लिए तो इन सबकी अपेक्षा यही अच्छा है कि वह शहरोमें रहकर बालशिक्षाका कार्य करती रहे। उसके पास रोगियोकी सेवाका भी विशाल क्षेत्र पड़ा हुआ है। हिन्दू स्त्रियाँ नर्स या परिचारिकाके रूपमें थोड़ी ही दिखलाई पड़ती हैं। महाराष्ट्रमें विधवाएँ नर्सका काम सीखती हैं। पर महाराष्ट्रके बाहर बहुत थोड़ी ही विधवाएँ यह काम सीखनेको तैयार होती हैं, लेकिन मेरे बतलाए ये काम भी दृष्टान्त रूप ही समझने चाहिए। प्रत्येक समझदार विधवाको जो ब्रह्मचर्य-पालन करना चाहती है, चाहिए कि वह अपने लायक कोई परोपकारी वृत्ति ढूंढकर उसीमें अपना जीवन बिताये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५-१२-१९२७

३०८. पत्र : मु० अ० अन्सारीको

२५ दिसम्बर, १९२७

प्रिय डा० अन्सारी,

मेरी मालवीयजीके साथ लम्बी बातचीत हुई। गाय और संगीतके सम्बन्धमें प्रस्तावमें जो कहा गया है उससे वे सन्तुष्ट नहीं हैं। और न मैं ही सन्तुष्ट हूँ। मैंने दो सुझाव दिये हैं जिनसे वे सहमत हैं और उनका विचार है कि हिन्दू महासभा सहमत हो जायेगी।

पहला यह है: प्रस्तावनामें अधिकारोंका उल्लेख करनेके बजाय कहना चाहिए "उभय पक्षोंके अधिकारोंको ठेस पहुँचाये बिना, आदि"।[1]

दूसरा, जिसे मैं सबसे महत्त्वपूर्ण और सच्चा हल मानता हूँ, यह है कि मुसलमान लोग गो-वध न करें और हिन्दू लोग मस्जिदोंके सामने संगीत न छेड़ें। इन दोनोंको पारस्परिक सहमतिसे कानूनका हिस्सा होना चाहिए। मालवीयजीका खयाल है कि यदि मुसलमान लोग दूसरा प्रस्ताव स्वीकार कर लें तो वे हिन्दू महासभाको अपने साथ सहमत कर लेंगे।

यदि आप समझें कि इन दो प्रस्तावोंमें कुछ तत्त्व है तो कृपया एकता प्रस्तावोंका पास करना मुल्तवी कर दें और हम सब लोग इन प्रस्तावोंपर उनके समस्त फलितार्थोंको ध्यानमें रखकर चर्चा कर लें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२३९१) की फोटो-नकलसे।

३०९. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२६ दिसम्बर, १९२७

प्रिय चार्ली,

मैंने तुम्हारे प्रस्तावोंमें फेर-बदल कर दी है। उड़ीसा-सम्बन्धी प्रस्ताव कांग्रेसमें नहीं आना चाहिए। क्योंकि ऐसे बहुत-से स्थान हैं जिन्होंने संकट झेला है। उड़ीसाकी विशेष गरीबी पुरानी है। मैं देखूँगा कि ग्रेगकी किताबके प्रूफ पढ़नेके बारेमें क्या किया जा सकता है। मैंने कांग्रेस कमेटीकी किसी बैठकमें भाग नहीं लिया है। अच्छा आराम कर रहा हूँ। यहाँके डाक्टरोंने रक्तचापमें कोई विशेष वृद्धि नहीं देखी है। मैं कल या परसों यहाँसे चलूँगा। १३ जनवरी या उससे पहले आश्रममें तुम्हारे पहुँचनेकी आशा करता हूँ। टकर मेरे साथ है।

सप्रेम,

मोहन

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज
शान्तिनिकेतन

अंग्रेजी (जी० एन० २६२७) की फोटो-नकलसे।

१. लगता है यह सुझाव स्वीकार कर लिया गया था; देखिए परिशिष्ट ९, हिन्दू-मुस्लिम एकता सम्बन्धी प्रस्तावका भाग ख–खण्ड १।

३१०. पत्र : फूलचन्द शाहको

सेंट्रल स्टेशन, मद्रास
मौनवार [२६ दिसम्बर, १९२७][1]

भाईश्री ५ फूलचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें यही शोभा देता है। मुझे तो सन्देह या चिन्ता थी ही नहीं।

मैं जल्दीसे-जल्दी शनिवारतक आश्रम पहुँचनेकी आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८३२) से।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

३११. पत्र : रेवाशंकर झवेरीको

सोमवार [२६ दिसम्बर, १९२७][2]

पूज्य रेवाशंकर भाई,

आज देवदासका पत्र मिला है। उससे ज्ञात हुआ है कि आप भी बीमार हो गये हैं और बम्बई लौट आये है। कल तो यहाँसे रवाना होनेका विचार है और गुरुवारको वहाँ पहुँच जाऊँगा। यदि किसी कारण रवाना न हो सका तो शुक्रवारको वहाँ जरूर पहुँच जाऊँगा। भगवान आपकी रक्षा करे।

मोहनदासके प्रणाम

पूज्य रेवाशंकर झवेरी
मणिभवन
७, लैबर्नम रोड
गामदेवी, बम्बई

गुजराती (जी० एन० १२६६) की फोटो-नकलसे।

१ और २. डाककी मुहरसे।

३१२. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मद्रास
सोमवार [२६ दिसम्बर, १९२७][1]

प्यारी बहनो,

तुम्हारा पत्र मिला। असलमें मेरा इरादा तो आज ही यहाँसे रवाना होनेका था, किन्तु अब ऐसा लगता है कि कल, और नहीं तो बुधवारको यहाँसे अवश्य निकल जाऊँगा। अतः कहना चाहिए कि मैं जल्दीसे-जल्दी शनिवारको तुम लोगोंसे मिलूंगा।

यह बात तो समझमें आती है कि आज तुममें से कोई उत्कल-यात्रापर जानेको तैयार नहीं हुई। किन्तु आखिर छुटकारा तो तभी मिलेगा जब बहुत-सी बहनें आश्रमसे ही तैयार होकर निकलें।

तुमने लिखा है कि तार लिखवानेमें भूल हुई है। किन्तु बात मेरी समझमें नहीं आई। अब तो जब हम लोग मिलें तभी समझाना।

जो काम हमें प्रिय लगता है हम उसे करना कभी नहीं भूलते। मैंने भावुक स्त्री-पुरुषोंको मन्दिरोंमें अनेक प्रकारकी सेवा बहुत ही प्रेमपूर्वक करते देखा है। हम मानते हैं कि इस प्रकारकी सभी सेवाओंमें कताई-यज्ञका स्थान सबसे ऊपर है। इस बारेमें यदि किसी तरहकी शंका हो तो मुझसे अवश्य पूछ लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७७०)से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

३१३. प्रस्ताव : दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके बारेमें

[२७ दिसम्बर, १९२७][2]

यह कांग्रेस हालाँकि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय प्रवासियों द्वारा प्राप्त की गई राहतको स्वीकार करती है और भारत तथा दक्षिण आफ्रिका संघके बीच हुए समझौतेको संघ सरकार द्वारा भारतीय प्रवासियोंके साथ ज्यादा बेहतर व्यवहार करनेकी इच्छाका प्रतीक मानती है, लेकिन वह तबतक सन्तुष्ट नहीं हो सकती जबतक प्रवासियोंको

१. उत्कल-यात्रा तथा आश्रममें गांधीजीके लौटनेके उल्लेखसे।

२. इस प्रस्तावका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था। इसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके मद्रासमें होनेवाले वार्षिक अधिवेशनमें २७-१२-१९२७ को कांग्रेस अध्यक्ष डा० मु० अ० अन्सारीने पेश किया, और यह सर्वसम्मतिसे स्वीकार कर लिया गया।

संघके मताधिकार प्राप्त निवासियोंके बराबरका दर्जा नही प्रदान किया जाता। कांग्रेस संघ सरकारसे अपील करती है कि वह सभी वर्गभेद करनेवाले कानूनोंको रद करके, विशेषकर १९२६ के रंगभेद अधिनियमको, १९२७ के शराब विधेयककी उस धाराको जिसके जरिये होटलोंमें भारतीयोंके वेटरोंके रूपमें नौकरी पानेपर रोक लगाई गई है, तथा नेटालके म्युनिसिपल भूमि सक्रामण अध्यादेशोंको, जिस हदतक कि वे जाति-पृथक्करण करते है, रद करके दोनों देशोंके बीच उत्पन्न हुई सद्भावनाको परिपुष्ट करे।

यह कांग्रेस दीनबन्धु सी० एफ० एन्ड्रयूज द्वारा दक्षिण आफ्रिका और पूर्व आफ्रिकाके प्रवासी भारतीयोंके दर्जेके सम्बन्धमें किये गये उनके महान और मानवतावादी कार्योंके प्रति अपनी गहरी कृतज्ञताकी भावना व्यक्त करती है।

[अंग्रेजीसे]

रिपोर्ट ऑफ द फोर्टी-सेकंड इंडियन नेशनल कांग्रेस हेल्ड एट मद्रास, १९२७

३१४. पत्र : मु० अ० अन्सारीको

२८ दिसम्बर, १९२७

प्रिय डा० अन्सारी,

गाय-सम्बन्धी प्रस्तावने तो मुझे भीतरतक झकझोर दिया है। मैं उसे ध्यानपूर्वक कल रात जाकर ही पढ़ पाया। जितना ही मैं उसके बारेमें सोचता हूँ, उतना ही मेरा मन उससे दूर हटता है। एम० ए० आजादके हाथ मैंने जो मसविदा[1] भेजा था वह उसका स्थानापन्न नही है। मैंने मौलाना साहबसे कह दिया है कि वह मुझे किसी भी तरह सन्तोषजनक नही लगता। एक-मात्र हल जो मैं देख सकता हूँ वह वही है जो मैंने सुझाया है। इसलिए मैं आपसे आग्रह करूँगा कि आप इस अधिवेशनमें उस प्रस्तावपर आगे कार्रवाई बिलकुल न करें। जो मुसलमान मित्र यहाँ हैं, मुझे उनसे बात करनी है और उनके सामने अपनी विषम स्थिति रखनी है। लेकिन मैं आपको इस स्थितिमें कष्ट नही दूँगा। आपके हाथमें और भी कई काम हैं। तथापि मैं [अली] बन्धुओंसे मिलनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मैं मदद करने आया था। अब मैं एक बाधा बनता जा रहा हूँ। मेरा दुःख अवर्णनीय है।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२३९२) की फोटो-नकलसे।

१. सम्भवतः कांग्रेस द्वारा स्वीकृत हिन्दू-मुस्लिम एकता सम्बन्धी प्रस्तावका भाग ख-खण्ड १; देखिए परिशिष्ट ९।

३१५. एक पत्र[1]

२८ दिसम्बर, १९२७

प्रिय मित्र और भाई,

गाय-सम्बन्धी प्रस्तावने मेरे दिलमें एक गहरा दाग डाल दिया है। मैं उसके ऊपर आपसे बातचीत करना और आपको अपनी कठिनाई बताना चाहूँगा। मैं आप दोनोंको चाहता हूँ और अगर सम्भव हो तो शुएबको भी। जो अन्य मित्र उपलब्ध हों, आप उन्हें भी ला सकते हैं।

सप्रेम,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२३९३) की फोटो-नकलसे।

३१६. राजनीतिक कैदी

अम्बालाके लाला दुनीचन्दने भारतवर्षकी अलग-अलग जेलोंमें बन्द राजनीतिक कैदियोंकी एक तालिका इंग्लैंडमें छपवाई थी। उसकी एक प्रति उन्होंने मेरे पास भेजी है। इसमें हिन्दुस्तानी पाठकोंके लिए तो कोई नई बात नहीं है और लेखक जो काम इससे साधना चाहते हैं, उसके लिए यह आसानीसे और भी अधिक पूरी और सही बनाई जा सकती थी। साथके पत्रमें वे मुझसे नरमीके साथ शिकायत करते हैं कि मैं राजनीतिक कैदियोंके बारेमें कुछ नहीं लिखता। अगर अपने इन देशभाइयोंके बारेमें कुछ भी न लिखनेका कारण मेरी उदासीनता या उपेक्षा होती तो उनकी शिकायत ठीक थी। लेकिन मेरा तो दावा है कि इन कैदियोंकी रिहाईके लिए मुझसे ज्यादा चिन्ता किसीको भी नहीं हो सकती। मगर मैं तो जान-बूझकर इस विषयमें चुप हूँ। मैं समझता हूँ कि 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें बेकारकी बातें ज्यादा नहीं रहतीं। यहाँ जो-कुछ लिखा जाता है, वह एक खास प्रयोजनसे ही लिखा जाता है। एक समय वह भी था जब मैं ऐसे मामलोंको लेकर उनका विश्लेषण करके दिखलाया करता था कि अधिकांश मामलोंमें किस तरह ज्यादती की गई है। मगर यह बात तो तब की है जब ब्रिटिश सरकारपर मेरा विश्वास था और इसकी अच्छाईपर मुझे नाज था। मगर जब वह विश्वास नष्ट हो गया तब मेरी यह ताकत भी न रही कि सरकारी प्रशासकोंमें कुछ कहकर उनपर असर डाल सकूँ। मैं अब फिर ब्रिटिश न्यायप्रियता और न्याय-भावनाके गुण नहीं गा सकता। इसके विपरीत मुझे यह लगता है कि उनकी शासन-

१. अनुमानतः यह मौलाना मुहम्मद अलीको लिखा गया था; देखिए पिछला शीर्षक।

व्यवस्था ही कुछ ऐसी है कि जब कभी उस व्यवस्थाको कोई खतरा होता है या खतरा मालूम होता है, तब ऐसी अवस्थामें प्रशासक लोग औचित्य या न्यायपूर्णताका ध्यान नहीं रखते। मैं कबूल करता हूँ कि अगर उनके राज्यको किसी तरहका खतरा न हो तो अब भी उनसे न्याय मिल सकता है। मगर जब कभी उनका शासन-तन्त्र खतरेमें हो या वे समझें कि खतरेमें है, तब न सिर्फ वे न्याय और सत्यको ही भूल जाते हैं बल्कि उनकी बुद्धि ही ठिकाने नही रहती, उस राज्यको बचानेके लिए उनकी दृष्टिमें कोई भी कार्य या तरीका नीच या जघन्य नही रह जाता। डायरशाही या ओ'डायरशाही[1] कुछ एक अकेली मिसाल नही है। हाँ, जलियाँवाला बागकी घटनाके पहले मैं उनकी ओरसे अन्धा बना रहा। सच पूछो तो हर देशमें, हर कालमें जब कभी उन्हें जरूरत पड़ी, उन्होने डायर और ओ'डायरशाहीसे ही काम लिया है।

मेरा विश्वास है कि जो भी राजनीतिक कैदी, मुकदमेके झूठे नाटकके बाद या उसके बिना ही, कैदमें हैं, वे इस सरकारी व्यवस्थाके हित-साधनके लिए ही कैद है। ये शासक रंगे हाथो पकड़े गये खूनीको, जो व्यक्तिगत स्वार्थके लिए किसीको मारे, भले ही छोड़ दें, मगर ये उस राजनीतिक कैदीको छोडनेवाले नहीं है जिसके बारेमें इन्हें शक हो कि वह इनके शासन-तन्त्रका विरोधी है और खासकर अगर उसका तरीका हिंसापूर्ण हो।

इसलिए मुझे यह व्यर्थ और स्वाभिमानके विरुद्ध मालूम होता है कि लाला दुनीचन्द द्वारा उल्लिखित राजनीतिक कैदियोंके लिए कोई इन अफसरोंसे कुछ कहे या सुने। उनके ध्यानमें जिन कैदियोकी बात है वे है गदरपार्टीके कैदी, पंजाब फौजी कानूनके अन्तर्गत बन्दी बनाये गये कैदी और बंगालके नजरबन्द कैदी। और फिर श्रीयुत सुभाष बोस जैसे एक दो आदमियोंकी रिहाईसे हमें भ्रममें नही पड जाना चाहिए। अगर उनका बुरा स्वास्थ्य आडे न आ पड़ता तो शायद इतना सब आन्दोलन करनेपर भी वे छोडे नही जाते। आखिर अधिकारियोंने क्या यह खूब साफ-साफ शब्दोंमें कह नहीं दिया है कि ये लोग केवल स्वास्थ्य खराब होनेके कारण ही छोड़े जा रहे है? क्या अर्ल विन्टरटनने[2] यह प्रार्थना करनेपर कि शाही आयोगके लिए अच्छा वातावरण बनानेके हेतु बंगालके नजरबन्दोको छोड दीजिए, उन्हें छोड़नेसे साफ इनकार नहीं कर दिया?

खैर, जिन्हें ब्रिटिश न्याय-प्रियता और सच्चाईमें अब भी विश्वास हो, वे उनसे प्रार्थना करें।

मेरा रास्ता साफ है। जो स्वतन्त्रता हम चाहते हैं, उसके लिए हमने अभी काफी कीमत नही दी है। इसलिए मैं तो मानता हूँ कि ये नजरबन्दियाँ उसी कीमतका एक छोटा अंश हैं जो हमें मनुष्योंका जन्म-सिद्ध अधिकार पानेके लिए देनी चाहिए; और हमें सभी अत्याचार स्वेच्छासे सहने होंगे, न कि भेड़-बकरियो जैसे असहाय होकर। यह काम हम हिंसा या अहिंसा किसीके भी जरिये कर सकते है। हिंसाका रास्ता

१. जनरल डायर और ओ'डायर अप्रैल १९१९ में जलियाँवाला बागमें हुए हत्याकाण्डके लिए उत्तरदायी थे।

२. भारत मन्त्री।

तो हमें आखिर ऐसी जगह लाकर छोड़ देगा जहाँसे आगे हम कहीं जा नहीं सकते और जिसके कारण उन बहुतसे अनिच्छुक और अज्ञानी स्त्री-पुरुषोंको अपार कष्टोंका सामना करना पड़ेगा जो न तो जानते हैं कि स्वतन्त्रता क्या चीज है और न उस बहुमूल्य वस्तुको खरीदनेकी उनकी कोई इच्छा ही है। अहिंसाका तरीका सबसे अचूक और छोटा है और इसमें कमसे-कम कष्ट सहना पड़ता है, और वह भी सिर्फ उन्हींको जो कष्ट सहनेको तैयार हों, बल्कि खुशी-खुशी तैयार हों। मगर हर हालतमें लोगोंको तीव्र, व्यापक और भयंकर कष्ट और पीड़ा अवश्य ही सहनी पड़ेगी। अबतक हमें जो भुगतना पड़ा है, वह आगे आनेवाले कष्टोंका नमूना-भर है।

इसलिए मेरे समान जिनका यह विश्वास है कि इस शासन-पद्धतिमें ही दोष है, उनका काम यह है कि वे शासकोंसे प्रार्थना करना छोड़ दें और अपने उद्देश्य और तरीकेमें अटल विश्वासके साथ वे राष्ट्रसे ही निरन्तर अपील करते रहें। जबतक कि राष्ट्रमें कैदखानेके दरवाजे खोल देनेकी ताकत न आये, तबतक ये कैदी सम्मान और शानके साथ रिहा नहीं कराये जा सकते। वैसा समय आनेतक हम धैर्य और साहसके साथ इन लोगोंकी नजरबन्दीको सहन करें और आप भी ऐसी सजा भोगनेके लिए खूब खुशीसे तैयार हों। हम बहरोंके आगे दयाका रोना रोकर स्वतन्त्रताके दिन-को और नजदीक तो निश्चय ही नहीं लायेंगे, बल्कि इस तरह तो हम जनतामें कैद और फाँसीसे डरनेकी मनोवृत्ति बेकार ही पैदा कर देंगे। स्वतन्त्रता-प्रेमियोंको तो इनका स्वागत मित्र और मुक्तिदाताओंके रूपमें करना सीखना है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-१२-१९२७

३१७. भेंट : 'इंडियन डेली मेल' के प्रतिनिधिसे

बम्बई

३० दिसम्बर, १९२७

यह पूछे जानेपर कि मद्रासके नेताओंने संविधानके जो तीन मसविदे[1] तैयार किये हैं उनमें से वे भारतके लिए सबसे उपयुक्त किसे मानते हैं, श्री गांधीने कहा कि भारतके भावी संविधानके सम्बन्धमें मेरा कोई निश्चित मत नहीं है। तथापि उन्होंने आगे कहा :

भारतका संविधान कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे कोई एक व्यक्ति तय करे।

१. कांग्रेसके मद्रास अधिवेशनमें स्वराज्य संविधानके कई मसविदे प्रस्तुत किये गये थे; कार्यसमितिको यह अधिकार दिया गया था कि वह अन्य संगठनोंके साथ परामर्श करके एक संशोधित मसविदा एक विशेष सम्मेलनके सम्मुख स्वीकृतिके लिए रखे।

मित्रों और शिष्योंसे घिरे हुए और उनके बीचमें बैठकर अपने चरखेको चलाते हुए श्री गांधीने हमारे प्रतिनिधिसे मृदुलासे प्रश्न पूछनेको कहा। भेंटकर्त्ताका पहला प्रश्न था, "कांग्रेसके मद्रास अधिवेशनके बारेमें आपका क्या खयाल है?"

उत्तर: मद्रास अधिवेशन इस मानेमें अनोखा था कि उसमें हिन्दू-मुस्लिम एकताकी नीव पड़ गई प्रतीत होती है। ऐसा मैं प्रस्तावोंके गुणोंके कारण नही कह रहा हूँ, वल्कि जिस ढँगसे वे प्रस्तुत किये गये और स्वीकार किये गये उसके कारण कह रहा हूँ। पंडित मालवीयजीका अच्छा भाषण और उससे भी अच्छा अली भाइयोका भाषण मुझे भविष्यके लिए शुभ लक्षण प्रतीत हुआ। मै उस समय उपस्थित नही था जब मौलाना मुहम्मद अली आनन्दातिरेकमें मालवीयजीके पैरोंपर गिर पड़े, और उनके शानदार भाषणके समाप्त होनेपर मौलाना शौकत अलीने उनको पंखा झला, लेकिन इसका विवरण मुझे कांग्रेस अध्यक्षने सुनाया। इससे मेरा मन जबर्दस्त खुशी और आशासे भर गया। मैं आशा करता हूँ कि सौहार्द और पारस्परिक विश्वासकी यह भावना संक्रामक सिद्ध होगी और हम साधारण लोगोंमें भी ऐसा ही विश्वास देख सकेंगे। इस सुखद घटनाके लिए डा० अन्सारी और श्री एस० अय्यंगार दोनों ही राष्ट्रकी कृतज्ञताके अधिकारी है।

यह पूछे जानेपर कि जब स्वाधीनता प्रस्तावपर[1] विचार किया गया उस समय वह उपस्थित क्यों नहीं थे, श्री गांधीजीने कहा कि मेरे स्वास्थ्यके कारण मुझसे समितिकी किसी भी बैठकमें उपस्थित होनेकी अपेक्षा नहीं की जाती। मै मद्रास अपने डाक्टरोंके निर्देशों और अपने मित्रोकी इच्छाके विरुद्ध गया था, और ऐसा मैंने अपनी सामर्थ्य-भर श्री श्रीनिवास अय्यंगार और डा० अन्सारीकी सहायता करनेके खयालसे, और यदि मेरी जरूरत पड़े तो उनके लिए सुलभ होनेके खयालसे किया था। मुझसे कार्य समिति, विषय समिति या खुले अधिवेशनकी कार्यवाहियोंमें भाग लेनेकी अपेक्षा नहीं की जाती। मैंने एक अनौपचारिक बैठकको छोड़कर समितिकी किसी बैठकमें भाग नहीं लिया और कांग्रेस अधिवेशनके शुरू होनेपर केवल कुछ मिनटोंके लिए उसमें शामिल हुआ था।

हमारे प्रतिनिधिने पूछा: "लेकिन क्या यह सच है कि आप स्वाधीनता प्रस्तावके पक्षमें नहीं थे?"

उत्तर: यह तो एक सर्वप्रकट रहस्य है। लेकिन मैं स्वाधीनता-प्रस्तावको जो ठीक नही मानता उसका आधार उन लोगोंसे भिन्न है जो सामान्य रूपसे स्वाधीनता-प्रस्तावकी निन्दा करते हैं। मैंने इस विषयपर पिछले वर्ष तब चर्चा की थी जब स्वाधीनता-प्रस्ताव पास किया गया था, और उसके प्रति मेरा जो रुख है उसके कारण भी मैंने दिये है। लेकिन मै किसी प्रकारकी गलतफहमीसे बचनेके लिए यह कह दूं कि मैं एक क्षणके लिए भी ऐसा नही मानता कि भारत स्वाधीनताके योग्य नही है, अथवा वह उसके लिए तैयार नही है।

१. एक पृथक् प्रस्तावमें कांग्रेसने घोषणा की कि "भारतीय लोगोंका लक्ष्य पूर्ण राष्ट्रीय स्वाधीनता है"।

इसके बाद हमारे प्रतिनिधिने हकीम अजमलखांकी मृत्युकी[1] चर्चा की, और श्री गांधीने निम्नलिखित वक्तव्य दिया :

इस अवसरपर यह एक अत्यन्त महान और दु:खद क्षति है। हकीम अजमल खाँ भारतके अत्यन्त सच्चे सेवकोंमें से थे, और हिन्दू-मुस्लिम-एकताके लिए वह अत्यन्त बहुमूल्य व्यक्ति थे। मैं यही आशा कर सकता हूँ कि जो चीज हम उनके जीवित रहते नहीं सीख सके वह चीज हम उनकी मृत्युके बाद और उनकी मृत्युसे सीख सकेंगे। ऐसे विवरण छपे हैं कि मृतककी स्मृतिमें सम्मान व्यक्त करनेके लिए हिन्दुओंने भी उतनी ही बड़ी संख्यामें भाग लिया जितनी संख्यामें मुसलमानोंने, यदि वे सच हैं तो यह एक बहुत ही स्वस्थ चिह्न है और मैं आशा करता हूँ कि उनकी मृत्युसे दिल्लीमें भ्रातृत्व और मैत्रीकी जो भावना उत्पन्न हुई है वह जारी रहेगी और स्थायी बनेगी तथा सारे देशमें फैल जायेगी।

मेरे लिए हकीमजीकी मृत्यु एक व्यक्तिगत क्षति है। मैं डा० अन्सारी तथा अन्य नेताओं द्वारा जारी की गई इस अपीलका पूरा समर्थन करता हूँ कि हकीमजीने दिल्लीमें जिस राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालयको इतने प्रेमसे पोसा है उसे किसी भी संकटसे बचानेके लिए राष्ट्रवादी भारतीयोंको चाहिए कि वे उस कोषमें चन्दा दें जो उस संस्थाकी आर्थिक स्थितिको दृढ़ आधार प्रदान करनेके लिए हकीमजी जमा कर रहे थे। लेकिन अवश्य ही इस महान देशभक्तका सर्वोत्तम स्मारक यही होगा कि हिन्दू, मुसलमान तथा भारतमें रहनेवाली अन्य जातियोंके बीच अटूट एकता स्थापित की जाये।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, ६-१-१९२८

३१८. पत्र : मणिलाल व सुशीला गांधीको

३१ दिसम्बर, १९२७

चि० मणिलाल व सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मिले। मैं आश्रम पहुँच गया हूँ, अत: अब डाकके बारेमें जानकारी रहेगी। तुमने अपने पत्रमें एक हकीकत तो दी है, सो ठीक किया। शास्त्रीजीके बारेमें तुमने जो लिखा है उसे मैं समझ रहा हूँ। तुम उनसे जो बात करना चाहो वह विवेक और साहसपूर्वक कर सकते हो। तुमने उनके साथ हुई अपनी बातचीतका सही ब्यौरा दिया है।

डर्बनके कार्यालयको बन्द कर देनेका विचार मुझे तो पसन्द ही है। मैं तो निश्चित रूपसे यह मानता हूँ कि यदि अखबारको अखबारकी तरह न निभाया जा सके

१. मृत्यु २९ दिसम्बर, १९२७को हुई थी।

तो उसे चलानेका लोभ हमें छोड़ देना चाहिए। और उसे अखबारकी तरह चलाना हो तो वह आसानीके साथ फीनिक्ससे भी चलाया जा सकता है। मेरी इतनी बात तो पक्की ही समझो कि कर्ज करके या अपने बूतेसे बाहर जाकर तो उसे कभी न चलाया जाये।

यदि इस शर्तके साथ वहीं रहना मुश्किल जान पड़े तो तुम दोनो यहाँ चले आओ। बाजी अपने हाथसे कभी मत जाने देना।

यहाँके कर्जके बारेमें तुम्हें लिखा था किन्तु तुमने उसका उत्तर नही दिया। मैं फिर याद दिला रहा हूँ।

और अब सुशीलाको:

तुम्हारे पत्र नीरस होते हैं। मणिलाल ठीक ही लिखता है कि वह काममे व्यस्त रहनेके कारण नही लिख पाता; किन्तु तुम्हें तो लिखना ही चाहिए। यदि तुम्हें जीवनमें रस मिलता हो तो लिखनेको बहुत-कुछ मिल जायेगा। बच्चे जब अपने सुख-दुःखकी बात माता-पिताको लिखते हैं तो पन्नेके-पन्ने भर देते हैं किन्तु तुम्हारे पत्रमें चन्द लकीरोंके सिवा और कुछ नही होता। ऐसा लगता है कि अब भी तुम्हारा शरीर पनपा नही है। यदि चाहो तो वहाँके किसी डाक्टरको दिखा लेना; शरीर तो पनपना ही चाहिए। यदि यहाँ आनेकी इच्छा हो तो तुम दोनो आपसमें सलाह कर लेना। मेरी तरफसे तो अनुमति है ही। रहना भी तुम्हारी इच्छापर निर्भर करता है। यहाँ रहना चाहो तो यहाँ नही तो अकोला रहना। तुम यह मानना कि मैं तुम्हारा ससुर नही बल्कि पिता हूँ। सेवा करनेके लिए शरीरका ध्यान रखना भी तुम्हारा कर्त्तव्य है। तुम अपने इस धर्मका भी पालन करना।

मैं नीलकंठसे[1] कल मिला था। वह जापानसे वापस लौट आया है। तुम्हें उसका पत्र तो मिला ही होगा। बालुभाई भी मुझसे मिले थे।

इन बातोंकी जानकारी देना:

उठने और भोजनका समय। कितनी बार और क्या खाती हो। दिनका कार्यक्रम, वहाँ जिन लोगोंसे तुम्हारा परिचय है और वहाँका खर्च आदि। तुम चारोंके हस्ताक्षरवाला तार मिल गया था।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७३२) की फोटो-नकलसे।

१. मशरूवाला।

३१९. पत्र: मणिबहन पटेलको

गुरुवार, १९२७[1]

चि० मणि,

तुम्हें बुखार आ गया और कमजोरी रहती है, यह मुझे अच्छा नहीं लगता। बूतेसे बाहर मेहनत नहीं करनी चाहिए। अब तो समय है भी या नहीं, सो मैं नहीं जानता; परन्तु कांग्रेसमें आनेके लिए तुम्हें चुना गया हो तो मुझे खुशी जरूर होगी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें अखबारोंमें कुछ आये तो समझ लेना कि उसमें अतिशयोक्ति है। रक्तचापका उतार-चढ़ाव तो इस दौरेमें होता ही रहा है।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो — ४: मणिबहेन पटेलने

३२०. पत्र: मणिबहन पटेलको

१९२७

चि० मणि,

जो बीमार पड़ते है उन्हें क्या आश्रमसे भाग जाना चाहिए? तुम कहाँ गई हो यह भी मैं तो नहीं जानता। भागकर ही सही, जल्दी नीरोग हो जाना चाहिए। चैन न लगे तो मेरे पास आनेकी छूट है, यह याद रखना। सहन होने लायक वैराग्य लिया हो तो पचेगा। न पचे वह वैराग्य कैसा। तुमसे कुछ-न-कुछ खबर पानेकी तो रोज ही बाट देखता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

मेरे सफरकी तारीखें तो जानती हो न?

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो — ४: मणिबहेन पटेलने

1. इस पत्रकी तथा १९२७ में लिखे इसके बादके अन्य पत्रोंकी तिथि निश्चित नहीं है।

३२१. पत्र : जमनालाल बजाजको

सोमवार [१९२७][1]

चि० जमनालाल,

इसके साथ राजेन्द्रबाबूका पत्र है। मैंने तो उन्हें लिखा है कि मामला वापस लेना हो तो ले भले ही ले; पर वहाँ बैजनाथजीको एक बार लिखनेके बाद इसे वापस नहीं लिया जा सकता। मुझे इस पत्रसे दुःख हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० २८८१) की फोटो-नकलसे।

३२२. पत्र : प्रभावतीको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
सोमवार [२ जनवरी, १९२८][2]

चि० प्रभावती,

तुमारे दोनों पत्र मीले थे। तुमको यहा लानेका मैंने तो खूब प्रयत्न कीया। अब भी हो रहा है। देखें विधाता क्या चाहता है। 'गीताजी' के दूसरे अध्यायका श्लोक याद करो: दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।[3]

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। मै यहा कमसे-कम तीन मासतक तो हु। मृत्युजय[4] और विद्यावती[5] दोनो अच्छे हैं।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ३३०३ की फोटो-नकलसे।

१. पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वादमें भी इस पत्रको १९२७के पत्रोंके साथ ही रखा गया है।

२. गांधीजीके अगले "तीन मासतक" आश्रममें ही ठहरनेके उल्लेखसे यह पत्र जनवरी, १९२८ के प्रथम सप्ताहमें लिखा प्रतीत होता है; देखिए "पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको", ५-१-१९२८।

३. २, ५६।

४. राजेन्द्रप्रसादका पुत्र।

५. मृत्युजयकी पत्नी और प्रभावतीकी बहन।

३२३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको[1]

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
४ जनवरी, १९२८

असंशोधित

प्रिय जवाहरलाल,

मेरा खयाल है, तुम्हें मुझसे इतना अधिक प्रेम है कि मैं जो-कुछ लिखने जा रहा हूँ उसका तुम बुरा नहीं मानोगे। जो हो, मुझे तुमसे इतना ज्यादा प्रेम है कि जब मुझे लिखनेकी जरूरत महसूस होती है, मैं अपनी कलम रोक नहीं सकता।

तुम बहुत ही तेज चालसे चल रहे हो। तुम्हें सोचने-विचारने और परिस्थितिके अनुकूल बननेके लिए कुछ समय लेना चाहिए था। तुमने जो प्रस्ताव तैयार किये और पास कराये, उनमें से अधिकांशके लिए एक सालतक रुका जा सकता था। गणतन्त्रीय सेना (रिपब्लिकन आर्मी) में तुम्हारा कूद पड़ना जल्दबाजीका कदम था। परन्तु मुझे तुम्हारे इन कामोकी इतनी चिन्ता नही, जितनी इस बातकी कि तुम शरारतियों और उपद्रवियोंको प्रोत्साहन दे रहे हो। पता नही, तुम अब भी विशुद्ध अहिंसामें विश्वास करते हो या नहीं। परन्तु तुमने अपने विचार बदल दिये हों तो भी तुम यह तो नही सोच सकते कि अनधिकृत और अनियन्त्रित हिंसासे देशका उद्धार होनेवाला है। अगर अपने यूरोपीय अनुभवोंके प्रकाशमें देशकी परिस्थितिका सावधानीसे अध्ययन करनेपर तुम्हें विश्वास हो गया हो कि प्रचलित तौर-तरीके गलत है तो बेशक अपने ही विचारोंपर अमल करो, मगर मेहरबानी करके एक अनुशासनबद्ध दल तो बना लो। कानपुरका अनुभव तुम्हारे सामने है। प्रत्येक संग्रामके लिए ऐसे मनुष्योंकी टोलियोकी जरूरत रहती है जो अनुशासन मानें। अपने आदमियोंके चुनावके प्रति तुम्हारी लापरवाही देखकर लगता है कि तुम इस बातको अनदेखा कर रहे हो।

अब तुम राष्ट्रीय कांग्रेसके कार्यवाहक मन्त्री हो। ऐसी सूरतमें अगर मैं तुम्हें सलाह दे सकता हूँ तो वह यह है कि तुम्हारा कर्त्तव्य है कि एकता विषयक केन्द्रीय प्रस्तावपर और साइमन-कमीशनके[2] बहिष्कारके महत्त्वपूर्ण, परन्तु गौण प्रस्तावपर ही अपनी सारी शक्ति लगाओ। एकता विषयक प्रस्तावको[3] तुम्हारी जबर्दस्त संगठन-क्षमता और जनताको समझाने-बुझानेके तुम्हारे तमाम बड़े गुणोंके उपयोगकी जरूरत है।

१. यह पत्र जवाहरलाल नेहरूकी निम्नलिखित टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था: "मैं यूरोपसे दिसम्बर १९२७ में लौटा और सीधा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके मद्रास अधिवेशनमें चला गया। वहाँ मेरे सुझावपर कई-एक प्रस्ताव पास हुए। यह पत्र गांधीजीने इसलिए लिखा क्योंकि वे इस अधिवेशनमें मेरे कुछ कामोंसे खुश नहीं थे"।

२. देखिए परिशिष्ट ७।

३. देखिए परिशिष्ट ९।

मेरे पास अपनी बातोंको विस्तारसे कहनेके लिए समय नही है, परन्तु बुद्धिमान के लिए इशारा ही काफी होना चाहिए।

आशा है, कमलाका स्वास्थ्य उतना ही अच्छा होगा जितना यूरोपमें था।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स

३२४. स्मृतिमें

हकीम साहब अजमल खांके स्वर्गवाससे देशका एक सबसे सच्चा सेवक उठ गया। हकीम साहबका व्यक्तित्व बहुमुखी था। वे महज एक ऐसे कामिल हकीम ही नहीं थे, जो गरीबों और धनिको, सबका समान भावसे इलाज करता है बल्कि इस देशभक्तकी रसाई राज-दरबारोमें थी। हालाँकि उनका वक्त राजो-महाराजोके साथ बीतता था, मगर थे वे पक्के प्रजावादी। वे बहुत बड़े मुसलमान थे, और उतने ही बड़े हिन्दुस्तानी भी। हिन्दू और मुसलमान दोनो ही से वे एक-सा प्रेम करते थे। बदलेमें हिन्दू और मुसलमान दोनो ही उनसे एक-सी मुहब्बत रखते थे, उनकी इज्जत करते थे। हिन्दू-मुस्लिम एकतापर वे जान देते थे। हमारे झगड़ोके कारण वे अपने अन्तिम दिनोमें दुखी हो गये थे। मगर अपने देश और देशबन्धुओमें उनका विश्वास कभी नष्ट नही हुआ। उनका खयाल था कि आखिर दोनो सम्प्रदाय एक दिन गले मिलकर रहेंगे। यह अटल विश्वास लेकर उन्होंने एकताके लिए प्रयत्न करना कभी नहीं छोड़ा। यद्यपि उन्हें सोचनेमें कुछ समय लगा था, मगर आखिर वे असहयोग आन्दोलनमें कूद ही पड़े और अपनी सबसे प्रिय और सबसे बड़ी कृति तिब्बिया कालेजको खतरेमें डालते हुए भी वे नही झिझके। इस कालेजसे उनका ऐसा प्रबल अनुराग था जिसका अन्दाजा सिर्फ वे ही लगा सकते है जो हकीमजीको भली-भाँति जानते थे। हकीमजीके स्वर्गवाससे मैंने न सिर्फ एक बुद्धिमान और दृढ़ साथी ही खोया है बल्कि एक ऐसा मित्र भी खोया है जिसपर मैं आड़े वक्तमें भरोसा कर सकता था। हिन्दू-मुस्लिम एकताके बारेमें वे हमेशा ही मेरे रहबर थे। अपनी निर्णय-शक्ति, संयमित स्वभाव और मनुष्य-प्रकृतिके ज्ञानके आधारपर वे बहुत करके सही फैसला ही किया करते थे। ऐसा आदमी कभी मरता नही है। यद्यपि उनका शरीर अब नही रहा, मगर उनकी भावना तो हमारे साथ बराबर रहेगी, और वह अब भी हमें अपना कर्त्तव्य पूरा करनेकी प्रेरणा दे रही है। जबतक हम सच्ची हिन्दू-मुस्लिम एकता पैदा नही कर लेते, उनकी याद बनाये रखनेके लिए हमारा बनाया कोई स्मारक पूर्ण नही कहा जा सकता। परमात्मा करे कि जो काम हम उनके जीते-जी नही कर सके, वह उनके निधनसे करना सीख लें।

मगर हकीमजी कोरे स्वप्न-द्रष्टा नही थे। उन्हें विश्वास था कि उनका स्वप्न एक दिन पूरा होगा ही। जिस तरह तिब्बिया कालेजके जरिये उनका देशी चिकित्साका

स्वप्न फला, उसी तरह अपना राजनीतिक स्वप्न भी उन्होंने जामिया मिलियाके जरिये फलीभूत करनेकी कोशिश की। जब कि जामिया मरने-मरनेको था, उस समय हकीम साहबने प्रायः अकेले ही उसे अलीगढ़से दिल्ली लानेका सारा भार उठाया। मगर जामियाको हटानेसे उनकी चिन्ताएँ भी बढ़ गई। तबसे वे अपनेको जामियाकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करनेके लिए खास तौरपर जिम्मेवार मानने लगे थे और उसके लिए धन जमा करनेमें वे ही मुख्य व्यक्ति थे, चाहे वे अपने ही पाससे दें या अपने दोस्तोंसे चन्दे दिलवायें। इस समय जो स्मारक देश तुरन्त ही बना सकता है, और जिसका बनाया जाना अनिवार्य है, वह है जामिया मिलियाकी आर्थिक स्थितिको पक्की कर देना। हिन्दू और मुसलमान, दोनोंको इसमें एक समान दिलचस्पी है और होनी चाहिए। अबतक देशमें चार राष्ट्रीय विद्यापीठ किसी तरह अपनेको चला रहे हैं। उनमें से जामिया मिलिया एक है। अन्य तीन हैं, बिहार, काशी और गुजरात विद्यापीठ। जामियाकी स्थापनाके समय हिन्दुओंने दिल खोलकर सहायता दी थी। इस मुस्लिम संस्थामें राष्ट्रीय आदर्श अक्षुण्ण बना हुआ है। पाठकोंका ध्यान मैं श्रीयुत रामचन्द्रनके[1] लेखकी[2] ओर आकर्षित करता हूँ जो १२ महीनेके अनुभवसे लिखा गया है। इसके प्रधानाचार्य मौलाना जाकिर हुसेन उदार विचारवाले बड़े विद्वान पुरुष हैं। और उनकी उदार राष्ट्रीयतामें कोई शक हो नहीं सकता। मौलाना जाकिर हुसेनके सहायक कई चुने हुए योग्य अध्यापक हैं जिनमें कई एक विदेशोंमें घूमे हुए और वहाँकी उपाधियाँ लिये हुए हैं। दिल्लीमें ले जानेके बादसे संस्थाकी उन्नति ही हुई है, और अगर पर्याप्त सहायता मिले तो वह बड़े सुन्दर फल दे सकती है। इसमें कोई शक ही नहीं कि जो हिन्दू और मुसलमान हकीम साहबकी स्मृतिका आदर करना चाहते हैं, जो असहयोगके रचनात्मक कार्यक्रममें विश्वास रखते हैं और हिन्दू-मुस्लिम एकतामें विश्वास करते हैं, उनका कर्त्तव्य है कि उनसे जितनी हो सके, इस संस्थाको आर्थिक सहायता दें। डा० अन्सारी,[3] श्रीयुत श्रीनिवास अय्यंगार, श्रीयुत जमनालाल बजाज और पण्डित जवाहरलाल नेहरू इस सम्बन्धमें एक अपील निकाल चुके हैं। मैं आचार्य जाकिर हुसेनके जरिये संस्थाकी असली हालतका पता लगानेकी कोशिश कर रहा हूँ और डा० अन्सारीसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। ज्यों ही मुझे काफी जानकारी मिल जायेगी, मैं पाठकोंके सामने रख दूँगा। लेकिन इस बीच समय व्यर्थ न जाये, इसलिए मेरी प्रार्थना है कि लोग सहायता भेजनी शुरू कर दें। जबतक कि एक समुचित समिति नहीं बन जाती और चन्देका बिलकुल समुचित प्रबन्ध नहीं हो जाता, इस मदमें प्राप्त राशि किसीको नहीं दी जायेगी। मैं आशा करता हूँ कि चन्दा देनेमें हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेसे होड़ लगायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२८

१. जी० रामचन्द्रन, एक गांधीवादी शिक्षाविद्।

२. ५-१-१९२८के यंग इंडियामें प्रकाशित "व्हाट आई सॉ इन द जामिया" (मैंने जामियामें क्या देखा) शीर्षक लेख।

३. डा० मु० अ० अन्सारी।

३२५. राष्ट्रीय कांग्रेस

एकता

डाक्टर अन्सारीके भाषणकी विशेषता थी एकताके लिए उनकी प्रवल इच्छा। वे जानते थे कि उनसे एकता स्थापित करनेकी आशा की जाती थी। और अगर यह काम सिर्फ किसी एक आदमीके बूतेका था तो वह केवल एक डाक्टर अन्सारी ही थे। राष्ट्रका दिया हुआ सर्वश्रेष्ठ सम्मान उन्होने इसीलिए स्वीकार किया कि उन्हें राष्ट्रमें, इस कार्यमें और अपने आपमें विश्वास था। उन्होने इस महत्वाकाक्षाकी पूर्तिके लिए निश्चय ही कुछ उठा नही रखा। भाग्यने भी उनका साथ दिया। श्रीयुत श्रीनिवास अय्यंगारने भी अपनी अपार साहसशीलतासे उन्हे सहायता पहुँचाई। शिमलेकी आशिक विफलताके बाद कोई भी अन्य सभापति उनके जैसा काम करनेका साहस शायद नही कर सकता था। मगर श्रीनिवास अय्यंगार तो पीछे हटनेवाले आदमी नही थे। उन्होने डाक्टर अन्सारी, अली भाइयो और मौलाना अवुल कलाम आजादको अपने साथ लेकर अपने स्वाभाविक जोरोशोरसे अपना प्रस्ताव स्वीकार करा ही लिया। वे किसी एक सूत्रको पकड़ कर नही बैठे। जब आखिर बाजे और गोकुशीवाले प्रस्तावकी भयंकर त्रुटि — लगभग घातक त्रुटि — उन्हे बतलाई गई, जिसके कारण प्रायः सारीकी-सारी ही बात विगड़ी जा रही थी और उन्हे उसके स्थानपर दूसरी बात सुझाई गई, तो उन्होने सच्चे मनसे, स्पष्ट रूपसे और उदारताके साथ वह दोष मान लिया और सुझाव स्वीकार कर लिया और कहा कि इस सशोधनसे मूल प्रस्ताव कही वेहतर बन जाता है। मुसलमानोने भी ऐन मौकेपर बात सम्भाल ली। शुरूमें उन्हें कुछ हिचकिचाहट और झिझक तो थी, मगर अन्तमें उन्होने भी संशोधित प्रस्तावको बिना शर्त मान लिया। पण्डित मालवीयजी जहांतक उनसे बन पडे लोगोकी सामान्य इच्छाके मुताविक चलनेकी पूरी नीयतसे ही आये थे। वह जानते थे, और अन्य सभी लोग इस बातको समझते थे कि अगर वह चाहें तो एकताका रास्ता वन्द कर सकते है। मगर उन्होने यह नही किया। वेशक, कई संशोधन जो वह जरूरी समझते थे उन्होने पेश किये, मगर उनके संशोधन यदि अस्वीकृत होते तो भी वे मूल प्रस्तावका विरोध करनेवाले नही थे। शायद पण्डित मालवीयजीसे पुराना दूसरा कोई काग्रेसी नही है। कांग्रेसके प्रति उनकी निष्ठा अतुलनीय है। उनका देश-प्रेम ऊँचेसे-ऊँचे दर्जेका है। मगर अवतक मेरे मुसलमान मित्र साम्प्रदायिकताको लेकर उनकी सदाशयता और राष्ट्रवादितामें मेरे विश्वासको हमेशा ही कम अहमियत देते रहे है। हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नपर कही-कही मेरा उनका मतैक्य नही हुआ, लेकिन वहाँ भी मै उन्हे शककी निगाहसे नही देख सका। इसलिए मेरे लिए यह वड़ी खुशीकी बात रही कि अली भाइयोने एकताके प्रस्तावपर उनके उस महान भाषणको बहुत पसन्द किया। जबतक हिन्दू और मुसलमान नेता एक दूसरेकी नीयत, भाषणों, और कार्योंको

अविश्वासकी दृष्टिसे देखते है, तबतक सर्वाङ्गीण प्रस्तावोंके बावजूद सच्ची एकता नही हो सकती। आइए, हम आशा करें कि कांग्रेस अधिवेशनमें जो विश्वास पैदा हुआ है, वह कायम रहेगा और सर्वत्र छा जायेगा। मालवीयजीके भाषणसे खुश होकर मौलाना मुहम्मद अलीने कहा कि अब मुसलमान लॉर्ड विन्टरटनसे अल्पसंख्यकोंकी हिफाजतकी प्रार्थना नही करना चाहते क्योंकि यह काम मालवीयजी ज्यादा अच्छी तरह कर सकते है। अगर कोई एक हिन्दू अकेला ही मुसलमानोंको हिन्दुओंकी ओरसे ऐसी रक्षाका वचन दे सकता है तो वह केवल मालवीयजी ही हैं। मालवीयजी हिफाजत कर सकें या न कर सकें, मगर मैं चाहता हूँ कि मौलाना साहब और दूसरे मुसलमान और सभी अल्प-संख्यक लोग यह खयाल दिलसे हमेशाके लिए निकाल दें कि कोई तीसरा हमारी रक्षा करेगा और न उससे उसकी उम्मीद रखनी चाहिए। अगर बहुसंख्यक लोग स्वयं ही अपनी इच्छासे ऐसी हिफाजतकी गारंटी न दें तो तीसरे किसीकी मदद लेनेकी बनिस्बत कही अच्छा होगा कि उनके अनिच्छुक हाथोसे उसे जबर्दस्ती छीन लिया जाये। तीसरे किसीको हस्तक्षेपके लिए बुलाया जायेगा तो वह दोनोंको कमजोर और जलील करेगा और राष्ट्रको गुलाम बनाये रखेगा। इसीलिए मै तो कांग्रेस अधिवेशनका सबसे बड़ा योगदान इस हृदय-परिवर्तनको ही मानता हूँ।

जहाँतक अधिकांश हिन्दुओंका ताल्लुक है वे तो सिर्फ बाजे और गायवाले प्रस्तावमें दिलचस्पी रखते है। इस प्रस्तावका मूल रूप तो बहुत ही बुरा था। और अन्तमें विषय-निर्धारिणी समितिसे स्वीकृत होकर वह जिस रूपमें निकला, उसके बारेमें सिर्फ इतना ही कहा जा सकता है कि वह निर्दोष है और हमारे राष्ट्रीय विकास-की वर्तमान स्थितिमें उसका सबसे अच्छा वही रूप स्वीकृत हो सकता था। पर कमसे कम मैं तो उसपर खुशियाँ नही मना सकता। मै तो उसे सिर्फ एक कामचलाऊ प्रस्ताव ही मान सकता हूँ। फिर भी इस प्रस्तावमें काफी सम्भावनाएँ मौजूद है। कांग्रेसकी अपील हिन्दुओं और मुसलमानोके दिलोंमें घर कर सके और दोनों सम्प्रदाय एक दूसरेके दावोके साथ जुड़ी हुई भावनाओंकी परस्पर कद्र करने लगें तो शान्ति-स्थापनाकी आशा मूर्त होते दिखने लगती है और स्वराज्यका लक्ष्य प्राप्त करना बिलकुल सरल लगने लगता है। लॉर्ड बर्कनहेडने बड़े दम्भसे ब्रिटिश साम्राज्यकी ताकत-का डंका पीटकर समूचे राष्ट्रको आतंकित करनेकी जो कोशिश की है उसका सबसे अच्छा और गरिमापूर्ण उत्तर यही होगा कि हम आपसकी सिर-फुटौवलकी अपनी बेवकूफीको समझ लें और इस नई समझके अनुरूप मिल-जुलकर कोई कदम उठायें।[1]

इसलिए कांग्रेस द्वारा की गई अपीलका अर्थ समझनेका प्रयास फलप्रद होगा। मैं जानता हूँ कि गौ के बारेमें हिन्दुओंकी भावनाओको तुष्ट करनेके लिए क्या किया जाना चाहिए। जबतक मुसलमान स्वेच्छापूर्वक खान-पान और कुर्बानी, दोनों ही के लिए गो-वध बिलकुल ही बन्द नहीं कर देते, तबतक यह होनेका नही। अगर कोई अत्याचारी शासक तलवारके बलपर गो-वध बन्द करा दे तो उससे हिन्दू-धर्म सन्तुष्ट

१. देखिए खण्ड ३७।

नहीं होगा। हिन्दुस्तानमें इस्लाम हिन्दू धर्मको इससे अच्छा कोई उपहार नहीं दे सकता कि वह गो-वध बन्द करके स्वैच्छिक आत्मत्याग करे। और मुझे इस्लामकी इतनी जानकारी तो है कि मैं यह दावेके साथ कह सकता हूँ कि इस्लाम गो-वधको अनिवार्य नहीं बताता। हाँ, मगर अपने अनुयायियोंको इसके लिए लाचार जरूर करता है कि वे अपने पड़ोसियोंकी भावनाओंका जहाँतक सम्भव हो सम्मान करे। मेरे लिए मस्जिदों के आगे बाजे बजानेका सवाल गो-वधके बराबर महत्त्वपूर्ण नही है। मगर अब इसका भी महत्त्व इतना बढ गया है कि उसकी उपेक्षा करना बेवकूफी होगी। यह तो मुसलमानोंके ही कहनेकी बात है कि उनकी भावनाओंकी रक्षाके लिए क्या करना चाहिए। और अगर मस्जिदोंके आगे बाजे बजाना कतई बन्द करनेसे ही मुसलमानोकी भावनाओं की रक्षा हो सके तो बिना एक क्षण भी खोये ऐसा करना हिन्दुओंका कर्त्तव्य है। अगर हमें हार्दिक एकता चाहिए तो हममें से हर एकको यथेष्ट त्याग करनेको तैयार रहना चाहिए।

अगर यह चिरवांछित परिणति होनी है, एकता स्थापित होनी है, तो डाक्टर अन्सारीको शान्ति-जत्थे भेजने होंगे जो इस सन्देशका प्रचार करें और जनतासे इसे स्वीकार करायें। क्या हमारे पास इस सन्देशका प्रचार करनेके लिए यथेष्ट शक्ति, काफी ईमानदार, मेहनती और तत्पर प्रचारक हैं? आइए, हम आशा करें कि है।

गैर-जिम्मेदारी

मैं विषय-निर्धारिणी-समितिकी एक भी बैठकमें शामिल तो नहीं हो सका, मगर यह मैंने जरूर देखा है कि गैर-जिम्मेदाराना बातें और काम वहाँ आम बातें थी। अनुशासनहीनता भी दिखाई पड़ती है। ऐसे बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव भी समितिके आगे बिना किसी तैयारीके सहसा पेश कर दिये गये जिनके परिणाम बड़े व्यापक और गहरे निकलने थे और उनको भी इस महती समितिने बिना अधिक चर्चा या बहसके सरसरी तौरपर स्वीकार कर लिया। इंडिपेंडेन्स (स्वतन्त्रता) वाला प्रस्ताव[1] पिछले साल नामंजूर हुआ था, मगर इस साल वह स्वीकार कर लिया गया और उसका विरोध भी प्रायः नही के बराबर हुआ। मैं जानता हूँ कि उसकी शब्दावलीमें कोई दोष नहीं, मगर मेरी नम्र सम्मतिमें वह उतावलीमें सोचा और बिना विचारे स्वीकार किया गया है। मैं इस प्रस्तावपर शीघ्र ही किसी अंकमें एक स्वतन्त्र लेख द्वारा अपने विचार रखनेकी बात सोच रहा हूँ।[2]

ब्रिटिश या अंग्रेजी मालके बहिष्कारका प्रस्ताव भी ऐसा ही सरसरी तौरपर स्वीकार किया गया था। कांग्रेस साल-दर-साल ऐसे प्रस्ताव स्वीकार करके अपने अन्दर कुण्ठा पैदा करती है जिनके बारेमें वह जानती है कि उन्हें प्रभावी नही बना सकती। ऐसे प्रस्ताव स्वीकार करनेसे हमारी नामर्दी ही जाहिर होती है, आलोचक हमपर हँसते हैं और हमारे विरोधी हमें नीची नजरसे देखने लगते है।

१. देखिए "भेंट: इंडियन डेली मेलके प्रतिनिधिसे", ३०-१२-१९२७ की पाद-टिप्पणी।
२. देखिए "स्वतन्त्रता बनाम स्वराज्य", १२-१-१९२८।

मगर मेरी बातका गलत मतलब न लगाया जाये। अगर कांग्रेस चाहे तो ब्रिटिश मालका बहिष्कार करनेका उसे पूरा हक है। मगर भारतवर्षमें सबसे अधिक प्रातिनिधिक संस्था होनेके कारण उसे वैसी धमकियाँ देकर अपना मजाक करवानेका कोई अधिकार नहीं, जिन्हें वह पूरा नहीं कर सकती। कांग्रेस द्वारा स्वीकार किये हुए कई गैर-जिम्मेदाराना प्रस्तावोंमें से मैंने दो बतौर नमूनेके चुन लिये है।

कांग्रेसका विधान इस खयालसे बनाया गया था कि जिससे वह सारे भारतवर्षमें सबसे अधिक प्रातिनिधिक तथा प्रामाणिक संस्था बने और करोड़ों आम लोग उसके आदेश स्वेच्छापूर्वक मानें जिससे वह अपने आप ही, बल्कि महसूस भी न हो ऐसी गतिसे उन झूठी, नकली और हमें गुलाम बनानेवाली परिषदों, विधानसभाओं और दूसरी विदेशी संस्थाओंकी जगह ले ले जो प्रातिनिधिक होनेका स्वाँग धारण किये हुए हैं। मगर तबतक तो कांग्रेस वैसी अपराजेय शक्ति नहीं बन सकती, जो वह पहले थी या जिसके होनेकी हम इससे आशा रखते हैं, जबतक इसके प्रस्ताव महज कागजी लिखापढ़ी बने रहें और जनता उनसे तनिक भी अनुप्राणित न हो, या उनका देशकी आवश्यकताओं और आकांक्षाओंसे कोई सम्बन्ध न हो, और उसके सदस्य अनुशासनका पालन नहीं करें तथा शिष्टता और साधारण ईमानदारीको भी उठाकर ताकमें रख दें। अगर अ० भा० राष्ट्रीय कांग्रेसकी महासमितिके सदस्योंको इसका सिर्फ ज्ञान हो जाये, वे यह मानने लगें कि वे राष्ट्रके सेवक हैं तो फिर सेवाके ऐसे मौके और अधिकार उन्हें प्राप्त ही है जो संसारके किसी देशकी राष्ट्रीय संसदके सदस्योंको प्राप्त हैं। मगर फिलहाल तो हम स्कूली लड़कोंकी वाद-विवाद सभाओंकी ही बराबरी कर रहे हैं।

कार्य-समिति तो राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डल है। उसे कांग्रेस और महासमितिके प्रस्तावोंके अनुसार कार्य कराना है। इसलिए कांग्रेसके ध्येयकी प्राप्तिके लिए अपेक्षित प्रस्तावोंको महासमितिमें लानेका भार उसीपर है। अ० भा० राष्ट्रीय कांग्रेसमें अगर कोई दूसरा सदस्य अचानक कोई प्रस्ताव कर बैठे तो उसकी बड़ी सावधानीसे परीक्षा की जानी चाहिए, और अगर कार्य-समिति उसका विरोध करे तो उस प्रस्तावके स्वीकृत होनेकी सम्भावना बहुत ही कम होनी चाहिए। चाहे कार्य-समितिका हो, या किसी दूसरे सदस्यका, मगर हरएक प्रस्तावके साथ कामकी योजना तो होनी ही चाहिए। इसलिए अगर दूसरा कोई सदस्य अपनी जाती हैसियतसे कोई प्रस्ताव करे तो उसे इसके लिए तैयार रहना चाहिए कि प्रस्ताव स्वीकृत होनेपर वह बतला सके कि कामकी योजना क्या होगी। अगर कोई यह प्रस्ताव करे कि हिन्दुस्तानके गाँव-गाँवमें बड़ी उम्रवालोंके लिए निःशुल्क रात्रि-पाठशालाएँ खोली जायें तो कांग्रेसके लिए यह प्रस्ताव सभी तरहसे पसन्द करने लायक है। किन्तु अगर प्रस्तावकके पास कामकी कोई निश्चित और व्यावहारिक योजना न हो तो कांग्रेसके लिए उस प्रस्तावको अस्वीकार करना ही उचित होगा, उसे अस्वीकार करना ही पड़ेगा। इसलिए अगर कांग्रेसकी प्रतिष्ठा और उपयोगिता बनाये रखनी है तो अ० भा० राष्ट्रीय कांग्रेसके सदस्योंको अपना दृष्टिकोण बदलना पड़ेगा और अपनी बहुत बड़ी जिम्मेवारी समझनी पड़ेगी।

हाथी और चींटी

मेरी नम्र सम्मतिमें मद्रास-कांग्रेसकी स्वागत-समितिने उस नाम-मात्रकी अखिल भारतीय प्रदर्शनीको अपने तत्वाववानमें आयोजित करनेकी अनुमति देकर भारी भूल की। उस प्रदर्शनीमें अगर कोई खूबी रही भी हो तो सरकारी छत्रछाया और स्वीकृतिने उसे नष्ट ही किया, रौनक नहीं बख्शी। कांग्रेस बहुत पहलेसे ही सरकारी कृपा या कोपकी मुखापेक्षी नही रही है। अगर और पहलेसे नहीं तो कमसे-कम १९१८ से कांग्रेस जिन आदर्शोके लिए काम कर रही है, इस प्रदर्शनीमें प्रायः वे सबके-सब भुला दिये गये थे। अखिल भारतीय प्रदर्शनीमें था क्या? मण्डपोंमें से कई एक तो विलायती कम्पनियोंको अपना माल प्रदर्शित करनेके लिए दिये गये थे। एक मण्डपमें मशीनें और मशीनी सामान था, कुछ मण्डपोंमें विदेशी सूतके कपड़े चमक रहे थे, तो कुछमें विदेशी घड़ियाँ सजी थी। वहाँ प्रदर्शनीमें स्वदेशी सामान तो बहुत कम था, मगर विदेशी और अंग्रेजी मालकी भरमार थी। और वह भी कहाँ? उस काग्रेसकी छत्र-छायामें जो स्वदेशीका धर्म सिखलाती है और जिसके कार्यक्रममें अंग्रेजी मालका बहिष्कार भी शामिल है। उसमें शायद ही कोई चीज रही हो जिसमें गाँववालोंका मन लगे या उनसे वे कुछ सीख सकें। इस प्रदर्शनीमें भारतवर्षकी ग्राम-सभ्यताकी नहीं परन्तु पश्चिमकी लुटेरी नागरिक सभ्यताकी झलक थी। इसका आयोजन कांग्रेसकी भावनाको झुठलाना था; यह प्रदर्शनी पिछले छः सालकी खादी और स्वदेशी प्रदर्शनियोंके तो बिलकुल विपरीत थी। कपड़ेका बाजार तो मानो खादीका मखौल उड़ानेके लिए ही बनाया गया था, हालाँकि कांग्रेस अब भी सूत-मताधिकारको मानती है और अखिल भारतीय चरखा संघके कार्यका समर्थन करती है। सभी विज्ञप्तियाँ अंग्रेजीमें छपी थी, मानो उसे सिर्फ अंग्रेज ही देखने आनेवाले थे। खादीका महत्त्व घटानेवाली एक विज्ञप्ति नीचे दी जाती है:

> **गरीबोंको खिलाओ और समर्थोसे काम कराओ,**
> **चरखेसे भरनीका सूत कातो और तानेका सूत मिलोंसे लो,**
> **दोनोंके मेलमें ही उद्धार है।**

अगर इस विज्ञापनके लेखककी नीयत ही सोच-समझकर हानि पहुँचानेकी न हो, तो उसने खादीके विकासका अपना अज्ञान ही प्रदर्शित किया है। इन पृष्ठोंमें हाथके कते सूतका बाना और मिलके सूतका ताना बनानेकी मिथ्या धारणाकी असलियत कितनी ही बार दिखलाई जा चुकी है। यहाँ इतना ही कहना काफी होगा कि अगर चरखेके सूतका केवल बाना ही भरनेकी नीति कुछ दिनतक चलती तो चरखा कमीका अपनी कुदरती मौत मर गया होता। अनुभवसे पता चलता है कि यह जोड़ी हर तरहसे बुरी ही है।

अब यह दूसरी विज्ञप्ति, अगर उससे बढ़-चढ़कर नही तो कम बुरी भी नही है:

> **जुलाहेसे ताना भी हाथकते सूतका बनवाना**
> **मानो उसे एक छुरी लेकर जहाज-भर लोगोंसे लड़नेको भेजना है।**
> **उसके कामका अच्छेसे-अच्छा तरीका छुड़वाना तो मानो उसका अँगूठा**
> **ही काट डालना है।**

इस विज्ञप्तिसे तो खादीके विरुद्ध जहरीला पक्षपात और बुनाई कलाका तथा जुलाहोंकी स्थितिका अज्ञान ही टपकता है। लेखक यह भूल जाता है कि दुनियामें एक दिन वह भी था, जब सारे संसारमें ताना और बाना, दोनों ही के लिए हाथकता सूत इस्तेमाल करनेमें जुलाहोंको खुशी होती थी और उन्होंने उस समय जो कला दिखलाई थी, उससे आगे अबतक कोई नहीं बढ़ सका है। इस सुन्दर अ० भा० प्रदर्शनीके बाहर ही खादी-प्रदर्शनीमें जाकर लेखक अपनी भूल तुरन्त ही सुधार सकता था। वहाँ वह देखता कि जुलाहे उसी आराम और सहूलियतसे चरखेके सूतके ताने-बानेका अत्यन्त सुन्दर कपड़ा बुन रहे थे, जिस सहजतासे वे मिलके सूतसे बुनते। यह साबित करना मुश्किल नहीं है कि जहाँ मिलका सूत अन्तमें, और वह भी बहुत देरके बाद नहीं, शीघ्र ही जुलाहेको मार डालेगा, यह चरखेका सूत उसे जरूर ही जिन्दगी देगा, और अभी भी वह कितने ही लोगोंको कसाईके काम या पाखाना साफ करनेके कामसे बचा भी चुका है। हर दस कतैयेके पीछे एक बुननेवाला जरूर ही दिनभर बुननेमें लगा रहता है, एक धुनियेको रोज सारे दिन करनेको काम मिल जाता है — धोबियों, दर्जियों, बढ़ई-लोहारों, रंगरेजों और छीपों वगैराको जो अधिक काम मिलता है, उसका तो जिक्र ही नहीं।

इस विदेशी और भारत-विरोधी भावनावाली प्रदर्शनीका कांग्रेसके तत्वावधानमें होना ही, ऊपर बतलाई गैर-जिम्मेदारीकी भावनाका एक प्रत्यक्ष और जबर्दस्त प्रमाण है। मेरा मन यह नहीं मानता कि किसी कांग्रेसीने यह बला सोच-समझकर अपने सिर ली होगी। पर मैं यह कहे बिना भी नहीं रह सकता कि इस घुटालेका कारण है अविवेक, असावधानी और दायित्वहीनता।

बेशक खादी-प्रदर्शनी रूपी चींटीको इस हाथीखानेके बाहर फेंक देना अच्छा ही रहा। अफवाह तो है कि मद्रास सरकारको अ० भा० प्रदर्शनीके भीतर खादी प्रदर्शनीका किया जाना मंजूर नहीं था। मुझे तो इससे जरूर ही सुविधा हुई। क्योंकि इस प्रदर्शनीकी असलियतका कुछ पता पा लेनेके बाद, मेरे लिए खादी-प्रदर्शनी खोलनेके लिए भी मुख्यतः उस विदेशी प्रदर्शनीमें जाना जो हमारी राष्ट्रीय जिल्लतका परिचायक था, बहुत मुश्किल लगता। दूसरी ओर खादी-प्रदर्शनी चींटीके समान होते हुए भी स्वदेशी कलाका नमूना थी। यह तो खादी और उससे हो सकनेवाले कामोंको प्रत्यक्ष दिखलानेके लिए थी। इसके पास एक भारतीय ललित कला मण्डप भी था जो डाक्टर जेम्स एच० कजिन्सके परिश्रमका फल है। बेशक इस नामधारी अ० भा० प्रदर्शनीमें कुछ भारतीय या सोलहों आने भारतीय उद्योग द्वारा तैयार वस्तुएँ भी थी, मगर वह तो सिर्फ असावधान लोगोंको फँसा लेनेके लिए थी और विलायती मालके लिए — जिसकी वहाँपर प्रधानता थी — एक ढाल मात्र थीं।

भविष्यकी स्वागत-समितियाँ चेत जायें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२८

३२६. भारतकी कवयित्रीको निमन्त्रण

श्रीमती सरोजिनी देवीको अमेरिकासे एक निमन्त्रण[1] मिला जिसका मुख्य उद्देश्य यह है कि कुमारी मेयोने असत्य और मिथ्या आरोपोंसे युक्त पुस्तक लिखकर जो नुकसान पहुँचाया है उसको वह निष्प्रभावी कर दें। भारतमें कितना ही कुछ लिखा जाये लेकिन वह सम्भवतः उस सनसनी फैलानेवाली महिला द्वारा की गई क्षतिको पूरी तरह दूर नहीं कर सकता जिसकी बातें सुनने और माननेके लिए सनसनीखेज खबरोंकी भूखी और उन्हींपर जीवित रहनेवाली मूढ़ जनता तैयार बैठी है। कोई भी विचारशील अमेरिकी कुमारी मेयोके अश्लील लेखोंपर कदापि विश्वास नहीं कर सकता। विचारशील अमेरिकीको किसी खण्डनकी जरूरत नहीं है। और सामान्य जनता, जो 'मदर इंडिया' से पहले ही प्रभावित हो चुकी है, भारतमें किये गये किसी खण्डनोंको कभी नहीं पढ़ेगी, चाहे वे कितने ही प्रभावशाली ढँगसे क्यों न किये गये हों। इसलिए अमेरिकामें यह बात ठीक ही सोची गई कि 'मदर इंडिया' के जवाबमें सरोजिनी देवीको अमेरिका बुलाया जाये, जहाँ वे दौरा करके व्याख्यान दें। यदि सरोजिनी देवी निमन्त्रणको स्वीकार कर लें तो उनकी अमेरिका-यात्रासे वह क्षति कुछ हृदतक पूरी हो जायेगी जो कुमारी मेयोके उपन्यासने ढाई है। इसमें कोई सन्देह करनेकी जरूरत नहीं है कि वह जहाँ कहीं जायेंगी वहाँ बड़ी संख्यामें लोग उनका भाषण धीरज और आदरके साथ सुनेंगे। उन्होंने जिस प्रकार अपनी वक्तृताके जादूसे दक्षिण आफ्रिकी जनताको मुग्ध कर लिया था[2] और गोलमेज सम्मेलनके लिए, तथा माननीय श्रीनिवास शास्त्री अब जो महान कार्य वहाँ कर रहे हैं, उसके लिए मार्ग तैयार किया था, उसी प्रकार यह निश्चित है कि वे अपने भाषणके उसी जादूसे अमेरिकी जनताको भी मुग्ध कर लेंगी। हमें आशा करनी चाहिए कि उनके लिए निमन्त्रणको स्वीकार करना सम्भव होगा और डा० अन्सारी उन्हें विदेशमें उस कार्यको करनेके लिए मुक्त कर सकेंगे जो इस समय भारतकी इस प्रतिभाशाली पुत्रीको बुलाता प्रतीत होता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२८

१. देखिए "तार: धनगोपाल मुखर्जीको", १४-११-१९२७।

२. देखिए खण्ड २४।

३२७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
५ जनवरी, १९२८

भाई घनश्यामदासजी,

मैंने एक पत्र जमनालालजीके मार्फत भेजा था मीला होगा। एक तार भी भेजा था कि स्वास्थ ठीक न हो जाय तब तक एसेंबलीमें हरगीज न जायं। पू० मालवीजीसे कहना था परंतु इतनी वातोंमें हम रुक गये थे मुझे आपका स्मरण न रहा। अब इस वारेमें उनको लिखनेकी आवश्यकता नहीं समझता हुं? रुपैये जमनालालजीके यहां ही भेजें होंगे। मैंने अब तक सुना नहिं है।

पू० मालवीजीके व्याख्यानका जादुई असर हुआ और वे इस वारेमें खूब प्रयत्न करनेका कहते थे। देखें क्या होता है।

मार्चकी आखर तक मैं आश्रममें हि हुंगा। १७ तारीखको पांच रोजके लीये काठीयावाड जाना होगा।[1]

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ६१५१ से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३२८. पत्र : मगनलाल गांधीको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
शुक्रवार [६ जनवरी, १९२८][2]

चि० मगनलाल,

तुम्हारे पत्रका पूरा उत्तर फिलहाल नहीं दिया जा सकेगा। अधिक मिलनेपर। ऊन और रेशमके कीड़ेके कोयोंका उद्योग अच्छा ही है। इस कामको हम एक खास हदतक ही हाथमें ले सकते हैं। मुझसे इस बारेमें विस्तारसे चर्चा करना।

कुसुमको मेरे आशीर्वाद देनेकी तो बात ही नहीं उठती क्योंकि मैं उसके विवाहमें नहीं जा सकूंगा। मुझे तो ऐसा लगता है कि जातिके प्रतिबन्धोंको तोड़ देनेपर

१. काठियावाड़ राजनीतिक परिषदके लिए।
२. मगनलाल गांधीको यह पत्र ७ जनवरी, १९२८ को मिला था।

ही हमारा छुटकारा होगा। किन्तु इस सम्बन्धमें मुझसे विस्तारपूर्वक सलाह-मशविरा कर लेना। इसके अतिरिक्त नवीन और धीरूके बारेमें भी मुझसे बातचीत कर लेना। यदि उनका खर्च माणेकलाल आदि दें तब तो हम उन्हें अवश्य रखेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१६७) की प्रतिसे।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

३२९. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
७ जनवरी, १९२८

प्रिय सतीश बाबू,

मैं आपके पत्रकी प्रतीक्षा करता रहा हूँ। यह स्पष्ट है कि आप अभी यात्रा करनेके योग्य नहीं है। इस ज्वरसे और कमजोरी बढ़ी होगी तथा स्वास्थ्य-लाभकी प्रगतिमें बाधा पड़ी होगी। मैं आशा करता हूँ कि ज्वर फिर नहीं आया है।

मुझे खुशी है कि जवाहरलाल और भरूचाने कुछ समय आपके साथ गुजारा।

आपने देखा होगा कि बहुमूल्य प्रदर्शनी और अन्य बहुत-सी चीजोंके बारेमें मैंने वह पहले ही कर दिया जो आपके मनमें था।

निखिल[1] कैसा है, और हेमप्रभादेवीको कैसा लगा?

मैं स्वस्थ प्रतीत होता हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५८०) की फोटो-नकलसे।

१. सतीश बाबूका पुत्र जो उस समय गम्भीर रूपसे बीमार था और जिसकी जुलाई, १९२८ में मृत्यु हो गई थी।

३३०. पत्र : नाजुकलाल चोकसीको

शनिवार [७ जनवरी, १९२८][1]

भाईश्री ५ नाजुकलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं बिलकुल ठीक हूँ। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि मैं मोती या बालकको अबतक देख भी नहीं सका। मै अपने दैनिक कार्योमें डूबा हुआ हूँ। यदि आनेकी इच्छा हो तो आ जाना। कुसुमबहन कह रही थी कि तुम्हें आधासीसी है। यह एक बुरा रोग है। इस रोगमें मिट्टीकी पट्टी लाभदायक सिद्ध होगी। खुराक भी हलकी ही होनी चाहिए। कुसुमबहनका काम जरा नाजुक है। अभीतक वह कोई काम चुन नही पाई है। जो मर्जीमें आता है और उसे रुचता है सो वह करती है। परन्तु चिन्ता करनेका कोई कारण नही है।

बापूके आशीर्वाद

भाईश्री नाजुकलाल
सेवाश्रम, भड़ौच

गुजराती (एस० एन० १२१४२) की फोटो-नकलसे।

३३१. 'गीता' पर प्रवचन[2]

७ जनवरी, १९२८

आजकी प्रार्थनामें ९ वें अध्यायपर बोलते हुए बापूने कहा :

जितनी मधुरतासे इस अध्यायका पाठ किया गया वास्तवमें यह अध्याय उतना ही मधुर है। आन्तरिक व्यथासे पीड़ित हमारे जैसे लोगोंके लिए — और अन्तरकी व्यथासे कौन पीड़ित नही है — यह रामबाण औषधिकी तरह है। हम सबके अन्तर विकारोंसे परिपूर्ण है और उन विकारोंको नष्ट करने तथा भगवानकी शरणमें जानेवालेके लिए यह भगवान द्वारा सुझाया गया उपाय है। इस अध्यायसे हमें यह भी पता चलता है कि जब 'गीता' लिखी गई थी तब वर्णाश्रम धर्ममें ऊँच-नीचका भेद घुस चुका था और लोग एक-दूसरेको अपनेसे नीचा मानने लगे थे। यों तो किसे उच्च कहा जाए और किसे नीच! जो पूर्णतः निर्विकार है वही दूसरोंपर अँगुली उठा सकता है। अपूर्ण व्यक्ति तो सभी एक जैसे होते हैं। और इस अध्यायमें

१. डाककी मुहरसे।
२. १२-१-१९२८ के यंग इंडिया, तथा १५-१-१९२८ के नवजीवनमें भी इन प्रवचनोंकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी। उनसे भी इसे मिला लिया गया है। गांधीजीने ये प्रवचन ६ और ७ जनवरीको दिये थे।

सबके लिए रामबाण औषधि बताई गई है। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि बिना प्रयत्न किये किसी व्यक्तिके सभी विकार धुल जायेंगे। यदि कोई मनुष्य इन्द्रियोंके वशीभूत होकर अनिच्छापूर्वक विषयोंकी ओर खिंचा चला जाता है तो ऐसी स्थितिमें जब वह अथक प्रयत्न करते हुए और हृदयसे पश्चाताप करते हुए भगवानकी शरण लेता है तो भगवान उसे निश्चय ही विकारोंसे मुक्त कर देंगे।

इससे एक दूसरा विचार भी मनमें उठता है, किन्तु उसपर हम कल विचार करेंगे।

वह विचार यह है कि इस अध्यायमें पापोंके प्रायश्चित्तका उल्लेख भी किया गया है। और पापका प्रायश्चित्त उपवास नहीं बल्कि भक्ति है, प्रपत्ति है। उपवासकी उपयोगिताको मैं भली-भाँति समझता हूँ, किन्तु उसकी भी एक सीमा है। पापका प्रायश्चित्त उपवास तो हो ही नहीं सकता कदाचित् यह सम्भव है कि उपवास उस पापको ही छिपा दे। पापीका अर्थ है पाप करनेवाला किन्तु पापयोनिका अर्थ है पापी योनिसे जन्मा हुआ अर्थात् जो महापापी हो। इसके गूढ़ार्थमें क्या कल्पना होगी यह हम नहीं जानते; किन्तु महापापीके लिए भी आशाकी एक किरण है, यदि वह भक्ति करे। और भक्तिका अर्थ है अपनेको भगवानमें लीन कर देना, अपने अहंको भूलकर शून्य हो जाना। पापका प्रायश्चित्त उपवास नहीं बल्कि भक्ति है। हाँ; अनेक बार भक्तिभावसे ओतप्रोत हो जानेके लिए उपवास कर लेनेकी आवश्यकता जान पड़ती है, किन्तु इसका माप सभी अपनी-अपनी मनःस्थितिके अनुसार निकाल सकते हैं। शून्य हो जानेमें ही परिपूर्ण भक्ति निहित है और यदि ऐसी भक्ति बन पड़े तो हमसे चाहे जितने पाप हुए हों, वे हमारे मार्गमें बाधा नहीं डाल सकते। इस अध्यायमें जिस सुदुराचारीकी बात कही गई है वह कोई अन्य नहीं बल्कि हम स्वयं ही हैं। अनेक प्रकारके मानसिक पाप करनेवाले तथा ऐसे पाप करनेके बावजूद, हम भलेमानस बनकर इस संसारमें विचरण करते हैं। भला, ऐसा पापी हममें से कौन नहीं है? और यह अध्याय ऐसे लोगोंके ही लिए है।

ग्यारहवें अध्यायमें भगवानके अनेकानेक दर्शन करवाकर इस भक्तिके लिए मनुष्यको तैयार किया गया है और इसके बाद बारहवें अध्यायमें भक्तिका रहस्य बतलाया गया है और सच्चे भक्तका वर्णन किया गया है। यह अध्याय तो इतना छोटा है कि इसे कोई भी व्यक्ति सहज ही कंठस्थ कर सकता है।

चौदहवें अध्यायमें त्रिगुणोंका वर्णन किया गया है। पन्द्रहवेंमें पुरुषोत्तमका वर्णन है। ३० वर्षसे अधिक हुए मैंने ड्रमण्डकी[1] पुस्तक पढ़ी थी जिसमें अनेक दृष्टान्त देकर यह सिद्ध किया गया है कि जड़ जगतके नियम अध्यात्म जगतपर भी लागू होते हैं। यह इस त्रिगुणात्मक सृष्टिमें सिद्ध होता जान पड़ता है। गुण तीन ही नहीं बल्कि अनेक हैं। यह तो उन अनेक गुणोंको मोटे तौरपर तीन भागोंमें बाँट दिया गया है। जो इन तीनोंको तर जाता है वह पुरुषोत्तम हो जाता है। इस जगतमें

१. डा० हेनरी ड्रमण्ड, द नेचुरल लॉ इन द स्पिरिचुअल वर्ल्ड तथा द ग्रेटेस्ट थिंग इन द वर्ल्डके लेखक।

ऐसा कोई नहीं जन्मा जो एक गुणवाला ही रह गया हो। मनुष्य अतिशय सत्व गुणी हो तो भी उसमें तम और रजोगुणका कुछ-न-कुछ अंश आ ही जाता है। पानीका दृष्टान्त मेरे मनमें आता है। पानी बरफके रूपमें पत्थरकी तरह अचल पड़ा रहता है किन्तु गरम होकर भाफ बन जाता है और आकाशमें उड़ने लगता है। बरफके रूपमें तो वह ऊँचे उठनेकी शक्ति ही गँवा बैठता है और भाफ बनकर वह निरन्तर ऊपरकी ओर उड़ता चला जाता है। पानीकी अधिकतम शक्ति तो भाफके रूपमें ही प्रकट होती है। और अन्तमें भाफ बादलके रूपमें परिवर्तित होकर जगतका कल्याण करती है। किन्तु यदि भाफ बरफका तिरस्कार करे तो वह अचल पड़ी रहेगी। हालाँकि बरफके भी उपयोग हैं। बरफ नदीके रूपमें बहने लगती है। इसमे प्रलय भी मच जाता है किन्तु इस सबसे हमारा कोई सम्बन्ध नही है। यह एक स्वयंसिद्ध बात है कि सूर्यकी गर्मीके बिना पानी भाफ नहीं बन सकता। इससे पता चलता है कि यह किसी दूसरेकी मददके बिना नहीं हो सकता। कहनेका तात्पर्य यह है कि भाफ मोक्षकी दशाकी सूचक है। वह मोक्षकी स्थितिमें रहते हुए इस जगतका कल्याण करती है। इस प्रकार हमें इन दोनों अध्यायोंको समन्वित रूपसे समझ लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

३३२. गोरक्षा-सम्बन्धी लेख

गोरक्षा-सम्बन्धी लेखोंको प्रकाशित करनेमें सहायताके रूपमें धूलियासे नीचे दी हुई तफसीलके[1] अनुसार १५० रु० मिले है।

इसके अतिरिक्त 'नवजीवन' संस्थामें नीचेकी तफसीलके[2] अनुसार रु० ५०-८-० मिले हैं:

अब इस पुस्तकको छापनेका कार्य शीघ्र आरम्भ हो जायेगा। किन्तु जितनी अधिक सहायता मिलेगी पुस्तक उतनी ही सस्ती मिलेगी, यह बात गोसेवकोंको याद रखनी चाहिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ८-१-१९२८

१ और २. चन्देकी अलग-अलग रकमें और दानियोंके नाम यहाँ छोड़ दिये गये हैं।

३३३. मिट्टीकी महिमा

मैंने अपनी आरोग्य विषयक पुस्तकमें[1] रोगोंके उपचारमें मिट्टीके उपयोगके सम्बन्धमें विस्तारपूर्वक लिखा है। उक्त पुस्तक पढ़कर परीक्षणके तौरपर मिट्टीका प्रयोग करनेवाले श्री विट्ठलदास पुरुषोत्तम लिखते हैं:[2]

इसपर मैंने उनसे अनुरोध किया कि वे अपने निजी अनुभव लिख भेजें। जिसके उत्तरमें उन्होंने निम्न पत्र लिखा है:[3]

इन दोनों पत्रोंमें दी गई जानकारीका उपयोग तरह-तरहके दर्दोंपर बेफिक्रीसे किया जा सकता है। मेरी रायमें तो जहाँ जख्म हो गया हो अथवा चमड़ी छिल गई हो वहाँ खुली मिट्टी रखी ही नहीं जानी चाहिए। मिट्टीकी पट्टीसे जिन्हें लाभ न पहुँचे वे कोरी मिट्टीका प्रयोग कर देखें। फिलहाल तो मैं सामान्य रोगोंमें मिट्टीका ही प्रयोग करता हूँ और उसका परिणाम अच्छा ही निकलता है। यह इलाज इतना सहज, सस्ता और सादा है कि एक हदतक सभी उसे आजमा सकते हैं। यह सही है कि खाली पेटपर ही मिट्टीकी पट्टी रखनेका प्रयोग किया जाता है। यह बात याद रखनी चाहिए कि मिट्टी हमेशा अच्छी जगहसे ही ली जाये। सिरके दर्द और बुखारमें बरफका उपयोग किया जाता है। ऐसी स्थितिमें भी बरफकी अपेक्षा मिट्टी सामान्यतः अधिक लाभ पहुँचाती है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ८-१-१९२८

३३४. पत्र: कनिकाके राजाको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
८ जनवरी, १९२८

प्रिय मित्र,

मुझे इस बातका दुख है कि उत्कलके अपने हालके दौरेमें मैं आपके राज्यमें नहीं आ सका और स्वयं इस बातको नहीं देख सका कि रैयतपर अत्याचार किये जानेके जो आरोप मुझे बताये गये थे उनमें कुछ सचाई थी या नहीं। मेरे दौरेमें ये आरोप बहुतसे लोगों द्वारा जोरदार शब्दोंमें कई बार दोहराये गये। लेकिन एक बार फिर

१. देखिए आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान, खण्ड ११ तथा १२।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्रलेखकने अपना अनुभव लिखा था कि मिट्टीका प्रयोग अपेंडिसाइटिस जैसे दर्दमें भी बहुत कारगर सिद्ध हुआ है।

३. यहाँ नहीं दिया गया है।

आपके साथ सम्पर्क स्थापित करनेसे पहले मैंने उनके बारेमें कुछ नहीं कहा है। क्या आप इस बातको पसन्द करेंगे कि मैं एक प्रतिनिधि भेजूं जो मुझे आरोपोंके बारेमें सचाईका पता चला कर बताये?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

कनिकाके राजा

अंग्रेजी (एस० एन० १३०३५) की माइक्रोफिल्मसे।

३३५. पत्र : डब्ल्यू० एच० पिटको

[८ जनवरी, १९२८][1]

प्रिय श्री पिट,

कुछ हफ्ते पहले आपको एक पत्र[2] भेजा गया था जिसमें पूछा गया था कि तिरुवरप्पु और सुचिन्द्रम्के मामलेमें कुछ प्रगति हो रही है या नहीं। पता नहीं वह आपको मिला या नहीं। मुझसे बराबर पूछताछ की जा रही है।

मो० क० गांधी

पुलिस कमिश्नर
त्रिवेन्द्रम्

अंग्रेजी (एस० एन० १३०३५ ए०) की माइक्रोफिल्मसे।

३३६. सन्देश : जामिया मिलिया इस्लामियाको[3]

[९ जनवरी, १९२८ से पूर्व]

प्रिय प्रोफेसरो तथा लड़को,

टक्कर साहब मुझसे कहते हैं कि इस अवसरपर, जबकि हकीम साहबकी मृत्युका संकट हमारे ऊपर आ पड़ा है, मैं आपको आशाका एक सन्देश भेजूं। मृतककी आत्मा सदा हमारे साथ रहे। हम जामियाको एकताका एक जीवन्त मन्दिर बनाकर उनकी स्मृतिको सदा ताजा रखें। आपको आशा नहीं छोड़नी चाहिए।

१. यह पत्र पिछले शीर्षकके पृष्ठ भागपर लिखा हुआ है, जिसकी तिथि ८-१-१९२८ है।

२. देखिए "पत्र : डब्ल्यू० एच० पिटको", १४-१०-१९२७।

३. यह सन्देश जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्लीके, अध्यापकों और छात्रोंकी एक सभामें पढ़कर सुनाया गया था जो हकीम अजमल खांकी मृत्युपर शोक प्रकट करनेके लिए आयोजित हुई थी।

जबतक प्रोफेसरान और लड़के जामियाके प्रति सच्चे हैं, वह मिट नहीं सकता। मेरी ओरसे आपको यह वचन है कि ईश्वरने चाहा तो वह मुझे जो भी शक्ति देगा उसका उपयोग मैं इस संस्थाको सुदृढ़ आर्थिक आधारपर खड़ा करनेमें लगा दूँगा।

सप्रेम,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-१-१९२८

३३७. तार: मदनमोहन मालवीयको[1]

[९ जनवरी, १९२८ या उसके पश्चात्]

तिब्बिया साधन-सम्पन्न है। जामिया विकासशील संस्था है अतः आपसे सहायताका अनुरोध करता हूँ। एकताके संदर्भमें मेरी रायमें आप और अन्सारीको दिल्ली तथा अन्य स्थानोंकी यात्रा करके संयुक्त सभाएँ करनी और प्रस्ताव पास करने चाहिए। इसी कामसे अन्य लोगोंको अन्यत्र भेजा जा सकता है। आप बनारससे आरम्भ कर सकते हैं।

गांधी

भेजनेसे पहले मुझे साफ प्रति दिखाओ। यह तार जो गाड़ी अभी आनेवाली है उससे भेजा जाये। अगर ऐसा न हो पाये तो इसे साबरमती भेजना होगा[2]।

अंग्रेजी (एस० एन० १४९०५) की फोटो-नकलसे।

१. यह तार ९ जनवरीको प्राप्त पं० मदनमोहन मालवीयके इस तारके जवाबमें भेजा गया था: "पत्रके लिए धन्यवाद। दिल्लीके लाला सुल्तान सिंह कलकत्तामें मुझसे मिले। बताया कि जामिया मिलिया हिन्दुओंसे अपील नहीं करेगा। तिब्बिया कालेज इस रायसे सहमत होगा, लेकिन आप जो-कुछ तय करेंगे मैं उसका समर्थन करूँगा। हिन्दू-मुस्लिम कार्यके सम्बन्धमें आप क्या कहते हैं? सहमत हूँ कि कार्यमें विलम्ब नहीं करना चाहिए।"

२. स्पष्टतः ये गांधीजी द्वारा अपने सचिवको दिये गये निर्देश थे।

३३८. पत्र : अब्बास तैयबजीको

साबरमती
१० जनवरी, १९२८

प्रिय भुर्र-र-र,

हाँ, हकीम साहबकी मृत्यु गम्भीर राष्ट्रीय क्षति है। हमें आशा करनी चाहिए कि राष्ट्र इससे लाभ उठायेगा।

बुधवार या बृहस्पतिवारको ३ से ५ बजेके बीच मेरे लिए बिलकुल ठीक रहेगा।

सप्रेम,

मुर्र-र-र

अंग्रेजी (एस० एन० ९५६१) की फोटो-नकलसे।

३३९. पत्र : नाजुकलाल चोकसीको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
सोमवार [१० जनवरी, १९२८][1]

भाईश्री ५ नाजुकलाल,

तुमने मिट्टीका उपचार आरम्भ करके ठीक किया। मिट्टीको एक बार भिगोनेके बाद फिर दुबारा भिगोनेकी आवश्यकता नही है। यदि वह सूख जाये और फिर जरूरत पड़े तो मिट्टीकी दूसरी रोटी जैसी बना लेनी चाहिए। यदि लगभग १ इंच मोटी रोटी बनाई जाये तो वह जल्दी नहीं सूखती। रातके समय पेड़ूपर रखी गई मिट्टी तो रात-भर गीली रहती है। दोपहरको माथेपर रखी हुई मिट्टीका सूखना सम्भव है। दिनमें पेड़ूपर मिट्टी नही रखनी चाहिए क्योंकि उस समय पाचन-क्रिया चलती रहती है। मेरा यह अनुभव 'सुगन्ध' अर्थात् साफ लाल मिट्टीके बारेमें ही है किन्तु यदि काली मिट्टीका ही प्रयोग करना पड़े तो वह अच्छी साफ मिट्टी होनी चाहिये।

रक्तचापके बारेमें दो बातोंकी सावधानी बरतनी चाहिए। अपनी सामर्थ्यसे अधिक शारीरिक या मानसिक परिश्रम नहीं करना चाहिए; और दस्त तो साफ होना ही चाहिए। यदि प्रतिदिन दस्त न हो तो एनीमा या हलका विरेचन लेना चाहिए, कभी कांखना नही चाहिए। बहुत हलकी खुराक लेनी चाहिए। सिर्फ रक्तचापसे घबरानेकी जरूरत नही। किन्तु तुम्हें लकवा हो चुका है इसलिए सावधान रहनेकी जरूरत तो है ही। इसके

१. मूलके आधारपर; १० जनवरीको मंगलवार था।

अतिरिक्त तुम्हें इजेक्शनसे लाभ हुआ है, अतः यदि डाक्टर फिरसे वह इंजेक्शन लेनेकी सलाह दे तो बेशक ले लेना। सिर-दर्द मिट्टीसे अवश्य चला जाना चाहिए। इसके लिए भी पेट तो साफ होना ही चाहिए।

प्रबोध तो बहुत मजेदार बालक लगता है। उससे हमें जो आशाएँ हैं, भगवान उन्हें पूर्ण करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० १२१४३) की फोटो-नकलसे।

३४०. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको[1]

साबरमती
११ जनवरी, १९२८

प्रिय भाई,

आपका मधुर पत्र मिला। इसने मुझे तिरुपुरके उस हेडमास्टरकी याद दिला दी, जो आपका शिष्य रह चुका है। उसने मुझे बताया था कि आप संस्कृतके भी वैसे ही विद्वान हैं जैसे कि अंग्रेजीके। मुझे यह पता नहीं था। मैंने वाल्मीकि [की रामायण]का अनुवाद ही पढ़ा है और वह भी सरसरी तौरसे ही। मैं तो तुलसीदासकी दुहाई देता हूँ। लेकिन आप जो-कुछ कहते हैं उसे स्वीकार करते हुए भी मैं कहता हूँ कि रामकी इच्छाके विपरीत सीता वनको गईं; और ऐसा करके उन्होंने सामान्यसे भी बढ़कर उत्कृष्ट आचरण किया। इसी प्रकार रामने दशरथके वचनका पालन करके अत्यन्त उत्कृष्ट कार्य किया। लेकिन मैं यह बहस व्यर्थ ही कर रहा हूँ, क्योंकि राम और सीता हमारी जिस श्रद्धाके पात्र हैं, उसे हम दोनों स्वीकार करते हैं।

मैं आपकी गतिविधियोंपर नजर रखे हुए हूँ और सर मुहम्मद हबीबुल्लाको[2] भेजे गये आपके पत्रोंकी प्रतियोंको बहुमूल्य मानता हूँ।

१. नीचे उस पत्रका उद्धरण दिया जा रहा है जो शास्त्रीने टी० एन० जगदीशन्को १९४० में लिखा था: "रामायण के प्रश्नपर गांधीका मुझे लिखा गया पत्र वास्तवमें उनकी सर्वोत्तम शैलीमें है। मैं उस समय दक्षिण आफ्रिकामें था। त्रावणकोर राज्यमें महिलाओंकी एक सभामें बोलते हुए उन्होंने बताया था कि सीताने वनमें रामका अनुगमन करके अपने पतिकी अवज्ञा की थी, और यह भी कहा था कि पर्याप्त कारण होनेपर पतिकी अवहेलना की जा सकती है। वाल्मीकिको समझनेकी इस स्पष्ट भूलपर आपत्ति करते हुए मैंने लिखा।..."

२. वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य; नवम्बर, १९२६ में दक्षिण आफ्रिका जानेवाले भारतीय प्रतिनिधि मण्डलके नेता; देखिए खण्ड ३३।

अगर आपको अपने नेक कामको सुदृढ़ आधार प्रदान करना है तो आपको वहाँ अपने ठहरनेकी अवधि बढ़ानी होगी। कृपया ऐसा ही करें।

सप्रेम,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री

३४१. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
११ जनवरी, १९२८

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे आशा है कि चाँद[1] अब खतरेसे बाहर है।

मेरा मुद्दा[2] यह नहीं है कि तुमने अपने प्रस्तावोंपर, खास तौरपर स्वतन्त्रता-प्रस्तावपर पूरी तरह विचार नहीं किया था। मेरा मुद्दा यह है कि तुमने या अन्य किसीने सारी स्थितिपर विचार नहीं किया था और न उसके सन्दर्भमें प्रस्तावोंके अर्थ और औचित्यपर ही विचार किया था। अच्छेसे-अच्छे प्रस्ताव भी अप्रासंगिक या बेतुके हो सकते हैं। लेकिन कांग्रेसके बारेमें तुम्हें मेरे लेखोंको ध्यानपूर्वक पढ़ना चाहिए। स्वतंत्रताके बारेमें विशेष लेख कल प्रकाशित हो जायेगा।

एकता सम्बन्धी प्रस्तावपर काफी मेहनत करनेकी जरूरत है।

तुम जब भी यहाँ आ सको, अवश्य आओ, और जब आओ तो अपना काम साथ लेते आओ, और फुर्सतसे कुछ दिन रहो।

यह पत्र जल्दीमें बेसिलसिले लिखा गया है, लेकिन इससे ज्यादा विस्तारसे इस समय नहीं लिख सकता।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९२८।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. विजयलक्ष्मी पंडितकी पुत्री चन्द्रलेखा।
२. देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", ४-१-१९२८।

३४२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

११ जनवरी, १९२८

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र मिला। अगर मौलाना आपको और अधिक ग्राहक दिला सकें तो यह काफी होगा।

सप्रेम,

बापू

श्रीयुत सतीश बाबू
खादी प्रतिष्ठान
कलकत्ता

अंग्रेजी (जी० एन० १५८१) की फोटो-नकलसे।

३४३. भाषण : प्रार्थना सभा, साबरमतीमें[1]

[१२ जनवरी, १९२८ से पूर्व]

आज मुझे आपके सामने एक भूलका दृष्टान्त देना है जिसमें हममें से तीन व्यक्ति बराबरके भागीदार हैं। या शायद मेरा भाग सबसे ज्यादा है, क्योंकि आश्रमके प्रधानके नाते मुझसे आपमें से किसी भी अन्य व्यक्तिकी अपेक्षा ज्यादा सतर्क रहनेकी अपेक्षाकी जाती है।

हममें से बहुत लोग कल्पना भी नहीं कर सके कि यह [भूल] क्या होगी। लेकिन उन्होंने उसे बड़े सजीव ढंगसे, और जैसा कि अपनी गलतियोंको बतानेका उनका तरीका है, बड़ी ही तफसीलके साथ बताया। जिन लोगोंने आश्रममें गांधीजीका कमरा देखा है उन्हें याद होगा कि नदीकी तरफवाली दीवार और छतके बीचमें एक जालीदार गवाक्ष है। इसका उद्देश्य तो कमरेको हवादार रखना है, लेकिन इससे सूरजकी किरणें भी सीधी गांधीजीके मुँहपर पड़ती हैं। अतः उन्होंने हममें से एकसे वहाँ कोई चीज आड़की तरह लगानेको कहा, इन मित्रने एक दूसरे व्यक्तिसे कहा, और वह तुरन्त लकड़ीकी तख्ती लिए एक बढ़ईको बुला लाये। स्वभावतः उसने सोचा कि आड़की अपेक्षा एक झिलमिली ज्यादा अच्छी रहेगी, और पूछा कि क्या गांधीजी उसे पसन्द

१. महादेव देसाई लिखित "द वीक" (यह सप्ताह) लेखसे, जिसमें यह भाषण "द पुअर इन स्पिरिट" (भावनासे गरीब) शीर्षकके अन्तर्गत दिया गया है।

करेंगे। गांधीजी सहमत हो गये, लेकिन बढ़ईके काम शुरू करनेके कुछ देर बाद ही उन्हें लगा कि उन्होंने ठीक काम नहीं किया है।

अब हम लोगोंको, जिन्होंने गरीबीका व्रत लिया है, ऐसा नही करना चाहिए। मुझे पहले ही सूझ जाना चाहिए था कि दफ्तीका या कपड़ेका एक टुकड़ा भी वही काम कर सकता था जो यह झिलमिली करेगी, जिसके ऊपर दो-एक रुपये खर्च आयेंगे और बढ़ईका तीन घंटेका समय लगेगा। दफ्ती या कपड़ेके टुकड़ेपर कुछ खर्च नहीं होता, और दो कीलोंकी सहायतासे उसे कोई भी वहाँ जड़ दे सकता था। ऐसी ही मामूली छोटी-छोटी चीजोंमें हमारे सिद्धान्तोंकी परीक्षा होती है। स्वर्गका साम्राज्य उनके लिए है जो भावनासे गरीब है। इसलिए हमें हर कदमपर अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओंको गरीबोंकी तरह कम करना तथा सचमुच भावनासे गरीब होना सीखना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-१-१९२८

३४४. भाषण: विनयशीलतापर[1]

साबरमती
[१२ जनवरी, १९२८ से पूर्व]

मुझे गीतके ठीक शब्द इस समय याद नहीं है, लेकिन गीतके सार-तत्वको कोई नहीं भूल सकता। न केवल इस गानेका संगीत ही बल्कि इसका जो भाव है वह आज सारा दिन मेरे मनमें घूमता रहा है। आप प्रार्थनामें संगीत सुनने अथवा किसी आदमीकी आवाजकी सराहना करनेके लिए नही आते, बल्कि आप जो कुछ सुनते हैं, उसमें से कुछ ऐसी चीज अपने साथ ले जानेके लिए आते है जो सारा दिन आपके सभी कार्योंमें आपका मार्ग-दर्शन करे, अनुप्रेरित करे। अगर हम ऐसा नहीं करते तो हमारी सभी प्रार्थनाएँ मजीरा और झांझ बजाने-जैसी हो जायेंगी। आजका गीत कितना उत्कृष्ट था! कबीरने बोलचालकी प्रभावशाली भाषामें विनयशीलोंकी प्रिय वस्तुओंका वर्णन किया है। आत्म-प्रशंसा करनेवाला व्यक्ति नहीं, अपनेको विनयशील बनानेवाला व्यक्ति ही ईश्वरके दर्शन कर पायेगा, ऐसा कबीर कहते है। हमें चींटीके समान विनयी बनना है, हाथीके समान दर्पयुक्त नहीं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया १२-१-१९२८

१. यह महादेव देसाई द्वारा दिये गये प्रार्थना-सभाके विवरणमें से लिया गया है।

३४५. भाषण: क्षमाशीलतापर[1]

साबरमती
[१२ जनवरी, १९२८ से पूर्व]

निष्क्रिय विरोधकी यह चर्चा हमारे राष्ट्रीय जीवनके लिए घातक रही है। क्षमाशीलता आत्माका एक गुण है, इसलिए वह एक सकारात्मक गुण है। यह नकारात्मक नहीं है। भगवान बुद्ध कहते हैं, "क्रोधको अक्रोधसे जीतो।" लेकिन यह अक्रोध क्या है? यह एक सकारात्मक गुण है और इसके अर्थ हैं उदारता अथवा प्रेमका सर्वोच्च गुण। आपमें इस सर्वोच्च गुणका विकास होना चाहिए और उसकी अभिव्यक्ति इस तरह होनी चाहिए कि आप क्रुद्ध व्यक्तिके पास जायें, उससे उसके क्रोधका कारण जानें, यदि आपने उसको बुरा लगनेवाला कोई काम किया है तो अपनी भूल सुधारिये और इसके बाद उससे उसकी गलतीका अहसास कराइए और उसको कायल कीजिए कि उत्तेजित हो उठना गलत चीज है। आत्माके इस गुणकी प्रतीति और उसका सोच-विचारकर किया गया उपयोग न केवल मनुष्यको बल्कि उसके चारों ओरके वातावरणको भी ऊँचा उठाता है। यह अवश्य है कि जिस व्यक्तिमें प्रेम है वही इसका प्रयोग करेगा। इस प्रेमको अनवरत प्रयत्न द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया १२-१-१९२८

१. इसे महादेव देसाईके "द वीक" (यह सप्ताह) लेखसे लिया गया है जिसमें इस भाषणको "द एसेंस ऑफ फरगिवनेस" (क्षमाशीलताका सार) शीर्षकके अन्तर्गत दिया गया था। विवरणमें इससे पहले यह अनुच्छेद दिया गया है: "खादी सेवाका एक उम्मीदवार एक दिन अपनी ही तकलीफ लेकर आया था। उसने कहा कि उसे बहुत जल्दी क्रोध आ जाता है और वह उपवास करके अपनेको शुद्ध करना चाहता है। इसपर गांधीजीने कहा, 'मैं तुम्हें चेतावनी देता हूँ कि उपवास हमेशा हर पापका प्रायश्चित्त नहीं होता। पापसे बचनेका एकमात्र तरीका है ईश्वरके सामने विनयपूर्वक आत्मसमर्पण, और इस आत्मसमर्पणमें मदद करनेके लिए किये जानेवाले उपवासके अलावा सभी उपवास व्यर्थ हैं। मैं एक ज्यादा अच्छा उपाय बताता हूँ। जिस आदमीसे गुस्सा हुए हो, उसके पास जाओ, उससे क्षमा माँगो, उससे प्रायश्चित्तका तरीका बतानेको कहो, और उसे करो। यह उपवाससे ज्यादा अच्छा प्रायश्चित्त होगा।' वह मित्र गया और वैसा ही किया। लेकिन जिस व्यक्तिके साथ ज्यादती हुई है वह इस मामलेमें क्या करे? बस क्षमा कर दे? हमें बताया गया है कि क्षमा वीरोंका गुण है, लेकिन यह क्षमा है क्या? निष्क्रिय रुख? चुपचाप चोट सह लेना? बुराईका प्रतिरोध न करनेका क्या यही अर्थ है? एक शाम बातचीतका यही विषय था जिसका संक्षिप्त सार दे रहा हूँ:"

३४६. स्वतन्त्रता बनाम स्वराज्य

कहा जाता है कि "स्वतन्त्रता" का प्रस्ताव लॉर्ड बर्कनहेडका माकूल जवाब है। अगर यह बात संजीदगीसे कही गई है, तो यह स्पष्ट है कि हमें इसका कोई अनुमान तक नहीं कि शाही आयोग नियुक्त करने और उसकी नियुक्तिकी घोषणासे उत्पन्न परिस्थितिका ठीक-ठीक क्या उपयुक्त उत्तर हो सकता है। इस नियुक्तिके जवाबमें यह जरूरी नहीं कि बड़े जोशीले भाषण दिये जायें। बड़ी-बड़ी बातें बनानेसे भी कुछ होना-जाना नहीं है; इसके लिए तो कुछ वैसा ही माकूल और भरपूर काम कर दिखाना होगा जो ब्रिटिश मन्त्री, उनके साथी और पिछलगुओंकी करनीके लायक हो। फर्ज कीजिए कि अगर कांग्रेस किसी किस्मका कोई प्रस्ताव पास न करती, मगर अपने पासके सारेके-सारे विदेशी कपड़ोंकी होली जला डालती और सारे राष्ट्रसे ऐसा ही करनेको कहती तो कुछ हदतक यह ठीक जवाब कहा जा सकता था, पर वह भी उस नियुक्तिके अपमानका भरपूर जवाब तो नहीं ही होता। अगर कांग्रेस हरएक सरकारी कर्मचारीसे हड़ताल करा देती — ऊँचेसे-ऊँचे न्यायाधीशोंसे लेकर नीचे मामूली चपरासी या सिपाही और फौजी सेनातक से उनका काम बन्द करा देती — तो वह यथेष्ट समुचित उत्तर होता। इतना तो इससे जरूर ही होता कि जिस बेफिक्री और लापरवाहीसे आजकल ब्रिटिश मन्त्रिगण और दूसरे अधिकारी हमारे गर्जन-तर्जनको सुन रहे हैं, उनका वैसा अविचलित भाव न बना रह पाता।

कहा जा सकता है कि यह परामर्श है तो सर्वथा दोषरहित, मगर मुझे इतना समझना चाहिए कि इसे अमलमें किसी तरह नहीं लाया जा सकता। मैं ऐसा नहीं मानता। आज कितने ही भारतीय हैं जो इस समय चुप तो हैं पर अपने-अपने ढंगसे उस शुभ दिनकी तैयारी कर रहे हैं जब कि हमें गुलाम बनाये रखनेवाली इस सरकारको चलानेवाला हर हिन्दुस्तानी इस अराष्ट्रीय नौकरीको लात मार देगा। कहा जाता है कि जब कुछ कर दिखानेकी ताकत न हो तो जबानपर ताला लगाये रखनेमें ही साहसशीलता है; अक्लमन्दी तो जरूर ही है। बिना कुछ किये महज बहादुरी भरे भाषण झाड़ना शक्तिका अपव्यय ही होगा। फिर सन् १९२० में जब देशभक्तोंने भाषणके बदले जेलखाने भरना सीख लिया, तबसे जोशीले भाषणोंकी तड़क-भड़क जाती रही। वाणी तो उनके लिए जरूरी है जिनकी जबानको काठ मार गया हो। गर्जन-तर्जन करनेवालोंके लिए तो संयम ही चाहिए। अंग्रेज शासक हमारे भाषणोंपर हमारा मखौल बनाते हैं, और उनके कामोंसे अकसर प्रकट होता है कि वे हमारे भाषणोंकी रत्ती-भर भी परवाह नहीं करते और इस प्रकार बिना कुछ कहे ही वे कहीं अधिक प्रभावशाली ढंगसे हमें ताना देते हैं: "हिम्मत हो तो कुछ करो।" जबतक हम इस चुनौतीका जवाब नहीं दे सकते, मेरी सम्मतिमें, हमारी धमकानेवाली एक-एक बात, एक-एक इशारा हमारी ही अपनी जिल्लत है, अपनी नामर्दीका आप

डंका पीटना है। मैंने देखा है कि जंजीरोंमें कसे हुए कैदी जेलरोंको गालियाँ देते हैं, और कोसते हैं जिससे जेलरोंका महज मनवहलाव ही होता है।

और फिर, क्या किसी अंग्रेज द्वारा की गई किसी ज्यादतीका बदला लेनेके लिए ही हमने स्वतन्त्रताको एकाएक अपना लक्ष्य बना लिया है? क्या कोई किसीको खुश करनेके लिए या उसकी करतूतोंका विरोध करनेके लिए ही अपना ध्येय निश्चित करता है? मेरा कहना है कि ध्येय तो एक ऐसी चीज है जिसकी घोषणा की जानी चाहिए और जिसकी प्राप्तिके लिए काम करते ही जाना चाहिए, बिना इसका खयाल किये कि दूसरे क्या कहते हैं या क्या धमकी देते हैं।

इसलिए हम यह भी समझ लें कि स्वतंत्रतासे हमारा क्या अभिप्राय है। इंग्लैंड, रूस, स्पेन, इटली, तुर्की, चिली, भूटान — सभीको स्वतन्त्रता प्राप्त है। हम इनमें से किसके जैसी स्वतन्त्रता चाहते हैं? यहाँ यह न कहा जाये कि मैं वही बात सिद्ध मान रहा हूँ जिसे सिद्ध करना है। क्योंकि अगर यह कहा जाये कि हमें भारतीय ढंगकी स्वतन्त्रताकी चाह है तो यह दिखलाया जा सकता है कि कोई दो भारतीय इस भारतीय ढंगकी स्वतन्त्रताकी एक तरहकी परिभाषा नहीं बतलायेंगे। बात दरअसल यह है कि हम अपना परम ध्येय जानते ही नहीं। और उस ध्येयका रूप हमारी परिभाषाओंसे नहीं, बल्कि स्वेच्छा या अनिच्छापूर्वक किये गये हमारे कामोंसे ही निश्चित होगा। अगर हममें अक्ल है तो हम वर्तमानको संभाल लेंगे, भविष्य अपनी फिक्र आप कर लेगा। परमात्माने हमारे कार्यक्षेत्र और हमारी दृष्टिकी मर्यादा बाँध दी है। इसलिए अगर हम आजका काम आज ही खतम कर लें तो यही बहुत होगा।

मेरा यह भी दावा है कि स्वराज्यके ध्येयसे सबको सर्वदा पूरा सन्तोष मिल सकता है। हम अंग्रेजी पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानी अनजानेमें यह मान लेनेकी भयंकर भूल अकसर किया करते हैं कि अंग्रेजी बोलनेवाले मुट्ठी-भर आदमी ही समूचा हिन्दुस्तान है। मैं हर किसीको चुनौती देता हूँ कि "इंडिपेंडेंस" के लिए वे एक ऐसा सर्वसामान्य भारतीय शब्द बतलायें जो जनता भी समझती हो। आखिर हमें अपने ध्येयके लिए कोई ऐसा स्वदेशी शब्द तो चाहिए जिसे तीस करोड़ लोग समझते हों। और ऐसा एक शब्द है — स्वराज्य, जिसका राष्ट्रके नामपर पहले-पहल प्रयोग श्री दादाभाई नौरोजीने[1] किया था। यह शब्द स्वतन्त्रतासे काफी कुछ अधिकका द्योतक है। यह एक जीवन्त शब्द है। हजारों भारतीयोंके आत्म-त्यागसे यह शब्द पवित्र बन गया है। यह एक ऐसा शब्द है जो अगर दूर-दूरतक, हिन्दुस्तानके कोने-कोनेमें प्रचलित नहीं हो चुका है तो कमसे-कम इसी प्रकारके सभी दूसरे शब्दोंसे अधिक प्रचलित तो जरूर है। इसे हटाकर, बदलेमें कोई ऐसा विदेशी शब्द प्रचलित करना जिसके अर्थके बारेमें हमें शंका है, एक प्रकारका अनाचार होगा। यह स्वतन्त्रताका प्रस्ताव ही शायद इस बातका सबसे बड़ा और अन्तिम कारण बन गया है कि हम कांग्रेस की कार्रवाई हिन्दुस्तानी और सिर्फ हिन्दुस्तानीमें ही चलायें। यदि सारी कार्रवाई

१. दादाभाई नौरोजीने १९०६ की कलकत्ता कांग्रेसके अपने अध्यक्षीय भाषणमें 'स्वराज्य' शब्दका प्रयोग 'स्वशासन' के अर्थमें किया था।

हिन्दुस्तानीमें चलती तो फिर इस प्रस्तावके साथ जैसी बुरी बीती है, उसकी कोई गुंजाइश ही न रह जाती। तब तो सबसे अधिक जोशीले भाषण देनेवाले भी स्वराज्य शब्दके भारतीय अर्थको ही सजाने-सँवारनेमें और उनसे जैसी भी बन पड़ती इसकी शानदार या घटिया परिभाषा करनेमें ही अपनी सार्थकता मानते। क्या इससे ये "इंडिपेन्डेन्ट" लोग कुछ सबक सीखेंगे और जिसको वे आजाद कराना चाहते हैं उस जनतामें काम करनेका निश्चय करेंगे और जन-सभाओंमें, जैसे कि कांग्रेस वगैराकी सभाओंमें अंग्रेजी बोलना बिलकुल छोड़ देंगे?

खुद तो मुझे उस स्वतन्त्रताकी कोई चाह नहीं, जिसे मैं समझता ही नहीं। मगर हाँ, मैं अंग्रेजोंके जुएसे छूटना चाहता हूँ। इसके लिए मैं कोई भी कीमत चुका सकता हूँ। इसके बदलेमें मुझे अव्यवस्था भी मंजूर है। क्योंकि अंग्रेजोंकी शान्ति तो श्मशानकी शान्ति है। एक सारे राष्ट्रके लिए जीवित होकर भी मुर्देके समान जिन्दा रहनेकी इस स्थितिसे तो कोई भी दूसरी स्थिति अच्छी रहेगी। शैतानके इस शासनने इस सुन्दर देशका आर्थिक, नैतिक और आध्यात्मिक, सभी दृष्टियोसे प्रायः सत्यानाश ही कर दिया है। मैं रोज देखता हूँ कि इसकी कचहरियाँ न्यायके बदले अन्याय करती हैं, और सत्यके गलेपर छुरी फेरती हैं। मै भयाक्रांत उड़ीसाको अभी देखकर आ रहा हूँ। यह सरकार अपना पापपूर्ण अस्तित्व बनाये रखनेके लिए मेरे ही देश-बन्धुओंको इस्तेमाल कर रही है। मेरे पास कई शपथ पत्र अभी रखे हुए हैं कि खुर्दा जिलेमें प्रायः तलवारकी नोकके बलपर लोगोंसे लगान-वृद्धिकी स्वीकृतिके कागजोंपर दस्तखत कराये जा रहे हैं। इस सरकारकी बेमिसाल फिजूलखर्चीने हमारे राजों-महाराजोंका सिर फेर दिया है जो इसकी बन्दरके समान नकल उतारनेमें नतीजोंकी ओरसे लापरवाह हो कर अपनी प्रजाको धूलमें मिला रहे हैं। यह सरकार अपना अनैतिक व्यापार कायम रखनेके लिए नीचसे-नीच काम करनेसे बाज आनेवाली नहीं है। ३० करोड़ आदमियों-को एक लाख आदमियोंके पैरों तले दबाये रखनेके लिए, यह सरकार इतने बड़े सैनिक-खर्चका भार लादे हुए है जिसके कारण आज करोड़ों आदमी आधेपेट रहते हैं, शराबमें हजारोंके मुँह अपवित्र हो रहे हैं।

मगर मेरा धर्म तो हर हालतमें अहिंसापूर्ण आचरण करना है। मेरा तरीका तो बलप्रयोगका नहीं, मत-परिवर्तनका है। यह तो है स्वयं कष्ट सहन करनेका, न कि अत्याचारीको कष्ट देनेका। मैं जानता हूँ कि साराका-सारा देश इसे सिद्धान्तके रूपमें स्वीकार किये बिना, इसकी गहराईको समझे बिना भी इसे अपना सकता है। सामान्यतया लोग अपने हर कामके दार्शनिक पक्षको नहीं समझते। मेरी महत्वाकांक्षा तो स्वतन्त्रतासे कही ऊँची है। भारतवर्षके उद्धारके जरिये ही मैं पश्चिमके उत्पीड़नमें पीड़ित संसारके सभी निर्बल देशोंका उद्धार करना चाहता हूँ। इस उत्पीड़नमें इंग्लैंड सबसे आगे है। हिन्दुस्तान जिस तरह अंग्रेजोंका मत-परिवर्तन कर सकता है, अगर वह करे तो एक विश्वव्यापी राष्ट्र-मण्डलका स्वयं एक मुख्य भागीदार हो सकता है जिसमें इंग्लैंड अगर चाहे तो हिस्सेदार होनेका आदर पा सकेगा। काश हिन्दुस्तान इस बातको समझ ले कि विश्वव्यापी राष्ट्र-मण्डलका एक मुख्य सदस्य बननेका उसे हक

है, इसलिए कि उसकी जन-संख्या अत्यन्त विशाल, उसकी भौगोलिक परिस्थिति इसके उपयुक्त और युग-युगकी विरासतमें मिली उसकी संस्कृति अत्यन्त उच्च है। मैं जानता हूँ मैं एक बहुत बड़ी बात कह रहा हूँ। स्वयं हीनावस्थामें पड़े भारतवर्षके लिए यह आशा करना कि वह संसारको हिला देगा, निर्बल जातियोंकी रक्षा करेगा, धृष्टतापूर्ण लग सकता है। मगर स्वतन्त्रताकी इस पुकारके प्रति अपने घोर विरोधको स्पष्ट करते हुए मुझे अपना आदर्श आपके सामने अब रखना ही पड़ेगा। मेरी यह महत्वाकांक्षा ऐसी है जिसे पूरी करनेके लिए जीना और प्राणोंकी बलि देना भी उचित होगा। मैं नतीजों के डरसे कभी सर्वोत्तमसे जरा भी निचले स्तरकी किसी स्थितिको स्वीकार नहीं कर सकता। मैं स्वतन्त्रताको अपना ध्येय बनानेका विरोध इसलिए ही नहीं कर रहा हूँ कि समय इसके अनुकूल नहीं है। मैं चाहता हूँ कि भारतवर्ष पूरी गरिमाके साथ अपने पैरोंपर खड़ा हो, और उस स्थितिका निरूपण 'स्वराज्य' शब्दसे अधिक अच्छी तरह अन्य किसी भी एक शब्दसे नहीं हो सकता। 'स्वराज्य' में कैसा और कितना सार-तत्व होगा यह इस बातसे निर्धारित होगा कि राष्ट्र किसी अवसर विशेषपर कितना क्या कर पाता है। भारतके अपने पैरों खड़े होनेका अर्थ होगा कि प्रत्येक राष्ट्र अपने पैरों खड़ा होने लगेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-१-१९२८

३४७. अवैध स्वतन्त्रता लेना

एक सिन्धी मित्र लिखते हैं:

> मैं इसके साथ कराचीके 'सिन्ध ऑब्जर्वर' की एक कतरन भेज रहा हूँ जिसमें आप देखेंगे कि अन्य लोगोंके साथ आपके नामका भी इस विज्ञापनकी उन दवाओंके समर्थकोंके रूपमें उपयोग किया गया है जिन्हें लोकप्रिय बनाने और बेचनेके लिए इसे प्रकाशित किया गया है।
>
> मुझे विश्वास नहीं होता कि सम्बन्धित फार्मेसीकी इन दवाओं, मिक्स्चरों, गोलियों और मरहमोंकी सराहनामें आपने कुछ कहा या लिखा होगा।
>
> मैं आशा करता हूँ कि 'यंग इंडिया' में आप इस विषयमें लिखेंगे।

मैंने भी यह विज्ञापन देखा है। यह मेरे नामका, और मुझे सन्देह नहीं है कि अन्य नेताओंके नामका भी गैरकानूनी इस्तेमाल है। अपनी बेहूदा चीजोंके लिए बाजार तैयार करनेके लिए ये फार्मेसियाँ जो छूट लेती हैं वह विचित्र है। मेरी रायमें बिना अनुमति लिए किसी व्यक्तिके नामका इस्तेमाल करना गैरकानूनी हरकत है जो कानूनके अनुसार दण्डनीय है। चूँकि एक असहयोगीके नाते मैं कानूनका संरक्षण नहीं ले सकता, इसलिए मुझे इतनेसे ही सन्तोष करना पड़ेगा कि किसी भी दवाके विषयमें मेरे नामके उपयोगसे जनता धोखेमें न पड़े। सामान्य रूपसे दवाओंमें मेरा अविश्वास पहले

जैसा ही दृढ़ है, बावजूद इसके कि मैंने हालमें एक या दो अहानिकर और जानी-मानी दस्तकी दवाएँ और कुनैन ली हैं। इस देशमें फार्मेसियोंकी संख्या बढ़ते देखनेकी मेरी कोई इच्छा नहीं है। बल्कि मैं तो चाहूँगा कि लोग दवाओंकी दासतासे मुक्त हो जायें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-१-१९२८

३४८. मद्रासकी खादी-प्रदर्शनी

कांग्रेस अधिवेशनके दौरान श्री पोलक मद्रासमें थे, इसलिए मैंने उन्हें खादी-प्रदर्शनी देखने और देखकर उसके बारेमें अपने विचार व्यक्त करनेके लिए निमन्त्रित किया था। अब उन्होंने मुझे एक पत्र भेजा है जिसमें से मैं निम्नलिखित उद्धरण यहाँ देता हूँ:[1]

हालांकि यह आलोचना सुविचारित नहीं है, तथापि वह भावी प्रदर्शनियोंके संगठनकर्त्ताओंके लिए उपयोगी होगी। मैं इस रायसे सहमत नहीं हूँ कि शिक्षित भारतीय खादीको तबतक नही अपनायेंगे जबतक कि मूल्य, किस्म, मजबूती आदिके लिहाजसे उन्हें ऐसी खादी नही मिलेगी जो मिलके बने कपड़ेका मुकाबला न कर सके। यह सच है कि वे अपनी कलात्मक रुचिको सन्तुष्ट करनेके लिए यह निश्चित स्तर तो चाहते हैं, लेकिन वे खुशीके साथ अतिरिक्त मूल्य दे रहे हैं और किस्मके लिहाजसे मिलके कपड़ेके साथ खादीकी बराबरीपर उनका निश्चय ही आग्रह नहीं है।

शिक्षित और पैसेवाले वर्गके लोगोंके खादी खरीदनेके पीछे एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे जानते हैं कि खादी देशके गरीबसे-गरीब आदमीको सहारा देती है जो अन्यथा इस सहारेसे वंचित हो जायेंगे। लेकिन निश्चय ही यह कोई कारण नही है कि किस्मको सुधारनेकी कोशिशमें खादी उत्पादक ढील डालें। सच तो यह है कि इस दिशामें हुई प्रगति बहुत ही उत्साहवर्धक है। कार्यकर्त्ताओंको तबतक सन्तोष नहीं होगा जबतक खादी वैसी ही अच्छी नही बनने लगती जैसी कि उस समय बनती थी जब मशीनका बना कपड़ा होता ही नहीं था, और जिस खादीकी बराबरी आजतक कोई मशीन नहीं कर सकी है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-१-१९२८

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें एच० एस० एल० पोलकने गन्दी जगह और बुरी व्यवस्थाके लिए प्रदर्शनीकी आलोचना की थी।

३४९. मुकुन्दनका प्रायश्चित्त

श्रीयुत चक्रवर्ती राजगोपालाचारीकी एक यह भी महत्वाकांक्षा जान पड़ती है कि वे 'यंग इंडिया' के लिए हृदयद्रावक कहानियाँ लिखें। उनकी अन्य कहानियोंकी भाँति इस कहानीके पीछे भी एक नैतिक पाठ है। यह एक 'अस्पृश्य' की कहानी है।[1] काश इससे किसी 'स्पृश्य' का पत्थर-सा कलेजा पिघल जाये!

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-१-१९२८

३५०. मैसूर सरकारका खादी-केन्द्र

मैसूर सरकारने खादी-उत्पादनमें एक प्रयोग हाथमें लिया है, और कार्यकर्त्ताओं तथा कार्य-योजनाके बारेमें अखिल भारतीय चरखा संघकी सहायताका लाभ उठाकर उसने बदनवाल नामक एक केन्द्रपर पूरी लगनके साथ काम शुरू कर दिया है। श्रीयुत राजगोपालाचारीको वहाँके एक कार्यकर्त्ताका एक पत्र प्राप्त हुआ है जिसमें से कार्यकी प्रगतिका निम्नलिखित दिलचस्प विवरण यहाँ दिया जा रहा है।[2] इससे पता चलता है कि ग्रामीण क्षेत्रोंमें, जहाँ एक पूरक धन्धेकी आवश्यकता तीव्रतासे अनुभव की जाती है, यदि सही तरीकेपर काम शुरू किया जाये तो खादी कितनी सरलतासे फैलती है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-१-१९२८

३५१. पत्र : मणिलाल व सुशीला गांधीको

[१५ जनवरी, १९२८ से पूर्व][3]

चि० मणिलाल व सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले।

आज अकोलासे जो पत्र मिला है उससे ज्ञात हुआ कि सुशीलाको असमय-गर्भ-स्राव हो गया है। मणिलालने इस बातकी सूचना न तो मुझे दी और न बा को। मुझे ऐसी बातोंके बारेमें लिखनेमें किसी तरहकी शर्म या झिझक नहीं होनी चाहिए।

१. यहाँ कहानी नहीं दी गई है।

२. यहाँ नहीं दिया गया है।

३. ऐसा लगता है कि यह पत्र आश्रममें होनेवाले अन्तर्राष्ट्रीय संघके अधिवेशनसे पहले लिखा गया होगा; देखिए अगला शीर्षक।

इस सम्बन्धमें मेरे विचारोंके कारण मुझसे ऐसी बातें छिपानेमें कोई लाभ नहीं है। जब मुझे प्रकारान्तरसे ऐसी बातोंका पता चलता है तो उससे मुझे दुःख होता है।. मेरे जैसे विचार रखनेवाले लोग भी विषयभोगको आसानीसे नहीं छोड़ पाते। यदि छोड़ पायें तो फिर विवाह ही क्यों हो? विवाहका मूल भोगेच्छा है; किन्तु ऋषियोंने उसे संयमका साधन बनानेका प्रयत्न किया। या यों कहा जा सकता है कि अमर्यादित सम्बन्धको विवाहके द्वारा मर्यादामें बाँध दिया है। किन्तु सदा भोगके प्रति मनुष्य-का झुकाव होनेके कारण उसने विवाहको भी भोगका एक नया साधन बना लिया। किन्तु तुम्हारे जैसे दम्पतिसे मैं इसके सिवा कोई अन्य आशा रख ही नहीं सकता कि तुम सदा सावधान रहोगे और संयमसे रहनेका प्रयत्न करोगे। इससे तुम्हें विवाहके परिणामको मुझसे छिपानेकी जरूरत ही नहीं होगी।

आशा है अब सुशीला अच्छी होगी। गर्भस्रावके बाद यदि सही ढंगसे इलाज कराया जाए तो उसके बुरे परिणामसे काफी हदतक बचा जा सकता है। तुम्हें इतना अवश्य जान लेना चाहिए कि इसका समुचित उपचार कूने-स्नान है। यह स्नान लेनेसे गर्भस्रावकी बीमारी ठीक हो जाती है तथा भविष्यमें प्रसव-कालमें होनेवाला कष्ट भी हलका पड़ जाता है। सादी खुराक, नियमित निद्रा तथा उत्तेजित करनेवाली चीजोंसे दूर रहना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि तुम दोनों कूने तथा जुस्टकी पुस्तकें पढ़ जाओ। डॉ० जॉन निकलसनकी पुस्तक भी पढ़ने लायक है।

लोग आश्रममें आने लगे हैं और दो दिनमें तो वह पूरा भर जाएगा। लगभग ३० व्यक्ति आनेवाले हैं। उनमें १२-१५ पश्चिमी देशोंके लोग भी हैं। रामदास आज पहुँच गया। रामी और मनु कल आ गए थे। देवदास अभी बम्बईमें ही है और वहाँ अपनी हड्डीका इलाज करा रहा है।

मैं नहीं कह सकता कि 'गीताजी'के अध्याय तुम्हें क्यों नहीं मिले। मैंने तो अनुवाद पूरा कर दिया है। मैं महादेवसे कहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७२८) की फोटो-नकलसे।

३५२. बन्धुत्व विषयक चर्चा[1]

[१५ जनवरी, १९२८ से पूर्व]

बन्धुत्वकी भावना तभी पूर्णता प्राप्त कर सकती है जब उसके प्रत्येक सदस्यका आचरण धार्मिक और आत्मत्याग पूर्ण हो। इस निष्कर्षपर मैं बहुत दिनों पहले ही, बहुत विचार, मनन और जितने लोगोंसे मिला सबके साथ बातें करके पहुँच गया था कि सभी धर्म सच्चे हैं, और साथ ही, सभीमें कुछ-न-कुछ दोष या त्रुटियाँ भी जरूर है, और अपने धर्मपर दृढ़ रहते हुए मुझे दूसरे धर्मोको भी हिन्दू धर्म जैसा ही प्रिय मानना चाहिए। इससे यह बात तुरन्त ही निकलती है कि मुझे हर आदमीको अपने निकटसे-निकट सगे और प्रिय सम्बन्धीके समान प्यार करना चाहिए। आदमी आदमीमें बड़े-छोटे, ऊँचे-नीचेका अन्तर नही रखना चाहिए। अगर हम हिन्दू है तो हमें यह प्रार्थना नही करनी चाहिए कि कोई ईसाई हिन्दू हो जाये, और मुसलमान है तो हमें यह दुआ नही माँगनी चाहिए कि हिन्दू या ईसाई लोग मुसलमान बन जायें। हमें तो एकान्तमें भी यह प्रार्थना नही करनी चाहिए कि किसीका धर्म-परिवर्तन हो; बल्कि हमारी आन्तरिक प्रार्थना तो यह होनी चाहिए कि जो हिन्दू है वह और अच्छा और सच्चा हिन्दू बने, जो मुसलमान है वह और अच्छा मुसलमान बने, और जो ईसाई है वह और सच्चा ईसाई बने। बन्धुत्वका यही मूल मन्त्र है। श्री एन्ड्रयूजने ईसाको सूलीपर होनेवाली यंत्रणा और उनके महान बलिदानकी जो कथा पढ़ सुनाई है; पण्डित खरे और इमाम साहबने जो गीत और भजन सुनाये हैं — सबका एक यही अर्थ है। अगर एन्ड्रयूजने केवल ऊपरी सौजन्य या मात्र शिष्टाचारके ही लिए उनसे गानेकी प्रार्थनाकी थी तो उन्होने बन्धुत्वके अपने सिद्धान्तके पालनमें चूक की है। वैसी स्थितिमें उन्हें ऐसा नही करना चाहिए था। मगर मैं चार्लीको बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे पता है कि जिस प्रकार मैं दूसरे धर्मोंसे

१. अन्तर्राष्ट्रीय संघकी परिषद्के सदस्य और उनके मित्र आश्रममें ठहरे थे। उन्होंने "बन्धुत्वके मूलभूत उद्देश्य" के विषयमें चर्चा की। महादेव देसाईने "द वीक" (यह सप्ताह) नामक अपने लेखमें "द फाउन्डेशन ऑफ फेलोशिप" (बन्धुत्वकी आधार शिला) शीर्षकके अन्तर्गत इसका हवाला दिया था: "चर्चा दो दिनतक चली।... उसमें बिना किसी संकोचके खुले दिलसे विचार-विनिमय हुआ, जिससे अन्तमें एक दूसरेके विचारोंकी ज्यादा अच्छी समझ पैदा होना अनिवार्य है।... इसके बारेमें लोगोंमें कोई भी मतभेद नहीं था कि सबको व्यापकतम सहिष्णुता पैदा करनेके उद्देश्यके लिए प्रयत्नशील होना चाहिए, आलोक, ज्ञान या पुण्यकी शक्तियोंके साथ मिलकर, उनके पक्षधर बनकर अंधकार या अज्ञानकी शक्तियोंसे लोहा लेना चाहिए, या जैसा दीनबन्धुने कहा था, ईश्वरको बिलकुल ही त्यागकर भौतिकवादी बननेवालोंके विरुद्ध खड़े होना चाहिए। इस बातपर सभी सहमत जान पड़े, लेकिन यह भी लगा कि कई सदस्य इसके सर्वसंगत निष्कर्षसे बच निकलना चाहते हैं। इस सर्वसंगत निष्कर्षको गांधीजीने इस सभा और अन्य सभाओंके दौरान काफी विस्तारसे स्पष्ट रूपमें प्रस्तुत किया।..."

भी समान प्रेम करके अपने हिन्दू धर्मको अधिक उदार और व्यापक बना देता हूँ, वैसे ही एन्ड्रयूजने भी अन्य धर्मोंसे ईसाई धर्मके समान ही प्रेम करके ईसाई धर्मको अधिक उदार और व्यापक बना दिया है। मगर, आपके मनमें अगर यह शंका हो कि केवल एक ही धर्म सच्चा हो सकता है और दूसरे सब झूठे ही होंगे, तो आपको मेरे बतलाये बन्धुत्वके आदर्शका त्याग करना ही पड़ेगा। तब तो हमें निरन्तर एक-दूसरेको छाँटते ही जाना पड़ेगा, हमारी बन्धुताकी नीव पारस्परिक बहिष्कारपर रखी होगी। सबसे अधिक जोर मैं सत्यवादितापर देता हूँ। अगर हमारे मनमें दूसरे धर्मोंके लिए भी वह प्रेम नहीं है जो अपने धर्मके लिए है तो भला इसीमें है कि हम यह संघ तोड़ दें। यह ऊपरी सहिष्णुता हम नहीं चाहते। सहिष्णुताके मेरे सिद्धान्तमें पाप सहन करनेकी कोई गुंजाइश नहीं होती, गोकि पापी मनवालेको सहन किया जा सकता है। इसका यह अर्थ नहीं कि हर बुरे मनवालेको आप अपने पास बुलाया करें या झूठे धर्मको सहन करें। सच्चा धर्म मैं उसको कहता हूँ जिसकी सब शक्तियों-का कुल प्रभाव उसके अनुयायियोंके लिए हितकर हो, और झूठा धर्म वह है जिसमें अधिकांश झूठ ही झूठ भरा पड़ा हो। इसलिए अगर आपको यह लगे कि कुल मिला-कर हिन्दू धर्मसे हिन्दूओंका और संसारका अहित ही हुआ है तो आपको हिन्दू धर्मको झूठा धर्म मानकर जरूर छोड़ना ही पड़ेगा।

गांधीजीने इस बातपर जोर दिया कि संघका कोई भी सदस्य गुप्त भावसे भी यह इच्छा न करे कि कोई दूसरा व्यक्ति अपने धर्मको छोड़कर हमारे धर्ममें मिल जाये। इसको लेकर धर्म-परिवर्तनके बारेमें सामान्य चर्चा शुरू हो गई। गांधीजीने अपनी स्थिति पहलेसे और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा:

मै न सिर्फ दूसरेका धर्म-परिवर्तन करनेकी कोशिश नहीं करूँगा, बल्कि मैं मनसे भी यह नहीं चाहूँगा कि वह अपना धर्म छोड़कर मेरा धर्म स्वीकार करे। परमात्मासे मेरी यही प्रार्थना हमेशा होगी कि इमाम साहब अच्छे मुसलमान बनें या जो-कुछ भी वे अच्छेसे-अच्छा बन सकते हैं, बनें। अहिंसाका सन्देश देनेवाला हिन्दू धर्म मेरी दृष्टिमें सबसे सुन्दर, सबसे बड़ा, सबसे महिमामय धर्म है,—जैसे कि मेरी दृष्टिमें मेरी धर्मपत्नी सबसे अधिक सुन्दर रमणी है; मगर दूसरोंको भी अपने धर्मके बारेमें ऐसा ही गर्व हो सकता है। सच्चे और वास्तविक धर्म-परिवर्तनके उदाहरण भी मिलने सम्भव हैं। अगर कुछ लोग अपने आन्तरिक सन्तोष और विकासके लिए धर्म-परिवर्तन करना चाहें, तो वे भले ही करें। आदिम जातियोंतक अपने धर्मका सन्देश पहुँचानेका शौक मुझे नही है। मेरी बुद्धि इसकी गवाही नही देती। कहा जाता है कि अत्यन्त नम्रतासे ये काम करो। खैर, मैंने अति नम्रतामें भी अहंकारको छिपा पाया है। मै जानता हूँ कि अगर मै सम्पूर्ण हूँ, सर्वथा शुद्ध हूँ, तो दूसरोंके पास तक मेरे विचार पहुँचेगे ही। मेरी सारी शक्ति उसी ध्येयकी ओर जानेमें खर्च हो जाती है जो मैंने अपने लिए निश्चित कर लिया है। पर्वतीय प्रदेशोंमें रहनेवाले असमियों और आदिम जातियोके लोगोंके पास मैं जाऊँ भी तो क्या लेकर? मेरे पास अपनी नग्नताके अतिरिक्त और है ही क्या? अपनी प्रार्थनामें शामिल होनेको उनसे कहनेके

बदले मैं ही उनकी प्रार्थनामें शामिल हो जाऊँगा। अंग्रेजोंके आनेसे पहले हम 'आदिम जातियों', 'प्रकृति-पूजक जातियों' इत्यादि वर्गोंमें लोगोंको विभाजित नही करते थे। यह भेद तो हमें अंग्रेज शासकोंने सिखलाया है। यदि मुझमे सेवा करनेकी इच्छा है तो वही लोगोंके साथ मेरा सीधा सम्बन्ध स्थापित कर देगी। धर्म-परिवर्तन और जन-सेवा दोनोकी पटरी ठीक-ठीक नहीं बैठती।

दूसरे दिन खूब सबेरे ये मित्र गांधीजीसे खानगी बातचीत करने बैठे। इस बार भी कईने वही सवाल पूछा:

"तब क्या आप चाहते हैं कि संघका यह नियम बन जाये कि जो लोग दूसरोंको अपने धर्ममें लानेके लिए प्रचार करना चाहते हैं, वे इसके सदस्य नहीं बन सकते?"

जाती तौरपर तो मैं यही ठीक समझता हूँ। मुझे इस आशयका एक प्रस्ताव रखना चाहिए था, क्योंकि मैं इसे बन्धुत्वका एक सर्वसंगत निष्कर्ष मानता हूँ। भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बियोंके पारस्परिक सम्पर्क और सम्बन्धके लिए ऐसा नियम आवश्यक है।

दूसरे मित्रने पूछा, "क्या धर्मान्तरित करनेकी इच्छा परमात्माकी प्रेरणा नहीं है?"

मुझे इसमें शंका है। कुछ हिन्दुओंका विश्वास है कि सभी इच्छाएँ परमात्माकी ही प्रेरणा होती हैं। परन्तु परमात्माने हमें भले-बुरेको समझनेकी शक्ति, विवेक भी तो दिया है। भगवान तो कहेंगे कि मैंने तुम्हें बहुत-सी प्राकृतिक प्रेरणाएँ दी है, जिसमें प्रलोभनका सामना करनेकी तुम्हारी शक्तिकी परीक्षा हो सके।

एक बहनने पूछा, "मगर आप एक आर्थिक-व्यवस्था बनानेका उपदेश देनेमें तो विश्वास करते ही हैं?"

हाँ, उसी प्रकार जिस प्रकार मैं स्वास्थ्यके नियमोंको बतलाना अच्छा समझता हूँ।

तब यही नियम धार्मिक मामलोंके बारेमें भी क्यों न काममें लाया जाये?

यह सवाल ठीक है। मगर आप यह न भूलें कि हमने यह चर्चा यही मूल सिद्धान्त मानकर शुरू की है कि सभी धर्म सच्चे हैं। अगर भिन्न-भिन्न समाजोंके लिए भिन्न-भिन्न परन्तु सच्चे स्वास्थ्यके नियम प्रचलित हो तो कुछको सही और कुछको गलत कहनेमें मुझे संकोच तो होना ही चाहिए। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि लोग जबतक दूसरोंके धार्मिक विचारोको सहन करनेको तैयार नही होते, किसी भी किस्मका अन्तर्राष्ट्रीय बन्धुत्व स्थापित हो ही नहीं सकता।

फिर आध्यात्मिक विषयोपर सासारिक या भौतिक दृष्टान्तोंको एक सीमातक ही घटित किया जा सकता है। जब आप बाह्य प्रकृतिसे कोई दृष्टान्त चुनते है, तब उसका उपयोग भी एक खास हदतक ही किया जा सकता है। मगर मैं प्रकृतिसे सम्बन्धित एक दृष्टान्त लेकर ही अपनी बात समझानेकी कोशिश करूँगा। अगर मैं आपको गुलाबका एक फूल दूँ तो उसके लिए मुझे अपना हाथ हिलाना ही पड़ता है, मगर उसकी सुगन्ध देनेके लिए मुझे कुछ नहीं करना पड़ता, वह अपने आप ही

आपके पास पहुँच जाती है। हम एक पग और आगे बढ़ें, तब हम समझ सकेंगे कि आध्यात्मिक अनुभवोंका असर अपने आप ही होने लगता है। इसलिए स्वच्छता आदि नियम सिखलानेका दृष्टान्त यहाँ काम नहीं देगा। अगर हमारे पास कोई आध्यात्मिक सत्य हो तो वह अपने आप ही दूसरोंतक पहुँच जायेगा। आप आध्यात्मिक अनुभवोंके परमानन्दकी बात करते हैं और कहते है कि उसमें दूसरोंके साथ हिस्सा बँटाये बिना आप रह ही नही सकते। खैर, अगर यह सच्चा आनन्द है, परमानन्द है, तो वह अपने-आप ही वाणीके बिना ही फैल जायेगा। आध्यात्मिक मामलोंमें हमें बस थोड़ा ही आगे बढ़कर प्रयत्न करना पड़ता है। परमात्माको अपना काम करने दीजिए। अगर हम बीचमें हस्तक्षेप करें तो उससे हानि भी हो सकती है। परमात्माका असर तो अपने-आप ही हुआ करता है। पापका नही होता, क्योंकि वह तो एक नकारात्मक शक्ति है। उसे तो आगे बढ़नेके लिए पहले पुण्यका आवरण ओढ़ना जरूरी है।

क्या खुद ईसाने लोगोंको सीख नहीं दी थी? उपदेश नहीं दिया था?

यहाँ बड़ी सावधानी बरतनी चाहिए। आप चाहते है कि मैं ईसाके जीवनकी अपनी व्याख्या आपको बताऊँ। खैर, मैं इतना ही कहूँगा कि 'बाइबिल'में लिखे हरएक शब्दको मै ऐतिहासिक सत्य नही मानता। फिर यह भी याद रखना चाहिए कि ईसा अपने देश-बन्धुओंके बीच काम कर रहे थे। उन्होंने कहा था कि वे खण्डन करनेके लिए नहीं बल्कि सुसम्पूर्ण बनानेके लिए आये थे। मैं गिरि-शिखरपर दिये गये ईसाके उपदेश और पॉलके पत्रोंमें बहुत अन्तर मानता हूँ। पॉलके पत्र तो ईसाकी शिक्षाओंमें ऊपरसे मिलाये गये है — वे पॉलकी कृति हैं, ईसाकी नही।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १९-१-१९२८

३५३. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

रविवार [१५ जनवरी, १९२८ या उससे पूर्व][1]

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिला। मैं वहाँ २४ या २५ तारीखको पहुँचूँगा। मगर शायद वे मुझे सीधे बरतेज ले जानेवाले है। क्या आप पोरबन्दर नही आ रहे हैं? आपके स्वास्थ्यके सुधरनेका क्या कोई उपाय नहीं है? मेरा ठीक है। इस मामलेमें भी अखबारोंपर भरोसा करना कठिन है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ५९०५) की फोटो-नकलसे।

१. २३-२४ जनवरीको अछूतोंके लिए एक मंदिरके शिलान्यासके सम्बन्धमें गांधीजी बरतेजमें थे।

३५४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको[1]

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
१५ जनवरी, १९२८

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला। तुम जो कुछ भी लिखते उसकी तुलनामें मुझे यह बहुत पसन्द आया है। कारण, इसमें तुमने पूर्ण स्पष्टवादितासे काम लिया है। मुझे खुशी है कि मैंने वह लेख लिखा; भले ही उससे इतना ही हुआ कि जो बात तुम इतने वर्षोंसे अपने मनमें रख रहे थे वह तुमने खोलकर कह दी है। लेकिन इसकी चर्चा बादमें।

मैं यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ, केवल तुम्हें यह सूचित करनेके लिए कि बेचारे ब्रॉकवेकी दशा खराब है। मुझे पता चला है कि उन्हें एक कहीं अधिक गम्भीर ऑपरेशन कराना होगा और शायद उन्हें अगले कई महीनोंतक भारतमें ही रहना पड़ेगा। मुझे यह भी पता चला है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी तरफसे पिताजीके[2] साथ हुई इस शर्तपर वह भारत आये हैं कि उनका आने-जानेका खर्च कांग्रेस देगी। यदि ऐसा हो तो हमें उनके अस्पतालका खर्च भी देना चाहिए, और किसी भी हालतमें यह देखते हुए कि वह कांग्रेसमें भाग लेने आ रहे थे, जरूर ही देना चाहिए। मेरा खयाल है कि शीघ्र ही उनपर अस्पतालका बकाया चढ़ने लगेगा। तुम कृपया पूछताछ करके आवश्यक कार्रवाई करो, और जरूरी हो तो तारसे सूचना दो।

मैं समझता हूँ कि मद्रासकी समिति पहले ही ४०० रुपये दे चुकी है। अस्पतालका खर्च ही प्रतिदिन १२ रुपये बताते हैं। मैं श्रीनिवास अय्यगारको भी लिख रहा हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९२८।
सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. इस पत्रका उल्लेख "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", १७-१-१९२८ में है।
२. पं० मोतीलाल नेहरू।

३५५. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सत्याग्रह आश्रम
सावरमती
१५ जनवरी, १९२८

प्रिय सतीश बाबू,

मुझे अखिल बाबूकी अच्छी तरह याद है। उनकी पत्नीकी दुर्घटनाके बारेमें मैं उन्हें लिख रहा हूँ। आपने जिस घटनाका उल्लेख किया है उसकी मुझे याद है। मैंने उन्हें हमेशा पसन्द किया है। हालाँकि मैंने मनमोहन बाबूका खण्डन स्वीकार कर लिया है, लेकिन उसके कारण अखिल बाबूके प्रति खराब धारणा नही बनाई है। अब आप मनमोहन बाबूके बारेमें जो-कुछ कहते है उससे निश्चय ही मुझे दुःख हुआ है।

डा० रायने मुझे दो पत्र भेजे है। पहले पत्रमें उन्होंने खादीका सराहनापूर्ण शब्दोंमें उल्लेख किया है और दूसरेमें उन्होंने उसमें दृढ़ विश्वास घोषित करते हुए लिखा है कि वह जमनालालजीके आनेकी उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहे है। अगर सम्भव हुआ तो मैं आपको इन पत्रोंकी प्रतियाँ भेज दूँगा।

मुझे खुशी है कि हेमप्रभादेवी अब प्रफुल्लित रहने लगी है। यह अजीब बात है कि तारिणी अभी भी अस्वस्थ है। क्या वह अपना अनुसन्धान-कार्य किसी ज्यादा अच्छे जलवायुवाले स्थानमें नही कर सकता?

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५८२) की फोटो-नकलसे।

३५६. भाषण : गुजरात विद्यापीठके दीक्षान्त समारोहमें

१५ जनवरी, १९२८

दीनबन्धु एन्ड्रयूज[1] न केवल एक भले अंग्रेज है तथा उन्होंने इस देशके लिए न केवल अपना सर्वस्व निछावर किया है बल्कि वे एक कलाकार, कवि और अच्छे वक्ता भी है। जिन लोगोंने उनके भाषण सुने हैं और जिन्होंने उनके कामोंका अध्ययन किया है वे जानते है कि उनके सभी काम कलापूर्ण होते है। वे कवि हैं; क्योंकि वे यह जानते हैं कि भविष्य कैसा होगा और कैसा होना चाहिए। वे सुवक्ता है, इस कारण नही कि वे धाराप्रवाह भाषण दे सकते हैं अथवा उनका उच्चारण और भाषा उच्च कोटिकी है बल्कि उनकी ये सारी खूबियाँ तो उनके हृदयसे उठकर आती है। आप उनका भाषण पढ़ें

१. सी० एफ० एन्ड्र्यूजने दीक्षान्त भाषण दिया था।

तो एक तरहका असर होगा; और जो उस भाषणको ध्यानपूर्वक सुनेंगे उनपर कुछ दूसरी तरहका असर होगा। आमतौरपर हम यह मानते हैं कि जो व्यक्ति घन्टों धारा-प्रवाह बोल सकता है, वह सुवक्ता है। किसी-किसीके मनमें यह बात उठ सकती है कि एन्ड्रयूजको कदाचित् भाषण देनेका अभ्यास नहीं है इसलिए उन्होंने अपना भाषण लिखकर पढ़ा। किन्तु ऐसा सोचना भूल है। उन्होंने अपने लिखित भाषणमें इतना रस भर दिया था कि हम सभी उससे शराबोर हो गये। यह रस उनके हृदयसे छलका है।

उन्होंने अपने भाषणमें स्वर्गीय हकीम साहबका उल्लेख किया है। यों ऊपरसे देखनेपर किसीको लग सकता है कि हकीम साहबकी मृत्युसे स्नातकोंके दीक्षांत समारोहका क्या सम्बन्ध है, यह तो कला-विहीनताकी निशानी हुई। मुझे तो ऐसा लगता है कि उन्होने इसीके द्वारा अपनी कला सूचित की और अपना उद्देश्य भी स्पष्ट कर दिया। एन्ड्रयूज उम्रमें आपसे तो बड़े ही हैं। उन्होने अपने बचपनकी बात बताई। उन्होंने हकीम साहबके पास अपनी तालीम शुरू करनेकी बात कही। तबतक हकीम साहब मशहूर हो चुके थे और अपने तिब्बी ज्ञानकी मारफत राजा-रंककी सेवा कर रहे थे। एन्ड्रयूजको लगा कि यही सच्ची शिक्षा वे उनसे ले रहे हैं। उन्होंने जो कहा उसे अपने अनुभवके आधारपर ही बताते हुए यह कहा कि मुझे अपने अध्यापकोंके लेक्चर याद नही हैं; किन्तु अपने इस अध्यापकके कामोकी श्रेष्ठ और पुण्यतम स्मृति आज भी उनके मनमें बसी हुई है; वे उनके मनमें गहरे पैठ सके थे। शिक्षाका यही सार बतानेके लिए उन्होंने हकीमजीकी कहानी कही। इसमें अद्भुत कला भरी हुई है और यह करुणापूर्ण तो है ही। अपना भाषण पढ़ते हुए उन्होंने हमें वीर रसका आस्वादन कराया और अन्तमें त्यागका उपदेश दिया।

तदुपरान्त उन्होंने अपनी जीवन-कथा सुनाई। हमारा हृदय निराशाके गर्तमें पडा हुआ है। हमें यह भय बना रहता है कि इमारत तो हमारे पास है किन्तु कही दो वर्ष बाद उसमें कौवे न बोलने लगें। निराशाकी इस भावनाकी उन्हे खबर है। इस सम्बन्धमें मैंने उनसे कोई बात नही की किन्तु वे तो हवाका रुख देखकर ही भाँप लेते हैं। इसीलिए उन्होने आपसे कहा कि आपके पास तो इमारतें है, रुपये है, जमीन है तथा गुजरात-जैसे प्रान्तमें पैसे भी मिलते ही रहते है किन्तु मैं जिस कालेजमें पढ़ा हूँ, उसके जन्मकी कहानी यदि मैं सुनाऊँ तो आपको आश्चर्य होगा और आपको आशाकी किरणें दीखने लगेंगी। वह एक छोटी-सी झोपडीमें शुरू हुआ और सो भी एक साहसी विधवाके बलपर, — वह विवाहके दिन ही विधवा हो गई थी। यदि वह चाहती तो पुनर्विवाह कर सकती थी किन्तु उसने सेवाधर्मको अपनाया। उस विधवाने साधु-संन्यासियोको खोजकर उनसे विद्यार्थियोंको शिक्षा देनेको कहा और उनके रहनेके लिए झोंपड़ियाँ बनवा दीं। उन्ही झोंपड़ियोंको आज हम विशाल पेम्ब्रोक महाविद्यालयके रूपमें देखते हैं। जहाँसे स्पेंसर और ग्रे-जैसे कवि, पिट-जैसे धुरन्धर राजनीतिज्ञ तथा ब्राउन-जैसे पण्डित निकले। यह बताकर उन्होंने आपको आश्वस्त किया है कि जो कहानी उनके कालेजकी है वही आपके कालेजकी भी समझिए। यदि आप यहाँ

धैर्यपूर्वक काम करते रहेंगे तो यहाँसे भी महान लोग निकलेंगे। और उन्होंने इसका उपाय बताया — आत्म-विश्वास। आत्मविश्वास ईश्वरमें विश्वास और धैर्यसे उत्पन्न होता है। कोई भी उत्तम वस्तु एकाएक नहीं बन जाती। विशाल, सुदृढ़ वृक्षका बीज कुछ कालतक धरतीमें ही रहता है किन्तु माली जानता है कि यथासमय वह वृक्ष बन जायेगा। कुछ समयतक धरतीपर घास रहेगी; और उसे ऊगते रहने दिया जायेगा। माली निराश नहीं होता क्योंकि वह इस विषयमें जानता है। हमसे एन्ड्रयूज ऐसे किसी ज्ञानकी आशा नहीं रखते; किन्तु श्रद्धाकी आशा रखते हैं। श्रद्धाके सम्बन्धमें 'बाइबिल' की व्याख्या उन्होंने आपके सामने रखी — जो वस्तु दिखाई नहीं देती श्रद्धा उसीका प्रमाण है। यदि आपमें वैसी श्रद्धा हो तो विद्यापीठ कभी बन्द नहीं होगा। जितने वर्ष पेम्ब्रोकको विकसित होनेमें लगे, इस विद्यापीठको उतने नहीं लगे। आप कहेंगे कि क्या १५ बाल-विद्यालयोंका बन्द हो जाना ही प्रगति हुई। यदि और भी विद्यालय बन्द हो जायें, किन्तु आपमें श्रद्धा हो तो आप निराश न होंगे। बाल-विद्यालयोंके बन्द होनेका कारण यह है कि हम अपने सिद्धान्तपर अटल रहे, हम अपनी शर्तपर डटे रहे और कहा: "कात सको तो रहो, नहीं तो जाओ।" एक दिन ऐसा भी आ सकता है कि यहाँ कोई न रहे, सिर्फ कुलपति ही बैठा हो — वही शिक्षक हो और वही शिष्य भी। उसके सामने उसका चरखा पड़ा हो तो कोई न कोई तो आयेगा-जायेगा। यदि कोई भी न आये तो बन्दर तो आयेंगे और यदि उसमें श्रद्धा होगी तो वह बैंदर्मीकी भाँति उनसे बातें करेगा और इसीसे उसे आश्वासन मिलेगा। मेरी श्रद्धाका प्रमाण क्या है? उसका प्रमाण यही है कि वह है। आपसे यदि कोई पूछे तो उससे कहें कि वह जो चरखा-चरखा चिल्लाता रहता है, उसीके पास जाओ। यदि आपमें इतनी श्रद्धा हो तो एन्ड्रयूज कहते हैं कि आप एक नहीं बल्कि एक हजार पेम्ब्रोक खड़े कर सकते हैं। कहाँ इंग्लैंड और कहाँ भारत; भारतमें कितने ही इंग्लैंड समा जायें। किन्तु क्या हममें उतना साहस है? उतना धीरज है? हम अपने सिद्धान्तोंपर डटे रहें और विश्वास रखें। हमें उस दगाबाज व्यापारीकी भाँति व्यापार नहीं करना है जो ग्राहक देखकर पुड़िया बाँधता है और दाम घटाता-बढ़ाता रहता है। "यदि नियमोंमें इतनी ढिलाई की जाये तो विद्यार्थी आयेंगे, अतः इतनी ढील दे दी जाये," इस प्रकारके व्यापारसे न तो जनताको और न विद्यार्थियोंको ही कुछ मिलेगा। यदि अध्यापकोंमें श्रद्धा होगी तो वे एक ही बात कहेंगे और विद्यार्थी भी एक ही बात कहेंगे। वे कहेंगे कि यदि मैं एक ही हूँ तो भी क्या होता है? अध्यापक मुझपर अपना सर्वस्व निछावर कर देंगे। ईश्वर भी एक ही है किन्तु उसकी कृतियाँ अनेक हैं। इस प्रकार यदि कोई विद्यार्थी अकेला होते हुए भी निर्भय होकर विद्यालयमें बैठ जायेगा तो इससे १०० विद्यार्थी तैयार होंगे। यही एन्ड्रयूजके भाषणका सार है और यही उनकी वीणाका सुर है।

आप यह मानें कि यही भाषण मेरा भी है। आप अपने मनमें विद्यालयके बारेमें अभिमानकी भावना रखें। विद्यापीठको सँभालें और अपने जीवनको समुज्ज्वल

बनायें। जहाँ भी रहें विद्यापीठको सदा याद रखें। भविष्यमें यह क्या रूप लेगा, सो आप कुछ दिनोंमें जान लेंगे। किन्तु धीरज रखना चाहिए। मैं आपसे इतना तो कह ही देना चाहता हूँ कि जबतक हममें से कुछ लोग भी जीवित रहेंगे तबतक विद्यापीठ बन्द नहीं होगा। इस विद्यापीठकी खातिर यदि मुझे अपनी हस्तीको मिटा देना पड़े, मरना-खपना पड़े तो मैं उसके लिए तैयार हूँ। आप यह विश्वास रखें कि अगर आप विद्यापीठके तेजको सहन कर सकेंगे तो वह सदा आपका सहारा बना रहेगा। यदि आप उसके तेजको सहन न कर सकें तो मुझे दोष न दें, अध्यापकोंको दोष न दें; विधाताको दोष दें। हालाँकि हम अहिंसावादी हैं फिर भी मैं आपसे कहता हूँ कि यदि हम लोग अपने वचनका पालन न कर सकें तो आपको हमें कत्ल करनेका अधिकार है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २२-१-१९२८

३५७. सन्देश : द्वितीय स्नातक सम्मेलनपर[1]

१६ जनवरी, १९२८

खेद है कि मैं स्नातक संघके अधिवेशनमें भाग नहीं ले सकूँगा। मुझे आशा है कि सदस्यगण स्नातक संघको सेवाका उत्कृष्ट साधन बनाकर संघ और स्वयंको गौरवान्वित करेंगे तथा राष्ट्रीय यज्ञमें उदारतापूर्वक अपनी आहुति देंगे।

मोहनदास गांधी

[गुजरातीसे]
साबरमती, खण्ड ६, अंक ४

३५८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको[2]

आश्रम
साबरमती
१७ जनवरी, १९२८

प्रिय जवाहरलाल,

समय बचाने और अपने दुखते हुए कंधेको आराम देनेके लिए मुझे पत्र बोलकर ही लिखवाना पड़ेगा। रविवारको मैंने तुम्हें फेनर ब्रॉकवेके बारेमें लिखा था।[3] आशा है, तुम्हें वह पत्र ठीक समयपर मिल गया होगा।

१. गुजरात विद्यापीठके स्नातक सम्मेलनपर।
२. जवाहरलाल नेहरूके दिनांक ११-१-१९२८के पत्रके उत्तरमें, देखिए परिशिष्ट १०।
३. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", १५-१-१९२८।

क्या तुम्हें मालूम है कि जिन लेखोंकी[1] तुमने आलोचना की है उन्हें सिवाय तथाकथित 'अखिल भारतीय प्रदर्शनी' वाले लेखके, मैंने इसीलिए लिखा था कि उल्लिखित कार्योंकी मुख्य जिम्मेदारी तुम्हारी ही थी। मैंने अपने आपको एक प्रकारसे सुरक्षित समझा था, यह सोचकर कि तुम्हारे-मेरे बीचके सम्बन्धोंको देखते हुए मेरे लेखोंको उसी भावनासे समझा जायेगा, जिस भावनासे उनको लिखा गया था। फिर भी मैं देखता हूँ कि हर बातमें उनका असर गलत ही पड़ा। मुझे इसकी चिन्ता नहीं। कारण, यह स्पष्ट है कि ये लेख ही तुम्हें उस आत्म-दमनसे मुक्त कर सकते थे, जिससे तुम इतने वर्षोंसे अन्दर-अन्दर घुट रहे थे। यद्यपि मुझे तुम्हारे-मेरे बीचका दृष्टि-भेद कुछ-कुछ दिखाई देने लगा था, फिर भी मुझे तनिक भी कल्पना नहीं थी कि ये मतभेद इतने गम्भीर हो जायेंगे। जहाँ तुम देशकी खातिर और इस विश्वासमें अपने-आपको बहादुरीके साथ दबा रहे थे कि मेरे साथ और मेरे नीचे अपनी इच्छाके विरुद्ध काम करके भी तुम राष्ट्रकी सेवा करोगे और बिना आँच आये निकल जाओगे, वही तुम इस अस्वाभाविक आत्म-दमनके भारके नीचे दबकर कुढ़ते रहे। और जबतक तुम उस स्थितिमें रहे, तुम उन चीजोंकी भी उपेक्षा करते रहे, जो अब तुम्हें मेरी गम्भीर त्रुटियाँ प्रतीत होती है। मैं 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंसे तुम्हें दिखा सकता हूँ कि इतने ही जोरदार लेख मैंने कांग्रेसकी कार्रवाइयोंकी बाबत तब लिखे थे जब मैं कांग्रेसका सक्रिय पथ-प्रदर्शन कर रहा था। जब कभी कांग्रेसकी बैठकोंमें गैर-जिम्मेदारी और जल्दबाजीकी बातें या कार्रवाई होती थी तब भी मैं इसी तरह बोलता रहा हूँ। मगर जबतक तुम मूर्च्छित अवस्थामें थे, तबतक ये चीजें तुमको आजकी तरह नहीं खटकी थीं; और इसलिए तुम्हारे पत्रकी असंगतियाँ बताना मुझे बेकार मालूम होता है। इस समय तो मुझे भावी कार्रवाईकी ही चिन्ता है।

अगर तुमको मुझसे कोई स्वतन्त्रता चाहिए, तो मैं उस नम्रतापूर्वक अचूक वफादारीसे तुम्हें पूरी तरह स्वतन्त्र करता हूँ, जो तुमसे मुझे इन तमाम वर्षोंमें मिली है और जिसकी मैं तुम्हारी मन:स्थितिका ज्ञान प्राप्त हो जानेके कारण अब और ज्यादा कद्र करता हूँ। मुझे बिलकुल साफ दिखाई देता है कि तुम्हें मेरे और मेरे विचारोंके विरुद्ध खुली लड़ाई करनी चाहिए। कारण, यदि मैं गलतीपर हूँ तो मैं स्पष्ट ही देशकी ऐसी हानि कर रहा हूँ, जिसकी क्षति-पूर्ति नहीं हो सकती, और इसे समझ लेनेके बाद तुम्हारा धर्म है कि मेरे खिलाफ बगावतमें उठ खड़े हो; अथवा यदि तुम्हें अपने निर्णयोंके ठीक होनेमें कोई शंका है तो मैं खुशीसे तुम्हारे साथ निजी रूपमें उनपर चर्चा करनेको तैयार हूँ। तुम्हारे और मेरे बीच मतभेद इतने बड़े और उग्र हैं कि हमारे लिए सहमतिका कोई आधार दिखाई नहीं देता। मैं तुमसे अपना यह दुख नहीं छिपा सकता कि मैं तुम्हारे जैसा बहादुर, वफादार, योग्य और ईमानदार साथी खो रहा हूँ; परन्तु ध्येयकी सिद्धिके लिए राजनीतिक सहचरताको भी कुर्बान करना पड़ता है। इन सब विचारोंसे ध्येयको ही श्रेष्ठ मानना चाहिए। लेकिन राजनीतिक सहचरताकी समाप्तिसे अगर उसे समाप्त होना ही है — हमारी व्यक्तिगत घनिष्ठता

१. देखिए "राष्ट्रीय कांग्रेस", ५-१-१९२८ और "स्वतन्त्रता बनाम स्वराज्य", १२-१-१९२८।

में कोई अन्तर नहीं पडेगा। हम लम्बे अर्सेसे एक ही परिवारके सदस्य बन चुके हैं और गम्भीर राजनीतिक मतभेदोंके बावजूद हम ऐसे ही बने रहेंगे। मुझे कई लोगोंके साथ ऐसे सम्बन्ध रखनेका सौभाग्य प्राप्त है। उदाहरणके लिए, शास्त्रीको ही ले लो। उनके और मेरे राजनीतिक दृष्टिकोणमें जमीन-आसमानका फर्क है, मगर उनके और मेरे बीच जो स्नेह-सम्बन्ध राजनीतिक मतभेदोंका भान होनेसे पहले ही पैदा हो चुका था, वह बना हुआ है और कई अग्नि-परीक्षाएँ पार करके भी आज जीवित बना है।

तुम्हारी पताका फहरे, इसका एक शानदार तरीका सुझाऊँ। मुझे प्रकाशनके लिए एक पत्र लिखो, जिसमें तुम्हारे मतभेद प्रकट किये गये हों। मैं उसे 'यंग इंडिया' में छाप दूँगा और उसका संक्षिप्त उत्तर लिख दूँगा। तुम्हारा पहला पत्र मैंने पढ़ने और जवाब देनेके बाद फाड़ दिया था; दूसरा रख लिया है और अगर तुम और कोई खत लिखनेकी तकलीफ नहीं उठाना चाहते हो तो जो मेरे सामने है उसीको छापनेके लिए तैयार हूँ। मेरी समझसे इसमें कोई आपत्तिजनक अंश नहीं है। लेकिन कोई हुआ तो विश्वास रखो, मैं ऐसे हर अंशको निकाल दूँगा। मैं उस पत्रको एक स्पष्ट और प्रामाणिक दस्तावेज मानता हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १३०४०) की फोटो-नकलसे तथा ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्संसे भी।

३५९. पत्र : आर० रामचन्द्र रावको[1]

आश्रम
साबरमती
१७ जनवरी, १९२८

प्रिय मित्र,

आपका पत्र इस तथ्यका प्रमाण है कि तेंदुआ अपनी चित्तियाँ नहीं बदल सकता। मुझे इस बातमें सीधी चोटसे बचाव करते हुए नगण्य सामग्रीमें से एक विचारणीय मामला तैयार करनेवाले पुराने कलक्टरकी छाया नजर आई। मैं एक उदाहरण लेता हूँ। अंग्रेज शासकोंने जितनी जमीन घेर रखी है वह बहुत ही नगण्य है। करोड़ों भारतीयोंकी तुलनामें उनकी संख्या तो और भी नगण्य है। सरकारी नौकरीमें अंग्रेजोंके मुकाबले 'देशी' लोग कहीं ज्यादा हैं। अतः आपके तर्कसे तो अंग्रेज

१. यह पत्र रामचन्द्र रावके ९ जनवरीके पत्रके उत्तरमें था जिसमें उन्होंने गांधीजीकी इस आलोचनाका खण्डन किया था कि मद्रासमें कांग्रेस अधिवेशनके दौरान आयोजित प्रदर्शनी भारत-विरोधी थी; देखिए "राष्ट्रीय कांग्रेस", ५-१-१९२८।

लोग इसी कारण अपने शासनको स्वदेशी शासन कह सकेंगे। तथापि मैं और आप ऐसे किसी वाहियात दावेका खण्डन करेंगे। और निश्चय ही इसमें आपकी बड़ी चतुराई थी कि आपने देशी चीजके खादीवाले अंगके लिए ६२ हजार वर्गफुट जगह दिलवा दी। मुझे इस बातकी तो खुशी है कि खादी उस विराट् चौगानके बाहर थी, लेकिन जैसा कि मुझे विश्वसनीय लोगोंने बताया, यदि यह बात सच है कि सरकारने यह शर्त रखी थी कि खादी चौगानके बाहर रहे, तो यह शर्मकी बात है। और क्या आपका यह कहना उचित है कि मैंने विदेशी कपड़ोंकी प्रदर्शनी की 'अनुमति' दी थी? क्या आपको याद नहीं है कि जब मैंने विदेशी कपड़ोंकी प्रस्तावित प्रदर्शनीके बारेमें सुना तो मैंने बहुत ही अनिच्छापूर्वक खादी-प्रदर्शनी लगाने पर सहमति दी थी? क्या आपको याद नहीं है कि कांग्रेस सप्ताहके दौरान खादी-प्रदर्शनी करनेके लिए मैं कतई उत्सुक नहीं था। मैं अगर राजी हुआ तो इस कारण कि आप, जो एक पुराने मित्र हैं, आग्रह कर रहे थे कि मुझे खादी-प्रदर्शनी करनी चाहिए और मुझसे कहा था कि यदि मैं उसे नही करता तो आप अटपटी स्थितिमें पड़ जायेंगे। आपको अपनी सहमति प्रदान कर चुकनेके बाद मेरे पास विरोध प्रकट करते हुए पत्र आये, लेकिन अपना वचन दे चुकनेके बाद मैं उसे वापस नहीं लेना चाहता था।

यदि इससे आपको सन्तोष नहीं होता और यदि आपने अपना पत्र जनताके पढ़नेके खयालसे लिखा है, तो मैं उसे और उसका उत्तर भी खुशीसे छाप दूँगा।

मुझे आपको यह विश्वास दिलानेकी कोई जरूरत नहीं है कि मैंने जो कुछ लिखा, उसमें व्यक्तिगत रूपसे आपके विरुद्ध कुछ नहीं था। आप तो उस प्रदर्शनीमें शामिल अनेक लोगोंमें से केवल एक ही थे जो आजकी उथल-पुथलको देखते कोई असाधारण बात नहीं है। मुझे अगर यह भय न होता कि इसी चीजकी पुनरावृत्ति कहीं कांग्रेसके अगले अधिवेशनमें न हो जाये, तो मैं तो चुप ही रह जाता। अवश्य, मेरी चेतावनी और विरोधके बावजूद उसकी पुनरावृत्ति हो सकती है। यदि होती है तो मैं अपने ऊपर भीरुताका आरोप नहीं लगाऊँगा।

हृदयसे आपका,

दीवान बहादुर आर० रामचन्द्र राव, बी० ए०, सी० एस० आई०
मन्त्री, ए० आई० ए० आई० के० एण्ड आर्ट्स एक्जिबीशन
मद्रास सेंट्रल अर्बन बैंक
मायलापुर, मद्रास

अंग्रेजी (एस० एन० १३०४१) की माइक्रोफिल्मसे।

३६०. पत्र : एस० गणेशनको

आश्रम
साबरमती
१७ जनवरी, १९२८

प्रिय गणेशन,

मुझे तुम्हारा तार मिला था। मुझे तारसे जवाब नहीं देना चाहिए। 'हिस्ट्री ऑफ सत्याग्रह'[1] का सारा अनुवाद अब तैयार है। तुमने मुझे छपाई शुरू कर सकनेकी तारीख बताई है, और मैं चाहता हूँ कि लिखो कि किस तारीखको उसे समाप्त कर सकते हो। इसलिए कृपया मुझे वह निश्चित तारीख बताओ जब तुम उसे बिक्रीके लिए तैयार कर सकते हो। वह पूरी तरह खद्दरकी जिल्दमें होनी चाहिए; या फिर कागजकी जिल्द हो। अगर तुम समय और अर्थ-साधन, दोनों दृष्टियोंसे इस कामको न सँभाल सको तो हाथमें मत लो। मैं इस इतिहासको जल्दी प्रकाशित देखना चाहता हूँ; क्योंकि उसके बिना मुझे आत्मकथावाले अध्याय[2] लिखनेमें अड़चन होती है।

जहाँतक 'सेल्फ रेस्ट्रेन्ट वर्सेस सेल्फ इनडलर्जेस'[3] का सवाल है, कागज खरीदा जा चुका है और रिसेटिंग आरम्भ हो चुकी है।

इस पत्रका उत्तर शीघ्र और सुनिश्चित रूपसे दो। मैं तुम्हें बता दूँ स्वामी आनन्दकी दृष्टिमें तुमने जो प्रतिष्ठा खोई है उसे अभी तुमने फिरसे प्राप्त नहीं किया है, और यह दुखकी बात है। क्योंकि जबतक तुम उसे प्राप्त नहीं कर लेते तबतक मेरे लिए तुम्हारी उतनी सहायता करना कठिन है जितनी मैं करना चाहता हूँ।

तुम श्री ग्रेग द्वारा हाथकताईपर लिखा गया निबन्ध छाप रहे हो। कृपया मुझे बताओ कि वह कबतक प्रकाशित हो जायेगा।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजी (एस० एन० १३०४२) की फोटो-नकलसे।

१. दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास; देखिए खण्ड २९।

२. देखिए खण्ड ३९।

३. इसमें आत्म-संयम, ब्रह्मचर्य, सन्तति-नियमन आदि विषयोंपर लिखे गये गांधीजीके लेखों तथा यंग इंडियामें "अनीतिकी राहपर" शीर्षकसे प्रकाशित लेखमालाका संग्रह था। देखिए खण्ड ३१।

३६१. तार: पोरबन्दरके दीवानको

साबरमती
१८ जनवरी, १९२८

दीवान साहब
पोरबन्दर

हिज हाइनेसके निमंत्रणके लिए अनुग्रहीत हूँ। मेरे साथ परिषद[1] अध्यक्ष और कई महिलाओं सहित बीस लोग होंगे। प्रबन्ध स्वागत समितिके हाथोंमें है। आप कृपया समितिसे परामर्श कर लें।

गांधी

अंग्रेजी (एम० एम० यू० २०/२५) की माइक्रोफिल्मसे।

३६२. पत्र: एस० डी० नाडकर्णीको

आश्रम
साबरमती
१८ जनवरी, १९२८

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला था। मैंने आपके कुछ पत्र अपनी 'यंग इंडिया' की फाइलमें[2] उपयोगके लिए रख छोड़े हैं।

प्रस्तावित "स्मृति" के बारेमें मैं आपसे सहमत नहीं हो सकता। अकसर आप भावसे अधिक शब्दपर जोर देते प्रतीत होते है। "अनुप्रेरित" शब्दका प्रयोग जब मैं करता हूँ तब मैं उसके तकनीकी अर्थ नहीं लगाता। जब मैं "अनुप्रेरित" अनुभव करूँगा तब आप देखेंगे कि हिन्दू-धर्मको एक नई "स्मृति" देनेसे मुझे कोई चीज नहीं रोक सकेगी, और मैं आपको गुप्त रूपसे बता दूं कि मैं ऐसी प्रेरणाके लिए प्रयत्नशील हूँ। तबतकके लिए मुझे प्रतीक्षा करनी होगी।

मद्रासमें आपका साक्षात्कार करके मुझे बहुत खुशी हुई।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० डी० नाडकर्णी

अंग्रेजी (एस० एन० १३०४३) की फोटो-नकलसे।

१. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद।
२. देखिए खण्ड ३६, "चिट्ठी-पत्री", १६-२-१९२८।

३६३. पत्र : रतिलालको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
१८ जनवरी, १९२८

भाईश्री ५ रतिलाल,

मैंने तुम्हें तार तो दिया है। मुझे आज चि० देवदासका पत्र मिला है जिसमें उसने लिखा है कि तुम्हें बहुत दुःख हुआ है। दुःख तो होता है किन्तु तुम्हें धीरज रखना ही चाहिए। शकुभाईके बच्चो आदिके बारेमें मै कुछ नही जानता था। किन्तु देखता हूँ वह काफी बड़ा परिवार छोड़ गया है। उन्हें धीरज बँधानेवाले तो एक तुम्ही हो। जन्म-मरण तो साथ-साथ लगे हुए हैं अतः उसके लिए हर्ष-शोक क्या करना। हमें तो यही शोभा देता है कि अपने कर्त्तव्यका पालन करते हुए जब हमारा काल आये तो हँसते हुए विदा ले लें। शान्त रहना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ७१६१) की फोटो-नकलसे।

३६४. एक पत्र

१८ जनवरी, १९२८

भाई . . .,[1]

जब तक . . .[2] को देखकर भी क्षोभ होता है तबतक उसे देखनेका भी छोड दो। यह सब कार्य बलात्कारसे नही होना चाहिये। इस बारेमें मुझे आश्रममें पूछना।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० १६३९ से।
सौजन्य : रमणीकलाल मोदी

१ और २. नाम छोड दिये गये हैं।

३६५. अजमल जामिया-कोष

स्वर्गीय हकीम अजमल खाँ साहबकी स्मृतिमें और नेशनल मुस्लिम यूनिवर्सिटीकी आर्थिक नींव पक्की करनेके लिए जो कोष खोला जानेवाला है उसके बारेमें डा० अन्सारीने मुझे पत्र लिखा है। डा० अन्सारीने यह कहनेकी इजाजत दे दी है कि डा० अन्सारी और प्रिन्सिपल जाकिर हुसेन इस अपीलमें मेरे साथ हैं। श्रीयुत जमनालाल बजाजने इस कोषका कोषाध्यक्ष बनना स्वीकार किया है। हिन्दू और मुसलमानोंके बीच इस मनमुटावके जमानेमें इस अपीलको कई नामोंके साथ निकालना उचित नहीं समझा गया। मगर हमें उम्मीद है कि वे सभी लोग जो स्वर्गीय आत्माकी स्मृतिपर श्रद्धा रखते हैं, और इस स्मारकके साथ नेशनल मुस्लिम यूनिवर्सिटीको जोड़ देनेका खयाल पसन्द करते हैं, इस आन्दोलनमें उसी प्रकार सहायता देंगे जैसे कि वे भी अपील करनेवालोंमें शामिल हों।

मेरी विनम्र सम्मतिमें एकतामें विश्वास करनेवाले हिन्दू-मुसलमानोंका यह कर्त्तव्य है कि वे हकीम साहबकी यादगारको इस प्रस्तावित ठोस रूपमें स्थायी बनायें। जामिया की नींव पक्की बनाना उनका कर्त्तव्य है क्योंकि जामिया उस जमानेकी उपज है जब कि यह समझा जाता था कि दोनों जातियाँ हमेशाके लिए एक हो गई हैं। और अगर असहयोगी राष्ट्रीय विद्यालय एकताका समर्थन न करें, एकता करानेकी कोशिश न करें, एकता पक्की न करें तो फिर कोई और नहीं कर सकता। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि एकताके सभी समर्थक इस कोषमें खूब उदारतासे दान देंगे।

आज केन्द्रीय विद्यालयमें २०० विद्यार्थी और उसकी नगर-शाखामें ७४ विद्यार्थी हैं। इनके अलावा, दो रात्रि-पाठशालाएँ हैं, जिनमें लगभग २०० विद्यार्थी पढ़ते हैं। जामियामें २३ कार्यकर्त्ता हैं, जिसमें सबसे अधिक वेतन पानेवालेको २६५ रुपये और सबसे कम पानेवालेको ३५ रुपया महीना मिलते हैं। प्रिंसिपलको हमेशा यही चिन्ता रहती है कि ऐसे स्वयंसेवकोंको आकृष्ट किया जाये जो अपनी जरूरत-भरके लायक ही वेतन लें। हर महीने २,३०० रुपये वेतनके रूपमें देने पड़ते हैं। मकानका किराया ४२५ रुपये माहवार है। कुल माहवारी खर्च ४,८०० रुपयेका है। नियमित माहवारी आमदनी २,७०० रुपयोंकी है जिसमें भोजनालयके १,३०० रुपये भी शामिल हैं। यों २,१०० रुपये महीनेकी कमी पड़ती है। जबतक हकीम साहब जिन्दा थे, किसी-न-किसी तरह यह खर्च चल जाता था। जबतक शिक्षक लोग अपने लिए ऐसा नाम और प्रतिष्ठा नहीं पैदा कर लेते, जिससे उन्हें सहायता मिलने लगे तबतक सर्वसाधारणको यह कमी आप ही पूरी करनी पड़ेगी। और जबतक जामियाकी इमारत नहीं बन जाती, यह स्मारक स्थायी नहीं माना जा सकता। इसलिए दानकर्त्ता सहायताकी रकमका निश्चय करते समय, जरूरतका भी खयाल रखें।

डा० अन्सारी लिखते हैं कि सेन्ट्रल बैंकने बराय मेहरबानी अजमल जामिया-कोषके चन्दोंकी रकमें स्वीकार करना और सभी 'चेकों' और 'ड्राफ्टों' का बिना दस्तूरी

लिए अपनी सभी शाखाओंमें मुगातान करना मंजूर कर लिया है। कोषाध्यक्षका पता है— ३९५, कालवादेवी रोड, बम्बई।

बतौर ट्रस्टीके हम चार आदमियोंके नामपर कोषाध्यक्ष अपने पास जमा हुई सारी रकम रोके रहेंगे, और वह तभी दी जायेगी जब जामियाके नामपर एक समुचित ट्रस्ट बना दिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १९-१-१९२८

३६६. अपरिवर्तनवादियोंसे

मै देखता हूँ कि यह खबर कि इसी महीनेमे किसी समय अपरिवर्तनवादियोकी एक बैठक साबरमतीमें होनेवाली थी, किसी तरह अखबारवालोंके पासतक पहुँच ही गई। शायद यह अवश्यम्भावी था। परन्तु सभी सम्बन्धित लोगोंको मुझे यह सूचित करते हुए खेद है कि कमसे-कम हालके लिए तो यह खयाल छोड़ ही दिया गया है। कोई कार्यक्रम निश्चित करने और सामान्य विचार-विनिमयके लिए बहुतसे अपरिवर्तनवादी ऐसी बैठकका सुझाव बहुत दिनोसे दे रहे थे। इस माँगने मद्रास कांग्रेसमें बड़ा जोर पकड़ लिया था जब कि कांग्रेसमें आये हुए अपरिवर्तनवादियोंको लगा कि कई एक प्रस्तावो के बारेमें उनको एक निश्चित और संयुक्त नीति अपनानी चाहिए और कांग्रेसके भीतर ही उनको एक अलग दलके रूपमें काम करने योग्य बनना चाहिए। मुझे अलग दल बनानेका खयाल बहुत जँचा नही; मगर चर्चाके लिए अपरिवर्तनवादियोकी बैठक बुलानेके मै विरुद्ध नही था। मगर मै जब इस आशयका परिपत्र लिखने बैठा, तो मैंने देखा कि यह मुश्किल काम है, और बुलाये जानेवाले लोगोके नाम चुनना भी कुछ कम टेढी खीर नही है। सच पूछो तो मुझे दोनों ही काम असम्भव-से लगे। इस प्रश्नपर और गहरा विचार करनेपर मैने देखा कि ऐसी कोई बैठक करनेसे शायद डा० अन्सारी मुश्किलमें पड़ जायेंगे और ऐसी बातोपर वाद-विवाद करनेसे, जिनको हम मजेमें किसी दूसरे अच्छे अवसरके लिए मुल्तवी रख सकते है, बहिष्कारकी ओरसे देशका ध्यान इस ओर खिंच आयेगा और जिससे बहिष्कारका राष्ट्रीय कार्यक्रम पूरा करना शायद और अधिक मुश्किल हो जायेगा। फिर मैंने यह भी देखा कि जबतक मै जिन्दा हूँ, सर्व-सुलभ हूँ और मेरा दिमाग ठीक और स्वस्थ है, तबतक मेरे बिना कट्टर असहयोगियोका जो अपरिवर्तनवादी दल बनाया जायेगा वह सम्भवतः पूरी तौरपर जोरोसे काम नही कर सकेगा। और इस प्रस्तावित बैठकके सुझावकी जड़में खयाल यह था कि एक दल ऐसा बनाया जाये कि जिसमें मेरा शामिल होना जरूरी न रहे। सिद्धान्तके रूपमें यह भले ही सम्भव हो, मगर व्यवहारमें तो बहुत-सी बातोपर मेरी राय पूछी ही जायेगी, और मै उन बहस-मुबाहिसोमें शामिल रहकर, जिनमें वे सवाल पैदा होंगे, जो राय दे सकूँगा, उसकी बनिस्बत, उनमें शामिल हुए बिना ही मेरी जो राय होगी, उसके कही अधिक गलत होनेकी सम्भावना है। इन सब

चीजोंको देखनेपर मैं इस विचारकी ओर झुका कि अभी हालके लिए तो बैठक मुल्तवी की जा सकती है। पहले-पहले मैंने वल्लभभाईको अपनी यह बदली हुई राय बतलाई और वे उससे सहमत हुए। दूसरे मित्र भी दूसरे स्वतन्त्र कारणोंसे इसी नतीजे-पर पहुँचे। इसलिए इस बैठकका विचार फिलहाल स्थगित कर दिया गया है।

आशा है कि इस स्थगनसे अपरिवर्तनवादी लोग निराश न हो जायेंगे। मैं यह अभी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि इसे स्थगित रखना ही अच्छा रहेगा या नहीं। जब कि राष्ट्रीय कार्यक्रमके रूपमें असहयोग अंशत: स्थगित है, असहयोगियोंको व्यक्तिगत रूपसे अपनी श्रद्धाकी परीक्षा करनेका अवसर मिला है। दलके सहारेके बिना अपने ही पैरों अलग खड़े रहनेसे उनकी श्रद्धा और भी दृढ़ हो जायेगी। जब कोई ध्येय इतना सबल बन जाता है कि विश्वासके दर्जेतक उठ जाता है — जैसा कि असहयोग उनके लिए हो गया होगा जो अबतक उसका पालन सचाईसे करते आ रहे हैं — तो वह ध्येय अपने ही बलपर खड़ा रहता है, उसे अपने भीतर ही से आवश्यक पोषण मिल जाता है। हमें देशकी जनतापर ऐसा भरोसा भी रखना चाहिए कि जब कभी कोई प्रगतिशील आन्दोलन शुरू करना सम्भव होगा, वे सभी लोग उसमें फिरसे बखुशी शामिल हो जायेंगे, जिन्होंने असहयोगको छोड़ दिया था। इस घड़ी मैं आगेका कोई कदम नहीं सुझा सकता। क्योंकि मैं बीचके लिए जो भी बात सुझाऊँगा, उससे देशमें भिन्न-भिन्न दलों द्वारा की जानेवाली एक संयुक्त कार्यक्रम तैयार करनेकी कोशिशमें खलल पड़ सकता है। इस बीच, मैं अपरिवर्तनवादियोंका ध्यान केवल खादीके महान रचनात्मक कार्यक्रमकी ही ओर खींच सकता हूँ। जो लोग खादी-कार्यक्रमको अहमियत नहीं देते वे असहयोगके सबसे अधिक शक्तिशाली और सबसे अधिक क्रियाशील अंश यानी अहिंसाकी खूबियाँ नहीं समझते, उसे नहीं पहचानते। अहिंसाके बिना असहयोग कभी भी एक विश्वास और सिद्धान्त बनने योग्य गरिमा प्राप्त नहीं कर सकता; वह युद्धकी एक चाल-भर बन कर रह जाता है। अहिंसापूर्ण असहयोगकी परिकल्पना तो एक ऐसी अमोघ औषधिके रूपमें की गई थी जिसके आगे फिर किसी अन्य औषधिकी जरूरत ही नहीं रह जाती, और इसके क्रियात्मक पक्षका आधारभूत अंग खादी है। इंग्लैंडके समाचारपत्र 'डेली डिस्पेच' में देखिए कि मि० हारकोर्ट रॉबर्टसन किस प्रकार अनिच्छापूर्वक खादीकी स्तुति करते हैं। सम्पादकका कहना है कि "लेखक बहुत सालतक ब्रिटिश भारतमें रह चुके हैं और व्यापारकी हालत और भारतीयोंकी मनोवृत्तिका उन्हें खूब गहरा ज्ञान है।" १२ तारीखके 'लीडर' से मैं नीचेका उद्धरण साभार दे रहा हूँ:[१]

> उनके (श्री रॉबर्टसनके) मतानुसार भारतवर्षमें ब्रिटिश सूती मालकी खपतकी कमीका कारण महासमरके बाद की गड़बड़ी नहीं है, आर्थिक कठिनाइयाँ भी नहीं हैं और न भारतीय जन-समुदायकी दरिद्रता ही है, . . . और न अकाल हैं . . . बल्कि हिन्दुस्तानी और जापानी मिलोंकी प्रतियोगिता है

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

और सबसे जबर्दस्त कारण है खद्दर। . . . वह तो खादी को ही असल दुश्मन समझते हैं। . . . वह कहते हैं :

"खद्दर वह देशी कपड़ा है जो बाबा आदमके जमानेके करघोंपर हाथ-कते सूतसे नौसिखुए और नये-नये बुननेवाले बुनते हैं। खद्दर मोटा, कड़ा, गाँठ-गठीला और दोषोंसे भरा होता है। वह सदा ही मैला दिखलाई पड़ता है। मगर तो भी उसका चलन खूब है, धनी हिन्दुस्तानी भी खद्दरका कपड़ा पहननेमें गौरव मानते हैं, क्योंकि दिन-दूने रात-चौगुने बढ़नेवाले राष्ट्रीय दलकी इस पुकारका कि 'हिन्दुस्तान हिन्दुस्तानियोंके ही लिए है' खद्दर प्रत्यक्ष और ठोस रूप है। इसपर खर्च होनेवाली एक कौड़ी भी विदेशोंमें नहीं जाती। इसे जो पहनता है, वह हिन्दुस्तानके करोड़ों भूखोंको खाना देता है, अपने देशकी स्वतन्त्रता घोषित करता है और अपनेको अव्वल दर्जेका देशभक्त साबित करता है। . . . खद्दर महात्मा गांधीका एक शस्त्र है और भारतवर्षमें विदेशी शासनके विरुद्ध संघर्षमें उन्होंने इसका आविष्कार किया था। महात्मा गांधी आधे सन्त, आधे धर्मान्ध और पूरे देशभक्त हैं। वे खुद अपने आप और देशी समाचारपत्रोंके जरिये भी देशके शिक्षित वर्गके हृदयोंपर सीधा असर करते हैं। आज हिन्दुस्तान-में असहयोगका शोर नहीं होता तो इसका मतलब यह नहीं कि वह मर गया है। यह तो अब उस स्थितिमें पहुँच गया है कि जब कोई शोरोगुल न होते हुए भी यह खतरनाक रूपसे सक्रिय है। . . . एक बार महात्मा गांधीके प्रचारकोंने जनताका मत फेरा नहीं कि फिर हिन्दुस्तान विदेशी मालका छोटा खरीदार भी नहीं रहेगा — बल्कि खरीदार रहेगा ही नहीं। . . . यह वार केवल कपड़ेपर ही नहीं किया गया है बल्कि इससे तो सभी ब्रिटिश मालका व्यापार ही चौपट कर देनेकी जानबूझकर कोशिश की जा रही है।"

इन बातोंसे तो महात्मा गांधीके प्रेरणादायक नेतृत्वमें खद्दरका प्रचार करनेवाले कार्यकर्त्ताओंकी छाती दो गज चौड़ी ही हो जायेगी। . . . मि० रॉबर्टसन-को डर है और . . . वह सुझाते हैं कि हिन्दुस्तानमें ऐसे विचारोंका प्रचार करनेके लिए कुछ किया जाये कि 'हिन्दुस्तानकी कपासका लंकाशायर वाला कपड़ा', 'हिन्दुस्तानका सबसे अच्छा ग्राहक लंकाशायर है', 'लंकाशायरके कपड़े खरीदनेसे हिन्दुस्तानी किसानोंको सहायता मिलती है।' . . . दोनों देशोंके सम्बन्ध स्वार्थपूर्ण प्रचारसे नहीं, बल्कि भारतीयोंकी राष्ट्रीय माँगें पूरी करनेसे ही ठीक-ठीक जुड़ेंगे और लंकाशायरके भारतीय व्यापारके विरुद्ध जो शक्तियाँ काम कर रही हैं, वे हट सकेंगी।

यह तो कहना ही फिजूल है कि खादी कोई धमकी नहीं है। स्वराज्यके समान यह भी राष्ट्रीय जीवनके लिए श्वासकी तरह आवश्यक है। चाहे जिस उदारतासे हमारी माँगें क्यों न पूरी की जायें, मगर जिस तरह हम स्वराज्यको नहीं छोड़ सकते,

उसी तरह खादीको भी नहीं छोड़ सकते। खादीको छोड़नेके मानी होंगे भारतीय जनताको बेच देना, भारतवर्षकी आत्माको बेच देना।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १९-१-१९२८

३६७. पत्र : वी० के० शंकर मेननको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
१९ जनवरी, १९२८

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके सन्दर्भमें मैं श्रीयुत केलप्पनकी रिपोर्ट[1] इसके साथ ही भेज रहा हूँ। इसे पढ़नेके बाद आप जो टिप्पणियाँ करना चाहें, उनके साथ इसे कृपया वापस कर दें।

हृदयसे आपका,

संलग्न १
श्रीयुत वी० के० शंकर मेनन
पुलाया कालोनी, चलाकुडी
(मलाबार)

अंग्रेजी (एस० एन० १४६२७) की माइक्रोफिल्मसे।

३६८. पत्र : विधानचन्द्र रायको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
१९ जनवरी, १९२८

प्रिय डा० राय,

मैं आपके पत्र तथा उस दवाके लिए आपको तथा डा० सरकारको धन्यवाद देता हूँ जिसे आपने कृपापूर्वक भेजा है। दवाओंके प्रति मेरी अरुचि आप जानते हैं। माँके दूधको छोड़कर मैं कोई ऐसी चीज नहीं लूँगा जिसमें मनुष्यके शरीरसे लिया गया कोई तत्त्व मिला हुआ हो। आपने जो गोलियाँ भेजी है उनमें गुर्दे और पाचक ग्रन्थियाँ मिली हुई हैं। क्या इन्हें मनुष्य-शरीरसे नहीं लिया गया है? यह मान लें कि इन्हें बन्दर-जैसे किसी प्राणीके शरीरसे लिया गया है तो भी मेरी आपत्ति बनी

१. पुलाया कालोनीके बारेमें; देखिए "पत्र : के० केलप्पन नायरको", २३-१२-१९२७।

रहेगी। आहार-विषयक प्रयोगोंके बारेमें मेरी कमजोरी आप जानते हैं। और जबसे आपने मेरे शरीरमें यूरिक ऐसिड (मूत्राम्ल)की बहुलताका पता चलाया है तबसे मैंने अपने भोजनमें भारी फेर-बदल करनेकी आवश्यकता महसूस की है। आश्रममें अपेक्षतया अधिक सुस्थिरताने मुझे यह अवसर प्रदान किया है और अब मै केवल ताजे फल और काष्ठफल ले रहा हूँ। मेरे आहारमें अब मुनक्केकी चाय है जिसके मतलब है उबले हुए ४० मुनक्के जिनका छिलका और बीज निकाल दिये गये हों। इसे मै दिनमें तीन बार लेता हूँ और हर बार उसमें बादामकी आधा आउंस गिरी मिला लेता हूँ और दो बार नारियलकी गिरीका दूध तथा हर बार एक या दो सन्तरे लेता हूँ। नारियलका दूध तैयार करनेके लिए एक ताजा पका हुआ नारियल कुचल कर उसमें थोड़ा पानी मिलाकर उसे मजबूत खादीके कपड़ेमें से छान लिया जाता है। इसे मै पिछले एक पखवाड़ेसे बिना कोई नुकसान उठाये करता रहा था। टट्टी कही ज्यादा नियमित है। मेरा वजन नही लिया गया है और न रक्तचाप लिया गया है, लेकिन मैं काफी अच्छा अनुभव करता हूँ। मैंने वजन और रक्तचाप जानबूझ कर नहीं दिया है, क्योकि यदि मैं अन्यथा ठीक-ठाक हूँ तो उससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

चूंकि आपने मेरे स्वास्थ्यमें इतनी दिलचस्पी ली है इसलिए मुझे लगा कि मेरा फर्ज है कि जो परिवर्तन मैंने किया है वह आपको सूचित कर दूं और आपने इतना खयाल करके जो दवा भेजी है उसे मै क्यों नही खाऊँगा, इसका कारण भी बता दूं। मै चाहूंगा कि भारतीय चिकित्सक लोग मौलिक अनुसन्धान करें और आहार-परिवर्तनकी सम्भावनाका पता चलायें। यह हो सकता है कि जन-साधारण रोगकी चिकित्साके संयम-साध्य तरीकोको नही अपनायेंगे, लेकिन क्या मुझ-जैसे बेचारे मतान्ध व्यक्तियोंके लिए चिकित्साशास्त्रियोंके दिल-दिमागमें कोई स्थान नही होना चाहिए? क्या भारतीय चिकित्सकोंको चिकित्सा-विज्ञानको कोई नई देन नही देनी है? या भारतको हमेशा पेटेंट कराई हुई कठवैदकी दवाओंपर ही निर्भर करना होगा जिन्हें अन्य विदेशी मालोंके साथ इस अभागे देशमें झोंक दिया जाता है? अनुसन्धान करनेके मामलेमें पश्चिमका एकाधिकार क्यों होना चाहिए?

इस पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करने या इसका उत्तर देनेकी जरूरत नहीं है, जब तक कि आप मुझे कोई निर्देश न देना चाहते हों। अतः यदि आपको बतौर सलाह और मार्गदर्शनके मुझसे कुछ और कहनेको न हो, तो आप इस पत्रको रद्दी कागजकी टोकरीमें फेंक दे सकते हैं।

हृदयसे आपका,

डा० विधान राय
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १३०४४) की फोटो-नकलसे।

३६९. पत्र : सुरेशचन्द्र बनर्जीको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
१९ जनवरी, १९२८

प्रिय सुरेश बाबू,

आपका पत्र[1] मिला। कोमिल्ला वाला मामला राजी-खुशी निपट गया इसकी मुझे खुशी है। यह सुधार आन्तरिक है या ऊपरसे थोपा गया सुधार है?

जहाँतक मेरे स्वास्थ्यका सम्बन्ध है, मेरा मन डा० राय द्वारा भेजी गई दवाको लेनेके लिए तैयार नही हो सका। यह तो मानव-शरीरमें से निकाली हुई चीज है और ऐसी किसी भी दवाको लेना मेरे लिए अत्यन्त अरुचिकर है। लेकिन मैंने अपने आहारमें जबर्दस्त परिवर्तन किये है। मै अब केवल फलों और थोड़े पिसे हुए बादाम तथा नारियलके दूधपर रह रहा हूँ। अभीतक मुझे कोई कष्ट नही हुआ है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १३०४५) की फोटो-नकलसे।

३७०. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२० जनवरी, १९२८

प्रिय सतीशबाबू,

विदेशी कपड़ेके बहिष्कार तथा मिलोके बारेमें मालवीयजीके विचार मैंने पढ़े है। मुझे मिलके कपड़े तथा इन्फ्लूएन्जाके बारेमें कही गई आपकी बात याद है। मैं 'यंग इंडिया'में बहिष्कारके बारेमें चर्चा करनेकी आशा रखता हूँ।[2]

मैंने अब नया सफरी चरखा जाँच लिया है। इसकी तीलियाँ ढीली हो गई है और इसकी धुरी कभी हल्की नही चली और जब आपने पहले देखा था, उस

१. सुरेश बाबूका ११-१-१९२८ का पत्र, जिसमें कहा गया था: "कोमिल्लामें सभी साम्प्रदायिक मामलोंपर सन्तोषजनक समझौता हो जानेके परिणामस्वरूप हम सब रिहा कर दिये गये हैं।... मुझे आशा है कि इसके फलस्वरूप....पूर्ण सद्भाव और शान्ति बनी रहेगी।..."

२. देखिए 'ब्रिटिश मालका बहिष्कार", २६-१-१९२८।

समयकी तरह ही सख्त बनी रही। आपको वहाँ ऐसा कोई व्यक्ति रखना चाहिए जो परिणामोंकी जाँच करनेके लिए बराबर चरखेपर काम करता रहे। मैं चाहता हूँ कि आप एक निर्दोष चरखा तैयार करें, और ऐसा आप तबतक नहीं कर सकते जबतक एक आदमी हमेशा उसपर काम नहीं करता और उसमें आवश्यक सुधारोंका सुझाव नहीं देता रहता।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५८४) की फोटो-नकलसे।

३७१. पत्र : मदनमोहन मालवीयको

सत्याग्रह आश्रम
पौष कृष्ण १३ [२० जनवरी, १९२८][1]

भाई साहब,

आपके तारका उत्तर मैंने दीया था।[2] अब मुझे आपकी सम्मति जामीया फंडके लीये चाहीये।

विदेसी कपडोके बहिष्कारकी बात आपने उठाइ है। परंतु उसी के साथ आपने मीलोंके कपडेकी बात भी कही है। मैं आपको कीस तरह समझा दुं कि जब तक मील वाले हमारे साथ कुछ सन्धि न करे और उनके दामों पर हम अंकुश न रख सके तब तक मीलोकी मदद निरर्थक ही नहिं परंतु हानिक [र][3] है। उ[लटा][4] जैसे पूर्व काल में बंगालमें हुआ इसी तरह अब भी होगा और लोगोंका विश्वास बहिष्कार-की शक्यता पर से उठ जायगा।

यदि मेरी भाषा या मेरे अक्षर समजनेमें कठिनाई है तो आप मुझे कह देंगे। मै अंग्रेजीमें विबस होकर लीखुंगा। मुझको तो मेरी टूटी-फूटी राष्ट्रभाषा ज्यादा प्रिय है।

आपका,
मोहनदास

जी० एन० ८६८२ की फोटो-नकलसे।

१. जामिया कोषके उल्लेखसे; देखिए पिछला शीर्षक भी।
२. देखिए "तार : मदनमोहन मालवीयको", ९-१-१९२८ या उसके पश्चात्।
३ व ४. अस्पष्ट है।

३७२. पत्र : हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२० जनवरी, १९२८

प्रिय भगिनी,

तुमारा खत आ गया है। निश्चित रहती है ऐसा जान कर मुझे बड़ा आनंद आता है। जिस ढंगसे आजकल श्राद्ध होता है उसपर मुझको श्रद्धा नहिं है। अनील के श्राद्धके दिन केवल फलाहार करें, उसी निमित्त यज्ञ समझ कर ज्यादा कातें, और उत्तरकांडमें से 'रामायण'का पाठ करें और 'भगवद्गीता'के बारह अध्यायका अच्छी तरह मनन करें।

बापु

जी० एन० १६५३ की फोटो-नकलसे।

३७३. भाषण : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद, पोरबन्दरमें[1]

२२ जनवरी, १९२८

राजा तथा प्रजाके बीच किसी तरहकी गलतफहमी पैदा न हो जाये तथा परिषदको भी अपनी शक्तिका पूरा भान बना रहे इस उद्देश्यसे एवं कुछ समयसे चली आ रही प्रथाको एक निश्चित रूप देनेके लिए यह परिषद निश्चय करती है कि परिषद किसी भी राज्यके सम्बन्धमें व्यक्तिगत तौरपर उसकी निन्दा या आलोचनात्मक कोई प्रस्ताव पास नहीं करेगी।[2]

गांधीजीने उक्त प्रस्तावका विवेचन करते हुए कहा :

आजका यह बन्धन युवकोंको पसन्द नहीं आयेगा, किन्तु स्वराज्य अर्थात् गलतियाँ करनेका जन्मसिद्ध अधिकार-जैसी सलाह देनेके पहले अपने उत्तरदायित्वके बारेमें मुझे विचार कर लेना चाहिए। मैंने अपने उत्तरदायित्वके बारेमें विचार कर लिया है और सोच-विचार कर ही सलाह दी है। मैंने न केवल इस प्रस्तावपर विचार किया है बल्कि इस प्रस्तावका मसविदा भी मैंने ही तैयार किया है। परसों विषय-समितिमें

१. यह चौथी परिषद थी।

२. यह प्रस्ताव २६-१-१९२८ के यंग इंडियामें प्रकाशित "साप्ताहिक पत्र" से लिया गया है। महादेव देसाईके अनुसार प्रस्ताव गांधीजीने तैयार किया था।

व्यक्तिगत आलोचना सम्बन्धी दो प्रस्ताव रखे गये थे, किन्तु मैंने उन प्रस्तावोंको पास न करनेकी सलाह दी। बादमें मुझे खयाल आया कि जिन कारणोंसे मैंने उपर्युक्त कदम उठाया था उन्हें देखते हुए एक निश्चित अवधितक इस कदमको वापस नहीं लिया जाना चाहिए। यदि हम इस प्रस्तावको पास नहीं करते तो हमारा अस्तित्व खतरेमें पड़ जायेगा। किन्तु किसीके मनमें यह शंका उठ सकती है कि मौतको टालनेकी खातिर ऐसा अंकुश क्यों लगाया जा रहा है। यदि किसी सदस्यकी ओरसे ऐसा प्रस्ताव रखा गया होता तो समितिने उसे रद्द कर दिया होता। किन्तु समिति और काठियावाड़ियोंने मुझपर विश्वास करके मेरी जिम्मेवारी बढ़ा दी है और उस प्रस्तावको पास करके आप भी मेरी जिम्मेवारी बढा देंगे। 'गलतफहमी' जैसे शब्द जो प्रस्तावमें आये हैं उन्हें युवकवर्गको सहन करना होगा।

भावनगर अधिवेशनके[1] समय जामनगर और गोंडल राज्योंका प्रश्न ही परिषद के सामने आया था। मैं जाम साहबसे मिला और उनसे चर्चा की। समस्या क्या थी और क्या है यह तो मैं जानता हूँ, किन्तु कामका बोझ अधिक होनेके कारण उस चर्चासे मैं पूरा लाभ नहीं उठा सका। फिलहाल तो मैं आपको यह नहीं बता सकता कि इस मामलेमें मेरी हार हुई या जीत। हालाँकि गोंडलके ठाकुरके हाथों मुझे हार खानी पड़ी है फिर भी मैंने उनकी व्यक्तिगत आलोचना नहीं होने दी।

आज परिषद अशक्त, लूली और अन्धी है और मेरा यह विश्वास होनेके कारण कि व्यक्तिगत आलोचना नहीं करनी चाहिए मैंने भावनगरमें तथा यहाँपर यह माँग की है ताकि परिषदमें व्यक्तिगत प्रस्ताव या आलोचना न की जा सके। परिषदमें भाग लेनेवाले और अधिकारीगण प्रस्तावोंके बारेमें सतर्क रहें। वे अपने करने योग्य कार्य करें। राजा-प्रजाके बीच घुल-मिलकर, राजाओंमें उनके दोष गिनानेके लिए उत्सुक होते हुए भी यदि वे अपनी वाणी, लेखनी और जीभको काबूमें रखें तो इस संयमका पालन करनेसे हमें लाभ ही होगा। जिसे परिषद्के दो अधिवेशनोंमें स्वीकार किया है, उस प्रतिबन्धका पालन हमें अपनी कमजोरीका ध्यान रखते हुए भविष्यमें भी करना चाहिए। जिस व्यक्तिको अपनी कमजोरीका ज्ञान है यदि वह उसे दुनियाके सामने रख दे तो उसका भार कम हो जाता है।

यदि कोई यह पूछे कि प्रतिबन्ध लगा देनेके बाद बहादुर लोग क्या करेंगे तो इसके उत्तरमें मैं कहूँगा कि ऐसे बहादुर लोगोंका स्थान परिषदमें नहीं बल्कि उसके बाहर है। वे अपनी अलग समिति बनायें। यह परिषद सत्याग्रहियोंके लिए नहीं है और न कांग्रेस ही उनके लिए है। यह परिषद उनपर तो कोई प्रतिबन्ध नहीं लगा रही है। सत्याग्रही आलोचना करें किन्तु निन्दा तो कदापि न करें। यदि कोई यह पूछे कि रियासतमें भ्रष्टाचार होता हो तो क्या करना चाहिए तो मैं इसके उत्तरमें यह कहूँगा कि रियासतके मामलोंकी आलोचना करनेकी हिम्मत हममें आनी चाहिए, किन्तु यदि प्रजा ही निर्बल होनेके कारण उसे सहन कर ले तो हमें उनके बीच काम करते हुए उनकी सहायता करनी चाहिए। अन्याय तो वहाँ है ही किन्तु उसे दूर

१. गांधीजीकी अध्यक्षतामें ८ जनवरी, १९२५ को हुआ था; देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ५८५-५९८।

करनेके लिए हमें कोई अन्य स्थान खोज लेना चाहिए। रियासतोंके आपसी सम्बन्ध मित्रतापूर्ण होनेके कारण वे एक-दूसरेकी आलोचना करने ही नहीं देंगे। अलबत्ता परिषद अपने वर्तमान रूपमें व्यक्तिगत रूपसे किसीकी आलोचना अथवा निन्दा नही कर सकती।

तदुपरान्त गांधीजीने कहा कि आलोचना करनेके अतिरिक्त खादीका काम तथा देशी रियासतोंकी बजाय सनातनियों द्वारा अन्त्यजोंके प्रति किये जानेवाले भयंकर अन्यायको दूर करनेका काम तुम्हारे सामने पड़ा हुआ है।

[गुजरातीसे]
प्रजाबन्धु, २९-१-१९२८

३७४. तार: मीराबहनको

वरतेज
२३ जनवरी, १९२८

मीराबाई
द्वारा जमनादास गांधी
मिडिल स्कूलके सामने
राजकोट

रोलाने[1] तार दिया है पिताका शुक्रवारकी रात शान्तिपूर्वक देहान्त हो गया। शान्ति और प्रेम।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५३००) से तथा जी० एन० ८१९० से भी।
सौजन्य: मीराबहन

३७५. भाषण: वरतेजमें[2]

२४ जनवरी, १९२८

हिन्दू अन्त्यजोंकी सेवा करते हैं तो इसमें वे उनपर कोई उपकार नही करते बल्कि अपने ऊपर ही उपकार करते हैं। अपने अन्त्यज कहे जानेवाले भाइयोंको अन्त्यज बनानेके लिए हिन्दू ही उत्तरदायी हैं और ऐसा करके उन्होंने जो पाप किया है उसका मार्जन और प्रायश्चित्त वे जितना करें, उतना कम है। इसलिए अन्त्यजोंकी सेवा करनेका थोड़ा भी अवसर जब मुझे मिलता है तो मैं उसका स्वागत करता हूँ और

१. मीराबहनकी बहन।
२. तत्कालीन भावनगर रियासतका एक गांव। गांधीजीने वहाँ अन्त्यजोंके लिए एक राम-मन्दिरका शिलान्यास किया था।

मुझे लगता है कि मैं [समाजके] इस पापका कुछ प्रायश्चित्त कर रहा हूँ। किसी भी व्यक्तिको ऐसा अभिमान नही रखना चाहिए कि वह उनकी सेवा करता है अतः उसके लिए इस पापका प्रायश्चित्त करनेका सवाल नही उठता। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि किसी एक भी हिन्दूके अत्याचारोंके लिए सारा समाज जिम्मेदार है। जगत इसी नियमपर चल रहा है कि जबतक कोई एक मनुष्य भी पाप करता है तबतक सारा जगत् उसके लिए उत्तरदायी है। हिन्दुओ और मुसलमानों, दोनोंको अपने लिए यही नियम लागू करना चाहिए। जबतक दुनियामें मनुष्य-जाति बाड़ोंमें बँटी हुई है तबतक ऐसे प्रत्येक बाड़ेका प्रत्येक सदस्य अपने प्रत्येक दूसरे सदस्यके पापके लिए जिम्मेदार है।

मन्दिरका अर्थ संगमरमर और ईंटोंसे बना हुआ घर नही है। इसी तरह उसमें मात्र मूर्तिकी स्थापना हो जानेसे भी वह इस नामका अधिकारी नहीं हो जाता। उसे मन्दिर तभी कहा जा सकता है जब मूर्तिकी प्राण-प्रतिष्ठा की गई हो। ब्राह्मणको बुलाकर हवन कराकर मन्दिर खोल देनेमें पाखंड भी हो सकता है। सच तो यह है कि जिसने मन्दिरका निर्माण करानेका सकल्प किया हो उसे अपने इस संकल्पके क्षणसे ही अपना जीवन प्रायश्चित्तमें ही लगा देना चाहिए और अपने पुण्योंका फल मन्दिरको ही अर्पित कर देना चाहिए। मन्दिरके संचालको और उसके पुजारियोका जीवन भी तपश्चर्यामय होना चाहिए, जिससे कि मन्दिरमें प्रवेश करते ही दर्शनार्थीके मनमें भक्तिकी लहरें उठने लगें। यदि यह मन्दिर इस श्रेणीका न हो, यदि इसके पीछे इतनी आत्मशुद्धि और विचारशुद्धि न हो तो फिर यह मन्दिर नही, एक मकान-मात्र है और पृथ्वीपर बोझ-रूप है। इस मकानको मन्दिर कहा जायेगा इसलिए जमीनका इतना हिस्सा बेकार हो जायेगा; इसका कोई उपयोग नही होगा। यह भी सम्भव है कि मन्दिरके नामकी ओटमें यह अनेक प्रकारके पापोको आश्रय देनेवाली एक हानिकारक संस्था बन जाये। ये सारे दोष यहाँ नही है, ऐसा मानकर ही मैंने यह शिलान्यासकी विधि की है। मनमें यह विचार आते ही कि मन्दिर बनाना है उसका शिलान्यास कर देना और फिर यह आशा रखकर बैठ जाना कि मन्दिर किसी दिन बन ही जायेगा, ठीक नही है। हमारी कहावत है कि उतावली करनेसे आम नहीं पकते। उसी तरह धर्मका पौधा भी उतावली करनेसे नही उगता। उसके लिए सच्चा विश्वास, परिश्रम और धैर्य चाहिए।

यहाँ उपस्थित अन्त्यज भाइयोसे मैं यही कहूँगा कि हिन्दू-धर्मका यह कथन कि स्वयं मरे बिना कोई स्वर्ग नहीं पहुँच सकता, बिलकुल सही है। अपनी उन्नति तुम्हें स्वयं ही करनी है। तुम यह मानकर मत बैठ जाना कि तुम्हारे भलेके लिए जो कुछ जरूरी है सो सब हिन्दू समाज करेगा। वे तो तुम्हारी सेवा करके अपना ही भला कर रहे है। तुम्हें अपनी ताकत दिखानी हो तो जागो और हिन्दुओंने जिन दोषोको लगाकर तुम्हारा त्याग किया है उन्हें दूर करके दिखाओ। ऐसा नियम बनाओ कि तुममें जो व्यसनी है, या मांसाहारी है, वे मन्दिरमें नहीं आ सकेंगे। ऊँचे माने जानेवाले हिन्दुओंके दोषोंकी ओर अंगुली मत उठाना। 'समरथको नहिं दोष गुसाईं',

इस नीतिके अनुसार दुनिया उन्हें माफ कर देगी किन्तु तुम्हें वह माफ नहीं करेगी। दूसरोंमें तुम्हारी अपेक्षा अनेक-गुने दोष हों तो भी उनकी ओर ध्यान मत देना और अपने दोष दूर करनेका प्रयत्न करना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२८

३७६. भाषण: मोरबीमें[1]

[२४ जनवरी, १९२८][2]

महाराजा साहब, राज्यकी प्रजा और मोढ़ जातिने मेरा और मेरे साथियोंका जो स्वागत किया और मानपत्र दिया, उसके लिए मैं सबका हृदयसे आभार मानता हूँ। मोढ़[3] भाइयोंसे मुझे इतना कहना चाहिए कि आपसे मानपत्र लेनेका मुझे कुछ भी हक नहीं। मैं सपनेमें भी खयाल नहीं कर सकता कि मैं मोढ़ जातिकी एक जातिके तौरपर कोई भी सेवा कर सका हूँ। कितने ही भाई ऐसा माननेवाले भी है कि मैंने मोढ़ जातिको नुकसान भले पहुँचाया हो, पर सेवा कभी नहीं की। घड़ी-भरके लिए यह इल्जाम मान भी लूँ, तो भी यह मानपत्र आपकी उदारता जाहिर करता है। पर मुझे इतनी-सी उदारतासे सन्तोष नहीं होता। क्योंकि यह उदारताकी निशानी है; तो भी यह मानपत्र लेनेवाले और देनेवालोंमें एक खानगी समझौता यह रहता है कि मानपत्र लेनेवाला जो काम कर रहा है उसके लिए देनेवालोंका आशीर्वाद और सम्मति है, वैसा कोई समझौता हमारे बीच नहीं है। मुझे इसलिए भी मानपत्र लेनेमें संकोच होता है।

आपकी इस छोटी-सी जातिके बारेमें मेरा इतना कहना कुछ मर्म रखता है; मैं यह माननेवाला रहा हूँ कि इन छोटे-छोटे वाड़ोंका नाश करना ही चाहिए। मुझे इस बारेमें शक नहीं कि हिन्दू-धर्मके भीतर जातियोंके लिए जगह नहीं है। और यह मैं मोढ़ या दूसरी जो भी जातियाँ यहाँ हों उन्हें ध्यानमें रखकर कहता हूँ। सच्चे शास्त्रोंमें जातिके बारेमें कोई भी आधार नहीं है। आधार सिर्फ चार वर्णोंके लिए है। भगवानने केवल चार वर्णोंकी ही रचना की है। वर्ण-धर्ममें जातिकी गन्धतक नहीं है। आप सबसे मोढ़ जातिके निमित्त मैं यह कहना चाहता हूँ कि जातिके वाड़ोंको भूल जाइये। आज जो जातियाँ हैं उनका आहुतियोंके रूपमें उपयोग कीजिये और नई न बनने दीजिये। इन जातियोंका यज्ञ कीजिये और इनमें कोई संयमकी बात हो तो उसका पालन कीजिये। आप इन छोटे वाड़ोंके खड्डोंमें पड़े रहेंगे तो बदबू उठेगी। डाक्टर खड्डेभर देनेकी सलाह देते हैं। जिस तरह उनमें से बदबू उठती है, मच्छर पैदा होते है, और वे घातक साबित होते है, उसी तरह यह समझ लीजिये

1. सौराष्ट्रकी एक रियासत।
2. रामदास गांधीके विवाहके उल्लेखसे जो २७ जनवरीको हुआ था। देखिए पृष्ठ ५०७।
3. गांधीजी बनियोंकी इस उप-जातिके थे।

कि ये जातिके वाड़े भी मनुष्यके लिए घातक हैं। यह समझ लीजिये कि ईश्वर कभी ऐसी घातक रचना नहीं कर सकता। मैं अपने अनुभवकी बात कहता हूँ। अगर आप उसे मानेंगे तो सुखी होंगे। समय अपना काम करता रहता है। समयके काममें बाधा डालनी हो तो भले ही डालिये, पर यह मान लीजिये कि बाधा डालना नाहक है। अगर इन बाडोके बचावमें हम नाहक वक्त गँवाया करेंगे, तो वह सूरजके सामने धूल उड़ाकर अपनी ही आँखोंमें डालनेके खेलकी तरह होगा। आपने मुझे मानपत्र न दिया होता तो ये बातें कहनेकी इच्छा न होती, उसका मौका न मिलता। इस चीजको छोटी न मानिये। बरसोंसे हम वहम और अज्ञानमें पड़े हैं। इस वहम और अज्ञानको ज्ञान मत कहिये। आज दुनियामें जुदा-जुदा धर्मोंका मुकाबला हो रहा है। यदि हम खुले मनसे देखें तो जान पड़ेगा कि हमारी जातियाँ तरक्कीको, धर्मको, स्वराज्यको और रामराज्यको — जिसकी मैं रट लगाये हुए हूँ उस रामराज्यको — रोकनेवाली हैं। मैं आपसे पूछता हूँ कि मोढ जातिमें ऐसा क्या धरा है कि हम उसीके गीत गाया करें? जहाँ-तहाँ हमारे आचार और विचारमें विरोध देखा जाता है। हमारे गीतोंका अर्थ अलग है और हमारा आचरण अलग है। यह तो साँप चला गया और लकीर रह गई वाली बात हुई। आचार और विचारमें मेल बैठानेका भगीरथ प्रयत्न कीजिये। आपने मानपत्र दिया है, उसके जवाबमें आपसे इस कोशिश की मैं माँग करता हूँ। मैंने जिस खानगी समझौतेकी बात कही है, उसे ही आप मान लेंगे तो मुझे लगेगा कि मेरा आपसे मानपत्र लेना और इस जातिमें जन्म लेना सार्थक हुआ।

मेरा यज्ञ तो आचार और विचारकी एकताके लिए चल रहा है; और मेरे इस यज्ञके कारण मोढ जातिने मेरा बहिष्कार किया है; हालाँकि बादमें मोढ़ोंने देख लिया कि मैं बहिष्कारके लायक नहीं, क्योंकि मैंने जातियोंसे फायदा उठानेका कभी विचार तक नहीं किया। मैं तो इन बाडोंको तोडनेकी अपनी कोशिशें तेज करना चाहता हूँ। आपको पता नहीं होगा कि मैंने अपने एक लड़केका ब्याह जातिसे बाहर किया है। और इससे मुझे कोई नुकसान नहीं हुआ। मेरे लड़केको एक भक्त वैष्णव कुटुम्बकी लड़की मिली और उसके लिए मेरा लड़का मुझे धन्यवाद देता है। इस तरह यह कहा जा सकता है कि मैंने तो दूसरी जातिमें से एक जवाहर चुराया है। छोटी-छोटी जातिवालोंसे मैं कहता हूँ कि तुम्हारी लड़कियाँ कुँवारी रहती हों तो मुझे सौंप देना। मैं दूसरी जातिके अच्छे सुशील लड़कोंके साथ तुलसीके पत्ते या सूतके धागे समर्पित करके उनका ब्याह कर दूँगा। मैंने अछूतकी लडकीको गोद लिया है, फिर भी दूसरी जातिके लोग अपनी लडकी देनेमें संकोच नहीं करते, तो आपको किसलिए डर हो? मैं तो तीन दिन बाद एक मोढ़ कन्याके साथ अपने लड़केकी[1] शादी करनेवाला हूँ। इस तरह मेरा काम चलता रहता है, कोई दिक्कत नहीं आती।

इस तरह मोढ जातिके बहाने मैं सब बाडेवालोंसे कहना चाहता हूँ कि बाडे तोड़िये। अठारह वर्ण तो आम लोगोंकी कहावतमें हैं, गुण और कर्मके अनुसार तो चार ही वर्ण हैं। खाने-पीने-सम्बन्धी आचार तो अस्पृश्यताके विषय हैं। वर्ण तो एक ऐसा

१. रामदास गांधी।

सुन्दर पेड़ है जिसकी छायामें बैठकर मनुष्य-जाति अपने लिए छाया और पोषण पा सकती है। वर्ण-व्यवस्था संयमका धर्म है। इसमें रुपये-पैसेका खयाल नहीं, धर्मपर चलनेका ध्येय है। ऋषि-मुनियोंने इसकी कल्पना और रचना धर्मपर चलनेके राज-मार्गके रूपमें की थी। इसके बजाय अब यह हमारे स्वार्थों, हमारे दोषों और हमारे भोगोंको बल पहुँचानेका जरिया बन गई है। अब शुद्ध वर्ण-व्यवस्था कायम करनेकी कोशिश कीजिये।

मेरी अपनी दृष्टिमें स्वराज्य और रामराज्य एक हैं; यों लोगोंसे बोलते हुए रामराज्य शब्दका उपयोग अधिक नहीं करता। इसका कारण यह है कि बुद्धिके इस युगमें स्त्रियोंसे चरखेकी बात करनेवालेका रामराज्यकी बात करना बुद्धिवादी युवकोंको एक निरर्थक बात लगेगी। वे तो रामराज्य नहीं, स्वराज्य चाहते हैं; और स्वराज्यकी भी विचित्र व्याख्या करते हैं; मेरी दृष्टिसे उसका कोई मूल्य नहीं है। किन्तु आज मैं महाराजा साहब और उनकी प्रजाके सामने खड़ा हूँ। महाराजा साहबने एक घंटेतक मेरे सामने अपने हृदयके उद्‌गार रखे। ऐसी अवस्थामें मेरी इच्छा भी उनके सामने अपने मनकी बात ही रखनेकी होती है। स्वराज्यकी कल्पना साधारण बात नहीं है। स्वराज्य तो रामराज्य है। यह रामराज्य किस तरह आयेगा, कब आयेगा। हम राज्यको रामराज्य तभी कह सकते हैं जब राजा और प्रजा दोनों सरल हों, जब राजा और प्रजा दोनोंका हृदय पवित्र हो, जब दोनों त्यागवृत्ति रखते हों, भोगोंका सुख उठाते हुए भी संकोच और संयम रखते हों, और जब दोनोंके बीच पिता और पुत्र जैसे सम्बन्ध हों। हम यह बात भूल गये, इसलिए "डिमॉक्रेसी" (प्रजातन्त्र) की बातें करते हैं। "आज "डिमॉक्रेसी" का जमाना है," मुझे नहीं मालूम, इसका क्या अर्थ है। किन्तु जहाँ प्रजाकी आवाज सुनी जाती है, जहाँ प्रजाके प्रेमको प्राधान्य मिलता है, कहा जा सकता है कि वहाँ "डिमॉक्रेसी" है। मेरी कल्पनाके रामराज्यमें सिरोंकी गिनती अथवा हाथोंकी गिनतीसे प्रजाके मतको नहीं मापा जा सकता। जहाँ इस तरह मत लिये जाते हों, उसे मैं प्रजाका मत नहीं मानता। 'पंच बोले, सो परमेश्वर'। पूछे जानेपर हाथ ऊँचे करनेवाले पंच नहीं होते। ऋषि-मुनियोंने तपस्या करके यह देखा कि जो व्यक्ति तपश्चर्या करते हों और प्रजाके कल्याणकी भावना रखते हों, उनका मत प्रजाका मत कहला सकता है। इसीका नाम सच्ची "डिमॉक्रेसी" है। यदि कोई मुझ-जैसा आदमी व्याख्यान देकर आपका मत चुराकर ले जाये, तो उस मतसे प्रकट होनेवाली वस्तु "डिमॉक्रेसी" नहीं है। मेरी "डिमॉक्रेसी" तो 'रामायण' में लिखी पड़ी है। और मैंने जिस सीधे-सादे ढंगसे 'रामायण' को पढ़ा है, उसमें से जो भाव निकलता है, रामचन्द्र उसीके अनुसार राज्य करते थे। आजका राजा तो राज्य करनेको अपना जन्म-सिद्ध अधिकार मानता है और प्रजाका किसी प्रकारका अधिकार स्वीकार नहीं करता। किन्तु राजा लोग जिस रामके वंशज कहलाते हैं, क्या आप जानते हैं कि वह राम किस तरह बरतता था? आप कृष्णके भी वंशज कहलाते हैं। कृष्णने कैसा आचरण किया था? कृष्ण तो दासानुदास थे। राजसूय यज्ञके समय तो उन्होंने सभी अभ्यागतोंके पाँव धोये। अपनी प्रजाके पाँव धोये। यह बात सच है अथवा काल्पनिक, ऐसी कोई प्रथा उस समय थी या नहीं,

यह एक अलग बात है। इसका इतना ही मर्म है कि उन्होंने प्रजाको देखा तो उसे नमस्कार किया, प्रजाके मतको शिरोधार्य किया। यही बात 'रामायण'में दूसरी तरहसे आती है। रामचन्द्रजी गुप्तचरको नगरमें होनेवाली चर्चा सुनने भेजते हैं और उन्हें मालूम होता है कि एक धोबीके घरमें सीताजीके विषयमें अपवाद हो रहा था। वे तो जानते थे कि यह अपवाद निराधार है। उन्हें तो सीताजी प्राणसे भी प्यारी थी। ऐसा कुछ हो ही नही सकता था जो उनके और सीताजीके बीचमें भेद उत्पन्न कर दे। फिर भी ऐसा अपवाद चलने देना उचित नही है, यह समझकर उन्होने सीताजीका त्याग किया। वास्तवमें रामचन्द्र और सीता एक-दूसरेमें ओतप्रोत थे। सीता रामचन्द्रजीमें समायी हुई थी और रामचन्द्रजी सीताजीमें। जिस सीताके लिए रामचन्द्र सेना लेकर चढ़े, रात-दिन वे जिसका ध्यान करते रहे, उन्होने उसी सीताके शरीर-वियोगको आवश्यक माना। प्रजाके मतको मान देनेवाले ऐसे राजा रामका राज्य रामराज्य कहलाया। ऐसे राज्यमें श्वान जैसे किसी जीवको भी दुःख नही पहुँचाया जाता था, क्योकि रामचन्द्रजी तो जीवमात्रका अश अपनेमें देखते थे। ऐसे राज्यमें व्यभिचार, पाखण्ड और असत्य नही रहता। ऐसे सत्ययुगमें प्रजातन्त्र चलता रहता है। सत्य टूट गया तो राजा राजधर्मका पालन नही करता। तब बाहरसे आक्रमण होने लगते है। जब मनुष्यका रक्त सदोष हो जाता है, तब उसपर बाहरके जन्तुओका आक्रमण होने लगता है। इसी तरह समाज-रूपी शरीरके अस्वच्छ हो जानेपर उस समाजके अंग-रूप मनुष्योपर बाहरसे आक्रमण शुरू हो जाता है।

किन्तु जब राजा और प्रजाके बीच प्रेमका सम्बन्ध हो तो प्रजा एक शरीरकी तरह इस आक्रमणका मुकाबला करनेमें समर्थ रहती है। राज्य-शासन तो प्रेमका शासन है। राजदण्डका अर्थ पशु-बल न होकर प्रेमका बन्धन है। राजा शब्द ही 'राज्' अर्थात् शोभा पाना, इस धातुसे बना है। इसलिए राजाका अर्थ हुआ शोभनीय व्यक्ति। वह जितना जानता है प्रजा उतना नही जानती। उसने प्रजाको प्रेमपाशसे बाँध लिया है, इसलिए वह दासानुदास है। श्रीकृष्ण भी दासानुदास थे। और उन्होंने सेवककी तरह पाद-प्रहार भी सहन किये। मैं राजा-महाराजाओसे कहता हूँ कि यदि वे राम और कृष्णके वंशज कहलानेकी इच्छा करते हो, तो उन्हे प्रजाका पादप्रहार सहनेके लिए तैयार रहना चाहिए। आप प्रजाकी गालियाँ खाइए; प्रजा गैर-जिम्मेदार हो सकती है, राजा गैर-जिम्मेदार नहीं हो सकता। यदि राजा बुद्धि खो दे तो पृथ्वी रसातलको चली जाये।

इसके बाद गांधीजीने यन्त्र-युगके अभिशापकी चर्चा की और जौहरियों तथा जैन-श्रावकोंको — जिनकी मोरवीमें अच्छी-खासी बस्ती है — लक्ष्य करके कहा:

यह कृषि-प्रधान देश है और इसमें ७ लाख गाँव है। यन्त्र-युगसे इसकी रक्षा नही हो सकती। इसमें तो जीते-जागते यन्त्र है। इन जीते-जागते यन्त्रोकी रक्षा करके ही देशकी रक्षा की जा सकती है; और ये हैं गोमाता और उसका वंश, उसके किसान-मजदूर और उनका वंश। जहाँ ऐसे चेतनामय यन्त्र पड़े हों और जो हमेशा बढ़ते रह सकते हैं, यदि वहाँकी प्रजा जड़यन्त्र-युगकी प्रजा ही हो जाये, तो संसार-भरके

अभिशाप उसके सिरपर आ पड़ेंगे। चक्रवर्ती राजाओंका यह देश, जिसमें ३३ करोड़ जीवित यन्त्र पड़े हुए हैं, यन्त्र-युगका पुजारी हो जाये, तो समझना चाहिए कि हम रामके वंशज नहीं हैं, रावणके वंशज हैं। ये वचन है तो कड़वे, किन्तु ये हृदयके प्रेमसे निकले हैं। ठाकुरसाहबने अपने हृदयके उद्गार मेरे सामने रखे। जहाँ-कहीं मुझे सहृदयता मिलती है, वहाँ मैं बेभान हो जाता हूँ और हृदय चीरकर समर्पित कर देता हूँ। यदि आज नहीं, तो मेरे मर जानेके बाद आप अनुभव करेंगे कि यह आदमी जो कहता था, सो ठीक कहता था। आप जिस दिन यन्त्र-युगको प्रधानता देंगे, उस दिन आप अपने गलेपर छुरी फिरानेे-जैसा काम करेंगे। यदि भविष्यमें कोई चंगेजखाँ हमपर हमला कर दे और तैंतीस करोड़ लोगोंको काटकर तीन लाख कर दे, तो सम्भव है ब्रिटेन और अमेरिकाकी तरह हमें यन्त्रोंकी जरूरत पड़ने लगे। अमेरिका और इंग्लैडने तो लूटनेका धन्धा खड़ा कर रखा है। आप किसे लूटनेवाले हैं? कोई सबब नहीं है कि जो देश इतना मनोहर है, जहाँकी आबहवा इतनी अच्छी है, जहाँ विविध वनस्पतियाँ उत्पन्न होती है और जहाँ अन्य साधनोंकी अटूट निधी पड़ी हुई है, वह कंगाल होकर रहे। हम स्वयं अपने दुश्मन बने बैठे हैं। यही कारण है कि मैं खादी-खादी चिल्लाता फिरता हूँ।

इसके बाद गांधीजीने पोरबन्दर-परिषदके प्रस्तावों, अन्त्यजोद्धार तथा गो-पालनके सम्बन्धमें अपने उद्गार प्रकट किये। खादीके सम्बन्धमें मोरवीके जौहरियोंको लक्ष्य करते हुए उन्होंने कहा :

आप जौहरी लोग बाहरसे जो रुपया कमा लाते हो खादीकी तुलनामें उसकी कोई कीमत नहीं है। तुम्हारे हीरे रुईकी तरह नहीं चमचमाते। रुईपर तो कितने ही काव्य रचे गये हैं; हीरोंपर किसीने कोई काव्य नहीं रचा।

तदनन्तर गांधीजीने विभिन्न राज्यों द्वारा खादी कार्यमें दी गई मदद की चर्चा की तथा राजा और प्रजा दोनोंसे चरखेको यज्ञके रूपमें अपनानेकी विनती की। अपने भाषणका उपसंहार करते हुए उन्होंने पुनः राजा और प्रजाके पारस्परिक सम्बन्धोंकी ओर श्रोताओंका ध्यान खींचते हुए कहा :

आप लोगोंसे मेरी प्रार्थना है कि आप लोग परस्पर मीठे सम्बन्ध रखें। यथा राजा तथा प्रजा। इसी प्रकार यथा प्रजा तथा राजा। प्रजा बेईमान हो, कायर हो, प्रपंची हो, पाखण्डी हो, तो राजा क्या कर सकता है? सम्भव है कि राजा अच्छा हो तो वह बच जाये, किन्तु वह प्रजाको तो नहीं बचा सकेगा। यदि प्रजा अपनी स्त्रियों-को स्वयं सुरक्षित न रख सके, तो राजा उन्हें सुरक्षित कैसे रख सकता है? मोरवी-जैसे कस्बेमें जहाँ बारह-पन्द्रह हजारकी आबादी है, अनेक तड़ें या दल हों, झगड़े-टंटे हों, तो इससे किस व्यक्तिका भला हो सकता है? इससे समाजका भी क्या भला हो सकता है? पारस्परिक टंटोंको भूलना चाहिए। सत्य और अहिंसाके सिवाय दूसरा धर्म नहीं है। तुम जैसे अहिंसाके उपासकोंको टंटे क्यों करने चाहिए? राग-द्वेष का अर्थ है हिंसा। चींटी और खटमलको न मारनेमें ही अहिंसा-धर्मकी समाप्ति नहीं

हो जाती। यह तो अहिंसाका सर्वाधिक कनिष्ठ रूप हुआ। जिसके हृदयसे प्रेमकी निरन्तर धार बहती है वह जगत्‌को पवित्र बनाता है। ये मेरे शब्द नहीं हैं, महावीर यही कह गये हैं। यही 'गीता' के वचन हैं। मैंने तो इनका बहुत-थोड़ा स्वाद लिया है। इसी सत्य और अहिंसाका पालन करनेमें मेरा काम सध जाता है। यदि आप इसका पालन करेंगे तो आपका त्राण हुए बिना नहीं रहेगा। यदि आप पाखण्ड और प्रपंचमें फँसे रहेंगे तो न आपकी खादी बचेगी न आपका पशु-धन। यदि आप सत्यकी धाराको समझ जायें, अहिंसाकी गंगाको समझ जायें, तो मैंने जो बातें कही हैं, उन्हें करना आपको आसान मालूम होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२८

३७७. ब्रिटिश मालका बहिष्कार

ब्रिटिश सरकार बड़े ही सुनिश्चित ढंगसे जान-बूझकर जो अपमानजनक और उपेक्षापूर्ण कार्रवाइयाँ करती है, उनके विरुद्ध यदि राष्ट्र अपना क्रोध व्यक्त करनेकी इच्छा करे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। इस सम्बन्धमें पता लगनेवाली हर नई बात आगमें घी डालनेका काम करती है। इसकी सबसे हालकी मिसाल वह नफरत है जो कहा जाता है कि लार्ड सिन्हाके मामलेमें स्वर्गीय सम्राट् सप्तम एडवर्ड और उनके पुत्र वर्तमान सम्राट्ने भारतीयोंके प्रति जाहिर की थी। राष्ट्रके प्रतिनिधियोंने पिछले कई वर्षोंसे ब्रिटिश मालका आंशिक या पूर्ण बहिष्कार करके अपना क्रोध प्रकट करनेकी कोशिश की थी। अगर राष्ट्र ब्रिटिश मालका बहिष्कार करना चाहे तो यह उसका अधिकार है। अगर उसमें एक आवश्यक सीमातक सफलता मिल सकी तो निःसन्देह उसका बहुत बड़ा असर पड़ेगा।

मगर मेरा यह दुर्भाग्य या सौभाग्य रहा है कि मुझे हमेशा ही ब्रिटिश मालके बहिष्कारकी माँगके विरोधमें लगातार खड़े होना पड़ता है। हालाँकि मैं इस बुनियादी सिद्धान्तपर ही कायम हूँ कि प्रस्तावित बहिष्कार अहिंसाके विरुद्ध है, मगर अभी मैं केवल इसकी सम्भावनापर ही विचार करना चाहता हूँ। इतने दिनोंसे इसके लिए इतना जबर्दस्त आन्दोलन चलते रहनेपर भी इस दिशामें कोई प्रगति न हो पानेसे यही नतीजा निकलता है कि इसमें बड़ी कठिनाइयाँ हैं। अगर साबुनका ही मामूली-सा उदाहरण लें, तो हमें पता लगेगा कि हमने इंग्लैंडमें बने साबुनतक का बहिष्कार करनेमें कोई प्रगति नहीं की है। कांग्रेस द्वारा नियुक्त समितिने कुछ खास चीजें बहिष्कारके लिए चुनी थीं। पर जहाँतक मैं जानता हूँ, ऐसी कोई कोशिश नहीं की गई है कि राष्ट्र उनमें एक भी वस्तुको इस्तेमाल करना छोड़ दे। दण्डस्वरूप किये जानेवाले बहिष्कारकी उपयोगिता इसी बातमें है कि उसका कुछ असर पड़े, वह खले। विलायतसे आनेवाली वस्तुओंकी सूची देखनेवाला कोई भी व्यक्ति तुरन्त ही समझ लेगा कि उनमें से अधिकांश वस्तुएँ ऐसी हैं जिनका बहिष्कार करनेसे ब्रिटिश

सरकारको कोई ज्यादा परेशानी नही होगी, इसलिए ब्रिटिश सरकारपर प्रभाव डालनेकी नीयतसे ऐसा वहिष्कार करना बिलकुल बेकार है। यह भी नही भूलना चाहिए कि इन इतने वर्षोंमें भी हमारे यहाँ विशेषज्ञोंका कोई ऐसा दल खड़ा नही हो सका है जो एक इसी कामपर ध्यान दे। आजकल तो कही-कही यह अलग चलन-सा बन गया है कि कांग्रेस द्वारा स्वीकृत हर प्रस्तावकी असफलताका दोष मेरे ही मत्थे मढ़ दिया जाता है। मुझसे कहा जाता है कि फलाँ प्रस्ताव तो इसीलिए असफल हुआ कि आपने उसका विरोध कर दिया था या फलाँके लिए तो आपने कुछ काम ही नही किया। किसी राष्ट्रके लिए इससे बड़ी जलालत और क्या हो सकती है कि वह इस प्रकार असहाय बना रहे। बेशक, दक्षिण आफ्रिकासे मेरे लौटनेके पहले ही यहाँ भारतमें ब्रिटिश मालके बहिष्कारका खयाल लोगोंको सूझ गया था और उसकी जोरोंसे वकालतकी गई थी। ब्रिटिश मालके बहिष्कारके प्रस्तावकी असफलताका सच्चा और अधिक स्वाभाविक कारण तो यह प्रत्यक्ष तथ्य है कि अबतक इस विषयके विशेषज्ञोंकी कोई भी समिति इसे पूरा करनेकी कोई योजना निश्चित नही कर सकी। कहा जाता है कि अगर चीनको इसमें सफलता मिली थी तो हिन्दुस्तानको क्यों नही मिल सकती? हाँ, बहिष्कार हम भी जरूर कर सकते हैं, मगर कब? जब क्रान्तिकारियोकी फौज खड़ी करके और इसी प्रयोजनके लिए ब्रिटिश माल चढ़ाने-उतारनेसे सम्बन्धित सभी गोदी मजदूरों आदिकी हड़ताल कराके अपनी सशस्त्र शक्तिके बलपर बहिष्कारको सुनिश्चित बनानेका अवसर हमें मिले और हमारे अन्दर ऐसी इच्छा और अपेक्षित साहस मौजूद हो। मुझे लगता है कि इसकी हमें अगर इच्छा हो तो भी ऐसी खुली और सशस्त्र क्रान्ति करनेके लिए न तो हमारे पास साधन हैं और न उसे चलानेकी क्षमता ही। फिर न तो बहिष्कार-का समर्थन करनेवालोंने और न सविनय अवज्ञा-जाँच-समिति द्वारा नियुक्त विशेष समितिने ही कभी सशस्त्र शक्तिके प्रयोगका विचार किया है। इसलिए मैं कहता हूँ कि यह राष्ट्रके गौरव, प्रतिष्ठा और कल्याणके कही अधिक हितमें होगा कि हम ब्रिटिश मालके बहिष्कारके इस निष्फल और लगभग असम्भव नारेको छोड़ दें। हाँ, यहाँ देशमें जो चीजें बन सकती हैं, उन सबके बारेमें सच्ची स्वदेशी भावनाके प्रचारकी स्थायी आवश्यकताको मैं बिलकुल मानता हूँ। दण्डस्वरूप अपनाये जानेवाले इस बहिष्कारके विरुद्ध दी गई दलीलें इसपर लागू नही होती।

मगर निराश होनेकी कोई वजह नही है। हमारे ऊपर ये जो निरन्तर एकके बाद दूसरे अन्याय थोपे जा रहे हैं, उनके प्रति अपना क्रोध व्यक्त करनेका ऐसा बना-बनाया साधन हमारे पास मौजूद है जो सबसे अधिक प्रभावशाली है। मेरा दावा है कि अगर हम चाहें तो ब्रिटिश ही नही बल्कि सभी प्रकारके विदेशी कपड़ोंका पूर्ण बहिष्कार करनेकी शक्ति हममें है। अगर हम यह बहिष्कार करें तो हमें न सिर्फ अपना क्रोध ही प्रदर्शित करनेमें सफलता मिलेगी किन्तु हम जनताकी एक ऐसी सेवा करेंगे जैसी पहले कभी नहीं की, और एक राष्ट्रीय कार्यमें हम उनका सहयोग भी प्राप्त करेंगे। इस कामको करनेके लिए हमारे पास कार्यकर्त्ताओंकी एक सेना भी खड़ी है।

हमारे पास ऐसे विशेषज्ञ हैं जिन्होंने इसका स्वयं अनुभव प्राप्त किया है। इसके औचित्यके बारेमें दो मत है ही नही। इस उद्देश्यकी ओर बढ़नेसे हमें रोकनेवाली केवल एक ही वस्तु है और वह है हमारा अपना ही अविश्वास। यह बात है तो आश्चर्यजनक मगर दुखद भी है कि हमें सभी विदेशी कपड़ेके बहिष्कारकी सफलतासे कहीं अधिक विश्वास कुछ खास-खास ब्रिटिश मालके बहिष्कारकी सफलतामें है।

मगर ठीक-ठिकानेसे सोच-समझकर एक योजना बनाये बिना यह बहिष्कार भी सफल नहीं हो सकता। अगर हम मात्र बहिष्कार ही करना चाहें, और जनताका आर्थिक कल्याण प्राप्त करनेके महत्त्वपूर्ण और स्थायी परिणामकी परवाह न करें तो हम देशी मिलोंका, हमारी शर्तोंपर, सहयोग प्राप्त करके इसको तुरन्त ही सफल बना सकते है। जबतक कताई और बुनाई करनेवाली मिले ईमानदारीसे और पूरे मनसे सहयोग नही करतीं, तबतक मिलके कपड़ोंके बलपर विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करना आत्म-हत्या करना होगा और सिर्फ अपना ही उल्लू सीधा करनेवाले मुनाफाखोर मिलवालोका ही काम साधना होगा। अगर इस महान राष्ट्रीय कार्यमें देशी मिलोके कपड़ोंका कोई बड़ा योगदान रहना है, तो मिलवालोंको कपड़ेकी किस्म और उसका दाम निश्चित करनेके बारेमें, कांग्रेसके साथ समझौता करना ही पड़ेगा। अपनी मिलके हिस्सेदारोकी रजामंदी और सहयोगके साथ मिल-एजेन्टोंको केवल अपने और अपने हिस्सेदारोंके ही हितोंके रक्षक बने रहनेका विचार छोड़ देना चाहिए और दोनोको ही — एजेन्टों और हिस्सेदारोंको — सारे राष्ट्रके हित-रक्षक बनना चाहिए। तब खादीके सहारे इस देशमें विदेशी कपड़ेका आयात बिलकुल ही बन्द हो सकता है। हालाँकि समयके लिहाजसे यह अधिक मुश्किल जरूर पड़ेगा, मगर केवल खादीके जरिये मिलोंके सहयोगके बिना भी विदेशी कपड़ेका सम्पूर्ण बहिष्कार कराया जा सकता है। तब भी मिलके कपड़ेका स्थान महत्त्वपूर्ण बना रहेगा, मगर वह तो मिल-मालिकोंकी इच्छाके बावजूद होगा। खादी मिल-मालिकोंके लोभपर कारगर अंकुश लगा देगी, उसके कारण कपड़ेका कभी अकाल नही पड़ सकेगा, करोड़ो भूखो मरनेवालोंको इसके जरिये जीवन और आशा मिलेगी, सादा कपड़ा बुननेवालोको यह उनका पुराना पेशा दे देगी, और अन्ततः, थोड़े ही दिनोंमें यह विदेशी कपड़ेकी जगह पूरी तौरपर ले लेगी तथा मिलवालोंके मुनाफोंको नियन्त्रित कर देगी। यह कब तक हो सकेगा? यह इस बातसे निर्धारित होगा कि महीन कपड़ेके शौकका किंचित् त्याग और कुछ थोड़े पैसोंका त्याग — जो हर एक आदमीके बसकी बात है — करनेकी राष्ट्रकी इच्छा कितनी तीव्र है, और उसमें इस त्यागकी कितनी क्षमता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया २६-१-१९२८

३७८. 'खादी मार्ग-दर्शिका'

अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा जारी की गई 'खादी मार्ग-दर्शिका' ('खादी गाइड') एक मूल्यवान प्रकाशन है जिसमें उपयोगी प्रस्तावना, चरखा-संघका संविधान, और जिन प्रान्तोंमें खादीका उत्पादन किया जा रहा है, वहाँ किये गये कार्यका सविस्तार विवरण दिया गया है। खादीके हर प्रेमीको, और हर ईमानदार शंकालुको इसे पढ़ना चाहिए। इसका मूल्य आठ आना रखा गया है। इसे ९½ आनेके टिकटोंके बदलेमें अखिल भारतीय चरखा संघ, मिर्जापुर, अहमदाबाद तथा सभी प्रमुख खादी-भण्डारोंसे प्राप्त किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया २६-१-१९२८

३७९. तार: जवाहरलाल नेहरूको

साबरमती
२६ जनवरी, १९२८

जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन
इलाहाबाद

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा पत्र[1] केवल तुम्हें राहत और स्वतंत्रता देनेके लिए लिखा गया था। तुम्हारी कोई चीज प्रकाशित करनेकी इच्छा नही है। यदि सम्भव हो तो पिताजीको भी अवश्य लाओ।
सप्रेम।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९२८।
सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", १७-१-१९२८।

३८०. पत्र : राजेन्द्रप्रसाद मिश्रको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२६ जनवरी, १९२८

भाई राजेन्द्रप्रसादजी मिश्र,

आपका सुपुत्र मेरे पास आ गया है और कहता है कि यद्यपि वह और उसकी धर्मपत्नी पड़दा छोड़ना चाहते है, आप उसका विरोध करते है। अपना धर्म कया है मुझको पूछता है। मैंने कहा है आपकी आज्ञाका आज तो पालन करे और पत्निके लीये एक शिक्षिका रखे। शिक्षिका यहांसे भेजी जा सकती है। मेरी तो आपको सलाह है की आप दंपतिको अपनि इच्छानुसार चलने दें। इस युगमें पड़दा निभ नहिं सकता है न आवश्यक है। प्राचीन समयमें पड़दाकी बूरी प्रथा न थी।

आपका,
मोहनदास गांधी

जी० एन० ८०२५ की फोटो-नकलसे।

३८१. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२७ जनवरी, १९२८

प्रिय सतीश बाबू,

इन क्षमादानोंमें आप जो दिलचस्पी ले रहे हैं और जो निष्कर्ष आप निकाल रहे हैं उन्हें मैं देख रहा हूँ। इस समय जब कि हम हर चीजके लिए सरकारपर निर्भर कर रहे है, ये अवश्यम्भावी प्रतीत होते है।

मुझे आपका लेख अभीतक नही मिला है, लेकिन इस पत्रके डाकमें छोडे जानेसे पहले मैं उसे प्राप्त करके पढ लेनेकी आशा करता हूँ। यदि किसी चीजकी आलोचना होनी है तो आलोचना इस पत्रके साथ ही जायेगी।

'फॉरवर्ड'की कतरन बहुत दिलचस्प है और पढकर थोड़ा दुख होता है। मैंने लाला दुनीचन्दका मूल लेख पढा था। यदि लाला दुनीचन्द 'फॉरवर्ड'में छपी सुर्खियाँ पढ़ेंगे, तो वह या तो हँसेंगे या रोएँगे। मैं आशा करता हूँ कि जिस प्रकार मैं हँसा

हूँ, वह भी उसी तरह केवल हँसेंगे। जिस गैर-जिम्मेदारीके बारेमें मैंने 'यंग इंडिया'के पृष्ठोंमें लिखा है,[1] यह उसका एक और ज्वलंत उदाहरण है।

सप्रेम,

हृदयसे आपका,

बापू

[पुनश्च :]

आपका लेख अभीतक हाथमें नहीं आया है[2]। मुझे अब आपका दूसरा पत्र मिल गया है। मैं कैप्टेन पेटावलको सूचित कर रहा हूँ। मैं आशा करता हूँ कि मेमनसिंहकी आपकी यात्रा सफल रही और आपको उसकी वजहसे कोई असुविधा नहीं हुई।

अंग्रेजी (जी० एन० १५८३) की फोटो-नकलसे।

३८२. पत्र : बी० एस० मुंजेको[3]

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२७ जनवरी, १९२८

प्रिय डा० मुंजे,

आपने मुझे पत्र लिखनेमें बड़ी विचारशीलताका परिचय दिया है। मैं भी आपके सामान्य प्रस्तावसे सहमत होऊँगा। लेकिन क्या इस चीजको केवल मुसलमानोंपर लागू कर सकते हैं या क्या इस सुधारका आरम्भ उन्हींके साथ कर सकते हैं? क्या हमारे देशमें बहुत-सी विशुद्ध हिन्दू संस्थाएँ नहीं हैं? फिर, इस मुस्लिम विश्वविद्यालयमें हिन्दुओंके प्रवेशपर कोई रोक नहीं है। तथ्य तो यह है कि पहले ही इस विश्वविद्यालयसे निकले हुए ऐसे हिन्दू स्नातक हैं जो आज अच्छी राष्ट्र-सेवा कर रहे हैं। अभी भी उसमें कुछ हिन्दू पढ़ रहे हैं। तीसरे, यदि किसी संस्थाका दृष्टिकोण

१. देखिए "राष्ट्रीय कांग्रेस", ५-१-१९२८।

२. इस पत्रपर प० सुब्बैयाकी यह टिप्पणी है : "ऊपरका नोट लिखे जानेके बाद बापूजीको लेख दे दिया गया।"

३. डा० मुंजेने १८ जनवरीके अपने पत्रमें जामिया मिल्लियाके कोषके सन्दर्भमें लिखा था कि इस प्रकारकी साम्प्रदायिक संस्थाएँ सम्प्रदायोंकी पृथकताके लिए मुख्य रूपसे जिम्मेदार हैं जिसका अन्ततः परिणाम हिन्दू-मुस्लिम तनाव होता है। उन्होंने आगे लिखा था : "मैं अपने आदरणीय और प्रिय हकीमजीके स्मारकके लिए किसी भी राष्ट्रीय योजनामें साथ दूँगा। . . . और ऐसा ही स्मारक स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दका भी हो। . . . लेकिन इससे बेहतर है कि दोनोंका एक समान स्मारक बनाया जाये जो दुनियाके सामने इस बातकी घोषणा करेगा कि हिन्दू और मुसल्मानोंने . . . हार्दिक एकता स्थापित करनेका संकल्प किया है . . ." (एस० एन० १२३९४)।

राष्ट्रीय है, और वास्तवमें उसका उपयोग राष्ट्रीय उन्नतिके लिए किया जाता है, तो ऐसी साम्प्रदायिक संस्थाको भी राष्ट्रीय कहा जा सकता है। अतः मैं चाहूँगा कि यदि आप कर सकें तो हकीमजीके इस स्मारककी सहायता करें।

श्रद्धानन्दजीकी मृत्यु जिस ढंगसे हुई उसे देखते उनका स्मारक एक भिन्न और अधिक ऊँचे स्तरपर आता है। लेकिन उनके स्मारककी जैसी संकल्पना है, उसे राष्ट्रीय नही कहा जा सकता। यह तो विशुद्ध हिन्दू स्मारक है। क्योंकि शुद्धिकार्य और अस्पृश्यता, ये दोनो चीजें ऐसी हैं जिनको देखनेका काम केवल हिन्दुओंका है। अतः इन दोनो [स्मारकों]को पृथक् रखना होगा। प्रत्येकका अपना एक विशेष उद्देश्य है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२३९४) की फोटो-नकलसे।

३८३. पत्र : एफ० डब्ल्यू० स्टाइन्थलको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२७ जनवरी, १९२८

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला।[1] मै अगले मंगलवारको तीसरे पहर तीन और पाँच बजेके बीच आपसे मिलकर बहुत प्रसन्न होऊँगा। सोमवारको भी आपका स्वागत है। लेकिन मैं मौन रखूँगा, क्योकि वह मेरे लिए मौनका दिन है। और आपसे बिलकुल ही भेंट न हो, यानी कि अगर आपको सोमवारकी रातको चला जाना है, उसके बजाय मैं सुझाव दूँगा कि सोमवारको ही आयें। हालाँकि मैं आपसे बोल नही सकूँगा, लेकिन आप मुझसे जो-कुछ कहना चाहेंगे, कह सकेंगे।

हृदयसे आपका,

रेवरेंड एफ० डब्ल्यू० स्टाइन्थल
द्वारा साल्वेशन आर्मी सोल्जर्स होम
दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १३०५१) की फोटो-नकलसे।

१. २३-१-१९२८ का; रेवरेंड स्टाइन्थल और उनकी पत्नी ईसाई मिशनरी थे जिन्होंने लगभग ३० वर्ष बंगाली छात्रों और सन्थाल आदिवासियोंके बीच गुजारे थे और अब भारत छोड़ रहे थे। अपने पत्रमें उन्होंने गांधीजीसे मिलनेकी इच्छा व्यक्त की थी।

३८४. भाषण : रामदास गांधीके विवाहके अवसरपर[1]

साबरमती
२७ जनवरी, १९२८

ठीक साढ़े नौ बजे प्रार्थना-स्थलमें सभी एकत्र हो गये और गांधीजीने अपने छोटे-से भाषणमें वर-वधूको आशीर्वाद दिया। भाषण उतना ही पवित्र था जितना कि उसका प्रसंग। वह गांधीजीके जीवनका एक अत्यन्त मार्मिक क्षण था। उपस्थित सज्जनोंने देखा कि ऐसे अवसरोंपर गांधीजीका हृदय भी उतना ही भावप्रवण हो सकता है जितना कि किसी भी अन्य व्यक्तिका। अपने ही हाथों पाले-पोसे और अपनी ही देख-रेखमें विकसित होनेवाले अपने दो पुत्रों — रामदास और देवदास — का उल्लेख करते-करते उनकी आँखोंसे आँसू छलछला आये थे। इस ज्ञानसे कि उनके इस लड़केने उन्हें कभी नहीं ठगा, अपनी भूलें, अपनी त्रुटियाँ कभी नहीं छिपाईं, गर्वसे उनकी छाती फूल उठी, स्वर गद्‌गद् हो आया।

तुमने अपने दोष मेरे सामने कबूल किये हैं, मगर मैं उनसे कभी शंकित नहीं हुआ, क्योंकि तुम्हारी स्पष्ट स्वीकारोक्तिने मेरी आँखोंमें तुम्हारे दोष धो दिये हैं। मुझे इसका हर्ष है कि तुम्हें सारी दुनिया भले ही ठगे, पर तुम किसीको ठगनेवाले नहीं हो। मैं चाहता हूँ कि तुम ऐसे ही भोले, ऐसे ही सच्चे बने रहो।

तुम अपनी पत्नीकी आबरूकी रक्षा करना और उसके मालिक मत बन बैठना, उसके सच्चे मित्र बनना। उसके शरीर और आत्माको तुम वैसे ही पवित्र मानना, जैसे कि वह तुम्हारे शरीर-आत्माको मानेगी। इसके लिए तुम्हें प्रार्थनामय, परिश्रमशील, सादा और संयत जीवन बिताना पड़ेगा। तुम लोग परस्पर एक-दूसरेको विषय-वासनाकी पूर्तिके साधन मत मान बैठना।

तुम दोनोंको ही यहाँ शिक्षा मिली है। तुम अपना जीवन मातृभूमिकी सेवामें लगा देना। मातृभूमिकी सेवामें अपने शरीरको खपा देना। हमने गरीबीका व्रत लिया है। इसलिए तुम दोनों ही गरीबोंके समान खून-पसीनेकी ही रोटी खाना। तुम दोनों परस्पर एक-दूसरेको दैनिक काममें सहायता देना, उसीमें आनन्द मानना।

मैंने तुम्हें कोई उपहार नहीं दिया है। तकली और मेरे प्रिय ग्रन्थ 'गीता' और 'आश्रम-भजनावलि' की प्रतियोंके सिवाय मैं तुम्हें और कुछ दे भी नहीं सकता हूँ। सूतकी ये मालाएँ ही तुम्हारे लिए रक्षा-कवच बनें। मैं चाहता तो मित्रोंसे भीख माँगकर तुम्हें कीमती चीजें भी भेंट कर सकता था, मगर उसमें तो संसार मेरे मिथ्या दम्भकी खिल्ली ही उड़ाता और ठीक भी था। मगर मैंने जो चीजें तुम्हें दी

१. महादेव देसाईके "द वीक" (यह सप्ताह) से; उसमें इस भाषणका विवरण "ए सॉलिमन सेरेमनी" (एक पवित्र संस्कार) उप-शीर्षकके अन्तर्गत दिया था।

है और जिन्हें ही मैं अपना सर्वस्व मानता हूँ, वे इस बातकी साक्षी होंगी कि मैंने तुम्हें वही वस्तुएँ दी हैं, जो मेरी हैसियतके मुताबिक है।

मेरे लिए 'गीता' रत्नोंकी खान है। तुम्हारे लिए भी वह रत्नोंकी खान बन जाये, जीवन-पथमें 'गीता' तुम्हारी सतत संगिनी रहे, पथ-प्रदर्शिका बनी रहे। 'गीता' तुम्हारा पथ प्रकाशित करे, तुम्हारे प्रयत्नोंको प्रतिष्ठापूर्ण बनाये। भगवान् तुम्हें सेवाके लिए चिरंजीवी बनाये!

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-२-१९२८

३८५. भाषण : साबरमती आश्रममें[1]

२७ जनवरी, १९२८

शामको गांधीजीने प्रश्नके सार्वजनिक पक्षका उल्लेख किया। उन्होंने उस घातक प्रणालीकी चर्चा की जिसने चार मूल वर्णोंको बहुत सारी जातियों और उपजातियोंमें विभक्त कर दिया है, और आशा व्यक्त की कि आश्रमके अन्दर एक ही जातिके दो व्यक्तियोंके बीच होनेवाला यह विवाह[2] अन्तिम होगा। उन्होंने कहा, आश्रमके लोगोंको उचित है कि वे इस मामलेमें पहल करें, क्योंकि बाहरके लोगोंको इस सुधारका आरम्भ करना कठिन मालूम हो सकता है। आश्रमके लिए नियम यह होना चाहिए कि एक ही जातिके स्त्री-पुरुषके विवाहका समर्थन न किया जाये और विभिन्न उप-जातियोंके स्त्री-पुरुषोंके बीच विवाहको प्रोत्साहन दिया जाये। उन्होंने कहा, मैं तो चाहूँगा कि लड़कियोंको २० वर्षतक, बल्कि २५ वर्षकी आयुतक अविवाहित रखा जाये। अपने प्रवचनके अन्तमें उन्होंने विवाहकी गम्भीर महत्तापर फिर जोर दिया।

ऐसा मत सोचिए कि आश्रमका उद्देश्य विवाहको लोकप्रिय बनाना है। उसका उद्देश्य आजीवन ब्रह्मचर्यको बढ़ावा देना है और रहेगा। यह विवाहका समर्थन उसी हदतक करता है जिस हदतक कि उसका उपयोग भोग नहीं, बल्कि संयमके एक साधनके रूपमें किया जाता है। और जो लोग संयमित जीवनके पक्षमें हैं उन्हें अपना जीवन उन लोगोंसे भिन्न आधारपर नियोजित करना चाहिए जो भोगपूर्ण जीवनके पक्षपाती हैं। याद रखिए कि स्वच्छन्द भोग-लिप्साकी सदा एक सीमा होती है जबकि आत्म-संयमकी कोई सीमा नहीं है, और हमें नित्यप्रति उसी दिशामें आगे बढ़ना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-२-१९२८

१. महादेव देसाई द्वारा लिखित "द वीक" (यह सप्ताह) शीर्षक लेखसे।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

३८६. पत्र : प्रभावतीको

[२७ जनवरी, १९२८ के पश्चात्][1]

चि० प्रभावती,

तुमारा खत मीला है। अब बाबुजी[2] अच्छे हो गये होंगे। तुमारे लीये तो मैं क्या कहुं? मै लाचार सा बन गया हुं।

मैं काठीयावाड़में थोड़े दिनके लीये गया था। उस समय मृत्युंजय और विद्यावती दोनों मेरे साथ आये थे। दोनोंका स्वास्थ आजकल तो अच्छा रहता है।

वसंत पंचमीके रोज रामदासका विवाह नीमु बहनके साथ हुआ। बहोत सादगीसे ही कीया गया।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० ३३४० की फोटो-नकलसे।

३८७. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२८ जनवरी, १९२८

प्रिय सी० आर०,

तुम्हारा पत्र मिला।[3] मैं चाहूँगा कि तुम मेरे बारेमें चिन्ता करना बन्द कर दो। मैं तुम्हें यही आश्वासन दे सकता हूँ कि मैं जान-बूझकर ऐसा कुछ नहीं करूँगा जिससे मेरे स्वास्थ्यको हानि पहुँचे। लेकिन तुम मेरा स्वभाव जानते हो। अगर मैं कुछ समयके लिए भी एक स्थानपर रुक जाऊँ तो मैं आहार-विषयक प्रयोग किये बगैर नहीं रह सकता। तुम यह भी जानते हो कि मेरी तीव्र इच्छा रही है कि मैं पुनः केवल फल और काष्ठफलके आहारपर लौट आऊँ या कर सकूँ तो कमसे-कम दूध-रहित आहार करूँ। अब मैं देखता हूँ कि मैं आसानीसे वैसा कर सकता हूँ, और इसलिए मैंने वही किया है। अब चूँकि उससे मेरा काम चल सकता है इसलिए फिरसे दूध शुरू करना मेरे लिए तबतक कठिन होगा जबतक कि मुझे इत्मीनान न हो जाये कि दूधके बिना काम चलना असम्भव है। मैं तुमसे सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि मैं कोई चीज हठधर्मीके साथ नहीं करूँगा। डा० मुतूकी सलाहके अनुसार मैं अपना रक्तचाप नहीं नपवा रहा हूँ, लेकिन मैं खूब पनप रहा हूँ।

१. रामदास गांधीके विवाहके उल्लेखसे, जो २७ तारीखको सम्पन्न हुआ था।

२. ब्रजकिशोर प्रसाद, प्रभावतीके पिता।

३. २३-१-१९२८ का।

काठियावाड़में मैंने देखा कि मैं अपनी आवाज लगभग पहले जैसी ऊँची करके बोल सकता हूँ और इसमें थकान या कोई असुविधा नही होती। मेरा भाषण[1] खूब सुविचारित था और तेजीसे दिया गया था। मैं पूरे एक घंटेतक बोला, और उसके बाद थकानका कोई चिह्न नही था। निश्चय ही यह मेरी प्रगतिकी कुछ कसौटी तो थी ही। और मैं लगातार दो दिनतक ११ बजे राततक चलनेवाली समितिकी बैठकोंमें शामिल ही नही हुआ, उनमें बोल भी सका।

कामके बारेमें भी मैं यह नही कह सकता कि मैं बहुत श्रमसाध्य काम नही कर रहा हूँ, लेकिन यह मेरे बूतेके बाहर नही है।

लक्ष्मीको बुखार किस कारण हुआ है? मुझे आशा है कि अब वह ठीक-ठाक है।

मैं तुम्हें अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके लिए शीघ्र ही ५,००० रुपये भेजनेकी आशा रखता हूँ।

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० १३०५०) की फोटो-नकलसे।

३८८. पत्र : रिचर्ड बी० ग्रेगको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२८ जनवरी, १९२८

प्रिय गोविन्द,

मुझे खुशी है कि तुम अब पूनामें हो। मुझे आशा है कि तुम तेजीसे स्वास्थ्य लाभ कर लोगे। जितनी जल्दी तुम आ सको तुम यहाँ आना। मैं प्रतीक्षा करूँगा। मैं चाहूँगा कि तुम अपने दिमागसे यह बात निकाल दो कि तुम डाक्टरोंके या मेरे ऋणी हो। आखिरकार हम लोग बिना पुरस्कारकी अपेक्षा किये एक दूसरेकी सेवा करनेके लिए इस धरतीपर हैं।

कृपया खम्बाता-दम्पतिको मेरी याद दिला देना, और जब अगली बार पत्र लिखो तो बताना कि खम्बाताके क्या हाल हैं।

तुम सबको प्यार सहित,

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

श्री रिचर्ड बी० ग्रेग
मार्फत श्री एफ० पी० पोचा
८, नेपियर रोड, कैम्प, पूना

अंग्रेजी (एस० एन० १३०५६) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "भाषण : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्, पोरबन्दरमें", २२-१-१९२८।

३८९. पत्र : हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२८ जनवरी, १९२८

प्रिय भगिनि,

आपका खत मीला है।

उर्दु सीखनेकी तो आवश्यकता नहिं है। परंतु जो शब्द नवजीवनके समझमें न आवे और जो आश्रममें कोई न समझा सके उस बारेमें यहां लीखो। इस तरह अपना हि शब्द कोष बना लेना।

निखिलकी चिंता छोडो। जो प्रार्थनामें विश्वास रखते है उसे किसी प्रकारकी चिंता न होना चाहीये। प्रार्थनाका अर्थ एक तो यह है कि हम हमारा सर्वस्व चिंता भी ईश्वरके चरणोंमें प्रतिदिन धर देते हैं। पीछे चिंताको कोई स्थान नहीं रहता।

बापुके आशीर्वाद

जी० एन० १६५४ की फोटो-नकलसे।

३९०. भाषण : गुजरात विद्यापीठमें[1]

२८ जनवरी, १९२८

ऐसा नही कहा जा सकता कि आज जो विचार व्यक्त किये गये है वे मेरे नही है। कांग्रेसने सदस्यताका शुल्क चार आने रखकर तो सचमुच प्रजातन्त्र ही ला दिया है। किन्तु मताधिकारका प्रयोग सही तौरपर नही हुआ। कहनेका तात्पर्य यह नहीं है कि इस योजनाका उद्देश्य स्नातकोंको निकाल बाहर करना है; अथवा यह भी नही है कि कार्यसमितिने ठीक ढंगसे काम नही किया। आज सबको ऐसा लगने लगा है कि बस, अब हमें असहयोगकी आवश्यकता नही है। भले ही कांग्रेस भी इसी आशयका प्रस्ताव पास कर दे; किन्तु उस हालतमें भी मुझे तबतक सन्तोप नहीं होगा जबतक कि मेरे आदर्शके अनुरूप स्वराज्य नहीं मिल जाता। इस प्रकार चुनावकी प्रथाको एक ओर रखकर यह न्यास (ट्रस्ट) इसलिए बनाया गया है कि वह अवसरवादी न बनकर अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ता जाये और यदि उसमें इतनी

१. गुजरात विद्यापीठका पुनर्गठन करने तथा उसका नया विधान बनानेके लिए विद्यापीठके कुलपति गांधीजीकी अध्यक्षतामें सीनेटकी एक बैठकका आयोजन किया गया था। इस सम्बन्धमें देखिए खण्ड ३६, "गुजरात विद्यापीठ", २-२-१९२८ भी।

सामर्थ्य न हो तो वह यह कार्य अन्य समर्थ लोगोंको सौंप दे। यदि न्यासके लोग कार्य-भार सौंपनेमें ढील करें तो उनके विरुद्ध सत्याग्रह किया जा सकता है या फिर जनताके धनका दुरुपयोग करनेके कारण उन्हें दण्ड दिया जा सकता है अथवा इन दोनोंके बीचका रास्ता अदालतमें जानेका है। मैं इस न्यासका सदस्य नही हूँ, उसका कारण यह है कि अब मैं किसी भी समितिका सदस्य नही हूँ। आश्रम और चरखा संघकी प्रबन्ध समितिसे भी मैंने त्यागपत्र दे दिया है। अब मैं आपसे सत्ताके बलपर, कठोरताके साथ काम नही लेना चाहता बल्कि प्रेमसे और आपके हृदयको स्पर्श करके ही काम लेना चाहता हूँ। मैं न्यासका सदस्य तो नही हूँ किन्तु इतना अवश्य बता देना चाहता हूँ कि जो लोग इसके सदस्य नही है उनकी जवाबदारी इससे कुछ कम नही हो जाती।

[गुजरातीसे]
प्रजाबन्धु, ५-२-१९२८

३९१. एक बहनकी उलझन

एक बहन लिखती है:

> दो साल पहले मैंने आपको खादीपर भाषण देते हुए सुना था। आपने सबको खादी पहननेकी सलाह दी थी। उसपर से मैंने खादी पहननेका निश्चय किया। पर हम गरीब हैं; और मेरे पति कहते हैं कि खादी महँगी पड़ती है। हम महाराष्ट्री हैं अतः दक्षिणी ढंगकी साड़ियाँ पहनती हैं। उसकी लंबाई नौ गज होती है। अब मैं नौके बदले छ. गजकी साड़ी पहनूँ तो बहुत खर्च बचे। पर मेरे बड़े लोग मुझे ऐसा करने नही देते। मैं उन्हें बहुत ही समझाती हूँ कि प्रधान वस्तु खादी है, साड़ी पहननेकी रीति तो गौण वस्तु है। पर तूतीकी आवाज सुने कौन? वे कहते है कि तू तो अभी भरी जवानीमें है, इसीसे तुझे अभी ये नखरे सूझते है। पर आप अगर यह संदेशा भेजें कि साड़ी किसी भी ढंगकी पहनी जाये पर खादीकी ही पहननी चाहिए, तो वे मान जायेंगे। गरीब बहनकी इतनी मदद तो जरूर कीजिएगा।

मूल पत्र अंग्रेजीमें है। मैंने यहाँ उसके जरूरी अंशका तर्जुमा दिया है। इस बहनको तो मैंने अपनी सलाह लिख[1] भेजी है। पर मै जानता हूँ कि इस बहनकी जैसी कठिनाई तो बहुत-सी बहनोंके आगे आती है और इसलिए यहाँ उसका जवाब देता हूँ।

इस बहनमें शायद तीव्र देशाभिमान है क्योंकि बहुत-सी बहनें, इनके समान अपने-आप पुराने ढंग या पुराने रिवाज छोड़नेको तैयार नही होती। एक भी असुविधा

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

उठाये बिना, रिवाजोंकी सारासारताका विचार किये बिना उनसे चिपटे रह कर और किसी प्रकारका खर्च न करते हुए अगर स्वराज्य मिल सके तो बहुत-सी बहनें, और उसी भाँति भाई भी, उसे लेनेको तैयार होंगे। पर स्वराज्य इस तरह तो नही मिल सकता। स्वराज्य लेनेके मानी हैं स्वार्थ-त्यागकी शक्ति पैदा करना; और स्वार्थ-त्यागमें प्रान्तीयताका त्याग भी आ ही जाता है।

प्रान्तीयतासे राष्ट्रीय स्वराज्य तो मिल ही नही सकता, प्रान्तीय स्वराज्य मिलना भी और अधिक कठिन हो जाता है। इस संकीर्ण प्रान्तीयताको बनाये रखनेमें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंका हाथ शायद अधिक है। विविधताको कुछ हदतक ही बनाये रखना उचित है। पर इस हदको लाँघनेके बाद विविधताके नामसे पाले जानेवाले भोग और रिवाज राष्ट्र-भावनाके नाशक हैं। दक्षिणी साड़ी सुन्दर लगती है। पर जो सुन्दरता राष्ट्रकी कीमतपर मिलती हो, वह त्याज्य है। अगर कच्छी या पंजाबी ओढ़नी रखनेसे खादी सस्ती पड़े तो उसीमें हम सच्ची शोभा मानें। दक्षिणी कछोटा, गुजराती लटकती साड़ी, कच्छी पछेड़ा, और बंगाली तरीका — ये सभी साड़ी पहननेकी विविध राष्ट्रीय रीतियाँ हैं। इनमें से चाहे जिस रीतिसे साड़ी पहनकर उसे राष्ट्रीय रीति मानना चाहिए। इन सभी रीतियोंमें से वह रीति पसंद की जाये जिससे शरीर पूरा-पूरा ढके और कपड़ा कमसे-कम लगे। यह रीति तो कच्छी घाघरे और पछेड़ेकी है। पछेड़ा तीन गजमें होता है। इसलिए गुजराती साड़ीकी बनिस्बत भी आधा ही खर्च हुआ, और जो बोझ कम हुआ वह नफेमें। यदि पछेड़ा और घाघरा एक ही रंगके हों तो एकाएक यह जान भी नही पड़ता कि साड़ी पहनी है या पछेड़ा। ऐसी राष्ट्रीय रीतियोंका विनिमय और अनुकरण स्तुत्य है।

श्रीमन्तोंके यहाँ अनेक प्रान्तोंकी पोशाक होना ठीक लगता है। इसमें कितनी विनय और राष्ट्रीय भावना भरी है कि गुजराती गृहस्थके घर बंगाली मेहमान आयें तो मालिक और मालकिन बंगाली पोशाक पहनें और गुजराती मेहमानका आदर-सत्कार करते समय बंगाली गृहस्थ गुजराती पोशाक पहनें? पर यह तो राष्ट्रीय भावनावाले धनिक देश-प्रेमी ही कर सकते हैं। मध्यमवर्गके और गरीब देश-प्रेमी, उसीको पहननेमें अभिमान समझें जिस प्रान्तकी पोशाक खादी पहननेके लिए सस्ती और सरल हो। इतना ही नहीं, उस प्रान्तकी पोशाक अपनाते हुए वे इस बातका विचार करें कि वहाँके गरीब लोग क्या पहनते हैं और अपने लिए वैसी ही पोशाक तय करें।

स्वदेशी यह नहीं है कि हम अपने पोखरमें डूब मरें; स्वदेशीके मानी हैं अपने पोखरको जन-समुद्रमें विसर्जित करना। यदि इन पोखरोंका पानी मैला होगा तो वह समुद्र भी मैला हो जायेगा। इसलिए इन्हें हमें पहले साफ करना होगा, उसके बाद ही उनका विसर्जन किया जा सकता है। होम हमेशा शुद्ध द्रव्यका, शुद्ध हाथोंसे ही हो सकता है। इसलिए हम सहज ही समझ सकते हैं कि वे स्थानीय रीति-रिवाज जो अपवित्र नहीं हैं, नीति-विरुद्ध नहीं हैं, वे ही राष्ट्रके उपयोगमें लिये जाने लायक हैं। इतनी बात समझमें आ सके तो राष्ट्र-प्रेम अन्तमें विश्व-प्रेमका रूप ले सकता है।

और जो बात कपड़ोंके बारेमें है, वही भाषा, खुराक इत्यादिके बारेमें भी ठीक है। जैसे हम समयानुसार अन्य प्रान्तकी पोशाककी नकल करें, उसी तरह प्रान्तीय भाषा, वगैरहकी भी करे। अभी तो अंग्रेजी भाषाको मातृभाषासे भी बड़ा स्थान देनेके निरर्थक, अशक्य और घातक प्रयत्नसे ही हमें इतनी थकावट आती है कि हम अपनी मातृभाषाकी अवगणना, जाने-अजाने किया करते है। जहाँ ऐसा चलता है, वहाँ प्रान्तीय भाषाका तो पूछना ही क्या?

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २९-१-१९२८

३९२. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद

परिषद आरम्भ हुई और समाप्त हो गई। ठक्कर बापाके[1] भाषणके सम्बन्धमें, लोगोंकी उपस्थितिके सम्बन्धमें, स्वागत-समितिके स्वागतके सम्बन्धमें, माननीय राणा साहबकी[2] शिष्टता और सौजन्यके सम्बन्धमें, सम्मेलनमें उनकी उपस्थितिके सम्बन्धमें और उनके द्वारा अतिथियोको दी गई दावतके सम्बन्धमें मुझे कुछ नही कहना है। सेठ देवीदासने स्वागतमें कोई कसर नही रहने दी। सेठ उमर हाजी अहमद झवेरीने स्वागत-समितिके अध्यक्षका कार्य भली-भाँति पूरा किया और इस कार्यमें अपना पैसा खर्च करनेमें कोई सकोच नही किया। भीलो और ढेढोके गुरुको शोभा देनेवाली गम्भीरता अध्यक्षके भाषणमें भी थी। परिषदके प्रस्तावोमें कोई दोष नही था। किन्तु मुझे उनमें कोई रस नही आया, क्योकि उन प्रस्तावोंके पीछे उनपर अमल करने अथवा करवानेका दृढ़ निश्चय और बल नही था। मुझे ऐसा लगा कि जिन लोगोंने वे प्रस्ताव पेश किये थे उनमें से अधिकाशने उन्हें पेश करनेमें ही अपने कर्त्तव्य की इति मान ली है। मै मन ही मन यह समझकर शान्त हो गया कि यह परिषद खादी परिषद नही है। तिसपर भी मैंने एक उसीका ध्यान किया और मैंने अपनी हार मान ली। किन्तु इससे खादीके सम्बन्धमें मेरा विश्वास कम नही हुआ। इसलिए मै यहाँ अपना दुखडा नहीं रोऊँगा।

मै तो केवल एक प्रस्तावपर ही लिखना चाहता हूँ। यह प्रस्ताव मेरी कृति है और मुझे जान पड़ता है कि उक्त प्रस्तावकी रूपरेखा तैयार करके और उसे स्वीकृत कराकर मैंने परिषद तथा काठियावाड़की सेवा की है। वह प्रस्ताव इस प्रकार है :[3]

इस प्रस्तावका सम्भव होना सत्यकी उपासनापर ही निर्भर है। मैंने देखा कि एक हदतक अलिखित समझौतेके कारण ही यह परिषद पोरबन्दरमें हो सकी थी और

१. अमृतलाल ठक्कर, परिषदके अध्यक्ष।
२. पोरबन्दरके शासक।
३. प्रस्तावके पाठके लिए, देखिए "भाषण: काठियावाड़ राजनीतिक परिषद, पोरबन्दरमें", २२-१-१९२८।

अभी काफी समयतक ऐसे समझौतेके कारण ही भविष्यमें भी परिषदका आयोजन किया जा सकेगा। यह बात परिषदकी अशक्तिकी सूचक थी। ऐसी अशक्त कोई परिषद न हो। जहाँ ऐसी अशक्तता होती है, वहाँ कहीं-न-कहीं कोई दोष या न्यूनता होती है। पर अशक्ति ढँकनेसे दूर नहीं होती। रोगको छिपानेवाला उसे बढ़ाता है। वह उस रोगको दूर करनेवाले उपायोंकी उपेक्षा करता है और आप ही अपना शत्रु बनता है।

विषय-निर्धारिणी समितिमें दो अवसर आये जब कि सभासदोंने देशी राज्योंकी व्यक्तिगत टीका करनेवाले दो प्रस्ताव उपस्थित किये। मैं यह नहीं कह सकता कि प्रस्तावोंको लानेका कोई कारण नहीं था। पर मैंने यह स्पष्ट देखा कि ऐसे प्रस्ताव लाना अथवा उनपर कुछ काम करना, परिषदकी शक्तिके बाहर था। ये प्रस्ताव तो समितिने निकाल डाले। किन्तु मैंने देखा कि ऐसे प्रस्ताव लाकर परिषद अपनी हस्ती अधिक दिनोंतक नहीं बनाये रख सकती। इससे मैंने परिषदको सलाह दी कि उसे अपनी अशक्ति, अपनी मर्यादाको जग-जाहिर करना चाहिए। मैंने यह सुझाया कि ऐसा करनेसे परिषद अपनी अशक्ति शीघ्र दूर कर लेगी और अपनेको बचा लेगी।

विषय-निर्धारिणी समितिके लिए यह घूँट बड़ा कड़वा था। मुझे भी यह सलाह देना रुचता नहीं था पर मैं अपना धर्म स्पष्ट रूपसे समझ सकता था। दुखद-सुखद जो-कुछ सच्चा हो वह करना ही चाहिए। सच्चा सुख क्या बहुत बार जहर जैसा नहीं लगता? कितनोंको यह प्रस्ताव खला था, मगर तो भी, उन्होंने और दूसरोंने भी उदारता और दीर्घदृष्टिसे काम लेकर मेरी सलाह स्वीकार कर ली।

इससे मेरा उत्तरदायित्व बढ़ा। मैं जानता हूँ कि इस प्रस्तावका अगर कोई अनिष्ट परिणाम निकला तो उसमें मेरा दोष पहले गिना जायेगा। मुझे तो अनिष्ट परिणामका कोई भय नहीं है, इतना ही नहीं बल्कि मैं तो मानता हूँ कि अगर परिषद उस प्रस्तावका सदुपयोग करेगी, उसके अनुसार जो काम करनेको है, उन्हें करेगी तो भला परिणाम ही निकलना चाहिए। स्वेच्छापूर्वक लगाया हुआ अंकुश, स्वेच्छासे पाला हुआ संयम, संयमीके लिए हमेशा लाभदायी सिद्ध होते हैं। स्वेच्छासे लगाये हुए इस अंकुशपर दूसरा नियम लागू नहीं होता।

परिषद अगर मन, वचन और कर्मसे इस प्रस्तावका पालन करेगी तो मर्यादाके भीतर रहते हुए उसकी कार्य करनेकी शक्ति बढ़ेगी। ऐसी किसी मर्यादाके अभावमें राजा लोग व्यक्तिगत टीका अथवा निन्दाके भयसे परिषदकी बैठक करने देनेमें संकोच करते थे। मर्यादाको ठीक तौरपर जाननेसे परिषदके सदस्य राज्योंके व्यक्तिगत दोष दूर करनेके मोहक किन्तु व्यर्थ प्रयत्नमें लग जाते थे और उनसे जो हो सकें, ऐसे मोहकता-रहित कामोंकी ओरसे वे आँखें मूँद लिया करते थे। अब या तो वे नीरस होनेपर भी सरस काम करेंगे अथवा अपना दरवाजा बन्द कर लेंगे। किसीको दिवाला निकालना नहीं रुचता, इसलिए हम ऐसी आशा रखें कि परिषदके पदाधिकारी इच्छा अथवा अनिच्छासे भी जो करने लायक है, वही काम करेंगे।

इस प्रस्तावका ऐसा अर्थ तो कोई न करे कि इसके द्वारा हम संसारके सामने कबूल करते हैं कि कोई राज्य टीकाका पात्र नहीं है। निन्दा तो किसीकी भी न करें।

हमने यह स्वीकार किया है कि राज्य टीकाके पात्र होनेपर भी काठियावाड़ या किसी अन्य राज्यकी सरहदमें रहकर उसकी या किसी दूसरे राज्यकी टीका करनेकी शक्ति अभी हममें नही है। इसी कारण और भविष्यमें ऐसी शक्ति प्राप्त कर लेनेकी आशासे ही हमने यह बन्धन अपनेपर लगाया है। परिषदमें प्रस्ताव लानेके सिवाय, और परिषदमें सीधे या प्रकारान्तरसे किसी राज्यकी व्यक्तिगत टीका करनेके अलावा, उन राज्योंके प्रकट दोष दूर करनेके जो उपाय परिषदकी समितिके पास हों, उन उपायोपर अमल करनेका उसे अधिकार है, यह उसका कर्त्तव्य है। जैसे कि परिषदकी बैठकके प्रसंगमे विषय-निर्धारिणी समितिके सामने कोई भी सदस्य काठियावाड़ी राज्यके दोषोका दर्शन सदस्योंको कराये और उनके बारेमें समितिकी सलाह मांगे। अंकुश तो इतना ही है कि उनके बारेमें परिषदके सामने वह प्रस्ताव नही ला सकेगा। कार्यवाहक उन राज्योसे पत्र-व्यवहार कर सकता है, राजाओ और उनके अमलदारोंसे मिल सकता है और उन दोषोको दूर करनेकी प्रार्थना कर सकता है, अथवा शिकायतें झूठी ठहरें तो उस बातको जाहिर कर सकता है। यानी मित्रके तौरपर समिति प्रत्येक राजाके पास उचित रास्तेसे जा सकेगी। यह भी सम्भव है कि मर्यादाका रहस्य जाननेके बाद, वे राज्य अगर एकाएक स्वच्छन्द न हो गये हो, लोकमतकी बिलकुल उपेक्षा न करते हों तो समितिके ऐसे कामका स्वागत ही करेंगे और उसे अपनी ढाल भी बना सकते हैं। यहाँ इतना याद रखना चाहिए कि ऐसी खोज-बीन और जाँचका समिति कोई लाभ न उठाये। जो बातें वह जाने, उनकी सार्वजनिक तौरपर खुली चर्चा न करे, और अगर वह उन-उन राज्योंके पास न पहुँच सके, अथवा पहुँचनेपर भी सन्तोष न हो तो भी मुँहपर ताला लगाकर सब सह ले और समझे कि रोगका निवारण समितिकी शक्तिके बाहर है।

इसे मर्यादाके भीतर हस्तक्षेप कहो या जांच कहो, उसका परिणाम समितिकी सजगता या सावधानी, उद्यम और सौजन्यपर निर्भर करता है। अगर वह पहलेसे ही उन-उन राज्योंके बारेमें अपनी राय बना बैठे, पूर्वग्रहसे ग्रसित हो जाये तो वह कुछ नही कर सकेगी। राजाओंके हृदयको पिघलानेका आत्मविश्वास उसमें होना चाहिए। ऐसा आत्मविश्वास केवल राजा प्रजा दोनोंकी अनन्य सेवासे ही आता है। दोनोकी सेवा, उन्हें खुश करनेके लिए नहीं बल्कि उनके भलेके लिए तटस्थ भावसे करनी पड़ती है। ऐसी सेवामें स्वप्नमें भी समितिके सदस्योका व्यक्तिगत स्वार्थ नही होना चाहिए। देशी राज्योकी हस्तीपर हम हाथ नहीं डालना चाहते, केवल उनका सुधार करना चाहते हैं। यह मान्यता इस वस्तुके गर्भमें समाई हुई है कि यदि परिषद राज्यतन्त्रका ही नाश करना चाहे तो उसकी बैठकके लिए राज्योंमें कोई स्थान नही है।

अहिंसासे परिवर्तन साधा जा सकता है, नाश नही। उसके द्वारा प्रजातन्त्रको राज्योमें कायम किया जा सकता है पर राजाओंका या राज्योंका नाश नही; और राजा-प्रजा दोनोंमें जो कुछ अच्छा हो, उसका सामंजस्य कराया जा सकता है। थोड़ेमें कहिए तो दोनोंके बीच धर्मका सम्बन्ध रहे, पशुबलका नही। आधुनिक प्रवृत्ति

विनाशक है, प्राचीन सभ्यता पोषण करनेवाली है। अहिंसासे सबका कल्याण सधता है, हिंसा एकके विनाशपर दूसरेकी समृद्धिका पाया रखती है। प्रजातन्त्र सर्वथा लाभकारक नहीं है, राजसत्ता भी सर्वथा हानिकारक नहीं है। दोनोंकी अपनी-अपनी उपयोगिता है। वह कहाँतक उपयोगी है इसकी खोज करना राजनीतिक परिषदका काम है। क्योंकि परिषद सत्य और अहिंसाके द्वारा अपने ध्येयपर पहुँचना चाहती है।

अब हम इसपर विचार करें कि परिषद क्या कर सकती है। खादी, अछूतोद्धार, समाज-सुधार वगैरा काम तो है ही। इन कार्योंके द्वारा परिषद प्रजातन्त्रका पोषण करे। राजनीति-सम्बन्धी काम भी कुछ कम नहीं हैं। मद्यपान-निषेध, शिक्षा, रेल विभाग, बरसातके पानीका समस्त काठियावाड़के लिए संग्रह, समस्त काठियावाड़के वृक्षोंका संरक्षण और उनकी वृद्धि, समस्त काठियावाड़के लिए एक प्रकारकी जकात और उसका एक ही सा प्रबन्ध इत्यादि। राजा-प्रजा दोनोंका कल्याण करनेवाली ऐसी दूसरी बातें भी कही जा सकती है। इनका महत्त्व बहुत बड़ा है। काठियावाड़ इन्हीके सहारे पनप सकता है। इनके बिना काठियावाड़ स्वयं अपने पैरमें कुल्हाड़ी मारेगा।

ये कार्य साधनेके लिए राजाओंकी अपेक्षा उनके अमलदारोंकी मददकी कहीं अधिक आवश्यकता है। अमलदार वर्ग अगर स्वार्थी या संकीर्ण विचारोंके होंगे तो वे सुधार भी नहीं हो सकेंगे जो राजा खुद करना चाहेंगे। राजाके हाथ-पाँव तो उनके अमलदार हैं। और अमलदार वर्गका अर्थ है प्रजा। प्रजाका सुधार होगा तो राजा जरूर सुधरेंगे। पर हल्ला मचानेवाली प्रजाका एक बड़ा भाग तो अमलदारोंका है। इसलिए जबतक वे स्वार्थको नहीं भूल जाते, नीतिका पन्थ ग्रहण नहीं करते, अपनी जीविकाके लिए निर्भर नहीं बनते और निर्भयतापूर्वक किये जानेवाले सार्वजनिक कामोंको समझकर उनमें दिलचस्पी नहीं लेते तबतक राज्योंमें सच्चा सुधार होनेकी आशा कम ही है। इसलिए राजनीतिक परिषदका क्षेत्र तो प्रजाके बीच ही होना और रहना चाहिए। प्रजा मूल है और राजा फल। मूल मीठा होगा तो फल मीठा ही होगा।

और काठियावाड़ राजनीतिक परिषदके नसीबमें अगर प्रतिष्ठा पाना बदा होगा तो मुख्य राज्योंमें वहाँ प्रजाकी अलग-अलग परिषदें होनी चाहिए और ये परिषदें निश्चय ही अपने-अपने राज्यकी हर तरहकी टीका विनयपूर्वक कर सकती है। इन परिषदोंको अपनी शक्ति बढ़ानी चाहिए। वह शक्ति पैदा करनेके लिए भी रचनात्मक काम होने चाहिए। इसीपर उनकी शक्तिका विकास निर्भर है।

इन कार्योंके लिए निःस्वार्थ, निडर सेवक चाहिए। वे कहाँसे मिलेंगे? फिलहाल जितने भी सेवक हैं यदि वे शान्तिसे अपना काम करते जायें तो उनकी संख्यामें वृद्धि होगी। किसीके मनमें ऐसा कायरतापूर्ण विचार नहीं आना चाहिए कि मैं अकेला क्या कर सकूँगा।

इतना तो मैंने प्रजाजनके प्रति कहा। राजा अगर समझें तो राजनीतिक परिषदके इस प्रस्तावसे उनकी जिम्मेवारी बहुत बढ़ गई है। आजतक वे आलोचना या निन्दाके डरसे अथवा उसके बहाने परिषदकी उपेक्षा करते थे, कुछ कतराते भी थे,

पर अब मेरी नम्र सम्मतिमें तो उन्हें परिषद्‌के सभ्यतापूर्ण तरीकोंकी कद्र कर उसका स्वागत करना चाहिए, उसे सन्तुष्ट करना चाहिए। अपने और अपनी प्रजाके बीच उसका उपयोग एक पुलके रूपमें करना चाहिए। मेरे पास जो सबूत है, उनके आधार-पर मैं मानता हूँ कि ऐसी बात तो है ही नही कि काठियावाड़का कोई भी राज्य टीकाके योग्य नही है। सुननेमें आया है कि कितने ही राज्योंमें बहुत बड़े-बड़े दोष है। वे इस युगको पहचानें। यह एक महत्त्वपूर्ण लक्षण है कि सारे जगतमें जो अव्य-वस्था चल रही है उसका असर भारतवर्षपर भी होता जा रहा है। अव्यवस्थाके रूपमें तो वह अवश्य ही जहरीली है, मगर उसके मूलमें निर्मल हेतु है। जाने या अजाने, लोग खुद नीतिके रास्ते नहीं चलते, मगर तो भी वे नीतिके उपासक हैं। सत्ताके अन्धे बलसे वे थक गये हैं, अपना धैर्य खो बैठे है। और अधैर्यके कारण यह बात वे भले ही भूल जाते हों कि उनका उपचार तो रोगसे भी अधिक भयानक है। पर उन्हें सुधार चाहिए, नीतिपूर्ण सत्ता चाहिए; किन्तु मेरे-जैसे सत्य और अहिंसाके उपासक देख सकते है कि उनके अपनाये रास्तेसे नीति नहीं ही मिलेगी। पर वे यह भी देख सकते है कि यदि सत्ताधिकारी चेते नहीं तो उनका नाश निकट है। राजाओको चेतनेकी आवश्यकता है। विनाशकी सूचक विपरीत बुद्धि उन्हें कभी न आये। मैं तो इसी अविचल विश्वासके सहारे जीवित हूँ कि हिन्दुस्तानी विनाशके रास्ते कभी नही जायेगा। मेरे इस विश्वासको राजा लोग सच्चा साबित करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२८

३९३. प्रश्नोत्तर

इस साल काठियावाड़ राजनीतिक परिषद पोरबन्दरमें श्री अमृतलाल ठक्करकी अध्यक्षतामें हुई थी। उसमें गांधीजीको भी जाना पड़ा था।

एक भाईने पूछा कि अमुक राज्यमें अन्त्यज-शाला खोली जा सकती है या नहीं? गांधीजीने कहा:

मैंने बहुतोंके मुँहसे और बहुत जगह सुना है कि "अमुक" राज्य अपवित्र राज्य है और अगर यह बात सच्ची हो तो वहाँ किसी पवित्र कामके लिए कोई नहीं जा सकता। इसमें अपवाद केवल यही है कि इस राज्यकी अपवित्रता दूर करनेके लिए वहाँ जाया जाये। हम ब्रिटिश राज्यमें रहते है और इस कारण उसे एक खास तरहकी प्रतिष्ठा मिल जाती है, पर इस अनीतिमय शासन-प्रणालीमें रहकर उसे नष्ट किये बिना हमें छुटकारा नही मिल सकता। पर अन्य किसी भी पवित्र कामके लिए किसी भी भले आदमीका अपवित्र राज्यमें जाना अथवा रहना उस राज्यकी प्रतिष्ठा बढ़ानेके लिए जानेके समान है।

प्र० — देशी राज्योंमें सुधारके लिए कोई अखिल भारतीय सत्याग्रह संस्था होनी चाहिए या नहीं?[1]

उ० — नहीं होनी चाहिए। दक्षिण आफ्रिकामें मेरे साथ ६०,००० आदमी हो गये थे; आज उनमें से कितने लोग सत्याग्रही हैं? आपमें से २२ तो केवल इसलिए चुने गये हैं कि वे जरूरतके वक्त काम आयें। पर जब भी आप कोई काम हाथमें लेंगे — और अविवेक पूर्वक आप कोई कदम उठानेवाले नहीं हैं — उस समय आपको और भी अनेक आदमी मिल जायेंगे। अगर आप समझदार सत्याग्रही हों तो जैसा कि आपने सुझाया है, वैसे किसी अ० भा० सत्याग्रह दलकी जरूरत नही है। अवसर आनेपर आपका और देशका जौहर प्रकट होगा।

प्र० — सत्याग्रह-दल गुण और संख्यामें किस तरह बढ़ सकता है?

उ० — हरएक सत्याग्रहीको जाग्रत रहना चाहिए। उसमें आलस्य, शिथिलता, तन्द्रा न हों, उसे कोई व्याधि न हो, यहाँतक कि हर आदमी अपने बारेमें हमेशा विचार करता रहे। अपनी निश्चित की हुई प्रवृत्तिके अन्दर सदा अपनी परीक्षा करता रहे। प्रधान सेनापतिके पास हर सैनिकके कामकाजका लेखा होना चाहिए।

प्र० — आज तो बहुत-से आदमी अन्त्यज-शाला आदि कामोंमें लगे हुए हैं।

उ० — मै तो ऐसे सत्याग्रहीसे पूछूँगा कि उसने बालकोंको किस हदतक सत्याग्रहकी शिक्षा दी है, वह बालकोंके साथ कितना घुल-मिल सका है? और यदि मैं लड़कोसे पूछूँ कि यह कौन है तो उन्हें कहना चाहिए कि हम तो इन शिक्षकको पिताके रूपमें ही मानते हैं।

आपमे सत्याग्रही डाक्टर हैं। सत्याग्रही डाक्टर कैसा होना चाहिए, यह मैं बतलाता हूँ। वह गरीबको पहला स्थान दे, मेरे जैसे और दूसरे लोगोका — जिन्हें जब चाहिए तब डाक्टर मिल जाते है — खयाल पीछे करे। गरीबोको देखकर पूछे कि देखो भाई तुम्हारे दाँत गिर गये हैं, क्या तुम्हें नकली दाँत चाहिए? उसे यह नहीं सोचना चाहिए कि कोई खराब दाँतोंवाला नही मिलता, अब मेरा धन्धा कैसे चलेगा? सत्याग्रही डाक्टरकी विस्तृत व्याख्या 'हिन्द स्वराज्य'में[2] देख लेना। सत्याग्रही डाक्टर अपने धन्धेसे आजीविका पैदा करनेका तो विचार ही न करे। डा० वानलेसने हजारों आदमियोंके ऑपरेशन किये, उनकी संस्थाको लोग हजारों रुपये दे जाते हैं, मगर वे उसमें से अपने लिए एक कौड़ी नहीं रखते। सैम हिगिनबॉटम कृषि-विशेषज्ञके रूपमें सिन्धियाके पास थे। उन्हें कृषिके विषयमें केवल सलाह देनेके लिए ४,००० रुपये महीना मिलते थे। पर क्या उसमें से एक कौड़ी भी उन्होंने अपने व्यक्तिगत कामके लिए ली थी? हाँ, हमारे यहाँ भी चन्दूलाल डाक्टर[3] हैं, वे भी यही करते हैं। वे अपने काममें तो माहिर है ही किन्तु अपने लिए एक कौड़ी नहीं लेते और गरीब आदमी उनतक आसानीसे पहुँच सकता है।

१. यह और इसके बादके प्रश्न "सत्याग्रह-दल" के युवकों द्वारा पूछे गये थे।

२. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ३३-३४।

३. चन्दूलाल देसाई, दन्त-चिकित्सक तथा गुजरातके कांग्रेसी कार्यकर्ता।

सत्याग्रही निर्मल भावसे साधना करे, अपने कामका निश्चय करके उसीमें लगा रहे। अगर किसी गलत चीजको भी उसने एक बार निष्ठापूर्वक सत्य मान लिया हो तो वह उसीमें लगा रहे और इसीसे उसकी अनन्य श्रद्धाका मूल्य आँका जायेगा। तुलसीदासने कहा है :

रजत सीप महँ भास जिमि, यथा भानुकर वारि।
जदपि मृषा तिहुं काल सोई, भ्रम न सके कोउ टारि।।

अगर हम जगतको सत्य मानकर चले तो फिर हम जगतके हितमें ही लगे रहेंगे। इसीमें कल्याण है।

प्र० — मान लीजिए कि "अमुक" राज्यकी स्थिति इस हदतक खराब है कि वहाँ सत्याग्रह करने लायक स्थिति पैदा हो गई है, तो क्या हम वहाँ अपना डेरा डाल सकते हैं?

उ० — नहीं। बाहर रहकर ही आपको खूब बलवान बनना है।

बाहर रहकर ही "अमुक" राज्यके जनमतको तैयार करना है। जब आप देखें कि आपमें बल आ गया है और "अमुक" राज्यमें कोई खामी है और वहाँ किसी विभीषणके मिल जानेकी आशा है, तब आप सत्याग्रह-दल लेकर उस राज्यपर चढ़ाई करें। यह चढाई करते हुए भी यह याद रखना चाहिए कि जिस राजाकी खराब नीतिके कारण चढ़ाई की जा रही है, उस राजाके प्रति आप प्रेम रखें। जब यह सब बातें हों तभी वहाँ सत्याग्रह दलकी छावनी पड़ सकती है। इस बीच आप "अमुक" राज्यके लोगोंको समझा सकते है। वहाँसे आनेवाले लोगोको आप उनकी अधोगतिसे परिचित करायें और उन्हें जाग्रत करें। वहाँ अगर अपना कोई सगा-सम्बन्धी हो, और उसके यहाँ विवाह या ऐसा ही कोई दूसरा शुभ कार्य हो तो भी वहाँ कदापि नही जाना चाहिए। इस तरह उस राज्यके लोगोंको बहिष्कारके द्वारा शिक्षा दीजिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २९-१-१९२८

३९४. पत्र : वी० एस० भास्करनको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
२९ जनवरी, १९२८

प्रिय भास्करन,

मुझे तुम्हारा तार और पत्र मिले। मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि इस्तीफा देनेमें तुमने जल्दबाजीसे काम लिया है। तुम खादी सेवामें देशकी सेवा करनेके लिए दाखिल हुए थे, किसीको खुश करनेके लिए नहीं, और किसी अच्छे कार्यके लिए किसी संस्थामें शामिल होनेवाले व्यक्तिको केवल इसलिए उसे नहीं छोड़ना चाहिए कि व्यक्तिगत रूपसे उसके विरुद्ध अन्याय हुआ है अथवा उसे ऐसा लगता है कि हुआ है। एक सच्चा ईमानदार व्यक्ति जिस संस्थामें है, उसे अपनी मानेगा और इसलिए अपने अधिकारोंपर आग्रह किये बिना अपने दायित्वोंको निभायेगा।

अगर कोई अन्याय हुआ है तो तुम्हें श्री राजगोपालाचारीसे उसकी चर्चा करनी चाहिए। तुम चूंकि ऐसा मानते हो कि वहाँ तुम्हारे साथ उचित व्यवहार नहीं होता, इसीलिए तुम्हारे आश्रमकी ओर भागनेका मैं समर्थन नहीं कर सकता। अगर अभी पुनर्विचार करनेकी कोई गुंजाइश हो तो मैं चाहूँगा कि तुम अपनी स्थितिपर फिरसे विचार करो।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजी (एस० एन० १३०५७) की फोटो-नकलसे।

३९५. तार : पंजाब कांग्रेस कमेटी, लाहौरको[1]

३० जनवरी, १९२८

महासचिव
पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी
लाहौर

आशा है प्रयत्न बिलकुल सफल होंगे।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, १-२-१९२८

१. यह तार साइमन कमीशनका बहिष्कार और उसके विरोधमें हड़ताल करनेके सम्बन्धमें भेजा गया था।

३९६. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

३० जनवरी, १९२८

प्रिय सतीश बाबू,

मुझे अब आपका वक्तव्य मिल गया है और मैंने उसे पढ़ लिया है। यह काफी सही है। मुझे एक या दो चीजोंके बारेमें सन्देह है। आपने इसपर हस्ताक्षर किये हैं। क्या यह मूल प्रति है? अथवा यह किसी अखबारको भेजे गये वक्तव्यकी प्रति है। मैं इसे 'यंग इंडिया' में नहीं छापूंगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५८५) की फोटो-नकलसे।

३९७. पत्र : रमणीकलाल मोदीको

[३० जनवरी, १९२८][1]

चि० रमणीकलाल,

यह ठीक है कि छगनलाल अस्वस्थ है; किन्तु मुझे इस बातका पता अभी-अभी तुम्हारे पत्रसे ही चला। कल दोपहर बाद ४ बजे बैठक रखी जा सकती है। मैंने ३ से ४ बजेका समय अनसूयाबहनको दे रखा है। शामको ७-३० बजे भी बैठक रखी जा सकती है। मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं आज नियमावली[2] तैयार करनेका काम हाथमें ले सकूंगा। फिर भी जल्दी करूँगा।

बापू

गुजराती (एस० एन० १४५७८) की फोटो-नकलसे।

३९८. पत्र : डी० एन० बनर्जीको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
३१ जनवरी, १९२८

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[3] मिला। यदि आप अपने दिमागमें अहिंसाके बारेमें बिलकुल स्पष्ट हैं तो आपका कर्त्तव्य है कि आप जजके सामने वैसा वक्तव्य दें और गवाही देनेसे

१. रमणीकलालके ३० जनवरी १९२८ के पत्रके उत्तरमें; उन्होंने गांधीजीसे आश्रम-नियमावलीका मसौदा तैयार कर देने तथा उसपर विचार-विमर्शके लिए ३१ जनवरीको बैठक रखनेका सुझाव दिया था। पत्रोंका यह आदान-प्रदान पत्र-वाहकके जरिये इसी दिन हाथों-हाथ हुआ होगा।

२. नियमावलीके लिए देखिए खण्ड ३६, "सत्याग्रह आश्रम", १४-६-१९२८।

३. श्री बनर्जीने अपने २३-१-१९२८ के पत्रमें गांधीजीसे पूछा था कि उन्हें एक फौजदारीके मामलेमें गवाही देनी चाहिए या नहीं।

इनकार करके खुशी-खुशी परिणाम भोगें। आपको मानना चाहिए कि दण्ड-विधान सम्बन्धी निर्णय देनेवाले जजका यह कर्त्तव्य होगा कि जो लोग अपने देशके कानूनोंको नहीं मानते, उन्हें दण्डित करे। और इस मामलेमें सविनय अवज्ञाका भी प्रश्न नहीं आता क्योंकि प्रश्नोंका उत्तर न देनेवाले गवाहोंको दण्ड देनेका कानून तो स्वराज्यके बाद भी लागू किया जायेगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत डी० एन० बनर्जी
९४, बड़ादेव
बनारस सिटी

अंग्रेजी (एस० एन० १३०५८) की फोटो-नकलसे।

३९९. पत्र : एलिजाबेथ नडसेनको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
३१ जनवरी, १९२८

प्रिय कुमारी नडसेन,

आपका पत्र मुझे मिला। मैं कोई जल-चिकित्सालय नहीं चला रहा हूँ। मैं कुछ लोगोंको आश्रममें कूनेकी पद्धतिसे स्नान कराता हूँ, बस। यदि आप आ सकती हों तो आश्रम आजाइए। आपके आनेसे खुशी होगी, और आप यहाँ कुछ बहनों तथा पुरुषोंको भी मालिशकी शिक्षा देंगी। अवश्य, आपको रहने-खानेका कोई खर्चा नहीं देना होगा, और आप जितने दिन चाहें ठहर सकेंगी। यहाँ जीवन बहुत सादा है, उससे भी ज्यादा शायद कठोर है, लेकिन मैं जानता हूँ कि उससे आपको कोई फर्क नहीं पड़ता।

हृदयसे आपका,

कुमारी एलिजाबेथ नडसेन
अडेयार
मद्रास

अंग्रेजी (एस० एन० १३०५९) की फोटो-नकलसे।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

ब्राह्मण-अब्राह्मण प्रश्न[1]

[प्रश्नोत्तरी]

दक्षिण भारतमें गांधीजीकी यात्राके दौरान अनेक स्थानोंपर अब्राह्मण मित्रोंने गांधीजीसे भेंट की और उनके साथ ब्राह्मण-अब्राह्मण समस्याके विभिन्न पहलुओंपर विचार-विमर्श किया। अक्सर विभिन्न स्थानोपर एक ही जैसे प्रश्न पूछे जाते थे किन्तु उनके उत्तर हर स्थानकी श्रोता-मण्डलीकी ग्राह्य-शक्तिको देखते हुए संक्षेप या विस्तारसे दिये जाते थे। मैंने उन सब प्रश्नों और उत्तरोंको एक जगह इकट्ठा करके उन्हें एक प्रश्नोत्तरीके रूपमें प्रस्तुत किया है। इसमें तंजौर, चेट्टिनाड, विरुधुनगर और तिन्नेवेल्लीमें हुई बातचीत शामिल है। मदुरैमें हुई चर्चाके समय मैं उपस्थित नहीं था, लेकिन मैं समझता हूँ कि इस संकलित चर्चामें वे विषय भी आ जायेंगे जिनपर वहाँ विचार किया गया होगा। इस प्रश्नपर कडुलोर, तंजौर और कोयम्बटूरमें सार्वजनिक सभाओंमें जो-कुछ कहा गया, उन्हें मैंने छोड़ दिया है क्योंकि उन्हें मैं इन पृष्ठोंमें पहले ही दे चुका हूँ, और उन चर्चाओंको भी मैंने छोड दिया है जिनका सार-संक्षेप पहले ही दिया जा चुका है, जैसे कि ऊँच-नीचके सवालपर तिरुपुरमें हुई चर्चा।

—महादेव देसाई

प्रश्नको स्पष्ट करो

गांधीजी : मैं चाहता हूँ कि आप अपनी स्थिति मेरे सामने स्पष्ट करें क्योंकि मैं यह सुनना नहीं चाहता कि मै आपके दृष्टिकोणको समझना नही चाहता या उसे सहानुभूतिके साथ देखनेसे इनकार करता हूँ। मेरे दिमागपर जो छाप है वह यह है कि इस आन्दोलनका वास्तविक कारण राजनीतिक है।

अब्राह्मण मित्र : यह आन्दोलन अपने राजनीतिक पक्षके प्रतिपादकोंसे भी पुराना है। इसका सामाजिक और धार्मिक पक्ष भी है।

एक ईसाई मित्र : जस्टिस पार्टीके उत्थानका कारण यह धारणा है कि ब्राह्मणोंमें एकाधिकारकी मनोवृत्ति है और इसलिए उनपर भरोसा नही किया जा सकता। मै केवल आजके दक्षिण भारतीय ब्राह्मणोंकी बात ही कर रहा हूँ।

[यहाँ बहुत जल्दी-जल्दी सवाल और जवाब हुए। मै केवल गांधीजीके उत्तरोंका ही सारांश दे रहा हूँ।—महादेव देसाई]

१ देखिए "भाषण: तंजौरमें", १६-९-१९२७।

गांधीजी : लेकिन इस प्रश्नपर विचार करते समय क्या आपको उत्तर भारतमें ब्राह्मणवादने जो दिशा अपनाई है, उसपर विचार नहीं करना चाहिए? उत्तर भारतमें ब्राह्मणोंका जो भी दर्जा है वह उन्हें अब्राह्मणोंने प्रदान किया है। उसका अपना कोई स्वतन्त्र दर्जा नहीं है। तथ्य तो यह है कि उत्तर और पश्चिम भारतमें इस बातका विचार किया ही नहीं जाता कि कोई नेता विशेष ब्राह्मण है अथवा अब्राह्मण है, बल्कि यह देखा जाता है कि वह नेतृत्व कर सकता है या नहीं। पंजाबमें लालाजी, जो अब्राह्मण हैं, वहाँके सर्वोच्च नेता हैं। संयुक्त प्रान्तमें मालवीयजी हैं जो कि ब्राह्मण हैं। बंगालमें सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, जो ब्राह्मण थे, उनका अब्राह्मणों द्वारा भी उतना ही आदर किया जाता था जितना कि ब्राह्मणों द्वारा। गुजरातमें अब्राह्मण पटेल-बन्धुओंका ब्राह्मण भी उतना ही सम्मान करते हैं जितना अब्राह्मण लोग।

दक्षिण भारतमें दिखता है कि आपने हिन्दू-धर्मको न केवल दो शिविरोंमें विभाजित कर दिया है बल्कि भारतको ही ब्राह्मणों और अब्राह्मणोंमें विभाजित कर दिया है, और अब्राह्मणोंमें मुसलमान और ईसाई भी शामिल हैं। अब, मैं चाहता हूँ कि आपके मनमें अपने ही उद्देश्यों और आदर्शोंकी एक सुस्पष्ट और ठोस धारणा हो।

अगर यह मान लूँ कि आपका उद्देश्य केवल राजनीतिक है, अर्थात् शक्ति और सत्तावाले स्थानोंपर ब्राह्मणोंके एकाधिकारको नष्ट करना है, तो शायद मैं अब्राह्मण शब्दकी आपकी सर्व संग्राहक परिभाषाको समझ सकता हूँ, हालाँकि यहाँ भी मैं बहुतसी कठिनाइयाँ देखता हूँ।

किन्तु यदि आपका उद्देश्य सुधार करना भी है, या धार्मिक और सामाजिक निर्योग्यताओंको समाप्त करना है तो वैसी हालतमें अब्राह्मणकी आपकी वह परिभाषा मेरी समझमें नही आती जिसमें गैर-हिन्दू भी शामिल माने जाते हों। उदाहरणके लिए अस्पृश्यता या मन्दिर-प्रवेशका सवाल है। अच्छीसे-अच्छी नीयत हो तो भी कोई गैर-हिन्दू इस सवालमें कारगर ढंगसे हस्तक्षेप कैसे कर सकता है? क्या कोई गैर-मुसलमान इस्लाम धर्ममें सुधार करवा सकता है? मुझे भय है कि धर्मके मामलेमें अहिन्दुओंका प्रत्येक हस्तक्षेप गम्भीर सन्देहकी निगाहसे देखा जायेगा।

इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप इस सवालको जितना स्पष्ट कर सकें, कर लें। जहाँतक आपकी निर्योग्यताओंका सवाल है, उनके बारेमें कोई सन्देह नही हो सकता। वे हैं, और उन्हें दूर करनेके लिए आपको डट कर संघर्ष करना होगा। लेकिन निर्योग्यताओंके बारेमें भी किसी भ्रममें न रहिए। रही बात सत्ता और पदोंकी, तो अगर मेरे वशकी बात होती तो मैं सभी ब्राह्मणोंको जोरदार सलाह देता कि वे उन्हें आपकी खातिर छोड़ दें; लेकिन जब आप खादी-सेवामें ब्राह्मणोंके एकाधिकारका आरोप लगाते हैं तब मैं उसे बिल्कुल नहीं समझ पाता। यह सारा आन्दोलन मुख्यतः अब्राह्मण जनताके हितोंके लिए है, एक तरहसे अखिल भारतीय चरखा संघकी कार्यकारिणीके सभी सदस्य अब्राह्मण हैं। दक्षिण भारतमें क्या आप ईमानदारीके साथ यह बात कह सकते हैं कि जो ब्राह्मण खादी सेवामें हैं वे उसमें आर्थिक लाभके लिए शामिल हुए हैं? और जहाँतक स्वैच्छिक अवैतनिक सेवाका सवाल है, क्या एकाधिकारका आरोप

लगाना किसी दृष्टिसे उचित है? लेकिन इसमें भी, मुझे ऐसे अब्राह्मण कार्यकर्त्ता दीजिए जो मेरी शर्तें पूरी करते हों, और मैं वचन देता हूँ कि सारे ब्राह्मण अपनी जगहें खाली कर देंगे। जहाँतक मैं जानता हूँ, इनमेंसे अधिकांश ब्राह्मण काफी आत्मत्याग करके इन जगहोंपर काम कर रहे हैं।

वर्णका नियम

प्रश्न: वर्ण धर्मपर आपका जो आग्रह है उसे हम नहीं समझ पाते। क्या आप वर्तमान जाति प्रणालीको उचित कह सकते है? वर्णकी आपकी व्याख्या क्या है?

उत्तर: वर्णके अर्थ हैं मनुष्यके धन्धे या पेशेके चयनका पूर्व-निर्धारण। वर्णका नियम यह है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी आजीविका कमानेके लिए अपने बाप-दादोंके पेशेको ही अपनायेगा। प्रत्येक बच्चा स्वभावत: अपने पिताके ढंगपर चलता है, या अपने पिताके पेशेको चुनता है। अत: वर्ण एक प्रकारसे आनुवंशिकताका नियम है। वर्ण कोई ऐसी चीज नहीं है जो हिन्दुओंपर थोप दी गई है, बल्कि जो लोग हिन्दुओंके कल्याणके न्यासी थे, उन लोगोंने हिन्दुओंके लिए इस नियमकी खोज की थी। यह नियम मानव-रचित नहीं है बल्कि प्रकृतिका एक अपरिवर्तनीय नियम है — न्यूटनके गुरुत्वाकर्षणके नियमके समान ही सदा उपस्थित और सदा कार्यरत एक प्रवृत्तिकी उद्घोषणा है। जिस प्रकार खोजसे पहले भी गुरुत्वाकर्षणका अस्तित्व था उसी प्रकार वर्ण-नियमका भी था। इसकी खोज हिन्दुओंने ही सर्वप्रथम की। प्रकृतिके अमुक नियमोंकी खोज करके और उन नियमोंको लागू करके पश्चिमी देशोंके लोगोंने आसानीसे अपनी भौतिक सम्पत्ति बढ़ा ली है। इसी प्रकार इस अप्रतिरोध्य सामाजिक प्रवृत्तिकी खोजके जरिये हिन्दू लोग आध्यात्मिकताके क्षेत्रमें वह उपलब्धि प्राप्त कर सके हैं जो संसारका अन्य कोई राष्ट्र नहीं कर सका है।

वर्णका जातिसे कोई वास्ता नहीं है। अस्पृश्यताकी भाँति ही जाति भी हिन्दू धर्ममें एक अपवृद्धि है। जिन अपवृद्धियोंपर आज आग्रह किया जाता है वे हिन्दू धर्मका अंग कभी नहीं थीं। लेकिन क्या आपको ईसाई-धर्म और इस्लाममें भी इसी प्रकारकी अपवृद्धि नहीं मिलती?

इन अपवृद्धियोंके विरुद्ध जितना मन चाहे उतना संघर्ष कीजिए। वर्णकी खाल ओढ़ कर घूमनेवाले जाति-प्रथाके दानवका नाश कीजिए। वर्णकी इसी विडम्बनाने हिन्दू-धर्म और भारतका पतन किया है। हमारी आर्थिक और आध्यात्मिक दुर्दशाका मुख्य कारण ही यह है कि हमने वर्ण-धर्मका पालन करना बन्द कर दिया है। बेरोजगारी और गरीबीका भी यह एक कारण है, और अस्पृश्यता तथा लोगों द्वारा हिन्दू-धर्मको छोड़नेकी घटनाओंके लिए यही जिम्मेदार है।

मूल वर्ण-धर्मने पतित होकर आज जो दानवी रूप प्राप्त कर लिया है और जो दानवी प्रथाएँ चल पड़ी है, उनसे अवश्य लड़िए, लेकिन मूल वर्ण-धर्मसे मत लड़िए।

प्रश्न: वर्ण कितने है?

उत्तर: वर्ण चार है, हालाँकि स्वयं वर्णमें इस प्रकारका कोई अलोचनीय विभाजन अन्तर्निष्ठ नहीं है। निरन्तर प्रयोग और अनुसन्धान करनेके बाद ऋषियोंने इस चार-सूत्री वर्गीकरण अथवा जीविकोपार्जनके चार तरीकोंका निर्धारण किया।

प्रश्न: अतः तर्ककी दृष्टिसे जितने धन्धे हैं उतने ही वर्ण हैं?

उत्तर: यह आवश्यक नहीं है। विभिन्न धन्धोंको आसानीसे चार मुख्य वर्गोंके अन्तर्गत रखा जा सकता है। ये हैं: अध्यापन, रक्षा, धनका उत्पादन तथा शारीरिक सेवाएँ। जहाँतक संसारका प्रश्न है, प्रधान धन्धा धनका उत्पादन करना है। जिस प्रकार सभी आश्रमोंमें गृहस्थाश्रम प्रधान है, चारों वर्णोंमें वैश्य वर्ण मूल आधार है। यदि धन और सम्पत्ति न हो तो रक्षककी आवश्यकता नहीं होती। प्रथम दो और अन्तिम वर्णोंकी आवश्यकता तीसरे वर्णके कारण ही है। प्रथम वर्णके लोगोंकी संख्या बहुत कम होगी क्योंकि उसमें कठोर अनुशासनकी अपेक्षा की जाती है। दूसरे वर्णके लोगोंकी संख्या एक सुव्यवस्थित समाजमें कम ही होगी और इसी प्रकार चौथे वर्णके लोगोंकी भी कम होगी।

प्रश्न: यदि कोई व्यक्ति ऐसा धन्धा करता है जो जन्मतः उसका नहीं है, तो वह व्यक्ति किस वर्ण का होगा?

उत्तर: हिन्दू विश्वासके अनुसार वह व्यक्ति जिस वर्णमें जन्मा है उसी वर्णका है किन्तु उस वर्ण-धर्मका पालन न करनेके कारण वह अपने प्रति हिंसा करता है और पतित हो जाता है।

प्रश्न: कोई शूद्र ऐसा काम करता है जो जन्मतः ब्राह्मणका कार्य है। क्या वह पतित हो जाता है?

उत्तर: किसी शूद्रको ज्ञान प्राप्त करनेका उतना ही अधिकार है जितना कि एक ब्राह्मणको, किन्तु यदि वह अध्यापन कार्य द्वारा अपनी आजीविका चलानेका प्रयत्न करता है तो वह अपने पदसे च्युत हो जाता है। प्राचीन कालमें स्वचालित व्यापार-संगठन थे, और किसी धन्धेके सभी सदस्योंकी सहायता करना एक अलिखित कानून था। सौ साल पहले किसी बढ़ईका लड़का वकील बननेकी इच्छा नहीं करता था। आज वह करता है, क्योंकि वह देखता है कि यह धन्धा धन चुरानेका सबसे आसान तरीका है। एक वकील सोचता है कि अपनी बुद्धिके उपयोगके लिए उसे १५००० रुपयेका शुल्क लेना चाहिए और हकीम साहब जैसा एक चिकित्सक सोचता है कि चिकित्सा सम्बन्धी सलाह देनेके लिए उसे १००० रुपये प्रतिदिन लेना चाहिए।

प्रश्न: लेकिन क्या किसी व्यक्तिको अपना मन-पसन्द धन्धा नहीं करना चाहिए?

उत्तर: लेकिन किसी व्यक्तिका मनचाहा धन्धा वही होना चाहिए जो उसके बाप-दादोंका धन्धा है, उस धन्धेको चुननेमें कोई बुराई नहीं है, उल्टे यह उदात्त कार्य है। आज हम जिन्हें देखते हैं वे सनकी हैं, और इसी कारण हिंसा है, और समाजका विघटन हो रहा है। हमें सतही दृष्टान्तोंसे अपने आपको चकित नहीं होने देना चाहिए। बढ़इयोंके ऐसे हजारों लड़के है जो अपने बापका धन्धा कर रहे हैं, लेकिन ऐसे सौ बढई-पुत्र भी नहीं हैं जो वकालत करते हों। पिछले जमानेमें दूसरोंके धन्धोंमें दखल देने और धन-संग्रह करनेकी महत्वाकांक्षा लोगोंमें नही थी। उदाहरणके लिए, सिसेरोके जमानेमें वकालतका धन्धा अवैतनिक धन्धा था। अगर धनके लिए नही

वल्कि सेवाके लिए कोई कुशाग्रवुद्धि वढ़ई वकील वन जाये तो यह विलकुल ठीक होगा। वादमें यश और धनकी कामना पैदा हो गई। वैद्य लोग समाजकी सेवा करते थे और जो-कुछ उन्हें समाजसे मिलता था उससे वे संतुष्ट रहते थे। किन्तु अव वे व्यापारी वन गये है, वल्कि समाजके लिए एक खतरा वन गये है। जव भावना शुद्ध सेवा करनेकी हुआ करती थी उस समय वैद्यक और वकालतके धन्धे उदार धन्धे कहलाते थे, जो कि सर्वथा ठीक था।

प्रश्न: यह सव तो आदर्श परिस्थितियोंकी वात है। लेकिन आज जव हर आदमी आमदनीवाले धन्धोंके पीछे दौड़ रहा है, तव आप क्या सुझायेंगे?

उत्तर: यह तो अतिरंजित सामान्यीकरण है। स्कूलो और कालेजोमें पढ़नेवाले लड़कों-की कुल संख्या जोडिए और फिर उन लडकोका प्रतिशत निकालिए जो ऐसे धन्धोमें जाते है जिनमें पाण्डित्यकी आवश्यकता होती है। हर आदमी लुटेरा नहीं हो सकता। आज तो लुटेरा वननेके लिए आन्दोलन होता प्रतीत होता है। कितने लोग वकील और सरकारी मुलाजिम वन सकते है? जो लोग वैध रूपसे धन कमानेका कार्य कर सकते है वे वैश्य है। वहाँ भी, जव उनका धन्धा लूट-खसोटका रूप धारण कर ले तो वह घृण्य है। संसारमें लाखो लखपती नही हो सकते।

प्रश्न: जहाँतक तमिलनाडुका प्रश्न है, सभी अब्राह्मण ऐसे धन्धोंको अपनाना चाहते है जो उनके वाप-दादोंका धन्धा नही है।

उत्तर: दो करोड़ २० लाख तमिल लोगोंकी तरफसे वोलनेके आपके दावेको मै अस्वीकार करता हूँ। मै आपको एक मन्त्र देता हूँ: "हम कुछ ऐसी चीज वननेकी कोशिश न करें जो अन्य लोगोंके लिए सम्भव न हो"। और इस प्रस्तावको आप मेरे द्वारा परिभाषित वर्णके आधारपर ही कार्यान्वित कर सकते है।

प्रश्न: आप कहते रहे है कि वर्ण-धर्म हमारी सांसारिक महत्वाकाक्षाओका दमन करता है। सो कैसे?

उत्तर: यदि मै अपने पिताके धंधेको अपनाऊँ तो मुझे उसे सीखनेके लिए किसी स्कूलमें जानेकी भी आवश्यकता नहीं है। और मै अपनी मानसिक शक्ति पूरी तरह आध्यात्मिक खोजमें लगा सकता हूँ, क्योकि मेरा धन, वल्कि मेरी जीविका तो सुनिश्चित है। प्रसन्नता और वास्तविक धार्मिक गतिविधियोंकी सुरक्षा का सर्वोत्तम साधन वर्ण है। अन्य व्यवसायोंमें अपनी शक्ति केन्द्रित करनेके मतलव है कि मै आत्मानुभव करनेकी अपनी शक्तिका क्रय करता हूँ या अपनी आत्माको भौतिक सुख-सुविधाके लिए वेचता हूँ।

प्रश्न: आप आध्यात्मिक कार्योंके लिए शक्तिको मुक्त करनेकी वात करते है। आज जो लोग अपने वाप-दादोंका धन्धा करते है उनमें कोई आध्यात्मिक संस्कृति है ही नहीं — उनका वर्ण ही उन्हें इसके अयोग्य वना देता है।

उत्तर: हम वर्णकी विकृत धारणा लेकर वात कर रहे है। जव वर्णका वास्तवमें आचरण होता था उस समय हमारे पास आध्यात्मिक प्रशिक्षणके लिए काफी फुर्सत होती थी। आज भी, आप दूर गाँवोंमें जाइए और देखिए कि शहरी लोगोंके

मुकाबले गाँववासियोंमें कैसी आध्यात्मिक संस्कृति है। शहरी लोग आत्मसंयम जानते ही नहीं।

लेकिन आपने इस युगके सबसे बड़े अनिष्टको पहचान लिया है। हमें कुछ ऐसी चीज बननेकी कोशिश नही करनी चाहिए जो दूसरे लोग न बन सकें। यदि प्रत्येक व्यक्ति इच्छा होनेपर 'गीता' का अध्ययन न कर सकता हो तो मैं 'गीता' का अध्ययन भी नहीं करूँगा। इसीलिए धन कमानेके लिए अंग्रेजी सीखनेकी प्रवृत्तिके खिलाफ मेरी आत्मा विद्रोह करती है। हमें अपने जीवनको इस प्रकार पुनर्व्यवस्थित करना है ताकि आज जो फुर्सत हममें से चन्द लोगोंको ही है वह फुर्सत करोड़ो लोगोंको मिल सके, और ऐसा हम तबतक नहीं कर सकते जबतक कि हम वर्णधर्मका पालन न करें।

प्रश्न: यदि हम उसी प्रश्नपर बार-बार लौटें तो आप कृपया हमें क्षमा करेंगे। हम उसे अच्छी तरह समझ लेना चाहते हैं जो आदमी अलग-अलग समयपर अलग-अलग धन्धे करता हो तो उसका वर्ण क्या हुआ?

उत्तर: जबतक वह व्यक्ति अपने पिताके धन्धेको करता हुआ अपनी जीविका कमाता है तबतक उसके वर्णमें कोई फर्क नहीं पड़ता। वह जो काम चाहे और जबतक चाहे तबतक कर सकता है, बशर्ते कि वह उसे सेवा-भावनासे करे। लेकिन जो व्यक्ति धन-लाभके उद्देश्यसे समय-समयपर अपना धन्धा बदलता है वह अपनेको पतित करता है और वर्ण-च्युत हो जाता है।

प्रश्न: किसी शूद्रमें ब्राह्मणके सारे गुण हों, फिर भी वह ब्राह्मण नहीं कहला सकता?

उत्तर: इस जन्ममें उसे ब्राह्मण नहीं कहा जायेगा। और यह उसके लिए अच्छी बात है कि जिस वर्णमें उसका जन्म नहीं हुआ है उस वर्णको वह अनधिकारपूर्वक न अपनाये। यह सच्ची विनम्रताका चिह्न है।

प्रश्न: क्या आप मानते हैं कि वर्ण-गुण जन्मतः प्राप्त होते है, अर्जित नही किये जाते?

उत्तर: उन्हें अर्जित किया जा सकता है। जन्मतः प्राप्त गुणोंको और मजबूत किया जा सकता है और नये गुणोंका विकास किया जा सकता है। लेकिन हमें धन-लाभ के लिए नये रास्तोंकी खोज करनेकी जरूरत नहीं है, करना भी नहीं चाहिए। यदि हमारे बाप-दादोंके धन्धे शुद्ध हैं तो हमें उन धन्धोंसे ही सन्तुष्ट रहना चाहिए।

प्रश्न: क्या आपको ऐसा आदमी नहीं मिलता जिसके गुण उसके पारिवारिक संस्कारोंसे भिन्न हैं?

उत्तर: यह एक मुश्किल प्रश्न है। हम अपने सारे पूर्वचरित्रको नहीं जानते। लेकिन जिस वर्ण-धर्मको मैंने आपको समझानेकी कोशिश की है उसे समझनेके लिए आपको और मुझे इस सवालमें और ज्यादा गहरे जानेकी जरूरत नहीं है। यदि मेरे पिता एक व्यापारी है और मुझमें एक सैनिकके गुण है, तो मैं बिना कोई पुरस्कार लिए अपने देशकी सेवा एक सैनिकके रूपमें कर सकता हूँ, लेकिन अपनी जीविका अर्जित करनेके लिए मुझे व्यापारसे ही सन्तुष्ट होना चाहिए।

प्रश्न: जातिका जो रूप हम आज देखते हैं वह अन्तर्जातीय भोज तथा अन्तर्जातीय विवाहके निषेधमें ही सीमित है। तब क्या वर्णको कायम रखनेका अर्थ इन निषेधोंको बरकरार रखना है?

उत्तर: नहीं, बिलकुल नहीं। वर्णके शुद्धतम रूपमें निषेधका कोई स्थान नहीं है।

प्रश्न: क्या इन निषेधोंको छोड़ा जा सकता है?

उत्तर: छोड़ा जा सकता है, और अन्य वर्णोंमें विवाह करके भी वर्ण संरक्षित रहता है।

प्रश्न: वैसी स्थितिमें माँके वर्णपर प्रभाव पड़ेगा।

उत्तर: पत्नी अपने पतिके वर्णका पालन करती है।

प्रश्न: जिस वर्ण-धर्मका आपने प्रतिपादन किया है, क्या वह हमारे शास्त्रोंमें भी मिलता है, अथवा वह आपकी अपनी कल्पना है?

उत्तर: मेरी अपनी कल्पना नहीं है। मैंने इसे 'भगवद्गीता' से लिया है।

प्रश्न: 'मनुस्मृति' में जो सिद्धान्त दिया गया है क्या आप उसका समर्थन करते हैं?

उत्तर: सिद्धान्त उसमें है। लेकिन उसका व्यवहृत रूप मुझे पूरी तरह जमता नहीं। इस ग्रन्थके कई अंश हैं जिनपर गम्भीर आपत्तियाँ हो सकती हैं। मैं आशा करता हूँ कि वे बादमें उसमें जोड़ दिये गये थे।

प्रश्न: क्या 'मनुस्मृति' में बहुत-सी अन्यायपूर्ण बातें कही गई हैं?

उत्तर: हाँ, उसमें स्त्रियों और तथाकथित नीच 'जातियों' के बारेमें बहुत अन्याय-पूर्ण बातें हैं। इसलिए तथाकथित शास्त्रोंको बहुत सावधानीके साथ पढ़नेकी आवश्यकता है।

प्रश्न: लेकिन आप 'भगवद्गीता' का अनुसरण करते हैं। उसमें कहा गया है कि वर्ण गुण और कर्मके अनुसार होता है। आप इसमें जन्म कहाँसे ले आये?

उत्तर: मैं 'भगवद्गीता' को इसलिए प्रामाणिक मानता हूँ क्योंकि यही एकमात्र पुस्तक है जिसमें मुझे कोई ऐसी बात नहीं मिलती जिसपर वितण्डा हो सके। इसने सिद्धान्त प्रस्तुत कर दिये हैं और इन सिद्धान्तोंको लागू करनेकी बात आपपर छोड़ दी है। 'गीता' यह अवश्य कहती है कि वर्ण गुण और कर्मके अनुसार होता है, लेकिन गुण और कर्म जन्मजात होते हैं। भगवान कृष्णने कहा है कि सभी वर्णोंकी सृष्टि मैंने की है — चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टम् — अर्थात् मैं समझता हूँ कि वर्ण धर्म यदि जन्मगत नहीं है तो फिर कुछ भी नहीं है।

प्रश्न: लेकिन वर्णमें श्रेष्ठता जैसी कोई चीज नहीं है?

उत्तर: नहीं, बिल्कुल नहीं, हालाँकि मैं यह अवश्य कहता हूँ कि ब्राह्मण वर्ण अन्य वर्णोंका चरम बिन्दु है, जिस प्रकार सिर शरीरका चरम बिन्दु है। इसके अर्थ हैं श्रेष्ठतर सेवा किन्तु कोई श्रेष्ठतर दर्जा नहीं। श्रेष्ठतर दर्जेका झूठा दावा करते ही वह पैरों तले रौंदनेके योग्य हो जाता है।

प्रश्न: 'कुरल' आप जानते हैं। क्या आप जानते हैं कि इस तमिल ग्रंथके रच-यिताका कहना है कि जातिका आधार जन्म नहीं है? उसके अनुसार, जन्मके समय सभी प्राणी एक समान हैं।

उत्तर : उसका यह कथन आजकी अतिरंजनाओंके उत्तरमें है। जब किसी वर्णने श्रेष्ठताका दावा किया तब उसे इस दावेके विरुद्ध अपनी आवाज उठानी पड़ी। लेकिन उसका यह कथन वर्णके जन्म-सिद्धान्तकी जड़पर प्रहार नहीं करता। वह तो एक सुधारककी भाँति असमानताकी जड़पर प्रहार करता है।

प्रश्न : वर्णका प्रचलित रूप जितना विकृत है उसे देखते क्या यह बेहतर नहीं होगा कि उसे बिलकुल छोड़ दिया जाये और बिलकुल नये ढंगसे शुरुआत की जाये?

उत्तर : हाँ, बशर्ते कि हम सृष्टिकर्त्ता होते। हम कलमकी एक लकीरसे हिन्दू प्रकृतिको नही बदल सकते। हम इस नियमको कार्यान्वित करनेका तरीका तो ढूंढ़ सकते हैं, उसे नष्ट करनेका नहीं।

प्रश्न : जब शास्त्रोंके रचयिताओंने नई स्मृतियोंकी रचना की है तो आप क्यों नहीं कर सकते?

उत्तर : काश मैं एक नई सृष्टिकी रचना कर सकता! मेरी स्थिति तब विश्वामित्रसे भी खराब होगी, और वह तो मुझसे कहीं अधिक महान थे।

प्रश्न : जबतक आप वर्णका नाश नही करते, अस्पृश्यताको नष्ट नहीं किया जा सकता।

उत्तर : मैं ऐसा नही सोचता। किन्तु यदि अस्पृश्यता-निवारणके सिलसिलेमें वर्णाश्रमका ह्रास होता हो तो मुझे कोई दुख नही होगा। किन्तु मेरी परिभाषाके वर्णका अस्पृश्यतासे क्या वास्ता है?

प्रश्न : किन्तु सुधारके विरोधी अपने समर्थनमें आपके कथन प्रस्तुत करते हैं।

उत्तर : यह तो सभी सुधारकोंके भाग्यमें होता है। स्वार्थी लोग अपने हितार्थ सुधारककी बातको गलत रूपमें प्रस्तुत करते हैं, लेकिन आप यह भी जानते हैं कि उनमें से कुछ लोग चाहते है कि मै हिन्दू-धर्म छोड़ दूं। कुछ औरोंका वश चले तो वे मुझे हिन्दू समाजमें से निकाल बाहर करें। मै वर्ण धर्मका बचाव करनेके लिए कहीं नही गया हूँ, हालाँकि अस्पृश्यताके निवारणके लिए मैं वाइकोम गया था। खादीके प्रचार, हिन्दू-मुस्लिम एकताकी स्थापना तथा अस्पृश्यताके निवारणके लिए कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्तावका मै रचयिता हूँ। ये तीनों चीजें स्वराज्यके तीन स्तम्भ हैं। लेकिन मैंने एक चौथे स्तम्भके रूपमें वर्ण-धर्मकी स्थापनाकी बात कभी नही कही है। इसलिए आप मुझपर वर्णाश्रम धर्मपर गलत जोर देनेका आरोप नहीं लगा सकते।

प्रश्न : क्या आप जानते है कि आपके बहुतसे अनुयायी आपकी शिक्षाओंको विकृत रूपमें प्रस्तुत करते हैं?

उत्तर : क्या मैं यह बात नहीं जानता? मैं जानता हूँ कि मेरे बहुतसे अनुयायी ऐसे हैं जो केवल कहने भरके अनुयायी हैं।

प्रश्न : सामाजिक संगठनपर ब्राह्मणोंका प्रभुत्व था इसलिए बौद्धधर्मको भारतसे बाहर खदेड़ दिया गया। इसी प्रकार यदि हिन्दू-धर्मसे उनका हित-साधन नहीं होता तो वे हिन्दू-धर्मको भी खदेड़ बाहर करेंगे।

उत्तर : ऐसा दुस्साहस उन्हें करने तो दीजिए। लेकिन मुझे पूरा निश्चय है कि बौद्ध धर्म भारतसे बाहर नही गया है। भारत वह देश है जिसने बुद्धकी अधिकांश भावनाको

आत्मसात् कर लिया है। बौद्ध-धर्म और बुद्धकी भावनामें अंतर मानना चाहिए, उसी प्रकार ईसाई-धर्म और ईसाकी भावनामें भी फर्क मानना चाहिए। उन्होंने बुद्धकी मुख्य शिक्षाको आत्मसात् कर लिया था इसीलिए वे बौद्धधर्मको बाहर खदेड़नेमें सफल हो सके।

प्रश्न : जिस ब्राह्मणने, बौद्ध-धर्मकी अच्छी बातोको आत्मसात् कर लिया था उसीने मन्दिरोमें अस्पृश्योको प्रवेश करनेसे रोक कर और उनके ऊपर निर्मम निर्योग्यताएँ थोपकर अत्यन्त जघन्य अपराध किया है, जो अमृतसरमें हुए अपराधसे भी ज्यादा जघन्य है।

उत्तर : आप कुछ हदतक ठीक कहते हैं। लेकिन ब्राह्मणोको दोषी ठहराकर आप गलती करते हैं। साराका सारा हिन्दू-धर्म ही इसके लिए जिम्मेदार है। वर्ण-धर्म जब विकृत हो गया तो उससे अस्पृश्यताका जन्म हुआ। इसके पीछे कोई दुष्ट मंशा नही था, किन्तु जो परिणाम हुआ वह मानव इतिहासकी एक दुखद घटना है।

प्रश्न : लेकिन जबतक आप वर्णाश्रम-धर्म शब्दका प्रयोग करेंगे तबतक उसके साथ जुड़ी हुई आजकी तमाम बुराइयाँ भी उसके साथ आयेंगी।

उत्तर : इससे हम यही सीखते हैं कि उसके साथ जुड़ी बुराइयोको नष्ट करके वर्ण-धर्मको उसके शुद्ध रूपमें प्रतिष्ठित कीजिए।

आपके लिए मेरा कार्यक्रम

प्रश्न : चारों ओर घोर अस्तव्यस्तता व्याप्त है। हम पीछेकी ओर किस प्रकार लौटेंगे ?

उत्तर : आपसे मुझे इतना ही कहना है कि बुनियादको नष्ट मत कीजिए, हम उसे शुद्ध करनेकी कोशिश करे। इसके बजाय आप एक नया धर्म देनेकी कोशिश कर रहे हैं जिसे अपनानेके लिए कोई तैयार नही है। ब्राह्मणवाद हिन्दू-धर्मका पर्याय है। इसका अर्थ यह हुआ कि हिन्दू-धर्मके लिए हमारे पास जो एकमात्र शब्द था वह था ब्राह्मणवाद अर्थात् ब्रह्म विद्या, और इसे नष्ट करनेकी कोशिशमें आप हिन्दू धर्मको नष्ट करनेकी कोशिश कर रहे हैं। ब्राह्मण यदि आपके अधिकारोका अतिक्रमण करे तो आप उसके साथ एक-एक इंचपर लड़िए, और उसे सुधारनेकी कोशिश कीजिए। लेकिन हर ब्राह्मणको गाली देनेसे कोई फायदा नही है। ब्राह्मण भी कई ढंगके हैं, एक ब्राह्मण कट्टर सुधारवादी है, दूसरा सुधारोका विरोधी है। आपको अच्छेसे-अच्छे सुधारक ब्राह्मणोको अपने पक्षमें करना चाहिए और उनकी सहायतासे अपने कार्यक्रमके रचनात्मक अगको कार्यान्वित कीजिए। इससे ब्राह्मण और अब्राह्मण, दोनोंका कल्याण होगा।

सुधार-विरोधियोसे लड़िए और उनसे कह दीजिए, 'यदि आप धन और सत्ताके पीछे भागेंगे, और यदि आप विद्वान नही हैं और हमें सच्चे धर्मकी शिक्षा नही दे सकते तो हम आपको ब्राह्मण नहीं कहेंगे।' तब उनके मनमें आपके प्रति कोई विरोधभाव नही होगा। आप सुधार करानेके लिए जोरदार आन्दोलन कीजिए, आप उन स्कूलों और मन्दिरोका बहिष्कार कीजिए जो अब्राह्मणोंके प्रति भेद बरतते हैं। आपका आग्रह हो कि पुजारियोंका चरित्र शुद्ध हो, वे विद्वान हो और उनमें सासारिक

इच्छाएँ न हों। यदि पुराने मन्दिरोंमें अस्पृश्योंके प्रवेशका निषेध हो तो आप नये मन्दिर बनवाइए।

फिर सवाल एक साथ खाने-पीनेका है। मैं किसीके साथ इस आधारपर झगड़ा नहीं करूँगा। लेकिन जिस समारोहमें दो वर्गोंके बीच भेद किया गया हो उस समारोहका मैं बहिष्कार करूँगा।

इसके अलावा, मैं अस्पृश्योंके साथ भाईचारा रखूँगा। और उनके साथ वैसा ही व्यवहार करूँगा जैसा कि सगे भाईके साथ। मैं जाति और बिरादरीकी दीवारोंको तोड़कर चूर-चूर कर दूँगा। इसीलिए जब मैं अपने लड़केका विवाह करूँगा तो मैं प्रयत्नपूर्वक दूसरी बिरादरीकी किसी लड़कीकी तलाश करूँगा। आज हम घृण्य प्रथाओंसे वास्तवमें इस तरह जकड़े हुए हैं कि आप मुझे अपनी कोई लड़की गुजरातमें बसनेके लिए नहीं देंगे और किसी गुजराती लड़कीको लाकर तमिलनाडुमें नहीं बसायेंगे।

फिर मैं अस्पृश्योंको धार्मिक शिक्षा दूँगा, हिन्दू-धर्म और नैतिकताका बुनियादी ज्ञान उन्हें दूँगा। आज वे बिलकुल जानवरों-जैसा जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मैं उन्हें निषिद्ध भोजन न करने और शुद्ध तथा स्वच्छ जीवन व्यतीत करनेके लिए समझा-बुझाकर राजी करूँगा। आप इन सवालोंको आसानीसे और व्यापक बना कर एक बड़ा रचनात्मक कार्यक्रम चला सकते हैं।

हिन्दू-धर्मने हमारे लिए क्या किया है?

प्रश्न: हम देखते हैं कि आप हिन्दू-धर्मकी दुहाई देते हैं। क्या हम जान सकते हैं कि हिन्दू-धर्मने हमारे लिए क्या किया है? क्या यह भद्दे अन्धविश्वासों और भद्दी प्रथाओंकी बपौती नहीं है?

उत्तर: मेरा खयाल था कि यह बात मैं पहले ही स्पष्ट कर चुका हूँ। वर्णाश्रम धर्म स्वयंमें संसारको हिन्दू-धर्मकी एक अनोखी देन है। हिन्दू-धर्मने हमें भयसे बचाया है। यदि हिन्दू-धर्म मेरी रक्षाको न आता तो मेरे सामने आत्महत्याके सिवा कोई रास्ता नहीं होता। मैं हिन्दू बना हुआ हूँ क्योंकि हिन्दू-धर्म एक ऐसा खमीर है जो संसारको रहने योग्य बनाता है। हिन्दू-धर्ममें से बौद्ध-धर्मका जन्म हुआ। आज हम जो देखते हैं वह शुद्ध हिन्दू-धर्म नहीं है बल्कि अक्सर वह उसकी विद्रूपिका है। अन्यथा मुझे उसके पक्षमें बोलनेकी जरूरत नहीं होती, वह स्वयं बोलता, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार यदि मैं पूर्णतः शुद्ध होता तो मुझे आपसे बोलनेकी जरूरत नहीं पड़ती। ईश्वर अपनी जिह्वासे नहीं बोलता और जिस हदतक मनुष्य ईश्वरके निकट आता जाता है उसी हदतक ईश्वर बन जाता है। हिन्दू-धर्म मुझे सिखाता है कि मेरा शरीर तो अन्दर बसनेवाली आत्माकी शक्तिपर एक सीमाके समान है।

जिस प्रकार पश्चिमके देशोंमें लोगोंने भौतिक क्षेत्रमें आश्चर्यजनक खोजें की हैं उसी प्रकार हिन्दू-धर्मने धर्म, अध्यात्म और आत्माके क्षेत्रमें और भी अधिक आश्चर्यजनक खोजें की हैं। लेकिन हमारे पास इन महान और सुन्दर खोजोंको देखनेके लिए आँखें ही नहीं हैं। पश्चिमी विज्ञानने जो प्रगति की है उससे हम चकाचौंध हो गये हैं। वास्तवमें लगभग ऐसा लगता है कि ईश्वरने बुद्धिपूर्वक भारतको इस दिशामें प्रगति करनेसे रोक दिया है ताकि वह भौतिकवादके ज्वारका प्रतिरोध

करनेका अपना विशेष दायित्व निभा सके। आखिरकार हिन्दू-धर्ममें कुछ ऐसा है जिसने उसे अबतक जीवित रखा है। इसने बैबिलोनिया, सीरिया, फारस और मिस्रकी सभ्यताओंका पतन होते देखा है। अपने चारों ओर एक नजर डालिए। कहाँ है रोम और कहाँ है यूनान? क्या आज आप गिबन द्वारा वर्णित इटलीको — या प्राचीन रोम कहें, क्योंकि रोम ही इटली था — कहीं देख सकते हैं? यूनान जाइए। विश्व-विख्यात् ऐटिक सभ्यता कहाँ है? फिर भारतमें आइए, यहाँके प्राचीनतम लेख-आलेखोंको देखिए और फिर अपने चारों ओर देखिए। आप विवश होकर कहेंगे, 'हाँ, मैं यहाँ प्राचीन भारतको अभी भी जीवित देखता हूँ।' यह सही है कि यहाँ-वहाँ गोबरके ढेर भी हैं, लेकिन उनके नीचे बहुमूल्य खजाने दबे पड़े हैं। और उसके जीवित रहनेका कारण यही है कि हिन्दू-धर्मने अपने सामने जो उद्देश्य रखा था वह भौतिक दिशामें नहीं बल्कि आध्यात्मिक दिशामें विकास करनेका था।

हिन्दू-धर्मकी अनेक देनोंमें से एक अनोखी देन है मूक प्राणियोंके साथ मनुष्यके तादात्म्यका विचार। मेरी दृष्टिमें गौ-पूजा एक महान विचार है जिसका और विस्तार किया जा सकता है। आधुनिक धर्म-परिवर्तन करनेकी प्रवृत्तिसे उसका मुक्त रहना भी मेरी दृष्टिमें एक बहुमूल्य चीज है। इसको प्रचारकी कोई आवश्यकता नहीं है। यह कहता है, 'जीवनको जियो।' अब यह मेरा काम है, आपका काम है कि हम जीवनको जियें और फिर उसका प्रभाव आनेवाले युगोंपर छोड़ जायें। अब उसने जो विभूतियाँ प्रदान की हैं उन्हें लीजिए; अपेक्षाकृत ज्यादा आधुनिक नामोंको छोड़ भी दें तो रामानुज हैं, चैतन्य हैं, रामकृष्ण हैं जिन्होंने हिन्दू-धर्मपर अपनी छाप छोड़ी है। हिन्दू-धर्म किसी भी हालतमें एक मृतप्राय शक्ति या मृत धर्म नहीं है।

फिर आश्रमोंके रूपमें उसका योगदान है, जो एक अनोखा योगदान है। इसके समान चीज सारे संसारमें नहीं है। कैथॉलिक ईसाइयोंमें विवाह न करनेवाले लोगोंका एक समुदाय है जो अपने यहाँके ब्रह्मचारियों-जैसा है, लेकिन जो एक संस्था नहीं है, जबकि भारतमें प्रत्येक बालकको प्रथम आश्रमसे गुजरना पड़ता है। क्या ही शानदार यह कल्पना थी! आज हमारी आँखें मैली हैं, विचार और भी मैले हैं और शरीर सबसे ज्यादा मैले हैं, क्योंकि हम हिन्दू-धर्मको नकार रहे हैं।

एक और भी चीज है जिसका मैंने उल्लेख नहीं किया है। मैक्समूलरने चालीस वर्ष पहले कहा था कि यूरोपवाले धीरे-धीरे अब यह समझ रहे हैं कि पुनर्जन्मकी बात कोई सिद्धान्त नहीं बल्कि एक तथ्य है। तो, यह विचार पूरी तरह हिन्दू-धर्मकी ही देन है।

आज वर्णाश्रम-धर्म और हिन्दू-धर्मको उसके माननेवाले ही गलत रूपमें पेश कर रहे हैं और उससे नकार रहे हैं। इसका उपाय नष्ट करना नहीं है, सुधार करना है। हम अपने अन्दर सच्ची हिन्दू भावना पैदा करें और फिर पूछें कि वह आत्माको संतुष्ट करती है या नहीं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २४-११-१९२७

परिशिष्ट २

खादी कार्यके लिए दक्षिण भारत और लंकामें इकट्ठा किया गया चन्दा[1]

१. दक्षिण भारतमें चन्दा

गांधीजीकी तमिलनाडु, केरल और दक्षिण कन्नड़ प्रदेशकी यात्राके दौरान इकट्ठा किया गया चन्दा :

चेट्टिनाड

कराइकुडी, रु० ६,५२४-९-७; देवकोट्टा, रु० ४,२१८-१३-४; पागानेरी, रु० ४,१२०-१०-३; कोट्टयूर, रु० २,५३२; कनडुकातन, रु० २,४१६-९-६; कडैपट्टी, रु० १,२६७-११-६; अमरावतीपुदूर, रु० १,१८६-६-१; सिरुवयल, रु० १,०९९-११-९; कोत्तमंगलम्, रु० ७०१-४; पल्लत्तूर, रु० ६०१; नाचिया-पुरम्, रु० ५०५; नेमत्तानपट्टी, रु० ५०१; कुलीवरै, रु० ४०१; नच्चान्दु-पट्टी, रु० ३०१; लक्ष्मीपुरम्, रु० २५०; वीरचिल्लै, रु० १२१; पणयापट्टी, रु० १०१; जयकोंडापुरम्, रु० १०१; मनछै, रु० १००; महानगरी, रु० १३; कुल रु० २७,०६२-१२-०।

मद्रास नगर

कुल रु० २१,७७२-९-४

मदुरै

मदुरै, रु० १३,४७२-७-६; तिरुमंगलम्, रु० ७८२-१३-८; तेवारम् और कूडलूर, रु० १४३-०-७; कोम्बै, रु० १००; कुल रु० १४,४९८-५-९।

कोयम्बटूर

कोयम्बटूर, रु० ४,७२०-१५-९; तिरुपुर, रु० ३,११७-२-६; पोल्लाच्छी, रु० २,२०४-३-६; गोबिचेट्टिपालयम्, रु० १,२३१-१५-११; इरसनामपट्टी, रु० २७०; वेल्लकोइल, रु० १००; किणत्तकड़वे, रु० १००; अविनाशी, रु० ३४-११-९; चेयूर, रु० १३-४-०; कुल रु० ११,८०२-५-५।

त्रिचनापल्ली

त्रिचनापल्ली, रु० ८,१३२-१२-११; श्रीरंगम्, रु० ११३-९-२; लालगुडी, रु० १,९५७-१३-३; करूर, रु० ८९६-१०-३; मणच्चनल्लूर, रु० १५१; कुल रु० ११,२५१-१३-७।

१. देखिए "भाषण : त्रिचनापल्ली नगरपालिकाके अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें", १७-९-१९२७ तथा "भाषण : चेट्टियार लोगोंकी सभा, कोलम्बोमें", १३-११-१९२७।

तंजौर

मायावरम्, रु० ३,२८२-३-२; मन्नारगुडी, रु० ३,०४०-१४-११; कुम्भकोणम्, रु० २,९२३-१०-११; तंजौर, रु० १,०४१-७-१०; राजप्पैयन चावडी, रु० २८८-१२-०; वलंगीमान, रु० २०१; नीडामंगलम्, रु० १०४; तिरुवडमरुदूर, रु० ७९-१२-०; पापनाशम्, रु० २३; मोरपट्टी, रु० १५; फुटकर, रु० ५; कुल रु० ११,००४-१२-१०।

तिन्नेवेल्ली

तिन्नेवेल्ली, रु० ३,१६५-६-०; तूतीकोरिन, रु० २,६१६-५-४; कोइलपट्टी, रु० १,४१६-११-१; श्रीवैकुंठन, रु० १,०१६-४-०; नांगुनेरी, रु० ६५४-१-६; पणगुडी, तिसयनविलै, शेल्वमरुदूर आदि, रु० ४३४-१३-६; शिवगिरि, रु० ५३०-९-५, शंकरनकोइल, रु० २२७-१४-०; कलडाकुरिची, रु० १४२-६-११; शिवकाशी, रु० ७९-८-०; तेनतिरुप्पेरै, रु० ५१; कलुगुमलै, रु० ५१; करियलूर, रु० ३४-८-०; मुदुकमिडम्, रु० ३१; शंकरनकोइल, रु० १६; कुल रु० १०,४६७-७-९।

ब्रिटिश मलाबार

कालीकट, रु० ४,११३-९-४, पालघाट, रु० २,२३६-२-७; ओट्टपालम् और शोरनूर, रु० १,२०५-१५-०; अगतितरा, रु० ३१४-१-९ :, तलीपरम्बा, रु० १०१; पोन्नानी, रु० ६९-१५-०; बडगर, रु० ५४२-५-६; फुटकर, रु० ११; कुल रु० ८,५९४-१-२।

रामनाड

राजापालयम्, रु० ३,६४२; विरुधुनगर, रु० १,८३२-१४-६; परमाकुडी, रु० १,१७९-७-८; शातूर, रु० ५१६-९-३; तिरुपत्तूर, रु० ४३१-१५-६; श्रीवल्लीपुत्तूर, रु० ६६-८-६; कुल रु० ७,६६९-७-५।

उत्तर आरकाड

वेल्लोर, रु० २,६२६-११-११; आर्णी, रु० २,१७८-१०-५; गुडियात्तम, रु० १,३१२-४-२; आरकाड, रु० ६२६-१५-३; पल्लिकोंडान, रु० ७६-२-६; तिरुवन्नामलै, रु० ५०; कुल रु० ६,८७०-१२-३।

त्रावणकोर

त्रिवेन्द्रम्, रु० २,३८९-४-९; नागरकोइल, रु० १,२५३-२-१; अलेप्पी, रु० ९७४-९-०; क्विलन, रु० ८५८-२-९; हरिपाड, रु० ३३५; करुवट्टा, रु० ३१३-०-३; कातिगापल्ली, रु० २३५-५-३; कयनगुलम्, रु० १०५; चंगन्नूर, रु० १११; करुनागपल्ली, ओच्चरा, आयागारमपुर, तोट्टपल्ली, रु० ८०-२-३; कुल रु० ६,६५४-१०-४।

कोचीन

एर्णाकुलम्, रु० २,५१९-०-१; त्रिचूर, रु० १,८९८-११-५; कोचीन, रु० ९००; ओल्लूर, रु० ८८५-१३-०; तिरुपनितुरा, रु० २७२-५-६; माचाड, रु० १३-८-०; कुल रु० ६,४८९-६-०।

दक्षिण आरकाड

कडुलोर, रु० ३,०८७-१२-७; चिदम्बरम्, रु० १,९६५-७-६; तिंडिवनम्, रु० २६०; कुल रु० ५,३१३-४-१।

चेंगलपट्ट

कांचीवरम्, रु० १,४१०-१३-९; आडम्बाकम, रु० १,२१९-९-३; तिरुवल्लूर, रु० ७७५-१३-५; पूनमल्ली, रु० ३६९-३-४; श्रीपेरुम्बुदूर, रु० ५६-७-६; कुल रु० ३,८३१-१५-३।

सेलम

कृष्णगिरि, रु० २,२०१-१-७; होसूर और चोलगिरि, रु० ७०५-१०-०; पुडुपालयम्, रु० २०५-६-०; कुल रु० ३,११२-१-७।

पुदकोट्टा

कुल रु० १,१५६-११-०।

फुटकर, रु० २९९-५-५।

कुल जोड़ : तमिलनाडु और केरल, रु० १,५७,८५१-१३-०।

कर्नाटक

दक्षिण कन्नड़ और फुटकर, रु० ५,९४४-६-५।

गुजरात बाढ़-सहायता कार्यके लिए मिले, रु० १३०; कुल प्राप्ति रु० १,६३,९२६-३-५।

बैंकका खर्च रु० २०-१३-८ काटकर, रु० १,६३,९०५-५-९।

अर्बन बैंक, माइलापुरमें १,५४,७७७-१३-९; तिरुपुर खादी वस्त्रालयमें रु० ५,८१०-५-०; एरोडके अखिल भारतीय चरखा संघमें, रु० ३,३१७-३-०; कुल जोड़ रु० १,६३,९०५-५-९।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-११-१९२७

२. लंकामें खादी कार्यका चन्दा

(हम नीचे गांधीजीकी लंका-यात्राके दौरान जमा किये गये चन्देकी एक सम्मिलित सूची दे रहे हैं। चन्दा और दान देनेवालोंसे प्रार्थना है कि वे सूचीको

जाँच कर लें और यदि कुछ गलती हो या कुछ छूट गया हो तो उसकी सूचना श्रीयुत च० राजगोपालाचारी, गांधी आश्रम, तिरुचेङ्गोडको दे दें। —महादेव देसाई)

कोलम्बो: सी स्ट्रीटके चेट्टियार, रु० ४,००१-००; सी स्ट्रीटके क्लर्क, रु० २,३३५-५०; सी स्ट्रीटके रसोइये, रु० १०३-२५; भारतीय युवक संघ, रु० १०१-००; विवेकानन्द सोसाइटी, रु० २,०५०-००; नालन्दा विद्यालय, रु० ४००-००; आनन्द कालेज, रु० ४००-८६; केली व्यापारी, रु० २०५-००; मरुयुवकुला संघ, ४०१-००; हेवावीतराना, वीविंग स्कूल, रु० ३३०-५०; सिन्धी व्यापारी, रु० १,७५४-५०; सीलोन लेबर यूनियन, रु० २,७२६-७१; नाडर संघम्, रु० २०१-००; सी स्ट्रीट लॉज, रु० १०२-००; जाहिरा कालेज, रु० ४००-००; तमिल लेडीज यूनियन, रु० १,४४५-००; सिंहली स्त्रियाँ, रु० १,०००-००; यंग मैन्स हिन्दू एसोसिएशन, रु० १०१-००; कोलम्बो तमिल यूनियन, रु० १,२५१-५०; पारसी, रु० १,००१-००; विद्या विनोद सभा, रु० ६२९-२०; रेड्डियार महाजन संघम्, रु० ३,००१-००; गांधी संघम्, रु० ७५-००; स्लेव आइलैंड जनरल, रु० १,१०१-००; यंग भारतवर्ष लीग, रु० ११०-११; मारवा सम्प्रदाय, रु० ३५१-००; सीलोन इंडियन एसोसिएशन, रु० १,८०१-००; यंग लंका लीग, रु० ६०-००; यंग मैन्स बुद्धिस्ट एसोसिएशन, रु० ६१५-४५; लॉ कालेज, रु० ३२०-००; मलयाली, रु० २६०-००; चावल और कढ़ीकी दुकानोंके मालिक, रु० १,२५०-००; चावल और कढ़ीकी दुकानोंके क्लर्क, रु० ५५०-००; लंका राष्ट्रीय कांग्रेस, रु० ६००-००; कोलम्बोमें आम स्वागतसे प्राप्त, रु० ६,४०८-००; नीलामी, रु० ३५०-००।

श्रीयुत वलिअप्पा नाडर, रु० ७६-००; श्रीयुत फिल्लिपिया, रु० ५०-००; श्रीमती एच० सी० अबेवर्दने, रु० ५०-००; श्री और श्रीमती डब्ल्यू० डी० फर्नानदो, रु० ५००-००; श्रीमती डब्ल्यू० ए० डीसिलवा, रु० ५००-००; डा० ए० टी० कुरियन, रु० १५-००; श्रीयुत वी० वी० मिमिया चेट्टियार, रु० ५०-००; श्री विलिमोरिया, रु० २५-००; श्री के० एस० नारायण अय्यर, रु० २५-००; श्री ए० ई० डीसिलवा, रु० २००-००; श्री एच० डब्ल्यू० पेरिरा, रु० १००-००; श्री वेलायुथम पिल्ले, रु० ५१-००; कुमारी बंडारनायक और अन्य, रु० ११०-००; दूसरे विविध चन्दे, रु० ३६५-८५; दूसरे आम चन्दे, रु० २८५-००; कुल, (कोलम्बो), रु० ४०,१९५-४३।

कुरुनेगल: चेट्टियार, रु० १,०२१-००; सामान्य, रु० १,५००-००; पुत्तलम् और कलपिटियाके क्लर्क, रु० ३५-००; कंडीगाम और हेल्लीपोला, रु० ११२-००।

नेगोम्बो, रु० १,८१२-००; कोचुकाडान, रु० ४३२-००; पालिगोडा नेशनल लीग, रु० ३०-७२।

चिला, रु० १,५३०-८२; नैनामदमा, रु० १२८-०६।

माटले: मरुयुवकुला संघम्, रु० ५५-००; बुद्धिस्ट स्कूल, रु० २५-००; सामान्य, रु० १,०९३-२०; श्री पोन्निया, रु० १५०-००; स्कूल फाउन्डेशन, रु० २५१-४१; कुल रु० १,५७४-६१।

कैण्डी : धर्मराज कालेज, रु० १११-००; श्री राहुल स्कूल वगैरा, रु० ९१-००; सामान्य, रु० ४,५००-००; भारतीय युवक संघम्, रु० ७१-१६; मल्युवकुला संघम्, रु० १४१-००; इंडियन एसोसिएशन, रु० १,१८७-५०; श्री पी० एम० देवदासु पिल्ले, रु० १०-००; विविध, रु० ३८-५०; कुल (कैण्डी), रु० ६,१५०-१६।

पंडारावेला, रु० ६०१-६३; दियातलावा, रु० १०३-००; हपुतला, रु० ३५१-५०।

बादुल्ला : सामान्य, रु० ४,०००-००; वाइ० एम० सी० ए० लुनुगला, रु० २१५-००; सभाके चन्दे, रु० २८९-३७; विविध, रु० ३५-६०; कुल रु० ४,५३९-९७।

दिकोया, रु० १३५-००; तलावकले, रु० ३१५-००; नानवाया, रु० १५०-००; वेल्लीमाडा, रु० २१५-२५; दिकावेला, रु० ५००-००।

नुवारा इलिया : सामान्य, रु० ४,०९७-१५; सभाके चन्दे, रु० ५५५-३१; कुल रु० ४,६५२-४६।

हैट्टन : कारफेक्सके मजदूर वगैरा, रु० १००-००; कैसलरेके मजदूर, रु० १३५-००; कंगानीज एसोसिएशनकी सामान्य थैली, रु० २,५००-००; बाजार, रु० ५५८-००; विविध, रु० २१०-००; कुल रु० ३,५०३-००।

ग्रिगटाना, रु० १९४-२०; वात्तावेला, रु० २३०-५०।

नवलापिटिया : सामान्य, रु० १,३२२-३९½; वाई० एम० डब्ल्यू० ए०, रु० ३९-६१; विविध, रु० ७७-९०; कुल रु० १,४३९-९०½।

काडुगानचौले, रु० ४५-००।

गम्पोला : सामान्य, रु० १७५-००; स्कूल, रु० ५१-००; रसोइये, रु० ४१-००; मरुयुवकुला संघम्, रु० ४१-००; आर० लेच्छमनन चेट्टियार, रु० २५०-००; विविध, रु० १६-३४; कुल रु० २,१४९-३४।

टेक्काला महाजन सभा, रु० ३६४-००; काडुगन्नावा, रु० ८६८-१४।

केगाला : सामान्य, रु० ७६२-४०; नीलामी, रु० ३०-००; सभाके चन्दे, रु० ११०-१७; कुल रु० ९०२-५७।

अत्तंगल्ला, रु० २१०-००; कैण्डीसे कोलम्बोतक विविध, रु० १६२-६८½।

अम्बलंगोडा : तमिल, रु० २६५-८५; विविध, रु० १८-७३; कुल रु० २८०-५८; वालपितिवा, रु० ५०-००; दादुदुंवा, रु० ५५-६५; तिरंगामा, रु० १२३-२१; तेलावला स्कूल, रु० ११-३०।

मोरातुवा, रु० ५८८-९०; कालातुरा, रु० १,६९५-८५; होराना, रु० ४७२-९३; पानाडुरा, रु० १,८१०-००।

गैले : उद्गुगमा कंगानी, रु० २००-००; तमिल, रु० ५८-००; महाजन सभा, रु० १८०-४५; चेट्टियार, रु० ५०१-००; कनकुपिल्ले, रु० ३५१-००; नाटकका प्रदर्शन, रु० २००; महिन्द कालेज, रु० ४६५-००; नीलामी, रु० २०-००; विविध, रु० १६-००; दूसरे सामान्य चन्दे, रु० ४९-१०; कुल २,०४०-५५।

मतारा: सामान्य, रु० ८९९-४५; शोफरस् यूनियन, रु० १००-००; स्कूलके बच्चे, रु० १००-००; मरुथु वकुला संघम्, रु० ६०-४५; विविध, रु० ३०-००; व्यक्तिगत उपहार: श्रीमती प्रसाद, रु० ५०-००, श्री एन० गुणासेकर, रु० ५०-००; श्री जे० बी० कारडोजो, रु० २५-००; श्री सुन्दरम् पिल्ले, रु० २५-००; आदरणीय श्री अवेयासेखरा, रु० ५००-००; कुल रु० १,८३९-९०।

गोडागमा, रु० १५०-००; अक्मीमाना, रु० २५०-०; अम्बलावाट्टा, रु० २१-६०; लन्दनके सीलोनी विद्यार्थियोंका तार द्वारा मनीआर्डर, रु० ५३-००; एक और मनीआर्डर, रु० ६-००; गनेऊनुल्ला, २००-५४।

त्रिकोमाली, ३९२-००; नीलामी, रु० १०-००; कुल रु० ४०२-००।

पलाई, रु० २०-५१; नार्थदिया एस्टेट, रु० ४५-५०।

कोलम्बो और जफनाके अलावा नगरेतर (मुफस्सल) स्थानोंका जोड़: रु० ४६, ५२९-५४।

जफना: सामान्य, रु० १,९५७-१०; डिप्रेस्ड क्लासिज सर्विस लीग, रु० १८०-००; गाँवकी कमेटियाँ, रु० ७०९-७५; सभाके चन्दे, रु० ३२-४९; परमेश्वर कालेज, रु० ५३६-६०; मणिपरी हिन्दू कालेज, रु० ५०१-००; 'हिन्दू ऑर्गन' की मार्फत मलाया लोगोंके चन्दे, रु० ८५२-५०; चुन्नाकम, रु० ६५१-४६; नीलामी, रु० २५-००।

हिन्दू कालेज, रु० ७०७-००; कण्डारोदई स्कूल, २२३-५९; जफनाके भारतीय, रु० १,३०१-२५; विश्वकर्मा कोऑपरेटिव सोसाइटी, रु० ११५-४५; चुन्नाकम डिप्रेस्ड क्लास स्कूल फाउन्डेशन, रु० १०-००; भारतीयोंकी सभा, रु० ४७-०६; अनुराधापुरका व्यक्तिगत, रु० ३०-००; चावलाचेरी, रु० २१३-५०; कोप्पई, रु० १४४-००; टोण्डामानुरु, रु० ४००-००; वियमागाट्टुनूर मन्दिर, रु० ९०-८१।

वलवेतीतुरई, रु० ४७०-२५; नीलामी, रु० ६-००।

सेंट पेड्रो, रु० १,०१४-४९; जफना अर्बन काउंसिलके सचिवकी मार्फत, रु० ५२-४२; चिवातेरू, रु० २५९-५७; जफनाके मजदूर, रु० ५९४-९८; सभा, रु० ४८-९५½; चेम्मा स्ट्रीट, रु० १०७-००; सेंट जॉन्स कालेज, रु० २५८-८०; सेंट्रल कालेज, रु० २७६-००; रामनाथन गर्ल्स कालेज, रु० १,१११-०८; मालकन इंग्लिश स्कूल, रु० १०१-००; तेल्लीपलाई, रु० ६१७-२०; चुलीपुरम् और चेलकानाई, रु० ३०९-००; विक्टोरिया कालेज, रु० २८०-००; सीथनकराई स्कूल, रु० १०५-००; वड्डुक्कोडाई, रु० ३५-००; जफना कालेज, रु० ६००-००; कराईनगर, रु० ५३८-४०; जफना रेलवे स्टेशनका चन्दा तथा लेडी रामनाथनकी मार्फत, रु० १२९-६०; मोरले और कोलापुरम्, रु० २८०-४०; आइलैंड्स केट्स, रु० ६५०-०३; पण्डातेरुवुर इंग्लिश स्कूल, रु० ३१-३२; अस्पतालकी मैट्रन और नर्सें, रु० १०-००; वावुनिया, रु० १२५-००; मदावद्री, रु० १०६-७५; नीलामी, रु० १,१४७-००; विविध, रु० २९७-२५; जफनासे कुल चन्दा, रु० १८,२९१-५½।

कुल जोड़	रु० १,०५,०१६, ०२½
७ सेंटके हिसाबसे स्वर्ण मुद्राओं (५४) के मूल्यमें कमी	३-७८
खराब सिक्के	१२-१२½
असली जोड़	१,०५,०००-१२
	= १,०५,००-२-०
	रु० आ० पा०
बैंकमें जमा (एम० सी० यू० बी)	१,०४,४८७-५-४
नकद पासमें	१४८-९-५
गैर-कानूनी होनेपर वापस किये गये चेकोंकी उगाही बाकी	३६४-३-३
जोड़	१,०५,०००-२-०

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २२-१२-१९२७

परिशिष्ट ३

भेंट: सी० कुट्टन नायरसे[1]

४ अक्टूबर, १९२७

श्री टी० के० माधवनको आज गांधीजीका एक तार[2] मिला है जिसमें उनसे कहा गया है कि वह तिरुवरप्पु मन्दिरकी सड़कोंके उपयोगके सिलसिलेमें अस्पृश्योंपर लगे प्रतिबन्धके विरुद्ध सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ कर दें।

तिरुवरप्पु मन्दिरकी सड़कोंसे सम्बन्धित प्रश्नोंके बारेमें आज सुबह विरुधुनगरमें श्री माधवनके एक साथी कार्यकर्त्ता श्री सी० कुट्टन नायरने गांधीजीसे भेंट की। महात्मा गांधीने श्री कुट्टन नायर द्वारा दिये गये सभी कागजों को ध्यानपूर्वक पढ़ा, . . . और वास्तविक तथ्योंकी जानकारी प्राप्त करनेके बाद . . . कहा:

मेरे सामने जो तथ्य हैं, उन्हें देखते मुझे यह कहनेमें तनिक भी हिचकिचाहट नहीं है कि तिरुवरप्पुमें अवर्ण हिन्दुओंके लिए सड़कें खोलनेके लिए सत्याग्रह करनेके पक्षमें एक बहुत मजबूत मामला तैयार किया गया है।

यह पूछे जानेपर कि क्या सत्याग्रहसे उनका तात्पर्य उस प्रकारके सत्याग्रहसे है जैसा कि वाइकोममें किया गया था, गांधीजीने जोरदार शब्दोंमें कहा, 'नहीं'। उन्होंने कहा कि यह सत्याग्रह इतना काफी व्यापक होना चाहिए जिसमें सभी प्रकारकी सविनय अवज्ञा आ सके। उन्होंने कहा कि मैं तिरुवरप्पुमें सामूहिक सविनय अवज्ञा

१. देखिए "भाषण: त्रिवेन्द्रम्में", १०-१०-१९२७।
२. उपलब्ध नहीं है।

तकके पक्षमें हूँ, बशर्ते कि वहाँ अहिंसात्मक वातावरण हो। तिरुवांकुर सरकार द्वारा वाइकोम समझौतेका युक्तियुक्त ढंगसे पालन न किये जानेसे वर्तमान गड़बड़ी उत्पन्न हुई है और इससे मन्दिरोंमें अवर्णोंके प्रवेशकी माँग मजबूत होगी। उन्होंने कहा, 'हाँ, मन्दिर-प्रवेशकी स्थिति आ रही है।'

गांधीजीने वादा किया कि वह एर्णाकुलम् जाते हुए रास्तेमें तिरुवरप्पु आनेकी कोशिश करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-१०-१९२७

परिशिष्ट ४

भेंट: कांचीके श्री शंकराचार्यसे[1]

१९२७ के उत्तर भागमें महात्मा गांधी कांग्रेसके उद्देश्योंका प्रचार करने तथा चन्दा इकट्ठा करनेकी दृष्टिसे दक्षिणका दौरा कर रहे थे। गांधीजीने, जो 'हिन्दू' के मैनेजर श्री ए० रंगास्वामी अय्यंगार तथा श्री एस० सत्यमूर्तिसे आचार्यके बारेमें पहले ही सुन चुके थे, आचार्यजी से भेंट करनेका फैसला किया। यह ऐतिहासिक बैठक १५ अक्टूबर, १९२७ को पालघाटके नेल्लिचेरी जिलेमें आचार्यके कैम्पसे लगी हुई एक मवेशीशालामें सम्पन्न हुई। उसमें केवल कुछ लोग ही मौजूद थे, लेकिन कोई पत्रकार उपस्थित नहीं था।

गांधीजीने परम्परागत हिन्दू तरीकेसे आचार्यको आदरांजलि अर्पित की। गेरुए वस्त्रधारी तथा जमीनपर बैठे हुए संन्यासीकी अत्यधिक साधुताने गांधीजीके मनपर बड़ा गहरा असर डाला। नीरवता छाई हुई थी। इसके बाद आचार्यने स्वागतके तौरपर संस्कृतमें कुछ शब्द कहे और गांधीजीसे बैठनेके लिए कहा। गांधीजी बैठ गये और बोले कि मैं संस्कृतमें बोलनेका आदी नहीं हूँ, लेकिन इस भाषाको कुछ-कुछ समझ सकता हूँ। उन्होंने हिन्दीमें बोलनेकी अनुमति माँगी। क्योंकि आचार्य हिन्दी समझ सकते थे इसलिए यह व्यवस्था दोनोंकी दृष्टिसे ही उचित थी। गांधीजी हिन्दीमें बोले और आचार्य संस्कृतमें।

आचार्यने गांधीजी द्वारा राजनीतिको आध्यात्मिक रूप देनेके प्रयत्नकी सराहना की, क्योंकि स्वस्थ राष्ट्रीय जीवन आध्यात्मिक नींवपर ही टिका होना चाहिए और ऐसे राष्ट्र जो धर्म विहीन होते हैं तथा भौतिकवादी शक्तियोंपर निर्भर करते हैं उनका विनाश अवश्यम्भावी होता है। हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशसे सम्बन्धित प्रश्नपर आचार्यने कहा कि जो लोग अब भी शास्त्रों और स्मृतिकी प्रभुतामें विश्वास रखते हैं उनकी भावनाओंको ठेस पहुँचाना भी एक प्रकारकी हिंसाके समान ही होता है। बातचीत

१. देखिए पृष्ठ १४७ की पाद-टिप्पणी।

आध्यात्मिक मामलोंपर जारी रही; बातचीत खुले दिलसे चली और उसमें एक दूसरेके प्रति आदरका भाव विद्यमान था। उसमें कोई तर्क-वितर्क या शास्त्रार्थ नहीं था। . . .

बातचीत लगभग १ घंटेतक जारी रही। . . . विदा लेते समय गांधीजीने कहा कि इस भेंटसे मेरा बड़ा हित हुआ है और मैं आचार्यकी इच्छाओंका ध्यान रखूँगा एवं उन्हें अपनी सामर्थ्यके अनुसार पूरा करूँगा।

चूंकि गांधीजी ६ बजेके बाद भोजन नहीं करते, इसलिए श्री च० राजगोपालाचारी ५-३० बजे उठकर गये और उन्हें भोजनकी याद दिलाई। लेकिन गांधीजी बोले: "आचार्यके साथ बातचीत ही मेरा आजका भोजन है।" इसके बाद आचार्यने गांधीजीको एक बड़ा निम्बू-फल भेंट किया। गांधीजीने यह कहते हुए कि इस फलसे मुझे विशेष प्रेम है उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया।

बादमें उसी शाम कोयम्बटूरमें हुई एक सार्वजनिक सभामें जब गांधीजीसे उनकी आचार्यके साथ हुई बातके बारेमें प्रश्न पूछा गया तो उन्होंने कहा कि यह व्यक्तिगत और गोपनीय थी इसलिए पत्रकारोंको उसमें नहीं आने दिया गया था।

[अंग्रेजीसे]

श्री जगद्गुरु दिव्य-चरित्रम्

परिशिष्ट ५

गांधी-इर्विन समझौता[1]

(१)

. . . वाइसरायसे मिलनेपर गांधीजीने देखा कि यह भेंट सर्वथा भावशून्य थी। लॉर्ड इर्विनने गांधीजीके हाथमें भारत मन्त्रीकी साइमन आयोग सम्बन्धी घोषणा पकड़ा दी, और यह पूछनेपर कि क्या इस भेंटका मुद्दा कुल इतना ही था, लॉर्ड इर्विनने कहा 'हाँ'। गांधीजीने कहा, मुझे लगता है कि यह काम तो एक आनेके लिफाफेसे भी हो सकता था।

[अंग्रेजीसे]

द हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस, खण्ड १ (१८८५-१९३५)

(२)

वास्तवमें इस पहली भेंटके दौरान गांधी और इर्विनके बीच काफी लम्बी बातचीत हुई और दोनोंने एक-दूसरेकी बातको बड़े ही धैर्य और शिष्टताके साथ सुना। गांधी बड़े अच्छे मूडमें थे . . . और उन्होंने कहा कि वह वाइसरायको खादीका समर्थक

१. २ नवम्बर, १९२७ को; देखिए "पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको", ११-११-१९२७।

बनाकर छोड़ेंगे।'[1] उन्होंने इर्विनकी बात ध्यानपूर्वक सुनी और उनकी बात खत्म होने पर स्वयं अपना सामान्य राजनीतिक दर्शन विस्तारसे समझाया। उन्होंने कहा, मेरी दृष्टिमें ब्रिटिश अभिभावकत्वकी कोई आवश्यकता नहीं है। भारतमें जो आत्माभिमान होना चाहिए उस आत्माभिमानको हानि पहुँचानेकी सलाह भारतको देनेकी अपेक्षा मैं अनिश्चित कालतक प्रतीक्षा करनेको तैयार हूँ। भारत जो चाहता है वह चीज ब्रिटिश संसदको भारतको दे देनी चाहिए। इसीलिए मैं इन सारी बातोंसे अपनेको बहुत दूर महसूस करता हूँ। कांग्रेस एक विचारकी सेवा कर रही है — असहयोगके विचारकी — जो अन्ततः संसदके दिमागपर अपनी छाप डालेगी। साम्प्रदायिकता खत्म हो जायेगी; विभिन्न सम्प्रदाय भारतको आत्मसात् करनेकी कोशिश करते रहे हैं।

इस भेंटमें इर्विनको महात्माकी असम्बद्ध राजनीतिक तकनीकका अनुभव हुआ। इर्विनको उनकी बातें अस्पष्ट लगीं . . . लेकिन उन्होंने उनके अन्दर कोई कटुता नहीं पाई और यह देखकर उन्हें खुशी हुई कि बातचीतमें वह औचित्यका ध्यान रखते हैं। लेकिन उनकी बातचीतमें ऐसा कुछ नहीं था जो वाइसरायकी व्यावहारिक बुद्धिकी पकडमें आता। . . . यह तो जब गांधी तथा अन्य लोगोंने कहा कि ब्रिटिश संसदीय समितिसे बातचीत करनेके लिए भारतीय विधान मण्डलके प्रतिनिधियोंको निमन्त्रित करनेकी विधि क्या हो, इस बातको वे कोई महत्त्व नहीं देते, तब इर्विनको उन्हें यह स्पष्ट रूपसे बतानेका मौका मिला कि यदि वे इस अवसरका लाभ नहीं उठाते तो वे बड़ी भयंकर राजनीतिक गलती करेंगे और ब्रिटिश लोकमतको सदाके लिए अपने विरुद्ध कर लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हैलिफैक्स: द लाइफ ऑफ लॉर्ड हैलिफैक्स

(३)

कुछ क्षेत्रोंमें ऐसा विश्वास किया जाता है कि वाइसरायको व्हाइट हालके एक आदेशसे यह प्रेरणा मिली थी कि भारतको ब्रिटेनके सभी राजनीतिक दलोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले एक सर्वथा संसदीय आयोगको सम्पन्न कार्यके रूपमें स्वीकार कर लेना चाहिए; और जो लोग हानिकर ढंगके आन्दोलनकारी सिद्ध हों उन्हें पहलेसे ही बता दिया जाना चाहिए कि सरकार किसी प्रकारकी धौंस और अनर्गल बातोंको और अधिक बर्दाश्त नहीं करेगी।

तथापि भारतीय लोग आयोगके काममें सलाहकारोंके रूपमें सम्बद्ध रहेंगे। सलाहकारोंका चुनाव करनेके मामलेमें भी साम्प्रदायिक माँगोंपर ध्यान दिया जायेगा; लेकिन इन माँगोंको तभी शान्त किया जा सकता है जब सलाहकारोंके रूपमें केवल सरकारी पक्षके भारतीयोंको नियुक्त किया जाये। ऐसा माना जाता है कि वाइसरायने जो कुछ कहा उसका यही सार था।

1. देखिए खण्ड ३६, "पत्र: लॉर्ड इर्विनको", २६-४-१९२८।

श्री गांधीने कहा कि इस प्रकारका आयोग विफल प्रयास सिद्ध होगा क्योंकि आत्मसम्मानी भारतीय लोकमत जान बूझकर किये गये इस अपमानका विरोध करेगा। इसका परिणाम यही होगा कि आयोगका बहिष्कार किया जाये। तथापि उनकी रायमें आयोगका गठन कितना ही अच्छा क्यों न हो और उसके विचारार्थ विषयोंकी सूची कितनी ही उदार क्यों न हो, इस आयोगका कोई महत्व नहीं है। यह पूछे जानेपर कि क्या वह अपने देशवासियोंको, विशेष रूपसे स्वराज्यवादियोंको आयोगके साथ उसकी जाँचके काममें सहयोग करनेकी सलाह देंगे, श्री गांधीने कहा कि यह मेरा काम नहीं है। स्वराज्यवादी लोग राजनीतिक युद्धनीतिके मँजे हुए खिलाड़ी हैं, बच्चे नहीं, जिन्हें बताया जाये कि वे क्या करें और क्या न करें। तथापि श्री गांधीने वाइसराय महोदयको यह आश्वासन दिया कि मैं स्वयं आयोगके बहिष्कारका कोई आन्दोलन आरम्भ नहीं करूँगा क्योंकि मैंने बहुत पहले ही राजनीतिक नेतृत्वका भार स्वराज्यवादियोंको दे दिया है। श्री गांधीने अन्तमें कहा कि मैं आयोगके काममें सहयोग करनेसे किसीको रोकूँगा नहीं, और मैं रोक भी नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ९-११-१९२७

परिशिष्ट ६

एस० डी० नाडकर्णीके पत्रका अंश[1]

...जो वर्ण सदैव विद्यमान रहा है वह है कृत्रिम रूपसे कायम रखा गया पक्का विभाजन जिसे अन्यथा 'जाति' कहा जाता है चाहे वह चार सूत्री हो, जैसा कि वह 'एक जमानेमें था', या चालीस-हजार सूत्री हो, जैसा कि वह आज है, मूलतः वह एक ही चीज है। यह मात्र जन्मके सिद्धान्तपर आधारित एकाधिकारों और प्रतिबन्धोंके वितरणकी एक प्रणाली है।...

...अब महात्माजी, यदि आप और मैं सच्चे हिन्दू हों, और केवल 'वैश्य' और 'ब्राह्मण' मात्र नहीं — क्योंकि मैं ब्राह्मण कुलमें जन्मा हूँ — तो हमें रामके जमानेके 'शूद्र' तपस्वी शम्बूककी स्मृतिकी पूजा करनी चाहिए जो धार्मिक स्वतन्त्रताका प्राचीनतम हिमायती था और जो भारतका या विश्वका पहला शहीद था जिसका उल्लेख मिलता है। महात्माजी, क्या आप मेरे साथ मिलकर ऐसा करनेको तैयार हैं? केवल इसी प्रकार ब्राह्मण-विरोधी आन्दोलनका दंश दूर किया जा सकता है और युगों पुराने इस संघर्षकी राखमें से एक संगठित हिन्दू धर्मका जन्म हो सकता है। मैं कहता हूँ कि यदि हिन्दू धर्मको आगे जीवित रहना है और फलना-फूलना है तो शम्बूकके साथ न्याय किया जाना चाहिए।...

१. देखिए "वर्णाश्रम और उसका विरूपीकरण", १७-११-१९२७।

. . . यदि ऐसा हो तो सभी गांधियोंको पंसारीकी दूकान करनी चाहिए और रामनाम जपना चाहिए तथा अपने देशके सामाजिक और राजनीतिक सुधारका काम हाथमें नही लेना चाहिए, कमसे-कम शायद तबतक जबतक कि गार्हस्थ्य जीवन पूरा करनेके बाद निर्धारित उम्रमें उन्होने औपचारिक रूपसे चतुर्थ आश्रमको स्वीकार न लिया हो। अन्यथा, किसी वैश्यके लिए राजनीतिमें प्रवेश करना ब्राह्मणों और क्षत्रियोंके 'आध्यात्मिक अधिकार क्षेत्रका' अतिक्रमण करना होगा। लेकिन क्या यह नियम समाजके लिए लाभकारी होगा? और आनुवंशिकताके नियमका-क्या होगा? . . .

. . . यदि हम इसपर तनिक भी विचार करे तो यह बात दिनके प्रकाशके समान स्पष्ट हो जायेगी कि आनुवशिकताके सिद्धान्तको भंग करनेवालोंको हमने धर्मके नामपर जालिमाना दण्डका भागी बनाकर इस सिद्धान्तपर जरूरतसे ज्यादा जोर दिया है। . . .

. . . जिस प्रकार आप, जो वैश्य-संतान हैं, सम्पूर्ण वैश्य-वर्गको भारतके आर्थिक पतनका जिम्मेदार मानते है, उसी प्रकार जन्मतः ब्राह्मण होकर भी मुझे यह कहनेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है कि एक वर्गके रूपमें ब्राह्मण लोग समस्त भारतकी आध्यात्मिक और आर्थिक गुलामीके लिए जिम्मेदार हैं। जिन लोगोको बहुत ज्यादा दिया गया था, उनसे बहुत ज्यादाकी अपेक्षा भी की गई थी। किन्तु हाय, एक अदूरदर्शी स्वार्थपरतासे उत्पन्न संकीर्ण कट्टरताने उन्हें समाजको अपनी सर्वोत्तम सेवाएँ प्रदान करनेसे रोक दिया; और सभी ब्राह्मणवादियोंका और उनके साथ ब्राह्मणोंका जबर्दस्त पतन हुआ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-११-१९२७

परिशिष्ट ७

भारतीय संसदीय आयोगके सम्बन्धमें वाइसराय महोदयके वक्तव्यके अंश[1]

८ नवम्बर, १९२७

आयोग द्वारा अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत किये जानेके बाद और उसपर भारत सरकार तथा सम्राट्की सरकार द्वारा विचार हो चुकनेके बाद, सम्राट्की सरकारका यह कर्त्तव्य होगा कि वह उस रिपोर्टके आधारपर संसदमें अपने प्रस्ताव प्रस्तुत करे। लेकिन सम्राट्की सरकारका मंशा यह नही है कि उन प्रस्तावोंके बारेमें भारतकी विभिन्न विचार धाराओंके लोगोंको उसपर अपने विचार प्रकट करनेका अवसर दिये बिना ही वह संसदसे उन प्रस्तावोंको स्वीकार करनेको कहे।

१. देखिए "भेंट: एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे", १-१२-१९२७।

और इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सम्राट्‌की सरकारका इरादा है कि वह संसद‌से इन प्रस्तावोंको दोनों सदनोंकी एक संयुक्त समितिके सामने विचारार्थ प्रस्तुत करनेको कहे, और इसकी व्यवस्था करे कि इस समितिके सामने भारतीय केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाके विचारोंको प्रस्तुत करनेके लिए उस सभाके प्रतिनिधिमण्डलोंको निमन्त्रित किया जाये तथा उन अन्य संस्थाओंको अपने विचार प्रकट करनेकी सहूलियत दी जाये जिनके साथ समिति परामर्श करना चाहे।

सम्राट्‌की सरकारकी रायमें जो कार्यविधि निर्धारित करनेका विचार है उससे उपर्युक्त अपेक्षाओंकी बहुत बड़ी हदतक पूर्ति हो जाती है।

स्पष्ट है कि ऐसा एक आयोग — जिसमें ब्रिटेनकी सभी राजनीतिक पार्टियोंके प्रतिनिधि हैं और जिसके अध्यक्ष एक ऐसे व्यक्ति हैं जिनकी सार्वजनिक महत्ताका आधार उनकी विशिष्ट योग्यता और चरित्रबल है — एक अत्यन्त जटिल संवैधानिक सवालपर नवीन, कुशल और निष्पक्ष दृष्टिसे विचार करेगा।

इसके सिवा, ऐसा माना जा सकता है कि संसद् अपने ही कुछ सदस्योंके निष्कर्षोंपर अनुकूल दृष्टिसे विचार करेगी क्योंकि वह ऐसा मानेगी कि वे सदस्य एक समान विचारधाराका प्रतिपादन कर रहे हैं और निर्णयके उन्हीं मानदण्डोंको लागू कर रहे हैं जिन्हें संसद् सहज ही अपने मानदण्ड मानेगी। जहाँतक मेरा सवाल है, मुझे कोई सन्देह नहीं है कि जो लोग भारतीय प्रगतिके इच्छुक हैं उनके लिए उसे शीघ्र प्राप्त करनेका सबसे निश्चित रास्ता यही है कि वे संसद्‌को राजी कर लें, और यह चीज वे संसद्‌के दोनो सदनोंके सदस्योंके जरिये जितने निश्चयपूर्वक कर सकते हैं उतना किसी अन्य तरीकेसे नहीं कर सकते। भारतके राष्ट्रवादी लोग यदि संसद् सदस्योंको मौकेपर कायल कर दें तो यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि होती और इसीलिए मैं और आगे जाकर कहूँगा कि जो लोग भारतकी तरफसे बोलते हैं, यदि उनको उस मामलेमें विश्वास है जिसे वे भारतकी ओरसे प्रस्तुत करते है तो उन्हें इस बातका स्वागत करना चाहिए कि ब्रिटिश संसद्‌के कुछ सदस्योंको भारतीय जीवन तथा राजनीतिके सम्पर्कमें आनेका अवसर दिया जा रहा है।

इससे भी ऊपर, जहाँ सुधारोंको और व्यापक बनानेके इच्छुक लोगोंके लिए यह बात असंदिग्ध रूपसे लाभजनक है कि उनकी बात सीधे वे लोग सुनें जिन्हें संसद्‌का पूर्ण विश्वास प्राप्त है, वहीं मैं इतना आशावादी भी हूँ कि यह मान सकूँ कि सम्राट्‌की सरकारने जो तरीका चुना है वह भारतीयोंको इन महान घटनाओंको प्रभावित करनेका एक ऐसा मौका प्रदान करता है जो उन्हें अन्य किसी तरीकेसे प्राप्त नहीं हो सकता था। क्योंकि भारतीय विधानमण्डलोंके प्रतिनिधियोंकी मार्फत वे न केवल आयोगके सामने अपने विचार स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त कर सकेंगे बल्कि उनको यह अधिकार भी होगा कि सम्राट्‌की सरकार जो भी प्रस्ताव रखे उसके ऊपर वे संसद्‌की संयुक्त समितिमें तफसीलसे या सिद्धान्तके प्रश्नपर अपना विरोध प्रकट कर सकें और अपने हल सुझा सकें। इसके अलावा यह भी देखनेकी बात है कि इस अवस्थामें संसद्‌से विशिष्ट प्रस्तावोंपर अपना मत व्यक्त करनेको नहीं कहा

गया होगा और इसलिए जहाँतक संसद्का सवाल है, सारा प्रश्न फिर भी पुनर्विचार-के लिए खुला रहेगा।

इर्विन
वाइसराय और गवर्नर जनरल

[अंग्रेजीसे]
इंडिया इन १९२८-२९

परिशिष्ट ८

भारतीय संसदीय आयोग[1]

हमने यह आवश्यक समझा है कि भारत-सरकार अधिनियमके खण्ड ८४ क में जिस आयोगकी व्यवस्था की गई है, उसे ब्रिटिश भारतमें शासन-प्रणालीके कार्यों, शिक्षाके विकास और प्रातिनिधिक संस्थाओंके विकास तथा तत्सम्बन्धी मामलोंकी जाँचके लिए तत्काल नियुक्त किया जाये। यह आयोग रिपोर्ट देगा कि उत्तरदायी सरकारके सिद्धान्तको लागू करना वांछित है या नहीं, और अगर है तो किस सीमातक, अथवा मौजूदा उत्तरदायी सरकारकी शक्तियोंमें वृद्धि करना, उनमें परिवर्तन करना या उनमें कटौती करना वांछित है। इसमें स्थानीय विधान मण्डलोंमें दूसरे सदनकी स्थापना करनेकी वांछनीयताका प्रश्न भी शामिल होगा :

अब आपको ज्ञात हो कि हम आपके ज्ञान और आपकी योग्यतामें बहुत भरोसा रखते हुए, संसद्के दोनों सदनोंकी सहमतिसे दी गई भारतमन्त्रीकी सलाहपर आप निम्नलिखित व्यक्तियोंको उपरोक्त उद्देश्योंके लिए अपना आयुक्त अधिकृत और नियुक्त करते हैं: सर जॉन आल्सब्रुक साइमन (अध्यक्ष); हैरी लॉसन वेब्स्टर, वाइकाउंट बर्नहम; डोनॉल्ड स्टर्लिंग पामर, बैरन स्ट्रैथकोना और माउंट रॉयल; एडवर्ड सेसिल जार्ज कैडोगन; स्टीफेन वाल्श[2]; जार्ज रिचर्ड लेन-फॉक्स और क्लीमेंट रिचर्ड एटली।

और अपने इस आयोगके उद्देश्योंको ज्यादा कारगर ढंगसे कार्यान्वित करनेके लिए आपको या आपमें से किन्हीं तीन या तीनसे अधिक सदस्योंको इस बातका पूरा अधिकार देते हैं कि आप हमारे यूनाइटेड किंगडममें, या भारतमें, या अन्यत्र हमारे उपनिवेशोंमें उन लोगोंको अपने समक्ष बुला सकते हैं जिन्हें आप इस योग्य समझें कि वे हमारे आयोगके विचारार्थ विषयोंके बारेमें आपको कोई सूचना दे सकते हैं; और यह भी कि आप हमारे यूनाइटेड किंगडममें, या भारतमें या अन्यत्र हमारे उपनिवेशोंमें लिखित सूचनाएँ माँग सकते हैं, आप ऐसी सभी पुस्तकें, दस्तावेज, रजिस्टर और रेकार्ड माँग सकते हैं और उन्हें देख तथा जाँच सकते हैं जिनसे आपको उपरोक्त विषयके बारेमें अधिकतम जानकारी प्राप्त हो सके, तथा आप अन्य सभी

१. देखिए "भेंट: एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे", १-१२-१९२७।

२. स्टीफेन वाल्श द्वारा स्वास्थ्यकी खराबीके कारण इस्तीफ़ा दिये जानेके बाद उनके स्थानपर ७ दिसम्बर, १९२७को वर्नोन हार्टशोर्नको नियुक्त किया गया।

वैध तरीकों और साधनोंके जरिये, जिसमें हमारे भारत मन्त्रीकी अनुमतिसे आयोग द्वारा किसी व्यक्ति या व्यक्तियोंको अवर जाँच करने और उस जाँचके परिणामोंकी सूचना आयोगको देनेके लिए नियुक्त करनेका अधिकार भी शामिल है, विचारार्थ विषयोंके बारेमें और उससे सम्बन्धित जाँच कर सकते हैं।

हम आपको या आपमें से किसी भी एक सदस्यको यह अधिकार देते हैं कि व्यक्तिगत रूपसे ऐसे स्थानोंपर जाकर मौकेपर जाँच कर सकें जहाँ आप उपर्युक्त उद्देश्योंको ज्यादा कारगर ढंगसे कार्यान्वित करनेकी दृष्टिसे खुद जाकर जाँच करना जरूरी समझें।

और हम इस पत्र द्वारा यह निर्धारित करते हैं कि हमारा यह समादेश पूर्ण रूपसे बराबर लागू रहेगा और यह कि आप, हमारे आयुक्तगण, अथवा आपमेंसे कोई तीन या तीनसे अधिक सदस्य इस समादेशको, तथा इसमें सन्निहित सभी बातोंको कार्यान्वित करनेके लिए कदम उठायेंगे; लेकिन आयोगकी कार्यवाही समय-समयपर स्थगित की जा सकती है।

और हम यह भी निर्धारित करते हैं कि आपको या आपमेंसे किन्हीं तीन या तीनसे अधिक सदस्योंको यह स्वतन्त्रता है कि आवश्यकता अनुभव करनेपर आप इस समादेशके अन्तर्गत अपने कार्योंकी रिपोर्ट देते रहें:

और हमारी यह भी इच्छा है कि आप यथासम्भव कमसे-कम समयके अन्दर अपने हस्ताक्षर और मुहरके साथ या अपनेमें से किन्हीं तीन या तीन सदस्योंके हस्ताक्षर और मुहरके साथ इस समादेशमें निर्धारित विषयोंके बारेमें अपनी रायकी सूचना हमें दें।

हमारे शासनके अठारहवें वर्षमें छब्बीस नवम्बर, उन्नीससौ सत्ताईसको हमारे सेंट जेम्सके दरबारमें महामहिम सम्राट्की आज्ञासे दिया गया।

डब्ल्यू० ज्वायन्सन-हिक्स

[अंग्रेजीसे]
इंडिया इन १९२७-२८

परिशिष्ट ९

हिन्दू-मुस्लिम एकता सम्बन्धी प्रस्ताव

भाग क–राजनीतिक अधिकार[1]

यह कांग्रेस निश्चय करती है: कि १. किसी भी भावी संविधान योजनामें, जहाँतक विभिन्न विधान मण्डलोंमें प्रतिनिधित्वका प्रश्न है, सभी प्रान्तोंमें और केन्द्रीय विधान मण्डलोंमें संयुक्त निर्वाचक मण्डलका गठन किया जायेगा; २. दोनों महान

१. यह प्रस्ताव मद्रासमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके अधिवेशनमें २८ दिसम्बर, १९२७ को पास किया गया था; देखिए २५-१२-१९२७ और २८-१२-१९२७ को अन्सारीको लिखे पत्र।

जातियोंको इस बातका पूरा आश्वासन देनेकी दृष्टिसे कि विधान मण्डलोंमें उनके हितोंकी रक्षा की जायेगी, प्रत्येक प्रान्तमें तथा केन्द्रीय विधान मण्डलमें फिलहाल मौजूदा तौर पर ऐसा प्रतिनिधित्व दिया जाये, और चाहने पर जन-संख्याके आधार पर संयुक्त निर्वाचक मण्डलमें सीटोंके संरक्षणकी व्यवस्थाकी जानी चाहिए।

बशर्ते कि परस्पर सहमतिसे अल्पसंख्यक वर्गोंको अन्योन्य रूपसे ऐसी रियायत दी जायेगी ताकि किसी भी प्रान्त या प्रान्तोंमें जन-संख्याके आधारपर वे जितनी सीटोंके हकदार होंगे उसके अनुपातमें उन्हें और ज्यादा प्रतिनिधित्व मिल सके, और प्रान्तोंके लिए इस प्रकार निश्चित किया गया अनुपात प्रान्तोंसे केन्द्रीय विधान मण्डल में दोनों जातियोंके प्रतिनिधित्वमें भी कायम रखा जायेगा।

पंजाबमें सीटोंके संरक्षणका निर्णय करते समय एक महत्वपूर्ण अल्पसंख्यक जातिके नाते सिखोंके प्रतिनिधित्वके प्रश्नपर पूरा ध्यान रखा जायेगा।

३ (क) कांग्रेसकी रायमें मुसलमान नेताओंका यह प्रस्ताव कि उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त और ब्रिटिश बलूचिस्तानमें उसी पैरा ए पर सुधार लागू किये जायें जिस पैरा ए पर अन्य प्रान्तोंमें लागू किये जायेंगे, एक न्यायसम्मत और औचित्यपूर्ण प्रस्ताव है और उसे लागू किया जाना चाहिए, तथा साथ ही इस बातका भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि उपर्युक्त प्रान्तोंमें प्रशासनिक सुधारोंके साथ-साथ न्याय-प्रशासनकी उपयुक्त प्रणाली भी लागू की जाये;

(ख) (१) इस प्रस्तावके सम्बन्धमें कि सिन्धको एक पृथक प्रान्तके रूपमें गठित किया जाना चाहिए, इस कांग्रेसकी राय है कि अब भाषाके आधारपर प्रान्तोंके पुनर्गठनका समय आ गया है। भाषावार प्रान्तोंके गठनका सिद्धान्त कांग्रेसके संविधानमें स्वीकार किया गया है:

(२) इस कांग्रेसका यह भी अभिमत है कि प्रान्तोंके भाषावार पुनर्गठनका काम तुरन्त हाथमें लिया जाना चाहिए और भाषाके आधारपर इस प्रकारके पुनर्गठनकी माँग करनेवाले किसी भी प्रान्तको पुनर्गठित किया जाना चाहिए;

(३) इस कांग्रेसका यह भी अभिमत है कि आन्ध्र, उत्कल, सिन्ध और कर्नाटकको पृथक प्रान्तोंमें पुनर्गठित करके इस दिशामें आरम्भ किया जाये;

४. कि भावी संविधानमें आत्माकी स्वतन्त्रताकी गारंटी होगी और प्रान्तीय अथवा केन्द्रीय विधान-मण्डलोंको आत्माकी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप करनेवाला कोई कानून बनानेका अधिकार नहीं होगा;

"आत्माकी स्वतन्त्रता" का अर्थ है विश्वास और पूजाकी स्वतन्त्रता, धार्मिक समारोहों और संगठनोंकी स्वतन्त्रता तथा अन्य लोगोंके समान अधिकारोंमें हस्तक्षेप किये बिना और उनकी भावनाओंका ध्यान रखते हुए धार्मिक शिक्षा और प्रचारकी स्वतन्त्रता;

५. कि प्रान्त या केन्द्र, किसी भी जगहके विधान मण्डलमें अन्तर्जातीय मामलों से सम्बन्धित ऐसा कोई विधेयक, प्रस्ताव, प्रावेदन या संशोधन उस स्थितिमें प्रस्तावित नहीं किया जायेगा और न उसपर विचार किया जायेगा या उसे पास किया

जायेगा जब उस विधान मण्डलमें उससे प्रभावित होनेवाली दोनोंमें से किसी भी जातिके तीन-चौथाई सदस्य ऐसे विधेयक, प्रस्ताव, प्रावेदन या संशोधनको पेश करने, उसपर विचार करने या उसे पास करनेका विरोध करें।

"अन्तर्जातीय मामलों" का अर्थ है ऐसे विषय जिन्हें विधान-मण्डलके प्रत्येक सत्रके आरम्भमें सम्बन्धित विधान-मण्डल द्वारा नियुक्त की गई हिन्दू और मुसलमान, दोनों जातियोंके सदस्योंकी संयुक्त स्थायी समितिमें आपसमें तय कर लिया गया हो।

भाग ख — धार्मिक तथा अन्य अधिकार

यह कांग्रेस निश्चय करती है कि:

१. हिन्दुओं और मुसलमानों द्वारा किये जानेवाले अधिकारोंके दावोंके प्रति — हिन्दुओंके इस अधिकारके दावेके प्रति कि वे जहाँ चाहें बाजा बजा सकते हैं और जुलूस निकाल सकते हैं, तथा मुसलमानोंके इस अधिकारके दावेके प्रति कि वे जहाँ चाहें कुर्बानी अथवा खूराकके लिए गोहत्या कर सकते हैं — बिना कोई पूर्वग्रह रखे मुसलमान लोग मुसलमानोंसे अपील करते हैं कि गायके विषयमें वे हिन्दुओंकी भावनाको यथासम्भव चोट न पहुँचायें और हिन्दू लोग हिन्दुओंसे अपील करते हैं कि वे यथासम्भव मस्जिदोंके आगे बाजा बजानेके मामलेमें मुसलमानोंकी भावनाओंको चोट न पहुँचायें।

और इसलिए यह कांग्रेस हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनोंसे आग्रह करती है कि वे गोहत्या रोकने या मस्जिदके सामने बाजोंका बजना रोकनेके लिए हिंसा या कानूनकी मदद न लें।[1]

२. यह कांग्रेस यह भी निश्चय करती है कि प्रत्येक व्यक्ति या समूहको इस बातकी स्वतन्त्रता है कि वह अन्य किसी व्यक्ति या समूहको तर्क करके या समझा-बुझाकर उसका धर्म-परिवर्तन कर दे या पुनःधर्म परिवर्तन कर दे, किन्तु किसी व्यक्ति या समूहको इस बातका अधिकार नहीं होगा कि वह छल, बल अथवा अन्य किसी अनुचित तरीकेसे जैसे कि धनका लालच देकर धर्म-परिवर्तन कराये या धर्म-परिवर्तन को रोके। अट्ठारह वर्षसे कम आयुके व्यक्तिका धर्म-परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए; हाँ, माता-पिता या अभिभावकके साथ-साथ उसका धर्म-परिवर्तन किया जाये तो अलग बात है। यदि अट्ठारह वर्षसे कम आयुका कोई व्यक्ति अपने माता-पिता या अभिभावकसे अलग अन्य धर्मावलम्बियोंके बीच असहायावस्थामें पाया जाये तो उसे उसके स्वधर्मावलम्बियोंको सौंप दिया जाना चाहिए। जिस व्यक्तिका धर्म परिवर्तन किया जाये, या पुनर्धर्म परिवर्तन किया जाये, उसके नामके बारेमें तथा जहाँ किया जाये, जब किया जाये औ रजिस प्रकार किया जाये, इसके बारेमें कोई गोपनीयता नहीं होनी चाहिए, और न धर्म-परिवर्तन या पुनर्धर्म परिवर्तनके समर्थनमें कोई हर्ष-प्रदर्शन किया जाना चाहिए।

१. २७-१२-१९२७ के हिन्दूके अनुसार इस खण्डका मसविदा मूलतः गांधीजीने तैयार किया था और थोड़ेसे शाब्दिक हेर-फेरके साथ कांग्रेस द्वारा स्वीकार किया गया था।

जब भी किसी धर्म-परिवर्तन या पुनर्धर्म परिवर्तनके मामलोंमें ऐसी शिकायत की जाये कि ऐसा छल-बल अथवा अनुचित तरीकेसे किया गया है, और जब भी किसी अट्ठारह वर्षसे कम आयुके व्यक्तिका धर्म-परिवर्तन किया गया हो तो मामलेकी तहकीकात और उसका फैसला पचो द्वारा किया जायेगा जिन्हे कार्य-समिति नामजद करके या सामान्य नियमोंके अन्तर्गत नियुक्त करेगी।

इस प्रस्तावको श्रीमती सरोजिनी नायडूने पेश किया और श्री अबुल कलाम आजादने इसका अनुमोदन किया।

प्रस्तावपर मत लिये गये और वह सर्व सम्मतिसे पास हो गया।

[अंग्रेजीसे]

रिपोर्ट ऑफ द फोर्टी सेकेण्ड इंडियन नेशनल कांग्रेस एट मद्रास

परिशिष्ट १०

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[1]

इलाहाबाद
११ जनवरी, १९२८

प्रिय बापूजी,

कार्य समितिकी बैठक अब बनारसमें होनेवाली है और इसलिए मै कुछ समय तक बम्बई या साबरमती नही जा सकता।

पिछला पत्र भेजनेके इतनी जल्दी बाद ही आपको दूसरा पत्र भेजनेका मन नही होता, लेकिन काग्रेसके प्रस्तावोकी आपने जो आलोचना की है उससे मैं बहुत उद्विग्न हूँ और मुझे लगता है कि मुझे आपको फिरसे पत्र लिखना ही चाहिए। आप शब्दोंके चयनमें हमेशा बहुत सावधान रहते हैं और आपकी भाषा अत्यन्त संयत होती है। इसलिए आपको ऐसी भाषाका प्रयोग करते देख कर मुझे और भी आश्चर्य होता है और जो मेरी रायमें सर्वथा अनुचित है। आपने विषय समितिकी कार्यवाहीकी सामान्य रूपसे निन्दाकी है और कुछ प्रस्तावोंको विशेष रूपसे ज्यादा कड़ी आलोचना और निन्दा करनेके लिए चुना है। क्या मै यह कह सकता हूँ कि सुनी-सुनाई बातके आधारपर निर्णयकर बैठना हमेशा खतरनाक होता है? आप खुद उपस्थित नही थे और यह बात कतई सम्भव है कि विषय समितिमें व्यक्तिशः आनेके बाद आप जो राय बनाते वह फर्क होती। और फिर भी आपने चन्द लोगोंके विचारोंको अपने निर्णयका आधार बनाकर सम्पूर्ण समितिकी, या किसी भी हालत उसके अधिकांश सदस्योकी निन्दा करना और उनके प्रतिकूल निर्णय देना ठीक समझा है। क्या आप सोचते हैं कि समिति या काग्रेसके लिए यह बात न्यायपूर्ण है? आपने अनुशासनकी

१. देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", ७-१-१९२८।

चर्चा की है और कार्य समितिको राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डलके समान बताया है। क्या मैं आपको याद दिला सकता हूँ कि आप कार्य समितिके एक सदस्य हैं और एक सदस्यके लिए कांग्रेस अधिवेशन समाप्त होनेके दूसरे ही दिन कांग्रेस और उसकेप्र मुख प्रस्तावों की आलोचना और निन्दा करना एक असाधारणसी बात है। मद्रास कांग्रेस अधिवेशनकी सफलता पर सभी ओरसे बधाईके स्वर गूँजते रहे है। यह गलत हो सकता है या हो सकता है कि इसके लिए शायद पर्याप्त आधार न हो, लेकिन देशमें असंदिग्ध रूपसे ऐसी ही धारणा बनी है और सभी सार्वजनिक कार्योंमें वातावरण का बहुत महत्व होता है। और अब अधिकांश लोग जो वैसा मानते थे, वे आपकी आलोचनाओंसे हक्का-बक्का रह गये हैं और सोचते है कि कहीं पहलेका उनका उत्साह जरूरतसे ज्यादा और गलत तो नही था।

आपने स्वतन्त्रता प्रस्तावको 'उतावलीमें सोचा और बिना विचारे स्वीकार किया गया' बताया है। मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ कि किस प्रकार देशने अनेक वर्षोंसे इस प्रश्न पर चर्चा की है और विचार किया है और किस प्रकार मैं पिछले पाँच वर्ष या उससे अधिक समयसे स्वयं उसके ऊपर सोचता रहा हूँ, इसके ऊपर चर्चाएँ करता रहा हूँ, सभाओंमें इसके बारेमें बोलता रहा हूँ, इसके बारेमें लिखता रहा हूँ, और सामान्य रूपसे यह बात हमेशा मेरे दिमागमें सबसे ऊपर रही है। ऐसी स्थितिमें मुझे लगता है कि भाषाकी कितनी ही खींच-खाँचसे भी 'उतावलीमें सोचा गया' इन शब्दोंका औचित्य नहीं ठहरता। जहाँ तक 'बिना विचारे स्वीकार किया गया' का सवाल है, आप शायद नही जानते कि इस प्रस्तावपर विषय समिति में लगभग तीन घंटे तक विचार किया गया और इसके पक्ष और विपक्षमें एक दर्जनसे ज्यादा लोगोंने भाषण दिया। अंततः जैसा कि आप जानते हैं, इस प्रस्तावको लगभग सर्वसम्मतिसे विषय समितिमें और खुले अधिवेशनमें, दोनो जगह पास कर दिया गया। क्या वे सभी लोग जिन्होंने समितिमें और अधिवेशनमें इसके पक्षमें मत दिया, 'लापरवाह' लोग थे? क्या यह पूर्व धारणा जरा ज्यादा नहीं है? और यह बात ज्यादा सचाईके साथ क्यों नहीं कही जा सकती कि जिन थोड़ेसे लोगोंने इस प्रस्तावका विरोध किया वे गलती पर थे? आप कहते हैं कि पिछले वर्ष इस प्रस्ताव को समितिने अस्वीकार कर दिया था। मुझे नही पता कि आप इससे क्या निष्कर्ष निकालते हैं, लेकिन मुझे यह बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि इसके अर्थ केवल यही है कि समिति और कांग्रेस आजकी ही तरह पहले भी इसे पास करनेको उत्कंठित थे, लेकिन आपका लिहाज करके उन्होंने वैसा नहीं किया। मुझे आशा है आप मुझसे सहमत होंगे कि किसी सार्वजनिक प्रश्न पर अपनी निश्चित रायको किसी व्यक्तिके प्रति अपने लिहाजके कारणवश ही दबाना किसी संगठनके लिए स्वस्थ राजनीति नही हो सकती।

मैं यहाँ प्रस्तावके गुणोंकी चर्चा नहीं कर रहा हूँ। लेकिन मैं केवल इतना ही कहूँगा कि लम्बे समय तक और सावधानीके साथ विचार करनेके बाद मेरे लिए स्वतंत्रता तथा स्वतंत्रतामें जो भी अन्तर्निहित चीजें हैं, उनकी माँग मेरे लिए बहुत

अधिक महत्व रखने लगी है, और लगभग किसी भी अन्य चीजकी अपेक्षा इसको ज्यादा महत्व प्रदान करता हूँ। आपने इस प्रश्न पर उस दिन मद्रासमें जो कुछ कहा उसके एक-एक शब्द पर मैंने विचार किया है, और इससे मेरी रायकी और पुष्टि हुई है। लेकिन एक छोटेसे दायरेको छोड़कर उसके वाहरका कोई आदमी इसके वारेमें आपकी स्थितिको समझता है, इसमें मुझे सन्देह है। मुझे विश्वास है कि अन्य लोग भी — उदारपन्थी आदि — जो औपनिवेशिक स्वराज्य चाहते हैं, आपकी तरह नहीं सोचते। साइमन-वहिष्कारके प्रश्न पर सर अली इमामने यहाँ कल एक सभामें भाषण दिया था। मै भी कुछ मिनटोंके लिए वोला, और राजा चार्ल्सके सरकी तरह स्वतंत्रताका सवाल उठ पडा और मैंने उसपर जोर दिया। सभाके वाद अली इमामने मुझसे कहा कि उस पर जोर देकर मैंने अच्छा किया था, उन्होंने कहा कि वह और उनके साथी शायद देर-सवेर इसके समर्थक हो जायेंगे, लेकिन फिलहाल उन्हे कुछ आत्म-संयमसे काम लेना जरूरी है क्योंकि वे अपने साथ वहुतसे लोगोंको लेकर चलना चाहते हैं। मुझें विश्वास है कि उदारवादी लोग कहें चाहे जो कुछ, लेकिन उनमेंसे अधिकांश लोग स्वतन्त्रता प्रस्तावका स्वागत करते हैं क्योंकि वे महसूस करते हैं कि इससे उनकी स्थिति मजवूत होती है। लेकिन वे इसे पसन्द करें या न करें, मेरी समझमें यह वात विलकुल नहीं आती कि कोई राष्ट्रीय संगठन औपनिवेशिक स्वराज्यको अपना आदर्श और लक्ष्य कैसे वना सकता है। इसके विचारमात्रसे मेरा दम घुटने लगता है।

मैंने ब्रिटिश मालके वहिष्कार सम्वन्धी प्रस्तावमें कोई विशेष रुचि नहीं ली। इसका मुख्य कारण यह था कि मुझे लगा कि आप इसे बिलकुल ठीक नही मानेंगे और जव तक कमोवेश सभी लोग एक जुट होकर कोशिश न करें तवतक बहिष्कार सफल नही हो सकता। लेकिन मुझे इस वातमें कोई सन्देह नही है कि यदि हमारे अपने दलमें कुछ मतैक्य हो तो बहिष्कारको आंशिक रूपसे सफल वनाया जा सकता है। आपने चीनमें बहिष्कारकी आश्चर्यजनक सफलताके वारेमें अवश्य पढ़ा होगा। चीनमें ऐसी कोई विशेषता नही थी जो हममें नही है, और ऐसा माननेका कोई वुनियादी कारण नही है कि जिस मामलेमें उन्हें सफलता मिली उसमें हम सफल नही हो सकते। लेकिन यह मान भी लें कि उसके सफल होनेकी सम्भावना नही है, तो भी क्या कुल मिलाकर वह इतनी हास्यास्पद चीज है? क्या खद्दरके जरिये विदेशी कपड़ेके हमारे वहिष्कारको ऐसी असाधारण सफलता मिली है? क्या हमारा खादी मताधिकारका सिद्धान्त सफल हुआ है? वे चीजें सफल नही हुई है, फिर भी आप उन्हें देश पर और काग्रेस पर आग्रहपूर्वक थोपनेमें नही हिचकते क्योंकि आपको लगता है और ठीक ही लगता है, कि वे पूरी तरह सफल न भी हों तो भी उनसे देशको लाभ होगा।

मुझे याद है कि केलकर, अणे और उनके साथी कार्य समितिके सदस्य होते हुए भी खादी सम्वन्धी कांग्रेस प्रस्तावकी किस प्रकार हँसी उड़ाया करते थे, और मुझे यह सोचकर वहुत तकलीफ होती है कि आप भी कांग्रेसके महत्वपूर्ण प्रस्तावोंकी

खिल्ली उड़ा रहे हैं। केलकर और अणे जैसे लोगोंका कोई महत्व नहीं है और वे क्या कहते और करते हैं इसकी मुझको परवाह नही है। लेकिन आप जो कुछ कहते हैं या करते है, उसकी मै जरूर बहुत ज्यादा परवाह करता हूँ।

दो प्रस्तावोंकी विशेष रूपसे निन्दा करनेके बाद आप अन्य प्रस्तावोंकी बहुत हल्के ढंगसे चर्चा करते हुए उन्हें 'अनेक गैरजिम्मेदाराना प्रस्ताव' बताते हैं। एकता-प्रस्तावको छोड़कर कांग्रेसका हर प्रस्ताव इस शीर्षकके अन्तर्गत आ सकता है। और इस प्रकार विषय समितिके २०० से ऊपर सदस्यों तथा कांग्रेसके बहुत सारे लोगोंकी मेहनतको यों ही सरसरी तौर पर और तिरस्कारके साथ बरतरफ कर दिया गया है। उन अभागे लोगोंके लिए, जो भले ही दूरन्देश और कुशाग्र बुद्धि न हों, लेकिन जिन्होंने अपनी क्षमताभर कोई कसर नही उठा रखी और जितना कुछ कर सकते थे उतना किया, यह बात बड़े ही दुर्भाग्यकी है। हम सभी लोग स्कूली लड़कोंकी 'वाद-विवाद सोसाइटी' के स्तर पर रख दिये गये हैं और आप एक क्रुद्ध स्कूल मास्टरकी तरह हमारी ताड़ना करते है, लेकिन एक ऐसे स्कूल मास्टरकी तरह जो हमारा मार्गदर्शन नहीं करता, या हमें शिक्षा नही देता, लेकिन जो समय-समय पर केवल हमारी गलतियोंको ही इंगित करता है। व्यक्तिशः मेरी बड़ी इच्छा है कि काश हम सब सचमुच स्कूली लड़के होते, जिनमें स्कूली लड़कोंकी जीवन्तता, शक्ति और दुस्साहस होता, और उन राइट आनरेबुल और आनरेबुल महानुभावोंकी तरह न होते जो हमेशा आगा-पीछा सोचते रहते हैं और कीमतका तखमीना लगाते रहते हैं।

आप जानते हैं कि एक ऐसे नेताके रूपमें आपके प्रति मेरे मनमें कितनी श्रद्धा और कितना विश्वास रहा है जो इस देशको विजय और स्वतंत्रता दिला सकता है। ऐसा मैंने इस तथ्यके बावजूद किया है कि आपकी पहलेकी कुछ पुस्तकों — 'इंडियन होमरूल' आदि, — में कही गई बातोंसे मैं सहमत नही था। मुझे लगता था और आज भी लगता है कि आप अपनी इन छोटी-मोटी पुस्तिकाओंकी अपेक्षा कहीं अधिक महान थे और हैं। सब चीजोंसे अधिक मैं कर्म और निर्भीकता तथा साहसका प्रशंसक हूँ और मैंने ये सभी गुण आपमें असाधारण मात्रामें पाये। और मुझे सहज ही लगा कि मैं आपसे कितना ही ज्यादा असहमत क्यों न होऊँ, लेकिन आपका महान व्यक्तित्व और आपके ये गुण हमें हमारे लक्ष्य तक पहुँचा देंगे। असहयोग आन्दोलनके जमानेमें आप सर्वोच्च शिखर पर थे; आप अपने सहज रूपमें थे और अनायास ही आपने सही कदम उठाये। लेकिन आपके जेलसे बाहर आनेके बादसे कहीं कुछ गड़बड़ हो गया लगता है और स्पष्ट ही आप बहुत अशान्त रहे है। आपको याद होगा कि किस प्रकार कुछ महीनोंके अन्दर, बल्कि हफ्तोंके अन्दर आपने बार-बार अपना रवैया बदला था — जुहूसे दिये गये वक्तव्य, अहमदाबादमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक और उसके बाद आदि — और हममें से अधिकांश लोग बिल्कुल किंकर्तव्य-विमूढ़ रह गये थे। वह किंकर्तव्य-विमूढ़ता तबसे बनी ही हुई है। मैंने आपसे कई बार पूछा है कि आप भविष्यमें क्या करनेकी आशा रखते है, और आपके उत्तर

हमेशा ऐसे रहे हैं कि जिन्हें सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। आपने कुछ कहा है तो बस इतना कि एक साल या अट्ठारह महीनेके अन्दर आप यह आशा करते हैं कि खादी आन्दोलन तेजीसे और गुणोत्तर अनुपातमें फैलेगा और तब राजनीतिक क्षेत्रमें कोई सीधी कार्रवाई की जा सकेगी। तबसे अबतक कई साल और कई अट्ठारह महीने गुजर चुके हैं और वह चमत्कार अभी तक घटित नहीं हुआ है। यह मानना कठिन था कि चमत्कार होगा, लेकिन असम्भवको सम्भव बनानेकी आपकी क्षमतामें हमारी जो निष्ठा थी उसने हमें आशान्वित रखा। लेकिन मेरे जैसे अधार्मिक व्यक्तिके लिए यह निष्ठा बहुत कमजोर सहारा थी, और मैं अब सोचने लगा हूँ कि यदि हम भारतमें खादीके सर्वप्रचलित होने तक स्वतंत्रताकी प्रतीक्षा करेंगे तो हमें अनन्तकाल तक प्रतीक्षा करनी होगी। खादीका विकास धीरे-धीरे होगा, और अगर युद्ध शुरू हो गया तो वह बहुत तेजीसे बढ़ेगा, लेकिन मैं यह नहीं देख पाता कि उसके पीछे-पीछे स्वतंत्रता किस प्रकार आयेगी। जैसा कि मैंने आपके सामने कहा था, खादी कार्यका राजनीतिसे कोई वास्ता नहीं है और खादी कार्यकर्त्ताओंमें ऐसी मनोवृत्ति पैदा हो रही है कि उनको अपने सीमित कार्यक्षेत्रसे बाहर किसी चीजसे कोई मतलब नहीं है। जो काम वे करते हैं उसके लिहाजसे यह चीज अच्छी हो सकती है, लेकिन उनसे राजनीतिक क्षेत्रमें कुछ करनेकी कोई आशा नहीं रखी जा सकती।

तब फिर क्या किया जा सकता है? आप कुछ कहते नहीं। आप केवल आलोचना करते हैं और कोई मार्गदर्शन आपकी तरफसे नहीं मिलता। आप कहते हैं कि यदि देश खादी तकको नहीं अपना सकता तो फिर उससे किसी और अधिक कठिन या साहसिक कामकी अपेक्षा कैसे की जा सकती है। मैं नहीं समझता कि यह तर्क सही है। यदि एक तरीकेसे देश राजनीतिक दिशामें आगे नहीं बढ़ता, तो निश्चय ही हमारे नेताओंको चाहिए कि वे कोई दूसरा तरीका या अतिरिक्त तरीके ढूँढ़ें।

'यंग इंडिया' में आपके लेखों — आपकी आत्मकथा आदि — को पढ़ते हुए मुझे अक्सर लगा है कि मेरे आदर्श आपके आदर्शोंसे कितने भिन्न हैं। और मुझे लगा है कि आप अपने निष्कर्षोंमें बहुत जल्दबाजीसे काम लेते रहे हैं, या कहें कि किसी अमुक निष्कर्ष पर पहुँचनेके बाद आप जो भी साक्ष्य पा सके उस साक्ष्यके आधार पर उस निष्कर्षको उचित ठहरानेके लिए जरूरतसे ज्यादा व्यग्र रहे हैं। मुझे याद है कि किस प्रकार 'टू वेज' या ऐसे ही किसी शीर्षकवाले लेखमें आपने अपराधों और अनैतिकताके विषयमें अमेरिकासे प्राप्त अखबारी कतरनोंको छाप कर अमेरिकी सभ्यता और भारतीय सभ्यताका भेद दर्शाया था। मुझे लगा कि यह कुछ ऐसा ही था जैसे कैथरीन मेयो अस्पतालोंसे प्राप्त कुछ घिनौने तथ्योंके आधार पर कोई निष्कर्ष निकाल रहा हो। फ्रेंच भाषाकी पुस्तक — 'टुवर्ड्स मॉरल बैंकरप्सी' — पर आधारित आपकी लम्बी लेखमाला पढ़कर भी मुझे वैसा ही लगा। मुझे लगता है कि आप पश्चिमकी सभ्यताको गलत समझते हैं और उसकी बहुत-सी

त्रुटियाँ है जिन्हें बहुत ज्यादा महत्व प्रदान करते हैं। आपने किसी जगह कहा है कि भारतको पश्चिमसे सीखनेके लिए कुछ नहीं है और वह प्राचीन कालमें ज्ञानके चरम शिखर पर पहुँच चुका है। मैं निश्चय ही इस दृष्टिकोणसे असहमत हूँ और न तो मैं यह मानता हूँ कि तथाकथित रामराज्य पुराने समयमें अच्छा था, और न ही मैं उसे पुन:स्थापित देखना चाहता हूँ। मेरा विचार है कि पश्चिमी, बल्कि औद्योगिक सभ्यता भारत पर हावी होकर रहेगी; हो सकता है कि वह सभ्यता बहुतसे परिवर्तनों और संशोधनोंके साथ आये, लेकिन हर सूरतमें वह मुख्यतया उद्योगवाद पर आधारित होगी। आपने उद्योगवादकी अनेक स्पष्ट त्रुटियोंकी कड़ी आलोचना की है और उसके गुणोंकी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया है। इन त्रुटियोंको हर आदमी जानता है और आदर्श राज्यों तथा सामाजिक सिद्धान्तोंका उद्देश्य उन्हें दूर करना है। पश्चिमके अधिकांश विचारकोंका मत है कि ये त्रुटियाँ उद्योगवादके कारण नहीं हैं बल्कि पूँजीवादी प्रणालीके कारण हैं जो दूसरोंके शोषणपर आधारित है। मैं मानता हूँ कि आपने कहा है कि आपकी रायमें पूँजी और श्रममें कोई अनिवार्य संघर्ष नहीं है। मेरे विचारसे पूँजीवादी प्रणालीमें यह संघर्ष अनिवार्य है।

आपने दरिद्रनारायण -- भारतमें गरीब लोगों -- के दावोंका बड़े भावपूर्ण और शक्तिशाली ढंगसे समर्थन किया है। मैं यह मानता हूँ कि आपने जो उपाय सुझाया है वह उनके लिए बहुत उपयोगी है, और अगर वे बड़ी तादादमें उसे अपनायेंगे तो उससे उनके दुख कुछ हदतक हल्के होंगे। लेकिन मुझे इस बातमें बहुत सन्देह है कि गरीबीके बुनियादी कारणों पर इससे कोई प्रभाव पड़ेगा। भारतके बहुत बड़े भागमें आज अर्द्ध-सामंती जमींदारी व्यवस्थाके विरुद्ध आप एक शब्द भी नहीं कहते और न पूँजीपतियों द्वारा श्रमिकों और उपभोक्ताओंके शोषणके विरुद्ध कुछ कहते हैं।

लेकिन मुझे बस करना चाहिए। औचित्यकी मर्यादासे मैं पहले ही आगे जा चुका हूँ और मैं आशा करता हूँ कि आप मुझे क्षमा कर देंगे। मेरे मनका द्वन्द्व ही इसकी एकमात्र कैफियत है जो मैं दे सकता हूँ। मैं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का मंत्री नहीं बनना चाहता था क्योंकि मैं जो जरूरी लगे उसे कहने और करनेकी पूरी स्वतंत्रता चाहता था। लेकिन अन्सारीने मुझ पर यह कहकर दबाव डाला कि मेरे कई प्रस्ताव और विशेष रूपसे स्वतंत्रता सम्बन्धी प्रस्ताव कांग्रेस द्वारा पास कर दिये गये हैं और इस प्रकार मुझे अपने ही रास्ते पर काम करनेकी पूरी आजादी है। मैं इस तर्कका जवाब नहीं दे सका और मुझे स्वीकार करना पड़ा। अब मैं देखता हूँ कि कांग्रेसके इन्ही प्रस्तावोंका महत्त्व घटाने और उनकी खिल्ली उड़ानेकी हरचन्द कोशिशकी जा रही है और यह अनुभव पीड़ाजनक है।

सस्नेह आपका,
जवाहरलाल

अंग्रेजी (एस० एन० १३०३९) की फोटो-नकलसे।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली : गांधी साहित्य और गांधीजी से सम्बन्धित कागजपत्रोंका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

साबरमती संग्रहालय : पुस्तकालय तथा संग्रहालय; जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'आज': वाराणसीसे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

'ट्रिब्यून': लाहौरसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'नवजीवन': (१९१९-१९३१) गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'प्रजाबन्धु': अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'यंग इंडिया': (१९१८-३१): अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक। सम्पादक : मो० क० गांधी, प्रकाशक : मोहनलाल मगनलाल भट्ट।

'समाज': कटकसे प्रकाशित उड़िया साप्ताहिक; अप्रैल, १९३० से दैनिकके रूपमें प्रकाशित।

'सर्चलाइट': पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सीलोन आब्जर्वर': लंकासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सीलोन डेली न्यूज': लंकासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दी नवजीवन': गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

उड़ीसा सरकारके रेकार्ड।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी: जो स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित है।

'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', (अंग्रेजी) : जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई १९५८।

'पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद' (हिन्दी) : काका कालेलकर द्वारा सम्पादित, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'फोर्टी सेकंड इंडियन नेशनल कांग्रेस एट मद्रास,' १९२७।

'बापुना पत्रो : मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) : सम्पादक : मणिबहन पटेल; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी) : सम्पादक : टी० एन० जगदीशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३।

'विट्ठलभाई पटेल : लाइफ ऐंड टाइम्स,' खण्ड २ : आर० ए० मोरारकर, श्री लक्ष्मीनारायण प्रेस, ३६४, ठाकुरद्वार, बम्बई।

'विद गांधीजी इन सीलोन' : महादेव देसाई, करेन्ट थॉट प्रेस, मद्रास, १९२८।

'साबरमती' : खण्ड ६, अंक ४ : नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।

'हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस' खण्ड १ : डा० पट्टाभि सीतारमय्या, पद्मा प्रकाशन लिमिटेड, बम्बई, १९४६।

'हैलिफेक्स' : द लाइफ ऑफ लॉर्ड हैलिफैक्स' : अर्ल ऑफ बर्कनहेड, हेमिश हैमिल्टन, लन्दन, १९६५।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१६ सितम्बर, १९२७ से ३१ जनवरी, १९२८ तक)

१६ सितम्बर: खादी प्रचारार्थ दक्षिण भारतमें गांधीजीका दौरा जारी; ब्राह्मण और अब्राह्मण प्रश्नके सम्बन्धमें तंजौरमें भाषण।

१७ से २० सितम्बर: त्रिचनापल्ली तथा उसके आसपास विभिन्न सभाओंमें भाषण।

२१ सितम्बर: पुदुकोट्टामें नागरिकोंकी सभामें भाषण।

२२ सितम्बर: नाचन्दीपट्टी, कदियापट्टी और कनडुकातनका दौरा किया।

२३ सितम्बर: पालाथूर, कोट्टायुर और अमरावतीपुरका दौरा किया।

२४ सितम्बर: कराइकुडीमें स्त्रियोंकी सभामें भाषण; देवकोट्टामें भी भाषण।

२५ और २६ सितम्बर: कराइकुडीमें।

२७ सितम्बर: सिरुवयल, तिरुप्पत्तूर और पागानेरीका दौरा।

२८ सितम्बर: मदुरै पहुँचे; नगरपालिकाकी ओरसे अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया, तदुपरांत सार्वजनिक सभामें भाषण।

२९ सितम्बर: मदुरैमें; सौराष्ट्र क्लबमें भाषण।

३० सितम्बर: तिरुमंगलम्की सार्वजनिक सभामें भाषण; जस्टिस पार्टीके नेताओंके साथ बातचीत।

१ अक्तूबर: परमाकुडीमें।

२ अक्टूबर: विरुधुनगरमें; रेवरेंड जे० हिम्मस्ट्रैंड तथा अब्राह्मण युवक संघसे भेंट; सार्वजनिक सभामें भाषण।

३ अक्टूबर: विरुधुनगरमें; मौनवार।

४ अक्टूबर: राजापालयम्में; स्त्रियोंकी सभा तथा सार्वजनिक सभामें भाषण; एक खादी वस्त्रालयका उद्घाटन किया।

५ अक्टूबर: कोइलपट्टीमें।

६ अक्टूबर: तूतीकोरिनमें; सार्वजनिक सभामें भाषण।

७ अक्टूबर: तिन्नेवेल्लीमें; सार्वजनिक सभामें भाषण।

८ अक्टूबर: नगरकोइलकी सभामें भाषण।

९ और १० अक्टूबर: त्रिवेन्द्रम्में; त्रावणकोरके महाराजा और महारानीसे भेंट की तथा तिरुवरप्पु मन्दिर-मार्ग पर अस्पृश्योंके प्रवेशके सवालपर बातचीत की।

११ अक्टूबर: क्विलनमें।

१२ अक्टूबर: अलेप्पीमें।

१३ अक्टूबर: एर्नाकुलम् तथा कोचीनमें; गो-रक्षापर सर्वोत्तम निबन्धके लिए १००० रुपयेके पुरस्कारकी पुनः घोषणा की; 'नीलकी प्रतिमा-सम्बन्धी सत्याग्रह' पर लेख लिखा।

१४ अक्टूबर : त्रिचूरमें।

१५ अक्टूबर : पालघाटमें; कामकोटि पीठके स्वामी शंकराचार्यके साथ बातचीत की; सार्वजनिक सभामें भाषण।

१६ अक्टूबर : कोयम्बटूरमें; सार्वजनिक सभामें भाषण; च० राजगोपालाचारीने घोषणा की कि गांधीजी २१ अक्टूबरतक कोयम्बटूरमें आराम करेंगे।

१७ अक्टूबर : कोयम्बटूरमें; वाइसरायसे प्रस्तावित भेंटके बारेमें वि० झ० पटेलके साथ तार-व्यवहार।

१८ अक्टूबर : पोलाचीमें भाषण और कोयम्बटूर वापस।

१९ से २१ अक्टूबर : कोयम्बटूरमें; 'मैं हिन्दू क्यों हूँ ?' लेख छपा।

२२ से २४ अक्टूबर : तिरुपुरमें; सार्वजनिक सभामें भाषण; २ नवम्बरको वाइसरायसे भेंटके लिए उनका निमंत्रण-पत्र स्वीकार किया।

२५ अक्टूबर : कालीकटमें।

२६ अक्टूबर : नीलेश्वर, कैसरगोड़ और मंगलोरमें; मंगलोरकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

२७ अक्टूबर : दिल्लीमें वाइसरायसे भेंटके लिए मंगलोरसे पानीके जहाजसे बम्बई रवाना हुए। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके तत्वावधानमें कलकत्तामें एकता सम्मेलनका आयोजन किया गया गांधीजीने इस सम्मेलनमें भाग नहीं लिया।

२८ अक्टूबर : बम्बई पहुँचे; शाही आयोगमें परामर्शदाताओंकी नियुक्ति तथा हिन्दू-मुस्लिम एकताके सम्बन्धमें पत्र-प्रतिनिधियोंसे भेंट की।

३० अक्टूबर : बम्बईसे दिल्लीके लिए रवाना हुए।

१ नवम्बर : दिल्लीमें; खादी प्रचारक मंडलकी बैठकमें भाग लिया।

२ नवम्बर : दिल्लीमें वाइसराय लॉर्ड इरविनसे भेंट की; जामिया मिलिया इस्लामिया देखने गये तथा छात्रोंकी सभामें भाषण दिया।

३ नवम्बर : रात अहमदाबाद पहुँचे।

४ नवम्बर : साबरमती आश्रम, अहमदाबादमें।

५ नवम्बर : रातमें बम्बईके लिए रवाना।

६ नवम्बर : बम्बई पहुँचे।

७ नवम्बर : एस० एस० 'कोलाबा' जहाजसे लंकाके लिए रवाना।

८ नवम्बर : वाइसरायने सर जॉन साइमनकी *अध्यक्षतामें* शाही आयोगके सदस्योंकी घोषणा की।

१२ नवम्बर: गांधीजी रातमें कोलम्बो पहुँचे।

१३ नवम्बर : कोलम्बोमें; पत्र-प्रतिनिधियोंसे भेंटके दौरान कहा कि साइमन आयोग पर मत प्रगट करनेके मामलेमें मेरा अन्तःकरण कांग्रेसके हाथोंमें है। चेट्टियार लोगोंकी सभामें तथा विवेकानन्द सोसाइटीकी ओरसे आयोजित सभामें भाषण।

१४ नवम्बर : कोलम्बोमें; मौनवार।

१५ नवम्बर : कोलम्बोमें; नगरपालिका द्वारा अभिनन्दनपत्र दिया गया; छात्रों, बौद्धों और ईसाइयोंकी सभाओंमें भाषण।

१६ नवम्बर: कोलम्बोमें; ईसाई मिशनरियों तथा श्रमिकोंके बीच भाषण।

१७ नवम्बर: कोलम्बोसे पालियागोडा, नेगोम्बो, मादाम्पी, चिलाव, कुरुनेगल और कातुगास्टोटा गये।

१८ नवम्बर: माटले और कैण्डीकी सार्वजनिक सभाओंमें भाषण; दलद मलिगवा गये तथा दन्त-अवशेष देखा।

१९ नवम्बर: बादुल्लामें।

२० नवम्बर: नुवारा इलियामें।

२१ नवम्बर: कैण्डीमें, मौनवार।

२२ नवम्बर: कोलम्बो वापस आये तथा पारसियो, लंका राष्ट्रीय कांग्रेस तथा अन्य सभाओंमें भाषण।

२३ नवम्बर: पानडुरा और गैलेका दौरा किया।

२४ नवम्बर: गैले और मतारामें भाषण।

२५ नवम्बर: कोलम्बो वापस तथा विदाई सभामें भाषण।

२६ से २९ नवम्बर: जफनामें; सभाओंमें भाषण।

३० नवम्बर: लंकासे रवाना होकर रामनाड पहुँचे; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१ दिसम्बर: मद्रास पहुँचे, शाही आयोगके सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे भेंट की; उड़ीसाकी यात्रा पर रवाना।

३ दिसम्बर: चिकाकोलकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

४ दिसम्बर: सुबह इच्छापुरम्, पालसा, वरुवा और कावित‍ि गये तथा चिकाकोलमें स्त्रियोंकी सभामें भाषण दिया। शामको बरहामपुरमें छात्रोंकी सभामें भाषण।

५ दिसम्बर: बरहामपुरमें; मौनवार।

६ दिसम्बर: बरहामपुरकी सार्वजनिक सभामें भाषण। अस्का, गोहरा, रसेलकोंडा भी गये; सभाओंमें भाषण दिये तथा थैलियाँ प्राप्त की और फिर रातमें ठहरने के लिए बोइरानी चले गये।

७ दिसम्बर: पुरुषोत्तमपुर, कोडला और खल्लीकोट गये।

८ दिसम्बर: बानपुरमें।

९ दिसम्बर: रक्तचाप बढ जानेकी वजहसे पूर्ण आरामके लिए बोलगढ़ गये।

१० दिसम्बर: बोलगढकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

११ और १२ दिसम्बर: बोलगढ़में आराम।

१३ दिसम्बर: बेगुनियाँ, सखीगोपाल और पुरीमें; जगन्नाथजीके मन्दिरमें नहीं गये।

१४ दिसम्बर: बालासोर पहुँचे।

१५ से १७ दिसम्बर: बालासोरमें।

१८ दिसम्बर: कटक पहुँचे; रक्तचाप बढ़ जानेकी वजहसे सभी कार्यक्रम रद कर आराम किया।

२० दिसम्बर: कटककी सार्वजनिक सभामें महात्माजीका भाषण पढ़ा गया।

२१ दिसम्बर: मद्रासमें होनेवाले भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें भाग लेनेके लिए कटकसे रवाना।

२३ दिसम्बर: मद्रासकी खादी और हिन्दी प्रदर्शनीमें भाषण।

२३ से २८ दिसम्बर: मद्रासमें कांग्रेस नेताओंके साथ बातचीत।

२६ दिसम्बर: मद्रासमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका वार्षिक अधिवेशन आरम्भ हुआ।

२७ दिसम्बर: दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंसे सम्बन्धित गांधीजीके द्वारा तैयार किया गया प्रस्तावका मसविदा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसने सर्वसम्मतिसे स्वीकार कर लिया।

२८ दिसम्बर: बम्बईके लिए रवाना।

२९ दिसम्बर: हकीम अजमलखाँकी मृत्यु।

३० दिसम्बर: बम्बई पहुँचे; हिन्दू-मुस्लिम एकता और स्वाधीनता सम्बन्धी कांग्रेसके प्रस्तावोंपर पत्र-प्रतिनिधिसे भेंट।

३१ दिसम्बर: साबरमती पहुँचे।

१९२८

१ से २१ जनवरी: गांधीजी सत्याग्रह आश्रम, साबरमतीमें रहे।

७ जनवरी: नेशनल मुस्लिम यूनिवर्सिटी, दिल्लीको सन्देश।

जनवरी (द्वितीय सप्ताह): अन्तर्राष्ट्रीय संघकी परिषदके सदस्य और मित्र ३ दिन तक आश्रममें रहे।

१५ जनवरी: गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबादके दीक्षान्त समारोहमें भाषण।

२२ जनवरी: पोरबन्दरमें चतुर्थ काठियावाड़ राजनीतिक परिषदमें भाषण।

२३ जनवरी: वरतेजमें।

२४ जनवरी: वरतेजमें अस्पृश्योंके लिए एक मन्दिरका शिलान्यास किया; मोरवीमें भाषण।

२७ जनवरी: गांधीजीके तीसरे पुत्र रामदासका साबरमतीमें विवाह। गुजरात विद्यापीठके विधानमें परिवर्तनके लिए गांधीजीका सुझाव।

३० जनवरी: साइमन कमीशनके विरोधमें हो रही हड़तालकी सफलता की कामना की।

३१ जनवरी: गुजरात महाविद्यालयके छात्रोंके साथ रहनेके लिए चले गये।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

ए

ऐ

ओ

क

ख

च

ध

न

श

स

ह